जैनाचार्यवर

पूज्य
श्री जवाहरलालजी
की
जीवनी

(प्रथम भाग)

लेखक
शोभाचन्द्र भारिल्ल, न्यायतीर्थ
इन्द्रचन्द्र शास्त्री, एम० ए०

प्रकाशक
अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जन सघ
समता भवन
रामपुरिया मार्ग, बीकानेर (राज०)

द्वितीय सस्करण १९८२

प्रकाशकीय

परम श्रद्धेय युगदृष्टा, क्रान्तदर्शी, ज्योतिर्धर आचार्य पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० भारतीय संत परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। आपका जन्म वि० सं० १९३२ में कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को थांदला (म० प्र०) में हुआ था। १६ वर्ष की अवस्था में आपने जैन भागवती दीक्षा अंगीकार की और संवत् २००० में आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को भीनासर (बीकानेर) में आपका स्वर्गवास हुआ।

आचार्य श्री का व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक और प्रभावशाली था। आपकी दृष्टि बड़ी उदार, प्रगतिशील तथा विचार विश्व मैत्रीभाव व राष्ट्र चेतना से ओतप्रोत थे। आपने भारतीय स्वाधीनता-आन्दोलन के सत्याग्रह, अहिंसक प्रतिरोध, खादी धारण, गोपालन, अछूतोद्धार व्यसन मुक्ति जैसे रचनात्मक कार्यक्रमों में सहयोगी बनने की जनमानस को प्रेरणा दी और दहेज प्रथा, बाल विवाह, वृद्ध विवाह, मृत्युभोज, सूदखोरी जैसी कुप्रथाओं के खिलाफ लोकमानस को जागृत किया। आपके राष्ट्रधर्मी, क्रान्तदृष्टा, आत्मलक्षी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, पं० मदनमोहन मालवीय, सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे महान् राष्ट्रनेता आपके सम्पर्क में आए। आप प्रखर वक्ता और असाधारण वाग्मी महापुरुष थे। 'जवाहर किरणावली' नाम से ३५ भागों में प्रकाशित आपका प्रेरणादायी विशाल साहित्य विश्व मानवता की अमूल्य निधि है। यह ओज, शक्ति और चरित्र निर्माण का जीवन्त साहित्य है। इस साहित्य से प्रेरणा लेकर हजारों लोगों ने अपना उत्थान किया है। ऐसे महान् ज्योतिर्धर क्रान्तदर्शी आचार्य का जीवन व्यक्तित्व और कर्तृत्व न केवल जैन समाज के लिए वरन् सम्पूर्ण मानव समाज के लिए सतत प्रेरणा का स्रोत है।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में जीवनी का अपना विशिष्ट स्थान है। इसमें चरित्र नायक की छोटी छोटी बातों और घटनाओं का उसके अन्तर और बाह्य व्यक्तित्व का कलात्मक निरूपण किया जाता है। नैतिक भावना और चरित्र निर्माणकारी चेतना उद्बुद्ध करने की दृष्टि से महापुरुषों की प्रेरणादायी जीवनियों के अध्ययन का अपना विशिष्ट महत्त्व है। महान् पुरुषों के जीवन की छोटी छोटी महत्त्वपूर्ण घटनाओं द्वारा किशोर वय के छात्रों के मानस पटल पर जीवन निर्माण के जिन सूत्रों की छाप पड़ती है, वह बड़े बड़े धार्मिक और सैद्धान्तिक ग्रन्थों का अध्ययन करके नहीं प्राप्त की जा सकती। पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी म० सा० की जीवन गाथा इस दृष्टि से आबाल वृद्धों के लिए प्रेरणादायी और मार्गदर्शक है।

आचार्य श्री की जीवनी का लेखन कार्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान पं० शोभाचन्दजी भारिल्ल एवं पं० इन्द्रचन्दजी शास्त्री द्वारा आचार्य श्री की विद्यमानता में ही प्रारंभ कर दिया गया था। पर उसके सम्पन्न होने के पूर्व ही आचार्य श्री का स्वर्गवास हो गया था। इस पर भी जीवनी लेखन का कार्य चालू रहा और आज से लगभग ३५ वर्ष पूर्व श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था बीकानेर द्वारा उसका प्रकाशन किया गया।

हितकारिणी संस्था के तत्कालीन मंत्री सुश्रावक श्री चम्पालालजी बांठिया के अथक प्रयत्नों से जीवनी का यह लेखन कार्य समय पर व्यवस्थित और यशस्वी रूप में हो सका। इस जीवनी के चार अध्यायों में आचार्य श्री के प्रारम्भिक जीवन, मुनिजीवन, आचार्य जीवन और जीवन की सन्ध्या का विस्तृत और क्रमबद्ध रोचक विवरण प्रस्तुत किया गया है। परिशिष्ट में पूज्य श्री के प्रति विभिन्न मुनियों, राजा रईसों, सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं विद्वानों द्वारा समर्पित भावभीनी श्रद्धांजलियां संकलित की गयी हैं। अंत में कतिपय महत्त्वपूर्ण [illegible]

जीवनी का प्रथम संस्करण शीघ्र ही समाप्त हो गया और पाठकों की इसके लिए बराबर माँग आती रही। द्वितीय संस्करण के रूप में प्रकाशित यह ग्रन्थ उस माँग की पूर्ति है। इस संस्करण में हमने अपनी ओर से कोई परिवर्द्धन नहीं किया है। प्रथम संस्करण की मूल सामग्री यथावत् ही रखी गयी है।

स्व० श्री जवाहराचार्य जी के अनन्य भक्त और उनके तेजोमय जीवन के प्रत्यक्ष दृष्टा सेठ श्रीयुत् जुगराज जी सा० थोका मद्रास की हार्दिक इच्छा है कि जवाहर साहित्य का व्यापक प्रचार एवं प्रसार हो। धर्मनिष्ठ, संघनिष्ठ साहित्य प्रेमी श्री थोका जी ने इसी उदात्त संकल्प से प्रेरित हो श्रीजवाहराचार्य प्रकाशन निधि की स्थापना की। इस निधि से अब तक जवाहर साहित्य की पाँच पाकेट बुक्स क्रमश: जवाहराचार्य जीवन और व्यक्तित्व, शिक्षा, समाज, राष्ट्रधर्म तथा सूक्तियाँ शीर्षक से प्रकाशित और समादृत हो चुकी हैं।

इसी निधि से स्व० श्री जवाहराचार्य जी के जीवन चरित्र का पुनर्मुद्रण करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। हम सेठ श्री जुगराज जी थोका और उनके तरुण पुत्र श्री माँगीलाल जी थोका के इस सहयोग के प्रति हृदय से आभारी हैं।

साहित्य समिति के संयोजक एवं संघ के भूतपूर्व संघ अध्यक्ष श्री गुमानमलजी सा० चौरड़िया की त्वरित कार्यक्षमता के परिणामस्वरूप ही यह चिर प्रतीक्षित प्रकाशन पाठकों के समक्ष आ सका है। अतः समाज उनका आभारी है। इसके मुद्रण में प्रेम इलेक्ट्रिक प्रेस, आगरा ने जो सक्रिय सहयोग प्रदान किया तदर्थ हम संघ की ओर से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

आशा है, इस जीवनी के पठन से व्यक्ति और समाज को नई स्फूर्ति, शक्ति और प्रकाश मिलेगा इसी मंगल भावना के साथ

15 अगस्त 1982

सह मंत्री	अध्यक्ष
चम्पालाल बाँठिया	जुगराज सेठिया
हस्तीमल नाहटा	मंत्री
समीरमल काठेड़	पीरदान पारख
विनयचन्द्र कोठारिया	

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर।

पुस्तक के प्रकाशन मे सहयोगी

श्री जुगराज जी धोका
मद्रास निवासी

जीवनी का प्रथम संस्करण शीघ्र ही समाप्त हो गया और पाठकों की इसके लिए बराबर मांग आती रही। द्वितीय संस्करण के रूप में प्रकाशित यह ग्रन्थ उस मांग की पूर्ति है। इस संस्करण में हमने अपनी ओर से कोई परिवर्द्धन नहीं किया है। प्रथम संस्करण की मूल सामग्री यथावत् ही रखी गयी है।

स्व० श्री जवाहराचार्य जी के अनन्य भक्त और उनके तेजोमय जीवन के प्रत्यक्ष दृष्टा सेठ श्रीयुत् जुगराज जी सा० धोका मद्रास की हार्दिक इच्छा है कि जवाहर साहित्य का व्यापक प्रचार एवं प्रसार हो। धर्मनिष्ठ, संघनिष्ठ साहित्य प्रेमी श्री धोका जी ने इसी उदात्त संकल्प से प्रेरित हो श्रीजवाहराचार्य प्रकाशन निधि की स्थापना की। इस निधि से अब तक जवाहर साहित्य की पाँच पाकेट बुक्स क्रमशः जवाहराचार्य जीवन और व्यक्तित्व, शिक्षा, समाज, राष्ट्रधर्म तथा सूक्तियां शीर्षक से प्रकाशित और समादृत हो चुकी हैं।

इसी निधि से स्व० श्री जवाहराचार्य जी के जीवन चरित्र का पुनर्मुद्रण करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। हम सेठ श्री जुगराज जी धोका और उनके तरुण पुत्र श्री मांगीलाल जी धोका के इस सहयोग के प्रति हृदय से आभारी हैं।

साहित्य समिति के संयोजक एवं संघ के भूतपूर्व संघ अध्यक्ष श्री गुमानमलजी सा० चोरड़िया की त्वरित कार्यक्षमता के परिणामस्वरूप ही यह चिर प्रतीक्षित प्रकाशन पाठकों के समक्ष आ सका है। अतः समाज उनका आभारी है। इसके मुद्रण में प्रेम इलेक्ट्रिक प्रेस, आगरा ने जो सक्रिय सहयोग प्रदान किया, तदर्थ हम संघ की ओर से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

आशा है, इस जीवनी के पठन से व्यक्ति और समाज को नई स्फूर्ति शक्ति और प्रकाश मिलेगा इसी मंगल भावना के साथ

15 अगस्त 1982

सह मन्त्री	अध्यक्ष
चम्पालाल डागा	जुगराज सेठिया
हस्तीमल नाहटा	मन्त्री
समीरमल काठेड़	पीरदान पारख
विनयचन्द कांकरिया	

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर।

पुस्तक के प्रकाशन मे सहयोगी

श्री जुगराज जी धोका
मद्रास निवासी

विषय-सूची

१ प्रथम अध्याय

प्रारम्भिक जीवन १–२५

- विषय प्रवेश १
- जन्म २
- नामकरण ३
- शैशव ४
- विद्यार्थी जीवन ६
- तीन दोहे ७
- साहस और संकट ७
- व्यापार ८
- मान्त्रिक के रूप में १०
- माला याद १०
- धर्म जीवन का प्रभाव ११
- वैराग्य १२
- गुरु की प्राप्ति १३
- दुविधा में १३
- समाधान १४
- कसौटी १५
- दूसरी चाल १५
- आंशिक त्याग १७
- बाल्यावस्था की प्रतिमा १७
- पुनः पलायन २०
- साधुता का अभ्यास २१
- गफलता २३
- दीक्षा संस्कार २४
- प्रभु की गोद में २४

२ द्वितीय अध्याय

मुनि जीवन २६–१०३

- प्रथम परीक्षा २६
- अध्ययन और विहार २६
- गुरु वियोग और चित्त विक्षेप २७
- महाभाग मोतीलालजी महाराज २९
- प्रथम चातुर्मास ३१
- उग्र विहार ३२
- आचार्य का आशीर्वाद ३४
- द्वितीय चातुर्मास ३५
- तृतीय चातुर्मास ३५
- चौथा चातुर्मास ३६
- पांचवां चातुर्मास ३६
- छठा चातुर्मास ३७
- सातवां आठवां चातुर्मास ३७
- नौवां चातुर्मास १९५७ ४०
- पूज्यश्री चौथमल जी महाराज का स्वर्गवास ४०
- नवीन आचार्य के दर्शन ४०
- जवाहरात की पेटी ४०
- दसवां चातुर्मास १९५८ ४१
- ग्यारहवां चातुर्मास ४२
- दयादान का प्रचार ४२
- प्रतापमलजी का प्रतिबोध ४४
- प्रत्युत्तरदीपिका ४६
- बालोतरा ४७
- बारहवां चातुर्मास ४८
- जयतारण शास्त्रार्थ ४८
- मध्यस्थों का फैसला ४९
- तेरहवां चातुर्मास ५१
- चौदहवां चातुर्मास ५१
- उत्तराधिकारी की प्राप्ति ५४
- सुगनचन्दजी कोठारी को प्रतिबोध ५५
- पन्द्रहवां चातुर्मास ५५
- सोलहवां चातुर्मास ५६
- पशुबलि बन्द ५७
- कांफ्रेन्स के अधिवेशन पर ५७
- सत्रहवां चातुर्मास ५९
- विनीत निमन्त्रण ५९
- समाज सुधार ६०
- (ओसवाल सकल पचपुर थांदला के खाता या १९९७ की नकल) ६०
- हाथी झुक गया ६२
- पत्थर फेंकने वाले पर भी क्षमा ६३
- साप की एक घटना ६३
- मृत्यु के मुँह में ६४
- अठारहवां चातुर्मास ६५
- उन्नीसवां चातुर्मास ६६

एक रुपया का महादान ६७
धर्म संकट ६७
दक्षिण की ओर ७०
कया ठिकाना बेठिकानो का ७०
संत समागम ७०
पत्रकार की अप्रामाणिकता ७०
पुनः प्रतिवाद ७१
बीसवां चातुर्मास ७१
वाडीलालभाई की क्षमा याचना ७२
धर्मबोध ७३
संस्कृत शिक्षा ७४
वैतनिक पण्डित ७४
इक्कीसवां चातुर्मास ७६
बाईसवां चातुर्मास ७६
नजर का भ्रम ७६
तेईसवां चातुर्मास ७७
सेनापति बापट ७८
गणी पदवी ७९
व्यवस्था पत्र की प्रतिलिपि ७९
चौबीसवां चातुर्मास ८०
प्रो० राममूर्ति का आगमन ८०
लोकमान्य तिलक से भेंट ८१
पच्चीसवां चातुर्मास ८४
प्रश्नोत्तर समीक्षा की परीक्षा ८४
प्रलोभन ठुकरा दिया ८५
छब्बीसवां चातुर्मास ८६
मुनियों की परीक्षा ८६
सत्ताईसवां चातुर्मास ८७
दुष्काल में सहायता ८७
युवाचार्य पदवी ८९
विनय पत्रिका ९२
लवा की ओर प्रस्थान ९२
वी आचार्य का अभिनन्दन ९३
राचंदजी भंडारी की आत्मशुद्धि ९३
ाम में पदार्पण ९४
चार्य पद महोत्सव ९४
पस्वी का उद्बोधन ९५
मजी का प्रवचन ९७
ह ९८
से विहार ९९
अट्ठाईसवां चातुर्मास ९९
एकता का प्रयास १००
पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास १०३
शोक का पारावार १०३
भीनासर में स्वर्गवास समाचार १०३

३ तीसरा अध्याय

आचार्य-जीवन

उनतीसवां चातुर्मास १९७७ १०४–२६५
गुरुकुल की योजना १०४
प्रस्ताव पहला १०४
प्रस्ताव दूसरा १०
प्रस्ताव तीसरा १०१
प्रस्ताव चौथा १०६
प्रस्ताव पांचवां १०६
साम्प्रदायिक साधुसम्मेलन १०६
मिल के वस्त्रों का परित्याग १०७
तीसवां चातुर्मास १९७८ १०७
फिर दक्षिण की ओर १०९
उग्र परीषह ११०
हणुतमलजी म० का स्वर्गवास १११
लालचन्दजी म० का स्वर्गवास १११
सतारा में दीक्षा समारोह ११५
इकतीसवां चातुर्मास १९७९ ११८
पर्युषण पर्व ११९
चातुर्मास का अन्तिम दृश्य ११९
पूना की ओर प्रस्थान १२०
बत्तीसवां चातुर्मास १९८० १२१
जीवदया खाते की स्थापना १२३
एकता की विज्ञप्ति १२४
विहार और प्रचार १२६
अस्पृश्यता १२७
ब्याजखोरी का निवारण १२७
तेतीसवां चातुर्मास १९८१ १२८
रोग का आक्रमण १३१
प्रायश्चित्त १३१
चौंतीसवां चातुर्मास १९८२ १३४
साम्प्रदायिक एकता १३५
उदयपुर में उपकार १३६
पैंतीसवां चातुर्मास १३८

वाणी का प्रभाव	१४१	हेमचन्द भाई का आगमन	१६०
छत्तीसवां चातुर्मास १९९४	१४३	प्रथम व्याख्यान	१६०
श्री श्वे० सा० जैन हितकारिणी संस्था की स्थापना	१४५	द्वितीय व्याख्यान	१६५
विधवा बहिनें और सादगी	१४६	घासीलालजी का पृथक्करण	२०१
कान्फ्रेंस का अधिवेशन	१४७	आवश्यक सूचना	२०३
पूज्यश्री और सर मनुभाई महेता	१४८	तेरहपंथी भाइयों का विफल प्रयास	२०४
मालवीयजी का आगमन	१५१	चातुर्मास के पश्चात्	२०५
थली की ओर प्रस्थान	१५१	युवाचार्य का पद महोत्सव	२०७
आचार्यश्री रतनगढ़ में	१५५	युवाचार्यजी का संक्षिप्त परिचय	२०९
कलई खुल गई	१५५	चादर प्रदान दिवस	२११
सैंतीसवां चातुर्मास १९८५	१५८	चादर प्रदान	२१६
चूरु में दीक्षा महोत्सव	१५९	भूकम्प पीड़ितों की सहायता	२१७
अड़तीसवां चातुर्मास १९८६	१६१	ब्यालीसवां चातुर्मास १९९१	२१८
तपस्वीराज श्रीबालचन्दजी म० का स्वर्गवास	१६२	राजकोट श्रीसंघ की प्रार्थना	२१९
उनतालीसवां चातुर्मास १९८७	१६२	तैंतालीसवां चातुर्मास १९९२	२२२
मेरी बीकानेर यात्रा	१६३	अल्पारम्भ महारम्भ	२२३
चालीसवां चातुर्मास १९८८	१६६	अल्पारम्भ महारम्भ पर विवेचन	२२३
पूज्यश्री का भाषण (ब्रह्मचारी वर्ग)	१६७	युवाचार्यजी को अधिकार प्रदान	२२८
पदवी प्रदान	१७०	अधिकार पत्र	२२९
पूज्यश्री की अस्वीकृति	१७०	काठियावाड़ की प्रार्थना	२२९
मुनियों की परीक्षा	१७१	श्री हेमचन्द भाई का आगमन	२३०
जमुना पार गिरफ्तारी की आशंका	१७२	रतलाम नरेश का आगमन	२३०
पूज्यश्री का सिंहनाद	१७२	बीकानेर की विनती	२३१
विहार और प्रचार	१७३	विहार	२३१
एकतालीसवां चातुर्मास १९८९	१७४	दो आचार्यों का सम्मिलन	२३१
साधु सम्मेलन का प्रतिनिधिमंडल	१७४	गुजरात के प्रांगण में	२३२
दीक्षा समारोह	१७६	काठियावाड़ में	२३२
जयतारण में दीक्षा समारोह	१७७	राजकोट प्रवेश	२३३
युवाचार्य श्रीकाशीरामजी म० से भेंट	१७९	चवालीसवां चातुर्मास १९९३	२३४
अजमेर साधु सम्मेलन	१८१	पू० श्री अमोलक ऋषिजी म० का स्वर्गवास	२३५
पूज्यश्री का स्पष्टीकरण	१८२	महात्मा गांधी की भेंट	२३५
श्री वर्द्धमान संघ-योजना	१८३	आगामी चौमासे के लिये विनतियां	२३५
वर्द्धमान संघ के नियम	१८४	सरदार पटेल का आगमन	२३७
शुद्धिपत्र	१८६	चातुर्मास के पश्चात	२३८
श्रावक श्राविकाओं के संगठन के लिये श्रावक समाचारी	१८७	श्रीपट्टाभिसीतारामय्या का आगमन	२४०
अजमेर से विहार	१८८	पैंतालीसवां चातुर्मास १९९४	२४२
एकतालीसवां चातुर्मास १९९०	१८९	सूर्यकिरण चिकित्सा	२४४
		जवाहर जयन्ती	२४४
		डा० प्राणजीवन मेहता	२

जामनगर से विहार २४५
मोरवी मे पदार्पण २४६
मोरवी नरेश का आगमन
जौहरी जी का दान २४७
पूज्यश्री उत्तमचन्द्रजी म०का मिलाप २४७
अहमदाबाद का शिष्ट मण्डल २४८
भगवान महावीर का पुनीतवेषधारी २४९
फिर राजकोट २५०
मोरवी महाराज की प्रार्थना २५०
पूज्यश्री उलझन मे २५१
चातुर्मास के निश्चय में परिवर्तन २५२
जैनगुरुकुल पाठशाला की स्थापना २५३
छयालीसवां चातुर्मास १९९५ २५४
मोरवी नु आदर्श चातुर्मास २५४
राजकोट म स्पेशियल ट्रेन २५५
व्याख्यान मे महाराजा और राजकुमार २५५
जूए की बन्दी २५५
डा० प्राणजीवन महता का सत्कार २५५
काठियावाड़ और जैन गुरुकुल म २५६
दो उल्लेखनीय प्रसंग २५७
राजकोट का सत्याग्रह २५८
अहमदाबाद मे पदार्पण २५९
फिर विहार २६०
सैंतालीसवा चातुर्मास १९९६ २६१
अहमदाबाद स मारवाड़ २६२
ब्यावर मे २६३
अड़तालीसवां चातुर्मास १९९७ २६४
सौ० सेठानी लक्ष्मीबाईजी २६५

४ चौथा अध्याय
जीवन की सन्ध्या २६६–३०५
बीकानेर की ओर २६७
थलुन्दा म अस्वस्थता २६७
उनचासवां चातुर्मास १९९८ २६८
श्रीजवाहर किरणावली का प्रकाशन २६९
श्रीजवाहर जयन्ती २६९
पूज्यश्री की जयन्ती २७०
दीक्षा स्वर्ण-जयन्ती २७१
पूज्यश्री जवाहरलालजी म० का
दीक्षा स्वर्णमहोत्सव २७१

घुटने मे दर्द २७३
पक्षाघात का आक्रमण २७३
क्षमा का आदान प्रदान २७४
जीवन-साधना की परीक्षा २७६
जहरी फोड़ा २७७
पचासवा चातुर्मास १९९९ २७७
सेवा की सराहना २७७
दो दीक्षाऐं २७८
पंजाब केसरी की अभिलाषा
अपूर्ण रही २७८
सूर्यास्त का समय २७९
अन्तिम दर्शन २८०
शोकसागर लहराने लगा २८०
श्मशान यात्रा २८०
राज्य का सम्मान २८१
शोक सभाऐं २८१
बम्बई मे विशाल शोकसभा २८२
श्री जवाहर विद्यापीठ की स्थापना २८५
परिशिष्ट २८७
श्रद्धांजलियाँ २८७
पूज्यश्री के प्रति मुनियों
की श्रद्धांजलियां २८८
१ प्रभावक पूज्यश्री २८९
(ले० आनन्द ऋषिजी महाराज)
२ पूज्य परिचय २९०
(ले० पूज्यश्री हस्तीमलजी महा०)
३ एक महान ज्योतिर्धर २९१
(पूज्यश्री पृथ्वीचन्दजी महा०)
४ स्थानकवासी संप्रदायनो सितारो २९२
(मुनिश्री प्राणलालजी महाराज)
५ पूज्यश्री माणेकचन्दजी महाराज
की श्रद्धांजली २९२
६ गणिश्री उदयचन्दजी म० पंजाबी
की श्रद्धांजलि २९३
७ आचार्यश्री जवाहरलालजी महा०
का युगप्रधानत्व २९३
(ले० उपाध्यायश्री आत्मारामजी,
कविवर उपा० श्री अमरचन्दजी म०)
८ एक आचार्य २९६

९ जैन समाजना क्रान्तिकार आचार्य २९६
(मुनिश्री मोहनऋषिजी महा०)
१० पूज्यश्री की निग्रासना ३०२
(प० रत्नमुनि पुरुषोत्तमजी महा०)
११ उज्ज्वल रत्न ३०३
(मुनिश्री मिश्रीलमजी महा०
न्याय काव्यतीर्थ)
१२ जैन पू० श्री जवाहरलालजी महा०
की जीवन झांकी ३०४
(महासतीजी श्री उज्ज्वलकँवरजी)

राजा रईसों आदि की श्रद्धांजलियाँ ३०६

१३ महाराजा साधाधिराज बहादुर
मोरवी नरेश ३०६
१४ श्री दीपसिंहजी वीरपुर नरेश ३०६
१५ महाराणा राजा सा० बहादुर
श्री बीकानेर नरेश ३०७
१६ श्री मूली नरेश ३०७
१७ श्री मालदेव राणा सा० पोरबंदर ३०७
१८ सरमनुभाई मेहता ३०८
१९ दीवान विशनदासजी जम्मू ३०८
२० त्रिभुवनदास जे० राजा
चीफमिनिस्टर, रतलाम ३०९
२१ श्री जे० एल० जोयन पुत्र
चीफमिनिस्टर सचिन स्टेट ३१०
२२ राय सा० अमृतलालजी मेहता
भू०पू० दीवान पोरबदर लीमडी
और धमपुर स्टट ३११
२३ माणेकलालजी पटल ३११
२४ वैकुण्ठप्रसाद जोशीपुरा सेक्रेटरी
टू दी दीवान पोरबन्दर ३१२
२५ श्री द्वारकाप्रसाद पोलिटिकल
सेक्रेटरी नवानगर स्टेट ३१३
२६ एक मुस्लिम ना हृदयोद्गार ३१४
२७ राय बहा० मोहनलाल पोपटभाई
भू०पू० सदस्य स्टेट काउंसिल
रतलाम । ३१५
२८ श्रीयुत काजी ए० अख्तर,
जागीरदार, जूनागढ स्टेट ३१६
२९ सौराष्ट्र द्वारे स्वागत ३२०
३० पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ३२१
३१ दानवीर खां साहेब होरमसशाह
कुवेरजी चौधरी (एक पारसी
सज्जन) ३२२
३२ राजरत्न सेठ भचरशाह हीरजी
भाई धाड़िया, पोरबन्दर ३२२
३३ मेहता तेजसिंहजी कोठारी,
बी ए, एल एल बी,
कलेक्टर—उदयपुर ३२३
३४ डा० प्राणजीवन माणिकचन्द मेहता,
एम डी, M S F C.P S
चीफमेडिकल आफिसर,
नवानगर स्टेट ३२५
३५ श्री रतिलाल घेला भाई मेहता,
एज्युकेशनल इन्सपेक्टर,
राजकोट स्टेट ३२६
३६ डा० ए० सी० दास, एम० डी०
(U S A.) बम्बई ३२७
३७ डा० एम० आर० मुलगावकर,
एफ आर.सी एस बम्बई ३२८
३८ श्री इन्द्रनाथजी मोदी, बी०ए०,
एल एल० बी०, जोधपुर ३२८
३९ श्री शम्भूनाथजी मोदी, सशनजज,
उपाध्यक्ष साधुमार्गी जैन सभा
जोधपुर ३२९
४० डा० मोहनलाल एच० शाह
M B B S (Bom) D T M
(Zia) Z U (Wien) ३२९
४१ श्री पी० एल० चुडगर बार एट०
ला० राजकोट ३३०
४२ श्री मणिलाल उच्च उदानी
एम० ए०, एल एल० बी०
एडवोकेट, राजकोट ३३२
४३ श्री मूलजी पुण्यस्मरण भाई
सोलंकी, राजकोट ३४०
४४ आदर्श उपदेशक श्री वीरचन्दजी
पानाचन्द शाह, महामन्त्री
श्री जैन श्वेताम्बर का० बम्बई ३४२
४५ अगणित—वन्दन राय सा०डा०
सल्लूभाई सी० शाह लल्लूभाई
बिल्डिंग, राजकोट ३४४

४६ दो पत्र—प्रसिद्ध देशभक्त श्रीमान् सेठ पूनमचन्दजी रांका ३४६
४७ धर्मभूषण—दानवीर सेठ भैरोदानजी सेठिया, बीकानेर ३४७
४८ पूज्यश्री का हृदयस्पर्शी उपदेश श्रीयुत प० शोभाचन्द्रजी भारिल्ल, ब्यावर ३४८
४९ गुरुदेव श्री बालेश्वरदयालजी, संस्थापक एवं संचालक डूंगरपुर विद्यापीठ ३४९
५० आचार्य श्री के कुछ संस्मरण—श्री मणिलाल सी० पारेख, राजकोट ३५१
५१ बा० मस्तराम जैनी, एम०ए०, एल एल०बी० अमृतसर ३५८
५२ जैन समाजनुं जवाहर—प्रो० केशव लाल हिम्मतराय कामदार एम० ए० बड़ौदा ३६०
५३ कुमारी सविता बेन मणिलाल पारेख, बी०ए० राजकोट C S ३६१
५४ अनुभवोद्गार—श्री जयचन्द झवेरचंद झवेरी वकील, जूनागढ़ ३६३
५५ समाज सुधारक अने राष्ट्रप्रेमी—श्री जटाशंकर माणेकलाल मेहता, मन्त्री जैनयुवक संघ राजकोट ३६६
५६ प्रभावक वाणी या उच्चविचार—ला० रतनचन्दजी तथा राय सा० टेकचन्दजी जैन ३६७
५७ जीवन कला का दिव्यदान—शांतिलाल वनमाली सेठ जैन—गुरुकुल ब्यावर ३६९
५८ हिन्दना धर्मगुरुओ अने शान्ति सौराष्ट्र राष्ट्रनायक राजकोट सत्याग्रह सेनानी—श्री ढेबरभाई ३७०
५९ गीताशास्त्र के ममज्ञ—श्रीहरिनाथजी टल्लू, पुष्करण-समाज नेता, जोधपुर ३७१
६० प्रभावक प्रवचन—शाहजी श्री हुनवंत चन्द्रजी सोढ़ा, जोधपुर ३७१
मनेजर घाटकोपर जीवदयाखाता ३७१
६२ जवाहर ज्योति—प० रतनलालजी संघवी 'न्यायतीर्थ' विशारद ३७२
६३ धर्माचार्य जवाहर—श्री इन्द्रचन्द्र शास्त्री एम० ए० ३७४
६४ अहिंसा और सत्य के महान् प्रचारक—श्री पद्मसिंहजी जैन ३७५
६५ तीर्थराज जवाहर—श्री तारानाथ रावल विशारद ३७६
६६ प्रखर तत्त्ववेत्ता श्रीमज्जवाहिराचार्य—श्री भैवरचन्द बांठिया ३८०
६७ एक मुख से हजारों की वाणी—श्रीयुत शुभकरनजी ३८१
पद्यमयी श्रद्धांजलियाँ ३८५-३९७
१ श्रद्धांजलि—श्री गजानन्द जी शास्त्री ३८७
२ जय जवाहरलाल श्री—श्री तारानाथ रावल ३८८
३ गुरुदेव ! छिपे हो किस अनन्त के कोने में ?—श्री मुनीन्द्रकुमारजी जैन ३८९
४ अंजलि—कुँवर केशरीचंद सेठिया ३९१
५ श्रद्धांजलि समर्पण—प्रिंसिपल पं त्रिलोकनाथ मिश्र ३९२
६ पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराजनी स्तुति (गोंडल सम्प्रदायना वयो वृद्ध श्री अम्बाजी महाराज) ३९३
७ महाराजना जीवन चरित्र अंगे—श्री टी० जी० शाह ३९४
८ पूज्यश्रीनो वाणी प्रभाव—अमीलाल जीवन भाई ठांकी ३९४
९ हृदयोद्गार—श्रीहरिलाल० पारेख ३९५
१० काठियावाड़ विहार दर्शन श्री वल्लभजी रतनशी मारवाणी ३९५
११ जामनगर में—राजकवि श्रीकेशवलाल श्यामजी ३९६
परिशिष्ट ३९९-४३८
परिशिष्ट ४०१

प्रथम प्रश्न	४०१	पाँचवाँ दिन	४०३
श्री फौजमल स्वामीजी का उत्तर	४०१	छठा दिन	४०४
दूसरा दिन	४०१	सुजानगढ़ चर्चा	४१३
तीसरा दिन	४०२	चूरु चर्चा	४२४
चौथा दिन	४०२		

प्रथम अध्याय

प्रारम्भिक जीवन

विषय प्रवेश

'भूतल पर मानव-जीवन की कथा मे सबसे बडी घटना उसकी आधिभौतिक सफलताएँ अथवा उसके द्वारा बनाये और बिगाडे हुए साम्राज्य नही, बल्कि सचाई और भलाई की खोज मे पीछे उसकी आत्मा की की हुई युग युग की प्रगति है। जो व्यक्ति आत्मा की इस खोज के प्रयत्नो मे भाग लेते है, उन्ह मानवीय सभ्यता के इतिहास मे स्थान प्राप्त हो जाता है। समय महावीरो को अन्य अनेक वस्तुओ की भाति बडी सुगमता से भुला चुका है, परन्तु स तो की स्मृति कायम है।'

—सर राधाकृष्णन

भौतिक सफलताएँ प्राप्त करने वाले बडे बडे वीरशिरोमणि अपनी स्मृति कायम रखने के लिए जो स्मारक खडे करते हैं, व स्मारक उसी प्रकार क्षण भगुर हैं, जस उनकी सफलताएँ। म जाने कितने शासक इस पृथ्वी पर आए और चले गए। खून की नदियां बहाकर, दुबलो को सताकर और अगणित अत्याचार करके उन्होंने अपनी विजय पताका फहराई। वायु के वेग से चंचल और निर तर कापने वाली पताका न उनकी सफलताओ की चचलता और अस्थिरता की ओर संकेत किया, मगर तात्कालिक सफलता के नशे म चूर शासको ने उस ओर ध्यान ही नही दिया। किन्तु काल की कठोर चक्की न कुछ ही क्षणा म उन्ह और उनकी पताकाओ को धूल म मिला दिया। अपना नाम अमर करने के लिए उन्होने अपन नाम पर बडे बड नगर बसाए, वज्रमय दुर्ग खडे किय और दृढतम स्तूप बनवाए, लेकिन आज उनका नाम निशान भी शेष नही है। भूकम्प का एक धक्का, पारस्परिक द्वेप की एक चिनगारी किसी अधिक बलवान् की हु कार या प्रकृति का तनिक सा कोई क्षोभ उनकी सारी सफलताओ को और उनके समस्त स्मारकों को जड स उखाडने के लिए पर्याप्त सिद्ध हुआ।

अब जरा अध्यात्म जगत की ओर देखिए। अध्यात्म जगत की प्रत्येक वस्तु स्थायी है। आधिभौतिक आक्रमण वहा असर नहीं करत। जो महान् व्यक्ति आत्मान्वेपण के प्रशस्त पथ पर चल पडता है उसे भौतिक सफलताए विचलित नही कर सकती। जो पुरुष आध्यात्मिक जगत् का साम्राज्य प्राप्त करके, आत्मिक विभूतियो का स्वामी बन जाता है और आत्म विश्वास का उज्ज्वल आदर्श जगत के सामने प्रस्तुत कर देता है, काल उसका दास बन जाता है। उस काल विजेता और मृत्युञ्जय महापुरुष का जीवन आदर्श युग युग के मनुष्य समाज को प्रेरणा देता रहता है। उसकी सफलता को कभी विफलता का सामना नही करना पडता।

जो व्यक्ति जनता का आत्मान्वेपण के पथ पर ले चलने का प्रयत्न करता है, वही ससार का सच्चा हितचिन्तक है। ऐसा महान् व्यक्ति ही ससार म सुख और शान्ति का शाश्वत साम्राज्य स्थापित कर सकता है। वह किसी दरिद्र को हीरो, पन्नों या मोतियो का दान नही करता, कि तु उसकी आत्मा म ऐसी शक्ति भर देता है जिससे नरपतियो की निधियो **को ठुकरा**

सके । वह किसी दुबल को हाथी, घोडे या तोप तलवार देकर बलवान् नहीं बनाता, किन्तु उसम ऐसे प्राण फूँक देता है कि वह एकाकी तोपो और मशीनगनो के सामने अविचलित मन से, शान्ति और मुसकराहट के साथ छाती खोलकर खडा हो सकता है। ऐसे महान् पुरुष की वाणी और उसका उपदेश युग युग म जनता का माग प्रदशन करत रहते हैं। जब तक भव्य पुरुष आत्म विकास के लिए उद्योग करते रहेंगे तब तक ऐसे महापुरुषा की स्मृति कायम रहगी।

ससार म अनादिकाल स दो शक्तियां कार्य कर रही हैं। एक आसुरी शक्ति और दूसरी दवी शक्ति। भौतिक सफलताओ के लिए सतत प्रयत्न म लग रहना, उसके लिए आत्मा को भूल जाना, अपनी आकाक्षाओ म बाधक बनने वाले व्यक्तियो का हिंसात्मक उपायो से सहार करना तथा दिन रात भोग लिप्साओ म फँसे रहना आसुरी शक्ति का खेल है। जिस व्यक्ति म इसका प्राबल्य होता है वह सदा असन्तोष की आग म झुलसता रहता है। इस शक्ति का विकास करके मनुष्य राक्षस बन जाता है। वह दूसरो का ध्वस करके खुश होता है। सकडो वर्षों की सभ्यता और सस्कृति को फूँक से उडाकर अट्टहास करता है। मनुष्य को मनुष्य का शत्रु बनाकर उसे हिंस्र पशुओं के समान लडते देखकर हर्षित होता है। ससार स सुख और शाति को मिटा देना ही वह अपना कर्त्तव्य मानता है। शरीर मे क्षय के कीटाणुओ की तरह ऐसे व्यक्ति का अस्तित्व ससार के लिए बहुत भयकर होता है। आसुरी शक्ति को लेकर जो व्यक्ति किसी समाज या देश के नेता बन जाते हैं वे दुनिया म प्रलय सी मचा देते हैं।

दवी शक्ति से सम्पन्न पुरुष भौतिक सफलताओ को महत्त्व नहीं देता। वह तो चाहता है हृदय म प्रेम, शांति और सन्तोष रहना चाहिए, धन चाहे रहे या न रहे। उसकी दृष्टि में सुख बाह्य साधनों में नहीं किन्तु आत्म में ही है। ससार में दैवी शक्ति का जितना अधिक प्रचार होता है उतनी ही सुख और शान्ति की वृद्धि होती है। ऐसी शक्ति का प्रचार करने वाले महापुरुष जगदुद्धारक कहे जाते हैं। सेना, शस्त्र, धन, शरीर आदि वस्तुओं पर निर्भर रहकर मनुष्य पशु बन जाता है। ऐसे व्यक्तियों मे सोई हुई मनुष्यता को जगाना ही ऐसे महापुरुषो का काम है। कठोर तपस्या द्वारा वे अपनी आत्मा को निर्मल बनाते हैं। कष्टों को सहकर उसे दृढ बनाते हैं तथा भयकर उपसर्गों का सामना करके उसकी परीक्षा लेते हैं। जब सभी कसौटियों पर अपने को खरा पाते हैं तो जन कल्याण के लिए निकल पडते हैं।

उनके उपदेश अन्तरात्मा को प्रकाशित कर देते हैं। पाशविकता के अधकार में दबी हुई मानवता फिर चमकने लगती है। ऐसे महापुरुष अज्ञानान्धकार का भेदन करते हुए अध्यात्म गगन म सूर्य के समान चमकते हैं। ऐसे महापुरुषों का जीवन ससार म आदर्श की स्थापना करता है। उनके उपदेश नए ससार को घडते हैं। उनके काय नव निर्माण करते हैं। विश्व की प्रगति का इतिहास उठाकर देखें तो मालूम पडेगा कि वह इस प्रकार की थोड़ी सी विभूतियो का खेल है। जो विचारधारा इन विभूतियों मे बही, बाह्यरूप धारण करके वही विश्व प्रगति का इतिहास बन गई। ऐसे व्यक्तियों का जीवन चरित्र तथा उनकी विचार धारा ही ससार का इतिहास है।

यहां हम ऐसी ही एक विभूति की जीवन कथा अकित करनी है। वे एक सत थे। कहा जाता है कि उन्होंने ससार को छोड दिया था। अगर उगलियो पर गिने जाने वाले कुछ व्यक्ति और घर गिरस्ती ही ससार है तो निस्सदेह उन्होंने ससार त्याग किया था। मगर कुछ व्यक्तियो के बदले उन्होंने विश्व के प्राणी मात्र के साथ अपना सबध स्थापित किया था। 'सर्वभूतात्मभूत' की भावना उनमें सजीव हो गई थी। और यद्यपि उन्होंने ईंट चूने का अपना कहलाने वाला मकान

के उत्थान का इतिहास है। उनका आत्म निर्माण जन कल्याण के महान् साधन का निर्माण है। उनका उपदेश प्रगति का बिगुल है।

जन्म

भारतवर्ष मे मालवा प्रान्त का स्थान महत्त्वपूर्ण है। यह प्रान्त हिन्दुस्तान का हृदय है। विश्व विख्यात विक्रमादित्य, महाराज उदयन तथा साहित्य रसिक भोज जैसे अनेक राजाओ की क्रीडा भूमि होने का सौभाग्य उसे प्राप्त है। मगर इससे भी बडी विशेषता यह है कि मालवा की उर्वरा भूमि मे अर्वाचीन काल ने भी अनेक सन्तों को जन्म दिया है। मालवा का नैसर्गिक सौन्दर्य आकर्षक है। मालवा की शस्य श्यामला भूमि विख्यात है। कहावत है—

देश मालवा गहन गंभीर।
पग पग रोटी, डग डग नीर॥

इसी मालवा प्रान्त मे झाबुआ रियासत के अन्तर्गत थांदला नामक एक कस्बा है। नाग पर्वत के नाम से विन्ध्याचल की पश्चिमी पर्वत श्रेणियां ने उसे अपनी गोद मे छिपा रखा है। धोडपुर नदी उसका पाद प्रक्षालन करती हुई बहती है और उसके आसपास के खेतो को सरसब्ज बनाती है। गांव के चारो ओर भीलो की बस्तियां हैं।

इसी कस्बे में ओसवाल जाति शिरोमणि कवाडगोत्रीय सेठ ऋषभदासजी नामक सद्गृहस्थ रहते थे। उनके दो पुत्र थे—बडे का नाम धनराजजी और छोटे का जीवराजजी था। धनराजजी के तीन पुत्र और एक कन्या थी, जिनके नाम मेमचदजी, उम्मचदजी और नेमचदजी थे। कन्या ने आगे चलकर पूज्य श्री धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय मे दीक्षा ली।

वहीं पर धोकागोत्रीय सेठ श्रीचन्दजी रहते थे। उनके पूनमचदजी और मोतीलालजी नामक दो पुत्र थे। मोतीलालजी के दो सन्तान थी—नाथीबाई और मूलचन्दजी।

जीवराजजी का विवाह कुमारी नाथीबाई से हुआ था। दम्पति में परस्पर खूब प्रेम था। दोनो की धर्म मे दृढ श्रद्धा थी। स्वभाव अत्यन्त कोमल और दयालु था। श्रावक के व्रतो का पालन करते हुए दोनो सात्विक और पवित्र जीवन बिता रहे थे।

ज्ञानपचमी की पूर्वभूमिका मे, अर्थात् कार्तिक शुक्ला चतुर्थी विक्रम सवत १९३२ के दिन नाथीबाई ने एक तेजस्वी पुत्र का जन्म दिया। यह वही पुत्र था, जिसने आगे चलकर ज्ञान का प्रकाश फैलाया और अगणित नर नारियो के आन्तरिक अधकार को दूर करने मे अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया।

पुत्र की प्राप्ति माता पिता के लिए बडे हर्ष की बात होती है। फिर जवाहरलाल जैसा पुत्र रत्न पाकर कौन निहाल न हो जाता! तिस पर भी वे पहली सन्तान थे और विशिष्ट शारीरिक सम्पत्ति लेकर प्रकट हुए थे। आपके बाद नाथीबाई ने एक कन्या को जन्म दिया, जिसका नाम जडावबाई था।

नामकरण

यथासमय बालक का नाम रखा गया—'जवाहरलाल'। माता पिता अपनी समझ मे अपने बालक का नाम सुन्दर और प्रिय रखना चाहते हैं। नाम और गुणो का सामजस्य करने के लिए राशि और नक्षत्र देखे जाते हैं। फिर भी नाम के अनुसार गुण और गुण के अनुकूल नाम क्वचित् ही देखा जाता है। जहाँ दोनो बातें अनुकूल मिल जायें वहाँ घुणाक्षर न्याय ही समझना चाहिए। हमारे चरितनायक के विषय मे भी यही बात हुई। उस समय किसने सोचा होगा कि जिस बालक का नाम जवाहरलाल रखा जा रहा है, वह अपने भावी जीवन मे अनेक जौहर दिखलाकर अपना नाम इस प्रकार सार्थक करेगा! कौन जानता था कि कुरूढियो और कुसस्कारो

के अंधकार में, अज्ञानता की घोर निशा में, ढोंगों और ढकोसलों के कोहरे में उनकी ज्योति सदा दीप्त रहेगी और वह प्रकाश का पुंज सिद्ध होगा।

शैशव

प्रायः सभी महापुरुषों के जीवन विकास का इतिहास दुःखों, कष्टों मुसीबतों, परेशानियों या संकटों से आरम्भ होता है। सुख मनुष्य को कमजोर बना देता है। सुख के समय आत्मा की विभिन्न शक्तियाँ सुप्त पड़ जाती हैं। सुख आत्मिक शक्तियों का जंग है, जिसके लगने पर मनुष्य अपावन सा बन जाता है। इसके विपरीत दुःख आत्मिक शक्तियों के विकास में अत्यन्त सहायक होता है। जो मनुष्य दुःख के समय दीनता को पास भी नहीं आने देता और वीरतापूर्वक दुःखों के साथ संघर्ष करता है उसकी सोई हुई शक्तियाँ भी जाग उठती हैं और उन शक्तियों में ऐसा तीखापन आ जाता है जैसे सिल्ली पर घिसने से उस्तरे में। यही कारण है कि आत्मा की खोज के लिए उद्यत होने वाले महान् पुरुष सबसे पहले, प्राप्त सुख सामिग्री का परित्याग कर देते हैं। 'आयावयाही चय सोगमल्लं, अर्थात कष्ट-सहिष्णु बनो, सुकुमारता त्यागो यह सुखी बनने का मार्ग है। भगवान् महावीर का यह आदर्श विशाल अनुभव का फल है। भगवान् का आदि से लेकर अन्त तक का जीवन देख जाइए उनमें यह उपदेश ओत प्रोत मिलेगा। भगवान् अपने आप आये हुए कष्टों को ही सहन नहीं करते थे, वरन् कभी कभी स्वयं कष्टमय परिस्थिति उत्पन्न करके उस पर विजय प्राप्त करते थे। यही उनके लोकोत्तर विकास का रहस्य है। इससे उनकी आत्मिक शक्तियों को बड़ा वेग मिलता था। मतलब यह है कि दुःख ही आत्मिक शक्तियों के विकास में सहायक होता है।

स्वेच्छापूर्वक कष्ट सहन करने में ही आत्म विजय है चाहे वह कष्ट स्वयं उत्पन्न किये गए हों, चाहे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अथवा प्रकृति ने उत्पन्न किए हों यदि मनुष्य उनसे विचलित होता तो उसकी प्रगति रुक नहीं सकती।

'आत्मोन्नति के ऊँचे उद्देश्य से प्रेरित होकर मनुष्य जो कार्य करता है, वह कार्य हमारे चरितनायक के लिए प्रकृति ने किया। कौन जाने प्रकृति ने एक संत पुरुष का निर्माण करने के लिए ही ऐसी 'व्यवस्था की' हो। प्रकृति ने उन्हें ऐसी परिस्थितियों में रखा कि बचपन से ही वे मोहजाल को भेदने में समय हो सकें। आप दो वर्ष के हुए थे कि हैजे के प्रकोप से माता का देहान्त हो गया। बालक अभी प्यासा ही था कि वह स्रोत सूख गया जिससे मातृ स्नेह का अमी रस झरता था। इस प्रकार प्रकृति ने उन्हें माता से वंचित करके जीवन का एक प्रगाढ़ बंधन दूर कर दिया। माता से वंचित होने पर भी मातृ भक्ति के विषय में आपके विचार बड़े ही गम्भीर रहे हैं।

महापुरुषों में बचपन के संस्कार ही पल्लवित होकर विशाल रूप धारण कर लेते हैं। उनका जीवन चरित समझने के लिए उन संस्कारों का अध्ययन करना आवश्यक है। साधारण व्यक्ति और महापुरुष में एक बड़ा अन्तर यह होता है कि साधारण व्यक्ति के बचपन के संस्कार बड़े होने पर अन्य बातों से दब जाते हैं या सर्वथा नष्ट हो जाते हैं। महापुरुष में बचपन के संस्कार प्रखर रूप में मौजूद रहते हैं। वे अन्य बातों को अपने निर्दिष्ट पथ में सहायक बना लेते हैं। इस प्रकार वे संस्कार यथासमय वृद्धि पाकर विशाल रूप धारण कर लेते हैं और जगत्-कल्याण के साधन बन जाते हैं।

मानव जीवन में प्रेम का आरम्भ जन्म के साथ ही होता है किन्तु साधारण व्यक्ति में यह एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलटता रहता है और महापुरुष में अपने अन्तरी स्थान को बिना छोड़े उत्तरोत्तर विकसित होता है। महापुरुषों का प्रेम निर्मल होने के साथ ही असीम होना है।

यह एक साथ सर्वत्र व्याप्त होकर रहता है। साधारण व्यक्ति के स्नेह में संकुचितता, सीमा बद्धता होती है।

हमारे चरितनायक में माता के प्रति जो निर्मल प्रेम के संस्कार पड़े थे वे विकसित होकर मातृ जाति की महत्ता के रूप मे परिणत हुए। आपको प्रत्येक महिला मे मातृत्व का दर्शन होता था। हृदय में और आँखों में आगे भी, आपके लिए स्त्री का काल्पनिक और भौतिक रूप सदैव मातृत्व से युक्त ही होता था। कहना चाहिए कि आपके हृदय में स्त्री की कल्पना माता के रूप मे ही थी। किसी भी स्त्री का अपमान आपकी दृष्टि में माता का अपमान था। स्त्री जाति की दयनीय दशा देखकर आपको असीम दुःख होता था। मातृ जाति के प्रति किये जाने वाले दुर्व्यवहार की आप ओजस्वी भाषा में टीका करते हुए कहते थे—

"मित्रो स्त्री पुरुष का आधा अंग है। क्या यह सम्भव है कि किसी का अंग बलिष्ठ और आधा अंग निर्बल हो? जिसका आधा अंग निर्बल होगा उसका पूरा अंग निर्बल होगा। ऐसी स्थिति मे आप पुरुष समाज की उन्नति के लिए जितने उद्योग करते हैं, वे सब असफल ही रहेंगे, अगर पहले आपने महिला समाज की स्थिति सुधारने का प्रयत्न न किया।'

'स्त्रियां जगज्जननी का अवतार हैं। इन्ही की कोख से महावीर बुद्ध, राम, कृष्ण आदि उत्पन्न हुए हैं। पुरुष समाज पर स्त्री समाज का बड़ा भारी उपकार है। उस उपकार को भूल जाना, उसके प्रति अत्याचार करने में लज्जित न होना घोर कृतघ्नता है।

'पुरुषो, स्त्री जाति ने तुम्हें ज्ञानवान् और विवेकी बनाया है फिर किस बूते पर तुम इतना अभिमान करते हो? किस अभिमान से तुम उन्हें पैर की जूती समझते हो?"

"धन्य है स्त्री जाति! जिस काम को पुरुष घृणित समझता है और एक बार मे ही हाय तोबा मचाने लगता है उससे कई गुना कष्टकर कार्य स्त्री जाति हर्षपूर्वक करती है। वह कभी नाक नहीं सिकोड़ती, मुँह से कभी 'उफ तक नहीं करती। वह चुपचाप, अपना कर्त्तव्य समझकर अपने काम में जुटी रहती है। ऐसी महिमा है स्त्री जाति की[1]।'

मातृ जाति के विषय में उस महापुरुष का ऐसा उदात्त उपदेश था।

माता की गोदी छिन जाने पर आपके लालन पालन का सारा भार पिताजी पर आ पड़ा। वे अपने हाथों से भोजन बनाते, अपने लाल को प्रेम के साथ खिलाते। आप अनेक असुविधाएँ सह लेने पर मातृ हीन बालक को किसी प्रकार का कष्ट न होने देते। पिता की मीठी प्रेम रस से पकी हुई रोटियों को आप कभी नही भूले। उनकी मधुरता का वर्णन आप अपने प्रवचनों में भी अनेक बार किया करते थे।

इधर प्रकृति एक महान संत का निर्माण करने में लगी थी। उसने देखा कि पितृ ममता का बंधन मजबूत होता जा रहा है और इस कारण उसके प्रयत्न मे बाधा पड़ने की संभावना है वह सावधान हो गई। उसने एक बंधन हटाने के पश्चात् एक दूसरे बंधन को भी हटा देना उचित समझा। जब चरितनायक पाँच वर्ष के हुए तो उनके पिता का भी देहान्त हो गया। मातृ हीन बालक अब पितृ हीन भी हो गया। पांच वर्ष की अवस्था में बालक को अपने पैरों पर खड़ा होना पड़ा।

ऊपरी दृष्टि से देखा जाय तो ऐसा लगता है कि प्रकृति ने हमारे चरितनायक के साथ अत्यन्त क्रूर व्यवहार किया है। उसकी निर्दयता की सीमा नहीं है। मगर गहरी दृष्टि से देखने पर निराला ही तत्त्व दिखाई देगा। कौन कह सकता है कि प्रकृति की क्रूरता और निर्दयता ने ही जवाहरलालजी को जगत् का असली स्वरूप नहीं समझा दिया! विश्वामित्र ने राजा हरिश्चन्द्र

---

१ जवाहर किरणावली, तृतीय भाग।

एक बार आप कुछ साथियों के साथ बैलगाड़ी द्वारा यात्रा कर रहे थे। पहाड़ी रास्ता था—टेढ़ा मेढ़ा और ऊबड़ खाबड़। ऊपर निकले हुए बड़े बड़े पत्थरों पर गाड़ी के पहिये चढ़ते और धड़ाम से नीचे गिरते। जान पड़ता था गाड़ी चूर चूर हुए बिना न रहेगी। कहीं कहीं रास्ता बहुत तंग था। एक ओर पाताल की प्रतिस्पर्धा करने वाली गहरी खाई और दूसरी ओर हिमालय का मुकाबिला करने के लिए अकड़ कर खड़ा पहाड़। जरा चूक हुई कि खाई के सिवा और कहीं ठिकाना नहीं। पग पग पर प्राणों का संकट।

भय के कारण गाड़ी-सवार नीचे उतर गए। उन्होंने पैदल चलने में ही अपनी खैर मानी मगर दीक्षा लेने के पश्चात् सदैव पैदल विहार करने वाले और पैदल विहार की उपयोगिता समझाने वाले हमारे चरितनायक उस समय भी गाड़ी से नीचे न उतरे। संकट से बचने के लिए ऐसा करना कायरता समझकर साहस का दुर्लभ आनन्द उपभोग करने के लिए आप गाड़ीवान के साथ गाड़ी में बैठे रहे। उस समय आप तनिक भी भयभीत न हुए। गाड़ी लड़खड़ाती हुई आगे चलती रही। अब वह उतार में आ गई थी। बैल बेतहाशा भागने लगे। गाड़ीवान ने उन्हें काबू में करने का बहुतेरा प्रयत्न किया, मगर वह सफल न हो सका। गाड़ीवान समझ गया कि आज सवार की, उसकी, गाड़ी की और बैलों की खैर नहीं या तो गाड़ी उलट जायगी या किसी गड्ढे में गिरेगी। गाड़ीवान ने गाड़ी बैल की चिन्ता छोड़ दी और प्राण रक्षा की फिक्र की। 'सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डितः' अर्थात् पण्डित पुरुष सर्वनाश के समय आधा छोड़कर आधा बचा लेता है। गाड़ीवान अपने प्राणों के विषय में पंडित सिद्ध हुआ। वह अपने प्राण बचाने के लिए नीचे कूद पड़ा। गाड़ी दर के लिए बैलों को स्वराज्य मिल गया। वह निरंकुश भागने लगे। कैसी मुसीबत की घड़ी थी! मगर उस समय भी एक व्यक्ति निश्चिन्त मगर गम्भीर भाव से गाड़ी पर सवार था। वह चाहता तो गाड़ीवान से भी पहले कूद सकता था और अपने प्राणों की रक्षा कर सकता था। लेकिन उसने ऐसा सोचा तक नहीं। वह था हमारा चरितनायक—अनुपम साहस का धनी जवाहरलाल!

गाड़ीवान के कूदने के कुछ ही क्षण पश्चात् जवाहरलालजी ने गाड़ीवान का स्थान ग्रहण कर लिया। रासें हाथ में लीं और बैलों को रोकने का प्रयत्न करने लगे। इतने ही में एक जोर का धक्का लगा और आप जुए पर आ गिरे। जुए पर लटकने की अवस्था में भी आपकी बुद्धि स्थिर रही। बुद्धि की स्थिरता की बदौलत ही आप रासें अपने हाथ में पकड़े रहे और संयोग से उन्हीं के सहारे लटके चले। तनिक भी घबराहट पैदा होती तो रस्सी हाथों से सरक जाती। फिर या तो गाड़ी में कुचले जाते या किसी खाई में जा गिरते। दोनों हालतों में प्राणों का संकट तो था ही।

विकारहेतौ सति विक्रियन्ते, येषां न चेतांसि त एव धीराः।

बुद्धि में विकार उत्पन्न करने वाले कारण उपस्थित होने पर भी जिनका चित्त विकृत नहीं होता, वही वास्तव में धीर पुरुष कहलाते हैं।

जवाहरलालजी के अगाध धैर्य और असीम साहस से फलस्वरूप गाड़ी बैल बच गये और उनका भी कुछ बिगाड़ न हुआ। अन्त में वे सकुशल अपने निर्दिष्ट स्थान पर जा पहुँचे।

साहस के ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण विरले हैं। इस प्रकार की घटनाएँ महापुरुषों के जीवन के मर्म की ओर संकेत करती हैं।

बचपन में जवाहरलालजी अनेक दुर्घटनाओं से बाल बाल बचे। एक बार आप किसी मकान की दीवार के पास खड़े बातें कर रहे थे। बातें समाप्त करके ज्यों ही आप वहां से हटे त्यों ही दीवार धड़ाम से आ गिरी। दीवार मानो उनके हटने की ही बाट जोह रही थी!

कौन जाने यह घटना आकस्मिक थी या दूसरा के उपकार मे लगने वाले जीवन को प्रकृति न बचा लिया ! जगत् म ऐसी घटनाएँ होती है जिनका निष्कष निकालना मानव बुद्धि मे परे की बात है। महापुरुषो के जीवन मे खास तौर पर इस प्रकार की घटनाएँ घटित हो जाती हैं।

बचपन म आपको कई बार सन्निपात जैसे भयंकर रोगो का सामना करना पडा मगर आयुकम की प्रबलता समझिए या भव्य जीवो के पुण्य का प्रभाव कहिए, आप समस्त सकटो का सामना करते हुए, मृत्यु पर विजय प्राप्त करने म समथ हो सके। ऐसे गभीर प्रसगो पर भी आपकी चित्त वृत्ति असाधारण रूप से शात बनी रहती थी। आपकी यह शान्ति और सहनशीलता धीरे धीरे किस प्रकार विकसित होती गई, यह बात पाठको को अगल पृष्ठो मे अकित मिलेगी।

व्यापार

ग्यारह वष की कोमल वय म जवाहरलाल जी स्कूल छोडकर अपन मामाजी के साथ कपडे की दुकान पर बैठने लगे। पूरा मनोयोग लगाकर ही उन्होंने यह काय सीखना आरभ किया। फल यह हुआ कि अपनी तीक्ष्ण बुद्धि और प्रतिभा के कारण कपडे के व्यवसाय म आप शीघ्र ही निपुण हो गए। मामाजी न यह देखकर सतोष की सांस ली और सारा कार्य भार आपके सिर पर डाल दिया। मामाजी इस ओर से निश्चिन्त हो गये। जवाहरलालजी म कपडा परखने की इतनी योग्यता आ गई थी कि यदि कीमत मे बहुत थोडे अन्तर वाले दो थान अधेरे म आपके सामने रख दिय जाते तो उन्हें। टटोल कर ही आप बतला देत कि इनम एक या दो पाई प्रतिगज का अन्तर है और इनका अमुक नबर है। कपडा पहचानन की कला देखकर वस्त्रो के व्यापार मे अपनी सारी आयु पूण कर देन वाले बूढे व्यापारी भी चकित रह जात थे।

बहुत स विद्वानो का कहना है कि प्रतिभा का विकास किसी एक निश्चित मार्ग मे ही होता है। जिस व्यक्ति का झुकाव त्याग की ओर होता है वह व्यापार आदि दुनियादारी के कामों म विशेष निपुणता प्राप्त नही कर सकता। आध्यात्मिकता की ओर मनोवृत्ति वाला लौकिक बातो में विशेष सफल नही हो सकता। कई एक महान् पुरुषो के जीवन चरित भी इस कथन का समथन करते हैं। मगर हमारे चरित नायक का जीवन इसका अपवाद है। आपकी जीवनी से यह प्रमाणित होता है कि प्रतिभा म एक ही ओर विकास होने की बात सर्वांश में सत्य नही है। कोई कोई महापुरुष विशिष्ट प्रतिभा के भी धनी होत हैं कि जिस ओर अपनी प्रतिभा दौडाएँ उसी ओर सफलता प्राप्त कर लत हैं। बिजली सभी ओर प्रकाश फलाती है। जवाहरलालजी जिस प्रकार व्यापारिक क्षेत्र म पूर्ण सफल हुए उसी प्रकार आध्यात्मिक क्षेत्र म भी बहुत उन्नति की। आप जसे सफल व्यापारी बने वसे ही सफल धर्माचाय भी सिद्ध हुए।

जहा प्रतिभा के साथ साहस और मनोयोग का समन्वय होता है, वहां सफलता मिलते देर नही लगती। यह त्रिपुटी सफलता की जननी है। जिस व्यक्ति म जितनी मात्रा म यह त्रिपुटी होगी वह उतनी ही मात्रा मे सफलता का भागी बन सकेगा। यही तीन चीजें त्याग क साथ मिल कर मनुष्य को महान् धर्मात्मा भी बना देती हैं।

प्रतिभा द्वारा मनुष्य अपना माग खोज निकालता है। साहस के द्वारा विपत्तियो की परवाह न करता हुआ उस मार्ग पर चलता है और मनोयोग से उस पर स्थिर रहता है—विचलित नहीं होता। इसके बाद उसके विकास मे बाधा डालने वाली कोई शक्ति नही रह जाती। मनोयोग की विकसित शक्ति द्वारा ही योगीजन आश्चर्यजनक सिद्धिया प्राप्त कर लेत हैं। हमारे चरितनायक को विरासत मे ही—जन्म काल से ही—उक्त तीनो बातें प्राप्त थी। यही कारण है कि जिस ओर वे झुके, सफलता उनकी दासी बनती गई। उनकी सम्पूण सफलता का यही मूलमन्त्र है।

मान्त्रिक के रूप में

जिन दिनों जवाहरलाल जी कपड़े की दुकान कर रहे थे, आपने धरण ठीक करने का मंत्र सीख लिया। किसी की धरण टल जाती तो आप मंत्र पढ़कर उसे ठिकाने बिठा देते। धीरे धीरे गाव भर में आपकी मंत्र शक्ति की प्रसिद्धि हो गई। आये दिन लोग आपको बुलाने आने लगे। दुकान के काम में व्याघात होने लगा, लेकिन आप समान भाव से सभी के घर चले जाते और धरण बिठा देते। मगर मामाजी को यह बात अच्छी न लगी। उन्होंने जवाहरलालजी से मंत्र का काम छोड़ देने के लिए कहा। आप उनका आदेश अस्वीकार न कर सके।

एक बार दीपावली का जमा खर्च कर रहे थे कि तब एक दिन एक आदमी धरण ठीक करने के लिए बुलाने आया। आपने बहुत टाल मटोल की मगर वह नहीं माना। आपने मन ही मन निश्चय किया—चला तो जाता हूँ मगर मंत्र नहीं पढ़ूँगा, यो ही हाथ हिलाकर फूँक मारता जाऊँगा। इससे धरण ठीक नहीं होगी और लोग मेरा पिंड छोड़ देंगे।

उन्होंने यही किया। वे रोगी के सामने बैठकर हाथ हिलाने लगे, फूँक मारने लगे, मगर मंत्र पाठ नहीं किया। मगर थोड़ी ही देर में उन्हें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि मंत्र न पढ़ने पर भी धरण ठिकाने आ गई और दर्द बन्द हो गया। यह देखकर आपने सोचा कि वास्तविक शक्ति श्रद्धा में ही है। रोगी को श्रद्धा हो गई कि इन्होंने मंत्र पढ़ा है और इस मंत्र से धरण अवश्य ठीक हो जाती है। इसी श्रद्धा के कारण रोगी का दर्द मिट गया। आपका यह विचार धीरे धीरे विश्वास के रूप में परिणत हो गया और आपने श्रद्धा और सकल्प का प्रबल अनुभव किया। इसी अनुभव के आधार पर आपने वाणी उच्चारी है —

'क्या सकल्प में दुःख दूर करने का सामर्थ्य है ? इस प्रश्न का उत्तर है—अवश्य। 'सकल्प में अनन्त शक्ति है। सकल्प से दुःख दूर हो जाते हैं, साथ ही नवीन दुःख का प्रादुर्भाव नहीं होता।'

अपनी सकल्प शक्ति का विकास ही आध्यात्मिक विकास है। सत्सकल्प का प्रभाव जड़ सृष्टि पर भी अवश्य पड़ता है।"

'सकल्प में यदि बल हुआ तो कार्य सिद्धि में सुगमता और एक प्रकार की तत्परता होती है। वास्तविक बात तो यह है कि कार्य की सिद्धि प्रधानतः सकल्प शक्ति पर अवलम्बित है।'

चरित्रनायक के ये उद्गार अपने जीवन के अनुभव के स्रोत से ही निकले हैं। उनकी वाणी का अधिकांश भाग उनके विभिन्न कालीन निजी अनुभवों की अभिव्यक्ति मात्र है। उनका ज्ञान अन्तरतम से उद्भूत होकर बाहर निकला है, बाहर से ठूँसकर भीतर नहीं भरा गया है। ऐसा ज्ञान बड़ा ही तेजस्वी सुदृढ़ और परिमार्जित होता है।

काला घाव

एक बार श्री जवाहरलालजी की पीठ पर काला घाव हो गया। अनेक जगहों पर इलाज कराने पर भी आराम न हुआ। वैद्यों से चिकित्सा करवाई मगर कुछ फल न निकला। डाक्टरों का सहारा लिया, वह भी व्यर्थ हुआ। आप इसी परेशानी में थे कि एक दिन एक भील मिला। बातचीत होने पर उसने कहा—मैं सिर्फ चार पैसे की दवाई से इसे ठीक कर दूँगा। उसे तुरन्त चार पैसे दिए गये। भील ने जगल से एक जड़ी लाकर दे दी। कुछ खाई और कुछ घाव पर लगाई। तीन ही दिन में बीमारी दफा हो गई। आपने चार आने भील को इनाम में दिये।

इस घटना से आपके मन में यह धारणा जम गई कि भील निरे मूर्ख या जगली ही नहीं हैं। उनके पास भी बहुत सी ऐसी विद्याएँ हैं, जिन्हें सीखने से हम बहुत कुछ लाभ उठा सकते हैं। शहर में रहने वाले वैद्यों और डाक्टरों को अपना दर्जा जगल की जड़ी बूटियों का और उनके

गुण-दोषों का अधिक ज्ञान है। इस घटना से आपका विश्वास जड़ी बूटियों पर भी हो गया। भावी जीवन में आपने अनेक बार विदेशी औषधों के सेवन का सख्त शब्दों में विरोध किया है। यह विरोध भी अनुभव जनित ज्ञान के आधार पर था।

धर्म-जीवन का प्रभात

जैन संस्कृति में जिस क्रिया काण्ड का वर्णन पाया जाता है, उस सबका मूल सम्यक्त्व है। सम्यक्त्व की विद्यमानता में ही चारित्र मुक्ति या आत्मशुद्धि का निमित्त बनता है। जहाँ सम्यक्त्व नहीं, वहाँ कठोर से कठोर क्रिया काण्ड भी संसार भ्रमण का ही कारण होता है। सम्यक्त्व से क्रिया काण्ड सजीव हो जाता है उसमें प्राण आ जाते हैं। अकेला क्रिया काण्ड ही नहीं, वरन गम्भीर से गम्भीर ज्ञान भी सम्यक्त्व के अभाव में मिथ्या ज्ञान ही रहता है। सम्यक्त्व मोक्ष महल का पहला सोपान है। मुमुक्षु जीव का मोक्षमार्ग यहीं से आरम्भ होता है। वास्तव में दृष्टि जब तक निर्मल न बने तबतक वस्तु का वास्तविक स्वरूप समझा ही नहीं जा सकता। दृष्टि की यह निर्मलता धर्म श्रद्धा से उत्पन्न होती है। अतएव धर्म श्रद्धा को अंगीकार करना ही व्यवहार से सम्यक्त्व ग्रहण करना कहलाता है।

सम्यक्त्व ग्रहण करते समय, ग्रहण करने वाला प्रतिज्ञा करता है कि 'मैं आज से वीतराग देव को ही अपना देव मानूँगा, अहिंसा आदि पाँच महाव्रतधारी साधुओं को ही अपना गुरु समझूँगा और वीतराग कथित दयामयधर्म को ही धर्म स्वीकार करूँगा।

किसी भी मत की परीक्षा करने का सर्वोत्तम और सरल उपाय यही है कि उसके देव, गुरु और धर्म की परीक्षा कर ली जाय। जिस मत में ऐसे देव की पूजा होती है जो अपने भक्त की स्तुति से प्रसन्न हो जाने के कारण रागी है, जो अपने निन्दक को घोर दण्ड देने के कारण द्वेषी है, जो भोग विलास से अतीत नहीं हुआ है, संक्षेप में यह कि जिसके देव वीतराग नहीं हैं, वह मत आत्म कल्याण का साधक नहीं हो सकता। इसी प्रकार जिस मत के साधु कंचन कामिनी के त्यागी नहीं हैं, प्राणी मात्र पर समभाव नहीं रखते और हिंसा आदि दोषों से पूर्णतया रहित नहीं हैं, वह मत मुमुक्षु जीवों के लिए उपादेय नहीं हो सकता। इसी भाँति जिस मत में सम्पूर्ण भूत दया का उपदेश नहीं है बल्कि प्रकारान्तर से हिंसा का विधान और दयाअनुकम्पा का निषेध है वह मत भी मोक्षाभिलाषियों के लिए ग्राह्य नहीं हो सकता।

सम्यक्त्व ग्रहण करने का अर्थ गुण पूजक होना है। सम्यक्त्व ग्रहण करते समय व्यक्ति यही प्रतिज्ञा करता है कि मैं अब से निर्दोष देव निर्दोष गुरु निर्दोष धर्म को स्वीकार करता हूँ।

जिन दिनों जवाहरलालजी कपड़े की दुकान करते थे थांदला में पूज्य धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री गिरधारीलालजी महाराज पधारे। आप मुनिजी का व्याख्यान सुनने गए। धर्म की ओर आपका सोया हुआ आकर्षण जाग्रत हो गया। उसी समय खड़े होकर आपने सम्यक्त्व ग्रहण किया।

किसी भी मनुष्य का असाधारण विकास पूर्वजन्म के संस्कारों के बिना नहीं हो सकता। बाल्यावस्था में धर्म के प्रति इस प्रकार की प्रीति उत्पन्न होना निश्चय ही पूर्वजन्म के संस्कारों का परिपाक है। आपकी यह धर्म श्रद्धा तात्कालिक भावावेश का परिणाम नहीं थी किन्तु चिरकाल से संचित संस्कारों का फल था। इस सचाई का ज्वलन्त प्रमाण यही है कि वह धर्म श्रद्धा द्वितीया के चन्द्रमा की भाँति निरन्तर बढ़ती ही चली गई। उस धर्म श्रद्धा के फलस्वरूप उन्होंने एक महान सन्त का गौरव प्राप्त किया, धर्माचार्य की प्रतिष्ठा पाई। और आत्म शुद्धि के अधिकारी बने।

सम्यक्त्व ग्रहण करने के पश्चात् आपका इहलौकिक धार्मिक जीवन आरम्भ हुआ।

यद्यपि जवाहरलालजी ने सम्यक्त्व ग्रहण करके धर्म मार्ग की ओर नजर फेर ली थी, फिर भी वे अभी तक व्यवसाय में ही लगे हुए थे। जो प्रकृति शिशु अवस्था में ही उनके मोह बंधन काटने में लगी थी उसे भला यह कैसे रुचिकर हो सकता था। प्रकृति ने माता पिता के और मोह का बंधन काट फेंका था मगर जवाहरलालजी के लिए मामा के मोह का एक नवीन बंधन उत्पन्न हो गया था। ऐसी स्थिति में प्रकृति कब निश्चेष्ट रह सकती थी। उसने इस बंधन को भी काट फेंकना ही उचित समझा। जब आप तेरह वर्ष के हुए तो आपके मामाजी तेंतीस वर्ष की उम्र में ही स्वर्गवासी हो गये। माता पिता की गोद छिन जाने पर जो आश्रय मिला था वह भी अब सदा के लिए भग्न हो गया।

मामा जी की मृत्यु से चरितनायक के हृदय को गहरी चोट लगी। इधर मामाजी का वियोग उनके लिए असह्य हो उठा उधर दुकान का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व उनके सिर आ पड़ा। विधवा मामी और पांच वर्ष के ममेरे भाई घासीराम जी के पालन पोषण की जिम्मेदारी भी इन्हीं पर आई।

मामाजी की अकाल मृत्यु ने जैसे उन्हें निद्रा से जगा दिया। आपको संसार की दुःख बहुलता का ज्ञान हुआ। मन ही मन सोचने लगे—जीवन पानी के बुलबुले के समान है। हवा का एक हल्का सा झोंका उसे समाप्त कर देता है। फिर भी मनुष्य न जाने किन किन आशाओं से प्रेरित होकर ऊँचे ऊँचे हवाई महल बनाता है। भवन, धन, तन और स्वजन—सब यहीं रह जाते हैं और हंस निकल जाता है। प्राणी इन पराई वस्तुओं के मोह में क्यों पड़े हैं! इस जीवन का क्या उद्देश्य है! कहाँ की सार्थकता है! संसार का वैभव विलास क्या जीवन की सफलता की कसौटी है! यह क्षण नश्वर भोग्य पदार्थ क्या अनन्त जीवन में काम आ सकते हैं! और यह शरीर! कितना बेवफा है! कैसा दगाबाज है! शरीर, आत्मा का उपयोग कर रहा है और आत्मा, शरीर की कितनी व्यथाएँ भोग रहा है? इस मूर्खता का अंत होना ही चाहिए।

वैराग्य

चेतन आत्मा! तेरी यह गम्भीर भूल है कि तू अब तक आत्मा को भूला रहा। अब मेरी बात मान ले अपनी भूल को सुधारने की चेष्टा कर। तू परमात्मा का भजन कर। परमात्मा का सान्निध्य ही तुझे अपना लक्ष्य बनाना चाहिए। तू आप ही अपना कर्त्ता है और जगत् के अन्य पदार्थ तेरे सहायक हैं। परन्तु उनसे काम लेने वाला स्वामी है। पर तू यह बात भूल रहा है। तू जिनका स्वामी है उनका दास बन रहा है—उनकी अधीनता में आनन्द मान रहा है। इसलिए अपना अज्ञान दूर कर और देख कि तेरे साधन तुझे किस कंटकाकीर्ण पथ पर घसीटे लिये जा रहे हैं। अज्ञान दूर होते ही दिव्य प्रकाश तेरा स्वागत करेगा और परम कल्याण का पथ प्रदर्शित करेगा।

हे आत्मन! अनन्त काल व्यतीत हो चुका है फिर भी तूने धर्म की विशिष्ट आराधना नहीं की। इस कारण तू सिद्धरूपी कोयल होकर संसारी जीवरूप कौवा बना हुआ है। अब तुझे अत्यन्त अनुपम अवसर हाथ लगा है। यह अवसर बार बार नहीं मिलने का। इस समय तू अपनी शक्ति का प्रयोग कर। अपने पुरुषार्थ को काम में ला। अगर अब भी तू अपना नाश न दिखायेगा तो अनादि काल से अब तक जिस स्थिति में रहा है उसी स्थिति में चिर काल पर्यन्त रहना पड़ेगा।'

यह उद्गार जिसमें अमृत का झरना बह रहा है और जो आत्मा को पवित्र प्रेरणा एवं स्फूर्ति देने वाले हैं हमारे चरितनायक की अन्तरात्मा के उद्गार हैं। यह मुमुक्षु पुरुष का अन्तर्नाद है। इन उद्गारों ने वाणी का रूप भले ही बाद में धारण किया हो मगर संसार से विरक्त होते समय उनके हृदय प्रदेश में यह उत्पन्न हो चुके थे।

इस प्रकार के विचारों में मग्न रहने के कारण उनका वैराग्य दिनों दिन बढ़ता गया। जिस दुकान को उन्होंने बड़ी लगन के साथ चलाया था, अब उसमें उनका मन नहीं लगता था।

उन्हें घर सराय के समान मालूम होता था। सराय में मुसाफिर दो दिन ठहरता और चल देता है। दो दिन के लिए लम्बी चौड़ी दुकान जमाकर बैठ जाना और चलने की फिक्र न करना अज्ञान है। मनुष्य को अपनी महायात्रा की भी कुछ चिन्ता करनी चाहिए। माता पिता और मामा के वियोग का स्मरण आने पर चित्त में व्यथा उत्पन्न हो उठती थी, मगर इस समय उनकी प्रधान चिन्ता यही थी कि संसार के प्रपंच से किस प्रकार और कब छुटकारा मिले।

उन्होंने दुकान उठाने का निश्चय कर लिया। धीरे धीरे काम समेटना शुरू किया। लेन देन चुकता करने लगे। इस प्रकार विरक्त हो जाने पर भी आप अपने भविष्य का निर्णय न कर सके थे। आप यह निश्चय न कर सके कि अब करना क्या चाहिए? हृदय में प्रबल जिज्ञासा उत्पन्न हो गई। इस जिज्ञासा के कारण आप बेचैन से रहने लगे। वास्तव में किसी अच्छे गुरु का ससर्ग हुए बिना इस जिज्ञासा की निवृत्ति होना अशक्य था।

गुरु की प्राप्ति

'पुस्तक सामने भले रहे, परन्तु उसका ज्ञान गुरु से ही प्राप्त करना उचित है। गुरु के बिना ज्ञान प्राप्त करना अंधेरे में आरसी लेकर मुँह देखने के समान है। आज गुरु की सहायता लिए बिना ज्ञान प्राप्त किया जाता है, यह बुराई है। प्रत्येक बात गुरु के समीप समझकर उस पर विश्वास करो तो भ्रम में पड़ने से बच सकते हो और आत्मा का कल्याण कर सकते हो।'

हमारे चरितनायक का यह उपदेश उनकी उस समय की मनोवृत्ति का परिचायक है जब आप गुरु के बिना बेचैन हो रहे थे। संसार के प्रति विरक्ति हो जाने पर भी आपको अपना कर्त्तव्य नहीं सूझ रहा था। संयोग से उन्हीं दिनों थांदला में मुनिवर्य श्रीराजमलजी महाराज के शिष्य मुनि श्रीघासीलालजी महाराज तथा मगनलालजी महाराज और श्रीघासीलालजी महाराज के शिष्य श्रीमोतीलालजी महाराज तथा देवीलालजी महाराज पधारे। आप मुनियों के दर्शन करने गये। उनका प्रवचन भी सुना। चरितनायक को जैसे गुरु की तलाश थी वैसे ही गुरु मिल गए। मुनियों ने संसार से छुटकारे का मार्ग बतलाया और मुनिधर्म का स्वरूप समझाया। आप सांसारिक प्रपंचों से पहले ही निवृत्त हो चुके थे। दीक्षा का मार्ग जानकर आपको ऐसा हर्ष हुआ जैसे जंगल में मार्ग भूले मनुष्य को अपने घर का मार्ग मिल गया हो। उन्होंने मन ही मन मुनिव्रत धारण करने का विचार कर लिया।

पुण्यशाली पुरुषों के लिए थोड़ा सा भी धर्मोपदेश हितकर साबित होता है। प्राचीन कथा साहित्य में ऐसी अनेक घटनाओं का उल्लेख है। इन्हीं घटनाओं की पुनरावृत्ति हमारे चरितनायक की जीवनी में हुई।

दुविधा में

मुनि दीक्षा अंगीकार करने का विचार कर लेने पर भी श्री जवाहरलालजी के मार्ग में एक बड़ी अड़चन थी। वह अड़चन किसी बाह्य व्यक्ति या वस्तु के कारण नहीं थी। वे इतने साहसी और निर्भय थे कि इस प्रकार की अनेक अड़चनें आने पर भी कभी कातर नहीं हो सकते थे। मगर यह अड़चन तो उन्हीं की अन्तरात्मा से उत्पन्न हुई थी और उसका सम्बन्ध उनके दूसरे कर्त्तव्य के साथ था। महापुरुष किसी बाहरी अड़चन की परवाह नहीं करते, किन्तु जहाँ कर्त्तव्य बुद्धि स्वयं दो मार्गों की ओर प्रेरणा करती है वहाँ निश्चय करना कठिन हो जाता है। उस समय वे अत्यन्त अशान्त और बेचैन हो जाते हैं। दो ओर से जहाँ एक साथ आह्वान हो रहा हो वहाँ किस ओर जाना चाहिए? दुविधा की यह स्थिति बड़ी नाजुक होती है। ऐसी ही परिस्थिति में अर्जुन जैसा महान् योद्धा गांडीव छोड़कर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया था। सौभाग्य से कृष्ण जैसे कुशल सलाहकार उस समय अर्जुन के समीप थे मगर श्री जवाहरलालजी को स्वयं ही अपना कर्त्तव्य स्थिर करना था।

तुम साधु मत होना। साधु लड़को को ले जाकर जगल मे छोड़ देते हैं और उनका सामान छीन लेते हैं। कोई-कोई आलंकारिक भाषा म कहते—साधु बच्चा को पीट पीटकर हलुवा बना देते है। कड़कड़ाते तेल के कड़ाह म कचौरी की तरह उबालते हैं।' इस तरह जितने मुँह, उतनी ही बातें जवाहरलालजी को सुनाई पड़तीं। मगर आप भी अपनी धुन के पक्के थे। वे किसी के बहकावे म न आये और अपने निश्चय पर निश्चल बने रहे। यही नही, वरन् इस प्रकार के व्यवहार म उन्होने अपने निश्चय को और भी दृढ़ कर लिया।

एक बार एक वैरागी बाबा आपके मकान पर आये। नाम था उनका परमानन्दजी, मगर बाबाजी के नाम से ही वह मशहूर थे। खूब मालदार और खूब प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। वह धनराजजी के मित्र थे। जवाहरलालजी के दीक्षा सम्बन्धी विचार उन्हें भी विदित हो चुके थे। वे तरह तरह से ... समझाने लगे। उन्होंने अपने जीवन भर में संचित समस्त बुद्धिमत्ता खर्च कर दी मगर मुद्गशैल की दृढ़ता धारण किये हुए श्री जवाहरलालजी पर उनकी बुद्धिमत्ता ने कुछ भी असर नहीं दिखाया।

बाबाजी की बातो का उत्तर देना व्यर्थ समझकर जवाहरलालजी मौन साधे बैठे रहे, ताऊजी के मित्र होने के नाते भी उन्होंने नम्रता धारण करना और विरोध न करना उचित समझा। मगर इस मौन का असर बाबाजी पर उलटा पड़ा। बातों ही बातों म वह बहुत आगे बढ़ गए। धमकाकर कहने लगे—धनराजजी तुम्हें दीक्षा लेने की अनुमति कदापि नही देंगे। अगर गड़बड़ करोगे तो पकड़ कर खाट से साथ बांध दिये जाओगे।'

बाबाजी को आसमान पर चढ़ते देख जवाहरलालजी ने उत्तर देना उचित समझा। उन्होंने गंभीर और शांत स्वर म कहा—'बाबाजी, आप अपनी बातें तो कह गए मगर आपने यह विचार न किया कि इनका सभालना कठिन हो सकता है। मुझे दीक्षा लेने की अनुमति मिल गई तो आपकी बातो की क्या कीमत रह जायगी? आप जरा सयाने व्यक्ति की बातें एक बालक के सामने असत्य साबित हो, यह आप कैसे सहन कर सकेंगे? आपके हक म अच्छा तो यही है कि आप विचार कर वचन निकालें। इसमे तो कोई सन्देह ही नही कि दीक्षा की अनुमति मुझे मिलेगी।

जवाहरलालजी के इस उत्तर म असीम आत्म विश्वास भरा हुआ है। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि मेरा सकल्प टल नही सकता। दुनिया मुझे विचलित नहीं कर सकती। इस प्रकार का दृढ़ आत्म विश्वास जिसे प्राप्त हो वह बड़ा ही भाग्यशाली है। वह सारे ससार को अकेला ही पराजित कर सकता है। धन्य है यह दृढ़ता! धन्य है यह अदम्य अभिलाषा! धन्य है यह साहस!

वैरागी बाबा ने यह कल्पना भी न की होगी कि छोटा दिखाई देने वाला यह बालक इतना साहस कर सकता है! बाबाजी यह उत्तर सुनते ही चकित रह गए। वह मानो उड़ जा रहे थे और बीच म अचानक धक्का लगा और वह नीचे आ गिरे। इस अवज्ञा और दृढ़ता से भरे उत्तर को सुनकर उनका बोल बंद हो गया। कौन जाने बाबाजी ने मन ही मन बालक की बुद्धिमत्ता दृढ़ता और साहसिकता की प्रशंसा की या नहीं, मगर इतना वे समझ गये कि उसे समझा सकना उनके वश से बाहर की बात है।

इस प्रकार धनराजजी के धीरे धीरे सभी शस्त्र बेकार होते गये। उन्होंने अनेक यत्न किये मगर कोई सफल नहीं हुआ। किन्तु स्नेह का बन्धन भी साधारण बंधन नहीं है। इस बन्धन से प्रेरित होकर धनराजजी इस बात पर तुले थे कि जवाहरलालजी किसी प्रकार अपना इरादा बदल दें, मगर महापुरुषों का प्रवाह अगर बदल सकता है तो जवाहरलालजी का इरादा भी बदल सकता है। यदि यह सभव नही तो यह भी असम्भव है।

आंशिक त्याग

'अखण्ड ब्रह्मचारी म अद्भुत शक्ति होती है। उसके लिए क्या शक्य नही है ? अखण्ड ब्रह्मचारी अकेले ही सारे ब्रह्माण्ड को हिला सकता है। अखण्ड ब्रह्मचारी वह है जिसने अपनी समस्त इन्द्रियो को और मन को अपने वश म कर लिया हो। इन्द्रियाँ जिसे फुसला नहीं सकती, मन जिसे विचलित नही कर सकता। ऐसा अखण्ड ब्रह्मचारी शीघ्र ही ब्रह्म का साक्षात्कार कर सकता है।'

'ब्रह्मचय का पालन करने के लिए और साथ ही स्वास्थ्य की रक्षा के लिए जिह्वा पर अकुश रखने की बहुत आवश्यकता है। जिह्वा पर अकुश न रखने से अनेक प्रकार की हानियाँ होती हैं।'

हमारे चरितनायक ने ब्रह्मचय और रसना निग्रह के विषय मे जो प्रभावशाली उपदेश दिया है, उसे पहले अपन जीवन म उतार लिया था। यह उपदेश उनके जीवन के अनुभव पर अवलम्बित है। जब आप वैरागी अवस्था म थे तभी स त्याग की ओर आपकी भावना बढ़ती जा रही थी। सचित्त जल पीने का त्याग आप पहल ही कर चुके थे। अब आपने सचित्त वनस्पति खाने का और रात्रि भोजन का भी त्याग कर दिया। इस प्रकार जिह्वा पर अकुश स्थापित करने के पश्चात् आपने कुछ दिनों वाद आजीवन ब्रह्मचय व्रत धारण कर लिया।

आत्मिक उन्नति के लिए त्यागशील बनना आवश्यक है। सभी मत और सभी पन्थ त्याग का विधान और समथन करते हैं। जैनधम तो त्याग की नीव पर ही खडा हुआ है। त्याग आत्मा मे दृढता उत्पन्न करता है और कठिनाइयो को जीतने म समथ बनाता है। यदि कोई व्यक्ति किसी स्वादिष्ट वस्तु को खाने का त्याग कर देता है तो उसे रसनेन्द्रि से सयम का अभ्यास करना ही होगा। रसनेन्द्रिय का सयम ब्रह्मचय के लिए आवश्यक है। जो जीभ को वश म नही कर सकता वह ब्रह्मचय का पालन भी नही कर सकता। ब्रह्मचय की महिमा का वर्णन नही किया जा सकता। ऊपर चरितनायक के जो उपदेश वाक्य दिये हैं, उनमे थोडे से शब्दो मे ही ब्रह्मचय की महत्ता का प्रतिपादन कर दिया गया है।

इस प्रकार एक एक वस्तु का त्याग भी धीरे धीरे आत्म विकास की ओर ले जाता है। खाने, पीने, सोने, बठने आदि क काम आने वाली भोग्य वस्तुओ मे से जिनका जितना त्याग किया जाता है, आत्मा उतना ही बलवान् बनता है। क्या धार्मिक और क्या सामाजिक, सभी दृष्टियो से इन्द्रिय सयम जीवन विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

हमारे चरितनायक पूण त्याग के मार्ग पर चलना चाहते थे अतएव उसके लिए उन्होंने पहले से ही तयारी आरम्भ कर दी। ताऊजी न स्नेह के वश होकर उन्हें त्याग से च्युत करने का प्रयत्न किया मगर आप दृढ बन रहे। ताऊजी के द्वारा लगभग प्रतिदिन ही कोई न कोई अडचन उपस्थित की जाती थी। यह देखकर आपने घर मे भोजन करना छोड दिया। आप थान्दला मे ही दूसरे श्रावको के घर भोजन करन लगे। इस प्रकार श्री धनराजजी के प्रयत्नो का फल विपरीत हुआ और उनके प्रयत्नो के कारण श्री जवाहरलालजी त्याग के पथ पर शीघ्रता पूर्वक दृढ़ होत चले गए।

वाल्यावस्था की प्रतिभा

जवाहरलालजी म प्रतिभा का वभव जन्म जात था। व उन भाग्यवान् महापुरुषो म से एक थ, जिन्ह प्रतिभा विरासत म मिलती है। इसी कारण वे वाल्यावस्था में भी तीव्र प्रतिभा शाली और प्रत्युत्पन्नमति थ किसी वात का तत्काल माकूल उत्तर दना आपकी विशेपता थी। एक ही उदाहरण से उनकी प्रखर प्रतिभा का आदर्श का पता चल जायगा।

एक बार आप किसी ब्राह्मण पण्डित के घर जाकर अपनी जन्म पत्री दिखा रहे थे। उसी समय वहाँ पण्डित आत्माराम भी आ पहुँचे। वे राज्य के एक अधिकारी थे। मामा मूलचन्दजी के मित्र होने के कारण जवाहरलालजी उन्हें भली भाँति जानते थे।

जवाहर लाल जी ने ज्योतिषी से पूछा—'कोई ऐसा ग्रह बतलाइए जो मेरी दीक्षा में सहायक हो।

पण्डित आत्माराम जी ने उन्हें चिढ़ाने के उद्देश्य से कहा—'क्या तुम ढूंढिया साधु बनना चाहते हो? क्या तुम्हें मालूम है, ढूंढियों की उत्पत्ति कैसे हुई?'

जवाहर लाल जी—'जी हाँ, मैं ढूंढिया साधु बनना चाहता हूँ। आप बताइए किस प्रकार उनकी उत्पत्ति हुई है?

आत्माराम जी ने आरम्भ किया—महात्मा गोरखनाथ के दो चेले थे—एक का नाम था मछेन्द्रनाथ और दूसरे का पारसनाथ। एक दिन गुरूजी ने दोनों चेलों को भिक्षा लाने के लिए भेजा। बेचारे बहुत घूमे पर भिक्षा नहीं मिली। एक जगह बनियों की पंगत हो रही थी। पारसनाथ वहाँ पहुँच गए और उन्होंने भिक्षा की याचना की। पंगत के पास एक मरी बछिया पड़ी थी। बनियों ने कहा—इसे ले जाकर दूर फेंक आओ तो तुम्हें बढ़िया पकवान देंगे।

पारसनाथ ने बिना संकोच मरी बछिया खींचकर दूर फेंक दी। बनियों ने खूब मिठाई दी। उसे लेकर पारसनाथ अपने गुरुजी के पास पहुँचा।

उधर मछेन्द्रनाथ खाली हाथ लौटा। गुरु गोरखनाथ ने मछेन्द्र का बहुत धिक्कारा पारसनाथ की प्रशंसा की! मछेन्द्रनाथ ने उसी समय पारसनाथ की पोल खोल दी। बछिया वाली बात सुनकर गुरूजी ने पारसनाथ को अपने आश्रम से निकाल दिया और शाप दिया—तुमने जिन बनियों की बछिया खींची है, आज से तुम उन्हीं के गुरु हो गए।'

बस तभी से ढूंढिया मत चल पड़ा। इसी घटना के चिह्न स्वरूप ढूंढिया साधु हाथ में गाय की पूंछ के समान ओघा और अम्बाड़े के समान पात्र रखते हैं। क्या तुम उन्हीं पारसनाथ के चेले बनना चाहते हो?

पण्डितजी की यह मनगढ़त कहानी सुनकर जवाहरलाल जी ने उसी समय उत्तर दिया—'पण्डित जी आप अधूरी बात कह रहे हैं। इस कहानी में बहुत सी बातें छूट गई हैं। आपकी आज्ञा हो तो मैं उन्हें पूरी कर दूँ।'

पण्डितजी के पूछने पर श्री जवाहरलालजी ने कहना आरम्भ किया—'वास्तव में बात यह है कि बछिया बहुत भारी थी। पारसनाथ अकेले उसे खींच नहीं सका। सहायता के लिए उन्होंने मछेन्द्रनाथ को बुलाया। मिठाई के लोभ से वह भी आकर सम्मिलित हो गया। मछेन्द्र ने मुँह की तरफ से बछिया पकड़ी और पारसनाथ ने पूंछ की तरफ से। दोनों उठाकर उसे दूर फेंक आये। मगर बनियों ने कहा—हमने अकेले पारसनाथ को मिठाई देने का वायदा किया था मछेन्द्रनाथ को नहीं। यह कहकर उन्होंने उसे मिठाई नहीं दी। इससे मछेन्द्रनाथ चिढ़ गया। उसने गुरु के पास जाकर पारसनाथ की शिकायत कर दी। गुरुजी को नाराज होते देख पारसनाथ ने भी मछेन्द्रनाथ की पोल खोल दी। गुरुजी मछेन्द्र पर भी क्रोधित हो गए। उन्होंने उसे शाप दिया—आज से तुम ब्राह्मणों के गुरु हुए। इस पाप के लिए तुम्हारे हाथ में गाय का मुँह रहेगा और उसकी आंत धारण करोगे।''

तभी से ब्राह्मण हाथ में गोमुखी रखते हैं और आंतों की तरह जनेऊ पहनते हैं। माला फेरते समय गोमुखी में हाथ रखते हैं और स्नान करते समय जनेऊ को खींच-खींच कर खूब धोते हैं, जिससे उनमें कचरा न आने पावे। गाय की पूंछ में तेंतीस कोटि देवताओं का वास माना

जाता है। उसका अम्बाड़ा अमृत का स्थान है। यह दोनो अग गाय के शरीर में बहुत पवित्र मान जाते हैं। इसके विपरीत गाय का मुँह अपवित्र माना जाता है। उसमें गाय अशुचि पदार्थों को भी खा जाती है। आत तो अपवित्र हैं ही। ये दोना चीजें ब्राह्मणो के पल्ले पड़ी। अब आप ही सोच देखिये, दानो मे बुरा कौन ठहरा ?

श्रीजवाहरलालजी का जस का तैसा उत्तर सुनकर आत्माराम जी अवाक रह गए। यद्यपि यह एक कल्पित कहानी है इसमे कोई तथ्य नहीं है, किन्तु श्री जवाहरलालजी की कल्पना शक्ति और प्रतिभा का इसस भली भाँति अनुमान किया जा सकता है। छोटी सी अवस्था म इतनी बड़ी बात तत्काल गढ लेना साधारण बात नहीं है। इसके लिए प्रखर प्रतिभा चाहिए, और एक राज्याधिकारी के सामने निर्भयता के साथ उसे कहने की हिम्मत होना भी कठिन है। मगर श्री जवाहरलालजी म इस हिम्मत की भी कमी नही थी। ईंट का जवाब पत्थर स देना भी उन्हें खूब आता था। वस्तुत इन गुणों के अभाव मे कोई भी व्यक्ति महत्ता प्राप्त नही कर सकता।

इन दिनो श्री जवाहरलालजी जल म कमल की भाति अलिप्त भाव से घर म रहते थे तथापि उन्हें वर्तमान स्थिति म भी सन्तोष नही था। वे ऐसा कोई उपाय खोज रहे थे जिससे अनगार बनने की उनकी अभिलाषा शीघ्र पूरी हो सके। उधर ताऊजी दीक्षा न लेने देन पर तुले हुए थे। जवाहरलालजी की प्रत्येक प्रवृत्ति पर उनकी निगाह रहती थी।

एक बार श्री जवाहरलालजी ने सुना कि ससार सागर से पार उतारने वाले मुनिराज इस समय लींबडी मे विराजमान हैं। यह स्थान थांदला से बारह कोस दूर है। जवाहरलालजी की बडी उत्कठा हुई कि उनके दर्शन करके नेत्र सफल करूँ किन्तु कोई उपाय न था। तथापि श्री जवाहरलालजी निराश होना नही जानते थे। उन्हे विश्वास था कि जहाँ इच्छा प्रबल है वहाँ कोई न कोई मार्ग निकल ही आता है। अतएव अवसर की प्रतीक्षा करने लगे।

जवाहरलालजी के चचेरे भाई (धनराजजी के पुत्र) उदयराज जी किसी काम से दाहोद जाने के लिए तैयार हुए। दाहोद से लींबडी नजदीक ही है। जवाहरलालजी भी उनके साथ चलने को तयार हो गये। दोनो बलगाडी मे बठकर चल दिये।

रास्ते मे अनास नदी पडती थी। नदी तक पहुँचते पहुँचते अधेरा हो गया। नदी मे बैल उतर तो गये किन्तु चढ़ाव म कचिया गये। चढाने का प्रयत्न किया गया तो कभी इधर मुड जाते कभी उधर। नदी पहाडी थी और उस समय उसम पानी नही था किन्तु पत्थरो की भरमार थी। भयानक जगल था अधकार से परिपूर्ण काली रात फैली गई थी। पथरीला रास्ता था पग पग पर गाडी उलटने की सम्भावना थी। जवाहरलालजी उस समय पद्रह वर्ष के और उदयराजजी सत्तरह वर्ष के थे। गाडीवान भी इन्ही के अनुरूप छोटी उम्र का था। भीलो की आबादी होन के कारण लूटे जान का भय सिर पर मडरा रहा था।

तीनो ने मिलकर बहुत यत्न किया मगर गाडी नदी के चढाव पर न चढ़ी। उदयराजजी और गाडीवान घबरा उठे। दोनो जोर जोर से रोने लगे। मगर जवाहरलालजी किसी और ही धातु से बने थे। रोना उन्होंने सीखा ही नहीं था। विपत्ति आने पर वे घबराते नही थे। उन्होंने एक जगह कहा है— विपत्ति को सम्पत्ति के रूप म परिणत करने का एक मात्र उपाय यह है कि विपत्ति से घबराना नही चाहिए। विपत्ति को आत्म कल्याण का एक श्रेष्ठ साधन समझकर, विपत्ति आने पर प्रसन्न रहना चाहिए। जिसका विचार इतना उच्च गम्भीर है उसके लिए यह विपत्ति तो नगण्य है। वह इससे कैसे घबड़ाता ?

श्रीजवाहरलालजी इस समय एकदम शान्त थे। उन्होंने दोनो को धैर्य बंधाया और कहा—'घबराने की क्या बात है ? गाड़ी क्या यही पड़ी रहेगी ? वह निकलेगी और जल्दी ही

निकल जायगी।' इतना कहकर उन्होंने अपना काला कोट पहिना और छड़ी घुमाते हुए भीलों की बस्ती की ओर चल दिये। वहाँ जवाहरलालजी का एक परिचित भील रहता था। आप अकेले अंधेरे में उसी को बुलाने के लिए रवाना हुए। हिंसक पशुओं से भरे भयानक जंगल में, रात्रि के समय, निर्भय होकर दो मील चलने पर आप भीलों की बस्ती में पहुँचे। परिचित भील को आवाज दी। उसे अपना हाल सुनाया और मिहनताना देने का वचन देकर उसे अपने साथ ले आए। गुलजी मक्वी नामक उस भील ने अपने साथ दस बारह भील और लिये। उनकी सहायता से गाड़ी नदी के चढ़ाव पर चढ़ी और सबके जी में जी आया।

रात भर वहीं कहीं विश्राम लेकर दोनों भाई दूसरे दिन दाहोद पहुँचे। उदयचन्दजी अपना काम पूरा करके थांदला लौट आये। श्री जवाहरलालजी वहाँ से लीवड़ी चल दिये। वहाँ जाकर वे साधुओं की सेवा में रहने लगे और दीक्षा लेने के लिए तयार हो गए।

उदयचन्दजी जब अकेले थान्दला लौटे और धनराज जी को पता चला कि जवाहरलालजी लीवडी पहुँच गये हैं, तो वह उसी समय लीवडी के लिए रवाना हुए। उन्हें भली भाँति पता था कि पक्षी पींजरे में से निकल चुका है और अब सरलता से यों ही वापस नहीं लौटने का। अब ऐसे चुग्गे की आवश्यकता है जिसके लोभ में पडकर पक्षी फिर पींजरे में आ बसे। धनराज बड़े अनुभवी आदमी थे। जानते थे कि संसार का कोई भी प्रलोभन उस पक्षी को आकर्षित नहीं कर सकता। अतएव उन्होंने ऐसे चुग्गे की व्यवस्था की कि पक्षी वश में आ गया। वह चुग्गा क्या था? थांदला के तत्कालीन सरपंच शाहजी प्यारचन्दजी का पत्र था, जिसमें जवाहरलालजी को लक्ष्य करके लिखा था—'तुम थान्दला लौट आओ। दीक्षा की आज्ञा दिलाने की जिम्मेवारी मुझ पर है।

दीक्षा के प्रलोभन रूप चुग्गे से आकर्षित होकर उड़ा हुआ पक्षी फिर लौटकर आया। आखिर दीक्षा के सिवाय उसे और चाहना ही क्या थी! उसने सोचा—'थांदला जाते ही मुझे दीक्षा लेने की आज्ञा मिल जायगी। मेरे मन की मुराद पूरी हो जायगी। अब बावाजी के साथ चले जाने में हर्ज ही क्या है?

इस प्रकार विचार कर आप बावाजी (श्री धनराजजी) के साथ लौट आये। मगर थांदला आते ही बावाजी ने अपना रंग पलट दिया। दीक्षा की आज्ञा देने से साफ इन्कार कर दिया। जवाहरलालजी को शाहजी का सहारा था। वे उनके पास पहुँचे। मगर सरपंच शाहजी अपनी लाचारी प्रकट करके रह गये। कहने लगे—मैंने तुम्हारे बावाजी को खूब समझाया मगर वे आज्ञा देने के लिए तैयार नहीं होते। मैं क्या जानता था कि वे इस प्रकार पलट जाएँगे? उनकी लिखत मेरे पास होती तो कुछ कार्यवाही भी करता, मगर ऐसा कुछ है नहीं। जितना कह सकता था, कह चुका, उन्हें समझा चुका। अब क्या हो सकता है?

सरपंच महोदय की यह सरलतापूर्ण लाचारी देख श्री जवाहरलालजी को घोर निराशा हुई। फिर भी उन्होंने अपना संकल्प नहीं छोड़ा और किसी दूसरे अवसर की राह देखने लगे।

पुनः पलायन

थांदले के भेरा धोबी के पास एक घोड़ा था, जिसे वह किराये पर भी चलाया करता था। श्री जवाहरलालजी ने वही घोड़ा पाँच रुपये में तय कर लिया। भेरा अपने घोड़े पर उन्हें लीमड़ी पहुँचा देगा। मगर गाँव से ही घोड़े पर सवार होने में कठिनाई थी। बावाजी को पता लग जाता तो निकलना असम्भव हो जाता। इसलिए निश्चित किया गया कि भेरा आगे घोड़ा लेकर मौगांवा नदी पर दो पहर पहुँच जायगा और बाद में किसी समय जवाहरलालजी वहाँ आ मिलेंगे।

श्री जवाहरलालजी अपने निश्चित समय पर घर से बाहर निकले। महात्मा बुद्ध रात्रि के घोर अन्धकार मे घर से रवाना हुए थे, श्री जवाहरलालजी ने दुपहरी के चमकते सूर्य के प्रकाश मे प्रस्थान किया। फिर भी दोनो का उद्देश्य समान था। जैसे ही आप गाँव से बाहर निकले कि रास्ता भूल गए। लीबडी के बदले झाबुआ की राह पकड ली। कुछ ही दूर गये थे कि एक रिश्तेदार से भेंट हो गई। वे आपके रिश्ते म बहनोई होते थे और आपके विचारो से परिचित थे। उनका नाम था मादाजी घोडावत। उन्होने सारा वृत्तान्त सुनकर आपको ठीक रास्ता बतला दिया।

नदी के किनारे चलते चलते आप भरा धावी के पास पहुँचे और घोडे पर सवार होकर लीबडी की ओर रवाना हुए। पाँच कोस चलने पर सूर्य अस्त हो गया। रास्ते की चौकी पर सिपाही ने रोका। अगले गाँव म ठहर जाने का वायदा करके चौकीदार से पिण्ड छुडाया और आगे चले।

जो रास्ता सीधा लीबडी जाता था उसम बडे बडे पहाड थे और जगल भी था। जगली जानवरो का भी भय बना रहता था। रात म उस रास्ते जाना खतरनाक था। कदाचित् आप तयार हो जाते तो भरा हरगिज जाना मजूर न करता। उसे अपनी और अपने घोडे की जान की जोखिम भी तो थी। अतएव श्री जवाहरलालजी ने सीधा माग छोडकर लम्बे माग से ही जाना उचित समझा। चलते चलत दाहोद के नजदीक पहुँचे। वहाँ खान नदी के किनारे एक खरबूज वाले की झोपडी थी। उसी झोपडी म शेष रात्रि बिताकर प्रात काल होते ही फिर रवाना हुए।

रास्त म एक हूमड महाजन मिले। व आपके मित्र थे। उन्होने भोजन के लिए बहुत आग्रह किया परन्तु आप सचित्त जल के त्यागी थे और अचित्त जल तैयार नहीं था। विलम्ब करना असह्य होने के कारण सिर्फ भैरा को भोजन कराकर वे तत्काल वहाँ से चल दिये।

जिस बात की आशका थी वही हुई। बहुत जल्दी करने पर जब आप लीबडी पहुँचे तो आपका स्वागत करने के लिए बाबाजी वहाँ मौजूद मिले! बाबाजी उनसे भी पहले पहुँच गये थे। उन्होने माग की भयानकता का खयाल नही किया और सीधे माग से ही आ पहुँचे थे।

बाबाजी न श्री जवाहरलालजी को थादला लौटने के लिए शक्ति भर समझाया। मगर 'सूरदास की कारी कमरिया चढे न दूजो रग' वाली उक्ति चरिताथ हुई। श्री जवाहरलालजी टस से मस नही हुए। बाबाजी भी जल्दी हार मानने वाले नही थे। उन्होने धमकाना शुरू किया। मगर जब तमाम धमकियाँ बेकार हो गई और श्री जवाहरलालजी ने लौटने से साफ इकार कर दिया तो बाबाजी फिर ढीले पड गए। उन्होने अपने हृदय की सारी व्यथा जवाहरलालजी के सामने उडेलकर रख दी। वृद्ध धनराजजी ने कहा—'देखो, मैं बूढा हो गया हूँ। तुम्हारे मामा के घर कोई पुरुष शेष नही बचा है। उस कुटुम्ब का भार कौन सभालेगा? मेरा ख्याल भले ही न करो मगर मामा को मत भुलाओ। तुम्हारे ऊपर उनका कितना उपकार है? धम के नाम पर क्या यह कृतघ्नता शोभा द सकती है? मामा न उस नादान बालक को किसके सहारे छोड आये हो? उसका उत्तरदायित्व तुम्ही पर है। अपना उत्तरदायित्व छोडकर भाग निकलना तो कायरता है, धम कायरता नही सिखलाता। हाँ, जब वह बालक सयाना हो जाय और मेरी आँखें मुँद जाएँ तब इच्छानुसार कर सकते हो। इसलिए बेटा! मेरी बात मानो। हट मत करो। घर लौट चलो।

प्रतिकूल उपसग देखने सुनने मे कठोर मालूम होते हैं परन्तु सहने मे उतने कठोर नही होते। इसके विरुद्ध अनुकूल उपसग बडे ही मनोरम और लुभावने जान पडते हैं परन्तु उन्ह सहन करना सरल नहीं होता। अच्छे अच्छे योगी भी अनुकूल उपसर्गों के चक्कर म पडकर अपनी

साधना से नष्ट हो जाते हैं। शास्त्र में कहा है—

> अहिमे सुहुमा संगा, भिक्खूण जे दुरुत्तरा।
> जत्थ एगे विसीयंति, ण चयन्ति जवित्तए॥
>
> —सूयग० अ० ३, उ० २।

अर्थात् यह अनुकूल उपसर्ग बड़े ही सूक्ष्म होते हैं। साधु पुरुष बड़ी कठिनाई से इन्हें जीत पाते हैं। कई एक तो इन उपसर्गों के आने पर अपने संयम की रक्षा करने में ही असमर्थ हो जाते हैं।

वे अनुकूल उपसर्ग कौन से हैं सो शास्त्र कहते हैं—

> अप्पेगे नायओ दिस्स रोयंति परिवारिया।
> पोस णे ताय ! पुट्ठोसि, कस्स ताय ! जहासि ण ?
> पिया ते थेरओ तात ! ससा ते खुड्डिया इमा।
> भायरो ते सगा तात ! सोयरा किं जहासि णे ?
> मायरं पियरं पोस, एवं लोगो भविस्सइ।
> एवं खु लोइयं तात ! जे पालंति मायरं॥
> एहि ताय ! घरं जामो, मा य कम्मे सहा वयं।
> बितियं पि ताय ! पासामो जामु ताव सयं गिहं॥

अर्थात—साधु के परिवार वाले साधु को देखकर घेर लेते हैं और रोकर कहते हैं—तात ! तू हमें क्यों त्यागता है ? हमने लड़कपन से तुम्हारा पालन किया है अब तुम हमारा पालन करो।

तात ! तुम्हारे पिता बूढ़े हैं और तुम्हारी बहन नादान है। यह तुम्हारे सगे भाई हैं। तुम हम लोगों को क्यों त्यागते हो ?

हे पुत्र ! अपने माता पिता का पालन करो। उनका पालन करने से ही परलोक सुधरेगा। जगत् का यही आचार है और इसलिए लोग अपने माता पिता का पालन करते हैं।

हे तात ! चलो घर चलें। अब से तुम कल ही कोई काम मत करना। हम काम कर दिया करेंगे। एक बार काम से घबरा कर तुम भाग आये हो, पर अब चलो, अपने घर चलें।

इस प्रकार अनुनय, विनय, लाचारी और बेबसी प्रकट करने वाले तथा प्रलोभनों में फँसाने वाले यह अनुकूल उपसर्ग बड़े करारे होते हैं। शास्त्रकार के कथना- नुसार साधु भी बड़ी कठिनाई से इन्हें सहन कर पाते हैं। हमारे चरितनायक अभी साधु नहीं बने थे, साधु होने के उम्मीदवार ही थे। फिर भी उन्होंने अत्यन्त धैर्य के साथ बाबा जी के अनुकूल उपसर्गों को सहन किया। उन्होंने बाबाजी को नम्रतापूर्वक निवेदन किया—

गार्हस्थ्य एक जंजाल है। इस जंजाल में मैं पड़ना नहीं चाहता। दीक्षा लेने का पक्का निश्चय कर चुका हूँ। धन दौलत और संसार के अन्य सुख साधन मेरी निगाह में तुच्छ हैं। जीवन का क्या भरोसा है ? आज है, कल नहीं। माता छोड़कर चली गई। पिताजी भी जल्दी ही चल दिये। मामाजी ने भी उनका अनुगमन किया। यह सब घटनाएँ मेरी आंखों के सामने घटीं। जीवन पर भरोसा कैसे किया जाय ? ऐसी स्थिति में एक क्षण गँवाना भी मेरे लिए असह्य है। जितनी जल्दी मनुष्य आत्म कल्याण में लग जाय उतना ही श्रेयस्कर है।

मामाजी की मृत्यु होने पर भी उस बालक का पालन पोषण हुआ ही था। इसी प्रकार अब भी होता रहेगा। अभी तो मैं दीक्षा ले रहा हूँ, यदि मेरी मृत्यु हो जाय तो उसे कौन पालेगा? मैं न होता तो भी उसका भरण पोषण तो होना ही। वास्तव में कोई किसी पर निर्भर नहीं है। सब अपने अपने कर्मों का फल भोगते हैं। यह तो मनुष्य का झूठा अहंकार है कि वह अपने आपको पालक पोषक समझता है। कोई किसी का भाग्य पलट नहीं सकता।

बाबाजी ! मेरे विचारों को आप सोडावाटर का उफान न समझें। यह विचार क्षणिक नहीं, स्थायी और दृढ़ हैं। उनमे परिवर्तन करने का प्रयास निरर्थक है। विवेकी पुरुष के लिए संसार में आकर्षण की क्या चीज है ? सभी कुछ नीरस, दुःखमय और क्षणिक है। आपके लिए यही उचित है कि आप मुझे दीक्षा लेने की आज्ञा दे दें। अगर आप आज्ञा न देंगे तो मैं साधुओं की तरह रहकर सारा जीवन बिता दूंगा। मेरा निश्चय अब बदल नहीं सकता। मैं कोई बुरा काम करने के लिए उद्यत नहीं हुआ हूँ। आप प्रसन्नतापूर्वक मुझे आज्ञा दीजिए और घर लौट जाइए।'

साधुता का अभ्यास

बाबाजी का श्री जवाहरलालजी पर गाढ़ स्नेह था। इसी स्नेह की प्रेरणा से उन्होंने दीक्षा न लेने का भरसक प्रयत्न किया। मगर अन्त में उन्हें निराश होना पड़ा। बाबाजी का श्री जवाहरलालजी पर जितना प्रेम था उससे कहीं बढ़कर श्री जवाहरलालजी का संयम पर प्रेम था। बाबाजी का प्रेम राजस था, श्री जवाहरलालजी का सात्त्विक। अन्त में सात्त्विक प्रेम ने राजस प्रेम पर विजय प्राप्त की बाबाजी निराश होकर थांदला लौटे। इधर जवाहरलालजी ने साधु वृत्ति का अभ्यास प्रारंभ कर दिया। अब आप किसी के घर भोजन नहीं करते थे। झोली में कटोरिया रखकर साधुओं की तरह गोचरी लाते थे। आप शास्त्र के मूलपाठ और थोकड़े कंठस्थ करने लगे। कुछ दिनों बाद साधु तो वहां से विहार कर गये किन्तु आप वहीं रहकर साधु सरीखा जीवन बिताने लगे। आठ महीने तक आप इसी अवस्था में रहे।

सफलता

'हे आत्मन् ! जब अंतरंग शत्रु तेरे ऊपर आक्रमण करेंगे, उस समय तू छिपकर बैठा रहेगा तो उन शत्रुओं पर विजय कैसे प्राप्त कर सकेगा ? युद्ध के समय छिपे रहना वीरात्मा को शोभा नहीं देता। इसलिए तैयार हो जा। तेरा बल अनन्त है। तेरी क्षमता अपार है। संसार की समस्त शक्तियां तेरी शक्ति के सामने पानी भरती हैं। तेरे शत्रु भले ही प्रबल हैं, पर अजेय नहीं हैं। उन्हें जीतने का प्रबल संकल्प करते ही आधी विजय प्राप्त हो जाती है।

हे आत्मन् ! अब उठ खड़ा हो। अपनी शक्ति को संभाल। अंतरंग शत्रुओं को छिन्न भिन्न कर डाल। शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने से तुझे अलौकिक वैभव प्राप्त होगा। तू सनातन साम्राज्य का स्वामी बनेगा।

चरितनायक की इस ओजस्वी वाणी में कितना बल है ? इसमें संकल्प की महत्ता है, आत्मा की अनन्त और असीम शक्तियों पर दृढ़ आस्था भरी है, आत्मिक शुद्धि प्राप्त करने की तीव्र व्यग्रता छिपी है और आत्म विकारों का क्षय करने के लिए प्रबल प्रेरणा नजर आती है। जिस महान् आत्मा के विचार इतने उच्च, उज्ज्वल और उन्नत हैं, उसे संसार के प्रलोभन अपने वश में कैसे कर सकते थे ? उसके संकल्प को कौन पराजित कर सकता था ? सचमुच उसकी तीव्र भावना के सामने संसार की शक्तियां पानी भरती थीं। अनेकानेक कठिनाइयां आने पर भी वह रंचमात्र भी विचलित नहीं हुआ। अन्तरायों की वर्षा के बीच भी वह ज्यों का त्यों खड़ा रहा। वास्तव में महापुरुषों का यही स्वभाव होता है !

आठ महीने तक साधु वृत्ति का अभ्यास करने के अनन्तर जब आपने देखा कि बाबाजी अब भी आज्ञा देने को तैयार नहीं हैं तो उन्होंने अपने सगे सम्बन्धियों को पत्र लिखे। पत्रों में यह भी उल्लेख कर दिया कि—आप आग्रह करके बाबाजी से आज्ञा नहीं दिलायेंगे तो मुझे किसी अज्ञात स्थान को चला जाना पड़ेगा और फिर कभी थांदला नहीं आ सकूंगा।'

श्री जवाहरलालजी के निश्चय पत्थर की लकीर होते थे। सभी लोग उनकी आदत से परिचित थे। अतः पत्र मिलते ही सम्बन्धी जन चिन्ता में पड़ गये। आखिर जाति के प्रतिष्ठित

पुरुषों और सम्बन्धी जनों की एक पंचायत हुई। सब पक्ष ने बाबाजी से आज्ञा देने का आग्रह किया।

बाबाजी सभी प्रयत्न करके थक चुके थे। अज्ञात स्थान में चले जाने की धमकी से वे भी विचलित हो उठे थे। उन्होंने सोचा— जवाहर का निश्चय बदल नहीं सकता। वह अपने विचारों का पक्का है। कहीं अनजान जगह चला गया तो देखना भी दुर्लभ हो जायगा। इससे बहतर है कि आज्ञा लिख दूँ। जब चाहूँगा दर्शन कर आया करूँगा।'

बाबाजी आज्ञा के लिए तैयार हो गए। वहीं पंचायत में आज्ञा पत्र लिखा गया और श्री जवाहरलालजी के पास भी एक पत्र भेज दिया गया। उसमें लिखा था—'विक्रम संवत १९४८ की मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी के बाद आपको दीक्षा लेने की आज्ञा दी जाती है।'

दीक्षा-संस्कार

'कर्म रहित अवस्था प्राप्त करना अपने ही हाथ की बात है। संयम किसी भी प्रकार दुःख प्रद नहीं वरन् आनन्ददायक है। विवेकपूर्वक संयम का पालन किया जाय तो संयम इस लोक में भी सुखदायक है और परलोक में भी।

संयम को इह परलोक में आनन्दप्रद मानने वाले श्री जवाहरलालजी को जब संयम धारण करने का आज्ञापत्र प्राप्त हुआ तो उनकी प्रसन्नता का पार न रहा। 'शुभस्य शीघ्रम्' वाली उक्ति का अनुसरण करके आपने मार्गशीर्ष शुक्ला द्वितीया (वि० सं० १९४७) को ही दीक्षा धारण करने का मुहूर्त निश्चय किया। दीक्षा के आमंत्रण पत्र भेजे गये। सैकड़ों श्रावक बाहर से एकत्रित हुए। बाबाजी स्वयं उपस्थित नहीं हो सके। उन्होंने अपने पुत्र श्री उदयचन्दजी को भेजा। निश्चित समय पर सैकड़ों नर नारियों के समक्ष मुनिश्री बड़े घासीलालजी महाराज[1] ने आपका केशलोच किया और महाव्रतों का उच्चारण करके दीक्षा दे दी। उस समय आप श्री मगनलालजी महाराज के शिष्य बने थे। इस प्रकार हमारे चरितनायक की चिरकालीन अभिलाषा पूर्ण हुई। मुनिपन धारण करके आपने अपने को कृतकृत्य समझा। आपके लिए मानव जीवन की सफलता का द्वार खुल गया। सिर पर सम्बंधियों का जो बोझा सा लदा था, वह हलका हो गया। वैरागी श्री जवाहरलालजी को संयम क्या मिला, रंक को नव निधियाँ मिल गईं, मानो दरिद्र के घर कल्पवृक्ष आ गया। आपका हृदय संतुष्ट हुआ और अन्तरात्मा को अपूर्व शान्ति का लाभ। इसके बाद चरितनायक के जीवन का नया प्रभात आरंभ हुआ।

प्रभु की गोद में

अब हमारे चरितनायक के जीवन में आमूल परिवर्तन हो गया। इस परिवर्तन के पीछे कौन सी भावना काम कर रही थी यह बात परोक्ष रूप में आ चुकी है। यहाँ उसे स्पष्ट कर देने की आवश्यकता है। मुनि जीवन धारण करने में उनका क्या महान् उद्देश्य था, यह चीज चरितनायक के शब्दों में ही व्यक्त करना अधिक उचित होगा। निम्नलिखित उद्धरण उन्हीं की समय समय पर प्रकट हुई वाणी से संग्रहीत किये गए हैं—

(१)

प्रभो! जब तक मुझ में अपूर्णता विद्यमान है तब तक मुझे आपके चरणों की नौका का आश्रय मिलना चाहिए। आपकी चरण नौका का आधार पाकर मैं संसार सागर से पार पहुँचना चाहता हूँ।

---

१ यह श्री मगनीरामजी महाराज श्री हुक्मीचन्द्रजी म० के सम्प्रदाय की महान् विभूति थे। बड़े पवित्र और चरित्र सम्पन्न तपस्वी थे। उनके शुभाशीर्वाद ने ही हमारे चरितनायक को इस पद पर पहुँचाया है।

(२)

प्रभो ! मेरी आशा अभिलाषा ऐसी है कि तुम्ही उसे पूर्ण कर सकते हो। तुम्हारे सिवाय दूसरा कोई उसे पूर्ण नही कर सकता। इसलिए मैंने तुम्हारी शरण ली है। पुत्र की आशा तो स्त्री भी पूर्ण नहीं कर सकती है। उसके लिए तुम्हारी शरण ग्रहण करने की क्या आवश्यकता है? मैं तुमसे ऐसी ही आशा करता हूँ जिसकी पूर्ति किसी और से हो ही नही सकती। मैंने तुम्हारा स्वरूप जानकर तुम्हें हृदय मे बसाया है और अपने हृदय को तुम्हारा मन्दिर समझने लगा हूँ।

(३)

प्रभो ! मैं भागकर तेरे चरण शरण मे आया हूँ। इन विकार विषधरो से मुझे बचा। मेरी रक्षा कर। विकार विष उतारकर मेरा उद्धार कर।

(४)

प्रभो ! मैं ऊर्ध्वगामी होना चाहता हूँ, प्रगति के महान् और अंतिम लक्ष्य की दिशा मे निरंतर प्रयाण करने की कामना करता हूँ। मुझे यह शक्ति दीजिए कि अधोगामी न बनूँ। विश्व के प्रलोभन मुझे किंचित भी आकृष्ट न कर सकें। भगवन्, अगर आप मेरे कवच बन जाएँ तो मैं कितना भाग्यशाली होऊँ !

(५)

प्रभो ! ससार की कामना मेरा हाथ पकडकर मुझे अपनी ओर खीच रही है। इस कामना से बचने के लिए तेरी शरण मे आना ही एकमात्र उपाय है। प्रभो ! अगर तू मुझे अपनी शरण मे लेकर मेरी बाह् पकड ले तो सासारिक कामना तुझसे डरकर मेरा पल्ला छोड़ देगी। इसलिए इस कामना के फँदे मे से छुडाने के लिए मेरी बाह् पकड, मुझे अपनी शरण मे ले।

(६)

प्रभो ! तीन लोक के समस्त पदार्थों मे मुझे तू ही प्यारा है। तू मुझे प्राणो के समान प्यारा है। यही क्या, तू मेरे लिए प्राणो का भी प्राण है। इसलिए प्राणो से भी अधिक प्यारा है।

(७)

भगवन् ! यदि तेरा तेज मेरे हृदय पर प्रतिबिम्बित हो जाय तो मैं अनन्त शक्तिशाली बन सकता हूँ—मेरी समस्त सासारिक वासना शात हो सकती है। अत प्रभो! अपने अनन्त तेज की कुछ किरणें इधर फेर दो, जिससे मोह ममता के तिमिर से आवृत मेरा अन्त करण उद्भासित हो जाय।

यही कतिपय उद्धरण चरितनायक की मनोभावना समझने मे पर्याप्त सहायता दे सकते हैं। इन्ही पवित्रतम आकाक्षाओ से प्रेरित होकर आपने प्रभु की गोद मे बठना उचित समझा।

द्वितीय अध्याय

मुनि जीवन

परीषहों पर विजय प्राप्त करना मुनिधर्म का खास अंग है। मुनियों को सर्दी गर्मी, भूख प्यास आदि के परीषह प्रायः आते ही रहते हैं। उनसे घबरा उठने वाला व्यक्ति मुनिधर्म का पालन नहीं कर सकता।

मुनि जवाहरलालजी को दीक्षा लेते ही परिषहों का सामना करना पड़ा। दीक्षा के दिन उनकी तबीयत अच्छी न थी। नवीन साधुजीवन की गुरुता के विचार से मस्तिष्क में भारीपन आ गया हो, यह भी संभव है।

प्रथम परीक्षा

दीक्षित होने के दिन ही अन्य साधुओं के साथ विहार करके आप गाँव के बाहर महादेव के मन्दिर में ठहरे। सर्दी ठीक ठीक परिमाण में आरम्भ हो चुकी थी। मन्दिर चारों ओर से खुला था। नदी नजदीक थी। ठंडी हवा के मारे शरीर में कपकपी पैदा कर रहे थे। दीक्षा लिए अभी एक दिन भी नहीं हुआ था। आत्मा बलवान् थी सही, मगर शरीर में सुकुमारता थी। शीतल वायु के थपेड़ों से आपका शरीर कांपने लगा। फिर भी उच्च उद्देश्य से दीक्षा धारण करने वाले बालक मुनिश्री जवाहरलालजी घबराये नहीं। सोचने लगे—'संयमी जीवन की यह पहली परीक्षा है। भविष्य किसने देखा है? कौन जाने अभी कितने और कैसे कैसे कष्ट झेलने पड़ेंगे? ऐसे ही अवसर तो आत्मा को दृढ़ बनाते हैं। मुझे हर्षपूर्वक यह सब सहना चाहिए।'

नव दीक्षित जानकर साथी मुनियों ने अपने वस्त्र उन्हें ओढ़ा दिये। मगर आपने अपने कष्ट की शिकायत किसी से नहीं की। धीरे धीरे आप भी अन्य मुनियों की भाँति सहिष्णु बन गये और फिर सर्दी गर्मी की आपको उतनी चिन्ता नहीं रही। इस प्रकार आप पहली परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

अध्ययन और विहार

मुनिश्री जवाहरलालजी ने अपने गुरु श्री मगनलालजी महाराज से शास्त्रों का अध्ययन आरम्भ किया। आपकी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण थी अतः आप शास्त्रीय विषय की गहराई में बहुत शीघ्र प्रवेश कर जाते थे। स्मरण शक्ति की तीव्रता के कारण आपने शास्त्रों की बहुत सी गाथाएँ और पाठ कण्ठस्थ कर लिये। बुद्धि तीक्ष्ण और स्मरण शक्ति तीव्र थी ही साथ में एकनिष्ठा और विनयशीलता का भी सम्मिश्रण था। इन सब कारणों से आपका ज्ञान निरंतर बढ़ने लगा। सीखने समय प्रत्येक बात आप बड़े ध्यान से सुनते, उस पर विचार करते और हृदयंगम कर लेते। बड़े साधुओं की सेवा करने में सदैव तत्पर रहते। आपकी बुद्धि, एकाग्रता और सेवा शीलता आदि देखकर सभी साधु आप पर प्रसन्न रहते थे। मुनिश्री मगनलालजी महाराज तो यह सब गुण देख कर समझ चुके थे कि आप भविष्य में समाज में सूर्य की भाँति चमकेंगे। अतः वे सदा मगन के साथ आपको पढ़ाने और संयम में उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए उपदेश देते रहते। गुरु के प्रति आपकी श्रद्धा भक्ति भी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती थी।

मुनिश्री लीवडी से विहार करके दाहोद, झाबुआ, रंभापुर और थांदला होते हुए पटलावद पहुँचे।

गुरु-वियोग और चित्त-विक्षेप

पटलावद पहुँचने पर मुनिश्री मगनलालजी महाराज बीमार हो गए। उनकी बीमारी उत्तरोत्तर बढती ही चली गई। अंत में माघ कृष्णा द्वितीया को, आपकी दीक्षा के डेढ़ मास पश्चात ही उनका स्वर्गवास हो गया।

लोकोत्तर पुरुषों का चित्त एक ओर वज्र से भी कठोर होता है तो दूसरी ओर फूल से भी कोमल होता है। जो महापुरुष अपनी विपदाओं को कठोरतापूर्वक सहन करता चला जाता है, वही दूसरे का साधारण सा कष्ट देखकर मोम की तरह पिघल जाता है। नव दीक्षित मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज की कठोरता और कोमलता भी इसी किस्म की थी। गुरुजी के स्वर्गवास से आपके हृदय को तीव्र आघात पहुँचा। माता, पिता और मामाजी की मृत्यु पर जिसने अनुपम धैर्य का परिचय दिया था वह गुरु की मृत्यु से विकल हो गया। डेढ़ महीने में ही श्री मगनलाल जी महाराज ने इन्हें अपनी ओर इतना आकृष्ट कर लिया था कि उनके वियोग का धक्का सहन करना कठिन हो गया। गुरु विरह के कारण वह दिन रात शोक में डूबे रहते। किसी काम में मन न लगता। प्राय एकान्त में बैठकर कुछ सोचते रहते। इस चिन्ता का प्रभाव उनके मस्तिष्क पर बहुत बुरा पड़ा।

निरन्तर चिन्तित रहने से आप विक्षिप्त से हो गये। दिन रात गुरुजी का ध्यान बना रहता। कभी सोचते—गुरु के अभाव में मोक्षमार्ग का उपदेश कौन देगा? शास्त्र कौन पढ़ाएगा? संयम में दृढ कौन करेगा? कभी इच्छा होती—अब संथारा करके जीवन का अंत कर देना ही उचित है। गुरु के बिना जीवन व्यर्थ है। कभी-कभी अकेले जंगल में जाकर तपस्या करने की सोचते। उन्हें किसी पर विश्वास नहीं होता था। अपने साथी साधुओं और दर्शनार्थ आने वाले श्रावकों को भय दृष्टि से देखा करते। इतना सब होने पर भी इस बात का बड़ा ध्यान रहता कि कहीं संयम में कोई दोष न लग जाय।

मुनि की कठोर चर्या का पालन करते हुए इस अवस्था में इन्हें संभालना बहुत कठिन कार्य था। फिर भी तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने हिम्मत न छोडी। वे आपको अच्छी तरह संभालते सान्त्वना देते और हर समय आपका ध्यान रखते। चित्त विक्षेप का समाचार सुन कर बावाजी आपको लेने आये। किन्तु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने उन्हें समझा दिया—अशुभ कर्मों के उदय से ऐसा हो रहा है। उदय में आने वाले कर्म भोगने ही पडते हैं। थांदला ले जाने से ही कर्म नहीं छूट जाएँगे। अतएव इन्हें यहीं रहने दो। हम इन्हें पूरी तरह संभालने का यत्न कर रहे हैं और करेंगे।

उन दिनों श्री जवाहरलालजी महाराज ने एक पद बना रखा था। उसे वे ऊँचे स्वर में पढ़ने लगते और पढते पढ़ते उसमें लीन हो जाते। वह पद यह था—

> अरिहंत देव नेडे
> जीन तीन भुवन में कुण छेडे ॥

अर्थात—समस्त आन्तरिक शत्रुओं को नष्ट कर डालने वाले—अरिहंत देव जिसके नजदीक मौजूद हैं—जिसकी अन्तरात्मा में विराजमान हैं—उसे तीन लोक में कौन छेड सकता है?

यह पद उस समय आपका रक्षा मंत्र बन गया। यह पद बोलते बोलते आप समस्त बातें भूल जाते संसार की सुध बुध न रहती। इससे उन्हें शान्ति मिलती। इस अवस्था में आपको जो अनुभव हुआ वह जीवन व्यापी हो गया। आपने अपने प्रवचनों में भगवान के नाम स्मरण की महिमा बड़े ही ओजपूर्ण शब्दों में प्रकट की है। एक उद्धरण लीजिए—

महापुरुषों के जीवन में नाम स्मरण का स्थान बहुत ऊँचा रहा है। जिस समय वे सांसारिक उलझनों से ऊब जाते हैं। उनका चित्त अशान्त और उद्विग्न हो जाता है उस समय भगवान् का नाम ही उन्हें सान्त्वना देता है। भयङ्कर विपत्तियों के उपस्थित होने पर भगवन् नाम ही उन्हें धैर्य बंधाता है और किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाने पर मार्ग प्रदर्शन करता है। नाम स्मरण अपूर्व शक्ति का स्रोत है। जब जब आत्मा निर्बल बनती है तो नाम स्मरण उसमें नवीन शक्ति फूँक देता है। नाम स्मरण में इतना बल इतना रस और इतना प्रकाश कहाँ से आया? इस प्रश्न का उत्तर अनुभवगम्य है। वह युक्ति और शब्दों की पहुँच से परे है। फिर भी इतना कहा जा सकता है कि आत्मा में अनन्त शक्तियाँ विद्यमान हैं। अभी वे सभी अविकसित अवस्था में पड़ी हुई हैं। आत्मा में अनन्त ज्ञान है, अनन्त सुख है, अनन्त वीर्य है। जिस समय मनुष्य 'सिद्धोऽहं शुद्धोऽहं अनन्त ज्ञानादिगुणसमृद्धोऽहम्' का तत्व समझकर, भगवान् में तन्मयता स्थापित करके उनके नाम का स्मरण करने लगता है उस समय उसे अपने में छिपी हुई शक्तियों का आभास होने लगता है। यह आभास ज्यों ज्यों निर्मल होता जाता है त्यों त्यों परम आनन्द का अनुभव बढ़ता जाता है। भगवान् का स्मरण आत्मविकास को आमन्त्रण देता है। नाम स्मरण आत्मिक शक्तियों का उद्बोधन है क्योंकि पूर्ण विकसित आत्मा ही भगवान् है।

जीवन के प्रभात से लेकर जीवन की संध्या तक मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज में नाम स्मरण की लगन वर्धिगत होती रही है। बड़े सवेरे उठकर ईश्वर का ध्यान करना आपका नित्य कर्म था। दैनिक प्रवचन आरम्भ करने से पहले आप जिस श्रद्धा, भक्ति और तन्मयता से प्रार्थना किया करते थे, उसे देखने वाले ही जान सकते हैं। उस समय आप भक्ति रस में डूब जाते थे। उस समय की आपकी मुद्रा आज भी दर्शकों के सामने सजीव हो उठती है। प्रार्थना करते करते आप सूरदास का 'निर्बल के बल राम' वाला प्रसिद्ध भजन गाया करते। उस समय ऐसा मालूम होता कि आप अपना सारा बल, सारा ज्ञान, सारा, सुख, ईश्वर के चरणों में समर्पित कर चुके हैं। स्वयं निर्बल हो गए। अपना अस्तित्व मिटा दिया। ईश्वर के साथ अभेद होते ही ईश्वरीय बल आत्मा में आ गया। ईश्वर के अस्तित्व में लीन हो गए।

आत्मा में परमात्मा का बल आ जाने पर असफलता दूर हो जाती है। उस समय ईश्वरीय शक्ति मनोवांछित कार्य पूरा कर देती है। इसी समय भक्त लोग भौतिक शक्तियों का विश्वास छोड़कर आध्यात्मिक शक्तियों का आह्वान करते हैं। उस समय अज्ञान का परदा हटते ही उन्हें जो आनन्द होता है, जो शक्ति प्राप्त होती है तथा ज्ञान की जो ज्योति प्रकट होती है, उसके सामने संसार की समस्त सम्पत्तियाँ तुच्छ हैं नगण्य हैं, नाचीज हैं। इसी अलौकिक आनन्द का अनुभव करने के लिए कोई मनुष्य राज वैभव को ठुकरा कर अकिंचनता धारण करते हैं। हमारे चरितनायक में भी उस आनन्द की दिव्य धारा का स्रोत बहता था। यह बात उनकी भावमय मुद्रा से उनकी मस्ती से और उनकी भक्तिमयी वाणी से सहज ही प्रकट हो जाती थी।

पटलावद से विहार करके मुनि श्री अनेक गाँवों में होते हुए राजगढ़ पधारे। यहाँ एक बार आपने जंगल में जाकर तपस्या करने का निश्चय कर लिया, किन्तु मुनि श्री मोतीलाल जी महाराज के समझाने से मान गये थे। राजगढ़ से आप धार पधार गये। विहार में आप आत्म चिन्तन में लीन रहते थे। खड़े साधु खड़े होने को कहते तो खड़े हो जाते चलने को कहते तो चल पड़ते। न आपको शास्त्रों का बोझ मालूम होता न रास्ते की थकावट ही मालूम होती। कभी कभी आप जंगल में चल जाने को उद्यत होते मगर उस अवस्था में भी संयम का इतना भान था कि अगर कोई मुनि आपको आज्ञा में लेता तो वहीं पर खड़े रह जाते। बिना सोचे एक कदम भी आगे न बढ़ाते। बचपन के अन्तःकरण पर उभरे हुए संस्कारों का ही यह प्रभाव था।

धार के प्रसिद्ध श्रावक पन्नालालजी ने यद्यो का आयुर्वेद विधि से इलाज करवाया मगर कोई इलाज कारगर न हुआ। अन्त में वे एक डाक्टर को लाये। सिर के पिछले भाग मे प्लास्टर लगाने के लिए बाल हटाना आवश्यक था। बाल हटाने के लिए नाई बुलाया गया। मगर नाई से बाल कटवाना साधु के आचार से विरुद्ध है, यह बात उस समय भी आपके ध्यान मे थी। उन्होंने नाई से बाल नही कटवाये। मगर डाक्टर का कहना था कि बाल साफ होने चाहिए। अतएव उन्होंने अपने ही हाथ से लोच करना आरम्भ कर दिया और बिना किसी कठिनाई के सभी बाल उखाड डाले। आपके सिर पर उस समय बहुत घने घु घराले बाल थे। दीक्षा के बाद लोच करने का यह पहला ही अवसर था। फिर भी वह धैर्य के साथ बिना किसी हिचकिचाहट के उन्होंने लोच कर डाला। सयम पालन की उनकी लालसा बहुत गहरी और प्रबल थी। सयम के लिए बड़े से बडा कष्ट उनके लिए नगण्य था। उनकी यह स्थिरता और सयम सम्बन्धी तीव्र श्रद्धा देखकर वहाँ उपस्थित जनता चकित रह गई। उस समय मुनि श्री के पास डाक्टर एम० भाऊ और डाक्टर गोपालभाऊ उपस्थित थे।

केश लु चन हो जाने के पश्चात डाक्टर ने नियत स्थान पर प्लास्टर लगाया। उस समय श्री जवाहरलालजी महाराज स्थिर और शात बैठ रहे। सिर मे से लगभग तीन सेर पानी निकला। वे बेहोश हो गए। धीरे धीरे होश आ गया मगर अशान्ति इतनी बढ़ गई कि एक भी शब्द बोलने की हिम्मत न रही। धीरे धीरे आपकी कमजोरी हट गई और आप स्वस्थ हो गए। मानसिक अवस्था भी ठीक हो गई। मानसिक और शारीरिक अस्वस्थता दूर होते देखकर मुनियो और श्रावको को अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

मुनिश्री के इस अस्वास्थ्य का कारण क्या था, यह आपने स्वय ही बाद म प्रकट किया है। राजकोट के एक प्रवचन म आपने कहा था—'आज बालको के मस्तिष्क मे भय के सस्कार बहुत डाले जाते हैं। इससे कितनी हानि होती है, यह बात मैं जानता हूँ। मेरी माता मुझे दो वर्ष का छोड कर चली गई थी और मेरे पिता पाँच वर्ष का छोडकर चल गये थे। मेरा पालन पोषण मेरे मामा के घर हुआ था। वहाँ स थोड़ी दूर एक मकान था जो बहुत नीचा होन के कारण अन्धकारमय रहता था। स्त्रियाँ कहा करती—इस मकान में भूत रहता है। मैं यह बात सुनकर डरता था और इस कारण रात के समय दुकान मे अपने मामा के मकान जाना होता तो उस मकान के पास से न जाकर लम्बा चक्कर काटकर दूसरे रास्त से जाता। मेरे मस्तिष्क मे भूत के जो सस्कार पड गये थे वे दीक्षा लेन के बाद भी समूल नष्ट नही हुए। दीक्षा लेने के बाद मेरे दीक्षा गुरु का डेढ़ मास बाद ही स्वर्गवास हो गया। उस समय मैं लगभग पाँच महीना विक्षिप्त सा रहा था। मेरे मस्तक म भूत के जो सस्कार पड़े थे उनके कारण उस समय मुझे ऐसा लगता था कि कोई प्रत्यक्ष ही मुझ पर जन्त्र मन्त्र कर रहा है। मगर जब मैं स्वस्थ हुआ तो मालूम हुआ कि वास्तव मे वह सब मेरा भ्रम था, और कुछ भी नही।'

महाभाग मोतीलालजी महाराज

मनुष्य समाज मे आज यदि सस्कारिता है, नैतिकता है, सो उसका सारा श्रेय विभिन्न युगो म उत्पन्न होन वाले उन महापुरुषो को है, जिन्होने मनुष्य जाति के उत्थान के लिए अपना जीवन अर्पित किया है। अपने जीवन व्यवहार द्वारा, अपने उपदेशो द्वारा, साहित्य द्वारा जिन्होंने मनुष्य के समक्ष महान् आदर्श उपस्थित किया है, मानवीय भावनाओ का धरातल ऊँचा उठाया है और मनुष्य जाति को जाग्रत एव शिक्षित बनाकर ससार का महान् उपकार किया है, उन महापुरुषों का जीवन इतिहास ही सभ्यता का इतिहास है। ससार अनादि काल से ऐसे महापुरुषो की पूजा करता चला आया है।

महापुरुषों ने मानव संस्कृति का निर्माण किया है, मगर महापुरुष सीधे आसमान से उतर नहीं आते। उनका निर्माण भी इसी संसार में होता है। परिस्थितियों के अतिरिक्त अनेक सम्बन्धित जन भी ऐसे होते हैं जो महापुरुषों के निर्माण में प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से सहायक होते हैं। अगर मनुष्य समाज महापुरुषों का ऋणी है तो उन विशिष्ट व्यक्तियों का भी ऋणी है जिन्होंने किसी को महापुरुष के दर्जे पर पहुँचाने के लिए कोई कसर नहीं रखी। महाभाग मुनि श्री मोती लालजी महाराज ऐसी ही विभूतियों में से थे। पं० मोतीलाल जी नेहरू की छत्रच्छाया न मिलती तो पं० जवाहरलाल जी नेहरू इस रूप में हमें प्राप्त होते या नहीं, कौन कह सकता है? इसी प्रकार मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की छत्रच्छाया के अभाव में मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का इस रूप में प्राप्त होना भी संदिग्ध ही था। पं० मोतीलालजी नेहरू की प्रगाढ़ सम्भाल के फलस्वरूप पं० जवाहरलालजी राष्ट्रीय क्षेत्र में तेजस्वी सूर्य की भाँति चमक उठे। इसी प्रकार मुनि श्री मोतीलालजी महाराज की निरन्तर की सार सम्भाल से मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज धार्मिक क्षेत्र में सूर्य की भाँति चमक उठे। मुनिश्री जवाहरलालजी और पं० जवाहरलाल नेहरू में कितना सादृश्य है, यह बताने का यहाँ अवकाश नहीं है। राणपुर (काठियावाड़) के प्रसिद्ध पत्र 'फूलछाब' के सम्पादक और अग्रगण्य गुजराती लेखक श्री मेघाणी ने आपके प्रवचन संग्रह की समालोचना करते हुए लिखा है—'हिन्दुस्तान में जवाहरलाल एक नहीं दो हैं। एक राष्ट्रनायक है, दूसरा धर्म नायक है। हम इस वाक्य में इतना और जोड़ देना चाहते हैं कि भारत में जवाहरलालजी के संरक्षक मोतीलालजी भी दो थे—एक पं० मोतीलाल नेहरू और दूसरे तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज। हम यहाँ विस्तृत तुलना में नहीं पड़ना चाहते। किन्तु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के सम्बन्ध में कतिपय बातों का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है।

मुनिश्री जवाहरलालजी का निर्माण करने में श्री मोतीलालजी महाराज का बहुत बड़ा हाथ रहा है। उन्होंने बड़ी बड़ी मुसीबतें झेलकर, तरह तरह की कठिनाइयाँ उठाकर मुनिश्री का संरक्षण किया है। चित्त विक्षेप की अवस्था में उन्होंने जिस लगन के साथ मुनिश्री की सेवा शुश्रूषा की, उसकी उपमा मिलना भी सरल नहीं है। समाज जैसे मुनिश्री जवाहरलाल जी महाराज का ऋणी है, उसी प्रकार मोतीलालजी महाराज का भी है। आपके संस्मरण हमारे चरितनायक के संस्मरणों के साथ सदा सजग जीवित रहेंगे।

तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज का जन्म सिंगोली (मेवाड़) में हुआ था। आपके पिता का नाम उदयचन्दजी कटारिया और माता का नाम विरमीबाई था। अठारह वर्ष की आयु में जीवन के उद्यान में नवयौवन के वसन्त का आगमन होता है। संसार की कामना रूपी कालिकाएँ अपनी कुहुक से मनुष्य को मदोन्मत्त बना देती हैं। मन रूपी भ्रमर रस लोलुप बनकर अधखिली कलियों के चारों ओर घूमने को उद्यत रहता है। जीवन उद्यान में सरसता और अनुराग का साम्राज्य व्याप्त हो जाता है उस समय विरक्ति—भोगों के प्रति वैराग्य होना सहज बात नहीं है। प्रबल प्रवृत्ति से युद्ध करके उसे पराजित किये बिना वैराग्य का रंग एक क्षण नहीं चढ़ सकता। मुनि श्री मोतीलालजी ऐसे ही प्रवृत्ति विजयी थे। उन्होंने अठारह वर्ष की आयु में संसार का त्याग किया और मुनिश्री राजमलजी महाराज के निकट मुनिदीक्षा अंगीकार कर ली। यह उनका जीवन का ही बदला नहीं था वरन् प्रवृत्ति का बदला भी था। वि० सं० १९३२ के माघ शुक्लपक्ष में (वसन्त पंचमी के लगभग) आपकी दीक्षा हुई और वि० सं० १९८३, फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन जावरा में आपने स्वर्गारोहण किया।

आप उत्कृष्ट कोटि के तपस्वी साधु थे। आपकी तपस्या प्रायः चलती रहती थी। एक से अड़तालीस (सैंतालीस को छोड़कर) तक का थोक किया था और इसके अतिरिक्त मासखमण आदि अनेक तप किये थे।

आप जैसे उच्चकोटि के तपस्वी थे वैसे ही उत्कृष्ट सेवा भावी भी थे। आपकी सेवा परायणता साधुओं के सामने एक आदर्श उपस्थित करती है। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का चित्त जब विक्षिप्त हो गया था तब बाबाजी उन्हें लेने आये, मगर आपने सेवा का भार अपने सिर ले लिया था और बाबाजी को उनकी समुचित सेवा होते देखकर संतोष भी हो गया था। अतः वे लौट गये। चित्त विक्षेप जब कुछ अधिक बढ़ गया तब श्रावकों ने मुनिश्री मोतीलालजी महाराज से निवेदन किया—'आप अकेले हैं। मुनि श्री की सेवा करने में आपको बेहद कष्ट उठाना पड़ता है। अतः आप इन्हें हमें सौंप दीजिए हम सेवा करेंगे और स्वस्थ होने पर आपकी सेवा में उपस्थित कर देंगे। श्रावकों की प्रार्थना के उत्तर में श्री मोतीलालजी महाराज ने कहा—'जब तक मेरे तन में प्राण हैं, तब तक इनकी सेवा करता रहूँगा।'

इन्हीं दिनों श्री जवाहरलाल जी महाराज एक बार नग्न हो गए। मोतीलाल जी महाराज ने उन्हें चोलपट्ट पहनाना चाहा। चोलपट्ट पहनाते समय उन्होंने आपके पेट में काट खाया। काटने से घाव हो गया। फिर भी धन्य मुनि मोतीलालजी महाराज! आप जरा भी हताश न हुए। आप अकेले ही अपना घाव संभालते और जवाहरलालजी महाराज को भी संभालते। साधु मर्यादा के अनुसार दैनिक कृत्य भी करते।

गुरु शिष्य की संकीर्ण मनोभावना के कारण, रतलाम में तीस साधु मौजूद रहते हुए भी मुनि श्री मोतीलालजी महाराज के समीप कोई साधु न आया। इस संकीर्णता को नष्ट करने के उद्देश्य से ही आगे चलकर महाराज श्री जवाहरलालजी ने आचार्य पद प्राप्त होने पर यह नियम बनाया कि समस्त शिष्य एक ही गुरु (आचार्य) के हों। धर्म क्षेत्र का यह साम्यवाद इस अवस्था के कटु अनुभवों का परिणाम था। कई कारणों से यह नियम स्थायी न रह सका और उसे परिवर्तित करना पड़ा। अस्तु।

वास्तव में मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की सेवा परायणता के फलस्वरूप ही मुनिश्री की रक्षा हो सकी। आगे चलकर आपने सदैव मुनिश्री के साथ ही चातुर्मास किया। सिर्फ एक अंतिम चातुर्मास साथ साथ न हो सका। अन्तिम समय में मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की भी खूब सेवा हुई। आपके सुशिष्य तत्कालीन मुनि और वर्तमान कालीन आचार्य श्री गणेशीलाल जी महाराज आदि साधु सदैव आपकी सेवा में तत्पर रहे।

हमारे चरितनायक मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के असीम उपकारों को हृदयग्राही शब्दों में व्यक्त किया करते थे। मुनिश्री का स्मरण आते ही आपका हृदय गद्गद हो उठता था। अन्तिम समय तक मुनिश्री के प्रति वे कृतज्ञ रहे। आप अकसर कहा करते थे—'तपस्वी मुनिश्री मोतीलाल जी महाराज के मेरे ऊपर असीम उपकार हैं।

प्रथम चातुर्मास

चातुर्मास का काल समीप आ गया था। विहार करके चातुर्मास के योग्य दूसरे स्थान पर पहुँचना कठिन था। अतएव धार में ही चातुर्मास करने का निश्चय हुआ। मुनिश्री में अब कुछ शक्ति आ गई थी। मस्तिष्क भी स्वस्थ और शान्त था। अतएव आपने अध्ययन आरम्भ कर दिया। शास्त्रों का पाठ कंठस्थ करने लगे। मगर आपका उर्वर मस्तिष्क इतने में ही संतुष्ट न हुआ। वह कोई ऐसा क्षेत्र खोज रहा था जिसमें कल्पना शक्ति को पूरा अवकाश हो और साथ ही गम्भीर विचार की भी आवश्यकता हो।

वर्तमान धार प्राचीन काल की धारा नगरी है, जिसमें राजा भोज जैसे राज कवि हुए हैं। भोज के समय में वहाँ सरस्वती का वास था। साधारण श्रेणी के लोग भी सुन्दर सुन्दर कविता करते थे। ऐसे क्षेत्र में पहुँचकर मुनिश्री का कविता कला की ओर

स्वाभाविक था। आप कविता रचना की ओर आकृष्ट हुए। उस समय आपने जम्बूस्वामी तथा अन्य महापुरुषों की स्तुति में कई कविताएँ रचीं। इसी में आपको आनन्द प्राप्त होने लगा। नीतिकार का कथन है—

काव्य शास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।

अर्थात् बुद्धिमान् पुरुष काव्य शास्त्र या काव्य और शास्त्र के विनोद में ही अपना समय व्यतीत करते हैं।

हमारे चरितनायक पर यह उक्ति पूरी तरह चरितार्थ होती थी। उधर आप धर्म शास्त्र का अध्ययन करते थे और इधर भाषा काव्य का निर्माण और आस्वादन भी करते थे। अल्प काल में ही आप सुन्दर रचनाएँ करने में सफल हुए।

काव्य शास्त्र के अनेक आचार्य कविता के लिए शक्ति, निपुणता, अभ्यास, लौकिक और शास्त्रीय बातों का निरीक्षण आदि की आवश्यकता बतलाते हैं। मगर किसी किसी आचार्य के मत से प्रतिभा ही काव्य रचना का प्रधान साधन है। मुनिश्री के उस समय प्रतिभा ही सबसे बड़ी पूंजी थी उसी के आधार पर आप मधुर और सरस कविता करने में समर्थ हो गए।

मुनिश्री में प्रतिभा का वैभव जन्म जात था। इस प्रतिभा के आधार पर ही आप उस समय भी तत्काल कविता रच डालते थे। कभी कभी व्याख्यान में बैठे बैठे ही कविता रच डालते और वहीं श्रोताओं को सुनाकर आनन्द विभोर कर देते थे। आपकी समस्त रचनाएँ प्रायः भक्ति रस मयी हैं। किन्तु बीच बीच में अन्यान्य रसों का भी उनमें बड़ा ही सुन्दर सन्निवेश है। पुस्तकीय अध्ययन अधिक न होने पर भी प्रकृति की पाठशाला में आपने गम्भीर अध्ययन किया था।

वास्तव में देखा जाय तो कविता का सम्बन्ध बाह्य वस्तुओं के साथ उतना नहीं है जितना कवि के हृदय की अनुभूति के साथ। हृदय की अनुभूति बढ़कर जब संगीतमय होकर बाहर निकलने लगती है तो उसका नाम कविता हो जाता है। मुनिश्री जवाहरलालजी में अनुभूति की प्रबलता थी। महापुरुषों में इसका होना आवश्यक भी है। कवि, धर्माचार्य, राष्ट्रनेता, समाज-सुधारक, दार्शनिक साहित्यकार आदि सभी में यही अनुभूति काम करती है और भिन्न भिन्न रूप धारण करके प्रकट होती है। कवि में यह कविता बन जाती है धर्माचार्य में संयम, त्याग और तपस्या का रूप ग्रहण करती है राष्ट्र नेता में वाणी तथा बलिदान के रूप में प्रकट होती है। दार्शनिक में यह गम्भीरता का रूप धारण करती है और साहित्यकार में कला के उद्गम का स्रोत बन जाती है। मगर हमारे चरितनायक में यह कविता संयम वाणी आदि अनेक रूपों में प्रकट हुई है। उनके प्रखर तीव्र अनुभूति के ज्वलन्त प्रमाण हैं।

उग्र विहार

जीवन निर्माण में यात्रा का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह यात्रा शिक्षा का प्रधान अंग मानी गई है। केवल लम्बी लम्बी और साहस पूर्ण यात्राओं के कारण ही बहुत से व्यक्तियों का नाम इतिहास में अमर है। उनकी यात्राओं का वर्णन साहित्य की अमूल्य सम्पत्ति है।

भारतीय संस्कृति में यात्रा को आध्यात्मिक पवित्रता दी गई है। उसमें भी श्रमण संस्कृति में इस और भी अधिक महत्त्व प्राप्त है। उग्र विहारी होना श्रमण का कर्तव्य बतलाया गया है। चातुर्मास के अतिरिक्त किसी भी स्थान पर एक मास से अधिक ठहरना साधु के लिए निषिद्ध है। निशीथचूर्णि भाष्य में लिखा है कि जो साधु भविष्य में आचार्य बनने वाला हो उसे भिन्न भिन्न प्रान्तों में भ्रमण करना चाहिए।

यात्रा का सबसे बड़ा लाभ आध्यात्मिक विकास है। एक स्थान से दूसरे स्थान तक पैदल भ्रमण करने में मार्ग की अनेक प्रकार की परिस्थितियाँ सामने आती हैं। कहीं पहाड़ आते हैं, कहीं कल कल करती हुई नदियाँ प्रवाहित होती हैं। कहीं हरे भरे खेत और कहीं भीषण जंगल। कहीं

सघन वृक्षावली और कही विशाल एव रूखा रेगिस्तान। कही श्रद्धा भक्ति के भार से झुके हुए भद्र ग्रामीण स्वागत के लिए उद्यत मिलते हैं तो कही क्रूरकर्मा डाकू लूटने के लिए तयार होते हैं। कही सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक प्राणियो का सामना करना पडता है तो कही क्रीड़ा करते हुए भोले मृग शिशु दृष्टिगोचर होते हैं। यह सब देखने से प्रकृति का ज्ञान होता है और समभाव रखने का अभ्यास बढता है। हमारे चरितनायक पदल भ्रमण करते हुए प्रकृति का बडी बारीक नजर से अवलोकन करते थे और उमस मिलने वाली शिक्षा का विचार किया करते थे। आपका यह कथन कि 'प्रकृति की पाठशाला म से जो सस्कारी ज्ञान मिलता है वह कालेज या हाईस्कूल मे मिलना कठिन है। आपके प्रकृति निरीक्षण का परिणाम था। एक झरने का निरीक्षण करके आपकी कल्पना कहाँ तक दौडती है यह जानने योग्य है। आप कहते हैं —

जंगल मे झर झर ध्वनि करके वहते झरने को देखकर महापुरुष क्या विचार करते हैं? वे विचारते हैं—जब मैं इस झरने के पास नही आया था तब भी झरना झर झर आवाज कर रहा था। अब मैं इसके पास आया हूँ तब भी यह झर झर आवाज कर रहा है। जब मैं यहां स चला जाऊगा तब भी इसकी यह ध्वनि बद न होगी। चाहे कोई राजा आवे या रक आवे, कोई इसकी प्रशसा करे, या निन्दा करे मगर झरना सदव एक ही रूप म अपनी आवाज जारी रखता है—न उसे कम करता है न ज्यादा। वह अपनी आवाज म तनिक भी परिवतन नही करता। इस प्रकार जैसे यह झरना अपना धम नही बदलता वसे ही अगर मैं भी अपने धम को न बदलूँ तो मेरा जीवन सार्थक हो जाय। इस झरने मे राग द्वेप नही है। जिस पुरुष मे झरने का यह गुण विद्यमान है वह वास्तव म महापुरुष है।

इसके अतिरिक्त झरने मे एक धारा से वहने का भी गुण है। यह जिस धारा से बह रहा है उसी धारा से वहता रहता है। मगर जब हम अपने जीवन की धारा की ओर दृष्टिपात करते हैं तो देखते हैं कि हमारे जीवन की धारा थोडी थोडी देर म पलटती रहती है। हमारे जीवन की एक निश्चित धारा ही नही है। धन्य है यह निर्झर जो निरन्तर एक ही धारा से बहता रहता है।

झरने म तीसरा गुण भी है, जो खास तौर से हमारे लिए उपादेय है। यह झरना अपना समस्त जीवन (जल) किसी बडी नदी को सौंप देता है और उसके साथ होकर समुद्र म विलीन हो जाता है। वहा पहुँचकर वह अपना नाम भी शेप नही रहने देता। इसी प्रकार मैं भी किसी महापुरुष की सगति से परमात्मा म मिल जाऊँ तो क्या कहना है!

'जैसी दृष्टि वसी सृष्टि' इस कहावत के अनुसार एक प्राकृतिक पदार्थ को देखकर एक मनुष्य जो शिक्षा लेता है दूसरा उसस विपरीत भी ले सकता है। हमारे चरितनायक ने झरना देखकर समताभाव, धम दृढ़ता और परमात्मा म आत्मार्पण की जो महान् शिक्षा ली है वह उनके जीवन की पवित्रता का परिचय दता है। प्रकृति के विषय म आपके विचार बहुत गभीर थे। आपके यह शब्द ध्यान देने योग्य हैं—

'तुम समझे होओगे कि गूँगी प्रकृति तुम्हारी क्या सहायता कर सकती है? मगर यह तुम्हारा भ्रम है। प्रकृति मौन सहायता पहुँचाती रहती है।

परन्तु प्रकृति के पर्यवेक्षण का अनुपम आनन्द पैदल चलने वालो को ही नसीब होता है। रेल, मोटर या वायुयान की छाती पर सवार होनेवाले और गोली की तरह सरसराहट करके एक जगह स दूसरी जगह जा पहुँचने वाले इस आनन्द से प्राय वचित ही रहते हैं। मार्ग के दृश्य उन्हें भागते हुए स्वप्न के समान दृष्टिगोचर होते हैं। उनके साथ हृदय का कोई सम्बन्ध स्थापित नही होने पाता।

पदल यात्रा करने वाला पुरुष रास्ते के ग्रामो और वन खण्डो के निवासियो के परिचय म आता है। उनसे सभाषण करके प्रेम सम्बन्ध स्थापित करता है। यहां तक कि जंगल के हिंसक

प्राणियों के साथ भी मैत्री जोड़ लेता है। वह धीरे धीरे विश्व प्रेम की ओर अग्रसर होता है।

मार्ग की विषम परिस्थितियों का धैर्यपूर्वक सामना करने से आत्म बल की वृद्धि होती है।

पैदल यात्रा से ज्ञान वृद्धि में भी बहुत सहायता मिलती है। मानव स्वभाव का परिचय प्राप्त करने के लिए पदल भ्रमण अत्यन्त उपयोगी है। विभिन्न भाषाएँ, बोलियाँ और संस्कृतियां समझने के लिए भी इसकी आवश्यकता है।

प्रचार की दृष्टि से तो पैदल भ्रमण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है। महावीर और बुद्ध जैसे संसार के महान् नेताओं ने भी पैदल भ्रमण करके ही जनता में धर्म जागृति उत्पन्न की, क्रांति का मन्त्र फूंका और युग युग से चली आई रूढ़ियों के स्थान पर वास्तविक कर्तव्य की स्थापना की थी। इस युग के आदर्श नेता महात्मा गांधीजी ने भी डांडी के लिए पैदल प्रयाण करके जनता में एक अद्भुत जोश पैदा कर दिया था।

चारित्र रक्षा की दृष्टि से भी साधु के लिए एक नियत स्थान पर न टिककर पैदल भ्रमण करना आवश्यक है। अधिक समय तक एक स्थान पर टिके रहने से मोह की जागृति होने का भय रहता है। इस दृष्टि से जैन शास्त्रों में साधु के लिए नवकल्पी विहार आवश्यक माना गया है।

धार में चातुर्मास समाप्त करके मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने उग्र विहार आरम्भ किया। आपने अपने साधु जीवन काल में मारवाड़, मालवा, मध्यभारत, गुजरात, काठियावाड़ तथा महाराष्ट्र को पवित्र किया है। हरियाना, देहली और संयुक्त प्रान्त में भी आपकी उपदेश गंगा प्रवाहित हो चुकी है। जैन साधु की कठोर मर्यादाओं का पालन करते हुए इतना विस्तृत विहार करना आप सरीखे धर्मवीरों का ही काम है। इसी से आपकी साहसिकता और कष्ट सहिष्णुता का अनुमान किया जा सकता है।

धार से आप इन्दौर पधारे। वहां एक मास ठहरकर विहार करते हुए उज्जैन पधारे। उज्जैन में आपने मालवा भाषा में चाहे दर तक व्याख्यान देना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार राजा भोज की राजधानी धारा नगरी में आपकी कविता धारा का उद्गम हुआ और परम प्रतापी महाराजा विक्रमादित्य की राजधानी उज्जयिनी में आपकी ज्वलित व्याख्यान धारा प्रवाहित हुई।

उज्जैन में पन्द्रह बीस दिन ठहरकर आप बड़नगर, बदनावर होते हुए रतलाम पधार गए।

आचार्य का आशीर्वाद

रतलाम में उस समय श्री श्री १००८ पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज विराजमान थे। वह आचार्य श्री प० प्र० पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के तीसरे पट्ट पर सुशोभित थे। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने उनके दर्शन किए और अपने को भाग्यशाली समझा। पूज्यश्री ने उनकी कविताएँ, व्याख्यान शक्ति तथा प्रतिभा देखकर बहुत सन्तोष और हर्ष प्रकट किया उन्होंने यह भी आशा प्रकट की कि मुनिश्री भविष्य में उत्कृष्ट साधु होंगे और जिन शासन को दिपावेंगे। पूज्यश्री की यह आशा मुनिश्री के लिए आशीर्वाद बन गई।

पूज्यश्री ने हमारे चरितनायक से जो सुनहरी आशा बांधी थी, वह आशा आशीर्वाद ही नहीं बनी वरन् मुनिश्री के लिए एक बड़ी जिम्मेवारी भी बन गई। मुनिश्री ने यह जिम्मेवारी पूरी तरह अपने सिर ली और पूज्यश्री की आशा पूरी करने का प्रयत्न करने लगे। आप निरन्तर उन्नति करते गये और कुछ दिनों में चमक उठे।

पूज्यश्री ने आपको अपने पास रखने की इच्छा प्रकट की मगर कतिपय कारणों से ऐसा सुयोग न मिला। आपकी कवित्व शक्ति उस समय भी आरम्भ में ही इतनी विकसित हो चुकी थी

कि पूज्यश्री भी उससे प्रभावित हो गये और शास्त्रज्ञ एय स्थविर मुनियो की मौजूदगी मे भी आपको ही व्याख्यान देने के लिए आमन्त्रित करते।

कुछ दिन रतलाम ठहरकर आप जावरा पधारे। वहां मुनिश्री रत्नचन्द्रजी महाराज विराजमान थे। उनके दर्शन करके आप जावद पहुंचे। जावद म मुनिश्री (बडे) चौथमालजी महाराज विराजते थे। श्री जवाहरलालजी महाराज उनसे विभिन्न विषयो पर प्रश्नोत्तर किया करते और उन्हें अपनी कविताए सुनाया करते। आपकी तक शक्ति और प्रतिभा देखकर भावी आचाय मुनिश्री चौथमनजी महाराज ने श्री घासीलालजी महाराज से कहा था—'यह बालक बडा प्रतिभा शाली और होनहार है। आपके पास इसे पढने की सुविधा नही है। अगर आपको सुविधा हो तो इसे रामपुरा (होल्कर स्टेट) ले जाइये। वहां शास्त्रा के अच्छे ज्ञाता श्रावक केशरीमलजी रहते हैं। उनसे इसे शास्त्रो का अभ्यास कराइये।'

द्वितीय चातुर्मास

मुनिश्री घासीरामजी महाराज को श्री चौथमलजी महाराज का परामश उचित प्रतीत हुआ। उन्होंने पांच ठाणो से रामपुरा की ओर विहार किया। उस समय आप निम्नलिखित पांच साधु थे—

१—मुनिश्री घासीराम महाराज
२—मुनिश्री बदीचदजी महाराज
३—मुनिश्री मातीलालजी महाराज
४—मुनिश्री देवलालजी महाराज
५—मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज

रामपुरा पहुंचकर श्री जवाहरलालजी महाराज ने शास्त्रज्ञ श्रावक श्रीकेसरीमलजी के पास आगमो का अध्ययन आरभ कर दिया। सवत १९५० का चातुर्मास वही किया। अल्पकाल मे ही आपने दशवैकालिक उत्तराध्ययन, आचारांग, सूत्रकृताग और प्रश्नव्याकरण सूत्र अथ सहित पढ लिये। इसी चातुर्मास में श्रावक समाज म आपकी ख्याति फल गई। समय समय पर आप अपन व्याख्यानो से भी श्रावक समाज को प्रभावित करने लगे।

तृतीय चातुर्मास

उस समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को व्याख्यान देने का साधारण अच्छा अभ्यास हो गया था। आपकी वाणी मे स्वाभाविक माधुय और ओज था। अब आप स्वतन्त्र रूप से व्याख्यान फरमाने लगे थे। आपका तीसरा चातुर्मास जावरा मे हुआ। वहां आप ही मुख्य रूप से दैनिक व्याख्यान दत थे। व्याख्यानो म आपने नूतन शली का भी समावेश करना आरभ कर दिया था। फिर भी प्राचीन शली के रूढि ग्रस्त वृद्ध और नवीन विचारो से ओत प्रोत नव युवक सभी आपके व्याख्यानो को समान रूप से पसद करते थे।

जावरा मे आपका उपदेश सुनने के लिए काफी भीड इकट्ठी हो जाती थी। जिस उपदेशक ने अभी तक प्रसिद्धि प्राप्त नही की थी, जिसने आगमो का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त नहीं किया था और जो अभी तक उदीयमान उपदेशक ही था, उसने अपनी जन्म जात प्रतिभा के प्रभाव से, अपनी आत्मा की गहराई स स्वय प्रस्फुरित होन वाली वाणी से तथा अल्पकालीन प्रकृति पयवेक्षण से जनता को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। उनका उपदेश सुनने के लिए लोग उत्सुक होने लगे।

पूवभव के सस्कार कहिये या ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम एवं उपादेय नाम कम का तीव्र उदय कहिए हमारे चरितनायक का विकास दिन दूना रात चौगुना होता गया।

चातुर्मास में जावरा में अमृत वर्षा करके आपने मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के साथ थांदला की ओर प्रस्थान किया। मुनिश्री घासीरामजी महाराज वृद्धावस्था के कारण जावरा में ही विराजमान रहे।

थांदला आपकी जन्म भूमि थी। आप थांदला की धूल में खेले थे। वहां के अन्न जल से बड़े हुए थे। वहां के लोगों ने आपको शिशु के रूप में मातृ हीन तथा पितृ हीन बालक के रूप में और फिर वस्त्र विक्रेता के रूप में देखा था। आज वही बालक नवीन रूप में थांदला में उपस्थित हुआ। उसे कठोर संयमी और प्रभावशाली उपदेशक के रूप में देखने की उत्कण्ठा किसे न हुई होगी? थांदला की जनता मुनिश्री को इस रूप में पाकर निहाल हो गई। उसने मुनिश्री के गौरव का अपना ही गौरव समझा। आपकी वाणी सुनकर लोगों को रोमांच हो आया। थांदला निवासी अपने आपको धन्य मानने लगे। कुछ दिन थांदला ठहरकर आपने वहां से विहार कर दिया।

चौथा चातुर्मास

थांदला से विहार करके मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज फिर जावरा पधारे। वहां से धार आदि अनेक ग्रामों और नगरों में उपदेश की धारा बहाते हुए फिर थांदला आये। वहां की जनता ने चातुर्मास समीप आता देख वहीं चातुर्मास करने का तीव्र आग्रह किया। अतएव सं० १९५२ का चातुर्मास आपने थांदला में ही किया। चातुर्मास में आपके उपदेशों से बहुत धर्म जागृति हुई। जनता के जीवन में धर्म के संस्कार पड़े।

मातृभूमि के विषय में आपकी भावना बहुत उदार थी। आप भारतवर्ष को ही भारतीयों की जन्मभूमि कहा करते थे। प्रान्तीयता का संकीर्ण विचार आपको छू तक नहीं गया था। भारतवर्ष को लक्ष्य करके आपने कहा है—

'आपने इस भारत भूमि पर जन्म ग्रहण किया है। इसी भूमि पर शैशव क्रीड़ा की है। इसी भूमि के प्रताप से आपके शरीर का निर्माण हुआ है। हंस ने मानसरोवर से जो कुछ प्राप्त किया है उससे कहीं बहुत अधिक आपने अपनी जन्मभूमि से पाया है। अतएव हंस पर मानसरोवर का जितना ऋण है उसकी अपेक्षा बहुत अधिक ऋण आपके ऊपर अपनी जन्मभूमि का है। इस ऋण को आप किस प्रकार चुकाएँगे?

जिस भूमि से तुम्हारा अपरिमित कल्याण हो रहा है, उसे तुच्छ मानकर स्वर्ग का गुणगान करते रहना एक प्रकार का व्यामोह ही है।

मातृभूमि के विषय में आपकी कल्पना अत्यन्त उदार थी। बड़े ही प्रभावजनक शब्दों में आप मातृभूमि की महिमा का वर्णन किया करते थे। आपके यह विचार आपके साहित्य में जगह जगह बिखरे पड़े हैं। जब आपके साहित्य का विषयवार संकलन होगा तो इस विषय का भावमय वर्णन बड़े बड़े राष्ट्र नेताओं को भी चकित कर देगा। अस्तु।

भारतवर्ष में भी थांदला विशेषरूप से आपका जन्म स्थान था। उसका आप पर विशेष ऋण भी माना जा सकता है। यद्यपि आप साधु हो चुके थे और सांसारिक बंधनों को काट चुके थे तथापि मातृभूमि का ऋण अब भी आप अपने ऊपर बना समझते थे। साधुओं पर भी मातृभूमि का ऋण है। यह बात आप अपने प्रवचनों में कहा करते थे। मगर उस ऋण को चुकाने का गृहस्थों का तरीका और है और साधुओं का तरीका और। साधु वहां की जनता को धर्मोपदेश देकर, फैले हुए अन्याय और अधर्म को हटाकर वहां का अज्ञान दूर करके उस ऋण से बरी हो जाते हैं। आप चार महीने तक धर्मोपदेश देकर और लोगों को धर्म मार्ग में लगाकर उस ऋण से मुक्त हो गये।

पांचवां चातुर्मास

थांदला का चातुर्मास समाप्त करके मुनिश्री घासीरामजी महाराज की सेवा का लाभ

उठाने के पश्चात आप रतलाम होते हुए तथा अन्य स्थानो मे भ्रमण करते हुए शिवगढ पधारे। सं० १९५३ का चातुर्मास वही किया।

वहा भी आपके व्याख्यानो का खूब प्रभाव पडा। शिवगढ के ठाकुरसाहब के भाई जो बाद मे स्वय ठाकुर साहब हो गये, आपके उपदेश से खूब प्रभावित हुए। मुनिश्री के प्रति ठाकुर साहब की बडी श्रद्धा भक्ति थी। आपके उपदेशो से प्रभावित होकर जीवन भर के लिए मद्य और मांस का परित्याग कर दिया। अन्य लोगो ने भी अनेक प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये। बहुत से पशु मार जाने से बचाये गए।

शिवगढ का चातुर्मास पूर्ण करके मुनिश्री रतलाम और फिर जावरा पधारे। उस समय जावरा मे मुनिश्री बडे जवाहरलालजी महाराज विराजमान थे। शास्त्रो के अध्ययन की भूख आप को बनी ही रहती थी। महाराज का सुयोग पाकर आपने फिर आगमो का अध्ययन आरम्भ कर दिया और कई आगमो की वाचना ली।

छठा चातुर्मास

जावरा से विहार करके आप सैलाना पधारे और स० १९५४ का चातुर्मास सैलाना मे ही व्यतीत किया।

अनुभव और अध्ययन की वृद्धि के साथ ही आपकी वक्तृत्व कला भी विकसित होती चली। सलाना मे राज्य के बडे बडे पदाधिकारी आपके धार्मिक प्रवचनो से प्रभावित और आकृष्ट हुए। आपका तप, त्याग और संयम उत्कृष्ट श्रेणी का था ही, वाणी भी का विकास हो चुका था। यह सोने और सुगंध का सयोग था। इस सयोग से आपके प्रति जैन जैनेतर जनता समान भाव से श्रद्धा प्रदर्शित करती थी।

आपके उपदेश के प्रभाव से लोगो ने अनेक प्रकार के दुर्व्यसनो का त्याग किया। बडी सख्या मे लोगों ने तपश्चर्या की। धर्म की अच्छी प्रभावना हुई।

चातुर्मास पूर्ण होने के अनन्तर मुनिश्री फिर जावरा पधारे। वहाँ तत्कालीन युवाचार्य मुनिश्री चौथमलजी महाराज विराजमान थे। कुछ दिन ठहरकर युवाचार्यजी के साथ आपने भी रतलाम की ओर विहार किया। रतलाम मे उस समय के महाप्रतापी आचार्य पूज्यश्री उदयसागर जी महाराज विराजमान थे। पूज्यश्री, युवाचार्यश्री तथा बहु सख्यक मुनियो के एक साथ दर्शन करके आप आनन्द विभोर हो गए। कहते हैं उस समय रतलाम मे करीब डेढ सौ संत और सतिया एकत्र थे।

उन्ही दिनो माघ शुक्ला दशमी को आचार्यश्री का स्वर्गवास हो गया।

सातवा-आठवा चातुर्मास

रतलाम से विहार करके आप मुनिश्री मोतीलाल जी महाराज के साथ खाचरौद पधारे। खाचरौद पधारने पर आपने सोचा—यदि श्री घासीरामजी महाराज यहा विराजें तो उन्हें अधिक सहूलियत रहेगी। यह सोचकर आप फिर जावरा पधारे और श्री घासीलालजी महाराज को खाचरौद ले आये। सवत १९५५ का चातुर्मास आपने खाचरौद मे ही किया। खाचरौद मे रहते हुए आपको सग्रहणी का रोग हो गया। उपचार करने पर भी कुछ लाभ नही हुआ।

जीवन विकास के लिए एक अनिवार्य साधन है—जीवन का निरीक्षण। जो पुरुष अपने जीवन व्यवहार को सावधानी के साथ जाचता रहता है, अपने मानसिक भावो का पहरेदार की तरह देखता रहता है उसके जीवन का आश्चर्य जनक विकास अल्प-काल मे ही हो सकता है। अपने प्रति प्रामाणिक रहकर एसा करते रहने से आत्मा पापो से बचता है। यही कारण है कि साधु अपने सयम की रक्षा के उद्देश्य से प्रतिदिन आलोचना करते हैं। आलोचना मे गुरु के समक्ष अपन

सभी दोष प्रकाशित कर दिये जाते हैं और उन दोषों के निवारण के लिए यथायोग्य प्रायश्चित्त अंगीकार किया जाता है। दैनिक कार्यक्रम में किसी भी कारण से व्यतिक्रम हो जाय तो उसका प्रायश्चित करने के लिए प्रायः प्रतिदिन कुछ उपवासों का दंड आता है। प्रतिदिन के उपवासों का दंड पूरा करने के लिए एक विशिष्ट विधि है। वह यह कि एक साथ किये गए दो उपवास (बेला), अलग अलग समय में किये गए पांच उपवासों के बराबर होते हैं। तीन उपवास (तेला) करने से पच्चीस उपवासों का फल प्राप्त होता है। चार उपवास (चोला) सवा सौ उपवासों के बराबर होते हैं और पांच उपवास (पचोला) छह सौ पच्चीस उपवासों के बराबर होते हैं। इस प्रकार उत्तरोत्तर पांच गुना फल एक एक उपवास पर बढ़ता जाता है। उस तप में दूसरे दिन पोरसी का त्याग बढ़ाने से दुगुना लाभ होता है।

मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के दैनिक कार्यक्रम में हुए व्याघात के प्रायश्चित्त स्वरूप कुछ उपवास चढ़ गये थे। बीमारी बढ़ती देखकर आपने विचार किया—जीवन का क्या भरोसा है? अगर इन उपवासों को उतारे बिना ही मेरी मृत्यु हो गई तो मुझ पर ऋण रह जायगा। अतएव पहले इन उपवासों का उतार लेना श्रेयस्कर है। शारीरिक रोगों की चिकित्सा करने से पहले आत्मा के रोग की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

इस प्रकार मुनिश्री ने सभी उपवासों को उतारने के लिए लगातार छह उपवास कर लिये। इस तपस्या से वे ऋण मुक्त ही नहीं हुए वरन् रोग मुक्त भी हो गए।

इस आकस्मिक घटना ने उपवास का प्रत्यक्ष फल सामने प्रकट कर दिया। आपको अनशन की महत्ता का अनुभव हुआ। तत्पश्चात् आपने अपने उपदेशों में जहां-तहां अनशन तप के महत्त्व का प्रभावशाली और अनुभव पूर्ण विवेचन किया है। वह विवेचन आपके इसी अनुभव का परिणाम है, यह कहना असंगत न होगा। आपने फरमाया है—

'तप एक प्रकार की अग्नि है जिसमें समस्त अपवित्रता, सम्पूर्ण कल्मष एवं समग्र मलीनता भस्म हो जाती है। तपस्या की अग्नि में तप्त होकर आत्मा सुवर्ण की भांति तेज से विराजित हो जाता है। अतएव तप धर्म का महत्व अपार है।

'जैसे आहार करना शरीर रक्षा के लिए आवश्यक है उसी प्रकार आहार का त्याग करना—उपवास करना भी जीवन रक्षा के लिए आवश्यक है। आज अनेक स्वास्थ्य शास्त्री उपवास का महत्व समझकर उसे प्राकृतिक चिकित्सा में प्रधान स्थान देते हैं। उपवास से शरीर कृश अवश्य होता है परन्तु उस कृशता से शरीर को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचती। शरीर की कृशता शरीर के सामर्थ्य ह्रास का प्रमाण नहीं है।'

'जिन भयंकर रोगों को मिटाने में डाक्टर असमर्थ थे, वे रोग भी उपवासों के द्वारा मिटाये गए हैं। उपवास के सम्बन्ध में मेरा स्वानुभव है और मैं कह सकता हूँ कि उपवास से अनेक रोगों का विनाश होता है। सम्भव है, जिन्होंने उपवास का अनुभव प्राप्त नहीं किया है वे लोग उपवास की यह महत्ता कदाचित् स्वीकार न करें पर उनके अस्वीकार का कोई मूल्य नहीं है। अनुभवी इस सत्य को स्वीकार किये बिना नहीं रह सकते।

'उपवास इन्द्रियों की रक्षा करने वाला है। धर्म साधना का उत्तम साधन है। इन्द्रियों की चंचलता का निग्रह उपवास से ही होता है।

इन्द्रियों को काबू में रखना बहुत कठिन है। मकान पर अधिकार करना सरल है पर इन्द्रियों पर अधिकार करना कठिन है। उपवास ही इन्द्रियों पर अधिकार करने का सरल साधन है।

मनुष्य हमेशा खाता है। सावधानी रखने पर भी कहीं भूल हो जाना अनिवार्य है। प्रकृति भूल का दंड दिए बिना कभी नहीं चूकती। किसी और से मार अपने अपराध छिपा सकते हैं पर

पर प्रकृति के दड स आप किसी भी प्रकार नही बच सकते। अगर आप प्रकृति के किसी कानून को तोड़ते है तो आपको तुरन्त उसका दड भोगने के लिए उद्यत रहना होगा। आप दूसरों की आखो मे धूल झोक सकते हैं पर प्रकृति के आगे आपकी एक नही चलेगी। प्रकृति के कानून अटल हैं—अचल हैं। उनमे तनिक भी हेर फेर नही हो सकता। ऐसी स्थिति मे भोजन मे कोई भूल हुई नही कि कोई न कोई रोग आ धमकता है। उस रोग के प्रतिकार का सरल उपाय उपवास ही है। आपने उपवास किया और रोग छू मन्तर हुआ। अगर आपको कोई रोग नही है तो भी उपवास करने का अभ्यास लाभदायक ही है।

अपने नियम के अनुसार प्रकृति जितने मनुष्यो को उत्पन्न करती है उनके खाने के लिए भी वह उतना ही पैदा करती है। पर मनुष्य अपनी धीगा धीगी मे आवश्यकता से अधिक खा जाता है। इस प्रकार अकेले भारतवर्ष ने छह करोड मनुष्यो की खुराक का छीन कर उन्हे भूखे मारने का पाप अपने सिर ले लिया है भारत मे तैतीस करोड मनुष्य हैं। इनमे से छह करोड को अलग कर सत्ताईस करोड मनुष्य महीने मे छह उपवास करने लगें तो क्या इन छह करोड भूखो को भोजन नही मिल सकता ?

इस प्रकार उपवास भूखो की भूख मिटाने वाला, रोगियो के रोग हटाने वाला और ईश्वरोपासक को ईश्वर से भेंट कराने वाला है। उपवास का अर्थ ही है—ईश्वर के समीप वास करना।

मुनिश्री के उपदेश अधिकाश उनके विविध अनुभवो का ही परिणाम है। उपवास के विषय मे आपने अधिकारपूर्वक दृढता के साथ जो मत व्यक्त किया है, उनका अनुभव ही उसका साक्षी है। अनुभव ज्ञान मे कितनी गम्भीरता कितनी तेजस्विता और कितनी दृढता होती है !

चातुर्मास पूर्ण होने पर मुनिश्री अनेक स्थानो मे विचरते हुए फिर खाचरौद पधार गए और मुनिश्री घासीलाल जी महाराज की सेवा मे रहने लगे। स० १९५६ का चातुर्मास भी आपने खाचरौद में ही किया। इसी चातुर्मास मे श्री राधालालजी भटेवरा ने आपके पास दीक्षा ग्रहण की।

खाचरौद मे दूसरा चौमासा समाप्त करके आपने मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और श्री राधालालजी महाराज के साथ जावरा की ओर विहार किया। यहा अन्य साधुओ के साथ आचार्य महाराज विराजमान थे।

पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने माघ शुक्ला दशमी के दिन आचार्य पद अलकृत किया था। उस समय वे वयोवृद्ध थे। नेत्र शक्ति क्षीण हो गई थी। अधिक विहार नही कर सकते थे। ऐसी स्थिति में इतने विशाल सम्प्रदाय का सचालन और निरीक्षण करना उनके लिए कठिन था। अतएव उन्होंने भिन्न भिन्न प्रान्तो मे विचरने वाले साधुओ की देख रेख के लिए चार साधु नियुक्त कर दिए, जिनमे से एक हमारे चरितनायक भी थे।

मुनिश्री को दीक्षा लिए उस समय सिर्फ आठ वर्ष ही हुए थे। आपकी उम्र चौबीस वर्ष की थी। सम्प्रदाय में लम्बी दीक्षा और बडी उम्र के बहुत से मुनिराज थे मगर प्रतिभा सयम परायणता व्यवस्था शक्ति और दूसरी योग्यताओ के कारण आप इस पद के योग्य समझे गये। इतनी छोटी दीक्षा पर्याय मे यह पद प्राप्त होना सूचित करता है कि आप उस समय भी साधु समाचारी के विशिष्ट ज्ञाता हो गये थे। उत्सर्ग और अपवाद मार्ग के रहस्य को भली भाति जानने लगे थे, व्यवस्था करने मे कुशलता प्राप्त कर चुके थे और आगमानुकूल सयम पालन की प्रतीति करा चुके थे।

आचार्य श्री चौथमलजी महाराज अस्वस्थ होने के कारण अतिम तीन वर्षों मे जावरा तथा रतलाम ही विराजे रहे। उस समय मुनिश्री श्रीलालजी महाराज उनकी सेवा मे थे। तेजस्वी

प्रतिभाशाली तथा आचार निष्ठ होने के कारण आचार्यश्री उन्हें अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे। मुनिश्री श्रीलालजी महाराज को आचार्यश्री ने आस पास के क्षेत्र में ही विचरने का आदेश दिया और वे आस पास ही विचरने लगे।

नौवा चातुर्मास १९५७

कुछ दिन पूज्यश्री की सेवा में रहकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने तीन ठाणों से महतपुर की ओर विहार किया। उस समय मुनिश्री मोतीलालजी महाराज आपके साथ थे। महीदपुर उज्जैन के समीप एक छोटा सा कस्बा है। संवत् १९५७ का चातुर्मास वहीं हुआ।

पूज्यश्री चौथमलजी महाराज का स्वर्गवास

पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने सं० १९५७ का चातुर्मास रतलाम में ही किया था। वृद्धावस्था के कारण आप अशक्त तो थे ही, शारीरिक अस्वस्थता भी चलती रहती थी। कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा की रात्रि को आचार्यश्री की व्याधि कुछ बढ़ गई। शरीर की अस्थिरता का विचार करके आपने दूसरे दिन चतुर्विध श्रीसंघ के सामने मुनिश्री श्रीलालजी महाराज को युवाचार्य जाहिर किया। उसके एक सप्ताह पश्चात् ही अष्टमी की रात्रि में आचार्यश्री चौथमलजी महाराज स्वर्ग सिधार गए।

उस समय श्री श्रीलालजी महाराज रतलाम में ही मौजूद थे। एक सप्ताह युवाचार्य पदवी भोगकर कार्तिक शुक्ला नौवीं के दिन पू० प्र० श्रीलाल जी महाराज ने आचार्य पद सुशोभित किया।

नवीन आचार्य के दर्शन

रतलाम में चातुर्मास पूर्ण करके पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज अनेक स्थानों पर धर्मोपदेश देते हुए इन्दौर पधारे। उसी समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज भी महतपुर में चातुर्मास समाप्त करके इन्दौर पधार गये। पूज्यश्री के दर्शन करके आपको अत्यन्त प्रमोद हुआ।

इन्दौर से पूज्यश्री के साथ रतलाम की ओर विहार हुआ। बड़नगर तक सभी संत साथ साथ पधारे। वहाँ से मुनिश्री मोतीलाल जी महाराज और हमारे चरितनायक देहात में धर्म प्रचार करने के लिए अलग हुए और पूज्यश्री के रतलाम पहुँचने के कुछ दिनों पश्चात् आप दोनों संत भी रतलाम पधार गये।

रतलाम से पूज्यश्री ने मेवाड़ की ओर विहार किया। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज आदि कई सन्तों ने कुछ दिन ठहर कर उसी ओर विचरना आरम्भ कर दिया।

जवाहरात की पेटी

मेवाड़ प्रान्त में धर्म की जागृति करते हुए पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज उदयपुर पधारे। वहाँ आपके मधुर और प्रभावशाली प्रवचनों से अनेक धार्मिक कार्य हुए। आपके ही सदुपदेश से मेवाड़ के प्रधानमन्त्री रा० रा० कोठारीजी श्री बलवन्तसिंहजी साहब ने जैनधर्म अंगीकार किया।

एक दिन कोठारीजी तथा उदयपुर के श्रीसंघ ने पूज्यश्री से आगामी चातुर्मास उदयपुर में करने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने उत्तर दिया— इस वर्ष यहाँ चातुर्मास करना मेरे लिए अनुकूल प्रतीत नहीं होता। मैं आपके लिए जवाहरात की पेटी के समान मुनि जवाहरलालजी को भेज दूँगा। उनके यहाँ पहुँचने से आनन्द मंगल होगा।

उदयपुर के श्रीसंघ ने नतमस्तक होकर पूज्यश्री का वचन स्वीकार किया। धन्य है मुनिश्री जवाहरलालजी को अपनी योग्यता के द्वारा आचार्य महाराज के मुखारविन्द से प्रशंसा के

पात्र बन ! और धन्य हैं आचाय महाराज, जो अपन छोटे सन्तो म तद्गुणा की प्रशसा करके उन्ह उत्साहित करते हैं ! सचमुच सन्तो का स्वभाव ऐसा ही भद्र और कोमल होता है !

दसवा चातुर्मास १९५८

पूज्यश्री के आदेश स मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने तीन सन्ता के साथ स० १९५८ का चातुर्मास उदयपुर म किया। उदयपुर मे प्रतिदिन प्रभावशाली प्रवचना द्वारा आप श्रोताओ को प्रभावित करने लगे। हजारो श्रोता जिनमे जैन और जनेतर, हिन्दू और मुसलमान पुरुष और स्त्रियो का समावेश था आपके उपदेश से लाभ उठाते थे। मुनिश्री मृगापुत्र का अध्ययन फरमाते थे। कर्मों का फल किस प्रकार भोगना पडता है, इस विषय का आप हूबहू शब्द चित्र खीच देते थे। किसनगढ के रहने वाले एक मुसलमान भाई तो बिना नागा उपदेश सुनने आते थे। उन पर भी उपदेश का खूब प्रभाव पडा और व सदा के लिए मुनिश्री के भक्त बन गये।

उसी चातुर्मास म मुनिश्री मोतीलाल जी महाराज ने ४५ दिना की तीव्र तपस्या की। तपस्या के पूर के दिन मेवाड सरकार के आदेश से उदयपुर मे सभी कसाईखाने बन्द रखे गये और बहुत से प्राणियो को अभय दान दिया गया।

चातुर्मास म उदयपुर म बडा आनन्द रहा। वातावरण म उत्साह और स्फूर्ति के साथ सात्विकता छा गई। उदयपुर की जनता पूज्यश्री के वचनो को बार बार याद करती—वास्तव मे जवाहरलालजी महाराज जवाहरात की ही पेटी हैं।

इसी चातुर्मास म चरितनायक ने वर्तमान पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज को सम्यक्त्वरत्न प्रदान किया। उस समय किसे ज्ञात था कि सम्यक्त्व देकर जिसे आज धर्म के प्रवेश द्वार पर खडा किया है, वही आगे चल कर उनका प्रधान शिष्य बनेगा और अन्त में उनका उत्तराधिकारी होकर शासन दिखायगा।

उदयपुर में चातुर्मास पूर्ण करके मुनिश्री तरावलीगढ पधारे। वहाँ श्री घासीलालजी को मुनि दीक्षा दी। वहाँ स मारवाड की ओर विहार किया। रास्ते म आपको कुछ लुटेरे मिल गए। उस समय श्री घासीरामजी महाराज नवदीक्षित ही थे। नवीन वस्त्र पहने थे। भिक्षा माँगकर जीवन निर्वाह करने वाले और अन्न जल का एक भी कण आज का कल न रखने की दृढ परम्परा का पालन करने वाले, ससार की सम्पत्ति को पाप की तरह भयावह समझने वाले अकिंचन मुनियो के पास और धरा ही क्या था ? कुछ लकडी के पात्र, कुछ वस्त्र और कुछ शास्त्र ही उनके पास थे। अभागे लुटेरो को लूटने के लिए मिले भी तो यह साधु मिले ! न जाने लूटेरे किस मुहूर्त म लूटने चले थे ? वे मन ही मन पछताते होंगे, और झुंझलाते होंगे और अपनी तकदीर को कोसते होंगे।

अंग्रेजी भाषा में एक कहावत है—Some thing is better than nothing अर्थात् कुछ भी नही से कुछ भला। बचारे कितना साहस बटोर कर घर से निकले होंगे ? जगल म अपने शिकार की कितनी और कितनी देर प्रतीक्षा की होगी ? कितनी मनवार करके अपने मन को इस जोखिम के लिए मनाया होगा ? अब बहुत नहीं तो थोडा ही सही ? मगलाचरण में असफलता तो नही कहलाएगी ? शकुन तो नही बिगडेगा ! इसके अतिरिक्त साधु मगल रूप हैं तो उनके वस्त्र भी शायद हमारे लिए मगलमय सिद्ध हो जाए ? ऐसा ही कुछ सोचकर लुटेरों ने साधुओ के कई वस्त्र छीन लिये ! यहाँ तक कि श्री घासीलालजी का कमर म पहनने का वस्त्र चोलपट्ट भी उनके शरीर पर न रहने दिया।

उस समय मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने लुटेरो को जैन साधु का परिचय दिया उन्हें बतलाया—हम जैन साधु हैं। रुपया पैसा पास नही रखते। भिक्षा माँगकर निर्वाह करते हैं। भिक्षा के लिए यह पात्र हैं लज्जा ढकने के लिए वस्त्र, और पढने पढाने के लिए

इनके सिवाय हमारे पास कुछ है नहीं। भाइयो! हमें लूटकर तुम क्या पाओगे? फिर जैसी तुम्हारी इच्छा!

मुनिश्री के समझाने पर एक लुटेरे ने मानपट्ट वापस कर दिया। कुछ वस्त्र लेकर वे एक ओर चले गए और मुनि गण ने दूसरी ओर आगे प्रस्थान किया। अगले गाँव पहुँचने पर लोगों ने जब यह घटना सुनी तो उन्हें असह्य हो गई। उन्होंने गिरफ्तार करके चोरों को पूरा दंड दिलाने की ठानी। मगर मुनिश्री ने समभाव का उपदेश देकर सबको शान्त किया।

ग्यारहवां चातुर्मास

चातुर्मास के पश्चात् अनेक क्षेत्रों में धर्म प्रचार करते हुए मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज जोधपुर पधारे। संवत् १९५९ का चातुर्मास आपने जोधपुर में ही व्यतीत किया। संयोग से तेरह पंथ सम्प्रदाय के आचार्यश्री डालचन्द जी का चातुर्मास भी जोधपुर में ही था।

दया-दान का प्रचार

जैन समाज की श्वेताम्बर शाखा में तेरह पंथ नाम से एक सम्प्रदाय है। इसके मूल प्रवर्त्तक भिक्खूजी स्वामी माने जाते हैं। आरम्भ में ये स्थानकवासी सम्प्रदाय के आचार्य पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज के शिष्य थे। कर्मोदय की विचित्रता से उनके मस्तिष्क में कुछ मिथ्या धारणाएँ जम गई। पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज ने उनके निराकरण का भरसक प्रयत्न किया और अनेक शास्त्रों के मूल पाठ दिखलाए मगर कोई किसी के कर्मोदय को कब पलट सकता है? भिक्खूजी जब अपनी धारणाओं पर अड़े रहे तो अन्त में उन्हें संघ से पृथक् कर दिया गया और उन्होंने अपनी मान्यताओं का स्वतंत्र रूप से प्रचार करना आरम्भ कर दिया। 'मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना' कहावत के अनुसार सबकी अपनी अपनी समझ अलग अलग होती है और इसी कारण संसार में बहुत से मत, पंथ, सम्प्रदाय एवं परम्पराएँ हैं। मगर तेरह पंथ सम्प्रदाय इन सब में अपना विशेष स्थान रखता है। यह सम्प्रदाय धर्म के मूलभूत तत्त्व दया दान पर कुठाराघात करता है और इस प्रकार मानवता के विरुद्ध विद्रोह करता है। उसके कुछ मन्तव्य इस प्रकार हैं—

(१) मरते हुए जीव को बचाने में पाप है। अगर गौओं के बाड़े में आग लग जाय तो वह बचाने के उद्देश्य से बाड़ा खोल देने वाला पाप का भागी होगा। बचा हुआ जीव अपने शेष जीवन में जो पाप करेगा उन सब पापों का भागी बचाने वाला भी होगा।

(२) प्यास से तड़पते हुए किसी भी मनुष्य या दूसरे प्राणी को पानी पिला देना पाप है, क्योंकि पानी में असंख्यात जीव हैं और पानी पिलाने से एक जीव की रक्षा करने में असंख्यात जीव मरते हैं। अगर कोई दयालु छाछ जैसी निर्दोष चीज, जिसमें जीव नहीं है, पिलाकर किसी के प्राण बचा लेता है तो वह भी पाप का भागी होता है क्योंकि जीव रक्षा करना ही पाप है।

(३) माता का अपने बालक को दूध पिलाकर पालन पोषण करना और गर्भस्थ बालक की रक्षा करना भी एकान्त पाप है।

(४) अगर कोई सुपुत्र माता पिता की सेवा करता है तो उसका यह कृत्य भी पाप है।

भगवान् महावीर ने तेजोलेश्या से जलते गोशालक की रक्षा की थी। तेरह पंथी भाइयों के सामने जीव रक्षा का यह उदाहरण जब उपस्थित किया जाता है तो वे बिना संकोच कह देते हैं कि—उस समय भगवान् महावीर चूक गए।

यहाँ इतना कहना देना आवश्यक है कि संसार में जितने भी विशिष्ट विचारक और मत प्रवर्त्तक हुए हैं, उन्होंने धर्माचरण का ही उपदेश दिया और जीव रक्षा को सब धर्माचरणों में श्रेष्ठ धर्म बतलाया है। जैनधर्म तो जीव रक्षा के लिए प्रसिद्ध है ही। उसका निर्माण इसी उद्देश्य से हुआ है। जैन शास्त्र में कहा है—'सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं।'

अर्थात जगत् मे सभी जीवो की रक्षा रूप दया के लिए भगवान ने प्रवचन कहा है। जैनेतर शास्त्र भी जीव रक्षा का प्रधान धर्म स्वीकार करते हैं। यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसके समर्थन के लिए उन शास्त्रो के उद्धरण देने की आवश्यकता ही प्रतीत नही होती।

पूज्यश्री रघुनाथ जी महाराज ने भिक्खूजी को शास्त्र पाठो से बहुत समझाया, परन्तु भिक्खूजी ने अपना हठ न छोडा तो उन्हे सम्प्रदाय से पृथक कर दिया गया । भिक्खूजी के साथ उनके स्नेही छह साधु और निकल गये। स्थानकवासी समाज मे ही एक दूसरे सम्प्रदाय के आचार्य पूज्यश्री जयमलजी महाराज थे। पूज्यश्री रघुनाथ जी महाराज और उनके सम्प्रदाय के साधुओ मे काफी घनिष्ठता थी। मिलना जुलना, वार्त्तालाप तथा एकत्र निवास भी होता रहता था। अत एव भिक्खूजी ने उस सम्प्रदाय के छह साधुओ पर भी अपना असर डाल लिया। इस प्रकार तेरह व्यक्तियों ने मिलकर अपने नव निर्मित अदया अदान धर्म का प्रचार प्रारम्भ कर दिया। इन्ही का सम्प्रदाय तेरह पथ कहलाता है।

भगवान् महावीर के अहिंसा धर्म का इस प्रकार विपरीत प्रचार होते देखकर और भोली जनता को धर्म के नाम पर घोर अधर्म और निर्दयता का शिकार होते देखकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का सदय हृदय पिघल गया। जीव रक्षा को पाप बतलाना मानवता के नाम पर घोर कलक है। ऐसी भयानक मान्यताओ का प्रबल विरोध करना ही मुनिश्री ने अपना कर्त्तव्य समझा।

तेरह पथ के आचार्य डालचन्दजी का चौमासा भी उस साल जोधपुर मे ही था। इस कारण सत्य वस्तु जनता को समझाने का यह अच्छा अवसर था। मुनिश्री ने तेरह पथ के प्रधान ग्रथ भ्रम विध्वसन' का सूक्ष्म रीति से अवलोकन किया। 'भ्रम विध्वस' के अवलोकन से आप की उक्त इच्छा अधिक बलवती हो उठी। आपने सोचा—सर्व साधारण के सामने यदि यह बात आ जाय कि तरह पथियो का मत जैन शास्त्रो के विरुद्ध है तो यह कलक जैन धर्म के नाम पर न रहे। श्रावको ने भी सत्य को प्रकट कर देने की मुनिश्री की इच्छा का समर्थन किया। मुनिश्री ने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शास्त्रार्थ करने का उपाय ही समुचित समझा। शास्त्रार्थ का सिल सिला शुरू करने के अभिप्राय से मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने सात प्रश्न तैयार किये। श्रावको ने उन प्रश्नों को लेकर एक विज्ञप्ति निम्नलिखित रूप मे प्रकाशित कर दी —

तेरहपथियो को विदित हो कि नीचे लिखे प्रश्न सविस्तार सूत्रार्थ के पाठ सहित तुम्हारे पूज्यजी से पूछकर लिखो। सात प्रश्न निम्नलिखित हैं—

(१) श्री श्रमण महावीर भगवान् को दीक्षा लेने के बाद चूका बताते हो, सो वह पाठ दिखाओ।

(२) साधु के सिवाय किसी को दान देने मे एकान्त पाप बताते हो, सो पाठ दिखाओ।

(३) बयालीस दोष टालकर आहार लेने वाले पडिमाधारी श्रावक को दोष रहित आहार देने मे पाप बताते हो, सो पाठ दिखाओ।

(४) साधु जी महाराज को किसी दुष्ट ने फांसी दी। किसी दयावान् ने धर्म बुद्धि से उसे खोल दिया। तुम उन दोनों को पापी कहते हो और श्रद्धते हो सो पाठ दिखाओ।

(५) गायों का बाडा भरा हुआ है, उसमे किसी दुष्ट ने आग लगा दी किसी दयावान् ने किवाड खोलकर गायो को बाहर निकाल दिया और उनके प्राण बच गए। तुम उन दोनों को पाप कहते हो, सो पाठ दिखाओ।

(६) पन्द्रहवा कर्मादान 'असजती पोसणिया कहते हो और सिखलाते हो, सो पाठ दिखलाओ।

(७) असयती का जीना नही वाछना ऐसा कहते हो सो पाठ दिखाओ।

इन प्रश्नो का उत्तर जल्दी लिखो। और भी बहुत से प्रश्न हैं।

इनके सिवाय हमारे पास कुछ है नहीं। भाइयो ! हम लूटकर तुम क्या पाओगे ? फिर जैसी तुम्हारी इच्छा !'

मुनिश्री के समझाने पर एक लुटेरे ने चादर वापस कर दिया। कुछ वस्त्र लेकर वे एक ओर चले गए और मुनि गण ने दूसरी ओर आगे प्रस्थान किया। अगले गाँव पहुँचने पर लोगों ने जब यह घटना सुनी तो उन्हें असह्य हो गई। उन्होंने गिरफ्तार करके चोरों को पूरा दंड दिलाने की ठानी। मगर मुनिश्री ने समभाव का उपदेश देकर सबको शान्त किया।

ग्यारहवां चातुर्मास

चातुर्मास के पश्चात अनेक क्षेत्रों में धर्म प्रचार करते हुए मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज जोधपुर पधारे। संवत १९५९ का चातुर्मास आपने जोधपुर में ही व्यतीत किया। संयोग से तेरह पंथ सम्प्रदाय के आचार्यश्री डालचन्द जी का चातुर्मास भी जोधपुर में ही था।

दया-दान का प्रचार

जैन समाज की श्वेताम्बर शाखा में तेरह पंथ नाम से एक सम्प्रदाय है। इसके मूल प्रवर्त्तक भिक्खूजी स्वामी माने जाते हैं। आरम्भ में वे स्थानकवासी सम्प्रदाय के आचार्य पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज के शिष्य थे। कर्मोदय की विचित्रता से उनके मस्तिष्क में कुछ मिथ्या धारणाएँ जम गई। पूज्यश्री रघुनाथजी महाराज ने उनके निराकरण का भरसक प्रयत्न किया और अनेक शास्त्रों के मूल पाठ दिखलाए मगर कोई किसी के कर्मोदय का क्या पलट सकता है ? भिक्खूजी जब अपनी धारणाओं पर अड़े रहे तो अन्त में उन्हें संघ से पृथक कर दिया गया और उन्होंने अपनी मान्यताओं का स्वतंत्र रूप से प्रचार करना आरम्भ कर दिया। 'मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना' कहावत के अनुसार सबकी अपनी अपनी समझ अलग-अलग होती है और इसी कारण संसार में बहुत से मत, पंथ सम्प्रदाय एवं परम्पराएँ हैं। मगर तेरह पंथ सम्प्रदाय इन सब में अपना विशेष स्थान रखता है। यह सम्प्रदाय, धर्म के मूलभूत तत्त्व दया दान पर कुठाराघात करता है और इस प्रकार मानवता के विरुद्ध विद्रोह करता है। उसके कुछ मन्तव्य इस प्रकार हैं—

(१) मरते हुए जीव को बचाने में पाप है। अगर गौओं के बाड़े में आग लग जाय तो उन्हें बचाने के उद्देश्य से बाड़ा खोल देने वाला पाप का भागी होगा। बचा हुआ जीव अपने शेष जीवन में जो पाप करेगा उन सब पापों का भागी बचाने वाला भी होगा।

(२) प्यास से तड़पते हुए किसी भी मनुष्य या दूसरे प्राणी को पानी पिला देना पाप है, क्योंकि पानी में असंख्यात जीव हैं और पानी पिलाने से एक जीव की रक्षा करने में असंख्यात जीव मरते हैं। अगर कोई दयालु छाछ जैसी निरवद्य चीज, जिसमें जीव नहीं है, पिलाकर किसी के प्राण बचा लेता है तो वह भी पाप का भागी होता है, क्योंकि जीव रक्षा करना ही पाप है।

(३) माता का अपने बालक को दूध पिलाकर पालन पोषण करना और गर्भस्थ बालक की रक्षा करना भी एकान्त पाप है।

(४) अगर कोई सुपुत्र माता पिता की सेवा करता है तो इसका यह कृत्य भी पाप है।

भगवान् महावीर ने तेजोलेश्या से जलते गोशालक की रक्षा की थी। तेरह पंथी भाइयों के सामने जीव रक्षा का यह उदाहरण जब उपस्थित किया जाता है तो वे बिना संकोच कह देते हैं कि— उस समय भगवान महावीर चूक गए।

यहाँ इतना बतला देना आवश्यक है कि संसार में जितने भी विशिष्ट विचारक और मत प्रवर्त्तक हुए हैं उन्होंने धर्माचरण का ही उपदेश दिया और जीव रक्षा को सब धर्माचरणों में श्रेष्ठ धर्म बतलाया है। जैनागम तो जीव रक्षा के लिए प्रसिद्ध हैं ही। उनका निर्माण इसी उद्देश्य से हुआ है। जैन शास्त्र में कहा है—'सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं।'

अर्थात जगत के सभी जीवों की रक्षा रूप दया के लिए भगवान् ने प्रवचन कहा है। जैनेतर शास्त्र भी जीव रक्षा का प्रधान धर्म स्वीकार करते हैं। यह बात इतनी स्पष्ट है कि इसके समर्थन के लिए उन शास्त्रों के उद्धरण देने की आवश्यकता ही प्रतीत नहीं होती।

पूज्यश्री रघुनाथ जी महाराज ने भिक्खूजी को शास्त्र पाठों से बहुत समझाया, परन्तु भिक्खूजी ने अपना हठ न छोड़ा तो उन्हें सम्प्रदाय से पृथक् कर दिया गया। भिक्खूजी के साथ उनके स्नेही छह साधु और निकल गये। स्थानकवासी समाज में ही एक दूसरे सम्प्रदाय के आचार्य पूज्यश्री जयमल्लजी महाराज थे। पूज्यश्री रघुनाथ जी महाराज और उनके सम्प्रदाय के साधुओं में काफी घनिष्ठता थी। मिलना जुलना, वार्तालाप तथा एकत्र निवास भी होता रहता था। अतएव भिक्खूजी ने उस सम्प्रदाय के छह साधुओं पर भी अपना असर डाल लिया। इस प्रकार तेरह व्यक्तियों ने मिलकर अपने नव निर्मित अथवा अदान धर्म का प्रचार प्रारम्भ कर दिया। इन्हीं का सम्प्रदाय 'तेरह पंथ' कहलाता है।

भगवान् महावीर के अहिंसा धर्म का इस प्रकार विपरीत प्रचार होते देखकर और भोली जनता को धर्म के नाम पर घोर अधर्म और निर्दयता का शिकार होते देखकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज का सदय हृदय पिघल गया। जीव रक्षा को पाप बतलाना मानवता के नाम पर घोर कलंक है। ऐसी भयानक मान्यताओं का प्रबल विरोध करना ही मुनिश्री ने अपना कर्त्तव्य समझा।

तेरह पंथ के आचार्य डालचन्दजी का चौमासा भी उस साल जोधपुर में ही था। इस कारण सत्य वस्तु जनता को समझाने का यह अच्छा अवसर था। मुनिश्री ने तेरह पंथ के प्रधान ग्रंथ 'भ्रम विध्वंसन' का सूक्ष्म रीति से अवलोकन किया। 'भ्रम विध्वंस' के अवलोकन से आप की उक्त इच्छा अधिक बलवती हो उठी। आपने सोचा—सर्व साधारण के सामने यदि यह बात आ जाय कि तेरह पंथियों का मत जैन शास्त्रों के विरुद्ध है तो यह कलंक जैन धर्म के नाम पर न रहे। श्रावकों ने भी सत्य को प्रकट कर देने की मुनिश्री की इच्छा का समर्थन किया। मुनिश्री ने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शास्त्रार्थ करने का उपाय ही समुचित समझा। शास्त्रार्थ का सिलसिला शुरू करने के अभिप्राय से मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने सात प्रश्न तैयार किये। श्रावकों ने उन प्रश्नों को लेकर एक विज्ञप्ति निम्नलिखित रूप में प्रकाशित कर दी —

तेरहपंथियों को विदित हो कि नीचे लिखे प्रश्न सविस्तार सूत्रार्थ के पाठ सहित तुम्हारे पूज्यजी से पूछकर लिखो। सात प्रश्न निम्नलिखित हैं—

(१) श्री श्रमण महावीर भगवान् को दीक्षा लेने के बाद चूका बताते हो, सो वह पाठ दिखाओ।

(२) साधु के सिवाय किसी को दान देने में एकान्त पाप बताते हो सो पाठ दिखाओ।

(३) बयालीस दोष टालकर आहार लेने वाले पडिमाधारी श्रावक को दोष रहित आहार देने में पाप बताते हो, सो पाठ दिखाओ।

(४) साधु जी महाराज को किसी दुष्ट ने फांसी दी। किसी दयावान ने धर्म बुद्धि से उसे खोल दिया। तुम उन दोनों को पापी कहते हो और श्रद्धते हो, सो पाठ दिखाओ।

(५) गायों का बाडा भरा हुआ है, उसमें किसी दुष्ट ने आग लगा दी किसी दयावान् ने किवाड खोलकर गायों को बाहर निकाल दिया और उनके प्राण बच गए। तुम उन दोनों को पाप कहते हो, सो पाठ दिखाओ।

(६) पन्द्रहवां कर्मादान 'असजती पोसणिया' कहते हो और सिखलाते हो, सो पाठ दिखलाओ।

(७) असंयती का जीना नहीं वांछना, ऐसा कहते हो सो पाठ दिखाओ।

इन प्रश्नों का उत्तर जल्दी लिखो। और भी बहुत से प्रश्न हैं।

तुम्हारा मत अर्थात भीखमजी का चलाया हुआ मत जन सिद्धान्त तथा जैन आगमों के विरुद्ध स्पष्ट दिखाई देता है। तुम्हारे पूज्यश्री न्याय पूर्वक चर्चा अर्थात् शास्त्रार्थ करना चाहें तो हमारे साधुजी चर्चा करने को तयार है। स्थान तीसरा और निष्पक्ष विवेकी समझदार तीसर मत के मध्यस्थ मोअज्जिज मुकर्रर होवें ताकि गलबा न हो सके। चर्चा जरूर होनी चाहिए। एक हफ्ते की मियाद दी जाती है, क्योंकि चौमासे के दिन थोड़े रहे हैं। जो इस मौके पर तुम्हारे पूज्यश्री चर्चा नहीं करेंगे तो हम भाग गए समझते ही हैं और भी सब लोग तुम्हारे को झूठा समझेंगे। सम्वत् १९५९ कार्तिक सुदी २।

बाईस सम्प्रदाय की तरफ से
मुणोत अमरदास। भण्डारी किसनमल।

इस नोटिस के बाजार में बटते ही तेरहपंथियों की तरफ से भण्डारी किसनमल जी का एक पत्र बाईस सम्प्रदाय के श्रावकों के पास आया। उसमें लिखा था—पू० डालचन्द जी शास्त्रार्थ करने के लिए तैयार हैं शीघ्र चर्चा कर लो। पत्र में चर्चा स्थान के लिए उदयमन्दिर तथा मध्यस्थ के लिए अन्य दो सज्जनों के अतिरिक्त उदयमन्दिर के महन्त गोसाई गणेशपुरीजी को चुना था। उदयमन्दिर जोधपुर से काफी दूरी पर है।

इस पत्र के उत्तर में बाईस सम्प्रदाय की ओर से भण्डारी किसनमल जी को लिखा गया कि शास्त्रार्थ के लिए स्थान उदयमन्दिर उपयुक्त नहीं है। पता नहीं शास्त्रार्थ कितने दिन चले ऐसी दशा में प्रतिदिन शास्त्रों को लादकर दूर ले जाना और लाना बहुत कठिन है। वहाँ आने जाने में बहुत सा समय व्यर्थ चला जायगा। मध्यस्थ, दर्शक तथा श्रोताओं को भी वहाँ जाने आने में परेशानी होगी। इसलिए कोई समीपवर्ती स्थान चुनना चाहिए।

इसके अतिरिक्त गणेशपुरीजी महन्त तेरहपंथियों के पक्षपाती हैं। उनके स्थान पर शास्त्रार्थ करना तथा उन्हें मध्यस्थ बनाना दोनों बातें अनुचित हैं।

मध्यस्थ के लिए हम गुरां साहब श्री जवाहरमलजी, मणिविजयजी तथा कविराज श्री मुरारीदानजी का नाम पेश करते हैं। स्थान के लिए आप आहुवा की हवेली, ओसवाल जाति का नोहरा या किसी भी समीपवर्ती मकान को चुन सकते हैं। इससे जनता अधिक लाभ उठा सकेगी तथा शास्त्र लाने ले जाने में मुनियों को कष्ट न होगा।

तेरहपंथियों ने जवाहरमलजी तथा मणिविजयजी को मध्यस्थ बनाने से इन्कार कर दिया और गणेशपुरीजी के लिए फिर आग्रह किया। स्थान तथा समय के लिए भी वे टालमटोल करने लगे।

अन्त में उनसे कहा गया—दोनों पक्ष वाले कविराज श्री मुरारीदानजी को मध्यस्थ चुन लें। स्थान और समय के लिए उन्हीं से निर्णय करा लिया जाय। वे जो कहें, दोनों को मान्य हो। कविराज जोधपुर के एक प्रतिष्ठित विद्वान सज्जन थे मध्यस्थ भी थे। साहित्य सेवी उनके नाम से भली भाँति परिचित हैं।

तेरहपंथियों ने इस बात को भी मंजूर नहीं किया। वास्तव में वे शास्त्रार्थ करने से डरते थे और उसे टालने का प्रयत्न कर रहे थे।

जनता ने समझ लिया कि तेरहपन्थी शास्त्रार्थ करना नहीं चाहते। अन्त में उनसे कहा गया—यदि आप शास्त्रार्थ करना नहीं चाहते तो जाने दीजिये, उन सात प्रश्नों का उत्तर दीजिए। इस पर तेरहपंथियों की ओर से कोई उत्तर न मिला।

प्रतापमलजी का प्रतिबोध

मारवाड़ में पचभद्रा नामक एक गाँव है। वहाँ प्रतापमलजी चौपड़ा एक धर्म प्रेमी गृहस्थ रहते थे। वे तेरहपंथ के अनुयायी थे। तेरहपंथ में उनकी श्रद्धा थी।

एक बार विचार करते करते तेरहपथियों की प्ररूपणा में उन्हें कुछ संदेह हुआ। सन्देह निवारण के लिए चौथमलजी अपने आचार्य डालचन्दजी के पास जोधपुर आये। डालचन्दजी ने इधर उधर की बातों से उन्हें समझाने का प्रयत्न किया मगर तत्त्व के जिज्ञासु को इससे सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने आगम का पाठ दिखलाने के लिए कहा। इस पर डालचन्दजी बिगड़ खड़े हुए और उन्हें मिथ्यात्वी कहकर टाल दिया।

मनुष्य प्रायः अपनी दुर्बलता को छिपाने के लिए क्रोध का आश्रय लेता है। मगर धर्म तो कल्याण के लिए है। धर्म के क्षेत्र में दृढ़ता के साथ सत्य का विचार करना चाहिए। वहाँ किसी प्रकार की बनावट या दिखावट को स्थान नहीं हो सकता। धर्म के विषय में कोई समझौता काम नहीं देता। जिसे सत्य की खोज की प्रबल आकांक्षा है वह गुपचुप बिना समझे बूझे कोई बात न मानेगा। वह प्रत्येक बात को शास्त्र के अनुसार समझकर ही ग्रहण करेगा। वह शंका करने में संकोच भी नहीं करेगा और उसका धर्मगुरु उसकी शंका से क्रुद्ध नहीं होगा। इस विषय में हमारे चरितनायक स्पष्ट शब्दों में कहते हैं—'जैन शास्त्र कहता है कि सूत्र सिद्धान्त की बात चुपके चुपके बताना उचित नहीं। अतएव तुम्हें जो कुछ भी बताया गया है उसके सम्बन्ध में पूछ ताछ करो और उत्पन्न हुई शंका का समाधान प्राप्त करो। बिना समझे बूझे किसी बात को स्वीकार कर लेने के विषय में आपका कहना है—'धर्म के विषय में अक्सर ऐसा होता है कि शंका होने पर भी पूछ ताछ नहीं की जाती और शंका को हृदय में स्थान दिया जाता है। कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि हमारे सामने जो कुछ आवे, उसी को खा जाना चाहिए। इस प्रकार पशुओं की भाँति सोचे समझे बिना किसी वस्तु को खाने बैठ जाना अनुचित है। इसी प्रकार चाहे जिस बात को बिना विचारे मान लेना हानिकारक है। प्रतिपृच्छना के प्रश्न द्वारा जैन शास्त्र इस बात का अनुमोदन करता है कि कोई बात बिना विचारे नहीं मान लेनी चाहिए वरन् पूछ ताछ करके योग्य मालूम हो तो ही कोई बात माननी चाहिए।

जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से शंका करना आवश्यक है। शंका किये बिना अधिक ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता। जिज्ञासा ज्ञानोपार्जन का एक कारण है। आज विज्ञान का जो आधिपत्य देखा जा रहा है, उस विज्ञान का आविष्कार भी जिज्ञासा से ही हुआ है।

तात्पर्य यह है कि जिसे सत्य पर सम्पूर्ण श्रद्धा है वह न शंका करने से घबराता है और न समाधान करने से। शंका समाधान में झुंझलाना उठना सत्य के ऊपर अश्रद्धा का द्योतक है।

प्रतापमलजी जिज्ञासु तो थे ही, समाधानकर्त्ता की टाल मटोल से उनकी जिज्ञासा और बढ़ गई। वे सत्य वस्तु का निर्णय करना चाहते थे अतः मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के पास आये। मुनिश्री ने जैनागमों के पाठ बतलाकर उनकी सब शंकाओं का समाधान कर दिया। प्रतापमलजी ने मुनिश्री की युक्ति और आगम के अनुकूल व्याख्या सुनी तो उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि मैं अंधकार में हूँ और अब प्रकाश की रेखा देख रहा हूँ। वे फिर डालचन्दजी स्वामी के पास पहुँचे और शास्त्रीय पाठ बताकर उनसे खुलासा करने की प्रार्थना की।

डालचन्दजी स्वामी के पास जो अन्तिम शस्त्र था, उसी का उन्होंने प्रयोग किया। वह यह कि भीखमजी महाराज के वचनों पर अविश्वास नहीं करना चाहिए। अविश्वास करने में मिथ्यात्व का पाप लगता है।

प्रतापमलजी बोले—आपके कथानुसार चार निर्मल ज्ञानों के धनी महावीर स्वामी भी छद्मस्थ अवस्था में चूक गये तो भीखमजी स्वामी के या आपके वचन अचूक कैसे माने जा सकते हैं? मुझे तो एकमात्र भगवान् के वचनों पर ही भरोसा है। आप भगवान् का वचन—आगम का पाठ दिखाइये, तभी आपकी बात मानी जा सकती है।

यह स्पष्ट और निर्भीक बात सुनकर तेरहपंथियों के पूज्य डालचंदजी नाराज हो गये

के लिए आग्रह किया। मगर वह चेला ही क्या जो अपने गुरुजी का अनुसरण न करे ! मगनजी मुनि भी न ठहरे और चले गये।

भद्र परिणामी सीधे सादे मुनियों को देखकर तेरहपंथियों में जोश म उफान आ गया था। क्या पता था कि वादिगज केसरी यहा आ धमकेगा और अपनी एक ही दहाड स मतवाले हाथियो का गर्व खर्व कर देगा !

मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज बालोतरा म कुछ दिन ठहरे। उनके मुख से धर्म का रहस्य श्रवण कर जनता को अपूर्व बोध हुआ। सैकडो व्यक्तियों ने यथायोग्य त्याग प्रत्याख्यान किये। कईयो ने धर्म की सच्ची श्रद्धा ग्रहण की और आपको अपना गुरु बनाकर कृतार्थता समझी।

बालोतरा से विहार करके आप पचभद्रा, समदडी, सिवाना, पाली, सोजत और ब्यावर म धर्मामृत की वर्षा करते हुए अजमेर पधारे।

बारहवा चातुर्मास

कुछ दिन अजमेर विराजकर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ब्यावर पधारे। श्रावकों के विशेष आग्रह स स० १९६० का चातुर्मास ब्यावर में ही किया। चातुर्मास म खूब आनन्द रहा। धर्म का अच्छा उद्योत हुआ।

अजमेर जाने से पहले जब आप ब्यावर पधारे थे, तब अकस्मात् वहाँ डालचन्दजी पधार गये। कुछ जिज्ञासु भाइयो ने यहाँ भी शास्त्र चर्चा कराने का प्रयत्न किया मगर डालचदजी चर्चा के लिए तयार न हुए।

ब्यावर मे चातुर्मास समाप्त करके मुनिश्री जयतारण पधारे। वहाँ तेरहपंथियों के सुप्रसिद्ध साधु फौजमलजी के साथ शास्त्रार्थ हुआ। इस शास्त्रार्थ म चार सज्जन मध्यस्थ चुने गये। उन्होंने शास्त्रार्थ सबधी नियम बनाकर दोनो पक्ष वालों के सामने रखे और दोनों ने उन्हें स्वीकार किया। मध्यस्थो न जो प्रारंभिक विवरण लिखा था, वह इस प्रकार है—

जयतारण शास्त्रार्थ

सवत् १९६० पौष कृष्णा तृतीया को जोधपुर राज्यान्तर्गत जयतारण नगर में बाईस सम्प्रदायान्तगत मुनिश्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज की सम्प्रदाय के साधु मुनिश्री मोतीलालजी, जवाहरलालजी आदि तथा तेरहपन्थी साधु श्री डालचन्दजी की सम्प्रदाय के साधु श्री फौजमलजी, जयचन्द्रजी का पधारना हुआ। दोनों का आपस म शास्त्रार्थ करने का निश्चय हुआ। उसमे हम चार व्यक्तियो को दोनो तरफ स मध्यस्थ चुना गया जिसके नाम इस प्रकार हैं—

१—गाधी साकलचन्द	मन्दिर मार्गी
२—सेठ मुलतानमल	”
३—व्यास रूपचन्दजी	वैष्णव
४—पचोली उदयराजजी	”

हम चारो न शास्त्रार्थ के लिए नीचे लिखे नियम बनाए। सम्वत् १९५९ मे बाईस सम्प्रदाय के साधु मुनिश्री मोतीलालजी महाराज व जवाहरलालजी महाराज का चातुर्मास जोधपुर म था। उस समय जवाहरलालजी की तरफ स तेरहपन्थियो के पूज्यश्री डालचन्दजी स सात प्रश्न पूछे गए थे। उनका उत्तर तेरहपथी श्रावक श्रीकृष्णमल्लजी ने अपने पूज्यश्री डालचदजी स पूछ कर 'प्रश्नोत्तर' नामक पुस्तक के रूप में छपवाया था। अब यहा जयतारण म बाईस सम्प्रदाय के साधु श्री जवाहरलालजी व तेरहपन्थियो के श्री फौजमलजी विद्यमान हैं। अब जवाहरलालजी के प्रश्न और उनके उत्तरों का सत्यासत्य निर्णय हो जाना चाहिए। उसके लिए दोनो साधुओं म शास्त्रार्थ होना तय हुआ है, उसके नियम आगे लिखे अनुसार हैं—

१—दोना ओर से मध्यस्थ, निष्पक्ष, जनशास्त्राभिज्ञ व प्रतिष्ठित व्यक्ति चुन जाएँ।

२—जो व्यक्ति मध्यस्थ चुन जाएँ वे शास्त्राथ को लेख बद्ध करके अपने निणय के साथ दोना सम्प्रदाया मे श्रावको को दे दवें।

३—दोनो तरफ के श्रावक शास्त्रार्थ मे कुछ न बोलें। मध्यस्थ महोदय जैसा उचित समझें करें।

४—जो साधु शास्त्राथ करे वह अपन अपने वक्तव्य को लिखित रूप मे मध्यस्थो के सामने पेश करे।

५—शास्त्राथ के लिए स्थान तपगच्छ का उपाश्रय निश्चित किया जाय।

६—दोना ओर के साधु अपन अपने कल्प तक चर्चा को अधूरी छोडकर विहार न करें।

७—शास्त्रार्थ म बत्तीस सूत्रो के मूल पाठ, अर्थ, टीका, दीपिका आदि पचागी प्रमाण रूप मे उद्धृत की जा सकेगी।

८—समय प्रतिदिन १२ से ३ तक रहेगा।

ऊपर लिखी आठ बाता को दोनो तरफ के सन्ता ने तथा श्रावका ने मध्यस्था के सामने स्वीकार कर लिया। इसके बाद तय हुआ कि जोधपुर निवासी जवारमलजी गुर्रा सा या और कोई सस्कृत का विद्वान् संस्कृत टीका का अथ करने के लिए चुना जाय, वह जो अथ करे वह दोना साधुआ का मान्य हो।

शास्त्राथ का प्रारम्भ करने के लिए तय हुआ कि जवाहरलालजी महाराज ने जो सात प्रश्न पूछे हैं तथा जिनका उत्तर 'प्रश्नोत्तर' म छपा है सर्वप्रथम उनमे से पहले प्रश्न का निणय होगा। उसके बाद फौजमलजी प्रश्न पूछेंगे जिसका उत्तर जवाहरलालजी को देना होगा।

जिस पक्ष वाले इन विषयो के विपरीत चलेंगे उन्हें दोषी समझा जायगा।

पौष कृष्णा पचमी, बुधवार को शास्त्राथ प्रारम्भ करने का निश्चय हुआ।

चारो मध्यस्थों के हस्ताक्षर

१—गाधी साकलचन्द
२—सेठ मुन्नतानमल
३—व्यास रूपचन्द
४—पचोली उदयराज

यह शास्त्राथ एक महीन तक चलता रहा। शास्त्राथ मे वादी और प्रतिवादी न क्या क्या युक्तिया और आगम के पाठ उपस्थित किये, यह विषय काफी विस्तृत है। मगर ज्ञातव्य है और महत्त्वपूण भी है। अधिक विस्तृत होने के कारण उसे यहा नही द रहे हैं मगर ज्ञातव्य होने से उसे देना आवश्यक भी है। अतएव वह अविकल रूप से परिशिष्ट मे दिया जा रहा है। जिज्ञासु पाठक उस पर मनन करें और देखें कि किस बचपन के साथ कितने घोर अज्ञान के अन्धकार मे रहत हुए भगवान् महावीर को चूका भूला कहने का दुस्साहस किया जा रहा है। यहा सिफ मध्यस्था का अन्तिम फसला दिया जाता है, जिससे यह प्रकट हो सके कि असत्य कब तक ठहर सकता है? असत्य वह कचकडा है जो सत्य की ज्योति के स्पर्शमात्र स दग्ध हो जाता है।

मध्यस्थो का फैसला

यह खुलासो जयपुर से साधुजी महाराज संवेगीजी श्री १०८ श्री शिवजीरामजी महाराजरो कियो हुओ फागण वदि ८ मितिरो गोलेचा धनरूपमलजी जोरावरमलजी री मार्फत खुलासो फागण वदि १० आयो। इणरो हाल ये मालूम हुवो कि श्रीवीर प्रभु ने दश स्वप्न आए यो यथातथ्य है मोहनीय कम के उदय म नही है और पडित देवीशकरजी वा पडित बालकृष्णजी ने जो अर्थ

सादडी आदि स्थानों में विचरते और धर्मोपदेश देते हुए उदयपुर पधारे। सम्वत् १९६२ का चातुर्मास उदयपुर में किया।

उदयपुर का यह चातुर्मास बहुत महत्त्वपूर्ण रहा। मुनिश्री के साथ कई तपस्वी सन्त थे। उन्होंने लम्बी लम्बी तपस्याएँ कीं। श्रावकों ने विविध प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान आदि किये और अन्य धार्मिक काम किये। कई कसाइयों ने हिंसात्याग कर अपना जीवन सुधारा।

इस चातुर्मास में उदयपुर में जो सन्त थे उनमें से छ सतों ने इस प्रकार तपस्या की —

१—मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ४१ उपवास
२—मुनिश्री राधालालजी महाराज ३० "
३—मुनिश्री पन्नालालजी महाराज ६१ उपवास छाछ के पानी के आधार पर
४—मुनिश्री धूलचन्दजी महाराज ३५ "
५—मुनिश्री उदयचन्दजी महाराज ३१ "
६—मुनिश्री मयाचन्दजी महाराज ४१ "

तपस्या एक अमोघ शक्ति है। जैन धर्म में तप की महिमा का विशद वर्णन है और वह धर्म का प्रधान अंग माना गया है। हमारे चरितनायक तप के विषय में अत्यन्त मार्मिक और प्रभावपूर्ण उपदेश फरमाते थे। उनके निम्नलिखित वाक्य आज भी अन्तःकरण में बिजली का संचार कर देते हैं—

'तप में क्या शक्ति है सो पूछो उनसे जिन्होंने छः छः महीने तक निराहार रहकर घोर तपश्चरण किया है और जिसका नाम लेने मात्र से हमारा हृदय निष्पाप और निस्ताप बन जाता है। तप में क्या बल है, यह उस इन्द्र से पूछो जो महाभारत के कथनानुसार अर्जुन की तपस्या को देखकर काँप उठा था और जिसने अर्जुन को एक दिव्य रथ प्रदान किया था।'

तप एक प्रकार की अग्नि है। जिसमें समस्त अपवित्रता, सम्पूर्ण कल्मष और समग्र मलीनता भस्म हो जाती है। तपस्या की अग्नि में तप्त होकर आत्मा सुवर्ण की भांति तेज से विराजित हो जाता है। अतएव तपधर्म का महत्व अपार है।

'जो तप करता है उसकी वाणी पवित्र और प्रिय होती है और जो प्रिय, पथ्य तथा सत्य बोलता है उसी का तप, तप कहलाने योग्य होता है। तपस्वी को असत्य या अप्रिय भाषण करने का अधिकार नहीं है। तपस्वी सत्य और प्रिय भाषा ही बोल सकता है। उसे क्लेशजनक पीड़ा कारक या भयोत्पादक वाणी नहीं बोलना चाहिए। तपस्वी की वाणी में अमृत का माधुर्य होता है। भयभीत प्राणी उसकी वाणी सुनकर निर्भय बनता है। तपस्वी अपनी जिह्वा पर सदा नियन्त्रण रखता है। उसकी वाणी शुद्धि और पवित्रता से पूत होती है।

यही नहीं, तपस्वी में वाचिक पवित्रता के साथ मानसिक पवित्रता भी होती है। अगर मधुर भाषण मन की अपवित्रता का आवरण बन जाय तो तपस्वी की तपस्या निरर्थक हो जाती है। जिस तप से मन शरद ऋतु के चन्द्रमा के समान निर्मल बन जाता है वह सच्चा तप है। मन का रजोगुण या तमोगुण से अतीत हो जाना ही निर्मलता है। तपस्वी को ऐसी निर्मलता प्राप्त करने के लिए सदा जागृत रहना चाहिए।

चक्रवर्ती भरत महाराज के पास सेना, अस्त्र शस्त्र और शरीर में बल की कमी नहीं थी। लेकिन जब देवों से युद्ध का समय आता था तब वे तेला करके युद्ध किया करते थे। इसका तात्पर्य यह हुआ कि तेले का बल चक्रवर्ती के समग्र बल से भी अधिक होता है और तपस्या द्वारा देव भी पराजित किये जा सकते हैं।'

यह तप की महिमा है। तप के प्रभाव से दुस्साध्य कार्य भी सुसाध्य हो जाते हैं। आत्मा जब तपस्या के तेज से तेजस्वी हो जाता है तो उसका दूसरों पर भी प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।

उदयपुर में इस चातुर्मास मे तपस्वी सतो की तपस्या का दूसरे व्यक्तियो पर अच्छा प्रभाव पडा। तपस्या के अन्तिम दिन सैकड़ो बकरो का अभयदान दिया गया। बहुत से कसाई भी मुनिश्री का उपदेश सुनने तथा तपस्वियो के दर्शन करने आये। मुनिश्री ने अहिंसाधर्म पर प्रभावशाली भाषण दिया। हिंसा से प्राप्त होने वाले दुखो का और अहिंसा से मिलने वाले सुखो का विस्तारपूर्वक वर्णन किया। प्रत्येक प्राणी किस प्रकार जीवित रहना चाहता है और मृत्यु के नाममात्र से भयभीत हो जाता है, इसका सजीव चित्र खीच दिया। श्रोताओ पर आपके भाषण का जादू सरीखा असर पडा। महाराज श्री का कथन वास्तव मे बडा ही ओजस्वी होता था। अहिंसा के विषय में आपने एक जगह कहा है—

'सब प्राणियो ने अपनी अपनी रक्षा के लिए और खाने के लिए दाढ़ व दात, देखने के लिए नेत्र सुनने के लिए कान, सूघने के लिए नाक, चखने के लिए जीभ आदि अग उपांग अपने अपने पूर्व कर्म के अनुसार प्राप्त किये हैं। इनको छीन लेने का मनुष्य का कोई अधिकार नही है। जो मनुष्य मक्खी के पख का भी नही बना सकता उसको उसे नष्ट करने का अधिकार नही है। परन्तु स्वार्थ की ओट मे कुछ भी नही दीखता। जो अग उपाग उस प्राणी के लिए उपयोगी हैं, मनुष्य कहा करते है कि यह तो हमारे खाने लिए पैदा किया गया है! ऐसा कहने वालो से सिंह यदि मनुष्य की भाषा मे कहे कि—तू मेरे खाने के लिए पैदा किया गया है, तो मनुष्य उसे क्या जवाब देगा?'

मारे जाने वाले पशुओ का हृदय हिला देने वाला करुणापूर्ण वर्णन सुनकर कसाइयो का हृदय भी पिघल गया। किसी पशु के प्राण ले लेना जिनके लिए मामूली बात थी जिनका दैनिक काम भी यही था और जिनके हृदय मे घोर क्रूरता का साम्राज्य स्थापित हो चुका था उन कसाई भाइयो का चित्त भी मुनिश्री का उपदेश सुनकर द्रवित हो गया। उसी समय कसाइयो के मुखिया किसनाजी पटेल ने खडे होकर प्रतिज्ञा की—

'महाराज! मैं जब तक जीऊँगा, कसाईपना नही करूँगा। कभी किसी जीव को नही मारूगा और न मास खाऊँगा। मारने के उद्देश्य से बकरा आदि पशुओ का व्यापार भी नहीं करूँगा।

किसनाजी पटेल ने अपनी प्रतिज्ञाओ का बराबर पालन किया। उसका एक मुकदमा अदालत मे चल रहा था। उसके लगभग तीन हजार रुपये अटके हुए थे। प्रतिज्ञाएँ लेने के कुछ ही दिन बाद उसकी जीत हो गई और उसे तीन हजार रुपये मिल गये। सरल हृदय किसना ने उसे धर्म का प्रताप समझा। इससे अहिंसा धर्म के प्रति उसकी श्रद्धा और बढ़ गई। उसने दूसरे भाइयो को भी हिंसावृत्ति से दूर करने का प्रयत्न किया। उसके प्रयत्न से ग्यारह कसाइयो ने पशु मारने का व्यवसाय छोड दिया और दूसरा धधा अख्तियार किया।

श्रावको ने उस समय इक्कीस रगी सामायिकें की थी। इसमें ८४१ आदमी सम्मिलित हुए थे। कई श्रावको ने धर्मोत्साह के रग मे रगकर एक साथ सौ सौ सामायिकें की। उस समय वर्तमान आचार्य महोदय पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज गृहस्थावस्था में थे, तथापि आपके संस्कारो मे धार्मिकता की गहरी छाप थी। आपने भी ४१ सामायिकें एक साथ की थी। चरित नायक के उदयपुर के पहले चातुर्मास मे आपने सम्यक्त्व ग्रहण किया था और इस चातुर्मास मे आप चरित्र की ओर काफी कदम बढा चुके थे। प्रकृति अलक्षित रूप में चरितनायक के उत्तराधिकारी का निर्माण करने मे लगी थी।

उस समय उदयपुर स्टेट के प्रधानमंत्री राजेश्री बलवन्तसिहजी साहब कोठारी मुनिश्री के गाढ परिचय मे आये और परम भक्त बन गये। आपका प्रतिष्ठित परिवार आज तक पूज्यश्री के परम भक्तो मे गिना जाता है। लाला केशरीलालजी, लाला हरभजनलालजी आदि उच्च राज्य पदाधिकारियो ने भी मुनिश्री के व्याख्यानो से खूब लाभ उठाया। महद्राजसभा कौंसिल के मेम्बर श्रीमदनमोहनलालजी पर तो इतनी गहरी छाप पडी कि वे महाराजश्री के परम भक्त बन गये।

गंगारामजी महाराज ने भी लम्बी लम्बी तपस्याएँ कीं। मुनिश्री घासीलालजी महाराज ने अमरकोष सीखा। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज (वर्तमान आचार्य) ने लगभग ४० थोकड़े, दशवैकालिक सूत्र मूल, सात अध्ययन का शब्दार्थ तथा उत्तराध्ययन के ६ अध्ययन कण्ठस्थ किये। तपस्याओं के पूर के अवसर पर अनेक व्रत प्रत्याख्यान एवं खंध हुए। बाहर से भी अनेक सज्जन धर्म की प्यास बुझाने के लिए मुनिश्री की सेवा में पहुँचे। मुनिश्री के प्रभावशाली उपदेशों से प्रभावित होकर बहुत से लोगों ने मदिरा, मांस, परस्त्री गमन आदि का त्याग किया। साहड़ा एवं राशमी के हाकिम साहबान तथा अन्य जैनेतर भाइयों ने भी मुनिश्री के उपदेश से अच्छा लाभ उठाया।

गंगापुर का चातुर्मास पूर्ण करके आप साखोला, साड़ा, पोटला, राशमी होते हुए कपासन पधारे। कपासन से आकोला होते हुए बड़ी सादड़ी पधार गये। उस समय बड़ी सादड़ी में आचार्य महाराज पूज्यश्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज विराजमान थे। उनके दर्शन करके मुनिश्री को अपार हर्ष हुआ।

मुनिश्री लखमीचन्दजी के संसारावस्था के पुत्र श्री पन्नालालजी, आपकी पत्नी और श्री रतनलालजी की दीक्षा इसी समय हुई। श्रीरतनलालजी बाल ब्रह्मचारी और होनहार थे किन्तु आयुष्य की कमी के कारण स्वर्गवासी हो गये।

मुनिश्री ने विभिन्न स्थानों पर विचरकर जो धर्म प्रचार किया था, उसके लिए पूज्यश्री ने हार्दिक संतोष प्रकट किया। वहाँ से अलग विचरकर आपने कानोड़ में फिर पूज्यश्री के दर्शन किए।

कानोड़ से विहार करके आप डूंगरा, नकूम, छोटी सादड़ी, निंबाहेड़ा, जावद, नीमच, मन्दसौर, सीतामऊ, नगरी जावरा होते हुए सैलाना पधारे। सैलाना में बाजार में आपका पब्लिक व्याख्यान हुआ। वहाँ से खाचरौद होते हुए रतलाम पधारे।

इस लम्बे प्रवास में मुनिश्री ने सर्वत्र हजारों व्यक्तियों को आत्म कल्याण का प्रशस्त पथ प्रदर्शित किया। बहुत से मूक पशुओं को अभय दान मिला। बहुतों को मदिरा, मांस, परस्त्री गमन आदि के पापों से बचाया। बड़े बड़े ठाकुरों जागीरदारों, सरदारों और प्रसिद्ध शिकारियों को शिकार के घोर पाप से जिन्दगी भर के लिए बचा दिया।

सोलहवां चातुर्मास

वि० सं० १९६४ में आपका चातुर्मास ठाणा आठ से रतलाम में हुआ। वहाँ विराजने से बहुत उपकार हुआ। प्रतिदिन हजारों व्यक्ति आपके व्याख्यान से लाभ उठाते थे। व्याख्यान में सूत्रकृताग और भगवती सूत्र का सरल भाषा में स्पष्टीकरण किया जाता था। स्वतन्त्र रूप से संस्कृत भाषा का अध्ययन न करने पर भी अपनी अध्ययनशीलता, क्षयोपशम की प्रबलता, जन्म जात प्रतिभा और शास्त्रीय विषयों के सूक्ष्म परिचय के कारण आप सूत्रकृतांग की टीकाओं का आशय भली भांति समझ लेते और श्रोताओं को समझाते थे। मुनिश्री दौलतऋषिजी महाराज तथा गादाजी मालवी, सेठ अमरचंदजी, रूपचंदजी हीरालालजी तथा इन्द्रमलजी कावड़िया आदि गृहस्थ दोपहर के समय आपसे भगवती सूत्र का वाचन, मनन, श्रवण करने आया करते थे और मुनिश्री की मार्मिक विवेचना सुनकर अत्यन्त हर्षित होते थे।

इस चातुर्मास में भी अनेक सन्तों ने तपस्याएँ कीं। वह इस प्रकार हैं—

१—मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ४० उपवास

२—मुनिश्री राधालालजी महाराज ४० उपवास

३—मुनिश्री पन्नालालजी महाराज ५१ उपवास

४—मुनिश्री उदयचन्दजी महाराज ३६ उपवास

मुनिश्री मोतीलालजी महाराज की तपस्या के पारणे के दिन करीब १५० खंध हुए। तरह तरह के त्याग प्रत्याख्यान हुए। पारणा के दिन मुनिश्री मोतीलालजी महाराज स्वयं भिक्षा के

लिए गए। इसका जनता पर बडा प्रभाव पड़ा।

चातुर्मास समाप्त होने के अनन्तर मुनिश्री परवतगढ, बदनावर होते हुए कोद पधारे। कोद के ठाकुर साहब ने बडी श्रद्धा भक्ति के साथ मुनिश्री के उपदेश सुने। बहुत से लोगो ने शराब, आदि मादक द्रव्यो की और मांस आदि अभक्ष्य वस्तुओ का त्याग किया। तीस चालीस खध हुए।

कोद से विहार करके बिड़वाल, देगाई, कानून, नागदा होते हुए आप धार पधारे। मुनिश्री जहां भी पहुँचे, सर्वत्र जनता को दुर्व्यसनो से छुडाया। कोद के ठाकुर साहब ने भक्ति भाव पूर्वक मुनिश्री का उपदेश सुना और आभार माना। बिडवाल के ठाकुर साहब भी व्याख्यान सुनते तथा शका समाधान करते थे। आपने मुनिश्री के समक्ष कई त्याग प्रत्याख्यान किये।

मुनिश्री के आगमन से धार की जनता मे आनन्द की लहर दौड गई। प्रतिदिन बहु सख्यक श्रोता आपके व्याख्यानो से लाभ उठाने लगे। वहा के सुप्रसिद्ध सेठ मोतीलालजी गेंदालालजी और कन्हैयालालजी आदि का उत्साह विशेष रूप से प्रशसनीय था। मुनिश्री के कई जाहिर व्याख्यान हुए। धार रियासत के बडे बडे सरदार तथा राज्य पदाधिकारी आपके व्याख्यानों से लाभ उठाने लगे। मुनिश्री के व्याख्यान की प्रशसा सुनकर धार नरेश ने भी व्याख्यान सुनने की इच्छा प्रदर्शित की। मगर उसी समय अचानक कार्यवश उन्हें बाहर चला जाना पड़ा।

धार से विहार कर मुनिश्री दिसाई, राजगढ पटलावद और कुशलगढ होते हुए और उपदेशामृत की वर्षा करके भव्यजीवो का कल्याण करते हुए बाजणा पधारे।

पशु-बलि बन्द

बाजणा तहसील मे अधिकाश गाव भीलो के हैं। उनमे मदिरा और मास का प्रचार अत्यधिक था। वे दवी देवताओ के उपासक थे और नवरात्रि मे उनके सामने भसा तथा बकरों की बलि चढ़ाया करते थे। मुनिश्री जब बाजणा पधारे उस समय मेहता तखतसिंह जी वहां तहसील दार थे। उन्हें धर्म से बहुत प्रेम था। वह मुनिश्री के भी परम भक्त थे और चाहते थे कि किसी प्रकार भीलो मे अच्छे सस्कारों का बीजारोपण किया जाय। भीलो की यह निरयक हिंसावृत्ति, जो धर्म के नाम पर प्रचलित है और उन्हें दयाहीन बनाये हुए है, रोकी जाय।

मुनिश्री के आगमन से मेहताजी को अपनी चिरकालीन अभिलाषा पूरी होती नजर आने लगी। उनके तथा श्री जवाहरलालजी और त्रिलोकचन्दजी आदि मुख्य व्यक्तियो के प्रयत्न से लगभग ७० गावो के पटेल मुनिश्री का व्याख्यान सुनने आये। उपदेश इतना प्रभावजनक हुआ कि हृदय तक असर कर गया। सरल हृदय पटेलो पर व्याख्यान का तत्काल प्रभाव पडा। उन्होंने खडे होकर प्रतिज्ञा ली कि हम लोग अपने अपने गाव मे, दशहरे के अवसर पर देवी के सामने भंसा और बकरो की बलि नहीं चढायेंगे और दूसरो को भी रोकने का प्रयत्न करेंगे। सभी पटेलो ने एक प्रतिज्ञा पत्र पर अपने अपने अगूठे लगाए और यह प्रतिज्ञा पत्र वहा के श्रावकों को सौंप दिया। श्रावकों ने इस पवित्र प्रतिज्ञा का सत्कार करने के उद्देश्य से सभी पटेलो का पगड़ी बधाई और प्रेम के साथ उन्हे विदा दी। इस प्रकार मुनिश्री के उपदेश से एक ही तहसील में हजारो प्राणियो के प्राण बच गये।

कान्फ्रेंस के अधिवेशन पर

बाजणा से विहार करके शिवगढ़ होते हुए आप रतलाम पधारे। उन्ही दिनो रतलाम मे श्री श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेंस का दूसरा अधिवेशन था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तो से हजारो सज्जन कान्फ्रेंस मे सम्मिलित होने आये थे। मोरवी के नरेश तथा राजपूताना एव मध्यभारत के अनेक जागीरदार भी कान्फ्रेंस के अधिवेशन में शरीक हुए थे। करीब दस हजार की भीड थी। उसी अवसर पर विशाल सभा मे मुनिश्री का व्याख्यान हुआ। आपने अपने व्याख्यान मे कान्फ्रेंस को सच्ची कामधेनु बनने की प्रेरणा करते हुए इस आशय के उद्गार व्यक्त किये।

की अपनी इच्छा उन्होंने प्रकट की। मगर इस समय का धार भोजकालीन धारा नगरी नहीं था। वह धारा तो भोज के साथ ही समाप्त हो गई थी। राजा भोज की मृत्यु पर एक कवि ने कहा था—

अद्य धारा निराधारा, निरालम्बा सरस्वती।
पण्डिता खण्डिता सर्वे, भोजराजे दिवंगते॥

अर्थात्—आज भोजराज के स्वर्ग गमन करने पर धारा नगरी निराधार हो गई, सरस्वती के लिए सहारा नहीं रहा और सब पण्डित खण्डित हो गए।

धार नरेश मुनिश्री की प्रशंसा सुन चुके थे। उनकी दृष्टि आप पर हो गई। उसी समय उन्होंने एक पत्र थादला लिखा। उसमें लिखा था—'अगर मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को शास्त्रार्थ करने के लिए यहां आने का अवकाश हो तो शीघ्र सूचना दीजिए। उन्हें लाने के लिए हाथी घोड़ा आदि लवाजमा भेज दिया जायगा।'

थादला के श्रावकों ने उत्तर दिया—'जैन साधु चातुर्मास में एक ही स्थान पर रहते हैं। इस समय विहार करना उनकी शास्त्र मर्यादा में नहीं है। अतएव मुनिश्री वहाँ नहीं पधार सकते। अगर चातुर्मास के पश्चात आवश्यकता हो तो सूचना दीजिएगा। हम मुनिश्री से उसी ओर विहार करने की प्रार्थना कर देंगे। जैन साधु सदा पैदल ही विहार करते हैं। किसी भी प्रकार की सवारी का उपयोग नहीं करते। अतएव हाथी घोड़ा आदि कुछ भी भेजने की आवश्यकता नहीं है।

धार नरेश के लिए यह गौरव की बात थी कि उन्होंने आगत विद्वानों को यों ही नहीं टाल दिया। उन्होंने महाराज भोज की परम्परा को किसी अंश में कायम रखा और शास्त्रार्थ के लिए आयोजना की। मगर शास्त्रार्थ अर्थी विद्वान् अधिक दिनों तक नहीं ठहर सकते थे। इस कारण शास्त्रार्थ तो न हो सका परन्तु धार नरेश पर उस पत्र का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। जैन साधुओं के पैदल विहार और अन्य कठोर तपश्चरण की बात जानकर उनके हृदय में भक्ति भाव उत्पन्न हो गया।

इस चातुर्मास में मुनिश्री मोतीलालजी महाराज और मुनिश्री राधालालजी महाराज ने ४२ ४२ दिन की अनशन तपस्या की। श्री पन्नालालजी महाराज ने भी लम्बी तपस्या की। पूर के दिन बहुत भीड़ हुई। अनेक खंध हुए। बहुत से भाइयों ने शिकार और मांसाहार का त्याग किया अनेक जीवों को अभय दान दिया गया। श्रावकों ने विविध प्रकार से धर्म जागरणा की।

समाज सुधार

उस समय थान्दला में समाज सुधार के लिए नीचे लिखा पंचायतनामा लिखा गया और सर्वसम्मति से वह स्वीकार किया गया।

ओसवाल सकल पंचपुर थादला के खाता पा० १९१७ की नकल

संवत् १९६५ के साल में चौमासा की विनन्ती अरज सब तरफ से होने से श्री १००८ श्री तपस्वीजी महाराज परमदयाल, कृपावत करुणा के सागर, गुणा के आगर, ऐसी अनेक ओपमा योग श्री १००८ श्री मोतीलालजी महाराज साहेब, श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहब ठाणा ६ से चातुर्मास की कृपा करके इस क्षेत्र की सौभाग्य दशा होने से पधारे। महाराज साहब के पधारने के पीछे यहा श्री तपस्वीजी श्री १००८ श्री मोतीलालजी महाराज साहेब, श्री १००८ श्री राधालालजी महाराज साहेब ने तपस्या दिन ४२ की दोना महाराज साहब ने की। बाद श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहेब वखाण अमृतधारा मेह की तरह फरमाते हुए जीव दया तपस्या त्याग, वराग वगरा बहोत सा उपगार हुआ। महाराज साहेब का फरमान व्याख्यान द्वारा धार्मिक व सांसारिक व्यावहारिक सुधार बाबत उपदेश फरमाने से उसका असर होता रहने से आज राज

सकल पच शहर पूरा शरीक होकर नीचे माफिक कलमवार सासारिक व धार्मिक सुदा रेखावद ठह राव किया गया सकल पचा की राय स।

नीचे मुजब कलमवार

१—कन्या विक्रय बन्द—याने सगपण लडकी को करवा मे देज बावत सिफ रु० १) एक रुपया व खोल बावत ३५०) जुमले रुपया ३५१) तीन सौ एकयावन सीके कल्दार बेटी को बाप लेवे। सिवाय कोई ज्यादा रुपया लेवे तो की कुल रुपया वाद सबूती पच वसूल कर लेवे। अण के सिवाय कोई लडकी न परदेश जाई ने जादा देज सू परणाई देवे तो ज्यादा लिया हुआ कुल रुपया बेटी का बाप स पच वसूल कर लेवे। तथा भात खिचडी का रुपया नकदी लेवा का हकदार पच है सो वसूल कर लेवे। अण म उजर व पक्ष नही करेगा। लडकी की उमर ११ वर्ष पेश्तर नहीं परणावणी। व लडके को तेरा वरस के नीचे व पीसतालीस बरस के उपरांत नही परणावणो। अणा के खीलाफ कोई भी करे ता वणा के पच ठपको देवे।

२—वीद व वीदणी वरात भाणा म खरच जातरसम करवा की तादाद—वीद के यहां की रसम—

खीचडी न० १ नारेल न० १ साता न० १ आखा विवाह मे।
रास की खारका मण ४ वीदणी के घरे मेलणी।
नारेल न० ५१ वीदणी परणवाने जावे जदी रात खरचा का।
१२) चवरी का पचायती।
८) वासणा भाडा का भात खीचडी का।
३) देवका खीचडी का।
२) खोल का
४) पौषधशाला
वीदणी के यहां की रसम—
भात नग १ नारेल नग १ सातो नग १ आखा विवाह म।
७) पचायती
३) देव का भात का
४) पौषधशाला
१॥) ठीकरो देव का बावत
३—विवाह म रण्डी को नाच करावणो नही।
४—रजा की जीमण म मोरस खाड नही गारणी।
५—नीला बाज दूना नही बापरणा कतई वद, जात मे गाम में।
६—न्यात का निराश्रित बाया भाया पर पचायती निगाह सार सभार की रेवे।
७—परगाम पचायती रसम से जावे तो राते मसाल का उजवारा सु नहीं जावे।
८—भील का हाथ को पाणी गाम में व गामडा म कोई नही पीवे।
९—जात मे वीरादरी की लुगाया बजा गारीया नही गावे बेजा नाच नही नाचे।

१०—श्रावण भादवा मे नयासर से नीव नाखने मकान को या दूसरो काम नही सरु करणो।

११—श्रावण भादवा मे अष्टमी या चतुदशी के दिन गाडी भाडे की या घर की नही चलावणी। वेसे गाडी मे वेठकर जाणो भी नही कमभाव भी मगावणी नही।

१२—घरू लेन देन बावत पचायती रजा नहीं सके।

आकर अपनी द्वेष वृत्ति छोड़ दी। जब हमारे हृदय में रोष और दूसरे को हानि पहुँचाने की भावना होती है तभी सामने वाला हमसे द्वेष करता है। अगर हमारा हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो तो दूसरे की द्वेष वृत्ति भी शान्त हो जाती है। यही अहिंसा की भावना है। इसी भावना के कारण तीर्थंकरों एवं अन्य महात्माओं के सामने प्रकृति से हिंसक प्राणी भी अपनी हिंसकता भूल जाते हैं।

'अहिंसा में ऐसी अपूर्व शक्ति है कि सिंह और हिरन, जो जन्म से ही विरोधी हैं अहिंसक की गोद पर आकर सो जाते हैं। अहिंसाप्रतिष्ठायां वैरत्यागः' अर्थात् जहां अहिंसा की प्रतिष्ठा होती है वहां वैर का नाश हो जाता है। अहिंसक के निकट जाति विरोधी पशुओं के एकत्र निर्वैर बसने के उदाहरण आज भले ही दिखाई न पड़ते हो, फिर भी अहिंसा की शक्ति के उदाहरणों की कमी नहीं है। अहिंसा के आराधक महात्माओं की चरणरेणु से हजारों को मारने वाला हत्यारा भी शुद्ध हो जाता है।

मृत्यु के मुँह में

इस प्रकार धर्मोपदेश देकर चातुर्मास समाप्त होने पर मुनिश्री ने थांदला से विहार किया और रम्भापुर पधारे। वहां से मुनिश्री मोतीलालजी महाराज झाबुआ होकर कोद पधार गये। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने जब झाबुआ की ओर विहार किया तो दो कोस चलने ही पारोलिया गांव में आपको बुखार हो आया। अतएव आपको फिर रम्भापुर लौट जाना पड़ा। यहां आपको कै और दस्त होने लगे। प्रतिदिन १५० के करीब कै दस्त का नंबर पहुँच गया। रात को नींद न आती। नौ दिन तक यही हाल रहा। कोई इलाज कारगर न हुआ। रम्भापुर के श्रावकों ने आपके जीवन की आशा छोड़ दी। यहां तक कि अंतिम संस्कार करने की तैयारी कर ली और सब आवश्यक सामान मंगवा लिया। उस समय मुनिश्री राधालालजी महाराज और मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज (वर्त्तमान आचार्य) आपकी सेवा में मौजूद थे। उन्होंने मुनिश्री की सेवा करने में कोई कसर न रखी। हर प्रकार के कष्ट सहन करके सेवा की। रम्भापुर से दो कोस दूर साहब की एक खान थी। वहां एक सरकारी डाक्टर रहता था। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज प्रतिदिन वहां जाते और दवा लाते। मगर उससे भी विशेष लाभ नहीं हुआ। आपकी बीमारी के समाचार बिजली के वेग से सब जगह फैल गये थे।

उन्हीं दिनों नाहरसिंह बुन्देला नामक वैद्य किसी का इलाज करने रम्भापुर आये। वैद्यजी थांदला के रहने वाले थे। मुनिश्री की दशा देखकर उन्होंने कहा—किसी प्रकार थांदला पहुँच सकें तो मैं इन्हें स्वस्थ कर सकता हूँ।

मुनिश्री का जीवन इतना बहुमूल्य था कि उसकी रक्षा करने के लिए कोई भी कष्ट झेलना बड़ी बात नहीं थी। मगर इस समय तो यह प्रश्न था कि आपको किस प्रकार थांदला पहुँचाया जाय? साथ में सिर्फ दो सन्त थे मगर दोनों सेवापरायण और पूर्ण भक्त व्यनिष्ठ थे उन्होंने साहस करके मुनिश्री को थांदला ले जाने का निश्चय कर लिया। मुनिश्री बेहद कमजोर हो गये थे। साधु की मर्यादा के अनुसार दो कोस से आगे दवाई भी साथ नहीं ले जा सकते। रम्भापुर से थांदला चार कोस था। रम्भापुर का आहार पानी और औषध दो कोस तक ही काम आ सकता था। आगे क्या होगा? यह प्रश्न सामने था। मगर जहां हिम्मत होती है, रास्ता निकल ही आता है।

मुनिश्री ने धीरे धीरे चलना आरम्भ किया। आप लगातार चल भी नहीं सकते थे। अतः मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज आपको सहारा देते और आगे बढ़ कर रास्ते के वृक्ष के नीचे बिछौना बिछा देते। मुनिश्री टरकते टरकते जब बिछौने के पास पहुँचते तो विश्राम के निमित्त आपको लेटा देते और आप पर दया लगते। आप अकेले ही दोनों मुनियों का सारा सामान भी लादे हुए थे। इस प्रकार सहारा देते देते बिछौना करते और पैर दबाते दबाते चलते दो दिन भर में अढ़ाई कोस की यात्रा हो सकी। मुनिश्री राधालालजी आहार पानी लाने के लिए रम्भापुर

ही रह गये थे। वे बाद म आये। रात्रि मे तरावली मे विश्राम किया। दिनभर चलने के कारण आपको थकावट हो गई थी इस कारण तथा राधालालजी महाराज थादला से दवा ले आये थे इस कारण रात म कुछ नीद आ गई। नीद आने से कुछ शान्ति हुई। दूसरे दिन तरावली से विहार हुआ। मुनिश्री राधालालजी महाराज आगे बढ गये और थांदला जाकर आहार पानी और औषध लेकर फिर लौटे और मुनिश्री की सेवा म उपस्थित हुए।

इस प्रकार दोनो मुनियो के साहस के कारण दूसरे दिन मुनिश्री थादला पधार गये। वहाँ श्री नाहरसिहजी कुन्देला का इलाज शुरू किया गया। धीरे धीरे डढ़ मास औषधि सेवन करने के पश्चात् आप रोग मुक्त हुए।

कोद मे विराजमान मुनिश्री मोतीलालजी महाराज को जब मुनिश्री की बीमारी के समाचार मिले तो उन्होने उसी समय थादला की ओर विहार कर दिया। रास्ते की तकलीफों की परवाह न करते हुए वे शीघ्र ही थादला पहुच गये थे। मुनिश्री का स्वास्थ्यलाभ देखकर आपको बडी प्रसन्नता हुई। मुनिश्री इस बार मृत्यु के मुँह से ही बाहर निकले।

कमजोरी दूर होने पर मुनिश्री ने कोद की ओर विहार किया। मार्ग म भीलो की बस्तिया थी। उनम थोडा थोडा समय ठहरते हुए और भीलो को धर्मोपदेश देते हुए आप कोद पधारे। वहाँ के ठाकुर साहब ने आपका मधुर भाषण सुनकर श्रद्धा प्रकट की। पौष का महीना था। इसी समय श्रीचन्दजी विनायका ने चालीस वष की अवस्था म दीक्षा अगीकार की।

कोद स विहार करके बिडवाल, कडोद, होते हुए धार पधारकर और वहाँ कुछ दिन ठहरकर नागदा कानून बिडवाल, बखतगढ़ आदि स्थानो को पवित्र करते हुए रतलाम पधारे। रतलाम से खाचरौद और फिर जावरा पहुचे। यहाँ पहुँचकर सम्प्रदाय सम्बधी कुछ बातो पर विचार करने के लिए आपको पूज्यश्री से मिलने की आवश्यकता प्रतीत हुई। आप वहाँ से ब्यावर पधारे और पूज्यश्री के दशन कर प्रसन्न हुए। यहाँ आपने तीन वष तक दक्षिण म विचरने की आज्ञा प्राप्त की और साथ ही निवेदन किया कि अगर धमप्रचार की दृष्टि से वह क्षेत्र मुझे अनुकूल लगे तो तीन साल क बाद और भी आज्ञा देने की कृपा करें। पूज्यश्री ने आपकी प्राथना स्वीकार की।

ब्यावर मे कुछ दिन ठहर कर आपने मालवा की ओर विहार किया। जब आप नीमच पहुँचे तो उदयपुर के तथा कई अन्य स्थानो के श्रावक आपकी सेवा मे चातुर्मास की प्राथना करने आये। किन्तु पूज्यश्री जावरा म चातुमास करने की आज्ञा दे चुके थे, अतएव सभी को निराश होना पडा।

उन्ही दिनो मुनिश्री के पास खबर आई कि महासती तपस्विनी श्री उमाजी महाराज ने जावरा मे सथारा कर लिया है और वे आपके दर्शन करना चाहती हैं। मुनिश्री जावरा पधारे। सथारा लम्बा हो गया। मुनिश्री, तपस्विनीजी को बार बार शास्त्र सुनाते रहे। ५४ दिन बाद सथारा सीझ गया और महासतीजी का स्वगवास हो गया। मुनिश्री वहाँ से विहार करके ताल होते हुए फिर जावरा पधारे।

अठारहवाँ चातुर्मास

पूज्यश्री के आदेशानुसार मुनिश्री ने सवत १९६६ का चातुर्मास जावरा मे किया। जावरा के नवाब साहब के भाई ने भी मुनिश्री के उपदेशों का खूब लाभ लिया। सभी श्रेणी की जनता व्याख्यान म उपस्थित होती थी।

जावरा मे चातुर्मास समाप्त करके आप रतलाम और फिर पटलावद पधारे। उस समय पूज्यश्री रतलाम पधार गये थे अत मुनिश्री ने फिर रतलाम आकर पूज्यश्री के दशन किये। कुछ दिन पूज्यश्री की सेवा मे रहकर आप पटलावद, राजगढ़ नडगाँव, दिसाई त्रिडवाल आदि क्षेत्रो म विचरते हुए कोद और फिर नागदा पधार गये।

उन दिनों कोद तथा आसपास के गाँवों में तड़बन्दी हो रही थी। मुनिश्री के पधारने पर बहुत से गाँवों के लोग आपके दर्शनार्थ आये मुनिश्री ने पारस्परिक प्रेम की आवश्यकता प्रदर्शित करते हुए प्रभावशाली उपदेश दिया और वैमनस्य दूर करने की प्रेरणा की। मुनिश्री के उपदेश रूपी जल की वर्षा से लोगों के दिलों की कालिमा बह गई। अशान्ति की ज्वालाएँ बुझ गई। लोगों के हृदय शांत और निस्ताप हो गये। सब भाई गले से गला लगाकर मिल गए। पार्टीबन्दी समाप्त हो गई। इसी सिलसिले में आपको एक बार फिर कोद पधारना पड़ा। वहीं सब पचों ने वमनस्य दूर करने का फैसला किया।

जिस दिन पचों ने यह शुभ निश्चय किया उसी दिन कोद के प्रमुख सज्जन श्रीलाल चन्दजी ने भी एक महान् और प्रशस्त निर्णय कर लिया। आपने दीक्षा लेने की इच्छा प्रदर्शित की और मुनिश्री से कुछ दिन और विराजने की प्रार्थना की। लालचन्दजी धनाढ्य तो थे ही मगर साथ ही उदार तथा गरीब निवाज भी थे। गाँव के सभी लोग उनका आदर करते थे। आपने यथासंभव शीघ्र ही हजारों का लेन देन निपटाया। जिससे जितना लिया उससे उतना ही लेकर चुकौता कर लिया। न किसी को दबाया, न किसी को सताया, न किसी को धमकाया, और न किसी को लाल आँख दिखाई। आपने दीक्षा लेने से पहले वहाँ की समस्त जनता को प्रीतिभोज दिया और दीक्षा लेकर हलके हो गये।

दीक्षा प्रसंग पर सभी आसपास के गाँवों के विशिष्ट व्यक्ति उपस्थित हुए। भरपूर सम्पत्ति छोड़कर तीव्र वैराग्य के साथ आपने दीक्षा अंगीकार की।

जब दीक्षा की विधि हो रही थी तो कोद के ठाकुर साहब के बड़े कुंवर दीक्षा स्थान में बैठे बीड़ी पीने लगे। मुनिश्री को यह अच्छा न लगा। महात्मा पुरुषों के निकट बड़े छोटे, सधन निर्धन का कोई भेद भाव नहीं रहता। मुनिश्री को इस बात का भय भी नहीं था कि यह ठाकुर साहब के कुंवर हैं। अतएव मुनिश्री ने कुंवर से कहा—आप बड़े आदमी के लड़के कहलाते हैं। आपको धर्मसभा की सभ्यता का ख्याल रखना चाहिए। बीड़ी पीना यहाँ की सभ्यता के विरुद्ध है।

कुंवर ने शायद कल्पना भी नहीं की होगी कि यह अकिंचन साधु इतने तेजस्वी हो सकते हैं कि मुझ सरीखे को इस प्रकार टोकें। वह एक बार अचकचा गये और कुछ लज्जित हुए। फिर बोले—महाराज, यह तो जीवन की एक साधारण आवश्यकता है।

मुनिश्री ने फरमाया—शारीरिक, राष्ट्रीय, सामाजिक और धार्मिक सभी दृष्टियों से बीड़ी हानिकारक वस्तु है। आप जैसे लोगों को पीना शोभा नहीं देता। और अगर जीवन इतना गिर जाय कि बीड़ी पिये बिना काम नहीं चल सकता तो क्या ऐसे स्थानों पर भी उसे नहीं त्यागा जा सकता? जीवन के लिए आवश्यक तो बहुत सी वस्तुएँ हैं मगर उन सबका क्या सभी जगह उपयोग किया जाता है?

कुंवर साहब ने उसी समय बीड़ी फेंक दी। अन्त में उन्होंने महाराजश्री का आभार माना। महाराजश्री पर उनकी भक्ति हो गई।

कोद से विहार करके मुनिश्री धार और इन्दौर होते हुए देवास पधारे।

उन्नीसवां चातुर्मास

देवास से लौटकर मुनिश्री फिर इन्दौर पधारे और वि० सं० १९६७ का चातुर्मास इन्दौर में किया। इन्दौर मध्य भारत का प्रधान केन्द्र है। होल्कर रियासत की राजधानी है और उसमें सम्पत्तिशाली तथा विद्वानों का वास है। इन्दौर में मुनिश्री का व्याख्यान बाजार में होता था। हजारों श्रोता एकत्र होते थे। वहाँ आपके व्याख्यानों की धूम मच गई। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने ३६ दिन का तप किया। पूर के दिन बहुत से कसाई भाई भी व्याख्यान सुनने आये। मुनिश्री ने उस दिन अहिंसा धर्म पर प्रभावजनक भाषण दिया। मुसलमान कसाइयों पर भी आपके

भाषण का अच्छा असर हुआ। एक कसाई ने चतुर्दशी का तथा दूसरे ने एकादशी को जीवहिंसा करने का त्याग किया। उस समय जीवदया के निमित्त लगभग छ हजार का चन्दा कुछ उत्साही भाइयो ने एकत्र किया।

एक रुपया का महादान

मुनिश्री के व्याख्यान मे एक भद्र सज्जन थे। उन्होंने भी बडे ध्यान से व्याख्यान सुना था। कहना चाहिए उनके कानो ने नही, हृदय ने व्याख्यान सुना था और उनकी आत्मा ने उसका अनुमोदन किया था। उनके पास कुल पूंजी १०) थी। वह उन रुपयो से प्रतिदिन मूंगफली खरीद कर बचते और जो कुछ बचत होती उसी से अपना निर्वाह करते थे। मुनिश्री के प्रभावक प्रवचन से प्रेरित होकर उन्होंने अपनी पूंजी म स एक रुपया देने की इच्छा प्रकट की। जहाँ हजारो की दान हो वहाँ एक रुपय को कौन पूछता है ? श्रावको न गरीब समझकर उनका रुपया नही लिया। वह दान रुपये का नही, भावना का दान था—हृदय का दान था। उस दान को स्वीकार न करने के कारण उन सज्जन को इतना दु ख हुआ कि वे अपना रोना न रोक सके।

सत पुरुष सुखी की ओर उतना नही जितना दु खी की ओर देखते हैं। वह सज्जन रोने लगे तो मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज (वर्त्त मान आचार्य महोदय) की दृष्टि तत्काल उन पर जा पहुँची। मुनिश्री के पूछने पर उन्होंने रोने का कारण बतलाया। अपने मर्म की चोट खोलकर दिखलाई। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज ने महाराजश्री को सब वृत्तान्त निवेदन किया। महाराजश्री ने अपने भाषण मे उन सज्जन की सदभावना की मुक्तकण्ठ से प्रशसा की। मुनिश्री ने फरमाया—'भाइयो ! इनके हृदय की भावना को देखो। जीव दया के निमित्त अपनी शक्ति से भी बढ़कर त्याग करने के लिए इन भाई को कितनी उत्कठा है ? यह अपनी समस्त सम्पत्ति का दसवाँ भाग देने के लिए उत्सुक हैं। क्या आप लोगो मे कोई ऐसा है जो इनके दान का मुकाबिला करता हो ? कौन आगे आता है जो अपनी पूंजी का दसवाँ भाग त्यागने को तयार हो ? एक लखपती के लिए हजारो रुपयो का जो मूल्य है, उससे कहीं अधिक इन भाई के लिए एक रुपये का मूल्य है ! ऐसी स्थिति मे इस त्याग को तुच्छ समझना अज्ञान है, अहकार है। करोडपति के लाखो और लखपति के हजारो के दान से भी बढ़कर यह दान है। आप सख्या का मूल्य समझते हैं मगर हृदय का मूल्य भी समझना चाहिए। इनकी व्याकुलता को देखो। त्याग की उच्च भावना का साकार करो। उन्हें निराश करना उचित नही। यह दान महादान है।'

श्रावको को अपनी भूल मालूम हुई। उन्होंने बड़े आदर और प्रेम के साथ उनका रुपया स्वीकार किया। उन्होंने उसकी प्रशसा की और अपनी बडी बडी दान की हुई रकमो से भी उसे बडा दान समझा।

धर्मसकट

'व्यापारी व्यापार मे हानि लाभ का विचार करता है पर हे मुनियो ! तुम व्यापारी की तरह हानि लाभ के प्रश्न मे मत पडो। अपनी उद्देश्य सिद्धि की ओर और कर्त्तव्य पालन की ओर ही ध्यान रखो। लाभ हानि के द्वन्द्व मे न पडना सयम का मूल लक्षण है।

मुनियो ! क्षमा रखने के साथ सुख दुख मे भी समान रहो। कोई तुम्हें वदना नमस्कार करेगा, कोई भिखमगा मुफ्तखोर आदि कहकर तुम्हारा अपमान करेगा। इस प्रकार प्रशंसक और निन्दक—दोनो प्रकार के मनुष्य तुम्हे मिलेगे। पर प्रशसा सुनकर सुख न मानना और निन्दा सुनकर दु ख न मानना। ऐसे वाक्यो को अन्तरतम तक पहुँचने ही न देना। पृथ्वी गाली देने वाले और अपने को क्षत विक्षत करने वाले को भी आश्रय देती है, इसी प्रकार हे मुनियो ! जो तुम्हें

गाली देता हो उसका भी कल्याण करो। गाली देने वाला तुम्हें निर्मल बना रहा है। तुम्हारी साधना में सहायक हो रहा है। ऐसा मानकर उसका भी कल्याण करो।

कपड़ा धोनेवाला धोबी अगर बिना पैसे कपड़ा धो दे तो प्रसन्नता होती है या अप्रसन्नता? ज्ञानी पुरुष गाली देने वाले को आत्मा का धोबी मानते हैं—निर्मल बनाने वाला।'

'मुनियो! तुम पृथ्वी के समान क्षमाशील बनो। पृथ्वी को कोई पूजता है, कोई सताता है, कोई खोदता है, कोई खादता है, पर वह सबके प्रति समान है। वह गुण ही प्रकट करती है, अवगुण प्रकट नहीं करती। तुम भी पृथ्वी के समान समभावी बनो।'

जबतक आत्मा निन्दा और प्रशंसा में अंतर समझता है, कहना चाहिए तबतक उसने परमात्मा को पहचाना ही नहीं है। जब निन्दात्मक और प्रशंसात्मक बात सुनाई पड़े तो हमें यही विचारना चाहिए—'हे आत्मन्! तू निंदा और प्रशंसा के भेद भाव में पड़कर कबतक संसार भ्रमण करता रहेगा!'

हमारे चरितनायक के यह उद्गार ही प्रकट कर देते हैं कि उनके अन्तःकरण में किस उच्च श्रेणी का समभाव रहा होगा? यह उदगार जिह्वा की नहीं हृदय की वाणी है। मुनियों को उद्देश्य करके जो महान् आदर्श इन वाक्यों में व्यक्त किया गया है वह पाण्डित्य का परिणाम नहीं, चिरकालीन जीवन-साधना का सहज सुफल है। मुनिश्री ने अपने साधु जीवन में संयम की जो श्रेष्ठ साधना की थी, उसी के फल स्वरूप उनके अन्तःकरण में यह अपूर्व समभाव आ गया था। उनके आगे निन्दा और प्रशंसा में कोई भेद नहीं रह गया था।

महापुरुषों के जीवन में कभी कभी बड़े विकट प्रसंग उपस्थित हो जाते हैं। वे धर्म और अधर्म के द्वन्द्व से तो अनायास ही बच निकलते हैं मगर जहां धर्म का आदर्श द्विमुखी—दो तरफ को होता है वहां मनीषी महापुरुष भी एक बार चक्कर में पड़ जाते हैं। मुनिश्री के जीवन में इसी प्रकार का एक धर्मसंकट उपस्थित हो गया।

रतलाम में स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस की ओर से श्वे० स्था० जैन ट्रेनिंग कालेज चल रहा था। जिस समय मुनिश्री का चौमासा इन्दौर में था, रतलाम में प्लेग फैलने के कारण कालेज के चार विद्यार्थी दीक्षा लेने के लिए तैयार हुए थे। उनके नाम थे—गोकुलचन्दजी, सोमचन्दजी, चुन्नीलालजी और मोहनलालजी। चारों विद्यार्थी मुनिश्री के पास आकर धर्म चर्चा किया करते थे। उन्होंने कई बार मुनिश्री से आजीवन ब्रह्मचर्य अथवा दीक्षा आदि के लिए नियम दिला देने की प्रार्थना की। उनमें से दो तो कभी पहले ही प्रतिज्ञा ले चुके थे। मुनिश्री ने चुन्नीलालजी को लक्ष्य करके कहा—'नियम लेना तो सरल है मगर उसे निभाना कठिन होता है ब्रह्मचर्य आदि व्रत बड़े अच्छे हैं। उनसे आत्मा का कल्याण होता है किन्तु उन्हें अंगीकार करने से पहले शांत चित्त होकर सोचना चाहिए कि प्रतिज्ञा निभ सकेगी या नहीं? आत्म बल को जांचे बिना जोश में आकर ली गई प्रतिज्ञा के लिए पीछे पछताना पड़ता है।

कालेज के नियम के अनुसार जो विद्यार्थी पूरी पढ़ाई किये बिना ही संस्था छोड़ दे उससे जितने दिन वह रहा हो उतने दिनों का पूरा खर्च वसूल किया जाता था। चारों विद्यार्थी दीक्षा लेने के उद्देश्य से कालेज छोड़ना चाहते थे मगर पूरा खर्च चुकाने में असमर्थ थे। चार में से एक गोकुलचन्दजी ने मंत्री से आज्ञा लेकर कालेज छोड़ा फिर भी उनसे पूरा खर्च देने का तकाजा किया गया और अन्त में पूरा खर्च देना ही पड़ा।

इस घटना से दूसरे तीन छात्रों में भय उत्पन्न हो गया और वे चुपचुप भाग निकलने की सोचने लगे। वे मुनिश्री के पास आये और आप से सलाह मांगने लगे। मुनिश्री ने कहा—जब तुम लोग संयम के मार्ग पर चलना चाहते हो तो पहले आत्मा को सबल बनाओ। यदि तुममें

इतना भी साहस नहीं कि कालेज के अधिकारियों से अपनी भावना स्पष्ट रूप से कह सको तो संयम का पालन कैसे कर सकोगे ? आत्मशुद्धि और सरलता संयम के मूलाधार हैं। इनका अभ्यास किये बिना शुद्ध चरित्र का पालन नहीं हो सकता। वेष धारण कर लेना मात्र चारित्र नहीं है।

मुनिश्री की यह बात सुनकर वे चुप तो हो गये मगर उन्होंने अपना भाग जाने का इरादा नहीं बदला। आखिर एक दिन अवसर पा कर वे चल दिये। कालेज के अधिकारियों और जैन हितेच्छु अखबार ने इसके लिए मुनिश्री को दोषी समझा और मुनिश्री की निन्दा करने लगे।

मगर निन्दा और प्रशंसा को समान भाव से ग्रहण करने का उपदेश देने वाले मुनिश्री 'आत्मा के धोबियों की बात से तनिक भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने निन्दा या प्रशंसा की परवाह न करके संयम पालन की दृढ़ता पर ही ध्यान दिया। सोचा हे भगवन्! अगर तू ऐसे प्रसंग उपस्थित होने पर धर्म से विचलित हो जायगा—असत्य भाषण करेगा या विश्वासघात करेगा तो तेरी क्या स्थिति होगी ? कामदेव जैसे श्रावक भी जब घोर मुसीबत पड़ने पर भी धर्म पर दृढ़ बने रहे तो क्या तू साधु होकर और उससे कम कष्ट आने पर भी विचलित हो जायगा ? यह तेरी कसौटी है। इस कसौटी पर तुझे खरा उतरना होगा। सारा संसार एक ओर हो जाय तो उसकी चिन्ता नहीं, तेरे लिए धर्म का—सत्य का बल ही पर्याप्त है। अगर तूने धर्म का सहारा न छोड़ा तो तमाम निन्दा स्तुति के रूप में परिणत हो जायगी अगर धर्म छोड़ दिया तो फिर क्या रह जायगा ?

इस प्रकार विचार कर मुनिश्री ने अपनी निन्दा की चिन्ता न करके संयम धर्म की रक्षा की ही चिन्ता की। मगर जब इस घटना ने ऐसा रूप धारण किया कि उससे मुनि वर्ग पर आरोप आने लगा। और मुनि पद की ही निन्दा होने की संभावना हुई तो आपको इस ओर ध्यान देना पड़ा। वे स्वयं तो सब कुछ सहन कर सकते थे मगर मुनियों पर उनके निमित्त से कोई आरोप लगे, यह बात उन्हें रुचिकर नहीं हुई। अभी तक आपके सामने व्यक्तिगत निन्दा और संयम का प्रश्न था मगर अब एक ओर संयम और दूसरी ओर मुनि-निन्दा के निराकरण की समस्या सामने आई। यह दूसरा धर्म संकट था। इस संकट से बचने के लिए भी आपने संयम की उपेक्षा नहीं की।

मुनिश्री ने सोचा—'इस घटना पर अगर इन्दौर श्रीसंघ जांच पड़ताल करके अपना निर्णय दे और वह प्रकाशित हो जाय तो समाज के सामने सचाई प्रकट हो जायगी। फिर किसी को मुनियों पर आरोप लगाने का साहस भी नहीं होगा।' इस उद्देश्य से संघ द्वारा घटना की जांच की गई और सचाई सामने आगई। मुनिश्री निर्दोष थे और निर्दोष ही प्रमाणित हुए।

मुनिश्री ने अपनी निन्दा की तनिक भी चिन्ता न करते हुए अपने धर्म की ही रक्षा की। धन्य हैं ऐसे महात्मा जो ऐसे विकट प्रसंग पर भी धर्म पर, सत्य पर, संयम पर अविचल रहकर संसार को बोध पाठ पढ़ाते हैं मुनिश्री एक वीरात्मा थे। उनके यह शब्द प्रेरक हैं कि—'मैं कई बार कह चुका हूँ कि धर्म वीरों का होता है कायरों का नहीं। वीर पुरुष अपनी रक्षा के लिए लालायित नहीं रहते, वरन् अपने जीवन का उत्सर्ग करके भी दूसरों की रक्षा के लिए सदा उद्यत रहते हैं।' इस प्रकार की वाणी उच्चारने वाला क्या कभी अपनी रक्षा के लिए दूसरों को खतरे में डालकर—विश्वासघात करके धर्म से विमुख हो सकता था ? कदापि नहीं। मुनिश्री की धर्म दृढ़ता का यह एक उज्ज्वल उदाहरण है।

इन्दौर में आपने मरहठी भाषा का अच्छा अभ्यास कर लिया। मरहठी महाभारत का आपने पारायण किया। साहित्य सेवन में ही आपका बहुत समय व्यतीत हुआ। चौमासे के पश्चात् आपने दक्षिण की ओर विहार किया।

दक्षिण की ओर

दक्षिण प्रात के भाइयो की बहुत समय से उधर विहार करने की प्रार्थना थी और मुनिश्री गंगारामजी महाराज का भी आग्रह था। इसके अतिरिक्त इन्दौर चातुर्मास मे श्रीचन्दमलजी फिरोदिया तथा अन्य सद्गृहस्थो ने मुनिश्री से दक्षिण की ओर पधारने की पुन प्रार्थना की थी। मुनिश्री का विचार भी उधर विहार करने का हो गया था और अपनी मर्यादाओ का ध्यान रखकर आपने दक्षिण की ओर विहार करने की प्रार्थना अगीकार कर ली थी।

इसी विश्वास के अनुसार इन्दौर से विहार करके मुनिश्री बड़वाहा सनावद, बारगाव, असीरगढ़, बुरहानपुर आदि क्षेत्रो को पवित्र करते हुए फैजपुर पधारे।

कया ठिकाना बे ठिकानो का

जिन दिनो मुनिश्री ने इन्दौर से विहार किया और सनावद से आगे पहुँचे लगभग उन्हीं दिनो भारतवर्ष मे एक सनसनी फैलाने वाली घटना घटी थी। सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्रीयुत खुदीराम बोस द्वारा गोली चलाये जाने के कारण सारे भारत मे तहलका मचा था। देश भर मे अशान्ति फैली हुई थी। पुलिस की चारो ओर दौड़धूप थी। सरकार को विशेषत पुलिस अधिकारियो को प्रत्येक भारतीय खुदीराम ही दिखाई देता था। स्थानकवासी साधु दक्षिण प्रान्त के लिए नवीन थे। भिन्न प्रकार का वेष देखकर पुलिस मुनिश्री पर भी सन्देह करने लगी। सनावद बारगाँव आदि के समीप जनता ने भी आपको सन्दिग्ध दृष्टि से देखना शुरु किया। अतएव मुनिश्री को स्थान और आहार मिलने मे भी कठिनाई होने लगी। मगर मुनिश्री बिना किसी कष्ट की परवाह किये आगे ही बढ़ते चले। वे अपने निश्चय पर अटल रहे। विहार जारी रहा। आप जहाँ जाते वहाँ पुलिस कर्मचारी आपका नाम ठिकाना पूछते। मुनिश्री के पास बताने को नाम तो था मगर ठिकाना वे त्याग चुके थे। शायद ऐसा ही कुछ उत्तर देते होंगे—'ठिकाना पूछते हो, कया ठिकाना बेठिकानो का। अर्थात तुम मेरा ठिकाना पूछते हो परन्तु हम तो बेठिकाना अर्थात् अनगार हैं—हमारा कोई ठिकाना ही नहीं है।

सन्त समागम

फैजपुर के आस पास तारनपन्थी दिगम्बर जैनो पर आपका बहुत प्रभाव पड़ा। फैजपुर से विहार करके मुनिश्री भुसावल पधारे। वहाँ श्री धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री चम्पालालजी महाराज का जिन्होंने बाद मे उस सम्प्रदाय के आचार्यपद को सुशोभित किया, समागम हुआ। आप एक प्रतिष्ठित साधु थे। दक्षिण में आपका बहुत प्रभाव था। दोनों मुनिश्री आपस मे मिलकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

पत्रकार की अप्रामाणिकता

भारतीय व्यापारी जैसे अप्रामाणिकता के अपराधी बतलाये जाते हैं, उसी प्रकार भारतीय पत्रकार भी इस अपराध से बरी नहीं किये जा सकते। वास्तव मे समाचार पत्रो का स्थान बहुत ऊँचा है। देश और समाज की उन्नति मे वे सबसे ज्यादा सहायक हो सकते हैं। जो पत्र जनहित की भावना से या किसी ऊँचे उद्देश्य से प्रेरित होकर जन्म लेते और चलते है उनका स्थान समाज में बड़ा उच्च है। परन्तु खेद है कि अधिकांश भारतीय समाचारपत्रो के संचालक अपने उत्तरदायित्व का ठीक तरह निर्वाह न करके अपने पत्र को स्वार्थ साधन का उपाय बना लेते हैं। राष्ट्रीय जागरण के इस युग मे, जब पत्रकार-कला का पर्याप्त विकास हो चुका है, पत्रो की यह दशा है तो आज से लगभग पैंतीस वर्ष पहले का कहना ही क्या है? पंडित जवाहरलाल नेहरू कहते हैं—'देश मे जिस वक्त जिन्दगी और मौत की लड़ाई चल रही थी उस समय हमारे समाचार पत्र सरकारी विज्ञापन छापने मे लगे थे। इस युद्ध में सब से ज्यादा मुनाफा या तो चोर बाजार वालों ने

नमाया या फिर उनसे उतर कर अखवार वालो ने। 'हमार पत्रो का स्तर (Standard) विलायती पत्रा की तुलना म चौथे पाँचवें ग्रेड का है।' श्रीयुत विश्वभरनाथ विश्ववाणी सपादक ठीक ही कहते हैं—'आज सती पत्रकारी कुनटा व्यावसायिकता के पजे म फँसी छटपटा रही है। आज पत्रकारी के क्षेत्र म लोग रोजी की तलाश मे आते है सेवा की भावना से नही। देश की आजादी नही, कुटुम्ब का पालन करना उनका लक्ष्य होता है। श्री रामावतार का यह कथन भी गलत नही है कि—'अधिकाश देशा के समाचारपत्रो पर कुछ मुट्ठी भर लोगा का ही अधिकार होता है जो अपने सकुचित स्वाथ के लिए उनका इस्तेमाल करत हैं।

जब मुट्ठी भर लोगा के हाथ मे रहने वाले समाचारपत्रा का यह हाल है तो आज से पैंतीस वर्ष पहले के, एक ही व्यक्ति की मालिकी के समाचार पत्र का क्या हाल होना चाहिए? पाठक स्वय विचार करें। इस प्रकार के समाचारपत्र चाँदी के टुकडो पर नाचते हैं। चादी के टुकडे न पाकर वे चाहे जिस पर कीचड उछाल सकते हैं और पाकेट गम होते ही उसकी प्रशसा के पुल भी बाँधते देर नही करते। वास्तव मे समाचारपत्रा की यह दशा बडी ही दयनीय है।

कालेज के विद्यार्थियो के मवध मे इन्दौर सघ के निणय के पश्चात् भी और मुनिश्री पर लगाय गये आरोप असत्य प्रमाणित हो जाने पर भी जैन समाचार नामक समाचार पत्र ने किसी आन्तरिक उद्देश्य से फिर मुनिश्री के विरुद्ध एक लेख प्रकाशित किया।

पुन प्रतिवाद

'जैन समाचार' का यह लेख देखकर मुनिश्री चम्पालालजी महाराज और उनके साथी मुनिश्री केसरीमलजी महाराज का वडा खेद हुआ। आखिर उन्होने इस आरोप को सदा के लिए जड उखाड फेंकने के उद्देश्य से भुसावल में एक बृहत सभा का आयोजन किया। उसम कॉलेज के अधिकारियों को, जन हितेच्छु' व जन समाचार के सम्पादक श्री वाडीलालशाह का और कालेज के भागे हुए तीना विद्यार्थिया को भी बुलाया गया था। वाडीलाल भाई उपस्थित न हुए और न कालेज के मत्री ही स्वय आ सक। तीना विद्यार्थियो ने सारा वृत्तान्त सबके समक्ष कह सुनाया।[1] अन्तत हुआ वही जो होना उचित था। मुनिश्री फिर निर्दोष घोषित किये गये। सबद्ध व्यक्तिया को भविष्य म निराधार बातें न फलाने की चेतावनी दे दी गई।

इतना सब हो जाने के पश्चात् भी वाडी भाई चुप न रहे। उन्होने फिर भी मुनिश्री के विरुद्ध लेख छाप दिया। तब अ० भा० श्वेताम्बर स्थानकवासी जन कान्फ्रेंस ने हैदराबाद में घटना की जाच की और मुनिश्री को फिर निर्दोष घोषित किया।

कुछ दिन भुसावल में विराजकर मुनिश्री ने अहमदनगर की ओर विहार किया। दक्षिण म पदापण करत ही आपकी उस प्रान्त मे प्रसिद्धि फैलने लगी।

बीसवा चातुर्मास

वि० स० १९६८ का चातुर्मास मुनिश्री ने अहमदनगर म व्यतीत किया। चातुमास आरभ होन के कुछ ही दिना बाद अहमदनगर म प्लेग फैल गया। अतएव मुनिश्री ने नगर के बाहर के एक बगले में चातुर्मास पूण किया। यहाँ से आहार पानी लाने के लिए मुनिया को कभी कभी डेढ कोस की दूरी तक जाना पडता था।

मुनिश्री का भाषण सुनन के लिए हजारा की भीड इकट्ठी हो जाती थी। मुनिश्री मोती लालजी महाराज तथा मुनिश्री राधालालजी महाराज ने ४९ ४९ दिन का तप किया। पूर के दिन करीब दस हजार रुपया का जीवदया के निमित्त दान किया गया।

---

1 भुसावल का पचनामा छप गया है।

वाडीलाल भाई की क्षमायाचना

श्रीयुत वाडीलाल शाह चातुर्मास से पहले यहाँ मुनिश्री की सेवा में बालमुकुन्दजी, मदनमलजी मूथा सतारा वाले के साथ उपस्थित हुए। मुनिश्री ने व्याख्यान में फरमाया—दुनिया में देखादेखी बहुत चलती है। किसी न कोई बात गढ़कर कह दी और दूसरे लोग ग्रामोफोन की तरह बिना सोचे समझे उसे दोहराने लगते हैं। ग्रामोफोन अपनी ओर से कुछ मिलाता नहीं मगर यह मानव ग्रामोफोन अपनी ओर से नमक मिर्च मिलाकर उस बात को अतिरंजित कर डालते हैं। बहुत कम व्यक्ति सचाई का पालन करते हैं। बुद्धिमान पुरुष पहले सत्यासत्य का निर्णय करता है और फिर कोई बात मुख से बाहर निकालता है। वाडीभाई एक पत्रकार हैं। पत्रकार संसार का पथ प्रदर्शक होता है। उस पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। उसे तो हर्गिज असत्य को आश्रय नहीं देना चाहिए। मुझे वाड़ीलाल भाई के प्रति तनिक भी द्वेष नहीं है। मैं चाहता हूँ कि वाड़ीलाल भाई भविष्य में सत्य के पथ प्रदर्शक बनें और उनकी आत्मा का कल्याण हो।

इसी सिलसिले में मुनिश्री ने एक पीर का दृष्टान्त फरमाया जो रोचक होने के साथ शिक्षाप्रद भी है। उसका सारांश यह था—

किसी गाँव में कुछ मुल्लाओं ने मिलकर एक कब्र को पीर साहब घोषित कर दिया। उन्होंने लोगों में फैला दिया—ये जिंदा पीर साहब हैं। रोज रात को अपनी करामतें दिखलाते हैं। कभी कोई कहता—अभी हमने देखा है अपनी आँखों से, आज पीर साहब घोड़े पर सवार होकर जा रहे थे। दूसरे दिन फिर कोई नई बात ईजाद करता—'आज रात मैंने पीर साहब को गाना गाते सुना था।' इस प्रकार नित्य नई बातें सुनते सुनते लोगों का विश्वास जमने लगा। पीर साहब की मनौती शुरू हो गई और मुल्लाओं को आमदनी होने लगी। लोग बड़ी भक्ति से पीर साहब को तरह तरह की चीजें भेंट करते और सुबह वहाँ उन चीजों को न पाकर समझते—पीर साहब ने मंजूर करली। बात फैलते फैलते बादशाह के दरबार तक जा पहुँची। मुल्ला वहाँ भी पीर साहब की तारीफ फैला आये। बादशाह ने वजीर से कहा—चलो। एक दिन हम लोग भी पीर साहब के दर्शन करें।

वजीर चतुर था। वह मुल्ला की चालाकी समझता था। मगर या कहने से बादशाह को यकीन नहीं आएगा, यह उसे बखूबी मालूम था। अतः उसने एक युक्ति सोची। वजीर का एक सात आठ वर्ष का लड़का था। वजीर ने उसके पैर के नाप के बहुत खूबसूरत और कीमती जूते तैयार करवाए। मखमल के ऊपर बढ़िया सलमा सितारे का काम किया हुआ था। बीच बीच में असली हीरा पन्ना जवाहरात वगैरह जड़वाये गये थे। कहते हैं—एक जूते की कीमत सवा लाख रुपया थी।

एक दिन पीर वाली कब्र पर मेला लगा। सैकड़ों औरतें और मर्द चढ़ावे के लिए पहुँचे। उसी दिन बादशाह भी वजीर के साथ वहाँ गया। रात होने पर वापस लौटते समय वजीर ने अपने लड़के का एक जूता कब्र के पास गिरा दिया।

सुबह होते ही पीर साहब की धूम गई। इतनी बेशकीमती जूती भला और किसकी हो सकती है? एक ने कहा—साहब, रात को खुद पीर साहब तशरीफ लाये थे। दूसरे ने ताईद करते हुए कहा—'बिलकुल सही फरमाते हैं आप। कपड़ा हिलता मैंने भी देखा था।' तब तीसरे जनाब बोले—अभी जूते उतारते तो मैंने भी देखा है। और सबूत इसका यह है कि वे अपनी एक जूती छोड़ गये हैं।

मुल्ला को जूती पाकर इतनी खुशी हुई जितनी शायद पीरसाहब को पाकर भी न होती। जूती लेकर वे बादशाह के दरबार में हाजिर हुए। बादशाह को अब पूरा यकीन हो गया कि जूती

पीर साहब की ही है। उसने और उनके दरबारियो ने बारी बारी से अपने अपने सिर पर जूती रखी। पीर साहब की तारीफ हो रही थी कि वजीर वहाँ आ पहुँचे।

बादशाह ने बडी खुशी के साथ जूती की बात वजीर को सुनाई। वजीर ने धीरे से मुसकरा कर कहा—हुजूर की मर्जी, जो चाहे समझे, मगर यह जूती मेरे लडके की है। सबूत मे उसने दूसरी जूती पेश करदी। बादशाह अपनी बेवकूफी पर शर्मिन्दा हुआ और मुल्लो ने अपना रास्ता नापा।

यह एक दृष्टांत है। इसका अर्थ इतना ही है कि निराधार और असत्य बातें बढ बढ कर फलती हैं। मुल्लो के प्रपंच के कारण बादशाह को पश्चात्ताप करना पडा और जूती सिर पर उठानी पडी। इसी प्रकार स्वार्थी लोगो के प्रपंच मे भले आदमी फँस जाते हैं और फिर उन्हे पश्चात्ताप करना पडता है। यह व्याख्यान सुनकर श्री बाडीलाल भाई ने अपने लेखो के लिए मुनिश्री से क्षमा याचना की। संघ मे हर्ष छा गया।

इस चातुर्मास मे मुनिश्री ने मरहठी भाषा का अभ्यास काफी बढा लिया था। संत तुकाराम के बहुत से अभंग तो आपको कंठस्थ हो गये थे। आपका मराठी भाषा का ज्ञान अल्पकाल मे ही काफी अच्छा हो गया।

धर्म बोध

स्था० जैन कान्फ्रेंस के वर्तमान अध्यक्ष प्रसिद्ध समाज नेता और देशसेवक श्रीकुन्दनमलजी फिरोदिया और श्री माणिकचन्दजी मूथा उन्हीं दिनो फर्ग्यूसन कॉलेज पूना से वकालत पास करके आये थे। यह दोनों सज्जन जैन कुल मे ही उत्पन्न हुये थे मगर अंगरेजी शिक्षा का रंग उन पर गहरा सा चढ गया था। उनके विचार मे जैन धर्म अकिंचन और सारहीन था वकालत पास करके वे अहमदनगर आये और मुनिश्री के सम्पर्क मे आये। मुनिश्री से वार्त्तालाप करके वे आपकी ओर आकर्षित हो गये। मुनिश्री ने उन्हे सूत्रकृतांग सूत्र का प्रथम अध्ययन सटीक सुनाना आरम्भ किया। बीच बीच मे शंका समाधान तो चलता ही था। मुनिश्री इतने सुन्दर ढंग से समाधान करते थे कि श्रोतागण चकित और आनन्दित हो जाते थे। इस कारण दोनों नवयुवक मध्याह्न में और दूसरे समय भी आने लगे। इतने सम्पर्क के बाद जैनधर्म के विषय मे उनकी काफी अच्छी जानकारी हो गई, मुनिश्री ने उनके चित्त में धर्मश्रद्धा ऐसी दृढ कर दी थी कि वे धर्मश्रद्धालु और समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता भी बन सके। मुनिश्री ने फिरोदियाजी जैसे कई रत्नो को खोने से बचाया है।

कुन्दनमलजी फिरोदिया के साथ अहमदनगर के प्रसिद्ध वकील बाला साहब भी मुनिश्री से वार्त्तालाप करने आया करते थे। धर्म संबंधी उनकी शंकाएँ बडी गंभीर होती थी मगर मुनिश्री का समाधान उनसे भी अधिक गंभीर और तात्त्विक होता था। वकील साहब मुनिश्री की मार्मिक विवेचना सुनकर बडे आल्हादित होते थे।

मुनिश्री की संगति का बाला साहब पर स्थायी प्रभाव पडा। आप सिर्फ तंतीस वर्ष की आयु मे शरीर छोड गये। जीवन के अन्तिम समय में आपने अपनी पत्नी के लिए उनकी राय से सिर्फ पच्चीस रुपये मासिक खर्च के लिए नियत किये और अपनी दो तीन लाख की सम्पत्ति अनाथ रक्षा, ज्ञान प्रचार आदि शुभ कार्यों के लिए दान कर गये। आपने पत्नी से कहा था—तुम्हारी उम्र अभी अधिक नही है। पास मे सम्पत्ति होगी तो वह अनर्थजनक हो सकती है। अतः मैं अपनी उपार्जित सम्पत्ति अपने सामने ही दान कर देना चाहता हूँ।

इस प्रकार साधारण जनता में और विद्वान वर्ग मे धर्म के प्रति प्रीति जगा कर चातुर्मास समाप्त होते ही मुनिश्री ने विहार कर दिया और घोडनदी तथा मंछर होते हुए आप महाराज शिवाजी की जन्मभूमि जुन्नेर पधारे।

संस्कृत-शिक्षा

स्थानकवासी सम्प्रदाय में उस समय तक संस्कृत भाषा का पठनपाठन बहुत कम होता था। व्याकरण, साहित्य आदि का अध्ययन करके ठोस पाण्डित्य प्राप्त करने की ओर किसी की रुचि नहीं थी। यही नहीं, कई पुराने विचारों के लोग तो संस्कृत भाषा के पठन पाठन का विरोध भी करते थे। मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को यह अच्छा न लगा। उनकी दृष्टि में मौलिकता थी। रूढ़ संस्कारों के नीचे दबा रहना उनकी प्रकृति के विरुद्ध था। संयम की मर्यादाओं का वे कट्टरता के साथ पालन करते थे। मगर निराधार कुरूढ़ियों के प्रति उनके हृदय में कोई आदर न था। अपनी इसी दृष्टि के कारण उन्होंने नवयुग की सृष्टि की और जनता का विवेक जागृत करके उसे प्रकाश प्रदान किया है।

मुनिश्री स्थानकवासी सम्प्रदाय में समर्थ विद्वान् देखना चाहते थे। अतएव सामाजिक विरोध होते हुए भी आपने अपने शिष्य मुनिश्री घासीलालजी महाराज और मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज को संस्कृत व्याकरण पढ़ाने का निश्चय किया।

वैतनिक पण्डित

संस्कृत पढ़ाने का निश्चय कर लेने पर एक कठिनाई सामने आई। उस समय स्थानकवासी समाज में कोई साधु या श्रावक ऐसा नजर न आया जो इन मुनियों को नियमित रूप से पढ़ा सके। वेतन देकर पण्डित नियुक्त करने में बहुत लोगों को आपत्ति थी। उनका ख्याल था—'अपढ़ रह जाना अच्छा है मगर वेतन देकर गृहस्थ विद्वान् से पढ़ना अच्छा नहीं है।' मुनिश्री अपने भाषणों में इस विषय पर भी प्रकाश फेंका करते थे।

एक बार अहमदनगर के कुछ प्रधान श्रावकों ने मुनिश्री के सामने यही प्रश्न रक्खा था। उन्होंने पूछा—'त्यागियों को गृहस्थों से पढ़ना चाहिए या नहीं? और साधु के निमित्त वैतनिक पण्डित रखने से मुनियों को दोष लगता है या नहीं?

मुनिश्री यह मानते थे कि जो व्यक्ति साधु के आचार को पूर्णरूप से भली भाँति नहीं जानता वह उसका समीचीन रूप से पालन नहीं कर सकता। अपने आचार को भली भाँति समझने वाला ही आचार का पालन कर सकता है। ज्ञान के अभाव में साधुता की शोभा भी नहीं है। समाज के उत्थान के लिए भी ज्ञान की आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त जयतारण आदि में शास्त्रार्थों के समय वे संस्कृत ज्ञान का महत्त्व भली भाँति समझ चुके थे। उस समय मुनिश्री को संस्कृत भाषा का ज्ञान था इसी कारण उन्हें उतनी शानदार विजय मिल सकी थी। संस्कृत भाषा के ज्ञान के अभाव में विद्वानों के समक्ष कैसी हास्यास्पद स्थिति हो जाती है, यह बात वे तेरहपंथी साधु फौजमलजी की दशा देखकर अच्छी तरह समझ चुके थे। अपने धर्म की रक्षा करने के लिए प्रतिवादियों का मुकाबिला करने के लिए संस्कृतभाषा की जानकारी अनिवार्य है।

श्रावकों के प्रश्न का उत्तर मुनिश्री ने व्याख्यान में देना ही उचित समझा। दूसरे दिन आपने व्याख्यान में फरमाया—किसी सभ्य और समझदार गृहस्थ के एक पुत्र था। पिता ने मरते समय उससे कहा—बेटा तुम्हारे हित के लिए मैं जो कुछ कर सकता था कर चुका। अब मैं सदा के लिए विदा होता हूँ। अंतिम समय में एक शिक्षा और दिए जाता हूँ। वह यह है—तुम किसी से ऋण मत लेना और न भूखे ही रहना।' इतना कहने के बाद पिता की मृत्यु हो गई।

महाकवि कालीदास ने कहा है—'नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमि क्रमेण।' मनुष्य की दशा सदैव बदलती रहती है। स्थिति कभी अच्छी और कभी खराब हो जाती है। बड़े बड़े सेठ

पति क्षणभर म कगाल हो जाते हैं और कगाला का लखपति होत देर नही लगती। उस लडके की स्थिति भी धीरे धीरे गिरती गई। आखिर एक दिन वह आ पहुँचा कि ऋण लिये बिना कोई चारा न रहा। मगर उसे अपने पिता के अतिम शब्द याद आ गये कि उन्होने ऋण लने का निषेध किया था। वह एक क्षण के लिए सहम गया। पिताजी का अतिम आदेश वह कैसे भग करे ? परन्तु ऋण न लेने का नतीजा प्राणो का विसर्जन करना था। अगर वह ऋण नही लेता तो भूखा रहना होगा और प्राण त्यागने होंगे। मगर यह भी वह कैसे मजूर कर सकता है। पिता न भूखे न मरने का भी तो आदेश दिया है। विचित्र सकट है। एक ओर कुआ दूसरी ओर खाई। इधर भी पिता की आज्ञा का भग और उधर भी। एक बार लडका किंकर्त्तव्य विमूढ हो गया।

इस प्रकार की उलझन के समय अंतर्नाद सहायक होता है। शान्त चित्त स विचार करने पर आत्मा ऐसी सुन्दर सलाह देती है कि दूसरा कोई शायद ही द सके। उस लडके ने चित्त स्वस्थ करके विचार किया—इन परस्पर विरोधी प्रतीत होन वाली दोनो आज्ञाओ का उद्देश्य सुखी जीवन व्यतीत करना है। ऋण लेने से जीवन का सुख नष्ट हो जाता है और भूखा मरने से जीवन ही नष्ट हो जाता है तो जीवन के सुख की बात दूर ही रही। अतएव ऐसी परिस्थिति म थोडा ऋण लेकर जीवन कायम रखना ही श्रेयस्कर है। उसके बाद कठिन परिश्रम करके ऋण का उतार दूँगा और तब पिताजी क आदेश का भली भाति पालन हो सकेगा। यह सोचकर उसन थोडा ऋण लेकर आत्मघात का भयकर अनर्थ बचा लिया और थोडे दिनो म ऋण भी चुका दिया।

भाइयो ! इस लडके के मामले का फैसला आपके हाथ म दे दिया जाय तो आप क्या फैसला करेंगे ? क्या आप उस लडके का भूखा मर जाना पसद करेंगे ? क्या आप उसके निर्णय को अनुचित कह सकते हैं ? अगर आप थोडा सा ही विचार करेंगे तो मालूम होगा कि उस लडके ने उचित ही निर्णय किया।

यही बात गृहस्थ स साधुओ के अध्ययन के विषय मे समझनी चाहिए। यह ठीक है कि साधु को गृहस्थ स कोई काम नही लेना चाहिए मगर क्या आपके धर्म गुरुओ को मूर्ख ही बना रहना चाहिए ? क्या उन्हें धर्म पर होने वाले मिथ्या आरोपो का निवारण करने म समर्थ नहीं बनना चाहिए ? शास्त्रो म ज्ञान की महिमा का बखान निष्कारण नही किया गया है। दशवकालिक सूत्र म कहा है—

अन्नाणी किं काही किंवा नाही सेयपावक।

अर्थात्—अज्ञानी बेचारा क्या कर सकेगा ? वह भले बुरे का—कल्याण और अकल्याण को धर्म और अधर्म को क्या खाक समझेगा ?

अध्ययन और अध्यापन कोई सावद्य कार्य नही है। मर्यादा म रहते हुए अगर गृहस्थ से अध्ययन किया जाय तो मूर्ख रहने की अपेक्षा बहुत कम दोष है। फिर प्रायश्चित द्वारा शुद्धि भी की जा सकती है। भगवान् ने गृहस्थ से काम लेने का निषेध किया है तो अल्पज्ञ रहने का भी निषेध किया है। मगर जैसे भूखो मर जाने की अपेक्षा थोडा ऋण लेकर जीवन कायम रखना लडके का कर्त्तव्य था उसी प्रकार विद्वान् होना और यथोचित प्रायश्चित लेकर शुद्धि कर लेना साधुओ का कर्त्तव्य है। आप स्मरण रखें—नवीन युग, जो हमारे आपके सामने आया है उसकी विशेषताओ पर ध्यान दिये बिना धर्म और समाज की रक्षा होना कठिन है धर्म और समाज की रक्षा के लिए अज्ञान का निवारण करना सर्वप्रथम आवश्यक है।

इस भाषण से बहुत से लोगो को संतोष हुआ। मुनिश्री तो अपने दोनो शिष्यो को पढाने का निश्चय कर ही चुके थे। तदनुसार पढाई चल भी रही थी। दोनो मुनि परिश्रम के साथ अभ्यास करने लगे।

इक्कीसवां चातुर्मास

जुन्नेर से विहार करके मुनिश्री अनेक स्थानों में विचरे। जगह जगह धर्म प्रचार करते हुए चातुर्मास समीप आने पर फिर जुन्नेर पधार गए। संवत् १९६९ का चातुर्मास आपने जुन्नेर में ही किया।

जुन्नेर में स्थानकवासी साधुओं का यह पहला चातुर्मास था। वहां चातुर्मास करके आपने एक नया क्षेत्र खोल दिया।

जुन्नेर के इलाके में श्रावकों के दो दल हो रहे थे। मुनिश्री के पधारने से दलबंदी मिट गई और एकता तथा प्रेम स्थापित हो गया।

आपके लिए यह क्षेत्र एकदम नूतन था फिर भी सैंकड़ों की संख्या में श्रोता एकत्र होते थे। बहुत से राजकर्मचारी भी लाभ उठाते थे। वहां के तहसीलदार तो आपके परम भक्त हो गये थे।

इस चातुर्मास में मुनि श्रीमोतीलालजी महाराज ने ३३ दिन का उपवास किया। पूर के दिन जीवदया तथा दूसरे धार्मिक कार्य हुए।

इस चातुर्मास में मुनिश्री ने स्वयं भी संस्कृत भाषा का विशेष अभ्यास किया।

जुन्नेर का चातुर्मास पूर्ण करके मुनिश्री मंचर होते हुए सेड़ पधारे। यहां से चींचवड़ आदि स्थानों को पवित्र करते हुए आप पूना पधार गए। पूना दक्षिण का प्रसिद्ध विद्या केन्द्र है। आपका व्याख्यान सुनने के लिए पूना में बहुत बड़ी संख्या एकत्र होने लगी। जनता पर भी आपके उपदेश का ऐसा असर पड़ा कि वे भी चातुर्मास की प्रार्थना करने लगे। उन्होंने आग्रह करते हुए कहा—'आप इस वर्ष पूना को ही पुनीत बनाइए। दर्शनार्थ आने वाले भाइयों की समस्त व्यवस्था का भार हम उठाएँगे।' मगर पूना बहुत बड़ा शहर है और वहां साधुओं को कई प्रकार की असुविधाएँ थीं। अतएव पूना निवासियों को निराश होना पड़ा।

पूना से विहार करके विचरते हुए आप चिंचवड़ पधारे। यहां श्रीयुत बख्तावरमलजी पोरवाड़ ने बड़े वैराग्य से फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को दीक्षा अंगीकार की। उस समय आपकी आयु २४ वर्ष की थी। आप कष्टसहिष्णु और संयमशील हैं। जीवन सेवामय है। अंतिम दिनों तक आपने पूज्यश्री की जो अनवरत सेवा की है वह सभी के लिए आदर्श है।

चिंचवड़ से विहार करके मुनिश्री मंचर, नारायणगांव, बोरी आदि में धर्म जागृति करते हुए घोड़नदी पधारे।

बाईसवां चातुर्मास

मुनिश्री ने संवत् १९७० का चातुर्मास घोड़नदी में किया। आप नौ ठाणों से घोड़नदी में विराजमान हुए। यहां भी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने लम्बी तपस्या की। पूर के दिन जीवदया के निमित्त बहुत सा दान श्रावकों ने दिया।

नजर का भ्रम

चौमासे में एक बार मुनिश्री को बुखार आ गया। यह पहले ही कहा जा चुका है कि मुनिश्री का शरीर गौरवर्ण और सुन्दर था। स्त्रियां स्वभाव से भोली होती हैं। कहने लगी—'महाराज साहब! आपको नजर लग गई है। आप का शरीर देखकर किसी औरत ने नजर लगा दी है। बात बिल्कुल सही है। आपको विश्वास न हो तो गिरधारीलालजी से पूछ लीजिए।'

गिरधारीलालजी नामक सज्जन पास ही बैठे थे। उनके पास एक मोहरा था। जब किसी को ज्वर हो जाता या ऐसी ही कोई बीमारी होती तो औरतें उस गिरधारीलालजी के पास आती। गिरधारीलालजी अपने मोहर को पानी में रखते और उस पर अंगूठा रखकर उसे उठाते।

अगर मोहरा अगूठे के साथ उठ जाता तो कहते—इसे नजर लग गई है। देखो, मोहरा उठ रहा है। स्त्रियो को मोहरा उठने ही विश्वास हो जाता था।

स्त्रिया ने उसी समय गिरधारीलालजी को मोहरा लाने के लिए कहा। मोहरा वे ले आये। उठाने की क्रिया की तो मोहरा ऊपर उठ आया। सभी स्त्रियो को विश्वास हो गया कि महाराज को नजर लग गई। मगर महाराज चकित थे। उन्हें यह तो विश्वास था कि नजर नामक कोई वस्तु नही होती, मगर मोहरे के उठने की बात उनकी समझ मे न आई।

मुनिश्री मोहरा उठने का मर्म समझना चाहते थे। जब सब लोग चले गए तो आपने मुनिश्री गणशीलालजी म० से मोहरा सरीखा एक पत्थर मगवाया। उसे पानी म रखकर अगूठे से दबाया। हाथ के साथ ही साथ पत्थर भी ऊँचा उठ आया।

मुनिश्री ने दूसरे दिन वाइया को भलीभाँति समझाया और अपने हाथ से मोहरा उठाकर उनका भ्रम दूर कर दिया। आपने वाइया को समझाया—'भोली बहिनो! पानी मे रखकर इस प्रकार दबाने से मोहरा अपने आप उठ आता है। इसम मत्र तत्र या और कोई नजर आदि करा मात नही है। आप अकारण ही झूठी वाता पर विश्वास करने लगती हैं। वास्तव में नजर नाम की कोई चीज ही नही है। यह तो कोरा वहम है। इस वहम मे पडकर तुम अपनी धर्मश्रद्धा से च्युत न होओ। अपने किये कर्मों के सिवाय कोई कुछ नही बिगाड सकता। धम पर श्रद्धा दृढ रखो। फिर देवी देवता जादू टोना आदि किसी से डरने की आवश्यकता नहीं।'

मुनिश्री के व्याख्यान स बहुत स भाइयो और बहुत सी बाइयो का भ्रम भग हो गया।

मुनिश्री के इस उपदेश का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। गुलाबचदजी नामक एक सज्जन की पत्नी को भूत आता था। वे एक दिन एक मोटा और मजबूत सा डडा लेकर अपनी पत्नी के सामने जमकर बैठ गय। कहने लगे—'आज भूत आया और मैंने इस डडे से उसका स्वागत किया! चाहे कुछ भी हो तुम्हारी खोपडी फूट जाय तो फूट जाय मगर मैं भूत को बिना मारे नहीं छोड़ूँगा। कहने की आवश्यकता नही कि डडे के डर से भूत भाग गया और फिर कभी उनकी पत्नी की ओर उसने नही झाका।

लासणगाँव के एक भाई चतुभु जजी थे। उन्होंने एक आप बीता किस्सा सुनाया। उनकी पत्नी को भी भूत आया करता था। जब उसे भूत आता तो एक नाइन बुलाई जाती थी। नाइन भूताविष्ट स्त्री को एक कमरे मे बंद कर लेती और हाथ म पत्थर लेकर धमकाती—'भाग, भाग नही तो तेरा सिर फाडती हूँ। सिर फूटने के भय से भूत थोडी ही देर म भाग जाता था। कुछ दिनो तक यही हाल रहा। एक दिन चतुभु जजी ने किवाड मे छेद करके सारी घटना देखी। पत्थर का महामत्र देखकर उन्होंने भी भूत भगाने की कला सीख ली। अब भूत आने पर नाइन की आवश्यकता नहीं रही। चतुभु जजी स्वयं उक्त विधि से भूत भगाने लगे। कुछ दिनो बाद भूत ने पिंड छोड दिया।

इस प्रकार की अनेक घटनाएँ मनोभावना से हुआ करती हैं। मुनिश्री के उपदेश से लोगों ने यह सत्य समझ लिया।

घोडनदी का चौमासा समाप्त करके मुनिश्री जामगाँव अहमदनगर, अम्बोरी सोनई आदि स्थानो को पवित्र करते हुए फिर आमगाँव पधारे।

तेईसवा चातुर्मास

वि० स० १९७१ का चातुर्मास जामगाँव म हुआ। यह स्थान अहमदनगर से आठ कोस दूर है। अध्ययन और धर्मध्यान की सुविधा देखकर मुनिश्री ने छोटे ग्राम मे चौमासा करना ही

(२) स्वामीजी श्री चतुर्भुजजी महाराज के परिवार में हाल वर्तमान में श्री कस्तूरचन्दजी महाराज बड़े हैं, आदि ठाने जो सन्त हैं उनकी साल संभाल की सुपुर्दगी स्वामीजी श्री मुन्नालालजी महाराज की रहे।

(३) स्वामीजी महाराज श्री राजमलजी महाराज के परिवार में श्री रतनचन्दजी महाराज की नेश्राय के सन्तों की सुपुर्दगी श्री देवीलालजी महाराज की रहे।

(४) पूज्यश्री चौथमलजी महाराज के सन्तों की सुपुर्दगी श्रीडालचन्दजी महाराज की रहे।

(५) स्वामीजी श्री राजमलजी महाराज के शिष्य श्री घासीरामजी महाराज के परिवार में मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज साल संभाल करें।

ऊपर प्रमाणे गण पांच की सुपुर्दगी अग्रेसरी मुनिराजों को हुई है सो अपने सन्तों की साल सम्भाल व उनका निभाव करते रहें।

यह ठहराव पूज्य महाराज श्री के सामने उनकी राय मुताबिक हुआ है, सो सब सभ मंजूर करके इस मुताबिक बर्ताव करें।

इस ठहराव के अनुसार मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज भी एक गण के अग्रणी चुने गए।

चौवीसवां चातुर्मास

जामगांव का चौमासा पूर्ण होने पर विभिन्न क्षेत्रों में विचरते और धर्मोपदेश करते हुए मुनिश्री अहमदनगर पधारे। श्रावकों के विशेष आग्रह के कारण संवत १९७२ का चौमासा आपने अहमदनगर में करना स्वीकार कर लिया।

मुनिश्री का व्याख्यान बहुत ही प्रभावक, व्यापक, और सार्वजनिक होता था। सभी श्रेणियों के लोग बड़े चाव से सुनने आते और प्रभावित होते थे।

प्रोफेसर राममूर्ति का आगमन

उसी अवसर पर कलियुगी भीम प्रोफेसर राममूर्ति अपनी सरकस कम्पनी के साथ अहमदनगर में आये। अहमदनगर में मुनिश्री के उपदेशों की प्रसिद्धि थी ही। प्रोफेसर राममूर्ति के कानों तक भी वह जा पहुँची। राममूर्ति ने व्याख्यान सुनने की इच्छा प्रदर्शित की।

दूसरे दिन नियत समय पर कम्पनी के कार्यकर्ताओं के साथ प्रोफेसर राममूर्ति उपदेश सुनने आये। मुनिश्री के व्याख्यान में यों ही भीड़ होती थी आज राममूर्ति के कारण बहुत अधिक भीड़ थी।

मुनिश्री ने उस दिन जीवदया और गौ रक्षा पर बड़ा ही ओजस्वी भाषण दिया। जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा। प्रोफेसर राममूर्ति ने देखा होगा वे अपने हृष्ट पुष्ट शरीर के करतब दिखलाकर जनता को जितना प्रभावित करते हैं, उससे कहीं ज्यादा मुनिश्री छोटी सी जिह्वा के जादू से जनसाधारण को प्रभावित कर देते हैं। मुनिश्री के प्रभावशाली प्रवचन को सुनकर वे चकित रह गये।

मुनिश्री, का भाषण समाप्त होने पर उन्होंने अपने संक्षिप्त भाषण में कहा—

'इस समय मैं क्या बोलूँ? सूर्य के निकल आने पर जिस प्रकार जुगनू का चमकना अनावश्यक है उसी प्रकार मुनिश्री के अमृततुल्य उपदेश के बाद मेरा कुछ बोलना भी अनावश्यक है। मैं न वक्ता हूँ न विद्वान् हूँ मैं तो एक कसरती पहलवान हूँ। किन्तु बड़े बड़े विद्वानों का व्याख्यान सुनने का मुझे बड़ा शौक है आज मुनिश्री का उपदेश सुनकर मेरे हृदय पर जो प्रभाव पड़ा है वह आज तक किसी के उपदेश से नहीं पड़ा यदि भारतवर्ष में ऐसे दस साधु भी हों तो निश्चित रूप से भारत का पुनरुत्थान हो जाय।

जब मैं अपने डेरे से चला था तो मुझे यह आशा नही थी कि मैं जिनका उपदेश सुनने जा रहा हू वे मुनिराज इतने बडे ज्ञानी और ऐसे सुन्दर उपदेशक हैं। आज मेरा हृदय एक अभूतपूर्व आनन्द अनुभव करके प्रफुल्लित हो रहा है। मैं जीवन भर इस सुन्दर उपदेश को न भूलूगा।

मैं क्षत्रिय हू किन्तु मासभोजी नहीं हू। जीवो पर दया करने का सदैव पक्षपाती हू। कुछ लोगो की धारणा है कि मनुष्य बिना मांस खाए शक्तिशाली हो ही नही सकता। यह उनका भ्रम है। मैं स्वय अन्न और वनस्पतियो के सहारे इतना बडा शरीर पाल रहा हू। कुछ लोगो की मेरे विषय म यह गलत धारणा है कि मेरे शरीर म कोई दैवी शक्ति है। मेरे शरीर मे कोई दवी शक्ति नही है। केवल ब्रह्मचय व्यायाम से मैंने यह शक्ति सम्पादित की है। आज भी यदि कोई छह से नौ वप तक का लडका मुझे मिल जाय तो मैं उसे बीस वप के परिश्रम से अपनी सारी शक्ति दे सकता हू। इसके लिए मैं जिम्मेवार हू कि वह बीस वप म ही राममूर्त्ति बन जायगा।'

इस प्रकार अहमदनगर मे अपूव यशोराशि उपाजन करके चौमासा समाप्त होने पर आपने घोडनदी की ओर विहार किया।

लोकमान्य तिलक से भेंट

घोडनदी पहुँचकर मुनिश्री राजणगाव आदि के क्षेत्रो मे विचरते हुए फिर अहमदनगर पधारे। उन्ही दिनो लोकमान्य बालगगाधर तिलक कारागार से मुक्त हुए थे। अहमदनगर मे आपका 'स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' विषय पर जोशीला भाषण हुआ। श्रीकुन्दनमलजी फिरोदिया, माणिकचदजी मूथा, सेठ किशनदासजी मूथा तथा श्रीचदनमलजी पीतलिया आदि के प्रयत्न से लोकमान्य भी मुनिश्री के निकट आये।

आपका सम्मिलन देखने के लिए करीब पाच हजार जनता वहा इकट्ठी हुई।

लोकमान्य तिलक न अपने प्रसिद्ध ग्रथ 'गीतारहस्य' मे सभी धर्मों की तुलनात्मक विवेचना की है। आपने यह ग्रथ कारागार में रहते हुए बडे ही कठोर परिश्रम से लिखा है। ग्रथ आपकी सूक्ष्म विवेचना शक्ति का, विशाल अध्ययन का और प्रखर पाण्डित्य का परिचायक है। इस ग्रथ मे बौद्ध धर्म का विवेचन करने के बाद जनधर्म को कुछ बातो म भिन्न बताकर उसी के सामान बतलाया है। गीतारहस्य' पढने पर पाठक के मन पर यह छाप पडती है कि जैनधम म भी बौद्धधर्म के समान केवल निवृत्ति प्रधान है उदाहरणाथ—गृहस्थ मोक्ष म नही जा सकता। पूणज्ञान प्राप्त करने के लिए ससार त्याग अनिवाय है। जीवन का एकमात्र लक्ष्य गाहस्थ्य जीवन को छोडकर मुनिवृत्ति अगीकार करना होना चाहिए। मुनियो के लिए भी मुख्य बात निवृत्ति ही निवत्ति है। विधेय या आचरणीय बातें बहुत कम अथवा नही हैं।

यद्यपि ऊपर ऊपर से देखने पर यह बातें ठीक मालूम होती हैं किन्तु गभीर विचार करने से मालूम होता है कि इनम वसा तथ्य नहीं है। तिलक स्वय उच्च कोटि के विद्वान थे। वे अपने ग्रथ को अधिक से अधिक प्रामाणिक बनाना चाहते थे। पक्षपात मे पडकर कोई मिथ्या बात लिखने की उनसे आशा नही की जा सकती। फिर भी जनधम के मूल मे जो दृष्टिकोण छिपा हुआ है तिलक उस तक पूरी तरह नही पहुँच पाये थे। मुनिश्री उन्हे वह दृष्टिकोण समझाना चाहते थे। अत मुनिश्री ने कहा—

जैनधम केवल निवृत्ति प्रधान नहीं है, इसकी प्रकृति अनासक्ति प्रधान है। जैनधम मे वेष या बाह्य आचार बाड की तरह सहायक माना है, धान्य का स्थान वह नहीं ले सकता। वेष मुक्ति का कारण नही है। कोई किसी भी वेष मे हो, अगर वह विषयो मे पूणरूप से अनासक्त हो चुका है तो मोक्ष प्राप्त कर सकता है। निवृत्ति माग का अभ्यास भी मुक्ति का कारण है, अत

स्वलिंग सिद्ध भी कहा है। अनासक्ति का अभ्यास करने के लिए साधु धर्म और निवृत्ति मार्ग है। गृहस्थ होकर भी जो महापुरुष आसक्ति से सर्वथा अतीत हो जाते हैं वे गृहस्थलिंग से भी मुक्ति के अधिकारी हो जाते हैं मुक्ति के लिए जैसे निवृत्ति आवश्यक है उसी प्रकार शुद्ध प्रवृत्ति भी आवश्यक है। साधु के अमुक प्रकार के वस्त्र पहने बिना भी मोक्ष हो सकता है। भरत महाराज चक्रवर्ती सम्राट थे। उन्होंने साधु के वस्त्र धारण नहीं किये थे फिर भी शीशमहल में खड़े खड़े उन्हें केवल ज्ञान हो गया था। माता मरुदेवी और इलायची पुत्र आदि के अनेक उदाहरण हैं, जो गृहस्थ लिंग से ही मुक्त हुए हैं। यह आन्तरिक भावना के प्रकर्ष का ही परिणाम था। जैनधर्म में मोक्ष जाने वाले जीवों के पन्द्रह भेद हैं। उनमें एक भेद अन्यलिंग सिद्ध भी है। अर्थात् पूर्ण अनासक्ति या निर्मोह अवस्था प्राप्त हो जाने पर किसी भी वेष में रहा हुआ व्यक्ति केवल ज्ञान प्राप्त कर सकता है। इससे स्पष्ट है कि जैनधर्म न तो सर्वथा निवृत्ति की हिमायत करता है और न मुक्ति के लिए अमुक प्रकार के बाह्य वेष की अनिवार्यता प्रकट करता है। अनासक्ति ही प्रधान है। अनासक्ति के अभाव में निवृत्ति अकर्मण्यता है। कामभोगों में मूर्छा गृद्धि या आसक्ति का होना संसार का कारण है और न होना मोक्ष का कारण है। अतएव जैनधर्म को सर्वथा निवृत्ति प्रधान बतलाने से उनका पूर्ण परिचय नहीं मिलता।

साधुओं के लिए त्याज्य बातें आवश्यक बतलाई गई हैं तो विधेय भी कम नहीं हैं। पांच महाव्रतों में त्याज्य और विधेय दोनों अंश हैं। किसी प्राणी की हिंसा न करना अहिंसा महाव्रत का त्याज्य अंश है किन्तु संसार के सभी प्राणियों पर मैत्रीभाव रखना, उनकी रक्षा करना, सभी के कल्याण की कामना करना उसका विधेय अंश है। असत्य भाषण न करना सत्यमहाव्रत का त्याज्य अंश है किन्तु हित मित और सत्य वचन द्वारा जनकल्याण करना उसका विधेय अंश है। शास्त्र पढ़ना, स्वाध्याय करना, सत्य की खोज के लिए युक्ति संगत वाद करना ये सभी सत्य महाव्रत के विधेय अंश हैं। बिना दी हुई वस्तु न लेना तीसरे महाव्रत का त्याज्य अंश है, किन्तु प्रत्येक वस्तु को ग्रहण करते समय उस के स्वामी की आज्ञा लेना विधेय अंश है। कामभोगों को छोड़ना चौथे महाव्रत का निवृत्ति प्रधान अंश है किन्तु आत्मरमण करना उसका प्रवृत्यंश है। किसी भी वस्तु में ममत्व न रखना पांचवें महाव्रत का निवृत्ति प्रधान अंश है और तप, परीषह जय आदि के द्वारा शरीर तथा धर्म आदि सभी वस्तुओं में अनासक्ति रखने का अभ्यास बढ़ाना प्रवृत्ति प्रधान अंश है। इसी प्रकार समिति गुप्ति आदि का पालन, पैदल विहार तथा दूसरी सभी बातें ऐसी हैं जिन में प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों रही हुई हैं। अशुभयोग से निवृत्ति और शुद्ध तथा शुभयोग में प्रवृत्ति जैन धर्म का सिद्धान्त है।

बौद्ध धर्म में ज्ञान सन्तान के सिवा कोई आत्मा नहीं है। मोक्ष अवस्था में वह भी नहीं रहता। इसलिए वहां अपने अस्तित्व को मिटा देना ही मुख्य ध्येय है। जैन धर्म में मुक्त होने पर भी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है।

आत्मा कर्मों के अधीन होकर संसार में भ्रमण करता है। जैन साधक आत्मा को नवीन कर्मबन्धन से बचाना चाहता है और बंधे हुए कर्मों को आत्मा से अलग करना चाहता है। इसके लिए दो मार्ग हैं। संवर और निर्जरा। पहला प्रवृत्ति रूप है और दूसरा निवृत्ति रूप। संवर का अर्थ है आत्मा को अशुभ प्रवृत्तियों से बचाना। निर्जरा का अर्थ है तप स्वाध्याय, ध्यान, समाधि आदि से बंधे हुए कर्मों को आत्मा से पृथक करना। इसके बारह भेद हैं। इस प्रकार जैन धर्म में प्रवृत्ति और निवृत्ति साथ साथ चलते हैं। मोक्ष अवस्था में भी जहां सभी दुःखों का अभाव है वहां अनन्त ज्ञान अनन्त दर्शन अनन्त सुख, अनन्त वीर्य आदि सद्भूत गुण विद्यमान हैं। जैनियों का आत्मा वैशेषिकों के समान निर्गुण नहीं है।

आशा है, जैनधर्म का दृष्टिकोण आपके ध्यान में आ गया होगा।

मुनिश्री की जन धम सम्बन्धी व्याख्या म तिलक को बहुत हर्ष हुआ। आपने 'गीता रहस्य' म अगली आवत्ति मे उचित सशोधन करना स्वीकार किया।

इसके पश्चात लोकमान्य ने खडे होकर एक सक्षिप्त भाषण देते हुए कहा—जनधम और वैदिकधम दोना प्राचीन हैं किन्तु अहिंसाधम का प्रणेता तो जनधम ही है। जैनधम ने अपनी प्रबलता के कारण वदिकधम पर कभी न मिटने वाली छाप लगा दी है। वदिकधम पर जैनधम विजयी हुआ है। यह बात तो मैं पहले से ही मानता आया हूँ।

जनधम के विषय मे मरा ज्ञान बहुत थोडा है जितना है वह भी जनदशन के मूल ग्रथों के आधार पर नही है। अग्रेज या दूसरे अजैन विद्वाना न जो थोडा बहुत लिखा है उसी को पढ कर मैंन इस मत का परिचय प्राप्त किया है। जनदशन के ग्रथ या तो प्राकृत भाषा मे हैं या सस्कृत मे। उनम ऐसा कोई ग्रथ मेरे देखने म नही आया जिसे पढकर जन मत का मौलिक ज्ञान प्राप्त हो सकता। जैन विद्वाना द्वारा आधुनिक शली पर लिखा हुआ तो एक भी ग्रथ नही है। समय की अल्पता के कारण सस्कृत प्राकृत के विशाल साहित्य का मथन करना मेरे लिए बहुत कठिन है। इसलिए अग्रेज या अजन विद्वानो द्वारा लिखे हुए फुटकर निबन्धो पर से ही अपने विचार घडन पडत हैं। मुनिश्री न आज जो बातें समझाई उनम मुझे बडा लाभ हुआ है। मैं जानता हूँ जैनदशन का गहराई के साथ अध्ययन करने वाला एक जन विद्वान जो सूक्ष्म बातें बतला सकता है दूसर विद्वान् उन पर नहीं पहुँच सकत। अहिंसा धम के लिए सारा ससार भगवान् महावीर व बुद्ध का ऋणी है।

मैं मुनिश्री का आभार मानता हूँ जिन्होंने भारतवष के एक महान् धम के विषय मे मेरी गलतफहमी दूर की और उसका शुद्ध स्वरूप समझाया।

आज के भारतीय साधु समाज म जन साधु त्याग तपस्या आदि सद्गुणो से सर्वोत्कृष्ट हैं। उनमे से एक मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज हैं जिनका मैं दशन कर रहा हूँ और जिनके व्याख्यान सुनने का आनन्द उठा चुका हूँ। आप सवश्रेष्ठ तथा सफल साधु हैं। मैं जहा अनेक उपास्य देवो का उपासक हूँ वहा सन्तो का भी अनन्य भक्त हूँ। अतएव अपने व्याख्यानों के प्रारम्भ मे सन्त तुकाराम के अभगो का मगलगान करता हूँ तथा उन्हें वेदवाक्य के समान मानता हूँ।

गुणा प्रियत्वेऽधिकृता न सस्तव ।

'अर्थात् मनुष्य अपने गुणो के कारण प्रिय होता है, परिचय से नहीं हमारे ये सत प्रिय हैं। मैं भारत की भलाई म ऐसे सत्पुरुषो से आशीर्वाद चाहता हूँ।'

मुनिश्री को लक्ष्य करके आपने कहा—मुनि महाराज आप सन्त हैं। सवस्व तथा सब कामनाओं का त्याग कर चुके हैं। फिर भी आपम जीवमात्र के कल्याण की कामना है। भारत की स्वतन्त्रता मे करोडो व्यक्तियों की भलाई सीमित है। जब भारत स्वतन्त्र होगा तभी जैनधम फूलेगा, फलेगा। यह आप जानत हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि आप सन्तो के आचार एव धार्मिक नियमो से बद्ध हैं। आपको प्राय राज्यविरोधी काय मे भाग लेन की आज्ञा नही है। अतएव केवल आशीर्वाद दीजिए। करने वाले हम कई करोड हैं।'

अन्त म मैं इतना और कहना उचित समझता हूँ 'कि जनधम तो आरंभ से अहिंसा का प्रबल समथक रहा ही है किन्तु वदिकधम भी जैनधम के प्रभाव से अहिंसा का आराधक बना है। अब अहिंसा के विषय में आप और हम एक मत हैं। अत हम सब को कधे मे कधा मिलाकर अपनी मातृभूमि के उद्धार म लग जाना चाहिए।

लोकमान्य चल गये और जैन विद्वानो को एक उपयोगी एव आवश्यक परामश भी दे गये। तिलक सरीखे विद्वान् जैनधम की कई मान्यताओ को गलत समझें इसमे उनका उतना दोष नही जितना दोष युगानुकूल शली से लिखे गये साहित्य के अभाव का है। ऐसे साहित्य के अभाव

मे अधिकांश जिज्ञासु जैनेतर विद्वान जैनधर्म की वास्तविकता से अपरिचित रह जाते हैं। लोकमान्य तिलक को यह कहे तीस वर्ष से अधिक हो गये। मगर यह कमी अब भी ज्यों की त्यों बनी हुई है।

उन्हीं दिनों तप्त मुद्रा लेने वाले काची के संता के साथ सनातनधर्मियों का शास्त्रार्थ होने वाला था। उसमें भारत धर्म महामण्डल के महोपदेशक मुरादाबाद निवासी विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसाद जी आये। आप अपने दल के साथ मुनिश्री के व्याख्यान में पहुँचे। उस दिन व्याख्यान का विषय था—

'न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।

अर्थात् संसार में कर्तृत्व और कार्यों का स्रष्टा ईश्वर नहीं है।

मुनिश्री ने गीता के इस वाक्य का वर्णन करते हुए कहा— भगवान् भले ही भक्त के वश मे हो, किन्तु वे सुख-दुःख के दाता नहीं है। अगर ऐसा हो तो सारी दुनियादारी का उत्तरदायित्व ईश्वर पर आ जाता है। जीवात्मा खिलौना बन जाता है।' इसके अतिरिक्त अन्य अनेक युक्तियों से मुनिश्री ने ईश्वर का अकर्तृत्व सिद्ध किया। पश्चात् आपने फरमाया—यदि विद्यावारिधिजी कुछ बोलना चाहें तो बोल सकते हैं। विद्यावारिधिजी कुछ न बोले।

मुनिश्री ने इस प्रकार विश्वविख्यात व्यक्तियों के हृदयों पर अपनी विशिष्टता, विद्वत्ता और तेजस्विता की छाप अंकित करके तथा धर्म की अपूर्व प्रभावना करके शेषकाल समाप्त होने पर अहमदनगर से विहार किया।

पच्चीसवां चातुर्मास

अहमदनगर से विहार करके स्थान स्थान पर विचरते हुए मुनिश्री घोड़नदी पधारे। वहीं वि० सं० १९७३ का चातुर्मास हुआ। चातुर्मास आरम्भ होने के कुछ ही दिनों बाद घोड़नदी और आसपास में प्लेग फैल गया। प्लेग के कारण आप पास के सिरूर नामक गांव मे पधार गये। कुछ ही दिन व्यतीत हुए कि वहां भी प्लेग आरंभ हो गया।

ऋषि सम्प्रदाय की कुछ सतियों का भी वहां चौमासा था। मुनिश्री ने उन्हें भी अन्यत्र विहार करने का परामर्श दिया। मगर उन्होंने विहार करने मे एक दिन का विलम्ब कर दिया। इसका परिणाम बहुत भयंकर हुआ। दो सतियां प्लेग से बीमार हो गई। उनकी बीमारी के कारण दूसरी सतियों को भी ठहरना आवश्यक हो गया। दो सतियां और बीमारी होगई। अन्त में दो सतियों का स्वर्गवास हो गया।

ऐसे समय अगर साधु साध्वी बीमारी वाले स्थान से विहार न करें तो श्रावकों को भी भक्तिवश वहीं ठहरना पड़ता है और उन्हें हानि उठानी पड़ती है। प्लेग जैसी बीमारी के समय जब गांव खाली हो जाता है तो साधुओं को भी विहार करना लाजिमी हो जाता है।

प्रश्नोत्तर समीक्षा की परीक्षा

सं० १९७२ में पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का चौमासा उदयपुर में था। न्यायविशारद, न्यायतीर्थ संवेगी मुनि श्री न्यायविजयजी का भी यहीं चौमासा था। इस समय तो न्यायविशारद जी साम्प्रदायिक संकीर्णता से बाहर से हैं और उनके विचारों मे काफी औदार्य आ गया है मगर उस समय वे नवयुवक ही थे और काशी से पढ़कर बहुत कुछ ताजा ही आये थे। उस समय उनमें साम्प्रदायिकता का अभिनिवेश पर्याप्त मात्रा में मौजूद था। वे अपने उपार्जित विपुल ज्ञान का पचा नहीं पाये थे। अतएव उन्होंने पूज्यश्री से विविध प्रकार के प्रश्न पूछना आरम्भ किया। पूज्यश्री शान्तस्वभावी थे। वे उनके प्रश्नों का उचित समाधान कर दिया करते थे। न्यायविशारदजी

को इतना ही बस न जान पडा। पूज्यश्री सागर की तरह गभीर थे। वहा उफान नहीं आया और उफान के बिना तूफान कसे मचता ? अतएव न्यायविशारदजी ने १०८ प्रश्नो की एक लम्बी चौडी पोथी सी तयार करके पूज्यश्री के पास भेज दी। पूज्यश्री को यह सब बखेडा पसद नहीं था। अपने तप सयम मे मग्न रहना उन्ह प्रिय था। पूज्यश्री ने उसका यथोचित उत्तर दे दिया मगर श्रावको ने वह प्रश्नावली मुनिश्री के पास भिजवादी। मुनिश्री ने पहले पहल प्रारभिक आठ प्रश्नों के उत्तर सस्कृत भाषा म श्लोकबद्ध तैयार करवाकर भेज दिये। न्यायविशारदजी को तो उस समय अपने ज्ञान का प्रदशन करना अभीष्ट था। जिज्ञासा या तत्त्वचर्चा के भाव से प्रश्न नहीं किये गय थे। अतएव उन्होंने 'प्रश्नोत्तर समीक्षा नामक एक पुस्तक प्रकाशित करवा दी। मुनिश्री न घामोडी म इस पुस्तक का खण्डन करते हुए 'समीक्षा की परीक्षा' नामक पुस्तक तयार की। वह पुस्तक उसी समय प्रकाशित हो गई। उसे देखने से आपकी प्रकृष्ट प्रतिभा का पता चलता है।

प्रलोभन ठुकरा दिया

घोडनदी और आसपास के ग्रामो म चौमासा पूण करके मुनिश्री गणिया गाव पधारे। उन दिनो आचाय पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने किसी अपराध के कारण जावरा वाले सता को सम्प्रदाय स पृथक कर दिया था। उन्होने अलग होते ही अपना अलग सगठन स्थापित करने का विचार किया। इसके लिए उन्ह एसे आचाय की आवश्यकता थी जो अपनी प्रतिभा प्रभाव और वाक्शक्ति के द्वारा नवीन सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा जमा सके। इसके उद्देश्य को पूण करने के लिए उनकी दृष्टि मुनिश्री जवाहरलालजी पर गई। ख्यालीलालजी उफ हरखचदजी नामक एक भाई मुनिश्री की सवा मे पहुँचे और इनसे आचार्य पदवी ग्रहण करने की प्राथना की।

साधारण साधु के लिए आचाय पदवी उतनी ही प्रलोभन की वस्तु है, जितना साधारण गृहस्थ के लिए राजसिंहासन। ससार त्याग देने पर भी इस पद का प्रलोभन अनेक साधुओ मे शेष रह जाता है। किन्तु मुनिश्री ने सयम को ही अपने जीवन म प्रधान समझा। सघ के सगठन और ऐक्य के लिये व सदैव प्रयत्नशील रहे। साधु सम्मेलन के समय उन्होंने जो योजना तैयार की थी उस देखन से उनके विचार स्पष्ट समझ मे आ सकते हैं। वे समस्त स्थानकवासी परम्परा के सम्प्रदायो को एकता के सूत्र मे बद्ध करने के इच्छुक थे। एक बार देहली मे अपन भाषण मे उन्होने साफ शब्दो मे घोषणा की थी —

'मेरी स्पष्ट सम्मति यह है कि जब तक समस्त उपसम्प्रदायो के साधु अपन पृथक् पृथक् शिष्य बनाना तथा पुस्तक आदि अपन अपने अधिकार म रखना छोडकर एक ही आचाय के अधीन न होंगे तथा अपन शिष्य और शास्त्र आदि पूण रूप स उन आचाय को न सौप देंगे तब तक सघ की कोई मर्यादा स्थिर रहना कठिन है। यह काय चाहे आज हो चाहे कल हो या बहुत समय बाद हो परन्तु जब तक ऐसा न हो जायगा तब तक सघ मे प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देने वाली खराबिया दूर न होगी।

मुझे अपनी ओर से यह बात प्रसिद्ध करने म किंचित भी सकोच नही है कि यदि उक्त रीति से समस्त सघ एक सूत्र म सगठित होना हो तथा शास्त्राज्ञा का पालन होता हो तो इसके लिए सवस्व समर्पण करना मैं अपना कत्तव्य समझता हूँ। हां, साधुता को मैंने अपने जीवन का प्राण समझकर अगीकार किया है, इसलिए उस अगर कोई प्राण लेने का भय बतलाकर भी छुडाना चाहे तो भी मैं उसे नही छोड सकता। अलबत्ता साधुता के अतिरिक्त और सब कुछ— उपाधि शिष्य, शास्त्र आदि छोडने मे मुझे तनिक भी सकोच नही हो सकता।'

मुनिश्री के यह उद्गार स्पष्ट घोषणा कर रहे हैं कि सघ की एकता के लिए वे अपना शिष्य समूह, आचायपद आदि सभी कुछ त्यागने को उत्सुक थे। साधु सम्मेलन के समय आपने

साम्प्रदायिक एकता के लिए जोरदार प्रयत्न किया था। मुनिश्री अपने अन्तिम समय तक एकता की पुकार करते रहे मगर वह आज तक न सुनी गई। अस्तु[१]—

इस स्थल पर मुनिश्री के सगठन और एकता सबधी प्रबल प्रयत्नो का दिग्दर्शन कराना हमारा उद्देश्य नही है। यहा सिर्फ इतना बतला देना ही पर्याप्त है कि जो महान् पुरुष सघ की एकता को अपने जीवन की बडी साधना समझता था और उसके लिए सर्वस्व त्यागने को तैयार था वह सघ मे अनक्य पैदा करने वाले किसी प्रयत्न मे कैसे शरीक हो सकता था? मुनिश्री ने साफ इकार कर दिया।

गणियागाव से विहार करके महाराजश्री घामोरी पधारे। वहा कुछ दिन विराजकर सड होते हुए घोडनदी पधार गये। घोडनदी मे पृथक किये हुए सन्तो की ओर से रतलाम वाले गव्व लालजी नामक एक वकील आये और उन्होने भी आचार्य पद ग्रहण करने की प्रार्थना की। पूज्यश्री के प्रति विरक्ति उत्पन्न करने के उद्देश्य से उन्होने कई इधर उधर की बातें भी कहीं।

महाराजश्री अपने एव सिद्धान्त पर चलने वाले सन्त थे। उन्होने इस बार भी मनाही कर दी।

मुनिश्री का उत्तर सुनकर और आपकी दृढता देखकर वकील साहब निराश होकर लौट आये। यह घटना मुनिश्री उदात्त और सघश्रेयस् की पवित्र भावना को द्योतित करती है।

घोडनदी से विहार करके मुनिश्री विभिन्न स्थानो मे धर्मप्रचार करते हुए और सयम एवं तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए हिवडा पधारे। वहा कुछ दिन ठहरकर आपने फिर विहार कर दिया।

छब्बीसवा चातुर्मास

हिवडा से विहार करके अनेक क्षेत्रो मे विचरते हुए मुनिश्री मीरी पधारे। सम्वत १९७४ का चौमासा मीरी मे ही किया। आपके उपदेश से प्रभावित होकर लोगों ने यहा गौशाला की स्थापना की। भीनासर (बीकानेर) के प्रसिद्ध श्रावक स्वर्गीय सेठ बहादुरमलजी बाठिया ने गौशाला को २०००) रु० भेंट दिये।

मुनियो की परीक्षा

चातुर्मास समाप्त होने के पश्चात् मुनिश्री विभिन्न स्थानो में विचरते हुए और धर्मोपदेश देते हुए अहमदनगर पधारे।

---

१ युग प्रधान आचार्य श्रीजवाहर द्वारा उक्त एक आचार्य के नेतृत्व मे शिक्षा-दीक्षा प्रायश्चित होने की योजना का सर्वत्र स्वागत हुआ था। यही कारण है कि सवत २००९ मे सादडी (मारवाड) के साधु सम्मेलन मे भी इस योजना को उद्देश्य रूप में स्वीकार किया गया था। किन्तु पूर्ण रूप से वहाँ इसे अमली रूप नहीं दिया जा सका। प्रसन्नता का विषय है कि युग प्रधान श्रीजवाहिराचार्य के ही पट्टधर शांत क्रांति के अग्रदूत स्वर्गीय आचार्य श्रीगणेशीलालजी म० सा० ने अपनी वृद्धावस्था मे भी अदम्य उत्साह के साथ इस योजना को अमली रूप प्रदान किया। जो आज भी पल्लवित एव पुष्पित है।

वर्तमान मे समता विभूति आचार्य श्रीनानेश के सान्निध्य मे साधुमार्गी सघ मे उपर्युक्त योजना का यथायोग्य संवर्धन हो रहा है।

आचार्य श्रीजवाहर के क्रान्तिकारी विचारो मे मध्यम वर्ग एव अछूतोद्धार जैसे रचनात्मक कार्यों के प्रति भी विशेष रहता था। आज वीरसघ एव समता प्रचार संघ के रूप मे चलने वाली गतिविधियाँ तथा धर्मपाल प्रतिबोधक हुक्मगच्छ के अष्टम पट्टधर के द्वारा प्रस्थापित धर्मपाल जागरण इसी का मूर्त रूप है। जिनका क्षेत्र में अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ सक्रिय है और तदद्वारा जन जागरण एवं अध्यात्म साधना के मार्ग पर गतिशील है।

बम्बई धारासभा के वर्तमान स्पीकर श्रीकुन्दनमलजी फिरोदिया तथा श्रीमणिकचन्दजी मूथा वकील ने एक दिन मुनिश्री से वार्त्तालाप के सिलसिले में कहा—आपके दोनों शिष्य संस्कृत का अध्ययन कर रहे हैं, यह आनन्द की बात है। मगर उनका अध्ययन किस प्रकार चल रहा है, और उन्होंने कितनी प्रगति की है, यह बात हम और जनता को कैसे मालूम हो ?

यद्यपि मुनियों को परीक्षा देने और प्रमाणपत्र लेने की कोई आवश्यकता नहीं होती और न इस ध्येय से वे अध्ययन ही करते हैं, तथापि समाज की शक्ति का दुरुपयोग नहीं हो रहा है और अध्ययनकर्त्ता मुनि अप्रमत्त भाव से अध्ययन करते हैं, यह जानने के लिए परीक्षा की आवश्यकता रहती है। उक्त वकीलों का कथन सुनकर मुनिश्री ने अपने दोनों शिष्यों से परीक्षा देने के लिए पूछा। दोनों ने स्वीकृति दे दी। तब अहमदनगर में आपने दोनों मुनियों की परीक्षा दिलाने का निश्चय किया। प्रसिद्ध विद्वान् प० गुणे शास्त्री, पी एच० डी० तथा म० म० प० अभ्यंकर शास्त्री परीक्षक निर्वाचित किये गये। श्रीसङ्घ तथा अनेक दर्शकों की उपस्थिति में परीक्षा ली गई। व्याकरण और साहित्य विषय में प्रश्न पूछे गये। व्याकरण विषय में मुनि श्रीघासीलालजी महाराज को तथा मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को ८२ प्रतिशत प्रथम श्रेणी के नम्बर प्राप्त हुए। साहित्य मे मुनिश्री घासीलालजी म० को ६७ और मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को ६४ प्रतिशत अंक प्राप्त हुए। मौखिक परीक्षा में दोनों मुनियों ने सौ में से सौ अंक प्राप्त किये।

दोनों मुनियों की यह सफलता सराहनीय थी। परीक्षकों ने अध्यापक तथा अध्येता दोनों की भूरि भूरि प्रशंसा की। उन्होंने कहा आजकल इस प्रकार प्राचीन और नवीन मत का परिस्फोट करके पढ़ाने की पद्धति उठ सी गई है। दोनों मुनियों ने संस्कृत में पूर्ण परिश्रम किया है तथा अच्छी योग्यता प्राप्त की है।

मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज साधुओं को पढ़ाने के लिए जहाँ विद्वान् शिक्षक उपयोगी समझते थे वहाँ इस बात का भी उन्हें पूरा ध्यान था कि शिक्षक का सदुपयोग हो रहा है या नहीं।

परीक्षा आदि से निवृत्त होकर मुनिश्री ने अहमदनगर से विहार किया और हिवडा पधारे।

सत्ताईसवाँ चातुर्मास

वि० सं० १९७५ का चातुर्मास हिवडा में हुआ। हिवडा के पास तलकुड नामक एक ग्राम था। वहाँ एक सद्‌गृहस्थ थे। नाम था उनका भीमराजजी। वड़े धर्मात्मा और श्रद्धालु सज्जन थे। उनके पास उनके एक भानजे (भागिनेय) रहते थे। उनका नाम सूरजमलजी कोठारी था। पूज्यश्री का धर्म और अध्यात्म रस से परिपूर्ण उपदेश सुनकर सूरजमलजी को १८ वर्ष की उम्र में वैराग्य हो गया। उन्होंने संसार का अनित्य और दुःखमय स्वरूप समझकर दीक्षा लेने की इच्छा प्रकट की। भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को हिवडे में ही उन्होंने मुनिश्री से मुनिदीक्षा अंगीकार कर ली। दीक्षामहोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। लगभग दो हजार व्यक्ति दीक्षामहोत्सव में सम्मिलित हुए।

दुष्काल में सहायता

उन दिनों दक्षिण प्रान्त में भयंकर दुष्काल पड गया और साथ ही इन्फ्लुएंजा का भी प्रकोप हो गया। प्रतिदिन अनेक व्यक्ति भूख तथा इन्फ्लुएंजा से मरने लगे। उनकी करुण कथाएँ प्रतिदिन मुनिश्री के कानों में पड़ने लगीं। मुनिश्री तथा पन्नालालजी महाराज को छोड़ कर सभी सन्तों को भी रोग ने धर दबाया। मुनियों की देख रेख तथा सेवा सुश्रूषा का सारा भार इन्हीं दोनों सन्तों पर आ पड़ा। मुनिश्री उत्तम कोटि के विद्वान वक्ता और प्रभावशाली होते हुए भी इतने अधिक सेवा भावी थे कि रात दिन रुग्ण मुनियों की सेवा में तत्पर रहते थे। आपने मुनिश्री गणेशीलालजी म० पर अचित्त लालमिट्टी का प्रयोग किया, हवा में रखा और नम्र चित्त घबराने

लगता तो बडे स्नेह के साथ चित्त शान्त करते। इस प्रकार बड परिश्रम से अपने सब मुनिया को सम्भाला। उन दिना मुनिश्री न शाक खाना छाड दिया। एक दिन आपने नीचे लिखी हृदय विदारक घटना सुनी—

हिजड के पास ही एक छोटे से गाव में एक परिवार था। उसमे दो भाई माता, बडे भाई की स्त्री तथा तीन बच्चे थे। भाइया म अनवन होने के कारण बडा भाई बच्चा के साथ अलग रहता था। छोटा भाई अपनी मा के साथ था। उसके पास खाने को अनाज था किसी प्रकार की तगी न थी। स्त्री और बच्चों के खच के कारण बड भाई का हाथ सदा तग रहता था। दुष्काल पडने पर वह भयकर मुसीबत म पड गया। कुछ दिन तो घर की चीजें बेचकर गुजारा किया मगर अन्त में वे भी समाप्त हो गई। बेचारा चिन्ता मे पड गया। घर मे दो चार दिन के गुजारे के लिए भी कुछ न था। खाने वाले पांच थे। सभी का पेट प्रतिदिन मांगता था। हारकर वह मजदूरी ढूंढन के लिए गांव छोडकर चला गया। सोचता था कही से कुछ मिलने पर वापिस चला आऊँगा।

घर मे बहुत थोडा अनाज बचा था। पति का न लौटा देखकर स्त्री ने स्वयं भोजन करना बन्द कर दिया। उस अनाज से बच्चो का पेट पालन लगी। उन्हें रोटी खिला देती और स्वयं भूखी सो रहती। इस प्रकार तीन दिन बीत गए। पतिदेव फिर भी न लौटे। घर म अनाज का एक भी दाना बाकी न रहा। बच्चे फिर खाने को मागन लगे किन्तु मा क पास अब कुछ भी न था। वह स्वय तीन दिन स भूखी थी। उस अपनी भूख की अपेक्षा बच्चा की भूख अधिक सता रही थी। किसी प्रकार दोपहर तक समझा बुझा कर बच्चो को चुप किया। किन्तु भूखे बच्चे कब तक चुप रहत ? व बिलबिला कर रोटी मागने लग। मा भी उन्ही के साथ रोन लगी। किन्तु मा का रुदन बच्चा की भूख न मिटा सकता था। मां का हृदय फटा जा रहा था किन्तु कोई चारा न था।

देवर और सास से अनवन होने पर भी वह इस आपत्ति के समय वहा जा पहुँची। उस समय देवर घर पर नहीं था। बच्चा की करुण कथा सुन कर सास का हृदय पसीज गया। उसने एक सेर बाजरी उधार दे दी।

बाजरी लेकर वह अपन घर आई और आटा पीस कर रोटी बनान लगी।

इतन मे छोटा भाइ अपन घर आया। बाजरी देने के अपराध म उसने मा स बहुत कहा सुनी की और दौडा हुआ बड भाई के घर पहुँचा। उस समय एक रोटी अगार पर थी, एक तवे पर सिक रही थी, एक पोई जा रही थी। बाकी आटा कठौती म था। तीनो बच्चे अगारा पर सिकती हुई रोटी की आशा म बैठे थे। इतने मे वह नर पिशाच आ पहुँचा और भौजाई पर बाजरी ठग लान का इल्जाम लगा कर गालियो की बौछार करने लगा। हल्ला सुन कर पड़ोसी इकट्ठे हो गए। बच्चो पर दया करन के लिए उसे बहुत समझाया किन्तु उसन एक न सुनी। तव तथा अगारा पर पडी हुई रोटिया तथा सारा आटा उठाकर गालियाँ देता हुआ वह चला गया।

बच्चे अपनी आशा का टूटत देखकर बिलख बिलख कर रोन लगे। मां का हृदय भी टूट गया। वह भी फूट फूटकर रान लगी। किन्तु भूख की समस्या फिर भी हल न हुई।

माता ने अचानक रोना बन्द कर दिया। वह बन्द करना रुदन से भी अधिक भयङ्कर था। उसने बच्चा से कहा—आओ अपन रोटी लेने चलें। ' भोले बालकों को क्या पता था कि उन की भूख स तंग आकर मां का हृदय क्या करन जा रहा है ? व साथ हो लिए। बच्चों को लेकर वह गाव से बाहर निकली। थोडी दूर पर जंगल म एक कूआ था। बच्चों को एक वृक्ष के नीचे खडा करके वह बोली—'तुम यहीं खडे रहना। मैं रोटी लेने जाती हूँ। यह कह कर वह कूए पर गई और उस म कूद पडी।

बच्चो ने समझा मा रोटी लेने गई है। है। थोडी देर तो वे आशा मे खडे रहे किन्तु मां रोटी लेकर न लौटी। वे जोर जोर से रोने लगे और कूए में झाक कर मा मा पुकारने लगे। उन्हें क्या पता था उनकी क्षुधा से तग आकर माता उन्हे छोडकर किसी दूसरे लोक मे पहुंच गई है और अब उनका क्रन्दन उसके पास न पहुंच सकेगा।

उसी समय बडा भाई घर लौटा। बेचारा मजदूरी खोजने गया था किन्तु वहा भी भाग्य ने पीछा न छोडा। तीन दिन भटकने पर भी कही काम न मिला। भूखा मरता घर लौटा तो किवाड खुले पडे थे। घर मे कोई न था। पडौसियो से सारी कथा सुनकर वह भी उसी ओर चल दिया जिधर उस की पत्नी गई थी। कूए के पास पहुंचने पर उसे रोते हुए बालक दिखाई दिए। पिता को देखते ही वे रोटी रोटी चिल्लाते हुए दौडे। बाप ने झूठी सान्त्वना देते हुए पूछा—"मैं तुम्हें अभी रोटी देता हूँ। बताओ! तुम्हारी मा कहां गई है?" बालको ने कूए की तरफ इशारा करते हुए कहा— यहा रोटी लेने गई है।" उसने कूए पर जाकर देखा तो अभी बुलबुले उठ रहे थे। कई दिन की भूख के कारण वह पहले ही बहुत घबराया हुआ था, यह दशा देख कर विक्षिप्त सा हो उठा। उसने बच्चों से कहा—'आओ अपन भी रोटी लेने चलें।' यह कहकर एक बच्चे को पीठ से बाध लिया और दो को बगलो मे रख लिया। कूए पर चढ कर वह भी धम से कूद पडा। भूख से तग आकर उसने अपनी तथा अपने बच्चो की जीवन लीला समाप्त कर दी।

इस हृदय विदारक घटना को मुनिश्री ने अपने व्याख्यान मे सुनाया। गरीबो की करुण दशा का वर्णन करते हुए दया दान का उपदेश दिया। परिणाम स्वरूप बाहर से दर्शनार्थ आए हुए तथा स्थानीय श्रावको ने गरीबो को भोजन देने के लिए बहुत सा रुपया जमा किया। गाव मे बहुत से व्यक्तियो ने दस दस मन जुआर दी। छोटी छोटी भी बहुत सी सहायताएँ प्राप्त हुई। मजदूरी करने वाली एक बहिन ने अपनी मजदूरी मे से चार आने दिए।

तदनन्तर एक विशाल भोजनालय प्रारम्भ हो गया। गरीबो को मुफ्त भोजन दिया जाने लगा। आस पास के गावो मे इस बात की घोषणा कर दी गई। लगभग दो अढ़ाई सौ व्यक्तियो को प्रतिदिन दोनो समय भोजन मिलने लगा। उन मे बहुत से व्यक्ति ऐसे भी होते थे जिन्हें एक हफ्ते से कुछ भी खाने को न मिला था।

युवाचार्य पदवी

उन दिनो पूज्यश्री का चौमासा उदयपुर मे था। इन्फ्लुएञ्जा का प्रकोप प्राय सर्वत्र था। आश्विन मास मे उदयपुर पर भी उसका कृपाकटाक्ष बरस पडा। पूज्यश्री पर उसका असर हुआ। उनके शरीर मे तीव्र ज्वर रहने लगा। किन्तु ज्वर की दशा में भी पूज्यश्री अपनी दैनिक कर्मक्रिया नियमित रूप से करते थे। महापुरुष अपनी नही अपने आश्रित की चिन्ता पहले करते हैं। पूज्यश्री ने अपनी रुग्ण अवस्था की चिन्ता न करते हुए सघ के हित का विचार किया। सोचा— जीवन का क्या भरोसा है? रोग का एक ही हल्का सा आक्रमण इसे समाप्त कर देने के लिए काफी है। रोग के अतिरिक्त भी मृत्यु के अनगिनते साधन ससार मे विद्यमान हैं। आचार्य होने के कारण मेरे ऊपर सारे सम्प्रदाय का भार है। अतएव अब मुझे अपना कोई योग्य उत्तराधिकारी चुन लेना चाहिए जो मेरे बाद सम्प्रदाय को भलीभाति सभाल सके और चतुर्विध सघ की धर्म साधना निर्विघ्न होती रहे।

पूज्यश्री ने अपने सम्प्रदाय के मुनियो पर एक सरसरी निगाह डाली। उनकी निगाह एक तेजस्वी और सर्वथा सुयोग्य सत पर ठहर गई। वह सत कौन थे? यही हमारे चरितनायक पुण्य कीर्ति मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज।

इसका सम्बन्ध सिर्फ मेरे साथ नहीं वरन् समस्त श्रीसंघ के साथ है। मुनि घासीलाल जी और गणेशीलालजी का अध्ययन चल रहा है उसे बीच ही में स्थगित कर देना भी उचित नहीं जान पड़ता। इनका अध्ययन पूरा होने पर मेरा विचार स्वयं पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित होने का है। प्रत्यक्ष मिलने पर विशेष विचार कर लेंगे।

यह उत्तर लेकर दोनों सज्जन चल गये। मुनिश्री द्विवड़ा चातुर्मास पूर्ण करके मोरी पधारे। तीन-तीन तारों का उत्तर न पाकर उदयपुर से श्री मेरीलालजी खिवसारा तथा कई दूसरे सज्जन मुनिश्री की सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने बड़े आग्रह के साथ प्रार्थना की—'आप शीघ्र ही उधर पधार कर पूज्यश्री के दर्शन कीजिए और युवाचार्य पद स्वीकार करके हम सब को आनन्दित कीजिए।' मगर मुनिश्री अपने दोनों शिष्यों के अध्ययन को इतना आवश्यक समझते थे कि उसे अधूरा छोड़कर शीघ्र विहार कर देना उन्हें उचित प्रतीत न हुआ। अतएव उदयपुर का शिष्टमंडल भी वापिस लौट गया।

विनय पत्रिका

मोरी से विहार करते हुए मुनिश्री सोनई पधारे। आपके उपदेशों का बड़ा प्रभाव पड़ा। सार्वजनिक हित के बहुत से कार्य हुए। उस समय सोनई सनेटरी बोर्ड के सदस्यों ने तथा स्कूल के प्रधानाध्यापक श्रीकेशव काजीराव देशमुख ने मुनिश्री को विनयपत्रिका अर्पित करते हुए कहा—

संसार में अनेक दुःख देने वाले मायामय बन्धनों को तोड़ने वाले काम क्रोध आदि छः रिपुओं को वश में करने वाले कामनाओं का सर्वथा त्याग करने वाले अर्थात् संसार से विरक्त, 'अहिंसा परमो धर्म' के महा मंत्र से ओतप्रोत, संकटाकीर्ण तथा कठोर संयम महाव्रत को धारण करने वाले, जगत का कल्याण करने के लिए ग्रामानुग्राम विचरते हुए स्वनामधन्य, तपोधन, श्री श्री १००८ श्री मुनि मोतीलालजी महाराज एवं पण्डितप्रवर श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज अपने विद्याविलासी एवं गुरुभक्त शिष्यों के साथ विचरते हुए ता० २२ जून १९१८ ई० को प्रातःकाल ८ बजे सोनई ग्राम में पधारे। हम अपने ग्राम का सौभाग्य मानते हैं कि आप सरीखे पवित्र एवं विद्वान महात्माओं के आगमन एवं चरणस्पर्श से यह पवित्र हुआ। आपके विद्वत्ता और नैतिकता से परिपूर्ण उपदेशों से भरे व्याख्यान सर्वधर्मावलम्बियों ने बड़ी श्रद्धा और सम्मान के साथ सुने और परमहर्ष प्रकट किया। उस समय वे अपना धार्मिक भेदभाव भूल गए।

पहले दिन दान विषय पर आपका भाषण बालाजी के मन्दिर में हुआ। ता० २३ से २७ तक पंचायती वाड़े में नीति, परोपकार, एकता, विद्या तथा अनुकम्पा विषयों पर आपके व्याख्यान हुए। इसके बाद भी जनता के विशेष आग्रह से विविध विषयों पर आपके व्याख्यान हुए। आपके उपदेशों का जनता पर गहरा एवं स्थायी प्रभाव पड़ा। विद्वत्ता तथा त्याग से भरे आपके उपदेशों ने हमारे सामाजिक जीवन में उथल पुथल करदी है। आपका महत्व हमारे हृदयों में बैठ गया है। अपने पवित्र और उच्च विचारों द्वारा आपने जाति तथा धर्म के भेद भाव को दूर करके प्रेम करना सिखलाया है। जो बातें बड़े बड़े विद्वान भी नहीं समझा पाते, उन्हें आपने बहुत ही सरल तथा मनोरंजक रूप से समझा दिया है।

मालवा की ओर प्रस्थान

उदयपुर के श्रावकों के लौट जाने पर सम्प्रदाय के प्रधान श्रावक रतलाम निवासी सेठ वर्धमान जी पीतलिया तथा भीनासर निवासी सेठ बहादुरमल जी बांठिया मोरी में मुनिश्री की सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने आचार्यश्री की वृद्धावस्था और अस्वस्थता का स्मरण दिलाते हुए कम से कम एक वर्ष के लिए मालवा में पधारने और युवाचार्य पदवी स्वीकार करने की आग्रह पूर्ण प्रार्थना की। आप लोगों ने यह भी कहा कि इसके पश्चात् आप अवसर समझें तो फिर महाराष्ट्र पधार जावें। आचार्यश्री का तो यह फरमान है कि मुनि जवाहरलालजी को युवाचार्य

पद पर नियुक्त करने की घोषणा तो हो ही चुकी है, परम्परागत विधि से मुनिश्री मोतीलालजी महाराज उन्हें चादर ओढ़ा देवें। फिर वे जब उचित समझें तब मालवा की ओर विहार कर सकते हैं। किन्तु समस्त श्रीसंघों की यह इच्छा है कि युवाचार्यपद-महोत्सव आप दोनों महापुरुषों की एक जगह उपस्थिति मे ही मनाया जाय।

मुनिश्री स्वयं भी आचार्य महाराज के दर्शन करने से पहले और मालवा आदि की साम्प्रदायिक परिस्थिति का पूर्ण अध्ययन किये बिना यह भार स्वीकार करने में संकोच कर रहे थे। अतः आपने पीतलियाजी और कांठियाजी की बात मान ली और अध्ययन करने वाले दानों मुनियों को महाराष्ट्र में छोडकर मालवा की ओर विहार कर दिया। यह समाचार सुनकर आचार्यश्री को और समस्त श्रीसंघ को बडी प्रसन्नता हुई।

पूज्यश्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज के सम्प्रदाय के लिए रतलाम क्षेत्र महत्वपूर्ण है सम्प्रदाय के बड़े बड़े महोत्सवों को मनाने का गौरव इसी स्थान को प्राप्त है। तृतीय पाट पर विराजमान पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज ने रतलाम मे ही पूज्यश्री चौथीमलजी महाराज को युवाचार्य घोषित किया था। यहीं पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने आचार्यपद सुशोभित करके सम्प्रदाय का भार संभाला था। पूज्य श्रीलालजी महाराज ने भी इसी स्थान पर युवाचार्य पद अलंकृत किया था। इसके बाद उन्होंने भी यहीं सम्प्रदाय का भार संभाला था। अब मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को युवाचार्य पदवी देने का महोत्सव मनाने के लिए भी रतलाम स्थान ही उपयुक्त समझा गया।

पूज्यश्री ने भी उदयपुर म चौमासा पूर्ण करके रतलाम की ओर विहार किया। उधर से मुनिश्री भी रतलाम की ओर अग्रसर होने लगे। आप मीरी से विहार करके जलगांव, भुसावल, बुरहानपुर तथा अन्य अनेक स्थानों को पावन करते हुए सनावद पधारे। वहाँ से आपने इन्दौर की ओर प्रस्थान किया।

भावी आचार्य का अभिनन्दन

मुनिश्री के महाराष्ट्र से रवाना होने के समाचार रतलाम म तथा अन्य प्रायः सभी स्थानों मे पहुँच चुके थे। अपने भावी आचार्य का स्वागत करने के लिए जगह जगह के श्रीसंघ उमड रहे थे। मालवा प्रान्त म पदार्पण करते समय अगवानी के लिए पाँच छह साधुओं ने रतलाम से विहार किया और जब आप इन्दौर से छह कोस दक्षिण म थे आपकी सेवा मे पहुँच गये।

यह पहले ही बताया जा चुका है कि महाराष्ट्र म विचरते हुए आपकी असाधारण कीर्ति सर्वत्र फैल गई थी। वे अपने अनेक गुणों के कारण सब के श्रद्धापात्र बन गये थे। अतः अपने श्रद्धास्पद को नेता के रूप मे आते देखकर किसका हृदय प्रफुल्लित न हो जाता ?

जिस दिन आप इन्दौर म पदार्पण करने वाले थे ऐसा जान पडता था कि किसी महोत्सव की तैयारी हो रही है जनता हर्षविभोर थी। सभी के वदन पर प्रसन्नता नाच रही थी। उत्साह और उमंगें उछल रही थी। नर नारियों के झुण्ड के झुण्ड मुनिश्री की अगवानी करने जा रहे थे। भगवान महावीर के जयघोष के साथ आपने इन्दौर मे प्रवेश किया।

केशरीचंदजी भंडारी की आत्म शुद्धि

इन्दौर के केशरीचंदजी भंडारी को पाठक जानते होंगे। जैन ट्रेनिंग कालेज के विद्यार्थियों के मामले मे आपने भी मंत्री की हैसियत से मुनिश्री पर आरोप लगाया था। आप अपने कृत्य के लिए यद्यपि पहले ही क्षमायाचना कर चुके थे, फिर भी उन्हें आत्मसन्तोष नहीं हुआ था। एक पवित्र महात्मा पर मिथ्या दोषारोपण करने की बात स्मरण करके आपको ऐसा लगता जैसे किसी ने डंक मारा हो। ज्यों ज्यों मुनिश्री की कीर्ति बढ़ती जाती थी त्यों-त्यों केशरीमलजी का सताप बढ़ता जाता था।

मुनिश्री जब इन्दौर पधारे तब केसरीचंदजी मुनिश्री की सेवा में उपस्थित हुए और लिखित क्षमापत्र पेश करके विनम्र क्षमायाचना की। मुनिश्री ने केसरीचन्दजी को मत जनोचित उदारभाव से सान्त्वना देते हुए कहा—'आप अब निःशल्य हो। आपने मेरी आत्मा का कोई अपराध नहीं किया है। बल्कि मुझे अपनी अपकीर्ति सहन करके भी सयम की मर्यादा पर दृढ रहने का अवसर आपके निमित्त से मिल गया। इससे मेरा कुछ लाभ ही हुआ है। हानि कुछ नहीं हुई। आपके प्रति मेरे हृदय में अणु मात्र भी दुर्भाव नहीं है। मेरी हार्दिक अभिलाषा यही है कि भविष्य में आप धर्म और सत्य के पक्षपाती बनें।

मुनिश्री का यह उदार भाव और सयम प्रेम साधु समाज के लिए आदर्श और अनुकरणीय है। केसरीचन्दजी आपकी क्षमाशीलता देखकर बहुत प्रसन्न हुए और धर्मध्यान में अधिक लीन रहने लगे।

रतलाम में पदार्पण

इन्दौर से विहार करके मुनिश्री रतलाम पधारे। रतलाम निवासियों के हर्ष का पार न रहा। बाहर के भी बहुसख्यक लोग उपस्थित थे। फाल्गुन शु० १० को मुनिश्री मोतीलालजी महाराज तथा अन्य मुनियों के साथ जब आप रतलाम पधारे तो हजारों नर नारी आपकी अगवानी के लिए सामने गये।

पूज्यश्री फाल्गुन शुक्ला पचमी को ही पधार चुके थे। आपने आते ही सब प्रथम पूज्यश्री के दर्शन किये और पूज्यश्री ने अपना प्रमोद व्यक्त किया। वर्तमान आचार्य और भावी आचार्य का यह सम्मिलन ऐसा जान पड़ता था जैसे चिरोदित और उदीयमान सूर्य मिलकर चमक रहे हों।

युवाचार्य पद महोत्सव

चैत्र कृष्णा नवमी बुधवार सम्वत १९७५ ता० २६ मार्च १९१९ का दिन युवाचार्य पद प्रदान के लिए नियत किया गया। आचार्य तथा युवाचार्य दोनों महापुरुषों का एक स्थानपर दर्शन करने तथा महोत्सव में सम्मिलित होने के लिए हजारों व्यक्ति बाहर से आने लगे। चैत्र कृष्णा सप्तमी तक सारा नगर भक्त श्रावक वृन्द से भर गया। रतलाम श्रीसघ ने सभी के स्वागत का उत्तम प्रबन्ध किया था। रतलाम श्रीसघ ने बाहर से आने वालों के लिए जो कल्पना की थी उससे चार पाच गुणा लोग उमड़ आये यह देख रतलामके लोगों में भी उत्साह का पूर उमड़ आया। उनके ठहरने के लिए मकानात व सभी तरह का रात दिन एक करके प्रबन्ध किया गया और महोत्सव को यादगार बनाया। व्याख्यान हाल में इतनी गुजायश नहीं थी कि उस जनता को समावेश कर सके इसलिए बहुत दूर तक सड़क पर जनता बैठी थी। बड़े-बड़े रायबहादुर और पांव में सोना पहने हुए राज्य मान्य लोगों को भी व्याख्यान हाल में प्रवेश करना कठिन हो गया था स्वागताध्यक्ष सेठ वर्धमानजी साहब बड़ी कठिनाई से अन्दर जा सके। क्योंकि उनकी वहाँ जरूरत थी।

चैत्र कृष्णा अष्टमी मगलवार को समाज के प्रमुख श्रावकों की एक सभा श्रीमान सेठ बहादुरमलजी साहब बाठिया भीनासर निवासी की अध्यक्षता में हुई। उसमें अगले दिन का कार्य क्रम निश्चित किया गया और अन्य कई उपयोगी प्रस्ताव पास किये गये। जिनका विवरण उस समय के जैन प्रकाश में प्रकाशित हुआ है।

चैत्र कृष्णा नवमी बुधवार को प्रातःकाल छह बजे से ही उपाश्रय में दर्शकों की भीड़ जमा होने लगी। रग बिरगी पोशाकों में सजे हुए विभिन्न प्रान्त निवासियों का यह सम्मेलन अपूर्व-सा दिखाई देता था। ऐसा मालूम पड़ता था जैसे जिन शासन का उद्यान रग बिरगे फूलों से भरा हो और विकास के यौवन में प्रवेश कर रहा हो। भिन्न भिन्न प्रकार की पगड़ी धारण किये हुए पुरुषों का इतनी बड़ी सख्या में एक स्थान पर जमा होना और एक ही धार्मिक उद्देश्य के लिए इतना

उत्साह प्रदर्शित करना इस बात की सूचना देता था कि भारतीय जीवन मे धम अभी बहुत बडी चीज है। भारतीय जनता धम की छाया मे अपने प्रान्तीय तथा जातीय भेद भाव को भुला सकती है। उसके लिए धार्मिक बधन सबसे बडा बधन और धार्मिक बन्धुत्व सबसे बडा बन्धुत्व है।

धीरे धीरे भीड इतनी बढ गई कि उपाश्रय मे जगह न रही। बाहर सडक पर कई शामियाने ताने गए।

आचार्यश्री का उद्बोधन

लगभग आठ बजे आचार्यश्री बहुत से साधुओ के साथ बाहर पधारे और पाट पर विराज गए। साधु साध्वी, श्रावक तथा श्राविका रूप चतुर्विध सघ ने खडे होकर आपका अभिनन्दन किया और विराज जाने पर भक्तिपूर्वक वदना की। किन्तु उठकर वापस बठने मे बडा तकलीफ हुई। आचार्यश्री ने मगलाचरण के बाद नन्दीसूत्र का स्वाध्याय किया। इसके बाद युवाचार्यश्री को सम्बोधित करके अपना सन्देश प्रारम्भ किया। आपने कहा—

मुनि जवाहरलालजी !

"प्राणिमात्र का जीवन क्षण भगुर है। कोई भी अपने को नित्य या चिरस्थायी नही कह सकता। उसमे भी हम सरीखे सोपक्रम आयुष वालो पर तो मृत्यु प्रति क्षण सवार रहती है। ऐसी दशा मे क्षण भर का भरोसा नही करना चाहिए। फिर भी स्वास्थ्य, युवावस्था आदि बाह्य कारणो का अवलम्बन लेकर व्यवहार चलाया जाता है। स्वास्थ्य गिर जाने पर या वृद्धावस्था आ जाने पर प्रत्येक व्यक्ति को तैयार हो जाना चाहिए। अपना सारा उत्तरदायित्व दूसरो को सभला कर तथा सारे सम्बन्धो से नाता तोडकर विदा होने के लिए तैयार रहना चाहिए। उदयपुर चातुर्मास के अन्तिम भाग मे मेरे शरीर पर रोग ने भयकर आक्रमण किया। उसी समय मुझे चेत हो गया कि अब छुट्टी लेने का समय आ पहुँचा है। आयुकर्म के शेष होने से मेरा जीवन बच गया किन्तु उस घटना ने मुझे सूचना दे दी है। दीक्षा लेते समय ही हम सासारिक सभी बन्धनो को तोड देते हैं। सासारिक बन्धु बान्धवो की दृष्टि से तो हम उसी समय मृत्यु का आलिंगन कर लेते हैं। इसलिए शरीर को त्यागकर की जानेवाली इस महायात्रा के समय हम किसी से विदा मागने की आवश्यकता नही है। हम लोग तो उसी समय विदा ले लेते हैं। शरीर का छूटना हमारे लिए दुख या अमगल की बात भी नही है। हमारे लिए जन्म ही अमगल है दुबारा शरीर का धारण करना दुख है। इसलिए मृत्यु को आई देखकर हम किसी प्रकार का भय या शोक भी न होना चाहिए। हमे उसका सहर्ष स्वागत करना चाहिए।

ज्ञान, दर्शन और चारित्र की सम्मिलित उन्नति के लिए भगवान् महावीर ने चतुर्विध सघ की स्थापना की है। इस प्रकार सासारिक परिवार को छोड देने पर भी हम धर्मपरिवार मे प्रवेश करते हैं। इसके साथ साथ हम पर कुछ उत्तरदायित्व भी आ पडता है। हम जिस समाज का अन्न, पानी लेकर धर्म की आराधना करते हैं, जो व्यक्ति अपने कल्याण की कामना से हमारी भक्ति करते हैं जिनका आध्यात्मिक विकास हमी पर निर्भर है, उन्हें व्यवस्थित करना तथा सत्य मार्ग बताते रहना हमारा कर्तव्य है। यद्यपि साधु सभी प्राणियों का समानभाव से अकारण मित्र होता है किन्तु ऐसे मुमुक्षु जीवो के लिए तो दूसरा आधार ही नहीं है। उन्हे सन्मार्ग की ओर लाना, अग्रसर करना तथा स्थिर रखना साधुओ का कर्तव्य है। इसी प्रकार बहुत से लघुकर्मा (हलुकर्मी) जीव ससार से विरक्त होकर अपना सारा जीवन धर्म की आराधना मे लगाना चाहते हैं। वे पाच महाव्रत स्वीकार करके उनका शुद्ध पालन करने के उद्देश्य से हमारे साथ रहते हैं और हमारी आज्ञानुसार चलते हैं। ऐसे साधुओ के ज्ञान, दर्शन और चरित्र की उन्नति करना, महाव्रतो के पालन मे किसी प्रकार की उलझन आने पर ठीक मार्ग बताना तथा किसी प्रकार का दोष लगने पर प्रायश्चित्त आदि देकर उन्हे शुद्ध करना बडे तथा गीतार्थ साधुओ का काम है। इन्ही सब बातो

की व्यवस्था के लिए जन शासन म एक आचाय चुना जाता है। उस पर चतुर्विध सघ के हित का भार होता है।

आज से अठारह वष पहले, कार्तिक शुक्ला द्वितीया सम्वत् १९५७ को आचायप्रवर श्री १०८ पूज्यश्री चौथमलजी महाराज ने इस भार को सम्भालने के लिए मुझे चुना था। सात ही दिन बाद अर्थात कार्तिक शुक्ला नवमी की रात को पूज्य श्री का स्वगवास हो गया। सारा भार मुझ पर आ पडा। तब से लेकर आज तक मैंने उसे यथाशक्ति निभाया है। उदयपुर की बीमारी ने मुझे सूचना दे दी कि मुझे भी यह भार सौंपने के लिए कोई उत्तराधिकारी चुन लेना चाहिए। जिस प्रकार स्वर्गीय पूज्यश्री ने मुझ यह उत्तरदायित्व दिया उसी प्रकार मेरा भी कत्तव्य है कि मैं किसी योग्य व्यक्ति के हाथ म यह उत्तरदायित्व सौंप दूँ। इसके बाद किसी प्रकार की आकस्मिक घटना होने पर मुझे सघ की चिन्ता न रहगी। अतएव शीघ्रातिशीघ्र किसी का चुना जाना आवश्यक था।

आपका स्मरण आते ही मुझे प्रसन्नता हुई। मैंने सोचा—'सघ के शासन की बागडोर आपके हाथ में सौंप देने पर किसी प्रकार का डर नहीं है। आप सरीखे प्रतिभाशाली, तपस्वी, कठोर सयमी और दृढधर्मा आचाय को पाकर पूज्यश्री हुक्मचन्द्रजी महाराज का यह सम्प्रदाय अधिकाधिक विकास करेगा, ऐसी मेरी दृढ धारणा है।'

मुझे इस बात का बडा हष है कि मरी तथा सघ की इच्छा को सम्मान देकर आप यहाँ आ गए हैं। अब इस भार को सम्भालिए। मुझे निश्चित कीजिए और श्रीसघ का हष बढ़ाइए।

आप स्वय समझदार हैं। शास्त्रों के जानकार हैं। मैं इस समय आपको क्या शिक्षा दूँ? मेरा तो इतना ही कहना है कि परमप्रतापी पूज्यश्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज सरीखे महापुरुष का यह सम्प्रदाय दिन प्रतिदिन ज्ञान दशन और चारित्र म वृद्धि करे। हमारे पूवमर्ती आचार्यों ने सयम के जिस स्तर को कायम रखा है आप उसे ऊँचा उठाने का प्रयत्न करें। किसी प्रकार की कमी न आने दें। आपकी प्रवत्ति इस प्रकार हो जिससे श्रावक तथा श्राविकाओं में भी धम श्रद्धा उत्तरोतर वृद्धिगत हो। वे सदा सत्य के पक्षपाती बनें। सच्चे साधु को मानें। सच्चे धम पर चलें।

मरा विश्वास है, आपकी कत्तव्यनिष्ठा, आपकी ओजस्विनी वाणी, आपकी प्रतिभा और आपका प्रभावशाली व्यक्तित्व इन सब बातों को करने म समथ हैं। आपके कारण अहिंसा धम का महत्व बढ़ेगा और उन्मागगामी भोले जीव सन्माग पर आएँगे।

यही सब बातें सोचकर मैंने आपको युवाचाय चुना है। इस बात की स्वीकृति के प्रतीक रूप इस पछेवडी को धारण कीजिए।"

यह कह कर आचाय श्री ने स्वय धारण की हुई पछेवडी उतारी और चतुर्विध सघ के जयनाद के साथ मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को ओढ़ा दी। उपस्थित मुनियो ने भी आचाय श्री के इस काय में अपनी स्वीकृति प्रदर्शित करने के लिए पछेवडी ओढ़ाने म हाथ लगाया। उस समय आचाय महाराज और युवाचाय श्री के जयनाद के साथ सारी सभा गूँज उठी।

इसके बाद युवाचाय श्री ने आचाय श्री तथा स्थविर मुनिश्री मोतीलालजी महाराज को वन्दना की। क्रमश दूसरे मुनियो ने युवाचाय श्री को वन्दना की। साध्वी समुदाय श्रावक तथा श्राविकाओं ने भी भक्तिपूर्वक वन्दना की। तदनन्तर युवाचाय श्री नीचे के आसन म उतर कर आचाय श्री के समीप वाले आसन पर विराज गए।

आचाय श्री न सघ को लक्ष्य करके फरमाया—

'पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय का सौभाग्य है कि उसे ऐसा योग्य साधु नेता के रूप म मिला है। मुनिश्री जवाहरलालजी आज से युवाचाय हैं। साधु, साध्वी श्रावक

तथा श्राविका रूप समस्त श्रीसंघ का कर्तव्य है कि उनकी आज्ञा में रह कर अपने ज्ञान दर्शन चारित्र की वृद्धि करें। मुनिमण्डल तथा इस सम्प्रदाय की आज्ञा में विचरने वाले साध्वी समुदाय को मेरा आदेश है कि वे युवाचार्य श्री जवाहरलालजी की आज्ञा का उसी प्रकार पालन करें जिस प्रकार वे मेरी आज्ञा का पालन करते रहे हैं।'

पूज्यश्री के वक्तव्य के पश्चात् मुनिश्री हर्षचन्द्रजी महाराज ने समस्त मुनिमण्डल की ओर से युवाचार्यश्री का अभिनन्दन किया और उनकी आज्ञा में रहने का विश्वास दिलाया। मुनि श्री हीरालालजी महाराज ने भी इसका अनुमोदन किया।

इसके बाद भिन्न भिन्न प्रान्तों के श्री संघों की ओर से प्रमुख श्रावकों ने हर्ष प्रकट किया और युवाचार्य श्री की आज्ञा पालन करने का वचन दिया। जिन श्रीसंघों के प्रतिनिधि उपस्थित न हो सके थे उन्होंने भी तार या पत्र द्वारा अपनी सम्मति भेजी थी।

उसी अवसर पर पूज्यश्री माधवमुनिजी महाराज ने अपनी शुभकामना नीचे लिखी कविता के रूप में भेजी थी—

विज्ञ युवराज श्री जवाहरलालजी मुनीश,
शान्तता के साथ एकता का साज साजेंगे।
द्वैतता मिटाय वात्सल्यता हृदय में लाय,
सब सम्प्रदायों के हितैषी आप बाजेंगे॥
लाजेंगे विपक्षीलोक, गाजेंगे राजेन्द्रसम,
अहा! हा! हमारे सब शोक थोक भाजेंगे।
पूज्य पद पाय सम्प्रदाय में बढ़ाय प्रेम,
प्रतिदिन प्रताप दूनो पाले पट्ट राजेंगे॥

इत्यादि अनेक कविताएँ सन्देश तथा तार आदि सुनाये गये। इसके बाद युवाचार्य श्री ने नम्रतापूर्वक उस पद को स्वीकार करते हुए चतुर्विध संघ का कर्तव्य बताया। आपने फरमाया—

युवाचार्य का प्रवचन

आचार्यश्री एवं समस्त श्रीसंघ ने मुझ पर जो गुरुतर भार डाला है, उसे सफलता के साथ वहन करना साधारण काम नहीं है। विशाल सम्प्रदाय के शासन को सम्भालना खास तौर से मुझ जैसे अल्पशक्तिमान् व्यक्ति के लिए और भी कठिन है। मेरी कठिनाई इस कारण भी बढ़ जाती है कि मैं लम्बे समय से दक्षिण प्रान्त में विचरता रहा हूँ और सामाजिक परिस्थितियों के निकट सम्पर्क में नहीं रह सका हूँ। फिर भी जिस उत्साह के साथ स्वागत करके संघ ने मेरा उत्साह बढाया है उससे जान पड़ता है कि मुझ पर संघ का प्रेम है और संघ मुझे यह भार उठाने में सहायता देगा। मैं संघ के सहयोग से अपना गम्भीर उत्तरदायित्व निभाने में समर्थ हो सकूँगा। मुनिमण्डल के हार्दिक सहयोग के बिना क्षण भर भी कार्य चलना कठिन है अतएव मुनियों से मैं विशेष सहयोग की आशा करता हूँ। इसी आशा और विश्वास के बल पर मैं पूज्यश्री तथा समस्त श्रीसंघ की आज्ञा शिरोधार्य करता हूँ।

किसी नगर में राजा का देहान्त हो गया। राजा निस्संतान था, अतएव प्रश्न उपस्थित हुआ कि राजगद्दी किसे दी जाय? परम्परा के अनुसार एक पक्षी छोड़ा गया और निश्चय हुआ कि यह जिसके सिर पर बैठ जाय उसी को राजा बना दिया जाय। पक्षी जंगल में जाकर एक घसियारे के सिर पर बैठ गया। मन्त्री तथा दरबारियों ने मिलकर उस घसियारे को राजा बना दिया। घसियारा राज्य करने लगा। वह मन्त्रियों के परामर्श से राज्य का भली भाँति संचालन करने लगा।

दरबार मे राजा के पास ही मन्त्री बैठा करता था। राजा जब खड़ा होता तो मन्त्री के कंधे पर हाथ रख कर उसके सहारे खड़ा होता। एक दिन अधिक जोर देकर उठने के कारण मन्त्री को हँसी आ गई। राजा ने तिरछी नजर से उसे हँसते देख लिया।

मन्त्री को एकान्त में बुलाकर राजा ने हँसने का कारण पूछा। मन्त्री पहले तो भयभीत हुआ मगर अभयदान मिलने पर उसने सच्ची बात कह दी। बोला—'महाराज ! जिस समय आप घसियारे थे उस समय बिना किसी की सहायता के ही घास का गट्ठा लादकर और दो कोस चलकर नगर में बेचने आते थे। आज राजा हो जाने पर अपना शरीर भी आपसे नहीं उठता ! खड़े होते समय आपको मेरे कंधे का सहारा लेना पड़ता है। इस परिवर्तन को देखकर मुझे हँसी आ गई।'

राजा ने कहा—मन्त्रीजी, आप मर्म की बात नहीं समझे। जिस समय मैं घसियारा था मेरे ऊपर सिर्फ घास के गट्ठे का ही बोझ था। मैं उसे आसानी से उठा सकता था। अब सारे राज्य का और समस्त प्रजा का बोझ मेरे सिर है। उसे अकेले उठा लेना मेरी शक्ति के बाहर की बात है। आपके सहारे ही मैं वह भार उठा रहा हूँ। इसीलिए खड़ा होते समय आपका सहारा लेता हूँ।

सज्जनो ! मेरी स्थिति भी उस घसियारे के समान है। घसियारा इस अंश में अभागा था कि राजा के मरने के पश्चात् उस पर राज्य का भार आया था। मेरा सौभाग्य यह है कि पूज्यश्री की छत्र छाया मेरे सिर मौजूद है और उनसे मैं बहुत कुछ शक्ति प्राप्त कर सकूँगा। हाँ, घसियारे के समान अभी तक मुझ पर सिर्फ मेरा ही भार था अब सारे सम्प्रदाय रूपी राज्य का भार मेरे सिर आ रहा है। इसे सम्भालने में मैं अकेला असमर्थ हूँ। मुझे भी मन्त्री के समान स्थविर मुनिराजों की सहायता अपेक्षित है। उनकी सहायता पाकर ही मैं संघ रूपी प्रजा को सम्भाल सकूँगा।

व्यवहार में आचार्य पदवी सम्मान की वस्तु समझी जाती है। धार्मिक क्षेत्र में यह सब से बड़ा पद है। मगर मैं तो इस बड़े सेवक का पद मानता हूँ। इस पद को प्राप्त करने के कारण मैं अपने को गौरवान्वित नहीं समझूँगा वरन् इस पद के अनुरूप श्रीसंघ की सेवा कर सका तो मैं अपने को गौरवशाली समझूँगा। व्यवहार में, जो देता है उसी को लेने का अधिकार है। इसी प्रकार जो सेवा करता है उसी को सेवा कराने का अधिकार होता है। श्रीसंघ की दृष्टि में मैं भले ही आचार्य, पूज्य या ऊँचे पद पर आसीन समझा जाऊँ मगर मैं अपनी नजरों में धर्म का एक अकिंचन सेवक ही रहूँगा।

पूज्यश्री का मुझ पर असीम उपकार है। मैं इनके ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकता। मुझे अध्ययन करने आदि की सब सुविधाएँ आपने दी हैं। मेरे जीवन को ऊँचा उठाने में आपका महत्वपूर्ण हाथ रहा है। इसके लिए मैं इनका कृतज्ञ रहूँगा। इस अवसर पर मैं पूज्यश्री को विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि श्रीसंघ का कल्याण और जिनशासन की सेवा ही मेरे जीवन का ध्येय होगा और पूज्य श्री हुक्मीचंदजी महाराज आदि महान् पुरुषों द्वारा पावन इस सम्प्रदाय की गौरव रक्षा करने में मैं सदैव उद्यत रहूँगा।

युवाचार्य श्री के प्रवचन के पश्चात् कई अन्य सज्जनों के भाषण हुए। श्री वर्धमानजी पीतलिया ने आगत सज्जनों का आभार माना और उस समय का कार्य समाप्त हो गया।

मध्याह्न

मध्याह्न में जीवदया, शिक्षा प्रचार आदि के सम्बन्ध में कई सज्जनों के प्रभावशाली भाषण हुए। 'जैनों की उन्नति कैसे हो ?' इस उपयोगी विषय पर पूज्य महाराज ने अपना अभिप्राय प्रकट करते हुए फरमाया—किसी भी समाज की उन्नति प्रचारकों पर निर्भर है। हमारे समाज में ऐसे प्रचारकों की अत्यन्त आवश्यकता है जो सर्वत्र घूम घूम कर समाज को संभालते हों। समाज में जहाँ जिस बात की आवश्यकता हो उसकी पूर्ति करना, धर्मविमुख लोगों को धर्म की ओर

आकर्षित करना, जहाँ शिक्षा की समुचित व्यवस्था न हो वहाँ व्यवस्था करना—बालकों के अभिभावकों को समझा-बुझा कर धार्मिक संस्थाओं में भिजवाना या अनुकूलता हो तो शिक्षा संस्था की स्थापना करना, इस प्रकार समाज में से अज्ञान हटाकर ज्ञान और सदाचार का प्रसार करना, इत्यादि अनेक काय योग्य और सेवाभावी प्रचारकों के अभाव में नहीं हो सकते। प्रचारकों के बिना आर्थिक कठिनाइयों के कारण कष्ट पाने वाले स्वधर्मी बन्धुओं का पता कौन चलावे ? प्रचारक हो तो यह सब समाज और धर्म की उन्नति करने वाले कार्य सुचारूरूप से हो सकते हैं और समाज की दशा बहुत कुछ सुधर सकती है। सच्ची लगन वाले पचास उपदेशक समाज के लिए पर्याप्त हो सकते हैं।

किसी सम्मेलन या उत्सव में व्याख्यान देकर अग्रेसर का गौरव प्राप्त कर लेने मात्र से समाज का श्रेय नहीं हो सकता। इसके लिए तो रचनात्मक कार्यपद्धति अपनाना ही उपयोगी होता है। समाज को ठोस काय की आवश्यकता है। कोई निश्चित योजना बनाकर उसे कार्यान्वित करने से ही जैन समाज का उत्थान होगा।

यह नहीं समझना चाहिए कि गृहस्थ प्रचारक जनता पर क्या असर डाल सकते हैं ? सच्ची लगन से काय किया जाय तो गृहस्थों का भी आदर हो सकता है। समाज में ऐसे अनेक क्षेत्र हैं जहाँ साधुओं का विचरण नहीं हो पाता। साधु की मर्यादा कायम रखकर वहाँ पहुँचना बहुत कठिन है। उन क्षेत्रों में श्रद्धाशील विद्वान् और सच्ची निष्ठा वाले गृहस्थ ही काय कर सकते हैं। साधुओं पर सारा भार डालकर गृहस्थों को निश्चिन्त नहीं हो जाना चाहिए। साधु अपनी मर्यादा के अनुसार धर्मप्रचार का काय करते ही हैं मगर श्रावकों को भी समाज की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिए पीछे नहीं रहना चाहिए।

पूज्यश्री के उपदेश से उत्साहित होकर अनेक श्रावक समाज सेवा के इन महत्वपूर्ण कार्यों में योग देने के लिए उद्यत हुए। मगर आखिर वह तयारी या ही रह गई। संवत १९७५ में पूज्यश्री ने जो आवश्यक उपदेश दिया था, आज भी वह ज्यों का त्यों उपयोगी है। इतने लम्बे अर्से में भी इस दिशा में कोई व्यापक और ठोस प्रयत्न नहीं किया गया है। वास्तव में पूर्वोक्त योजना का अमल में आना समाज के अभ्युदय का कारण होगा।

रतलाम से विहार

रतलाम का समारोह सानन्द और सहष सम्पन्न हो गया। आचार्यश्री और युवाचायश्री ने एक साथ विहार किया और दोनों महापुरुष जम्बूद्वीप के दो सूर्यों के समान प्रकाशमान होते हुए खाचरौद पधारे। वहाँ से पूज्यश्री ने उज्जैन की ओर तथा युवाचायश्री ने तालमंडावल की ओर विहार किया। कुछ दिनों बाद पूज्यश्री भी तालमण्डावल पधार गये। यहाँ से फिर दोनों महानुभाव साथ विहार करके नगरी पधारे।

सम्प्रदाय के शासन का अनुभव प्राप्त करने के उद्देश्य से युवाचार्यश्री पूज्यश्री के साथ ही चौमासा करना चाहते थे। किन्तु जावरा के नवाब और श्रीसंघ की प्रार्थना पर पूज्यश्री जावरा में चौमासा करने का वचन पहले ही दे चुके थे और युवाचायश्री को उदयपुर भेजना आवश्यक था। अतएव यहाँ से दोनों को दो दिशाओं में विहार करना आवश्यक हो गया। पूज्यश्री ने जावरा की ओर विहार किया और युवाचार्यश्री ने पूज्यश्री के आदेशानुसार उदयपुर की ओर प्रस्थान किया।

अट्ठाईसवां चातुर्मास

अपने चरणकमलों से मेवाड़भूमि को पवित्र करते हुए युवाचायजी महाराज उदयपुर पधारे। सं० १९७६ का चौमासा वहीं किया। उदयपुर की जनता आपके उपदेशामृत का पहले

भी पान कर चुकी थी। किन्तु इस बार आप चिरकाल के पश्चात पधारे थे, आपके अनुभव और आपकी योग्यता भी पहले से कई गुना बढ़ चुकी थी और अब आप युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित थे। युवाचार्य के रूप में आपका यह पहला ही चौमासा था। अत उदयपुर की जनता को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। दिन रात धर्म का ठाठ लगा रहता। सभी प्रकार की जनता आपके उपदेशों का सुधारस पान करती थी। आपके उपदेश से बहुत से जीवों को अभयदान मिला और सकड़ो श्रावकों ने विविध प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये।

एकता का प्रयास

चातुर्मास के बाद चित्तौड़ भीलवाड़ा होते हुए आप ब्यावर पूज्यश्री की सेवा में पधारे। उस समय आगरा तथा जयपुर के कतिपय मुख्य श्रावकों का एक डेपूटेशन ब्यावर आया। पूज्यश्री से प्रार्थना की—'मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज तथा उनके साथ के मुनि देहली से विहार करके पधार रहे हैं और आपसे मिलकर साम्प्रदायिक विषयों पर विचार विमर्श करना चाहते हैं। अतः जयपुर या किसी अन्य स्थान पर मिलन हो तो ठीक होगा। साम्प्रदायिक वैमनस्य बढ़ रहा है यह कम हो जायगा और कोई मार्ग निकल आएगा।

पूज्यश्री सरल हृदय महापुरुष थे। माया प्रपंच से दूर रहते थे। किसी प्रकार की चाल बाजी उन्हें पसन्द नहीं थी। उन्हें इस मिलने में कोई तथ्य दिखाई नहीं दिया। अतः उन्होंने स्पष्ट शब्दों में इन्कार कर दिया। होली चातुर्मास के बाद पूज्यश्री तथा युवाचार्यश्री का मारवाड़ की तरफ विहार हो गया, किन्तु कुछ प्रतिष्ठित लोगों ने फिर प्रार्थना की कि आप एक बार यहाँ पर अवश्य मिल लें और जो अपवाद लगाया जाता है कि हम तो मिलना चाहते हैं, और समझौता करना चाहते हैं मगर पूज्य महाराज मिलना नहीं चाहते और दूर दूर जाते हैं, इस अपवाद को दूर कर दें और जनता को दिखा दें कि सत्य वास्तव में क्या है।

यह सुनकर पूज्यश्री ने अजमेर पधारना स्वीकार कर लिया, युवाचार्यजी को जो आगे पधार गए थे, अजमेर पहुँचने का सन्देश भेज दिया। दोनों महापुरुष वैशाख शुक्ला में अजमेर पधारें। श्री मुन्नालालजी महाराज आदि पहले ही पधार चुके थे। अजमेर संघ ने दोनों महानुभावों का हार्दिक स्वागत किया।

साम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी वार्तालाप हुआ। दोनों ओर से दो दो व्यक्ति बातचीत करने के लिए चुने गये। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की ओर से राजे श्री कोठारी बलवन्तसिंहजी साहब और मेहता कुन्दनसिंहजी सा० थे तथा दूसरी तरफ से सा० गोकुलचन्दजी जौहरी और पीरूलालजी चोपड़ा। मगर श्रावकों के समक्ष सब बातें कहना उचित न समझकर पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज, मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज तथा मुनिश्री देवीलालजी महाराज ने एकान्त में वार्तालाप करना तय किया। पाँच छह दिनों तक बातचीत होती रही। एकता के लिए जितना किया जा सकता था, वह सब और उससे भी अधिक पूज्यश्री ने किया। एकता के लिए आपने पूरी तत्परता दिखलाई। मगर भावी को यह मंजूर नहीं था। अंत में वार्तालाप असफल हो गया। जनता को सच्ची परिस्थिति का दिग्दर्शन कराकर दोनों महापुरुष अजमेर से पधार गए।

अजमेर की इस कारवाई का एक अलग ही प्रकरण बन सकता है। उस समय पूज्यश्री धर्मदासजी म० के सम्प्रदाय में मुनि श्री रतनचन्दजी म० श्री मिश्रीमलजी म० तथा श्रीअमरचन्दजी म० वहाँ मौजूद थे। वे इस प्रकरण से पूरी तरह परिचित हैं क्योंकि मध्यस्थता का कार्य उन्होंने ही किया था।

अजमेर से विहार करके पूज्यश्री ब्यावर पधारे और युवाचार्यश्री ने बीकानेर की ओर प्रस्थान किया। पुष्कर से कुछ ही दूर जाने पर आपको मुनिश्री राधालालजी महाराज की अस्वस्थता

के समाचार मिले। राधालालजी महाराज आपके दर्शन के लिए उत्सुक थे। अतः आप पुष्कर से ब्यावर पधारे। मुनि श्रीराधालालजी म० को दर्शन दिये। और पूज्यश्री के दर्शन किये। आपकी इच्छा पूज्यश्री की सेवा में रहकर चौमासा करने की थी, मगर पूज्यश्री के आदेश से आपने बीकानेर की ओर विहार किया। पूज्यश्री बड़े ही दूरदर्शी महापुरुष थे। उन्होंने अपनी मौजूदगी में ही आपको सम्प्रदाय के विशिष्ट क्षेत्रों में युवाचार्य के रूप में भेजना आवश्यक समझा होगा। तदनुसार आप मार्ग में धर्म का उपदेश देते हुए बीकानेर पधारे।

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास

आषाढ़ कृष्णा चतुर्दशी का दिन था। पूज्यश्री जयतारण पधारे थे। अमावस्या के दिन व्याख्यान देते समय अकस्मात् आपके नेत्रों की ज्योति बंद हो गई। सिर में चक्कर आने लगे। पूज्यश्री को मृत्यु का आभास होने लगा। आपने उसी समय उपस्थित साधुओं को संथारा करा देने के लिए कहा। श्रावक और साधु विविध प्रकार से औषधोपचार कर रहे थे किन्तु पूज्यश्री का विश्वास हो गया था कि यह सब उपचार अब वृथा हैं। अन्तिम समय सन्निकट आ पहुँचा है।

उसी समय मुनिश्री हरखचंदजी महाराज को सूचना की गई। वे उस समय ब्यावर में विराजते थे। लगभग १८-१९ कोस का उग्र विहार करके सुदि १ को नीमाज पधारे और दूसरे दिन सुदि २ को जयतारण पहुँच गए।

आषाढ़ कृष्णा प्रतिपद् को आचार्यश्री ने उपस्थित साधुओं को अपने समीप बुलाया उनके सिर पर हाथ फेरा और अन्तिम विदा लेते हुए कहा—

'मुनिराजो! संयम को दिपाना। परस्पर प्रीतिपूर्वक रहना। युवाचार्य श्री जवाहरलालजी की आज्ञा में विचरना। वे दृढ़धर्मी, चुस्त संयमी हैं। और मुझसे भी अधिक तुम्हारी सार संभाल रख सकते हैं। मैं और वे एक ही स्वरूप के हैं, ऐसा समझना। उनकी सेवा करना। पूज्यश्री हुकमीचन्द्रजी महाराज के सम्प्रदाय को जाज्वल्यमान रखना। शासन की शोभा बढ़ाना। आत्म कल्याण को सदा सामने रखना। खमाता हूँ। क्षमा करना।

पूज्यश्री बोलते बोलते रुक गये। पास में बैठे सन्तों के भी नेत्र आंसुओं से भर गये। मृत्यु को महोत्सव मानने वाले मुनि भी अपने सरल हृदय और सुयोग्य धर्मनायक की यह स्थिति देख कर एक बार विचलित हो उठे। धर्मानुराग ने उन्हें विह्वल कर दिया। उनमें से एक मुनि ने कहा—

पूज्य महाराज साहब! आपकी आज्ञा हमारे लिए शिरोधार्य रही है और अब भी रहेगी। आप निश्चिन्त हों। हम बालकों को आप क्या खमाते हैं। हम लोग आपको बारम्बार खमाते हैं, जो आपके उपकार के बदले में आपकी कुछ भी सेवा न कर सके। आप महापुरुष हैं। अविनय-आसातना के लिए क्षमा करें।'

क्षमा का आदान प्रदान करने के पश्चात् पूज्यश्री ने अपना मनोयोग सभी ओर से एकदम निवृत्त कर लिया और वे उत्तराध्ययनसूत्र की यह गाथा उच्चारण करने लगे—

सुत्तेसु यावि पडिबुद्ध जीवी, न वीससे पंडिए आसुपण्णे।
घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं भारंड पक्खीव चरेऽप्पमत्तो॥

अर्थात्—सदा जागृत रहकर जीनेवाला, विवेकशील और शीघ्रबुद्धि वाला मनुष्य जीवन का भरोसा न करे। काल भयंकर है और शरीर निर्बल है। काल के एक ही आक्रमण से शरीर छिन्न भिन्न हो जाता है। यह जानकर भारंड पक्षी के समान प्रतिक्षण अप्रमत्तभाव से विचरना चाहिए।

पूज्यश्री इस प्रकार स्वाध्याय करके अपनी आत्मा में लीन हो रहे थे। अन्य सन्त भी आपके साथ स्वाध्याय में सम्मिलित हो गये। विषाद के स्थान पर गम्भीर शान्ति का सात्विक वातावरण फैल गया।

भी पान कर चुकी थी। किन्तु इस बार आप चिरकाल के पश्चात् पधारे थे, आपके अनुभव और आपकी योग्यता भी पहले से कई गुना बढ़ चुकी थी और अब आप युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित थे। युवाचार्य के रूप में आपका यह पहला ही चौमासा था। अत उदयपुर की जनता को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। दिन रात धर्म का ठाठ लगा रहता। सभी प्रकार की जनता आपके उपदेशों को सुनकर कृतार्थ होती थी। आपके उपदेश से बहुत से जीवों को अभयदान मिला और सैकड़ों श्रावकों ने विविध प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये।

एकता का प्रयास

चातुर्मास के बाद चित्तौड़ भीनवाडा होते हुए आप ब्यावर पूज्यश्री की सेवा में पधारे। उस समय आगरा तथा जयपुर के कतिपय मुख्य श्रावकों का एक डेपूटेशन ब्यावर आया। पूज्यश्री से प्रार्थना की—'मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज तथा उनके साथ के मुनि देहली से विहार करके पधार रहे हैं और आपसे मिलकर साम्प्रदायिक विषयों पर विचार विमर्श करना चाहते हैं। अत जयपुर या किसी अन्य स्थान पर मिलन हो तो ठीक होगा। साम्प्रदायिक वैमनस्य बढ़ रहा है, वह कम हो जायगा और कोई मार्ग निकल आएगा।

पूज्यश्री सरल हृदय महापुरुष थे। माया प्रपंच से दूर रहते थे। किसी प्रकार की चाल बाजी उन्हें पसन्द नहीं थी। उन्हें इस मिलने में कोई तथ्य दिखाई नहीं दिया। अत उन्होंने स्पष्ट शब्दों में इन्कार कर दिया। होली चातुर्मास के बाद पूज्यश्री तथा युवाचार्यश्री का मारवाड की तरफ विहार हो गया, किन्तु कुछ प्रतिष्ठित लोगों ने फिर प्रार्थना की कि आप एक बार वहीं पर अवश्य मिल लें और जो अपवाद लगाया जाता है कि हम तो मिलना चाहते हैं, और समझौता करना चाहते हैं मगर पूज्य महाराज मिलना नहीं चाहते और दूर दूर जाते हैं, इस अपवाद को दूर कर दें और जनता को दिखा दें कि सत्य वास्तव में क्या है।

यह सुनकर पूज्यश्री ने अजमेर पधारना स्वीकार कर लिया, युवाचार्यजी को जो आगे पधार गए थे, अजमेर पहुँचने का सन्देश भेज दिया। दोनों महापुरुष वैशाख शुक्ला में अजमेर पधारे। श्री मुन्नालालजी महाराज आदि पहले ही पधार चुके थे। अजमेर संघ ने दोनों महानुभावों का हार्दिक स्वागत किया।

साम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी वार्तालाप हुआ। दोनों ओर से दो दो व्यक्ति बातचीत करने के लिए चुने गये। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की ओर से राजे श्री कोठारी बलवन्तसिंहजी साहब और मेहता बुधसिंहजी सा० बद तथा दूसरी तरफ से ला० गोकुलचन्दजी जौहरी और पीरूलालजी चोपडा। मगर श्रावकों के समक्ष सब बातें कहना उचित न समझकर पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज, मुनिश्री मुन्नालालजी महाराज तथा मुनिश्री देवीलालजी महाराज ने एकान्त में वार्तालाप करना तय किया। पाँच छह दिन तक बातचीत होती रही। एकता के लिए जितना किया जा सकता था, वह सब और उससे भी अधिक पूज्यश्री ने किया। एकता के लिए आपने पूरी तत्परता दिखलाई। मगर भावी को वह मंजूर नहीं था। अंत में वार्तालाप असफल हो गया। जनता को सच्ची परिस्थिति का दिग्दर्शन कराकर दोनों महापुरुष अजमेर से पधार गए।

अजमेर की इस कार्रवाई का एक अलग ही प्रकरण बन सकता है। उस समय पूज्यश्री धर्मदासजी म० के सम्प्रदाय के सन्त श्री रतनचन्दजी म० श्री सिरेमलजी म० तथा श्रीसमरथमलजी म० वहाँ मौजूद थे। वे इस प्रकरण से पूरी तरह परिचित हैं, क्योंकि सन्देशवाहक का कार्य उन्होंने ही किया था।

अजमेर से विहार करके पूज्यश्री ब्यावर पधारे और युवाचार्यश्री ने बीकानेर की ओर प्रस्थान किया। पुष्कर से कुछ ही दूर जाने पर आपका मुनिश्री राधालालजी महाराज की अस्वस्थता

के समाचार मिले। राधालालजी महाराज आपके दर्शन के लिए उत्सुक थे। अतः आप पुष्कर से ब्यावर पधारे। मुनि श्रीराधालालजी म० को दर्शन दिये। और पूज्यश्री के दर्शन किये। आपकी इच्छा पूज्यश्री की सेवा में रहकर चौमासा करने की थी, मगर पूज्यश्री के आदेश से आपने बीकानेर की ओर विहार किया। पूज्यश्री बड़े ही दूरदर्शी महापुरुष थे। उन्होंने अपनी मौजूदगी में ही आपको सम्प्रदाय के विशिष्ट क्षेत्रों में युवाचार्य के रूप में भेजना आवश्यक समझा होगा। तदनुसार आप मार्ग में धर्म का उपदेश देते हुए भीनासर पधारे।

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास

आषाढ कृष्णा चतुर्दशी का दिन था। पूज्यश्री जयतारण पधारे थे। अमावस्या के दिन व्याख्यान देते समय अकस्मात् आपके नेत्रों की ज्योति मंद हो गई। सिर में चक्कर आने लगे। पूज्यश्री को मृत्यु का आभास होने लगा। आपने उसी समय उपस्थित साधुओं को संथारा करा देने के लिए कहा। श्रावक और साधु विविध प्रकार से औषधोपचार कर रहे थे किन्तु पूज्यश्री का विश्वास हो गया था कि यह सब उपचार अब वृथा हैं। अन्तिम समय सन्निकट आ पहुँचा है।

उसी समय मुनिश्री हरखचंदजी महाराज को सूचना दी गई। वे उस समय ब्यावर में विराजते थे। लगभग १४-१५ कोस का उग्र विहार करके सुदि १ को नीमाज पधारे और दूसरे दिन सुदि २ को जयतारण पहुँच गए।

आषाढ कृष्णा प्रतिपद को आचार्यश्री ने उपस्थित साधुओं को अपने समीप बुलाया। उनके सिर पर हाथ फेरा और अन्तिम विदा लेते हुए कहा—

'मुनिराजो! संयम को दिपाना। परस्पर प्रीतिपूर्वक रहना। युवाचार्य श्री जवाहरलालजी की आज्ञा में विचरना। वे दृढधर्मी शुद्ध संयमी हैं। और मुझसे भी अधिक तुम्हारी सार सभाल रख सकते हैं। मैं और वे एक ही स्वरूप के हैं, ऐसा समझना। उनकी सेवा करना। पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय को जाज्वल्यमान रखना। शासन की शोभा बढ़ाना। आत्म कल्याण को सदा सामने रखना। खमाता हूँ। क्षमा करना।

पूज्यश्री बोलते बोलते रुक गये। पास में बैठे सन्तों के भी नेत्र आँसुओं से भर गये। मृत्यु का महोत्सव मानने वाले मुनि भी अपने सरल हृदय और सुयोग्य धर्मनायक की यह स्थिति देख कर एक बार विचलित हो उठे। धर्मानुराग ने उन्हें विह्वल कर दिया। उनमें से एक मुनि ने कहा—

'पूज्य महाराज साहब! आपकी आज्ञा हमारे लिए शिरोधार्य रही है और अब भी रहेगी। आप निश्चिन्त हों। हम बालकों को आप क्या खमाते हैं। हम लोग आपको बारम्बार खमाते हैं, जो आपके उपकार के बदले में आपकी कुछ भी सेवा न कर सके। आप महापुरुष हैं। अविनय-आसातना के लिए क्षमा करें।'

क्षमा का आदान प्रदान करने के पश्चात् पूज्यश्री ने अपना मनोयोग सभी ओर से एकदम निवृत्त कर लिया और भी उत्तराध्ययनसूत्र की यह गाथा उच्चारण करने लगे—

सुत्तेसु यावि पडिबुद्ध जीवी, न वीससे पंडिए आसुपण्णे।
घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं भारंड पक्खीव चरेऽप्पमत्तो॥

अर्थात्—सदा जागृत रहकर जीनेवाला विवेकशील और शीघ्रबुद्धि वाला मनुष्य जीवन का भरोसा न करे। काल भयंकर है और शरीर निर्बल है। काल के एक ही आक्रमण से शरीरछिन्न भिन्न हो जाता है। यह जानकर भारंड पक्षी के समान प्रतिक्षण अप्रमत्तभाव से विचरना चाहिए।

पूज्यश्री इस प्रकार स्वाध्याय करके अपनी आत्मा में लीन हो रहे थे। अन्य सन्त भी आपके साथ स्वाध्याय में सम्मिलित हो गये। विषाद के स्थान पर गम्भीर शान्ति का सात्विक वातावरण फैल गया।

आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को व्याधि अधिक बढ़ गई। उस दिन आप प्रतिक्रमण आदि नित्य नियम भी न कर सके। पूज्यश्री कहा करते थे—'जिस दिन मुझसे नित्य नियम न हो सके, समझना यही मेरे जीवन का अन्तिम दिन है।' उपस्थित साधुओं को पूज्यश्री का यह कथन याद था। महान् सन्त की वाणी अन्यथा कम हो सकती है? इससे सन्तों को फिर चिन्ता ने घेर लिया। उसी रात्रि को मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज ने पूज्यश्री को संथारा करा दिया। रात्रि के पिछले प्रहर में, ब्राह्म मुहूर्त्त में पूज्यश्री की आत्मा औदारिक शरीर का बन्धन छोड़कर चली गई।

शोक का पारावार

पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के स्वर्गवास का समाचार फैलते ही सारा समाज शोक सागर में डूब गया। उस समय सबके लिए एक मात्र सहारा युवाचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज थे। श्रीयुत डाह्याभाई ने जैनप्रकाश में उस प्रसंग को नीचे लिखे शब्दों में अभिव्यक्त किया था—

'जिन्होंने हमारे लिए इतना कष्ट उठाया, हम उन्हें जीते जी विशेष आराम न दे सके। उनके दुःख में उनके जीते जी हमने कुछ भाग न लिया। उनकी तप्त आत्मा को शान्ति न दे सके। उनके गुणगान करने की शक्ति को भी कार्यरूप में प्रकट न कर सके। कुछ कृतघ्न व्यक्तियों ने तो उनकी व्यर्थ टीका की। अपना श्रेय करने वाले सुकृत्यों को छोड़कर ऐसे महात्मा, ऐसे सन्त और ऐसे कोमल हृदय दयालु पुरुष को दुःख पहुँचाने की बात जब याद आती है तो हृदय फटा जाता है ।। परन्तु अहोभाग्य है कि आप सरीखे महारथी की जगह एक दूसरे सन्त महात्मा ने स्वीकृत की है और सम्प्रदाय में सेनापति का जोखिम भरा हुआ पद स्वीकार किया है। उन्हें यश प्राप्त हो।

लगभग बत्तीस वर्ष तक प्रव्रज्या पालकर और उसी के बीच बीस वर्ष तक आचार्य पद को सुशोभित करके अनेक भव्य जीवों को प्रतिबोध देकर पूज्यश्री ने जीवन सार्थक किया। आपका जन्म, आपका शरीर, आपकी प्रव्रज्या, आपका आचार्य पद, यह सब अस्तित्व जनसमूह के कल्याण के लिए ही था। आपने अपनी नेश्राय में एक भी शिष्य न करने की प्रतिज्ञा कर ली थी, किन्तु बहुसंख्यक मनुष्यों को दीक्षा देकर उनका उद्धार किया और कई मुनिवरों पर अवर्णनीय उपकार किया। आपका चारित्र अत्यन्त अलौकिक था। आपके गुण अपार थे। उनका वर्णन नहीं किया जा सकता। विद्वान लेखक और शीघ्र कवि वर्षों तक वर्णन करते रहें तो भी आपके चारित्र का यथातथ्य निरूपण होना या आपके गुण समूह का पार पाना अशक्य है। आपके ज्ञान, दर्शन और चारित्र की शुद्धि, आपके पूर्वसंचित शुभकर्मों के उदय का अपूर्व प्रभाव, वर्तमानकालीन शुद्ध प्रवृत्ति आगामी समय के लिए दीर्घदर्शीपना, इतने प्रबल थे कि जिनकी उपमा देना ही अशक्य है। इस पंचमकाल के जीवों में आपकी समानता करने वाला कोई विरला ही व्यक्ति होगा।

तथापि आश्वासन पाने योग्य बात यह है कि आप के समान ही अनुपम आत्मीय गुण, अद्वितीय आकर्षण शक्ति, दिव्य तेज, अपार साहस, महान् आत्मबल, आपकी गादी पर विराजमान वर्तमान आचार्यश्री श्री १००८ श्री पण्डित रत्न पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साहब में अधिक अंश में विद्यमान हैं। हमारी यह हार्दिक अभिलाषा है कि आपके ज्ञान, दर्शन और चारित्र के पर्यायों में समय-समय पर अधिकाधिक अभिवृद्धि होती रहे और वे निरामय तथा दीर्घ आयुष्य भोग कर जैन धर्म की उदार और पवित्र भावनाओं का प्रचार करने के अपने कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त करें।

इसी तरह अनेक जाहिर पेपरों में उनका विवरण प्रकाशित हुआ। कान्फ्रेंस की जनरल कमेटी की बैठक हुई, उसमें भी यह प्रस्ताव आया और समाज के कर्णधारों ने खड़े होकर पास किया तथा जैन प्रकाश में मुनियों का नाम आना बन्द था परन्तु कमेटी ने खास तौर से इसे प्रकाशित कराया।

भीनासर मे स्वर्गवास-समाचार

पूज्यश्री का स्वर्गवास होने के समाचार युवाचार्य मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को भीनासर म प्राप्त हुए। इस आकस्मिक अवमान स आपको बहुत दुख हुआ। अभी शोक का भार हलका न हुआ था कि आप आचाय घोषित कर दिए गए। समाज की सारी व्यवस्था का भार आप पर आ पड़ा। इतने दिन पूज्यश्री की छत्रछाया थी। इसलिए सब कुछ करत हुए भी आप निश्चिन्त थे। अब सारा उत्तरदायित्व आप पर आ पड़ा।

महापुरुषो के जीवन म ऐस अवसर बहुत आया करते हैं, जब एक तरफ वे शोक क आवेग स दबे रहते हैं दूसरी तरफ महान् उत्तरदायित्व आ पड़ता है। उस समय शोक का भार मन ही मन दबाकर उन्हे कर्त्तव्य क मार्ग पर अग्रसर होना पड़ता है। मन मसोस कर, विवश होकर परिस्थिति का स्वीकार करने का यह अवसर बड़ा ही करुणाजनक होता है। किन्तु महापुरुष ऐस विकट काल मे भी कायर नही होत। यह उनकी परीक्षा का समय होता है।

जिस दिन पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार भीनासर पहुँचा, उस दिन आपके तेला की तपस्या थी। आपने अपनी तपस्या लम्बी करदी और आठ दिन का उपवास कर लिया। आठ दिन बाद भी आप अपनी तपस्या कुछ दिन और बढ़ाना चाहते थे मगर श्रीसंघ के अत्यन्त विनम्र और करुण आग्रह के कारण आपने पारणा कर लिया।

यहाँ स हमारे चरितनायक पर सम्प्रदाय का गुरुतर उत्तरदायित्व आता है। आप अपने जीवन के एक नवीन अध्याय म प्रवेश करते हैं।

तीसरा अध्याय

आचार्य-जीवन

उनतीसवा चातुर्मास १९७७

अपने परमोपकारक आचार्य महाराज के स्वर्गवास का समाचार पाकर मुनिश्री शोक से अभिभूत हो गये। शोकाकुल और उपवास की अवस्था मे जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज बीकानेर पधारे और पूर्व निश्चयानुसार संवत् १९७७ का चौमासा आपने बीकानेर मे ही किया।

गुरुकुल की योजना

महाराष्ट्र प्रांत के दीर्घकालीन प्रवास के समय विभिन्न समाजो के नेता और कार्यकर्ता पूज्य श्री जवाहरलाल जी म सा के सम्पर्क में आये थे। आपने जैन समाज की अवनति के कारणो पर गंभीर विचार किया। जैनधर्म सरीखे श्रेष्ठ धर्म को प्राप्त करके भी जनसमाज विभिन्न दृष्टियो से और अनेक क्षेत्रो मे पिछड़ा हुआ क्यो है? इस प्रश्न का आपने समाधान प्राप्त कर लिया था। आपके विचार से अज्ञान ही सब प्रकार की अवनति का कारण था। बहुमूल्य वस्तु पास मे होने पर भी जो व्यक्ति उसका वास्तविक मूल्य नही समझता उसके लिए उस वस्तु का कोई महत्व ही नही होता। जैन समाज की यही स्थिति है। जैनधर्म सरीखा अनमोल रत्न पाकर के भी उसका असली मूल्य न समझने के कारण जैन समाज का आध्यात्मिक विकास नहीं हो पा रहा है।

अज्ञानता निवारण का एकमात्र उपाय सुशिक्षा का प्रचार करना है कि जिसके विषय मे पूज्यश्री के विचार अत्यन्त गंभीर और सुलझे हुए थे। शिक्षा का उद्देश्य प्रकट करते हुए आपने फरमाया था—

'मनुष्य अनन्त शक्ति का तेजस्वी पुंज है। मगर उसकी शक्तियां आवरण मे लिपटी है। उस आवरण को हटाकर विद्यमान शक्तियो को प्रकाश मे लाना शिक्षा का ध्येय है। मगर शिक्षा शक्तियों के विकास एवं प्रकाश मे ही कृतकृत्य नही हो जाती। "शक्तियो के विकास के साथ उसका एक और महान् कर्तव्य है। वह यह कि शिक्षा मनुष्य को ऐसे सांचे मे ढाल दे कि वह अपनी शक्तियो का दुरुपयोग न करके सदुपयोग ही करे।

'बहुत कम माता पिता शिक्षा के वास्तविक महत्व को समझते हैं। अधिकांश माता पिता शिक्षा को आजीविका का मददगार अथवा धनोपार्जन का साधन मान कर ही अपने बालको को शिक्षा दिलाते हैं। इसी कारण वह शिक्षा के विषय मे कंजूसी करते हैं। लोग छोटे बच्चो के लिए कम वेतन वाले, छोटे अध्यापक नियत करते है किन्तु यह बहुत बड़ी भूल है। छोटे बच्चो मे अच्छे संस्कार डालने के लिए वयस्क और अनुभवी अध्यापक की आवश्यकता होती है।'

इस प्रकार पूज्यश्री समय समय पर शिक्षा की महत्ता और आवश्यकता का प्रतिपादन करते थे। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास हो जाने के बाद बीकानेर पधारने पर आपने शिक्षा पर बहुत जोर दिया। आपने व्याख्यान मे फरमाया—किसी महापुरुष का स्वर्गवास हो जाने पर उसकी स्मृति कायम रखने के लिए लोग स्मारक बनाते हैं, ईंट और पत्थरो का बना

हुआ स्मारक स्वय अस्थिर होता है। किसी त्यागी और धम के सच्चे सेवक का स्मारक ऐसा न होना चाहिए। त्यागी महात्मा का सबस बडा स्मारक, जो उसके अनुयायी बना सकते हैं, वह है उस महात्मा के काय का पूरा करना। जिस बात के लिए उस महापुरुष न अपना सारा जीवन लगा दिया, जिस ध्येय की पूर्ति के लिए अनेक कष्ट सह उस पूरा करन का प्रयत्न करना ही उनकी सब से बडी सेवा है। महापुरुषो को अपन जीवन तथा नाम से भी बढकर काय प्रिय होता है। वे मान मर्यादा तथा प्रतिष्ठा के भूखे नही होत। इन सब का ठुकरा करके भी वे यही चाहत हैं कि किसी प्रकार उनका काय पूरा हो जाय।

स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज न अपना जीवन धम प्रचार तथा समाजहित म लगाया था। उनकी सदा यही अभिलाषा रहती थी कि किसी प्रकार समाज की उन्नति हो। प्रत्यक व्यक्ति धम का सच्चा स्वरूप समझे। समाज की उन्नति का पहला पाया है—अज्ञान दूर करना। धम का सच्चा स्वरूप समझने की योग्यता भी ज्ञानप्राप्ति के द्वारा ही आ सकती है। यदि आप लोग समाज म फैली हुई अज्ञानता को दूर करने का प्रयत्न करेंगे तो स्वगस्थ पूज्यश्री की आत्मा को सतोष होगा। जन समाज म साधनो की कमी नही है। आप लोग सब तरह स समथ है। किन्तु प्रयोग म बिना लाये कोरे साधन क्या कर सकत है? समाज म ज्ञान का प्रचार करना आप सभी का कत्तव्य है। स्वर्गीय पूज्यश्री के प्रति भक्ति प्रदर्शित करन का यही उत्तम माग है।'

स्वर्गीय पूज्यश्री के प्रति भक्ति तथा वर्तमान पूज्यश्री क उपदेश से प्रेरित होकर बीकानेर श्रीसघ ने एक विशाल शिक्षण सस्था के रूप मे पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का स्मारक बनाना निश्चित किया। मुख्य मुख्य श्रीसघो के अग्रणी व्यक्ति निमन्त्रित किये गय। लगभग दो सौ सज्जन बाहर से आय, जिनम प्राय सभी स्थानो के प्रमुख व्यक्ति थे।

ता० ८ अगस्त १९२० क दिन आमन्त्रित सज्जनो तथा बीकानेर एव भीनासर श्रीसघो की एक सभा हुई। सभापति क आसन पर सेठ दुलभजी त्रिभुवन झवेरी आसीन हुए।

पूज्यश्री के वियोग पर खेद और विचाराधीन आयोजन की सफलता की कामना प्रकट करन के लिए आये हुए तारो और पत्रो का वाचन होने के पश्चात पूज्यश्री की स्मृति म एक विशाल शिक्षासस्था की योजना पेश की गई। विचार विनिमय के पश्चात नीचे लिखे प्रस्ताव सवसम्मति से स्वीकृत किय गये—

प्रस्ताव पहला

(क) निश्चय हुआ कि सघ की उन्नति के लिए एक गुरुकुल खोला जाय और उसका नाम 'श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जन गुरुकुल' रखा जाय।

(ख) इस सस्था के लिए अनुमानत पाच लाख रुपयो की आवश्यकता है, जिसम दो लाख का चदा वसूल हो जान पर काय प्रारभ कर दिया जाय।

(ग) कम से कम रु० २१०००) का विशेष दान करने वाला इस सस्था का सरक्षक (Patron) समझा जावगा। सस्था की प्रबन्धकारिणी का सभापति सरक्षको मे से ही चुना जायगा।

(घ) रु० ११०००) ग्यारह हजार देने वाले गृहस्थ इस सस्था के सहायक गिन जावेंगे। और उनमे से सस्था की प्रबन्धकारिणी का उपसभापति या कोषाध्यक्ष चुना जावगा।

(ङ) रु० ५०००) पाच हजार या ज्यादा और रु० ११०००) स कम दने वाले व्यक्ति इस सस्था के शुभेच्छुक (Sympathisor) गिने जाएँगे और उनम से भी मन्त्री आदि पदाधिकारी चुने जा सकेंगे।

(च) रु० २०००) या इससे अधिक प्रदान करने वाले गृहस्थ इस सस्था के सभासद माने जाएँगे और उनका चुनाव प्रबन्धकारिणी म हो सकेगा।

(छ) चन्दा प्रदान करने वाल गृहस्थो के नाम शिलालेखो म गुरुकुल भवन के दरवाजे पर मय चन्दे की तादाद के प्रकट किए जाएँगे।

(ज) प्रबन्धकारिणी अपनी इच्छानुसार पाच अन्य विद्वान् गृहस्थो का सलाह लेन क लिए शरीक कर सकेगी और उनके मत गणना म आ सकेंगे उन पर चन्दे का काई प्रतिबन्ध न रहेगा।

नोट—इस गुरुकुल का उद्देश्य समाज की भावी सन्तान को धमपरायण, नीतिमान्, विनयवान्, शीलवान् व विद्वान् बनान का हागा।

प्रस्ताव दूसरा

बीकानेर श्रीसंघ न प्रकट किया कि यदि बीकानेर शहर के बाहर गुरुकुल खोला जाय ता इस समय रु० १२००००) की रकम यहां के संघ की ओर स लिखी जाती है। चन्दा बढ़ाने का प्रयत्न जारी रहेगा। दो लाख रुपए इकट्ठ होने पर कार्यारम्भ किया जायगा।

उक्त काय के लिए सभा की आर स बीकानेर श्रीसंघ का हार्दिक धन्यवाद दिया जाता है कि जिन्होने उत्साहपूर्वक इतनी बड़ा रकम प्रदान कर ऐसी संस्था की बुनियाद डालने का साहस किया कि जिसकी परम आवश्यकता थी।

प्रस्ताव तीसरा

इस उपयोगी काय मे सलाह देन के लिए तकलीफ उठाकर बाहर से पधारने वाल सज्जनो को यह सभा धन्यवाद देती है।

प्रस्ताव चौथा

श्रीयुत दुर्लभजी भाई के सभापतित्व मे यह काय सफलतापूर्वक किया गया, अतएव यह सभा उनका उपकार मानती है।

जावरे वाले सन्तो क अलग हो जाने स उन दिनों समाज म कुछ अशान्ति छाई हुई थी। उस समय उनकी ओर से एक ट्रैक्ट भी निकला था। उसका जवाब दन के लिए इधर के भी श्रावक तयार हुए किन्तु शान्ति रक्षा के उद्देश्य से पूज्य श्री ने अपने श्रावको का मनाह कर दिया। इस विषय म कमेटी न नीचे लिखे अनुसार प्रस्ताव पास किया—

प्रस्ताव पाचवा

आपस म निन्दा युक्त लेख छपने स समाज में पूरी हानि होती है। हाल म जो सत्या सत्य कमेटी जावरे की तरफ से ३६ कलमों का ट्रैक्ट निकला है, उसका यथोचित उत्तर दिया जाना स्वाभाविक है। मगर आज रोज श्रीमान् परमपूज्य श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहब ने शान्तिपूवक ऐसा उपदेश व्याख्यान द्वारा विस्तारपूवक फरमाया कि श्रीमान् सद्गत पूज्य महाराज साहेब के उपदेशामृत व श्री जनधम के मूल क्षमाधम को अंगीकार करके श्रीमान् के भक्तो को शान्ति ही रखनी चाहिए और छाप द्वारा उत्तर प्रत्युत्तर नहीं करना चाहिए। महाराज साहब के इस फरमान को सबने सहर्ष स्वीकार किया। यदि किसी की तरफ से भविष्य म भी निन्दायुक्त लेख प्रकट हो और न्यायपूवक उत्तर देना ही जरूरी समझा जावे तो नीचे लिखे पाच मेम्बरों के नाम स उसका प्रतिकार किया जाय—

(१) नगर सेठ नन्दलालजी बाफणा उदयपुर।
(२) सेठ मेघजी भाई थोभण, बम्बई।
(३) सेठ कमीरामजी बांठिया, भीनासर।
(४) सेठ नथमल जी चोरडिया, नीमच।
(५) सेठ दुलभ जी भाई जौहरी, जयपुर।

सभा की बैठकें तारीख ८ से लेकर १० तक लगातार तीन दिन होती रही। बीकानेर श्रीसंघ में अपूर्व उत्साह था। त्याग की भावना जागृत हो रही थी। लक्ष्मी की कृपा तो इस नगर पर सदा से रही है। चन्दे का चिट्ठा भरा गया। श्रीमन्तों ने बड़ी बड़ी रकम भरीं। अनायास ही उस चिट्ठे में केवल बीकानेर और भीनासर वालों की तरफ से दो लाख रुपए से ऊपर भर गए। जिन से एक विशाल संस्था की नींव रखी जा सकती थी।

किन्तु स्थानकवासी समाज के भाग्य में ऐसे महत्वपूर्ण कार्य का होना बदा न था। चातुर्मास समाप्त होते ही पूज्यश्री को मेवाड़ और उस के बाद दक्षिण की ओर विहार करना पड़ा। शारीरिक अस्वास्थ्य और दूसरे कारणों से फिर सात वर्ष तक इधर पदार्पण न हो सका। किसी योग्य प्रभावशाली कार्यकर्ता के अभाव में वे रकमें दाताओं के पास ही पड़ी रहीं। समय बीतने पर किसी के विचार पलट गए और उसने रकम देना नामंजूर कर दिया। किसी की आर्थिक स्थिति डावांडोल हो गई, इसलिए उस के पास देने को कुछ न रहा। परिणाम स्वरूप गुरुकुल की स्थापना न हो सकी।

संवत् १९८४ का चातुर्मास जब पूज्यश्री ने फिर भीनासर में किया तो उस योजना की बात फिर उठी। कुछ सज्जनों ने अपने वचन का पालन करते हुए चन्दे में लिखाई हुई रकम भर दी। एक लाख के लगभग इकट्ठा हो गया। उस से 'श्री श्वे० साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था' की स्थापना हुई। उसके द्वारा शास्त्रोद्धार हुन्नरशाला, एवं सहायता का कार्य प्रारम्भ किया गया। आजकल यह संस्था गावों में कई स्कूल चला रही है तथा असमर्थ बहिनों और भाइयों की सहायता कर रही है। इसका पूरा विवरण संवत् १९८४ के बीकानेर चातुर्मास में दिया जाएगा।

साम्प्रदायिक साधुसम्मेलन

आचार्य पद स्वीकार करने के पश्चात् पूज्यश्री सम्प्रदाय के साधुओं को एकत्र करके भावी उन्नति की रूपरेखा निर्धारित करना चाहते थे। उनकी यह भी इच्छा थी कि साधु समाचारी पुनः व्यवस्थित कर ली जाय और व्यवस्था संबंधी नियम सब को सुना दिए जाएँ। स्व० पूज्यश्री का जब स्वर्गवास हुआ तब चातुर्मास आरंभ होने में सिर्फ ग्यारह दिन शेष थे। इतने अल्प समय में सब साधु न एकत्र हो सकते थे और न भिन्न भिन्न क्षेत्रों में चौमासा करने के लिए वापिस लौट सकते थे। अतः चौमासा समाप्त होने पर पूज्यश्री ने सम्प्रदाय के साधुओं का सम्मेलन करना निश्चित किया।

सब साधुओं की अनुकूलता के लिहाज से सम्मेलन का स्थान उदयपुर उपयुक्त समझा गया। सब को सूचना दे दी गई। विहार करके चालीस संत उदयपुर में एकत्र हो गये। मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज पूज्यश्री की सेवा में रहना चाहते थे। और पूज्यश्री भी उन्हें सेवा में रखना चाहते थे। अतः आप दो ठाणे से दक्षिण प्रान्त से विहार करके उदयपुर पधार गये।

पूज्यश्री बीकानेर का चौमासा पूर्ण होते ही स्थान स्थान पर धर्म का प्रचार करते हुए उदयपुर पधारे। उदयपुर पधार कर आपने साधुसमाचारी संबंधी तथा दूसरी कलमें बांधीं। सभी संतों ने पूज्यश्री की आज्ञा शिरोधार्य की।

मिल के वस्त्रों का परित्याग

उन्हीं दिनों पूज्यश्री को मालूम हुआ कि मिल में बनने वाले वस्त्रों में चर्बी लगाई जाती है। वस्त्रों को मुलायम और चमकीला बनाने के लिए की जाने वाली इस घोर हिंसा की बात जानकर पूज्यश्री को आश्चर्य और खेद हुआ। उन्होंने मिल के वस्त्रों को सर्वथा हेय समझा और उनका त्याग कर दिया। आपने खद्दर के वस्त्र धारण किये।

पूज्यश्री यह देखकर चकित हुए आपकी समझ मे न आया कि गाय, भैंस और ग्वाले का अपराध क्या है ? आखिर आपने उस ग्वाले से कारण पूछा। उसने बतलाया—महाराज ! यह भूमि राज्य की है। उसने (पीटने वाले ने) अपने पशु चराने के लिए यह ठेके पर ले ली है। मैं अपने पशु लेकर इधर आगया। अनजान होने के कारण मुझे इसकी सीमा का ध्यान नहीं था। इसकी सीमा म ढोरो का चला जाना ही मेरा और इन मूगे पशुओ का दोष है।

यह बात पूज्यश्री को बहुत खटकी। भारत के प्राचीन राजवश गोभक्त थे। गो सेवा को अपना परमधर्म समझते थे। मगर आज जगलात के महकमे ने घास का एक एक तिनका बेचकर पैसे इकट्ठा करने की नीति अपनाई है। पशुओं के लिए गोचरभूमि छोड़ना क्या राज्य का कर्त्तव्य नहीं है ? ससार का असीम उपकार करने वाले पशु क्या पेट भर घास के भी अधिकारी नहीं हैं ?

रतलाम-नरेश जब व्याख्यान में आये तो पूज्यश्री ने इस घटना का उल्लेख करते हुए गोचरभूमि न होने की हानियां भी प्रकट की। रतलाम नरेश पर इसका भी बड़ा प्रभाव पड़ा और आपने आभार मानते हुए आश्वासन भी दिया।

जावरा वाले सन्तो के साथ पहले से मतभेद होने के कारण पूज्यश्री को अशान्ति होने की सम्भावना थी। उसे रोकने के लिए आपने अपने सम्प्रदाय वालो से पहले ही यह प्रतिज्ञा करवा ली थी कि दूसरी ओर से चाहे जैसा व्यवहार हो, मगर अपनी ओर से उसका कोई वैसा उत्तर नही दिया जायगा। परिणामस्वरूप कुछ अशान्तिप्रिय लोगों की ओर से छेड़छाड होने पर भी इस तरफ का श्रीसघ शान्त रहा। यहा तक की पूज्यश्री पर भी कई प्रकार के आक्षेप करने से लोग न चूके मगर सागरवर गभीर पूज्यश्री एकदम शान्त रहे और अपने उत्तेजित श्रावकों को भी शांति रखने का उपदेश देते रहे।

चौमासे के पश्चात् पू०श्री धर्मदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनिश्री चम्पालालजी म० रतलाम पधारे। उन्होंने चातुर्मास के वातावरण से परिचित होकर और पू०श्री का शान्तिप्रेम देखकर आश्चर्य प्रकट किया। आपने एक दिन अपने व्याख्यान मे फरमाया—'पूज्यश्री पर कई प्रकार के निराधार आक्षेप किये गये। भोली और अज्ञान बाइयां किसी के बहकाने से पूज्यश्री की व्याख्यान सभा के पास से निन्दात्मक गीत गाती हुई निकली। उन्हें सुनकर श्रावकों में उत्तेजना फैली। कई बार वातावरण में क्षोभ भी उत्पन्न हो गया मगर आचार्य महाराज सदैव जनता को शान्त करते रहे। वे मुंह तोड़ उत्तर दे सकते थे मगर शान्तिरक्षा के उद्देश्य से उन्होंने कभी एक शब्द नहीं कहा। ऐसे अवसर पर धैर्य रहना कठिन है मगर आचार्य महोदय की शान्तिप्रियता प्रशसनीय है। ऐसे मौके पर मेरा शान्त रहना भी कठिन सा हो था। आचार्य महोदय ने जो शान्ति रक्खी है वह उन्ही के योग्य है। उससे दूसरों को शिक्षा लेनी चाहिए। आपने धर्म को बदनाम होने से बचा लिया है।'

इस चातुर्मास म मुनिश्री सुन्दरलालजी म० ने लम्बी तपस्या की थी। तपस्या के पूर के दिन राज्य की ओर से अगता पलाया गया। अर्थात् जीव हिंसा बन्द रखनेकी आज्ञा जारी की गई।

इस चातुर्मास म पूज्यश्री ने चर्बी वाले वस्त्रों के निषेध पर खूब जोर दिया। परिणाम स्वरूप बहुसख्यक लोगो ने त्याग किया। जिन्होंने जावरा म इस प्रकार के उपदेश से खतरा अनुभव किया था उन सेठ वर्द्धमानजी पीतलिया ने भी सपत्नीक चर्बी लगे वस्त्रों का परित्याग किया। इसी चातुर्मास म श्री श्वे० स्था० जैन पूज्य श्री हुक्मचन्दजी म० की सम्प्रदाय के हितेच्छु श्रावक मडल की स्थापना हुई।

फिर दक्षिण की ओर

रतलाम का चौमासा समाप्त होते ही पूज्यश्री को विदित हुआ कि दक्षिण म मुनि श्रीलाल चन्दजी म० रुग्ण अवस्था म हैं और दर्शन करना चाहते हैं।

यद्यपि इधर आपके कई आवश्यक काम शेष रह गये थे, फिर भी भक्ति की इच्छा को टालना आपके लिये अशक्य हो गया। आपने समाचार मिलते ही बिना विलम्ब महाराष्ट्र की ओर प्रस्थान कर दिया।

रतलाम से विहार करके पूज्यश्री कोद, बिड़वाल, कढोद धार, नालछा, माडव, खलघाट, निमरानी और ठीकरी होते हुए खुरमपुरा पहुँचे।

उग्र परीषह

खुरमपुरा मे श्रावक का एक भी घर नहीं था। दूसरे लोगो को न गोचरी के नियमो का पता था न जैन साधुओ के विषय में कोई जानकारी थी। अतएव शुद्ध आहार पानी मिलना कठिन हो गया। उस समय पूज्यश्री के साथ नौ संत थे। आहार पानी की बेहद कठिनाई का विचार कर मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने सीदवा, सिरपुर की ओर विहार किया और पूज्यश्री अन्य चार संतो के साथ अलग हो गये।

हणुतमलजी महाराज का स्वर्गवास

मुनिश्री हणुतमलजी म० कुचेरा (मारवाड) निवासी भण्डारी ओसवाल थे। गृहस्थावस्था मे किनारी गोटे का व्यापार करते थे। वे एक आदर्श और प्रामाणिक व्यापारी थे। उन्होंने एक आना फी रुपया से अधिक कभी मुनाफा नही लिया। कभी जकात की चोरी भी नही की। जकात के थानेदारो ने कई बार थोडी सी रिश्वत लेकर बहुत से माल पर जकात छोड देने का प्रलोभन दिया किन्तु आप कभी सहमत नही हुए। इस प्रकार के प्रयत्नो को वे अत्यन्त जघन्य समझते थे। उन्होंने एक पैसे के लिए भी कभी अप्रामाणिक व्यवहार नहीं किया। बहुत बडे धनाढ्य न होने पर भी अपनी प्रामाणिकता की प्रभूत पूँजी के प्रभाव से बडे बडे नगरो में आपकी खूब प्रतिष्ठा थी। जब, जहा से और जितना माल वे चाहते, ला सकते थे। बडे व्यापारी आपको उधार माल देने मे किसी प्रकार की हिचकिचाहट नही करते थे। आसपास में आपका काफी सम्मान था। आपने हजारो की सम्पत्ति न्याय नीति से कमाई थी। अन्त में वह सारी सम्पत्ति त्यागकर प्रबल वैराग्य के साथ मुनिश्री मोतीलालजी महाराज के पास दीक्षित हुए। दीक्षा लेने के बाद आपके परिणामों मे उत्तरोत्तर निर्मलता आती गई। आपने संयम में किसी प्रकार का दोष नही आने दिया।

खुरमपुरा में आप पूज्यश्री के साथ थे। वहा ठहरने के लिए कोई अच्छा मकान भी नहीं मिला था। पौष का महीना था और कडाके की सर्दी पड रही थी। तिस पर ठडी हवा भी चल रही थी। ऐसे अवसर पर एक खुला मंदिर उतरने के लिए मिला। रात्रि के समय मुनिश्री गणेशीलालजी म० ने और आपने पूज्यश्री की सेवा की। पूज्यश्री विश्राम करने लगे और आप मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज की सेवा करने लगे। एकाएक आपकी छाती में दर्द उठा और वह बहुत तीव्र हो गया। साथ ही ज्वर भी चढ आया। रात्रि के समय और कोई उपाय नही किया जा सकता था अत मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने आपकी छाती दबाई। मगर उसका कोई असर न हुआ। दर्द और साथ ही बुखार बढता चला गया। दोनो मुनियो को ऐसा प्रतीत होने लगा कि अब आराम होना कठिन है। मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने उसी समय आपको आलोयणा आदि करवा दी। मुनि श्रीहणुतमलजी म० ने शुद्ध हृदय से अपने जीवन की आलोचना की। मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज आपको पास के एक कच्चे मकान मे ले गये और रात्रि को दो बजे तक उनके पास बैठ रहे। इसके बाद तपस्वी मुनि श्रीसुन्दरलालजी म० ने उन्हे विश्राम करने के लिए कहा और वे स्वयं रात भर उनके पास बैठे रहे।

उस खुले मंदिर में निर्वाह होना कठिन समझ कर प्रातःकाल होने पर मुनि श्रीगणेशीलालजी म० दूसरे कुछ सुविधाजनक स्थान की खोज करने गये। नजदीक ही एक कपास की जीनिंग

फैक्टरी थी। उसके मैनेजर कोई अहमदावादी मंदिरमार्गी जैन दशा श्रीमाली सज्जन थे। मुनिश्री ने ज्यों ही जाकर उनसे स्थान की याचना की तो उन्होंने एक कच्ची कोठरी बता दी। कोठरी में नीचे धूल का मोटा पलस्तर था और ऊपर कवेलू की छत थी। लेकिन उसमें विशेषता यही थी कि कोठरी बंद की जा सकती थी और इस तरह हवा से कुछ बचाव हो सकता था। कोठरी का मिल जाना गनीमत समझ कर श्रीहणुतमलजी म० को वहां लाया गया।

मगर आहार पानी और बीमारी की समस्या कठिन से कठिनतर होती जाती थी। इधर आहार पानी दुर्लभ था और उधर बीमारी के कारण आगे विहार होना कठिन था। उस गांव में चार घर अग्रवालों के और चार घर मरहठे ब्राह्मणों के थे। कुल पच्चीस घरों का छोटा सा गांव था। मुश्किल से दस घर ऐसे होंगे, जहां भिक्षा मिल सकती थी।

ऐसे विकट प्रसंग का सामना करने के लिए पूज्यश्री ने तथा तपस्वी जी ने एकान्तर उपवास करना आरम्भ किया। निमोनिया में लाभदायक होने के कारण हणुतमलजी म० को तीन दिन का उपवास कराया गया। इससे बीमारी में कुछ अन्तर पड़ा मगर कमजोरी ज्यादा बढ़ गई।

पूज्यश्री अपना कष्ट सहन में जितने कठोर थे, दूसरों के कष्ट के लिए उतने ही कोमल हृदय थे। आपसे सन्तों का यह दैनिक कष्ट नहीं देखा गया। बीमार मुनि की चिकित्सा के साधनों का अभाव भी आपको खटका। अतएव आपने विचार किया—'आसपास में अगर कोई दूसरा गांव हो जहां मुनि श्रीहणुतमलजी की बीमारी तक ठहरने की और उपचार की सुविधा हो सके तो वहां जाना उचित होगा। इस स्थान पर तो निर्वाह होना कठिन है।'

परिणाम स्वरूप मुनि श्रीगणेशीलालजी म० तथा मुनि श्रीसूरजमलजी म० दूसरा गांव देखने के लिए गए। चार कोस दूर एक बड़ा गांव था। लगभग १२०० घरों की आबादी थी। छह घर दिगम्बर जैनों के भी थे। दोनों मुनि वहां पहुंचे और एक दिगम्बर जैन सेठ के पास जाकर उन्होंने ठहरने के लिए स्थान मांगा। सेठजी ने पहले कभी श्वेताम्बर साधुओं को नहीं देखा था। अतः पहले पहल तो उन्होंने आनाकानी की किन्तु सारी बात समझाने पर एक खाली दुकान में उतरने के लिए जगह दे दी। दुकान क्या थी, चूहों का गांव ही समझिए जिसमें उनके बहुसंख्यक बिल विद्यमान थे।

गांव में एक घर विवाह था। प्रायः सभी दिगम्बर भाई उसी घर भोजन करते थे। अतएव सभी घरों में घूमने पर भी बहुत थोड़ा आहार मिला। अजैनों के घर से ज्वार की दो रोटियां और थोड़ा सा गर्म पानी मिला।

शाम के समय मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज का उपदेश हुआ। कुछ लोग उपदेश सुनने के लिए इकट्ठे हो गये। उनमें एक स्कूल मास्टर भी थे। उपदेश का ठीक प्रभाव पड़ा।

दुकान में चूहे इतने अधिक थे कि रात्रि के समय विश्रान्ति लेना असम्भव सा था। अतः मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज ने विश्राम के लिए स्कूल मास्टर साहब से मकान मांगा। मास्टर साहब ने स्थान तो दे दिया मगर शर्त यह रक्खी कि सुबह होने पर—स्कूल के समय से पहले पहले मकान खाली कर दिया जाय।

रात भर स्कूल में विश्राम करके सुबह दोनों मुनियों ने आहार पानी की सुविधा देखने के लिए गांव में घूमना आरंभ किया। थोड़ा सा आहार और कुछ पानी मिल गया। वहां इतनी सुविधा नहीं थी कि पांच साधु वहां कुछ दिनों तक ठहर सकें। अन्त में दोनों साधु खुर्रमपुरा लौट गये।

मुनिश्री हणुतमलजी म० की बीमारी फिर बढ़ने लगी। पूज्यश्री ने तथा अन्य साधुओं ने कल्पमर्यादा एवं सुविधा के अनुसार सभी संभव उपचार किये। पूज्यश्री कभी-कभी स्वयं गर्म

जल मागकर लाते और अपने हाथ मे सेवा करते। तपस्वीजी ठीयरी गांव से औषध लाते। अन्य मुनि भी रात दिन यथायोग्य उपचार मे लगे रहते। किन्तु नौवें दिन बीमारी बढ गई। ग्लान मुनि की मुखाकृति बदल गई। चेहरे पर भावी मृत्यु की अस्पष्ट छाया पडी दिखाई देने लगी। जीवित रहने की आशा क्षीण हो गई। पूज्यश्री ने उनके परिणामों को स्थिर रखने के लिए अंतिम उपदेश देना आरम्भ किया। हणुतमलजी महाराज ने सथारा करने की इच्छा प्रकट की।

मुनिजी की बीमारी का समाचार कई स्थानो पर पहुँच गया था। आठवें दिन जावरा के श्रीप्यारचन्दजी डफरिया तथा एक दूसरे सज्जन वहा पहुँच गये। उन्होंने तथा सभी सन्तो ने सथारा करा देने की सम्मति दी लेकिन पूज्यश्री शीघ्रता नही करना चाहते थे। आपने वहा के कुछ समझदार व्यक्तियो से परामर्श किया। सभी ने एक ही बात कही—'अब मुनिजी के बचने की कोई आशा नही है। परलोक सुधार के लिए उचित अन्तिम क्रियाएं करा देना चाहिए।'

इस प्रकार सब का एक मत जानकर पूज्यश्री ने चार बजे दिन को तिविहार सथारा करा दिया। उसके बाद फिर अवस्था बिगडन देखकर चौविहार करा दिया। दूसरे दिन ग्यारह बजे मुनि श्रीहणुतमलजी महाराज ने स्वर्ग के लिए प्रस्थान कर दिया। आपकी परिणाम धारा अन्त तक निर्मल रही। पूज्यश्री पास मे बैठकर अन्त तक ससार की असारता, जीवन की क्षण भगुरता और धर्म की उपादेयता का उपदेश देते रहे।

गांव की जनता ने स्वर्गस्थ मुनिश्री की धर्म दृढता और कष्टसहिष्णुता की बडी प्रशसा की और विधिपूर्वक अंतिम सस्कार किया।

खुरमपुरा मे इस प्रकार कष्टमय काल व्यतीत करके पूज्यश्री ने वहा से विहार किया। लालचन्दजी महाराज के नजदीक शीघ्र पहुचना चाहते थे अत आप जल्दी जल्दी विहार करने लगे। जिस गाव के समीप सूर्य अस्त होने को होता वहीं ठहरते। रास्ते के ग्रामो मे रूखा सूखा थोडा बहुत जो भी आहार पानी मिलता उसी पर निर्वाह करते। इस प्रकार शीघ्रतापूर्वक विहार करते हुए पूज्यश्री बालसमद पधारे।

बालसमद मे ठहरने के लिए कोई स्थान नहीं मिला। अन्त मे पूछताछ करने पर एक धर्मशाला का पता चला। पूज्यश्री वहा पहुंचे। धर्मशाला एक प्रकार से पशुशाला थी। इधर-उधर से गाडीवान आते। अपने बैल उसमे बाध देते और आग तापते तापते रात बिताकर चल देते। गोबर और पेशाब के कारण वहा बेहद डास मच्छर और जवे थे। जहा-तहा गोबर और पेशाब भरा घास बिखरा था। जो बहुतो का है वह किसी का भी नही है। ऐसी स्थिति मे धर्मशाला की सफाई कौन करता? सार्वजनिक स्थानो को मला कुचला करने की प्रवृत्ति शिष्ट भारतीय जनता मे भी पाई जाती है। फिर इस धर्मशाला मे तो अशिक्षित ग्रामीण और उनके पशु ही ठहरते थे। वहा सफाई का क्या काम?

थोडी देर तक तो पूज्यश्री धर्मशाला मे बैठे रहे मगर रात्रि व्यतीत करना वहा असभव जान पडा। आपने मुनि श्रीगणेशीलालजी म० को दूसरे स्थान की खोज करने के लिए भेजा। मुनिश्री बहुत घूम फिर मगर कोई उपयुक्त स्थान न मिला। अलबत्ता एक गृहस्थ के घर के बाहर का चबूतरा दिखाई दिया। चबूतरे का मालिक कहीं बाहर गया था। मुनिश्री ने घर-मालिक की पुत्र वधू से चबूतरे पर रात विश्राम करने की आज्ञा मांगी। वह आनाकानी करने लगी। वहा के लोगो की धारणा थी कि चोर और डाकू साधु के वेष मे फिरते हैं और मौका पाकर हाथ साफ करके चलते बनते हैं।

मुनिश्री ने उस बहिन को बहुत समझाया। कहा—हमारे गुरुजी बहुत बडे महात्मा हैं। वे अपने पास पैसा टका कुछ नहीं रखते। बड़े बड़े लखपति और करोडपति उनके चरणो मे गिरते हैं। वे अपने एक भक्त रोगी साधु का दर्शन देने के लिए उग्र विहार करते हुए दक्षिण की ओर

जा रहे हैं। बहिन ! तुम अपना अहो भाग्य समझो कि ऐसे महात्मा के दर्शन के लाभ का तुम्हें अवसर मिला है। रात भर विश्राम करके सुबह होते ही चले जाएगे। रात को धर्म की बातें, भजन और भगवत्कथा सुनाएगें। दिन भर चलते चलते बहुत थक गये हैं। अब और कहीं नहीं जा सकते।

मुनिश्री की इन बातों से उस बाई का दिल पसीज गया किन्तु वह अपने ससुर से डरती थी। ससुर बड़ा क्रोधी था। उसने कहा—'महाराज ! वे आने ही वाले हैं और आते ही तुम्हें उठा देंगे। मेरी ओर से तो मनाई है नहीं।'

मुनिश्री गणेशीलालजी म० ने कहा—'अच्छा बाई, कोई हर्ज नहीं। हम तुम्हारे ससुर को भी समझा लेंगे।

इस प्रकार उस बहिन की अनुमति पाकर चारों मुनि वहा ठहर गये। भण्डोपकरण उतारकर अभी बैठे ही थे कि घर मालिक आ पहुचा अपनी जगह में साधुओं को बैठा देखते ही दूर से ही—उसने अपशब्दों की वर्षा करनी आरम्भ कर दी। पास आकर बोला—देखो, अपना भला चाहते हो तो फौरन मेरे घर से अपना सामान उठाओ और लम्बे बनो। ठहरना है तो धर्मशाला में जाओ। मेरा मकान धर्मशाला नहीं है। उठो, जल्दी करो। वर्ना तुम्हारे यह सब पात्र वगैरह फोड़कर टुकड़े टुकड़े कर डालूगा।

पूज्यश्री ने तथा मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने उसे बहुत कुछ समझाने की चेष्टा की, मगर वह भलामानुस न समझा। सौ बातों का एक ही उत्तर उसके पास था—'बस उठ जाओ, जल्दी करो। मैं तुम्हें ठहरने दूगा तो मेरा मकान धर्मशाला बन जाएगा। सभी भिखमगे मेरे घर पर ही ठहरने लगेंगे। मैं ऐसा रिवाज नहीं डालना चाहता।'

मुनि की चर्या कितनी कठोर है ! सयम की साधना करना दूध-बतासे का कौर नहीं है—तलवार की धार पर चलना है। ऐसी परिस्थिति को बिना किसी क्षोभ के मन से सह लेना बहुत बड़ी बात है। प्रतिदिन का लगातार लम्बा विहार ! सुबह से शाम तक पैदल चलना ! कई दिनों से भर पेट आहार तक न मिलना ! और फिर यह व्यवहार ! ठहरने को साधारण सा भी स्थान नहीं ! डांस मच्छरों को अपना शरीर समर्पित करना ! हे मुनि ! तुम्हारा मार्ग तुम्हीं को शोभा देता है।

अन्त में पूज्यश्री अपने शिष्यों के साथ वहां से चल दिये और उसी धर्मशाला का आसरा लिया। धर्मशाला के पास तेली का एक घर था। सन्त उसमें थोड़ा सा सूखा घास माग लाये। वह नीचे बिछाया और किसी तरह रात काटी। प्रातःकाल घास वापस देकर वहां से विहार कर दिया।

विहार करके पूज्यश्री सेंधवा पधारे। इसके बाद और भी उग्र विहार आरम्भ कर दिया और ग्यारह कोस चलकर एक चौकी में ठहरे। रास्ते में पाच गांवों में गोचरी करने पर भी सिर्फ डेढ़ रोटी आधा सेर के करीब भुने चने और थोड़ी सी खट्टी छाछ मिली। उसी पर निर्वाह करके पूज्यश्री आगे बढ़े।

खुरमपुरा पहुँचने के बाद एक-दो दिन छोड़कर कभी भरपेट आहार नहीं मिला था। थोड़ा बहुत जो भी मिल जाता उसी पर चार साधुओं को गुजारा करना पड़ता। उग्र विहार के कारण भूख भी कड़ाके की लगती थी। फिर भी सब साधु प्रसन्न थे। बीकानेर और उदयपुर आदि स्थानों में बड़े बड़े रईसों और करोड़पति सेठों द्वारा भक्ति भाव पूर्वक वदना करते समय आपके हृदय में जैसे भाव रहते थे इस कष्टकर विहार के इस गाढ़ समय में भी वैसे ही भाव थे।

जिनके उपदेश से हजारों भूखों को रोटी मिल जाय वे अपनी भूख की परवाह नहीं करते। दूसरों की भूख उन्हें जितना सताती है उतना अपनी भूख नहीं सताती। पूज्यश्री अथवा दूसरे किसी भी साधु को तनिक भी खेद नहीं हुआ और वे निरन्तर उग्र विहार करते रहे।

चौकी से विहार करके पूज्यश्री शीरपुर और वगाणी होते हुए मांडल पधारे। उग्र विहार और अल्प आहार के कारण साधुओ का शरीर कुछ निबल सा हो गया था मगर मन अधिक प्रबल बन गया था।

५-६ दिन मांडल ठहर कर आपने विहार किया और धूलिया पहुंचे। धूलिया मे पूज्यश्री को ज्वर हो आया अत एक सप्ताह रुकना पडा। सात दिन मे पूज्यश्री का उपदेश सिर्फ डेढ घटा हो सका। इतने उपदेश से ही लोग बहुत प्रभावित हुए और कुछ दिनो ठहरने की प्रार्थना की। मगर पूज्यश्री को महाराष्ट्र पहुचने की जल्दी थी अतएव स्वास्थ्य कुछ ठीक होते ही आपने धूलिया से विहार कर दिया।

लालचन्दजी महाराज का स्वर्गवास

मुनिश्री लालचन्दजी महाराज उस समय चारोली मे थे। पूज्यश्री धूलिया से विहार करके मालेगाव, मनमाड होते हुए राहोरी पहुँचे। यहा से चारोली पधारने वाले थे मगर राहोरी पहुचते ही आपको लालचन्दजी महाराज के स्वर्गवास का समाचार मिला। जिस भक्त की भावना पूरी करने के लिए अपने कई आवश्यक कार्य अधूरे छोडकर पूज्यश्री राजपूताना से रवाना हुए थे और मार्ग मे भयकर कष्ट झेलते हुए भूख प्यास बिसर कर थोडे ही समय मे आपने इतनी लम्बी यात्रा की थी उस भक्त ने आपके पहुँचने से पहले ही महायात्रा कर दी। भक्त के नेत्र अतृप्त ही रह गये। उन्होने अपने आराध्य के दर्शन न कर पाये। किन्तु उस आराध्य की क्या स्थिति हुई होगी जो सैकडो कष्ट उठाकर और सैकडो मील का लम्बा विहार करके भी अपने भक्त की अन्तिम अभिलाषा पूरी न कर सका। मनुष्य की यह विवशता देखकर पूज्यश्री को बडी विरक्ति हुई।

जिस प्रकार मानव जीवन क्षणभगुर है उसी प्रकार विवश और पराधीन भी है। मनुष्य की ऐसी कोई योजना नही है जिसे वह पूरा करने का या उसका फल प्राप्त करने का दावा कर सकता हो। भगीरथ प्रयास करने पर भी ऐन मौके पर जरा सी बात किसी भी योजना को सदा के लिए समाप्त कर देती है विवशता की इस दुनिया मे रहकर मनुष्य किस बूते पर गर्व कर सकता है? गर्व कर सकते हैं वे जो विवशताओ को जीत चुके हैं। यह जीत आध्यात्मिक बल से ही प्राप्त होती है। अतएव मनुष्य जीवन का सबसे बडा और प्रधान उद्देश्य आध्यात्मिक बल प्राप्त करना ही होना चाहिए।

मुनिश्री लालचन्दजी महाराज के स्वर्गवास का समाचार मिलने से पूज्यश्री ने चारोली जाना स्थगित कर दिया।। आपने यहीं से मालवा की ओर लौट जाने का इरादा किया। मगर अहमदनगर श्रीसघ का प्रतिनिधिमडल आपकी सेवा मे उपस्थित हुआ और अहमदनगर पधारने की प्रार्थना करने लगा। श्रीसघ के तीव्र आग्रह को आप टाल न सके और अहमदनगर पधारे। यहा महासती श्रीरामकुवरजी महाराज के पास एक दीक्षा होने वाली थी। श्रीसघ के विशेष आग्रह से आपने दीक्षा सम्मेलन तक ठहरना स्वीकार कर लिया।

उन दिनो अहमदनगर मे दुर्भिक्ष था।, २२ फरवरी, १९९२ के 'जैन प्रकाश' में जैनसमाज का उल्लेख करते हुए सम्पादक ने लिखा था—

'अहमदनगर जिला वासियो की दुर्दशा जिन्हे देखनी हो वे वहां जाकर स्वय देखें, अथवा वहा के किसी नागरिक से दर्यापत करें लेकिन इस ओर ध्यान अवश्य दें। जहा मनुष्य के लिए जीने की आशा, निराशा मे परिणत हो रही हो वहा पशुओ की दुर्दशा का क्या ठिकाना है? हजारो मनुष्य विधर्मी हो रहे हैं। सैकडो ओसवाल वश के भूषण, होनहार बच्चे निराश्रित होकर इधर-उधर भटक रहे है। इस समय साधुमार्गी जैन समाज की ओर से एक भी सस्था नही है जो निराश्रितो को आश्रय दे। यह अभाव बहुत खटकता है।'

सतारा मे दीक्षा-समारोह

अहमदनगर से सतारा ७५ कोस दूर है। पूज्यश्री विहार करके वशाख शुक्ला अष्टमी, गुरुवार को प्रातःकाल सतारा पधार गये। आपके साथ पांच और साधु थ। तपस्वीराज स्थविर मुनि श्री मोतीलालजी महाराज भी साथ थे।

सतारा के श्रावको और श्राविकाओ मे अपार हर्ष छा गया। पूज्यश्री ने जिस समय रतलाम से दक्षिण की ओर विहार किया था, उसी दिन से सतारा की जनता आशा लगाये बठी थी। चातुर्मास की स्वीकृति से आशा फूल उठी और जब पूज्यश्री साक्षात् पधार गये तो आशा फलवती हो गई। अत सतारा के श्रीसघ को असीम हर्ष होना स्वाभाविक ही था।

दोनो वैरागी पूज्यश्री के सतारा पहुचने से २० २५ दिन पहले ही वहा पहुच चुके थे। वे साधु प्रतिक्रमण सीख रहे थे। पूज्यश्री क पधारने पर दोनों ने शीघ्र ही दीक्षा ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की।

पूज्यश्री ने फरमाया— पहले घरवालो की आज्ञा नियमानुसार लनी होगी फिर दीक्षा का दिन निश्चित किया जायगा'।

भीमराजजी न कहा—हम घर से सब की सम्मति लेकर आय हैं, अब फिर आज्ञा प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नही रही है। इसके अतिरिक्त अपने घर मे मैं सब से बडा हू। मुझे आज्ञा कौन देगा? रहा सिरेमल, सो वह जब लगभग ६ वर्ष का था, तब उसकी माता न दीक्षा लेने से पहले मुझसे कहा था—'मेरे बाद आप ही इसके मां बाप हैं। इसका पालन करें और फिर किसी योग्य साधु के पास दीक्षा दिला दें। दीक्षा के लिए मेरी आज्ञा है।

उनका यह अतिम आदेश मुझे भली भाति स्मरण है। माता की अभिलाषा पूर्ण करना मेरा कर्त्तव्य है। मेरे ऊपर उसका उत्तरदायित्व है। सिरेमल की अवस्था अब १२ वर्ष की हो गई है। लडका बडा बुद्धिशाली है। समयानुसार सब बातें समझता है। हम इसकी सगाई की तैयारी कर रहे थे मगर आपका पदार्पण हुआ और इसने सगाई करने से इकार कर दिया तथा दीक्षा लेने को तैयार हो गया। हमने कई बार पूछा कि तुम विवाह करोगे या दीक्षा लोगे? यह अपने निश्चय पर अटल रहा और अत तक दीक्षा लेने के लिए ही कहता रहा है। इस प्रकार उसकी माता पहले ही आज्ञा दे चुकी है और सरक्षक की हैसियत से मैं आज्ञा देने को तयार हू। हम दोनों घरवालों की सहमति लेकर ही आय हैं। आपश्री भी यह जानते हैं। फिर सदेह का क्या कारण है?

अभिभावक अथवा घर वाला की स्वीकृति के बिना किसी को दीक्षा देना शास्त्रविरुद्ध है। पूज्यश्री स्पष्ट रूप व लिखित आज्ञा पत्र चाहते थे, ताकि शास्त्रीय मर्यादा का सम्यक प्रकार से पालन हो।

इस प्रकार की बातें चल रही थी कि सिरेमलजी के बडेभाई श्रीदानमलजी सतारा आये। घर म वही बडे थे। भीमराजजी ने श्रीसघ से कहा—अब आप पूछकर अपना सशय निवारण कर लीजिए।

श्रीदानमलजी स श्रीसघ न पूछताछ कर ली और दानमलजी ने स्वीकृति दे दी। स्वीकृति मिलने क दूसरे ही दिन दीक्षा का मुहूर्त निश्चय कर दिया गया। दानमलजी से लिखित आज्ञापत्र ले लिया गया। छपी हुई आमत्रण पत्रिकाए जगह जगह भेज दी गई। दीक्षा-समारोह म सम्मिलित होने के लिए दानमलजी अपने घरवालों को लाने के लिए गये और ले आये।

नियत समय पर जुलूस दीक्षास्थल पर पहुच गया। पूज्यश्री वहां पहले ही विराजमान थे। दोनों दीक्षार्थी साधुओ क योग्य वस्त्र पहनकर पूज्यश्री के चरण कमलों मे उपस्थित हुए।

पूज्यश्री ने साधु जीवन के कष्टों और परीषहों का वर्णन करते हुए पूछा— क्या तुम इन कष्टों को सहन कर सकोगे ?' वैरागियों ने दृढ़ता और हर्ष के साथ स्वीकृति प्रकट की। तब पूज्यश्री ने साधु जीवन की प्रतिज्ञाएं करवाई और केशलोच किया। बाद में साधु के कर्तव्य विषय पर सुन्दर और सामयिक भाषण किया। भगवान महावीर और जैन धर्म की जय की ध्वनि के साथ महोत्सव सम्पन्न हो गया। अन्त में प्रभावना वितरण की गई।

इस महोत्सव में माहेश्वरी भाइयों का तथा दूसरे सतारा निवासियों का उत्साह प्रशंसनीय था। ऐसा जान पड़ता था कि उत्सव केवल जैनों का नहीं, वरन् समस्त सतारा शहर का है। पूज्यश्री की प्रभावशाली वक्तृत्व शैली और उनका शानदार व्यक्तित्व ही जैनेतर समाज के सम्मिलित होने का प्रधान कारण था।

दीक्षा समारोह सम्पन्न होने के अनन्तर पूज्यश्री कराड होते हुए तासगांव पधारे। वहां से विविध स्थानों में धर्म प्रचार करते हुए फिर सतारा पधार गए।

इकतीसवां चातुर्मास (१९७९)

पूज्यश्री ने सात सन्तों के साथ वि० सं० १९७९ का चातुर्मास सतारा में किया। तपस्वी मुनि श्रीमोतीलालजी महाराज की अवस्था अब पैंसठ वर्ष की हो गई थी, फिर भी आपने लम्बी तपस्या की। पूर के दिन अभयदान आदि अनेक उपकार के कार्य हुए। मच्छीमारों का बाजार दो दिन बन्द रक्खा गया। वे पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आये। अमावस्या के दिन वे लोग पहले से ही जाल नहीं डालते थे, व्याख्यान सुनकर उन्होंने ग्यारस को भी मछलियां मारने का त्याग कर दिया। कुछ ने तो जिंदगी भर के लिए मछली मारना छोड़ दिया।

सतारा चातुर्मास में पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने के लिए दादा करदीकर तथा राव साहब काले जैसे प्रतिष्ठित जैनेतर सज्जन भी उपस्थित होते थे। एक दिन राव सा० ने संक्षिप्त भाषण करते हुए कहा जिसमें पूज्यश्री सदृश विद्वान और खरे संत हैं वह समाज धन्य है। ऐसे महापुरुष के दर्शन करके हम धन्य हो गए। हमारे पूर्व संचित पुण्य के प्रभाव से ही आप यहां पधारे हैं। अब तक हमारी दृष्टि में जैनधर्म एक मामूली मत था, मगर पूज्यश्री के उपदेशों से उसका महत्व हमारी समझ में आ गया है। अब हम मानते हैं कि जैनधर्म का आश्रय लेकर भी मनुष्य आत्म विकास की चरम सीमा पर पहुंच सकता है।

पर्युषण पर्व

सतारा में पर्युषण पर्व बड़े समारोह के साथ मनाया गया। मारवाड़, मेवाड़, मालवा, गुजरात, नागपुर, महाराष्ट्र और काठियावाड आदि प्रान्तों के अनेक श्रावक और श्राविकाएं पूज्यश्री के दर्शन के लिए तथा पूज्यश्री की सेवा में रहकर पर्युषण महापर्व की आराधना करने लिए आये थे। पर्व के समय पूज्यश्री लम्बे समय तक व्याख्यान फरमाते थे। पहले प० मुनि श्रीगणेशीलाल जी म० अपनी मधुर वाणी में टीका सहित शास्त्र की व्याख्या करते थे और फिर पूज्यश्री का प्रवचन होता था। शास्त्र के आदेश और वर्तमान जीवन में असामंजस्य क्यों दिखाई दे रहा है ? और इसे दूर करने का उपाय क्या है ? इत्यादि विषयों पर पूज्यश्री बहुत ही मार्मिक विवेचन करते थे। जैन और जैनेतर श्रोता मन्त्र मुग्ध होकर सुनते थे।

भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी अर्थात् संवत्सरी के दिन पूज्यश्री का विद्यादान और अभयदान पर व्याख्यान हुआ। व्याख्यान भवन खचाखच भरा था। सेठ मोतीलालजी मूथा ने श्री चन्दनमलजी मूथा की स्मृति में पन्द्रह हजार रुपयों के उदारतापूर्ण दान की घोषणा की। उसके उपयोग के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण करते हुए आपने कहा— जब तक किसी उपयोगी संस्था की स्थापना नहीं हो जाती तब तक इस रकम का ब्याज विविध प्रकार के धार्मिक कार्यों में खर्च किया जायगा।

पूना-श्रीसङ्घ ने उत्साह के साथ दीक्षा महोत्सव मनाया। लगभग तीन हजार जनता उपस्थित थी। बाहर से आये सज्जनों का पूना सङ्घ ने सुन्दर स्वागत किया।

इन दीक्षाओं में एक विशेषता यह थी कि दोनों दीक्षाभिलाषियों ने तपस्या कर रखी थी। श्रीजीवनलाल जी ने चौविहार उपवास और जवाहरमलजी ने बेला किया था। दीक्षा ग्रहण करने के दूसरे दिन और चौथे दिन नवदीक्षित साधुओं का पारणा हुआ।

पूज्यश्री २१ दिन पूना में धर्मोपदेश की वर्षा करते रहे। इस अर्से में जैन और जैनेतर जनता पर धर्म का अच्छा प्रभाव पड़ा। धार्मिक कार्य करने के उद्देश्य से एक मंडल स्थापित हुआ। पूना सङ्घ ने चातुर्मास के लिए अत्यन्त आग्रह किया मगर पूज्यश्री ने स्वीकार नहीं किया।

बम्बई के श्रावकों ने बम्बई में चौमासा करने की प्रार्थना की। किन्तु बड़ा शहर होने के कारण वहां साधुओं को अनेक असुविधाएँ रहती हैं और संयम का सम्यक् प्रकार से पालन करना कठिन हो जाता है। यह सोचकर पूज्यश्री ने बम्बई में चौमासा करना भी अस्वीकार कर दिया।

पूना से विहार करके पूज्यश्री खिड़की चिंचवड़, चारोली, खेड़गाँव आदि स्थानों में उपदेश वर्षा करते हुए मंचर पधारे। खेड़गाँव में स्थानकवासी भाइयों की पच्चीस दुकानें थीं मगर धर्म की ओर किसी का विशेष ध्यान नहीं था। पूज्यश्री के पधारने से कम-से कम चतुर्दशी को एकत्र होकर सामायिक करने की प्रतिज्ञा ली। यहां महासती श्रीसूरजकुंवरजी म० विराजमान थीं, जो मुनिश्री श्रीमलजी म० की संसारपक्ष की माताश्वरी होती थी।

मंचर में पुनः पूना सङ्घ चातुर्मास की विनती करने उपस्थित हुआ। इधर मंचर के भाई भी यही आग्रह करने लगे। मगर पूज्यश्री ने उस समय कुछ भी निश्चित उत्तर नहीं दिया। मंचर से विहार करके नारायणगाँव, जुन्नेर होते हुए पूज्यश्री इगतपुरी पधारे। यहाँ दूर दूर के लोग पूज्यश्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। बम्बई श्रीसङ्घ की ओर से यहां अग्रसर सेठ मेघजी भाई थोभण जे. पी., श्रीअमृतलाल रायचंद झवेरी श्रीरतनचंद झवेरी, माणकलाल भाई झवेरी आदि दस सज्जन घाटकोपर पधारने की प्रार्थना लेकर उपस्थित हुए। उन्होंने कहा—घाटकोपर इगतपुरी से करीब ३५ कोस है। यह बम्बई का उपनगर है। वहां बम्बई जैसा कोलाहल और भीड़ भाड़ नहीं है। वहां आपकी शान्ति भंग नहीं होगी। भले ही इस समय आप चातुर्मास करने का वचन न दें मगर एक बार वहां पदार्पण करें। वहां पहुंचने के पश्चात् जैसा उचित समझें, कीजिएगा। यद्यपि यहां से घाटकोपर का रास्ता विकट अवश्य है फिर भी आपके पधारने से बम्बई में धर्म का बहुत प्रचार होगा। बम्बई की विशाल जैन जनता का भी असीम उपकार होगा। कृपाकर हमारी अभ्यर्थना स्वीकार कीजिए और कष्ट झेलकर भी एकबार अवश्य पधारिए।

पूज्यश्री ने एक बार घाटकोपर पधारने की स्वीकृति दे दी। कुछ दिनों पश्चात् आप नासिक होते हुए घाटकोपर पधार गये। वहां आपके उपदेशों में हजारों की भीड़ होना साधारण बात थी। तपस्वी मुनिश्री सुन्दरलालजी ने उस समय पन्द्रह दिन की तपस्या की। बम्बई श्रीसङ्घ में अपूर्व उत्साह था। जब देखा कि पूज्यश्री को स्थान अनुकूल पड़ गया है और धर्म की खूब प्रभावना हो रही है तो श्रीसङ्घ ने चौमासे के लिए फिर प्रार्थना की। पूज्यश्री अब की बार भक्तों का आग्रह न टाल सके। आपने चातुर्मास स्वीकार कर लिया।

उन दिनों घाटकोपर में 'प्रान्तीय राजद्वारी परिषद्' की चहलपहल थी। परिषद् के सिलसिले में एक दिन जुलूस निकला जिसमें तीन हजार व्यक्ति थे और सभी के हाथ में राष्ट्रीय ध्वजा शोभायमान हो रही थी। वे सब पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए और वंदन करके शांतिपूर्वक बैठ गये। पूज्यश्री ने राष्ट्रसेवा, मादक द्रव्य निषेध, मील के वस्त्रों की अपवित्रता आदि कई विषयों पर धार्मिक दृष्टि से संक्षिप्त और प्रभावजनक भाषण दिया। उस समय सैकड़ों व्यक्तियों ने चाय तमाखू आदि का त्याग किया और सैकड़ों ने चर्बीवाले वस्त्रों का परित्याग किया।

होली—चातुर्मास घाटकोपर मे व्यतीत करके पूज्यश्री माटु गा होते हुए दादर पधारे। दादर बहुत सकीण और कोलाहलपूण स्थान है। वहा की जनता ने पूज्यश्री से कुछ दिन और विराजने की प्रार्थना की। किन्तु आपने फरमाया—दादर जैसे स्थान सता के लिए नही, व्यवसायी लोगो के लिए हैं। ऐसे अशान्ति और कोलाहल मे परिपूण स्थानो मे साधुओ का चरित्र निमल नही रह सकता। साधुओ को एकान्त चाहिए शान्त वातावरण चाहिए। उसी समय आपने श्रीमेघ जी भाई को लक्ष्य करके कहा—'मेघजी भाई ! अगर आप साधुओ का सयम निमल चाहते हो तो ऐसे प्रवृत्तिमय और धमाल वाले स्थानो म साधुआ को लाना उचित नही है।'

पूज्यश्री दादर मे सिफ दा दिन ठहर और घाटकोपर लौट आये। यहा श्रीमहावीर जयन्ती पर भाषण देकर आपने विहार कर दिया। मुलून, थाना, पनवल, उरण आदि स्थानो म विचर कर चौमासा समीप आन पर आप फिर घाटकोपर पधार गये।

बत्तीसवा चातुर्मास (१९८०)

विक्रम सवत १९८० का चौमासा पूज्यश्री न घाटकोपर में व्यतीत किया। इस चातुर्मास मे तपस्वी मुनि सुन्दर लालजी न ८१ दिन की तपस्या धोवन पानी के आधार पर की। इतने लम्बे उपवास का वृत्तान्त जानकर बडे बडे डाक्टर और विद्वान् लोग भी आश्चय करते थे। डाक्टरो का विश्वास था कि केवल पानी के आधार पर मनुष्य इतने दिनो तक जीवित नही रह सकता। मगर अपने विश्वास का प्रत्यक्ष खडन होते देखकर उनकी बुद्धि चक्करा जाती थी। आखिर वे इस निणय पर पहुचे कि साधारण व्यक्ति से महात्माओ की शक्ति को तोलना उचित नही है। वास्तव में आत्मबल का सामथ्य असीम है। जहा आत्मिक बल प्रबल होता है वहा दुसाध्य काय भी सुसाध्य हो जात हैं। पूज्यश्री न आत्मबल के सबध मे कहा है—

'आत्मबल मे अद्भुत शक्ति है। इस बल के सामने संसार का कोई भी बल नही टिक सकता। इसके विपरीत जिसम आत्मबल का अभाव है वह अन्यान्य बलों का अवलम्बन करके भी कृतकाय नहीं हो सकता।

'आत्मबल सब बलो म श्रेष्ठ है। यही नहीं वरन् यह कहना भी अनुचित न होगा कि आत्मबल ही एक मात्र सच्चा बल है। जिसे आत्मबल की उपलब्धि हो गई है उसे अन्य बल की आवश्यकता नहीं रहती।'

'आत्मबल प्राप्त करने की क्रिया है तो सीधी-सादी, लेकिन क्रिया करने वाले का अन्त करण सच्चा होना चाहिए। वह क्रिया यह है कि अपना बल छोड दो अर्थात् अपने बल का जो अहकार तुम्हारे हृदय में आसन जमाये बठा है उस अहंकार को निकाल बाहर करो। परमात्मा के शरण मे चले जाओ। परमात्मा से जो बल प्राप्त होगा वही आत्मबल होगा।

'आत्मबली को प्रकृति स्वय सहायता पहुँचाती है।'

आत्मबल द्वारा महात्माओं को भी चकित कर देने वाली शक्ति प्राप्त होती है। ८१ दिन की इस तपस्या को देखकर जन शास्त्रो मे वर्णित लम्बी तपस्याओ को अशक्यानुष्ठान समझने वाले बहुत से लोग व्यवहाय मानने लगे। बडे बडे अगरेज भी तपस्वी जी को देखने आते थे। उपवास चिकित्सा के एक डाक्टर साहब तो अकसर आपके स्वास्थ्य का चढाव उतार देखन के लिए आया करते। उन्हें अनायास ही अपने अनुभव की वृद्धि का साधन मिल गया।

तपस्या के अतिम दिन हजारों जन-जैनेतर व्यक्तियो ने मिलकर तप उत्सव मनाया। उस दिन आने जाने वाल व्यक्तियो की इतनी भीड थी कि रेलवे को स्पेशियल गाडियाँ चलानी पड़ी। उसी दिन घाटकोपर पशुशाला के लिए चदा हुआ। दीघ तपस्या और पूज्यश्री की वाणी के प्रभाव से अजन भाइयो न भी हजारो का त्याग किया। पूज्यश्री के जीवदया पर

पर यह न समझ बैठना कि इससे गायों की हानि हुई है। इस पद्धति से जहाँ गौवंश का हानि पहुंची है वहाँ मानववंश को भी काफी हानि उठानी पड़ी है और पड़ रही है। दूध मत्य लोक का अमृत कहलाता है। उसकी आजकल बहुत कमी हो गई है। परिणाम यह है कि लोगों में निर्बलता और निर्बलताजन्य हजारों रोग आ घुसे हैं। इसके अतिरिक्त तामसिक भोजन पेट में जाता है। जिससे सतोगुण का नाश होता जा रहा है।'

पूज्यश्री के उक्त कथन मे चेतावनी है माग प्रदर्शन है। कहते हैं—सिर्फ बम्बई में एक हजारों में से करीब ६८५ नवजात शिशु काल का ग्रास बन जाते हैं। इसका प्रधान कारण शुद्ध दूध न मिलना है।

एकता की विज्ञप्ति

श्री श्वे० स्थानक वासी जैन सकल श्री संघ बम्बई की ओर से श्रीसंघ के प्रमुख सेठ मेघजी भाई थोभण को पूज्यश्री ने अपनी ओर से यह वक्तव्य प्रकट करने की अनुमति दी थी—

'प्रत्येक समाज अपनी अपनी स्थिति को सुधारकर आगे बढ़ने का प्रयत्न कर रहा है। साधुमार्गी समाज में सैकड़ों की संख्या में पांच महाव्रत धारी साधुओं के होते हुए भी समाज की अवनति हो रही है। हम साधुओं पर भी इसका बड़ा उत्तरदायित्व है। अतः मैं अपना कर्तव्य समझकर श्रीसंघ को निवेदन करता हूं कि सब समाज और सम्प्रदाय परस्पर प्रेमभाव रक्खें। परस्पर निन्दात्मक लेख हैंडबिल पुस्तक वगैरह किसी प्रकार का छापा न छपावें।

हम अपनी तरफ से प्रतिज्ञापूर्वक आज्ञा करते हैं कि हमारी आज्ञा में चलने वाले संघ में किसी भी तरह का निन्दात्मक लेख, जिससे दूसरे का दिल दुखे, नहीं छापा जाय। दूसरे पक्ष वाले यदि इस प्रकार के लेखादि छपावें तो भी इस सम्प्रदाय के संघ की तरफ से प्रत्युत्तर के रूप में कुछ भी न छपेगा। किसी दूसरे से छपवाकर कह देना कि हमने नहीं छपाया, यह मायामृषावाद है। सत्य को आदरणीय समझ कर इसे भी स्थान नहीं दिया जाएगा। यदि कोई व्यक्ति साधुओं पर झूठा कलंक लगायेगा तो योग्य मध्यस्थों द्वारा खुलासा करने में कोई आपत्ति नहीं है।

स्वर्गीय पूज्य श्रीलालजी महाराज और मेरे यश का जो संघ चाहता है उसे निन्दात्मक किसी प्रकार का लेख नहीं छपाना चाहिए। हमें पूर्ण विश्वास है कि मेरी और स्वर्गीय पूज्यश्री की कीर्ति चाहने वाले भक्त उपर्युक्त आज्ञा को भंग न करेंगे।

कार्तिक शुक्ला सप्तमी को छोटीसादड़ी (मेवाड़) निवासी श्रीकेसरीमलजी सिंघी ने बड़े वैराग्य से दीक्षा ली। आपने दीक्षा के लिए उत्सव और जुलूस आदि भी नहीं निकलने दिये।

सादगी के साथ दीक्षा सम्पन्न हुई। आगे चलकर आप भी घोर तपस्वी हुए।

एक दिन घाटकोपर के सब गोवाल पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आये। उपदेश से प्रभावित होकर उन्होंने यह प्रतिज्ञा की कि यदि पशुशाला से हम रुपये के चार आने भी मिल जायेंगे तो हम कसाइयों के हाथ पशु नहीं बेचेंगे।

पूज्यश्री प्रायः व्यापक धर्म पर ही प्रवचन करते थे। प्रवचन सार्वजनिक होने से सभी सम्प्रदायों के जैन और जैनेतर बन्धु तथा देश नेता भी आया करते थे। श्रीमती कस्तूरबा गांधी जब पूज्यश्री के दर्शन के लिए आई तो उनकी प्रत्यक्ष आत्मा उपस्थित करते हुए पूज्यश्री ने महिला समाज को खादी और सादगी का उपदेश दिया। बहुत सी बहिनों ने जीवन पर्यन्त खादी के अतिरिक्त और कोई वस्त्र न धारण करने की प्रतिज्ञा ली। बा से भी कुछ बोलने के लिए कहा गया। वे बोलीं—"मैं आज अपना अहोभाग्य समझती हूं कि पूज्यश्री के दर्शन हुए। मैं जिस उद्देश्य से आई थी वह पूरा हो गया। मुझे अब बोलने की आवश्यकता नहीं रही। पूज्यश्री ने मेरा मन्तव्य पूरा कर दिया है।"

केन्द्रीय धारासभा के प्रेसीडेंट श्रीयुत विटठल भाई पटल भी एक बार पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। पूज्यश्री के व्यापक और उच्च विचारों से उनके तप और त्याग से तथा वक्तृत्वशक्ति से वे बहुत प्रभावित हुए। प्रसिद्ध विद्वान् प० लालन अनेक बार पूज्यश्री के उपदेश सुनने आये। पूज्यश्री के व्याख्यान सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए। मुक्त कंठ से व्याख्यानों की प्रशंसा की। इस चातुर्मास में श्री मेघजी भाई, श्री अमृतलाल रायचन्द झवेरी, जगजीवनदयाल भाई मोहनलाल चन्दूलाल भाई, रतनचन्द भाई आदि भाइयों ने बहुत उत्साह दिखलाया।

विहार और प्रचार

घाटकोपर का महत्त्वपूर्ण चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्यश्री विहार करके माटुङ्गा पधार। उस समय पूज्यश्री के उपदेशों का मुख्य विषय जीवदया प्रचार होता था। अत जगह जगह जीव दया सम्बन्धी उत्तम कार्य हुए। माटुङ्गा से मुलुन्द, थाना आदि में धर्मोपदेश करते हुए आप इगतपुरी पधारे। यहाँ बम्बई से बहुत से श्रावक आपके दर्शनार्थ आये। उस समय वहाँ के दयालु श्रावकों ने घाटकोपर की संस्था से सम्बन्ध रखने वाली जीवदया संस्थाएं स्थापित की। घोटी में भी एक ऐसी संस्था स्थापित हुई।

अस्पृश्यता

नासिक में श्री मेघजी भाई थोभणा ज० पी० पूज्यश्री के दर्शन करने आये। पूज्यश्री ने अछूतोद्धार के विषय में अत्यन्त प्रभावशाली प्रवचन किया। अछूतोद्धार आपका प्रिय विषय रहा है। इस विषय पर आपने सैकड़ों मार्मिक और प्रभावक प्रवचन किये हैं। इस विषय में आप कहा करते थे—

'धर्मभावना का तकाजा है कि मनुष्य मात्र को भाई समझा जाय। प्रत्येक मनुष्य प्रत्येक मनुष्य का बन्धु है। बन्धु का अर्थ सहायक है। इस प्रकार शूद्र आपके सहायक हैं और आप शूद्रों के सहायक हैं। चमार ने जूता बनाया और आपको पहना दिया। क्या यह आपकी सहायता नहीं है? भंगी ने आपका पाखाना साफ किया, आपकी नाली स्वच्छ की और आपको बदबू एवं बीमारियों से बचा दिया। क्या भंगी ने आपकी मदद नहीं की? क्या आपकी सहायता का पुरस्कार यह होना चाहिए कि वह नीच गिना जाय? सफाई करके भयंकर बीमारियों की सम्भावना को दूर कर देने वाले मेहतर को नीच गिनना क्या कृतज्ञता की भावना के अनुकूल है? मानव-समाज का असीम उपकार करने वाले वर्ग को अस्पृश्य, घृणास्पद या नीच समझने वाले लोग अपने को जब उच्च वर्ग का कहते हैं तो समझ में नहीं आता कि उच्चता का अर्थ क्या है? क्या उच्चता का अर्थ कृतघ्नता है?

याद रक्खो यह नीच कहलाने वाले हिन्दू समाज के प्यारे लाल हैं। इन्हें धिक्कार मत दो। इनका अपमान मत करो। इनके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करो। इन पर दया करो। इनके साथ स्नेह पूर्ण व्यवहार करो।,

'शूद्र आपके समाज की नींव है। महल का आधार नींव है। नींव में अस्थिरता आ जाने से महल स्थिर नहीं रह सकता। अगर तुमने शूद्रों को अस्थिर कर दिया—विचलित कर दिया तो तुम्हारे समाज की नींव हिल उठेगी। तुम्हारी संस्कृति धूल में मिल जायगी।'

'अन्त्यजों के विषय में तनिक विचार कीजिए। वह आपकी अशुचि उठाते हैं तथा दूसरे सफाई के काम करते हैं। फिर भी आप उनसे घृणा करते हैं। आपकी अशुचि दूर करके स्वच्छता रखना क्या उनका इतना बड़ा अपराध है? एक आदमी यहाँ अशुचि बिखेरता है और दूसरा उसे

यह ठहराव जनाम जातर (ब्राह्मण मराठे, कोली, चमार, महार वगैरह) सब लोगों का स्वीकार है। इति।

गाँव के आदमियों के हस्ताक्षर

नान्दुर्डी में एक भाई शोभाचन्द्रजी ने रुपयों की वसूली के लिए अदालत में नालिश करने का सर्वथा त्याग कर दिया। इस उदारतापूर्वक त्याग के परिणामस्वरूप वे किसी प्रकार के घाटे में भी नहीं रहे। अदालतबाज साहूकारों के रुपये चाहे न पटे मगर इन भाई की वसूली पाई पाई हुई। इनकी उदारता ने किसानों का हृदय जीत लिया था।

नान्दुर्डी से विहार करके पूज्यश्री निफाड नेताल लासनगाँव होते हुए मनमाड पधारे। यहाँ भी बड़ी संख्या में लोग व्याख्यान सुनने आते थे। अनेक धार्मिक काम हुए। यहाँ से विहार करके निमाल डूंगरी पधारे। गाँव के अस्पृश्य व्याख्यान सुनने आए और उन्होंने मांस एवं मदिरा का त्याग किया। बहुत से मुसलमान भाइयों ने भी मांस भक्षण एवं जीव हिंसा का त्याग कर दिया।

पूज्यश्री जब निमाल डूंगरी आदि गाँवों में विचरते थे उस समय श्रावकों द्वारा जो कठोर ब्याज किसान आदि गरीब जनता से वसूल किया जाता था, उसकी कहानी जब पूज्यश्री ने सुनी तब उन्हें बहुत दुःख हुआ, अपने व्याख्यान में इस प्रकार के धनोपार्जन के निर्दय अत्याचार को पूज्यश्री व्यावहारिक व धार्मिक दृष्टि को सामने रखकर असरकारक उपदेश देते थे वे कहते थे अगर इसी प्रकार पठानी ब्याज वसूल करने वाले श्रावकों के यहाँ से मैं भिक्षा ग्रहण करूं तो मेरे ऊपर व मेरे उपदेश का आप पर क्या असर पड़ सकता है। उसी समय से पूज्यश्री अति महनत करने वालों के घर से ही अपने लिए भिक्षा मंगवाते थे।

निमाल डूंगरी से विहार करके पूज्यश्री चालीसगाँव, वागली, पाचोरा और महसांव होते हुए जलगाँव पधारे। मार्ग में छोटे छोटे अनेक गाँवों में जीवदया का उपदेश दिया तथा लोगों का कसाई के हाथ पशु बेचने का त्याग करवाया। जलगाँव से विहार करके हिंगोणे, धरणगाँव, अमलनेर होते हुए फिर धरणगाँव पधारे। यहाँ अछूतों ने माँस एवं मदिरा का त्याग किया।

धरणगाँव से विहार करके पूज्यश्री हिंगोणे पधारे। यहाँ के निवासियों ने आपके उपदेश से माँस, मदिरा एवं जीव हिंसा का त्याग किया।

पंचों ने इकट्ठे होकर नीचे लिखे अनुसार व्यवस्था पत्र लिखा—

श्री

"श्री समस्त फूलमाली पंच, लोहारपंच, सुथारपंच, कुम्हारपंच सुनारपंच शींपीपंच कुनबी पंच चारों पंच मौजे हिंगोणे बुद्रुक परगाना एरण्डोल, आज मिति ज्येष्ठ शुक्ल ३ शके १८४६ तारीख ५ माह जून सन् १९२४ के दिन श्री १००८ श्री पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ठाणे १० के उपदेश से हम सार्वजनिक पंच गण कबूल करते हैं कि हम कभी न तो जीव हिंसा करेंगे न मांस भक्षण ही करेंगे। शराब को न तो घर लावेंगे, न पियेंगे। ऐसा हम सार्वजनिक पंचों ने महाराज साहब के सामने स्वीकार किया है। इसके विरुद्ध यदि कोई आदमी यह काम करेगा तो उसे १५) रु० दण्ड दिया जावेगा। ऐसा ठहरा है।

इस ठहराव के अनुसार व्यवहार न करने वाले अर्थात् मदिरा माँस आदि का सेवन करने वाले की बात जो यदि कोई मनुष्य अनुमोदन करेगा तो वह भी दण्ड का भागी होगा। यह सब हम सार्वजनिक पंचों ने राजी खुशी लिखा है। तारीख मजकूर

गोसमाला के हस्ताक्षर तथा अंगूठे की निशानियाँ

यहाँ से विहार करके विभिन्न स्थानों पर विविध प्रकार का उपकार करते हुए आषाढ़ वदी नवमी को चौमासा करने के लिए जलगाँव पधारे। आषाढ़ वदी ११ को सुबह साढ़े सात बजे मन्दिर

मुनिश्री घासीलालजी महाराज भी पधार गए। आषाढ वदी १० को महासतीजी श्रीरामकुवरजी महाराज भी ठाण ७ से पधार गई। साधु और साध्वी मिलाकर कुल २४ ठाणा के विराजने से धम का ठाठ रहने लगा। पूज्यश्री तथा विद्वान् सन्तो के विराजने से धम का प्रद्योत होने लगा।

तेतीसवा चातुर्मास (स० १९९१)

जलगांव के प्रसिद्ध सेठ लक्ष्मणदासजी श्री श्रीमालपूज्यश्री के अत्यन्त भक्त श्रावको म से हैं। लम्बे अर्से से आपकी उत्कठा थी कि पूज्यश्री जलगाव मे पदापण करें और धम सेवा का सुअवसर प्राप्त हो। सेठजी की इच्छा इस वार फलवती हुइ। पूज्यश्री जलगाव पधारे। सघ मे अपूव उत्साह और आनन्द की लहर दौड गई। नर नारियो न बड ही चाव और भाव से पूज्यश्री का स्वागत किया।

पूज्यश्री ने १७ ठाणो से चातुर्मास किया। महासती श्रीराजकुवरजी म० का चातुर्मास भी ठा० ७ से यही हुआ। व्याख्यान म जैन और जनेतर श्रोताओ की वडी भीड रहन लगी। डाक्टर वकील शिक्षक आदि सभी श्रेणियो के सस्कारी व्यक्ति आपका उपदेश सुनने आते थे।

इस चातुर्मास म मुनि श्रीछगनलालजी महाराज ने तथा मुनि श्रीकेसरीमलजी म० ने इक्कीस इक्कीस दिन की तपस्या की। मुनिश्री जिनदासजी ने तेल तेल का पारण तथा प्रतिदिन धूप से आतापना लेना आरम्भ किया। कुछ दिनो बाद आप पाच पाच उपवासो के पश्चात पारणा करने लगे। अन्य मुनियो ने भी फुटकर तपस्या की। तपस्या के प्रभाव स जनता भी धार्मिक कार्यों मे खूब रस लेने लगी।

पूज्यश्री के दशनाथ सेठ जमनालालजी बजाज, आचाय विनोबा भावे तथा सेठ पूनमचन्दजी राका उपस्थित हुए। श्री विनोबा भावे मे पूज्यश्री ने उपनिषदों के सम्बन्ध मे वार्त्तालाप किया। तत्व चर्चा का मधुर रस आस्वादन करन के लिए श्रीविनोबा तीन चार दिन पूज्यश्री के साथ रहे।

पूज्यश्री जब चातुर्मास करने के निमित्त जलगांव पधारे थे तभी वहा के भगीरथ मिल म मिल मालिक और मजदूरों न आपका भाषण सुना था। उस समय पूज्यश्री न मजदूरो की दुदशा का मार्मिक चित्र खीचते हुए मिल मालिको का कत्तव्य वतलाया था। आपन फरमाया था कि जो मजदूर जनता को कपडे देते हैं वही स्वय नगे फिरते हैं! जिनकी कमाई से मिल मालिक गुलछर्रे उडा रहे हैं। उनके वाल बच्चो को भरपेट समुचित भोजन तक नहा नसीब होता! स्थिति कब तक कायम रह सकेगी?

पूज्यश्री ने मदिरा पान, तमाखू-सेवन आदि से होने वाली भयकर हानिया का दिग्दशन कराते हुए मजदूरो को भी इनके त्याग का सुदर उपदेश दिया था। तब स मजदूर भी समय पाकर पूज्यश्री के उपदेश सुनने आया करते थे।

रोग का आक्रमण

आषाढ की अमावस्या के आसपास पूज्यश्री की हथेली म अचानक दद होने लगा। दो चार दिन वाद एक छोटी सी फुन्सी निकल आई और पीडा बहुत बढ गई। पूज्यश्री न तथा अन्य साधुओं न उसे साधारण फुन्सी समझकर सोचा—पीव निकल जान स वेदना शान्त हो जायगी और फुन्सी भी साफ हो जायगी। यह सोचकर मुनियो ने उसे चाकू से चीर दिया और पीव निकाल दी। मगर दो दिनो के वाद फुसी ने भयकर रूप धारण कर लिया। फुसी की जगह एक भयकर फोडा निकल आया। धीरे धीरे दाहनी तक सारा हाथ सूज गया। वेदना अधिक बढ गई।

चिकित्सा के लिए स्थानीय डाक्टर बुलाये गए। उन्होंने ऑपरेशन करके सारा मवाद निकाल दिया और घाव भरने के लिए पट्टी बांध दी। घाव जल्दी भरने के उद्देश्य से डाक्टरो न

पूज्यश्री को जलेबी जैसे तर पदार्थ सेवन करने का परामर्श दिया। इसका परिणाम विपरीत आया। कई बार ऑपरेशन किया गया और फोड़ा अधिकाधिक भयंकर रूप धारण करके निकलने लगा। मानो वह कोई भयानक दैत्य था जो काटने पर अधिक विकराल रूप में फिर खड़ा हो जाता था।

परिस्थिति इतनी भयंकर हो गई कि पूज्यश्री का जीवन भी खतरे में दिखाई देने लगा। पूज्यश्री को अपने शरीर की तो कोई चिन्ता नहीं थी और न जीवन का ही कोई मोह था, मगर संघ की चिन्ता उन्हें अवश्य हो गई। किसी योग्य उत्तराधिकारी के हाथ में श्रीसङ्घ का उत्तरदायित्व सौंपे बिना यह चिन्ता दूर नहीं हो सकती थी। पूज्यश्री ने अपने सम्प्रदाय के सन्तों पर दृष्टि दौड़ाई और उनका ध्यान प० मुनिश्री गणेशीलालजी म० पर केन्द्रित हो गया। मुनिश्री विद्वान, चरित्र परायण और सुविनीत थे। सङ्घ का शासन-सूत्र आपके हाथों में सौंप देने का पूज्यश्री ने विचार किया।

समाज के प्रधान श्रावक, जो वहां मौजूद थे, उनसे विचार विनिमय किया गया। सम्प्रदाय के अनेक सन्तों और श्रावकों से भी राय मगाई और उन्होंने पूज्यश्री के विचार का समर्थन किया। इस प्रकार पूज्यश्री के चुनाव का सबने समर्थन किया। मगर मुनिश्री गणेशीलालजी म० को इस बात का अभी तक पता नहीं चला था।

अचानक सेठ वर्धमानजी सा० पीतलिया मुनिश्री के पास पहुंचे। उन्होंने कहा—महाराज! मैं आपसे एक निवेदन करने आया हूं। वह यह है कि पूज्यश्री का स्वास्थ्य इस समय ठीक नहीं है, यह तो आप जानते ही हैं। ऐसी स्थिति में आप पूज्यश्री को किसी प्रकार के पशोपेश में न डालें और पूज्यश्री आपको जो आज्ञा दें उसे स्वीकार कर लें।

सेठजी की बात सुनकर मुनिश्री को आश्चर्य-सा हुआ। उन्होंने उत्तर दिया—मैंने कब पूज्यश्री की आज्ञा टाली है, जो आपको ऐसा कहने की आवश्यकता पड़ी? मैं तो पूज्यश्री का एक तुच्छ सेवक रहा हूं और इसी रूप में रहना चाहता हूं।

सेठजी ने कहा—बस, ठीक है, आपसे हम सभी ऐसी ही आशा रखते हैं। आप पूज्यश्री की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करेंगे यही समझकर तो पूज्यश्री आपको आज्ञा देंगे।

आखिर मुनिश्री, पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए। उनसे सम्प्रदाय का भार स्वीकार करने के लिए कहा गया। यह सुनकर मुनिश्री को पता चला कि पहले की समस्त आज्ञाओं से यह आज्ञा विलक्षण है और इसका पालन करना बड़ा ही कठिन है। मुनिश्री बड़े पशोपेश में पड़े। क्या करना चाहिए? क्या मैं इस गुरुतर भार को उठाने में समर्थ हो सकूंगा? मगर अस्वीकार करने का अर्थ पूज्यश्री को इस नाजुक अवस्था में ठेस पहुंचाना होगा? स्वीकार करने के लिए जिस सामर्थ्य की आवश्यकता है, वह मैं अपने में नहीं पाता! ऐसी स्थिति में मैं सङ्घ की सेवा कैसे कर सकूंगा! इस प्रकार पशोपेश के पश्चात् आपने जब अपनी असमर्थता प्रकट की तो सेठ वर्धमानजी पीतलिया ने बनावटी रोष भरी आंखों से मुनिश्री की ओर देखा। उनकी दृष्टि में स्पष्ट संकेत था कि आज्ञाकारी और विनीत शिष्य होते हुए भी इस प्रसंग पर यह अस्वीकृति क्यों प्रकट कर रहे हैं?

परिणाम यह हुआ कि मुनिश्री को विवश होकर यह भार स्वीकार करने की स्वीकृति देनी पड़ी।

सेठ पीतलियाजी ने मुनिश्री घासीलालजी म० को युवाचार्य पदवी का व्यवस्था पत्र लिखने के लिए कहा। मगर उनके यह कहने पर कि मुझे लिखना नहीं आता, स्वयं सेठजी ने व्यवस्था पत्र का ड्राफ्ट बना दिया और मुनिश्री घासीलालजी म० को उसकी नकल कर देने के लिए दे दिया। मुनिश्री घासीलालजी म० ने उसकी नकल की और वह पूज्यश्री ने अपने पास रख लिया।

श्रीसंघ पूज्यश्री की बीमारी से अत्यन्त चिंतित हो उठा। आखिर बम्बई के प्रसिद्ध डाक्टर मुलगावकर का बुलाने का विचार किया गया। उनके बुलवाने का समाचार पाकर स्थानीय सर्जन ने पूज्यश्री के मूत्र की परीक्षा की और मधुमेह की बीमारी का निर्णय किया।

डाक्टर मुलगावकर ने रोग का इतिहास सुनकर भली भांति परीक्षा की तो उन्होंने भी कहा कि पूज्यश्री को मधुमेह की भी शिकायत है। फोडे का मूल कारण भी यह मधुमेह ही था। डाक्टर ने एकदम ही अन्न बन्द करके सिर्फ छाछ पर रहने की सलाह दी। फोडे का ऑपरेशन और साथ ही मधुमेह का इलाज आरम्भ हुआ। तबीयत में सुधार होने लगा। संवत्सरी के दिन पूज्यश्री में इतनी शक्ति आ गई कि वे व्याख्यान मण्डप में पधारे और करीब २० मिनट तक भाषण भी दे सके।

ऑपरेशन का दृश्य बड़ा ही हृदय द्रावक था। आपरेशन देखनेवालों का हृदय कांप रहा था। मगर पूज्यश्री के चेहरे पर चिन्ता का कोई चिह्न तक नहीं था। उन्होंने बेहोशी के लिए क्लोरोफार्म नहीं सूंघा था। होश में रहते हुए ऑपरेशन करवाया। हथेली डाक्टर के सामने पसार दी। डाक्टर ने पहले तो चाकू से एक क्रोस सा बनाया और फिर कैंची उठाकर हथेली की चमड़ी काट दी। पूज्यश्री के मुंह से उफ तक नहीं निकला। जान पड़ता था, शरीर की ममता त्यागकर वे आत्म-लोक में रमण कर रहे हैं और आत्म रमण की तल्लीनता में उन्हें अपने शरीर का भान ही नहीं है।

पूज्यश्री का यह अगाध धैर्य और असीम सहिष्णुता देखकर चकित हो जाना पड़ा। धन्य है ऐसे सहनशील महासन्त, जिन्होंने इस रुग्ण अवस्था में भी अपने आदर्श चरित द्वारा जनता को बोध पाठ दिया।

इस अवसर पर जलगांव के श्रीसङ्घ ने, सेठ लक्ष्मणदासजी श्रीश्रीमाल, सेठ सागरमलजी प्रेमराजजी, जुगराजजी आदि और श्रीअमृतलाल रायचन्द झवेरी तथा भीनासर के सेठ बहादुरमलजी सा० बांठिया, सेठ वर्धमानजी पीतलिया, सेठ नथमलजी चोरडिया आदि सज्जनो ने बहुत सेवा की।

पर्युषण पर्व के मौके पर पूज्यश्री के दर्शनार्थ खानदेश, बरार, मद्रास, मेवाड, मालवा आदि विभिन्न प्रान्तों से लगभग छह हजार श्रावक जलगांव आये। सबके स्वागत की व्यवस्था श्रीसङ्घ के सहयोग से सेठ लक्ष्मणदासजी ने उत्साहपूर्वक की। जलगांव सङ्घ के अन्य श्रावको ने भी अतिथियों का अच्छा सत्कार किया।

उसी अवसर पर घाटकोपर जीवदया खाते की सहायता के लिए एक शिष्ट मंडल आया पूज्यश्री के स्वास्थ्य-लाभ का प्रमोद श्रीसङ्घ में काम हो रहा था, अतः तीन दिन के प्रयत्न से करीब बत्तीस हजार रुपया एकत्र हो गया।

उन्हीं दिनों गुजरात में बाढ आने के कारण भीषण तबाही हुई थी। श्रावको ने बाढ़ पीडितो की सहायता के लिए भी लगभग तीस हजार रुपया प्रदान कर प्रदर्शित की।

लगभग इसी अवसर पर उदयपुर की जैन ज्ञान पाठशाला और ब्रह्मचर्याश्रम को करीब छह हजार की एक मुश्त सहायता और ६२६) रु० वार्षिक सहायता प्रदान की गई।

इस अवसर पर सेठ लक्ष्मणदासजी मूथा का उत्साह अतीव प्रशंसनीय था। उन्होंने अकेले ही करीब तीस हजार रुपया खर्च करके यह साबित कर दिखाया कि लक्ष्मी का स्वामी किस प्रकार अपने धन का सदुपयोग करता है। सेठ अमृतलाल रायचंद झवेरी और सेठ बहादुरमलजी बांठिया ने भी सराहनीय उत्साह प्रदर्शित किया। कई अन्य धर्म प्रेमी श्रावक भी लम्बे अर्से तक पूज्यश्री की सेवा में रहे और धर्माराधन करके उन्होंने अपना जीवन सफल बनाया।

पूज्यश्री के स्वास्थ्य लाभ के उपलक्ष म उदयपुर, रतलाम आदि विविध स्थानो में हर्षोत्सव मनाया गया और सावजनिक एव आत्म हित के अनेक काय हुए। जलगाव मे इसी अवसर पर एक जैन बोर्डिंग की स्थापना की गई जो अब तक चल रही है।

चौमासा समाप्त होने पर भी दुबलता के कारण दो मास तक पूज्यश्री विहार न कर सके। मागशीप कृष्णा पचमी को आपके निकट वालोवरा निवासी श्रीचुन्नीलालजी तानड तथा जिनौली (मेरठ) निवासी श्रीवीरबलजी अग्रवाल ने दीक्षा ग्रहण की।

दीक्षा के अवसर पर प्रसिद्ध देश-सेवक सेठ जमनालालजी बजाज भी उपस्थित थे। आपने भाषण करते हुआ कहा—भारतवप के सदभाग्य है कि म० गाधी जैसे महान् पुरुष यहां पैदा हुए। यदि भारतीय जनता इनके बताए माग पर चले तो स्वराज्य प्राप्त करने में जरा भी देर न लगे परन्तु भारत की जनता उनके बताए रास्ते पर नहीं चल रही है, यह हमारा दुर्भाग्य है। उसी तरह जैन समाज का अहोभाग्य है कि पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज सा० जैसे आचार्य उन्हे प्राप्त हुए हैं। वे जो माग बताते उस पर जन समाज चले तो थोड़े ही दिनों में वह अपना पूरा विकास और विस्तार कर सकती है। आपका बताया मार्ग एव उपदेश हम स्वतत्रता प्राप्त करने म सहायक है, परन्तु मैं देखता हूँ कि जैन जनता आपके बताए हुए माग पर नहीं चलती। यह उसका दुर्भाग्य है। इत्यादि।

सैलाड़ा निवासी श्री तिलोकचदजी जसरूपजी घोतवा ने दीक्षा के अवसर पर सात हजार रुपया घाटकोपर—जीवदया खाते को दान दिये और सात हजार शिक्षा के निमित्त लगाए।

चातुर्मास समाप्त होने पर बहुत से साधुओं ने मालवा की ओर से पूज्यश्री के दर्शनार्थ जलगाव की ओर विहार किया।

प्रायश्चित्त

'जैन शास्त्र प्रायश्चित्त म ज्ञान, दर्शन और चरित्र की विशुद्धि बतलाते हैं।' अन्य दशनकारों ने भी प्रायश्चित्त को स्वीकार किया है। सभी दार्शनिक पाप से की विशुद्धि के लिए कहते हैं और इस प्रकार सभी ने प्रायश्चित्त का अंगीकार किया है। जैन दर्शन कहता है—प्रायश्चित्त द्वारा पाप का विशोधन करो। पाप के सन्ताप से बचते रहने की इच्छा करना और पाप का त्याग न करना प्रायश्चित्त नहीं है। पाप के परिणाम से अर्थात् दड से नही घबराना चाहिए वरन पाप से डरना चाहिए।

साधु का माग कितना कठोर है! संयम की मर्यादा के लिए कितना सावधान रहना पड़ता है! सच्चा साधु अपनी निमलता म लेश मात्र भी धब्बा लगना सहन नहीं कर सकता। उसकी आत्मा मलीनता की आशंका मात्र से कराह उठती है। शारीरिक लाचारी की दशा म अगर सयम की किसी मर्यादा का उल्लघन हो गया हो तो वह उसे छिपाने का प्रयत्न नहीं करता वरन् सवसाधारण के समक्ष अपनी वास्तविकता खोलकर रख देता है और इस प्रकार अपने अन्तःकरण को उज्ज्वल बनाता है। यह साधु की साधना है। स्वच्छ साधना ऐसी जीवित और जागृत होती है।

साधु अपनी सेवा गृहस्थ से नहीं कराता। मगर पूज्यश्री का लाचार होकर डाक्टरों की सहायता लेनी पड़ी। इस कारण जब डाक्टरों का उपचार चल रहा था तभी पूज्यश्री ने कहा—मेरे संयम म दोष लग गया है। अतः जब तक मैं प्रायश्चित्त लेकर शुद्धि न कर लूँ तब तक मेरा आहार पानी अलग रखो। सिर्फ एक साधु मेरी सेवा के लिए रहे। मगर सतों ने भक्ति वश प्रार्थना की—हम आपसे अलग होना नहीं चाहते। यथा समय प्रायश्चित्त लेकर हम भी शुद्धि कर लेंगे।

रोग से मुक्त होने पर पूज्यश्री ने रुग्णावस्था में लगे हुए दोषों का प्रायश्चित्त करना उचित समझा। अतः पौष कृष्णा १४ को व्याख्यान में चतुर्विध संघ के सामने आपने आलोचना की और शास्त्रानुसार छः महीने का छेद प्रायश्चित स्वीकार किया। आपकी सेवा में रहे सन्तों को भी चौमासी तप अर्थात् १२० उपवास का प्रायश्चित्त दिया गया।

उस समय भी पूज्यश्री में अन्न को पचाने की शक्ति नहीं आई थी। छाछ पर ही निर्वाह हो रहा था। अतः लम्बा विहार होना असम्भव था। फिर भी कुछ दिनों बाद थोड़ा थोड़ा विहार करते हुए आप भुसावल पधारे। वहाँ अग्रवाल, ओसवाल, माहेश्वरी, सरावगी और ब्राह्मण आदि मारवाडी भाइयो में पारस्परिक वैमनस्य हो रहा था। प्रत्येक दल दूसरे को नीचा दिखाने का अवसर देखता रहता था। आपस में इस संघर्ष से हजारो रुपयों का नुकसान हो गया था। एक दूसरे का दुश्मन बना हुआ था। पूज्यश्री ने आपस का यह वैमनस्य मिटाने के लिए उपदेश देना आरम्भ किया। दुर्बलता की दशा में भी पूज्यश्री निरन्तर से पूरा परिश्रम करने लगे। आपका उपदेश सुनकर सबका हृदय द्रवित हो गया और द्वेषाग्नि शान्त हो गई। फाल्गुन सुदी अष्टमी को सभी दलवालो ने व्याख्यान में खड़े होकर पूज्यश्री से प्रार्थना की—आपके उपदेश से हमारी द्वेष भावना शान्त हो गई है। अब आप जो भी व्यवस्था देंगे, हमें स्वीकार होगी।

दूसरे दिन पूज्यश्री ने व्यवस्था देते हुए कहा—द्वेष उत्पन्न करने वाली पुरानी सब बातें भूल जाओ और अब से ऐसा वर्त्ताव रखो जिससे प्रेम की वृद्धि हो।

पूज्यश्री की यह उदार व्यवस्था सभी ने स्वीकार की।

इसके पश्चात् पूज्यश्री ने भुसावल से विहार किया और आसपास के स्थानो में विचरण हुए आप पुनः जलगाव पधारे।

चौतीसवा चातुर्मास (१९८२)

पूज्यश्री के शरीर में अभी तक अन्न पचाने की शक्ति नहीं आयी थी। थोडे बहुत शाक के अतिरिक्त छाछ ही आपका मुख्य भोजन था। अन्न ग्रहण करने से पुनः रोग के आक्रमण की आशंका थी। अतः चातुर्मास के योग्य किसी अन्य स्थान में पहुँचना सम्भव न होने के कारण सम्वत १९८२ का चौमासा पूज्यश्री ने जलगाव में ही करना उचित समझा। इस बार भी जलगाव श्रीसंघ का धर्म प्रेम और उत्साह खूब प्रशंसनीय रहा।

चौमासे में उपदेश गंगा बहाकर पूज्यश्री ने मालवा की ओर प्रस्थान किया। मुनिश्री मोतीलालजी महाराज अब बहुत वृद्ध हो चुके थे। उन्होंने जलगाँव में ही स्थविर वास ले लिया। उनकी सेवा के लिए मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज तथा अन्य चार सन्त वहीं रह गये। अन्य सन्त पूज्यश्री के साथ मालवा की ओर आये।

जलगाँव से विहार करके पूज्यश्री माघ की पूर्णिमा के दिन रतलाम पधारे। रास्ते में जगह जगह अनेक उपकार हुए। कई स्थानो पर जातीय झगडे मिटाये। बखतगढ और बदनावर में अनेक विध त्याग प्रत्याख्यान के अतिरिक्त तीन गृ[illegible] सपत्नीक ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया।

पूज्यश्री जब रतलाम पधारे तो सम्प्रदाय [illegible] बडे बडे सन्त भी वहाँ पधार गये। सब मिलकर ४३ ठाना की उपस्थिति हो गई। लगभग इतनी ही संख्या में साध्वियाँ भी उपस्थित हुई। हजारो श्रावक पूज्यश्री तथा मुनिमण्डल के दर्शन करके नेत्र पवित्र करने के लिए आ गये। रतलाम संघ ने सभी आगन्तुकों के स्वागत और भोजन की समुचित व्यवस्था की।

पूज्यश्री सदैव सादगी के समर्थक रहे हैं। वे अवसर अपने उपदेश में फरमाया करते थे— मुनियो के दर्शन के निमित्त जो श्रावक आते हैं वे स्थानीय श्रावको के भाई बनकर आते हैं या जमाई बनकर आते हैं? अगर भाई बनकर आते हैं तो उन्हें मिठाइ वगैरह नहीं खाना चाहिए।

मिठाइयाँ और पकवान भोजन तैयार करने में विशेष आरम्भ होता है और सत्कार करनेवालों पर विशेष बोझ पड़ता है। अतः यह प्रथा हटा देने योग्य है? रतलाम—श्रीसंघ ने कच्चे और सादे भोजन की व्यवस्था करके अन्य संघों के सामने अच्छा आदर्श उपस्थित कर दिया।

बहुत से साधुओं और साध्वियों ने उग्र तपस्या की। चार गृहस्थों ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। यहाँ पूज्यश्री ने अपने सम्प्रदाय की समाचारी फिर एक बार संगठित की। सामयिक परिस्थिति पर नजर रखते हुए आवश्यकतानुसार अनेक नये नियम बनाए। श्रीसंघ के अभ्युदय के हेतु कई अच्छी योजनाएं तैयार की गईं।

रतलाम से विहार करके पूज्यश्री रामबाग पधारे। वहाँ रतलाम नरेश आपके दर्शन करने आये और आधा घंटा ठहरे। पूज्यश्री ने उन्हें आत्म कल्याण और प्रजा हित के लिए बहुत सी सूचनाएं दीं जिन्हें नरेश ने आभारपूर्वक स्वीकार किया और तदनुसार व्यवस्था करने का वचन दिया। राजधर्म एवं दुर्व्यसन त्याग पर आपका संक्षेप में भाषण भी हुआ। रतलाम नरेश उससे अत्यन्त प्रभावित हुए।

साम्प्रदायिक एकता

जावरा वाले सन्तों के अलग हो जाने पर पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय में दो आचार्य हो गये थे। दूसरे पक्ष के आचार्य पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज थे। एक सम्प्रदाय के दो भाग हो जाना कोई भी विवेकवान् व्यक्ति पसन्द नहीं करता था और फिर इस कारण मुनियों एवं श्रावकों में भी पारस्परिक मन मुटाव रहता था। कहीं कहीं तो श्रावकों में द्वेष का तीव्र वातावरण फैल गया था। समाज के अग्रणी व्यक्तियों ने दोनों को एक करने का प्रयत्न कई बार किया था किन्तु सफलता प्राप्त नहीं हुई थी।

जिस समय पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज जलगांव से रतलाम की ओर पधार रहे थे तब बरवताद में मुनिश्री देवीलालजी महाराज आपसे मिले। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के समक्ष साम्प्रदायिक प्रेम की स्थापना का प्रस्ताव रखा गया। पूज्यश्री शान्ति के प्रेमी थे। रतलाम में एकता सम्बन्धी वार्तालाप करना निश्चित हुआ। पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज पहले से ही रतलाम में विराजते थे।

पूज्यश्री अत्यन्त दूरदर्शी और संयम के सच्चे प्रेमी थे। जब साम्प्रदायिक एकता सम्बन्धी वार्तालाप आरम्भ हुआ तभी आपने मुनिश्री मोतीलालजी म० मुनिश्री चांदमलजी महाराज, मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज मुनिश्री घासीलालजी महाराज और मुनिश्री हीरालालजी महाराज को पंच नियुक्त किया कि समस्त साधुओं के अबतक के समस्त दोषों की शुद्धि कर ली जाय। कोई किसी का दोष छिपा न रक्खे। किसी भी साधु का कोई भी दोष मुझसे अज्ञात न रहे। इसके बाद कोई किसी को दोषी न कहे। इस प्रकार सब दोषों की शुद्धि की गई। उस समय तक कोई भी साधु दोषी न रहा। जावरा वाले सन्तों को लिफाफा देने से तीन दिन पहले ही सब शुद्धि कर ली गई। पूज्यश्री ने इस प्रकार आन्तरिक तैयारी कर ली।

दोनों पक्षों के प्रमुख श्रावकों ने एकता के लिए बातचीत प्रारम्भ की। किन्तु दुर्दैव से सफलता न मिली। मास कल्प पूर्ण हो जाने के कारण पूज्यश्री ने विहार किया और रामबाग पधारे। वहाँ से आगे विहार करने वाले थे कि उसी समय धर्मवीर सेठ दुर्लभजी भाई जौहरी, राष्ट्रभक्त सेठ राजमलजी ललवाणी सा० गोकुलचन्दजी जौहरी आदि ने आपसे होली तक रुकने की प्रार्थना की और एकता के लिए अधिक प्रयत्न करने का वचन दिया। पूज्यश्री सद्धर्म के लिए सदैव उद्यत थे। आप रुक गये और होली भी आ पहुँची मगर एकता का प्रयत्न सफल नहीं हुआ। तब में फागुन की पूर्णिमा के दिन पूज्यश्री ने विहार किया। आप डेढ़ मील चले थे कि ललवाणी

जी फिर आ पहुँचे। उन्होंने और रुकने की प्रार्थना की। पूज्यश्री फिर रुक गये मगर सफलता न हो सकी। सेठ राजोमलजी का प्रयत्न भी निष्फल हुआ। पूज्यश्री निराश होकर फिर विहार की तैयारी करने लगे। इतने मे अलवर निवासी श्रीउमरावसिंहजी की प्रेरणा से सेठ वधमानजी पीतलिया ने पुन रुकने की प्रार्थना की। पूज्यश्री शान्ति के परम उपासक थे अत पीतलियाजी के आग्रह से फिर रुक गये।

दोनों आचार्य एकान्त म मिले। दोनो ने निम्नलिखित एकता की शर्तें निश्चित की—

'आज मिति फाल्गुन सुदि पूर्णिमा सवत् १९८२ का रतलाम मे पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म० के सम्प्रदाय के दोनों पूज्य एकत्रित होकर नीचे लिखे अनुसार ठहराव करते हैं—

(१) जो लिफाफे दोनो तरफ म एक दूसरे को दिये गये थे व दोनो अपनी अपनी धर्म प्रतिज्ञा से यह लिख देते हैं कि लिफाफो के लेखानुसार दोनो तरफ कोई दोष नही है।

(२) आज मिति पीछे दोनो पक्ष वाले मन काल सम्बन्धी किसी भी साधु का दोष प्रकाशित करेंगे तो वे दोष के भागी होंगे और चतुर्विध सङ्घ के अपराधी ठहरेंगे।

(३) आज पीछे दोनों पूज्य श्रीहुक्मीचन्दजी महाराज के छठे पाट पर समझे जाएँगे।

(४) भविष्य म दोनो तरफ के सन्त परस्पर प्रेम-वत्सलता बढावें।

(५) दोनो तरफ के सन्त परस्पर निंदा न करें। यदि किसी साधु या किसी को कसूर नजर आवे तो उस धनी को व उस गच्छ के अग्रेसर को सूचित कर देवें।

(दस्तखत दोनों पूज्यों के)

चैत्र कृष्णा प्रतिपद् को दोनो आचार्य रामबाग पधारे और दोनो अपने-अपने आसनों पर बराबरी से विराजमान हुए। एकता के इस सम्वाद को सुनकर जनता हर्ष के कारण उमड़ पडी। पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज ने मगलाचरण करके पौने घटा तक व्याख्यान दिया। फिर पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज का भाषण आरम्भ हुआ। रतलाम रियासत के दीवान श्री ब्रजमोहननाथ भी वहा उपस्थित थे। भाषण सुनकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए।

इसके बाद मुनि श्रीचौथमलजी म० ने पहले दिन का प्रस्ताव पढकर सुनाया। दोनो आचार्यों ने हस्ताक्षर करके उसकी एक एक प्रति अपने पास रख ली। पूज्यश्री जवाहरलालजी म० ने अन्त म फरमाया— 'साम्प्रदायिक एकता का द्वार आज खुल गया है। साधुओं को परस्पर में प्रेम बढाने का मौका मिल गया है। यदि इसी प्रकार प्रेम की वृद्धि होती रही तो दोनो को एक सम्प्रदाय होते देर न लगेगी। हम सब को शान्ति तथा प्रेम की वृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए।

खेद है कि यह एकता लम्बे समय तक न टिक सकी।

प्रथम चैत्र कृष्णा ८ को पूज्यश्री जावरा पधार गये। उस समय ओसवाल पचायत ने ८ ओसवालों को जाति बहिष्कृत कर रखा था। आपके सदुपदेश से समझौता हो गया और आठो व्यक्ति जाति म शरीक कर लिये गये। जवाब खान बहादुर साहबजादा शेर अलीखा साहब भी पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आये थे। उन्होंने भी जातीय समझौते के लिए प्रयत्न किया।

इसके सिवाय पर स्त्री सेवन, धूम्र पान, विवाहादि अवसरों पर वेश्या नृत्य अश्लील गीतो का गाना विधवाओं का भडकीली पोशाक पहनना आदि आदि विषयो पर पूज्यश्री ने प्रभाव शाली भाषण दिये। इसमे जनता के विचारो और व्यवहार म पर्याप्त सुधार हुआ।

जावरा म विहार करके पूज्यश्री नगरी पधारे। यहाँ भटेवरा जाति मे चार वर्षों से आपस म वैमनस्य फैला था और इस कारण कुछ गावो में भी इसका प्रभाव पडा था। पूज्यश्री के उपदेश की वर्षा से सारा वैमनस्य धुल गया और लोगो के दिल साफ हो गये। रिंगणोद मे आपके

उपदेश से जनता ने गौशाला की स्थापना की और कन्या विक्रय, चर्बी वाले वस्त्रों का उपयोग तथा अन्य कुरीतियों का त्याग किया।

वहां से आप निबाहेड़ा, करजू, नन्दावता, करनाखेड़ी, आंकारेडा, दलावदा, घुघरका होते हुए मन्दसौर पधारे। जगह जगह गाव के ठाकुर और दूसरे लोगो ने हिंसा, मांस मदिरा सेवन, चर्बी के वस्त्र आदि का त्याग किया। अनेक हितकर प्रतिज्ञाऐं लीं।

मन्दसौर में आपके नौ व्याख्यान हुए। करजू वाले सेठ पन्नालालजी ने पांच हजार रुपया जीव दया और विद्या प्रचार के लिए दान किए।

मन्दसौर से आप नीमच पधारे। यहां भी कई व्याख्यान हुए। बहुत से चमारों ने मदिरा मांस तथा पशु बलिदान आदि का त्याग किया। महतरो ने भी आपके व्याख्यान से लाभ उठाया। अस्पृश्यता निवारण पर दिये हुए आपके व्याख्यान के कारण उच्च जाति वालों की अछूतों के प्रति घृणा कम हो गई। चमारों ने सबके पास बैठकर उपदेश सुना। जैनेतर जनता तथा अधिकारी वर्ग ने भी उपदेश का लाभ उठाया। इसी अवसर पर ब्यावर श्रीसंघ का प्रतिनिधि मण्डल चौमासे की प्रार्थना करने के लिए उपस्थित हुआ। पूज्यश्री ने सुख समाधे ब्यावर पधारने का तथा दूसरी जगह की चौमासे की प्रार्थना स्वीकार न करने का वचन दिया।

यहां से आप निम्बाहेडा सादोला होते हुए और विनौला से रुग्ण तपस्वी श्री उत्तम चन्दजी महाराज को साथ लेकर बड़ी सादड़ी पधारे। यहां समाज सुधार, विद्या प्रचार एवं जातीय प्रेम के अनेक कार्य हुए। एक पाठशाला की स्थापना हुई। बड़ी सादड़ी से जब कानोड़ पधारे तो वहां के रावतजी ने कृषकों को कई करो से मुक्त कर दिया। अनेक त्याग प्रत्याख्यान हुए। कानोड़ से विहार करके पूज्यश्री उदयपुर पधारे।

उदयपुर मे उपकार

वैशाख शुक्ला पूर्णिमा को पूज्यश्री २६ ठाना से उदयपुर पधारे। १३ वर्ष से केवल छाछ के आधार पर निर्वाह करने वाले तपस्वी मुनिश्री उत्तमचन्दजी महाराज भी आपके साथ थे। लोकोपयोगी विषयों पर पूज्यश्री के प्रभावशाली व्याख्यान हुए। बहुत से लोगो ने नीचे लिखे अनुसार त्याग पच्चक्खाण किए।

(१) लोग परस्त्री को माता के समान समझने लगे और उसके सेवन का त्याग किया।

(२) छल कपट आदि के द्वारा परद्रव्य हरण का त्याग।

(३) गाय, भैंस सूअर आदि की हिंसा के कारणभूत चरबी लगे वस्त्रों का त्याग।

(४) शिकार, मांस, मदिरा तथा जीव हिंसा का त्याग। मुमताज नाम की एक वेश्या ने एक ही दिन के उपदेश से मांस व मदिरा का त्याग कर दिया।

(५) वेश्या-नृत्य, गन्दी गालियां गाना और महीन वस्त्र के पहनने का त्याग।

(६) विधवाओं द्वारा जेवर तथा भड़कीले, वस्त्रों का पहनना और आपस में कदाग्रह करने का त्याग।

(७) बीड़ी, भांग, चाय, गांजा आदि मादक द्रव्यों का सेवन का त्याग। अधिक भोजन, मकानों की गन्दगी तथा दूसरी अस्वास्थ्य बातों का सेवन का त्याग।

(८) कसाइयों ने प्राणि वध का कम करने तथा अगता आदि रखने का निश्चय किया।

(९) वर्त्तमान उदयपुर नरेश ने जो उस समय युवराज थे, पूज्यश्री का व्याख्यान सुना और प्रजा हित तथा जीव दया के लिए विशेष ध्यान देने का वचन दिया। दो दिन तक अगता रखाया।

(१०) सार्वजनिक हित के लिए एक फण्ड कायम किया गया।

ज्येष्ठ शु० ४ को उदयपुर से विहार करके बेदला, धर्मशाला गागुदा होते हुए ब्यावर पधारे।

पैंतीसवाँ चातुर्मास (१९८३)

पूज्यश्री का संवत् १९८३ का चौमासा १८ ठाणा से ब्यावर में हुआ। तपस्वी मुनि श्रीसुन्दरलालजी महाराज ने धोवन पानी के आधार पर ७६ दिन की तपस्या की। तपस्वी मुनि केसरीमलजी महाराज ने ६६ दिन की तपस्या की। दोनों तपस्याओं के पूर पर अनेक धार्मिक उपकार हुए।

भाद्रपद शुक्ला षष्ठी को जयतारण निवासी सुगालचंदजी मुकाणा ने २५ वर्ष की अवस्था में वैराग्य के साथ दीक्षा अंगीकार की। वैरागीजी ने चार हजार रुपया इसी अवसर पर शुभ कार्यों में लगाया। बनु दानिवासी और बगनौर के प्रतिष्ठित व्यवसायी श्रीमान् सेठ गंगाराम जी ने ब्यावर की पाठशाला के दस छात्रों को छात्रवृत्ति के रूप में ३६००) रु० प्रदान किये।

ब्यावर के इस चौमासे में कुछ साम्प्रदायिक अभिनिवेश वाले लोगों ने अशान्ति फैलाने की चेष्टा की, किन्तु पूज्यश्री की असीम शान्ति के सागर में वह विलीन हो गई। ता० १ अगस्त को मौलाना मुहम्मद अली पूज्यश्री के दर्शन करने आये और उपदेश सुनकर बहुत प्रभावित हुए।

उन्हीं दिनों ता० ७ नवम्बर १९२६ के 'तरुण राजस्थान' के सम्पादक ने अपनी एक टिप्पणी में लिखा था—

'आजकल नामधारी साधुओं की कमी नहीं है। इनकी संख्या इतनी अधिक है कि सच्चे साधु मिलना दुर्लभ सा है। किन्तु साधु जवाहरलालजी ऐसे ही दुर्लभ साधुओं में हैं। आप जैनियों के मुख्य आचार्यों में गिने जाते हैं। उस दिन ब्यावर में हमें आपकी कथा सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। रहन सहन और जीवन बिलकुल प्राचीन ढंग का होते हुए भी आपके विचार और शक्ति नवीन हैं। आप धर्म के प्राचीन सिद्धान्तों को देश, काल और पात्र के अनुकूल नए ढंग से इस प्रकार उपस्थित करते हैं कि श्रोताओं को अपने इस अर्वाचीन मार्ग पर चलने के लिए उत्तम मार्ग मिल जाता है। देश की आवश्यकताओं को आप खूब समझते हैं। खादी प्रचार और अछूतोद्धार पर आपका बहुत ध्यान है। जीवन को सादा और सेवामय बनाने का आप अपने अनुयायियों को बराबर उपदेश करते रहते हैं। सचमुच भारतवर्ष में यदि भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के आचार्य जवाहरलालजी महाराज का अनुकरण करें तो देश का बड़ा लाभ हो सकता है। हमारा अपने स्थानीय ओसवाल भाइयों से अनुरोध है कि इन सच्चे साधु को निमन्त्रण देकर उनके उपदेशों से लाभ उठावें।'

चातुर्मास की समाप्ति पर विहार होने से पहले आर्य समाज, ब्यावर, के उपप्रधान श्री चांदमलजी मोदी ने नीचे लिखे उद्गार प्रकट किए—

पूज्यवर और अन्य महानुभावो!

समय बीतते देर नहीं लगती। आज पूज्य महाराज के चौमासे की अवधि समाप्त होती है कल आपका विहार होगा।

इस अवसर पर मैं अपने हृदय के उद्गार पूज्य महाराज तथा आप लोगों के समक्ष प्रकट करना चाहता हूँ।

मुझे पहले पहल महाराज के व्याख्यान सुनने का सौभाग्य कुछ वर्ष पहले तब मिला था जब कि महाराज बीकानेर से पूज्य पदवी प्राप्त कर पधारे थे। उसी व्याख्यान से मेरी धर्म चर्चा सुनने की रुचि हुई थी।

उसके पहले अंग्रेजी स्कूलों की शिक्षा के कारण मेरी धर्म शास्त्र सुनने की रुचि नहीं थी, जैसे कि प्रायः स्कूल के लड़कों में नहीं होती है। मैं व्यावहारिक किताबों तथा अखबारों में ही सारी विद्वता समझता था। लेकिन उस दिन का व्याख्यान सुनने से मेरी इच्छा धर्म के व्याख्यानों को सुनने की हो गयी और उसके बाद मैंने रतलाम में भी पूज्य महाराज के व्याख्यान सुने। अन्य साधुओं का व्याख्यान सुनने और धर्म शास्त्र पढ़ने की ओर भी रुचि हो गई।

इसलिए बहुत अर्से से अपने ऊपर पूज्यश्री का अतीव उपकार मानता हूँ। इस चौमासे में भी मैंने आपके कई व्याख्यान सुने हैं। यदि कभी नहीं आया तो भी अपने काकाजी से व्याख्यानों के नोट सुन लिए हैं।

इस पर से मैं यह कहने का साहस करता हूँ कि महाराज ने हमेशा ऐसी रीति से व्याख्यान दिया है कि किसी अन्य मत की निन्दा न हो। आपके विचार सब मतों को समता में लाने के रहे हैं ऐसी उदारता का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि भिन्न भिन्न मतावलम्बी महाराज श्री के पास बराबर आते हैं और मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं।

नोटिसों द्वारा जो थोड़ी गड़बड़ हुई है उसका ज्यादा विवेचन न करके मैं इतना ही कहूँगा कि यह हमारी अधूरी विद्या का परिणाम है, जिससे हम एक दूसरे के विचारों को नहीं सह सकते और उनके उपकारों को भूल जाते हैं।

महाराज की दूसरी विशेषता समाज सुधार है। आपके व्याख्यान का अधिक भाग समाज सुधार की प्रेरणा करता है। आपने कई बार कहा है, सामाजिक सुधार के बिना आध्यात्मिक उन्नति पूर्ण नहीं हो सकती। आपने महाराज के व्याख्यानों में सामाजिक विषयों पर बहुत सुना होगा। बाल वृद्ध विवाह, विधवाओं की दशा, फिजूलखर्ची, गहने, कपड़, अछूतोद्धार इत्यादि विषयों पर धार्मिक दृष्टि से पूज्यश्री ने सुन्दर तथा असरकारक विवेचन किया है।

महाराज की तीसरी विशेषता जैन समाज के विचारों का सुधार करना है। धर्म को समझने में जो गलत विचार फैले हुए हैं, उनका पूज्यश्री ने निर्भय होकर विरोध किया है। गोपालन आदि कार्यों को उच्च दृष्टि से देखने तथा जैन समाज में वीरता के भावों को फैलाने आदि का प्राचीन शास्त्रानुसार जोरदार समर्थन किया है और उन्हें अच्छी तरह सिद्ध किया है। महाराजश्री धार्मिक सुधारक, समाज सुधारक और जैन धर्म प्रचारक हैं।

ऐसे पूज्य महानुभावों का हमारे ब्यावर नगर में पधारना अत्यन्त सौभाग्य की बात है। हम आशा करते हैं कि महाराज हमारे ऊपर विशेष कृपा करते हुए फिर भी दर्शन देंगे।

अन्त में मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वे महाराज को चिरायु करें जिससे जनसमाज का आपके धर्मोपदेशों द्वारा विशेष कल्याण हो।

चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्यश्री बावरा, जेठाणा, सवीजी आदि स्थानों में धर्मोपदेश देते हुए अजमेर पधारे।

अजमेर में श्रीयुत जालिमसिंह जी कोठारी पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। ये श्रावकसमाज के एक उत्साही कार्यकर्त्ता थे। पूज्यश्री का उपदेश सुनकर अत्यन्त प्रभावित हुए। एक दिन उन्होंने कहा—मैं समझता था कि जैनधर्म में कार्यकर्त्ता के लिए स्थान नहीं है। वह केवल निषेध सिखाता है—यह मत करो यह मत करो। इस प्रकार वह मनुष्य को प्रत्येक प्रवृत्ति से अलग हटाता जाता है। समाज सेवा या लोक सेवा के लिए उसमें स्थान नहीं है। मेरा जीवन आरम्भ से ही प्रवृत्तिमय रहा है। अकर्मण्य होकर बैठना मुझे पसंद नहीं है। एकान्त निवृत्ति मार्ग मेरी रुचि के प्रतिकूल है। आपके (पूज्यश्री के) व्याख्यानों से मैं मानने लगा हूँ कि जैनधर्म में सम्यक् प्रवृत्ति के लिए भी बहुत बड़ा क्षेत्र है। वह सामाजिक कार्यों का विरोध नहीं करता। मुझे जैनधर्म

का यह स्वरूप पहले सुनने को मिला होता तो सम्प्रदाय परिवर्तन करने की कोई आवश्यकता ही न रहती।

व्याख्यान मे इस प्रकार के उद्गार प्रकट करने के बाद वे कई बार दूसरे समय मे भी पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए और अपनी शंकाओं का समुचित समाधान पाकर मुनिश्री के भक्त बन गये। उनका परिवार अब जनधर्म का अनुयायी है।

जालिमसिहजी जन्मत जैन थे और फिर आर्यसमाज की ओर उनकी रुचि हो गई थी। उनकी यह घटना जैन समाज के लिए विशेष महत्व रखती है। जनधम का वास्तविक स्वरूप समझाने वाले योग्य उपदेशकों की कमी के कारण पता नही कितने जैनी अन्य धर्मी बन गये हैं!

वाणी का प्रभाव

साधु की चर्या बडी कठिन है। निर्दोष सयम का पालन करत हुए किसी मुनि का सब जगह विहार कर सकना सभव नहीं है। नगे पर नगे सिर, पैदल विहार बयालीस दोष टाल कर आहार पानी लेना समिति गुप्ति आदि का पालन आदि ऐसे नियम है जिनकी सब जगह रक्षा होना कठिन है। फिर भी कुछ मुनि ऐसे स्थानो मे भी कभी कभी विचरते हैं और परीषहों को सहन करने में आनन्द मानते हैं, मगर प्रथम ता विद्वान साधुओं की ही अत्यन्त कमी है और उनमें भी अपरिचित क्षेत्रो मे विचरने वाल इने गिने हैं। परिणाम यह है कि बहुत स क्षेत्र ऐसे रह जाते हैं जहां धम की चचा ही कभी नही हो पाती। समाज म सुयोग्य विद्वान श्रद्धाशीलगृहस्थ उपदेशक हो तो वे जगह जगह घूमकर धम प्रचार कर सकन है और जनो को विधर्मी होने से बचा सकते हैं।

विद्यमान धर्मोपदेशकों का भी इस घटना पर ध्यान देने की आवश्यक्ता है। जैनधम का मार्मिक स्वरूप समझ कर उस जनता के समक्ष रखने की इस युग मे बडी आवश्यक्ता है। ऐसा किये बिना धम की प्रभावना की विशेष आशा कैसे की जा सकती है?

पौष कृष्ण १२ को आपश्री ने अजमेर से विहार किया। किसनगढ होते हुए जयपुर पधारे। जयपुर छोटी काशी माना जाता है। सस्कृत तथा अगरेजी शिक्षा का अच्छा केन्द्र है। यहा पूज्यश्री के उपदेश म बडे बडे विद्वान आन लगे और उपदेश से प्रभावित होकर सभी मुक्त कठ से प्रशंसा करने लगे। उस समय 'जनजगत्' के सपादक ने लिखा था—

"साधु लाग यदि विद्वान्, लोकस्थिति को जानन वाले और धम क वास्तविक सिद्धान्तो को प्रकट करन वाले हों तो उनके उपदेश का कैसा बढिया असर होता है, इसका एक ज्वलन्त उदाहरण गत ता० २४ फरवरी १९३७ को जयपुर म देखा गया, जब कि श्वेताम्बर बाईस टोला पथ के पूज्य आचाय श्रीजवाहरलालजी महाराज का एक सार्वजनिक व्याख्यान हुआ। साधुजी महाराज न करीब तीन घटे तक व्याख्यान दिया और बीडी, सिगरेट, भाग आदि मादक द्रव्य वेश्यागमन, परस्त्री सेवन कन्याविक्रय वृद्ध विवाह आदि का विरोध, अछूतोद्धार, गोरक्षा व हिन्दू सगठन पर ऐसा प्रभावशाली व्याख्यान दिया कि श्रोता गदगद हो गए।

व्याख्यान म बहुसख्यक अजैन, प्रतिष्ठित सज्जन व विद्वान लोग उपस्थित थ। सभी ने मुक्तकठ से आपके उपदेश की प्रणाली की प्रशसा की। आपके व्याख्यान की खास खूबी यह था कि उसम सकीणता की तनिक भी बू न थी। किसी भी मत वाले को कडवी लग एसी कोई बात न होती थी। व्याख्यान के अत में बीसियो अजैनो ने आपके चरण छुए जिनम रायबहादुर डाक्टर दलजनसिहजी खानका, चीफ मेडिकल आफिसर जयपुर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वास्तव म अगर उच्च चारित्र के साथ विद्वता हो तो ऐसी आत्माओ के उपदश का असर बहुत होना

है। आज जैन समाज में विद्वान् साधुओं का बहुत बड़ा अभाव है और यह इस धर्म की बड़ी भारी कमी है।'

जयपुर समाज-सुधारक मंडल की ओर से पूज्यश्री के दो जाहिर व्याख्यान हुए। हजारों की संख्या में जनता ने लाभ उठाया। बाल विवाह, वृद्ध विवाह, कन्यानृत्य, अश्लील गीत तथा रात्रि भोजन आदि बुराइयों को बंद करने के लिए लोगों ने हस्ताक्षर कर दिये। गोचरभूमि की व्यवस्था तथा दूध देनेवाले पशुओं को बचाने के लिए पिंजरापोल कमेटी की स्थापना हुई।

इस अवसर पर पंजाब सम्प्रदाय के युवाचार्य श्रीकाशीरामजी महाराज ने पूज्यश्री से पंजाब पधारने का अनुरोध किया था। अलवर देहली तथा दूसरे श्रीसंघों की भी प्रार्थना थी। जयपुर श्रीसंघ चौमासे के लिए प्रबल आग्रह कर रहा था किंतु पूज्यश्री बीकानेर श्रीसंघ को आश्वासन दे चुके थे। अतः आपने बीकानेर की ओर विहार किया।

जयपुर नगर से बाहर पधारते ही जलगाँव से तार द्वारा सूचना मिली कि तपस्वीराज मुनि श्रीमोतीलालजी महाराज ने जिनका परिचय पहले दिया जा चुका है अधिक बीमारी के कारण संथारा कर लिया है। पूज्यश्री वहीं ठहर गए। थोड़ी देर बाद स्वर्गवास का समाचार आ गया। पूज्यश्री ने बड़े ही करुणोत्पादक शब्दों में तपस्वीजी की जीवनी सुनाई। श्रोताओं की आंखों से अश्रुधारा बहने लगी। उस समय जीवदया के लिए ६०००) रु० का चंदा हुआ। बहुत से व्यक्तियों ने अपनी अपनी ओर से कसाइयों के शिकार होने वाले पशुओं के प्राण बचाने का निश्चय किया।

विदा के समय एक साहित्यरत्न पंडितजी ने नीचे लिखे उद्गार प्रकट किये—

यो जैनागमतत्त्वविद् भव महा सन्तापहारी गिरा
नित्यं पूरयते स्म पारसमलं नो, मानवानां हृदि।
पीत्वा यस्य वचः सुधां कलिजना मुञ्चन्ति दोषान् खिलान्।
स श्रीमुक्तजवाहरो विजयतामाचार्यवर्यश्चिरम्॥

मनहर छंद

जय जवाहरलाल मुनि हम धन्य कहते आपको।
आपने उपदेश से, सचमुच हटाया ताप को॥
कोमल मधुर रचनावली, पीयूष सी गुणवान है।

धर्म की रक्षार्थ सम मन दे रहे स्वच्छन्द हो।
क्या पुरुष हो या स्वयं ये मूर्तिधर निष्पन्द हो॥
आपने इस जयपुरी को उच्च गौरव पा लिया।
जो समाज सुधार हित मन सब कुछ शुभ सा किया॥
लोग जयपुर के तुम्हें सब धन्य ही कहते रहे।
पर प्रभो हम की शुभाशा के लिए गुण कह रहे॥
जो यहाँ से आज इतने शीघ्र आप पधारते।
इस नगर पर और कुछ भी आप करुणा धारते॥
तो सुनिश्चय था कि जयपुर कुछ सुधार दिखायगा।
सज्जनों की यत्नता से फिर न धोखा खायगा॥
सुविनय है प्रार्थना, कृपया इसे उर धारिए।
आप चातुर्मास में जयपुर समाज पधारिए॥
बस दया के सिन्धु हरि की जो कृपा हम पर रही।
तो जवाहर निज जवाहर फिर दिखायेंगे यहीं॥

जयपुर से विहार करके बगुरु दूदू, मयराणा, बड़ रूपनगढ, भादवा आदि छोटे बडे गाया में धर्म पचार करते हुए पूज्यश्री १२ ठाा से कुचेरा पधारे। बहू म सरावगी, ओसवाल, माहेश्वरी और अग्रवाला मे वमनस्य चल रहा था वह आपके उपदेश से दूर हो गया। माग मे प्राय सभी ठाकुरो ने पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया। कई ठाकुरो ने मासाहार, मदिरा आदि का त्याग किया। रूपनगढ के ठाकुर साहब ने पूज्यश्री के प्रति खूब भक्ति भाव पकट किया। आप अपन लवाजमे के साथ पूज्यश्री के स्वागत के लिए सामने आय पूज्यश्री की सेवा करके अच्छा लाभ लिया।

कुचेरे से विहार करके नागौर, नौखा, सुरपुरा, देशनोक, उदरामसर आदि स्थाना को पवित्र करते हुए जेठ शु० ५ को पूज्यश्री बीकानेर पधारे।

छत्तीसवा चातुर्मास (१९८४)

कुछ दिन बीकानेर विराज कर पूज्यश्री भीनासर पधार गए और ठा० १३ स सम्वत् १९८४ का चौमासा भीनासर मे किया।

भीनासर का यह चौमासा बीकानेर के इतिहास म बड़ा महत्व रखता है। पूज्यश्री के व्याख्यानो का तथा तपस्वी मुनियो की तपस्या का जन एव जनेतर जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा। उसी अवसर पर श्वे० स्थानकवासी जन कान्फ्रेंस का आठवा अधिवेशन तथा भारत जन महा मण्डल का वार्षिक अधिवेशन होने से सोने मे सुगध हो गई।

इस चातुर्मास मे सन्तो और सतियो ने निम्नलिखित तपस्या की —

(१)	तपस्वी मुनिश्री सुन्दरलालजी महाराज	६० दिन
(२)	,, श्री केसरीमलजी महाराज	९५ दिन
(३)	श्री वालचन्दजी महाराज	२५ दिन
(४)	महासती श्रीगुरसुन्दरजी	४० दिन
(५)	,, श्रीचम्पाजी	३६ दिन

इनके अतिरिक्त मासखमण तथा उसके भीतर की बहुत सी तपस्याएँ हुई। एक गृहस्थ महिला (भीनासर निवासी श्रीमान् धनराजजी पटवा की धमपत्नी) ने एक मास की (मासखमण की) तपस्या की। मुनिश्री सुन्दरलालजी महाराज की तपस्या का पूर भाद्रपद शुक्ला १४ को था और तपस्वी श्रीकेसरीमलजी म० की तपस्या का पूर आश्विन शुक्ला १३ रविवार को था। उस दिन राज्य की ओर से अगता रखा गया। कान्फरेंस क अधिवेशन के कारण हजारा व्यक्ति बाहर से आये। इन महातपस्वी मुनियो का दशन करके वे अपन का धय समझने लग।

पूज्यश्री के व्याख्यान का मुख्य विषय श्रावक के १२ व्रत अस्पृश्यतानिवारण, बाल वृद्ध विवाह, मृत्युभोज आदि कुरीतियो का निवारण, चर्बी वाले वस्त्रा एव अय म ारम्भी वस्तुओ का निषेध, ब्रह्मचय आदि होते थे जिनम व्यक्ति का जीवन उन्नत हो समाज एव राष्ट्र का कल्याण हो और इस प्रकार विश्व-कल्याण साधा जा सके।

एक बार आपका व्याख्यान सुनन के लिए लगभग तीन सौ अछूत आए। व्याख्यान म उन्हें सघ के साथ बठने को स्थान दिया गया। पूज्य महाराज ने उस दिन मासाहार और मदिरा पान की बुराइया का विस्तार पूवक वणन किया। इनसे होने वाली आध्यात्मिक नतिक सामा जिक और राष्ट्रीय हानियों का मार्मिक विवेचन किया। परिणामस्वरूप बहुत स अछूतो ने मदिरा और मास का त्याग करके अपना जीवन उन्नत बनाया।

कालेज तथा स्कूलो के विद्यार्थी राज्य कर्मचारी, राजवशीय एव इतर सज्जन बडी रुचि के साथ आपका उपदेश सुनने आते थे। बीकानेर से भीनासर यद्यपि तीन मील दूर है तथापि

बहुत से धर्मप्रेमी जैनेतर भाई प्रतिदिन उपदेश सुनने आते थे। एक बार पूज्यश्री का उपदेश बीकानेर नोबिल स्कूल (राजकुमार विद्यालय) में विद्यार्थियों के समक्ष विशेषतः ब्रह्मचर्य पर ही हुआ। उपदेश अत्यन्त प्रभावशाली और मार्मिक था। उसका श्रोताओं पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। आपने कहा—

आजकल ब्रह्मचर्य शब्द का सर्वसाधारण में कुछ संकुचित-सा अर्थ समझा जाता है पर विचार करने से मालूम होता है कि वास्तव में उसका अर्थ बहुत विस्तृत है। ब्रह्मचर्य का अर्थ बहुत उदार है अतएव उसकी महिमा भी बहुत अधिक है। हम ब्रह्मचर्य का महिमागान नहीं सकते। जो विस्तृत अर्थ को लक्ष्य में रखकर ब्रह्मचारी बना है उसे अखण्ड ब्रह्मचारी कहते हैं। अखंड ब्रह्मचारी का मिलना इस काल में अत्यन्त कठिन है। आजकल तो अखंड ब्रह्मचारी के दर्शन भी दुर्लभ हैं। अखंड ब्रह्मचारी में अद्भुत शक्ति होती है। वह चाहे सो कर सकता है। अखंड ब्रह्मचारी अकेला सारे ब्रह्माण्ड को हिला सकता है। अखंड ब्रह्मचारी वह है जिसने अपनी समस्त इन्द्रियों को और मन को अपने अधीन बना लिया हो जो इन्द्रियों और मन पर पूर्ण आधिपत्य रखता हो। इन्द्रियां जिसे फुसला नहीं सकतीं मन जिसे विचलित नहीं कर सकता। ऐसा अखंड ब्रह्मचारी ब्रह्म का शीघ्र साक्षात्कार कर सकता है। अखंड ब्रह्मचारी की शक्ति अजब गजब की हो सकती है।

अपूर्ण ब्रह्मचर्य केवल वीर्यरक्षा को कहते हैं। वीर्य वह वस्तु है जिसके सहारे सारा शरीर टिका हुआ है। यह शरीर वीर्य से बना भी है। अतएव आंखें वीर्य हैं, कान वीर्य हैं, नासिका वीर्य है, हाथ पैर वीर्य हैं—सारा शरीर वीर्य है। जिस वीर्य से सारे शरीर का निर्माण होता है उसकी शक्ति क्या साधारण कही जा सकती है? किसी ने ठीक ही कहा है—

मरणं बिन्दुपातेन जीवनं बिन्दुधारणात्।

अर्थात् वीर्य के आधार पर ही जीवन टिका है। वीर्यनाश का फल मृत्यु है।

जो वीर्य रूपी राजा को अपने काबू में कर लेता है वह सारे संसार पर अपना दावा रख सकता है। उसके मुख मण्डल पर विचित्र तेज चमकता है। उसके नेत्रों से अद्भुत ज्योति टपकती है। उसमें एक प्रकार की अनोखी क्षमता होती है। वह प्रसन्न नीरोग और प्रमोदमय जीवन का धनी होता है। उसके इस धन के सामने चांदी सोने के टुकड़े किसी गिनती में नहीं हैं।

जिस वीर्य के प्रताप से तुम्हारे पूर्वजों ने विश्व भर में अपनी कीर्ति-कौमुदी फैलाई थी उस वीर्य का तुम अपमान करोगे?

वीर्य का अपमान न करने से मेरा आशय यह नहीं है कि आप विवाह ही न करें। मैं गृहस्थ धर्म का निषेध नहीं करता। गृहस्थ को अपनी पत्नी के साथ मर्यादा के अनुसार ही रहना चाहिए। वीर्य का अपमान करने का अर्थ है—गृहस्थ धर्म की मर्यादा का उल्लंघन करके पर-स्त्री के मोह में पड़ना वेश्यागामी होना अथवा अप्राकृतिक कुचेष्टाएँ करके वीर्य का नाश करना। भीष्म पितामह ने आजीवन ब्रह्मचर्य पाला था। आप उनका अनुकरण करके जीवनपर्यन्त ब्रह्मचर्य पालें तो खुशी की बात है। अगर आपसे यह नहीं हो सकता तो विधिपूर्वक लग्न करने की मनाई नहीं है। पर विवाहिता पत्नी के साथ भी सन्तानोत्पत्ति के सिवाय—वीर्य का नाश नहीं करना चाहिए। स्त्रियों को भी यह चाहिए कि वे अपने मोहक हाव भाव से पति को विलासी बनाने का प्रयत्न न करें। जो स्त्री सन्तानोत्पत्ति की इच्छा के सिवाय केवल विलास के लिए अपने पति को विलास में फंसाती है वह स्त्री नहीं पिशाचिनी है। वह अपने पति के जीवन का शोषण करती है।

ऐसे भीष्म को पहचानो? भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य पालन करके दुनिया के कानों में ब्रह्मचर्य का पावन मंत्र फूंका था। आज उन्हीं की संतान कहलाते हुए उन्हीं के मंत्र को तुम क्यों भूल रहे हो?

ब्रह्मचर्य पालने वालो का अथवा जो ब्रह्मचर्य पालना चाहते हैं उन्हे विलास पूर्ण वस्त्रो से, आभूषणो से तथा आहार से सदैव बचना चाहिए। मस्तिष्क मे कुविचारो का अकुर उत्पन्न करने वाले साहित्य को हाथ भी नहीं लगाना चाहिए।

पूज्यश्री का यह भाषण सुनकर अनेक श्रोताओ ने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

चर्बी लगे वस्त्रो को पूज्यश्री धार्मिक सामाजिक और राष्ट्रीय दृष्टि से अत्यन्त हेय समझते थे। जो श्रावक कीडो मकोडो की दया पालते हैं उनके लिए ऐसे वस्त्र पहनना कहाँ तक शोभा दे सकता है? गो को माता मानने वाले हिन्दुओं के लिए तो गोवध कराने वाले वस्त्रो का स्पर्श करना भी अनुचित है। इन सब विषय पर पूज्यश्री यदा कदा विवेचन करते ही रहते थे। एक दिन विशेष रूप से इसी विषय पर आपका उपदेश हुआ अनेक श्रोताओ ने चर्बी के वस्त्रो का त्याग करके खादी के अतिरिक्त अन्य वस्त्र न पहनने की प्रतिज्ञा ली। उसी दिन सेठ अमृतलाल रामचन्द झवेरी ने तार देकर पाँच सौ रुपया की खादी बम्बई से मगवाई। वह आते ही बिक गई।

श्री श्वे० साधुमार्गी जन हित कारिणी सस्था की स्थापना

खादी की इस उपयोगिता के साथ साथ पूज्यश्री ने विधवाओ की दुर्दशा का भी रोमाच कारी वर्णन किया। श्रोताओ के हृदय सहानुभूति से भर गए। उसी समय बीकानेर तथा भीनासर के प्रमुख व्यक्तियों की एक सभा हुई और पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के स्वर्गवास के अवसर पर गुरुकुल खोलने के लिए चन्दे के जो वचन प्राप्त हुए थे उन्हे सहायता, शिक्षा प्रचार तथा खादी प्रचार के कार्यों मे लगाने का निश्चय किया। इस कार्य के लिए विजयदशमी को श्री श्वे० साधु मार्गी जैन हितकारिणी सस्था' के नाम से एक सभा की स्थापना हुई। इसके प्रथम सभापति श्री-मान् सेठ भरोदान जी सेठिया और मन्त्री श्रीमान् कुवर जेठमलजी सेठिया निर्वाचित हुए। इसके पश्चात इसके सभापति श्रीमान् सेठ मगनमलजी सा० कोठारी हुए।

विचारो को कार्यरूप मे परिणत करने के लिए जिन जिन सज्जनो ने वचन दिया था, सब से रुपया दे देने की प्रार्थना की गई। अभी तक जिसने जितना रुपया देने का वचन दिया था उसी के यहाँ वह जमा था उस बात को आठ वर्ष बीत गए थे।

अब इन विचारो को कार्य में परिणत करने का अवसर आया। तब कितने ही सज्जनो ने अपने वचन के अनुसार रुपये दे दिये किन्तु कुछेक सज्जनों ने अपनी पूर्ववत स्थिति रहते हुए भी रुपये नहीं दिये और कितने ही सज्जनो ने अपनी आगे वाली स्थिति न रहने की भावना की प्रबलता के कारण अपने वचनानुसार सस्था को रुपये दे दिये। परिणाम स्वरूप सवा दो लाख के वचनों मे से एक लाख रुपये से कुछ अधिक रकम जमा हुई। उससे श्रीमान् मदनमलजीसा बोठिया के हाथ से हुन्नर शाला' का उद्घाटन हुआ। इसके अवैतनिक मनेजर के रूप मे श्रीमान् सूरजमलजी लोठा ने काम किया। इस सस्था के द्वारा विधवा बहिनें तथा दूसरे भाई सूत कात कर कपडा बुनकर अथवा दूसरे किसी प्रकार का कार्य करके अपना भरण-पोषण करते थे जो बहिनें परदा या किसी दूसरे कारण से सस्था भवन मे कार्य करने नहीं आ सकती थी उन्हें घर पर ही चरखा दे दिया गया था और ऊन पहुचा दी जाती थी। कुछ दिनो मे सस्था का कार्य अच्छा चलने लगा। ऊनी आसन, वस्त्र तथा दूसरी वस्तुओं के साथ साथ बहुत सी असमर्थ बहिनो तथा भाइयों को सहायता मिलने लगी।

आजकल इस सस्था द्वारा गाँवो मे शिक्षा प्रचार तथा सहायता कार्य चल रहा है। नोखा मण्डी नोखा गाँव, उदासर भज्जू तथा सारुडा मे इसकी तरफ से पाठशालाएँ चल रही हैं। रासीसर मे भी एक पाठशाला आठ वर्ष तक चली। वहाँ तेरापंथियो की अधिक आबादी है। उन्होंने

अपनी तरफ से पाठशाला खोलने का निश्चय किया। हितकारिणी संस्था का उद्देश्य किसी भी सम्प्रदाय के संघर्ष में खड़ा होने का नहीं है। जब उसने देखा कि एक दूसरा समाज शिक्षा प्रचार के कार्य को अपने हाथ में ले रहा है तो वहां की पाठशाला बन्द कर दी गई और सारुण्डे में एक पाठशाला खोल दी गई। यह स्थान नोखामण्डी से २४ मील है। आस पास में कोई स्कूल नहीं है। सबसे नजदीक का स्टेशन नोखा ही है। इसी प्रकार संस्था आवश्यक स्थानों में शिक्षा का प्रचार कर रही है।

सहायता विभाग के द्वारा कुछ असमर्थ बहिनों तथा भाइयों को सहायता दी जाती है।

उपरोक्त कार्यों में संस्था के मूलधन का ब्याज ही खर्च किया जाता है। एक लाख में से सत्तर हजार का ब्याज शिक्षा प्रचार में और शेष सहायता कार्य में किया जाता है। समय-समय पर अन्य उपयोगी कार्य भी यह संस्था करती है। प्रस्तुत जीवन चरित्र तथा पूज्यश्री के अन्य साहित्य के प्रकाशन के निमित्त संस्था ने १० हजार व्यय करना निश्चित किया है। संस्था का कार्य स्थायी और ठोस है।

विधवा बहिनें और सादगी

जीवन में जब कृत्रिमता आती है तो जीवन का वास्तविक अभ्युदय रुक जाता है। मगर जिसे संयममय जीवन बिताना हो उसके लिए तो सादगी धारण करना और कृत्रिमता से बचना अनिवार्य है। पूज्यश्री अपने उपदेश में सर्वसाधारण को और विशेषतः विधवा बहिनों को सादे रहन-सहन की शिक्षा दिया करते थे।। भड़कीले और रंगीन वस्त्र पहनना, जेवर पहनना या बारीक वस्त्रों का उपयोग करना ब्रह्मचारिणी के लिए शोभास्पद नहीं है। ब्रह्मचारी पुरुष या स्त्री को पवित्र श्वेत वस्त्रों के अतिरिक्त बहुरंगी वस्त्र पहनना शोभा नहीं देता। पूज्यश्री इस विषय में प्रभावशाली प्रवचन किया करते थे। विधवाओं के प्रति किये जाने वाले दुर्व्यवहार को आप भयानक समझते थे और सद्व्यवहार करने की शिक्षा दिया करते थे। भीनासर के एक उपदेश के आपके शब्द कितने सबल हैं—

'आपके घर में विधवा बहिनें शील—देवियां हैं। इनका आदर करो। इन्हें पूज्य मानो। इन्हें खोटे दुखदायी शब्द मत कहो। यह शीलदेवियां पवित्र हैं पावन हैं। मंगलरूप हैं। इनके शकुन अच्छे हैं। शील की मूर्ति क्या कभी अमंगलमयी हो सकती है?'

समाज की मूर्खता ने कुशीलवती को मंगलवती को अमंगला मान लिया है। यह कैसी भ्रष्ट बुद्धि है।

याद रखो अगर समय रहते न चेते और विधवाओं की मानरक्षा न की उनका तिरस्कार अपमान करते रहे उन्हें ठुकराते रहे तो शीघ्र ही अधर्म फूट पड़ेगा। आपका मान धूल में मिल जायगा और आपको संसार के सामने नतमस्तक होना पड़ेगा।

बहिनो! शील आपका महान् धर्म है। जिन्होंने शील का पालन किया वे प्रातः स्मरणीय बन गईं। आप धर्म का पालन करेंगी तो साक्षात् मंगलमूर्ति बन जाएँगी।

बहिनो! स्मरण रक्खो—तुम सती हो, सदाचारिणी हो पवित्रता की प्रतिमा हो। तुम्हारे विचार उदार और उन्नत होने चाहिए। तुम्हारी दृष्टि पतन की ओर कभी नहीं जानी चाहिए। बहिनो! हिम्मत करो। धैर्य धारण करो। सच्ची धर्मचारिणी बहिन में कायरता नहीं हो सकती। धर्म जिसका अमोघ कवच है उसमें कायरता कैसी?'

बीकानेर का महिला समाज अशिक्षित और पिछड़ा हुआ माना जाता है। उसमें कुरीतियों का साम्राज्य है और पुराने विचारों से वह प्रभावित है। अगर कोई महिला अपने रहन-सहन के किसी प्रकार का परिवर्तन करके आगे की ओर कदम बढ़ाए तो उसे सत्कार नहीं तिरस्कार का पुरस्कार मिलता है। ऐसी स्थिति में पूज्यश्री के उपदेशों को अमल में लाना किसी महिला

के लिए बडे साहस का काम था। फिर भी कुछ साहसी विधवा महिलाएँ निकल आई और उन्होंने तितली की तरह रंग बिरंगे वस्त्रों का तथा जेवरों का त्याग करके बिना चर्बी के श्वेत वस्त्रों को ही धारण करने का निश्चय किया।

अ० भा० स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस के अधिवेशन में उन बहिनों को धन्यवाद देने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और दूसरों को उनके अनुकरण की प्रेरणा की गई।

कान्फ्रेंस का अधिवेशन

भीनासर—चातुर्मास की एक विशेष घटना अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस का आठवा अधिवेशन होना है। कान्फ्रेंस के साथ ही भारत जैन महामण्डल का भी अधिवेशन था। दोनों के अध्यक्ष श्रीवाडीलाल मोतीलाल शाह थे। व्यापार प्रधान जैनसमाज मे सभापतित्व का गौरव प्रायः श्रीमानों को प्राप्त होता है मगर कान्फ्रेंस के इतिहास मे यह पहली घटना थी कि केवल विद्वान् होने के कारण किसी व्यक्ति को सभापति चुना गया था। इस कारण शिक्षितवर्ग में और नवयुवकों मे अपूर्व उत्साह था।

पूज्यश्री ने अपने ओजस्वी उपदेशों द्वारा समाज की अनेक कुरूढ़ियों की जड हिला दी थी। अधकार में लोगों को प्रकाश की किरण दृष्टिगोचर होने लगी थी। आपने सामाजिक जीवन को ऊँचा उठाने के लिए जनता में साहस भर दिया था। क्षेत्र तैयार हो चुका था। इसी बीच कान्फ्रेंस का अधिवेशन हुआ। लोगों को ऐसा प्रतीत होने लगा मानो समाज मे नवीन सूर्योदय का समय आ गया है। प्रातःकाल पूज्यश्री का उपदेश होता था। उनके उपदेशों मे जोश जीवन और जागृति का संदेश रहता। वे उपदेश असीम स्फूर्ति साहस और उत्साह का संचार करते। पूज्यश्री के प्राणप्रेरक प्रवचन प्रगति की प्रेरणा करते। मध्याह्न मे कान्फ्रेंस का अधिवेशन होता और पूज्यश्री द्वारा प्रदर्शित पथ प्रायः प्रस्तावों का रूप धारण कर लेता था।

वाडीलाल भाई अधिवेशन से कुछ दिन पहले पूज्यश्री से समाजहित के सम्बन्ध मे विचार विमर्श करने के उद्देश्य से आ गये थे और अधिवेशन के कुछ दिन बाद तक पूज्यश्री की सेवा में रहे। आपने जैन साहित्य की उन्नति के लिए दस लाख की अपील की थी। बीकानेर के उत्साही उदार श्रीमानों ने दो लाख रुपया देने का वचन दिया था—

पूज्यश्री के उन दिनों के व्याख्यानों के विषय मे ३० अक्टूबर १९२७ के 'जैनप्रकाश' में इस प्रकार लिखा गया था—

यह व्याख्यान आदर्श तथा व्यवहार का सुन्दर तथा स्वाभाविक समन्वय करते हैं। विश्व हित की भावना से ओतप्रोत हैं। उन्हें नियमित रूप से लिखने के लिए एक पंडित रखा गया है। सब व्याख्यान जिस समय पुस्तक के रूप में बाहर निकलेंगे उस समय जैनधर्म की व्यावहारिकता तथा व्यापकता समझने के लिए जनता को सामग्री मिल जायगी। संघ कान्फ्रेंस तथा व्यक्ति की आन्तरिक दशाओं का चित्र खींचने में तथा उनके स्वाभाविक तथा सुधार का पथप्रदर्शन करने मे आपकी आश्चर्यजनक शक्ति है। व्यक्तित्व के साथ साथ देश तथा धर्म का अभिमान विकसित करने की एक विशेषता होती है। बाह्य तथा आन्तर दृष्टि से पूज्यश्री बहुत-सी बातों का एक साथ स्पर्श कर सकते हैं। आपके मस्तिष्क मे पृथक्करण और समन्वय की क्रियाएँ एक साथ चलती रहती हैं। उनकी भाषा संस्कारी होने पर भी सादी है। उनके चेहरे पर आत्मगौरव तथा करुणा का सुन्दर सम्मिश्रण है। उनके व्याख्यान में सूक्ष्म रूप से देखने पर भी कहीं कृत्रिमता नहीं दिखाई देती। वर्तमान समस्त जैन समाज में धर्मज्ञान का इतना सुन्दर उपयोग करने की कला धारण करने वालों मे आपका स्थान सर्वश्रेष्ठ है।

प्रमुख साहेब (श्री० वाडीलाल शाह) ने संवत्सरी साधुवर्ग की एकता, जैन सीरीज आदि विषयों पर परामर्श करने के लिए आपसे विशेष वार्तालाप किया।"

यह पहले ही कहा जा चुका है पूज्यश्री का हृदय यद्यपि विशाल था और विभिन्न पक्षों का समन्वय करने में वे अत्यन्त कुशल थे, तथापि दया दान जैसे धर्म के अत्यावश्यक अंगों को एकान्त पाप की कोटि में गिने जाते देखकर उनके हृदय को बड़ी चोट पहुँचती थी। मनुष्य निर्दय और स्वार्थी बन जाय और धर्म उसकी निर्दयता और स्वार्थ का समर्थन करे तो संसार की क्या स्थिति हो? ऐसा संसार नरक से क्या अच्छा होगा? फिर भी जो भाई इस प्रकार मान्यता के चक्कर में पड़कर स्व—पर का घोर अहित कर रहे हैं उन पर पूज्यश्री को अत्यन्त दया थी। दयाभाव से प्रेरित होकर आपने दया दान आदि का समर्थन करने के लिए 'सद्धर्ममण्डन' नामक ग्रंथ इसी चौमासे में लिखना आरम्भ किया। पूज्यश्री मध्याह्न में एक से चार बजे तक 'सद्धर्ममण्डन' का कार्य करते थे। मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज तथा श्री जिनदासजी म० लिखते और पूज्यश्री बोलते थे। इसी बीच इस संबंध में प्रश्नोत्तर भी होते थे।

इस प्रकार भीनासर का यह चातुर्मास न केवल आसपास वालों के लिए वरन् समस्त स्था० जैन समाज के लिए विशेष तौर पर लाभदायक सिद्ध हुआ। पूज्यश्री यह स्मरणीय चातुर्मास समाप्त होने पर बीकानेर पधारे और वहाँ अठारह दिन विराजे। जैन जैनेतर जनता ने खूब लाभ उठाया।

पूज्यश्री और सर मनुभाई मेहता

पूज्यश्री का व्यक्तित्व तो उच्च था ही, उनकी विद्वत्ता उससे भी उच्चतर श्रेणी की थी। शास्त्रों का उनका ज्ञान शब्दस्पर्शी नहीं मर्मस्पर्शी था। अत्यन्त गहराई में उतरकर उन्होंने धर्म तत्त्व की पर्यालोचना की थी। इसी कारण उन्हें धर्म के व्यापक स्वरूप की उपलब्धि हुई थी। मगर धर्मतत्त्व को उपलब्ध कर लेने पर भी साधारण विद्वान् उसे अपने व्यवहार में नहीं ला पाता जब कि पूज्यश्री ने उसे अपने जीवन व्यवहार में भी पूरी तरह उतारा था। वे उस श्रेणी के महात्मा थे जिनके विषय में कहा है—

धर्मे स्वीयमनुष्ठानं कस्यचित्तु महात्मनः ।

अर्थात्—'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' होते हैं पर धर्म के अनुसार आचरण करने वाले महात्मा भाग्य से विरले ही मिलते हैं।

इन्हीं सब कारणों से पूज्यश्री का प्रभाव एक सम्प्रदाय तक सीमित न रहकर बहुत व्यापक हो गया था। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, पण्डित मदनमोहन मालवीय, सरदार पटेल जैसी भारत की विभूतियों के साथ आप परिचय में आये और उन पर अपनी विशिष्ट छाप भी अंकित करने में समर्थ हो सके थे।

यों तो भारत विख्यात अनेक राजनीतिज्ञों के साथ आपका परिचय हुआ और यत्र तत्र उसका उल्लेख भी किया गया है और आगे किया जायगा मगर उनमें सर मनुभाई मेहता का स्थान विशेषता रखता है। सर मेहता भारत के यशस्वी प्रधानमंत्रियों में से एक हैं। पहले आप बड़ौदा रियासत के प्रधानमंत्री थे और फिर बीकानेर रियासत के प्रधानमंत्री होकर आये। बीकानेर में जब पूज्यश्री पधारे तो अनेक बार आप व्याख्यान में सम्मिलित हुए। आप पूज्यश्री के उपदेश से इतने प्रभावित हुए कि कई बार अपने समस्त परिवार के साथ बीकानेर और भीनासर उपदेश सुनने आये। आप पूज्यश्री के विशिष्ट अनुरागी हो गये।

एक बार सर मनुभाई की उपस्थिति में पूज्यश्री ने बाल विवाह और वृद्ध विवाह के विरुद्ध बड़ा ही प्रभावशाली भाषण दिया[1]। सर मेहता पर उसका इतना प्रभाव पड़ा कि थोड़े ही दिनों बाद आपने बाल वृद्ध विवाह निषेध बिल बीकानेर असेम्बली में उपस्थित किया। उस पर

१—व्याख्यान देखो, तीसरी किरणावली।

भाषण करते हुए आपने पूज्यश्री के उपदेश का भी उल्लेख किया। बिल असेम्बली मे स्वीकृत होकर कानून बन गया।

लन्दन में होने वाली पहली गोलमेज कॉन्फरेंस मे सम्मिलित होने के लिए सर मनुभाई मेहता जब विलायत जाने लगे तब आप पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। उस समय पूज्यश्री ने उन्हें जो उपदेश दिया था उससे पूज्यश्री के स्पष्ट वक्तृत्व एवं राष्ट्रहित की भावना का भली भांति पता चलता है। आपके कथन का संक्षिप्त सार ही यहां दिया जाता है—

आज मेरा और सर मनुभाई मेहता का यह मिलन एक महत्त्वपूर्ण अवसर पर हो रहा है। सर मेहता विलायत का प्रवास करने वाले है। आपका यह प्रवास अपने किसी निजी प्रयोजन या बीकानेर सरकार के किसी कार्य के लिए नहीं है। आज जो विकट समस्या केवल भारत में ही नहीं सारे संसार मे व्याप्त हो रही है, उसे सुलझाने में सहयोग देने के लिए आप जा रहे हैं। दूसरे शब्दो में भारत के भाग्य का निपटारा करने जा रहे हैं।

इस अवसर पर मैं अकिंचन अनगार उन्हें जो भेंट दे सकता हूँ, वह उपदेश ही है। साधुओं पर भी राजा का उपकार है। साधु जीवन की रक्षा के लिए जो पांच वस्तुएं सहायक मानी गई हैं, उनमे तीसरा सहायक राजा है। राजा द्वारा धर्म की रक्षा होती है। राजा द्वारा राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की रक्षा होती है। प्रजा मे शान्ति, सुव्यवस्था और अमन चैन रहने पर ही धर्म की आराधना की जा सकती है। जहां परतन्त्रता है, जहां अराजकता है जहां परतन्त्रता के कारण हाहाकार मचा होता है वहां धर्म को कौन पूछता है?

सर मेहता की यह चौथी अवस्था संन्यास के योग्य है। एक कर्मयोगी सन्यासी का जो कर्त्तव्य है, आप वही कर रहे हैं। इसी के लिए आप विलायत जा रहे हैं। धर्म की रक्षा करने का आपको यह अपूर्व अवसर मिला है।

सर मनुभाई यद्यपि अनभिज्ञ नहीं हैं फिर भी मैं इस अवसर पर खासतौर से स्मरण करा देना चाहता हूँ कि धर्म को लक्ष्य बनाकर जो निर्णय किया जाता है वही निर्णय जगत् के लिए आशीर्वाद रूप हो सकता है। धर्म की व्याख्या ही यह है कि वह मंगलमय कल्याणकारी हो। 'धम्मो मंगल मुक्किट्ठं'। अर्थात जो उत्कृष्ट मंगलकारी है वही धर्म है।

कोई यह न सोचे कि धर्म का सम्बन्ध केवल व्यक्ति से है। राउण्ड टेबल कान्फ्रेंस मे, जिसके लिए मेहताजी जा रहे हैं धर्म का प्रश्न ही क्या है? मैं पहले ही कह चुका हूँ कि गुलाम और अत्याचार पीड़ित प्रजा में वास्तविक धर्म का विकास नहीं हो सकता। धार्मिक विकास के लिए स्वातन्त्र्य अनिवार्य है और इसी समस्या का समाधान करने के लिए लन्दन में कान्फ्रेंस की जा रही है।

श्रेष्ठ पुरुष अपने उत्तरदायित्व का भली भांति ध्यान रखते हैं और गंभीर सोच विचार करके धर्म और नीति को सामने रखकर ऐसा निर्णय करते हैं जिससे सबका कल्याण हो। ऐसा निर्णय ही सर्वमान्य होता है। जन कल्याण के लिए नीति मर्यादा का विधान करने वालों को अगर 'विधाता' या मनु का पद दिया जाय तो इसमें अनौचित्य ही क्या है।

सर मनुभाई स्वयं विवेकशील हैं बुद्धिमान् हैं फिर भी हम परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि इन्हें ऐसी सद्बुद्धि प्राप्त हो जिससे वे सत्य के पथ पर डटे रहें। नाजुक से नाजुक प्रसंग उपस्थित होने पर भी वे सत्य से इंच मात्र भी विचलित न हों। सत्य एक ईश्वरीय शक्ति है जो विजयिनी हुए बिना नहीं रह सकती। चाहे सारा संसार उलट पलट जाय मगर सत्य अटल रहेगा। सत्य को कोई बदल नहीं सकता। प्रत्येक मनुष्य की जीवन लीला एक दिन समाप्त हो जायगी, ऐश्वर्य बिखर जायगा परन्तु सत्य की सेवा के लिए किया गया उत्सर्ग अमर रहेगा। सत्य पर अटल रहने वालों का वैभव स्थायी रहेगा।

साधु के नाते मैं सर मनुभाई को यही उपदेश देना चाहता हूँ कि दूसरे के असत्यमय विचारों के प्रभाव से दूर रह कर शुद्ध मस्तिष्क से सत्य विचार करना। चाहे विश्व की समस्त शक्तियाँ सगठित होकर विरोध में खड़ी हों तब भी सत्य को न छोड़ना। किसी के असत्य की परछाइ अपने ऊपर न पड़ने देना। शास्त्रानुसार और अपने अन्तरतर के संकेत के अनुसार सत्य है, उसी को विजयी बनाना। सत्य की विजय में ही सच्चा कल्याण है।

कार्य करने के लिए व्यक्ति कानून कायदे तथा बहुमत आदि का आश्रय लेता है। यह सब परतन्त्रता है। प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर का पुत्र है। प्रत्येक में बुद्धि है और उसकी जागृति भी है। जिसने सांसारिक लाभ में पड़कर उस पर परदा डाल दिया है उसकी बौद्धिक शक्ति छिप गई है। किन्तु जिसने अपनी बुद्धि से स्वार्थ का परदा हटा दिया है, वह तुच्छ से तुच्छ भी महान बन गया है। इसी निःस्वार्थ विचार शक्ति के प्रभाव से वाल्मीकि और प्रभव चोर महर्षि के पद पर पहुँच गए। स्वार्थ से किवाड़ लगाकर विचार शक्ति को रोक देना उचित नहीं है। अपनी बुद्धि को विचार शक्ति का सब प्रकार के विकारों से दूर रखकर जो निर्णय किया जाता है वही उत्तम होता है।

जीवन व्यवहार के साधारण काम जैसे खाना पीना चलना फिरना आदि ज्ञानी भी करते हैं और अज्ञानी भी करते हैं। कार्यों में इस प्रकार समानता होने पर भी बड़ा भेद है। अज्ञानी पुरुष अज्ञानपूर्वक बिना किसी विशेष उद्देश्य के काम करता है। ज्ञानी पुरुष छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा व्यवहार गम्भीर ध्येय से निष्काम भावना से वासना हीन होकर यज्ञ के लिए करता है। शास्त्रकारों ने यज्ञ के लिए काम करना पाप नहीं माना है। किन्तु प्रश्न यह है कि वास्तविक यज्ञ किसे कहना चाहिए। इसके लिए गीता में कहा है—

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथाऽपरे।
स्वाध्याय ज्ञान यज्ञाश्च यतयः संशित व्रताः॥ अ० ४० श्लोक २

यज्ञ अनेक प्रकार के होते हैं। किसी को द्रव्ययज्ञ करना है तो धन पर से अपनी सत्ता उठा ले और कहे 'इदं न मम' अर्थात् यह मेरा नहीं है। बस यज्ञ हो गया।

संसार में जो गड़बड़ी मची हुई है उसका मूल कारण संग्रह बुद्धि है। संग्रह बुद्धि से संग्रहशीलता उत्पन्न हुई और संग्रहशीलता ने समाज में वैषम्य का विष पैदा कर दिया। इस वैषम्य ने आज समाज की शांति का सर्वनाश कर दिया है। इस विषमता को दूर करने का एक सफल उपाय है—यज्ञ करना। अगर आप लोग अपने द्रव्य का यज्ञ कर डालें 'इदं न मम' कहकर उसका उत्सर्ग कर दें तो सारी गड़बड़ आज ही शान्त हो जाएगी।

द्रव्ययज्ञ के पश्चात् तपोयज्ञ आता है। तप करना उतना कठिन नहीं है जितना तप का यज्ञ करना कठिन है। बहुत से लोग तप करते हैं किन्तु उनकी अमुक फल प्राप्त करने की आकांक्षा बनी रहती है। किसी प्रकार की आकांक्षा रखने वाला तप एक प्रकार का सौदा बन जाता है। वह तप रूप नहीं रहता। तप करके उससे फल की कामना न करे और 'इदं न मम' कहकर उसका यज्ञ कर दे तो तप अधिक फलदायक होता है।

मैं सर मनुभाई मेहता को सम्मति देता हूँ कि वे प्रधानमंत्री के अधिकारों का यज्ञ कर दें।

मेरा तात्पर्य यह है कि अगर सच्चे कल्याण की चाहना है तो सब वस्तुओं पर से अपना ममत्व हटा लें। 'यह मेरा है' इस बुद्धि से ही पाप की उत्पत्ति होती है। इस दुर्बुद्धि के कारण ही लोग ईश्वर का अस्तित्व भूले हुए हैं। 'इदं न मम' कह कर अपने सर्वस्व का यज्ञ कर देने से अहंकार का विलय हो जाएगा और आत्मा में अपूर्व आभा का उदय होगा।

वे योगी जो यज्ञ नहीं करते उपहास के पात्र बनते हैं। योगियो! आपका किया हुआ स्वाध्याय प्राप्त किया हुआ विविध भाषाओं का ज्ञान, आचरित तप आदि समस्त अनुष्ठान ईश्वर

को समर्पित कर दो। अगर तुमने सभी कुछ ईश्वर को अर्पित कर दिया तो तुम्हारे सिर का बोझ हल्का हो जायगा। कामनाएँ तुम्हें सता न सकेंगी। बुद्धि गम्भीर होगी। अपना कुछ मत रखो। किसी वस्तु को अपनी बनाई नही कि पाप न आकर घेरा नहीं।

भाइयो ! आप सब लोग भी हृदय मे ऐसी भावना लाइए कि सर मनुभाई मेहता को ऐसी शक्ति प्राप्त हो जिससे वे इंग्लैड जाकर गोलमेज कान्फ्रेंस मे अपूर्व साहस का परिचय दें। मेरी हार्दिक भावना है कि सब प्राणी कल्याण के भाजन बनें।

सर मनुभाई मेहता का पूज्यश्री पर कितना अनुराग था, यह बात उनके द्वारा पूज्यश्री के प्रति अर्पित की गई श्रद्धाञ्जलि से भी स्पष्ट हो जाती है।

पूज्यश्री जब दया दान का प्रचार करने के लिए थली की ओर प्रस्थान करने लगे तब रियासत के प्रधानमंत्री की हैसियत से आपने राजकर्मचारियो को कुछ आवश्यक आदेश भेज दिये थे। वे इस आदेश प्रकार थे—

(१) पूज्यश्री के व्याख्यान मे कोई गड़बड़ी न डालने पावे।

(२) प्रश्नोत्तर के समय किसी प्रकार की असभ्यता न होने पावे।

(३) पूज्यश्री के धर्म प्रचार में किसी प्रकार की बाधा न आने पावे।

इन आदेशों के अनुसार प्रत्येक तहसील मे पूज्यश्री के पधारने से पहले ही स्थानीय राज्याधिकारी यह घोषणा कर देते थे कि बाईस टोला के पूज्यश्री पधार रहे हैं। उनके प्रति कोई किसी प्रकार की गड़बड़ न करे, नही तो याजाब्ता कारवाई की जायगी।

इस राजकीय आदेश के कारण पूज्यश्री शान्ति के साथ थली में दया और दान का प्रचार करने में समर्थ हो सके। इसका विवरण पाठक अगले पृष्ठों में पढ़ सकेंगे।

मालवीयजी का आगमन

जिन दिनों पूज्यश्री थली की ओर प्रस्थान करने वाले थे उन्ही दिनों पं० मदनमोहन मालवीय हिन्दू विश्वविद्यालय के सिलसिले में बीकानेर पधारे। पण्डितजी पूज्यश्री के विषय में पहले ही सुन चुके थे। अतः आप पूज्यश्री के व्याख्यान में पधारे। पूज्यश्री ने समयोचित भाषण देते हुए फर्माया कि पुराण के अनुसार गोवर्धन पर्वत तो कृष्णजी ने उठाया ही था मगर दूसरे ग्वालों ने भी अपने सहयोग प्रदर्शित करने के लिए लाठियां तान ली थी। इसी प्रकार मालवीयजी ने भारतीय संस्कृति की रक्षा और उन्नति के हेतु हिन्दू विश्वविद्यालय रूपी गोवर्धन पर्वत का भार अपने कन्धों पर उठाया है तो श्रीमानों को भी उसमे यथोचित सहकार प्रकट करना चाहिए। पूज्यश्री का यह भाषण काफी विस्तृत और महत्त्वपूर्ण हुआ था मगर खेद है कि वह लिखा हुआ न होने के कारण यहां नहीं दिया जा सका।

अन्त में मालवीयजी बोले। आपने पूज्यश्री के प्रभावशाली भाषण की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए पूज्यश्री के प्रति हार्दिक सद्भाव प्रकट किया।

थली की ओर प्रस्थान

पिछले प्रकरणों से पाठक भली भांति जान गये होंगे कि पूज्यश्री अनेक बार तेरापंथी भाइयो के सम्पर्क मे आये थे। उन्होंने उनकी निगली और धर्म से असम्बद्ध मान्यताओ में सुधार करने के लिए यथासम्भव प्रयत्न भी किया था। बालोतरा और जयतारण में शास्त्रार्थ करके तथा व्याख्यानों में उपदेश देकर उन्हें सन्मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया था। जब आप भीनासर में विराजमान थे, बहुत से तेरापंथी भाई शङ्का-समाधान करने आते थे। पूज्यश्री उनकी अधश्रद्धा देखकर चकित रह जाते थे। भाव रोग से पीड़ित इन भाइयो पर उन्हें करुणा आती थी। पूज्यश्री का नवनीत के समान कोमल हृदय दया दान के विरोधी भाइयो की अज्ञानता देखकर द्रवित हो गया। उन्होंने इनके उद्धार का विचार किया। मगर यह उद्धार कार्य सरल नही था। उसके लिए

अनेक कष्ट सहन करके प्रबल प्रयत्न करने की आवश्यकता थी। सर्वसाधारण जनता को धर्म का मर्म समझाना आवश्यक था।

थली तेरापंथियों का गढ़ समझी जाती है। वह उनका दुर्भेद्य दुर्ग है। पूज्यश्री बखूबी जानते थे कि इस किले में प्रवेश करने पर विविध कठिनाइयाँ झेलनी पड़ेंगी। फिर भी जन-कल्याण की कामना से प्रेरित होकर उन्होंने थली में प्रवेश करना निश्चित कर लिया।

एक बार भगवान् महावीर ने अनार्य क्षेत्र में विहार किया था। विश्व-कल्याण की भावना वाले महापुरुष अपने सुख दुःख की चिन्ता छोड़कर पर सुख के लिए ही प्रयास करते हैं। थली यद्यपि अनार्य देश नहीं है तथापि वहाँ के बहुत से मनुष्य दया, दान, परोपकार और परमवा आदि सिद्धान्तों को अधर्म मानते हैं। पूज्यश्री इन बहुमूल्य गुणों का बहिष्कार करने वाले धर्म और धर्म का कलंक धो डालना चाहते थे। थली के कुछ धर्म प्रेमी भाइयों का भी आग्रह था। सरदारशहर के सेठ खूबचन्दजी चण्डालिया, तनसुखदासजी डूगड़ तथा चूरू के सेठ मूलचन्द कोठारी आदि ने भीनासर आकर पूज्यश्री से थली में पधारने की प्रार्थना की थी। इन कारणों से पूज्यश्री ने थली की ओर पधारने का निश्चय कर लिया।

मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया संवत् १९८४ को पूज्यश्री ने पं० मुनिश्री घासीलालजी, पं० मुनि श्रीगणेशीलालजी आदि २९ सन्तों के साथ थली की ओर प्रस्थान कर दिया। उदासर, गाढवाला नापासर, सीथल, बेलासर, तेजरासर, नाहरसीसर, देराहर, दुलचासर, सूडसर, मेनीसर, भोजासर, हमासर आदि होकर आप डूंगरगढ़ पधारे। डूंगरगढ़ में चार व्याख्यान हुए। तहसीलदार आदि राज्यकर्मचारी भी व्याख्यान सुनने आये। पूज्यश्री रायबहादुर सेठ आशारामजी सवर की बगीची में उतरे थे। सेठ आशारामजी जाति के माहेश्वरी हैं। बड़े उदारचित्त और धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। आपने अत्यन्त नम्रता के साथ पूज्यश्री की भक्ति की। 'यस्य देवस्य गन्तव्यं स देवो गृहमागत' अर्थात् जिस देव के पास चलकर जाना चाहिए वह स्वयं घर आ पहुँचा! ऐसा समझकर सवरजी ने पूज्यश्री की सेवा का अच्छा लाभ लिया। पूज्यश्री ने तेले की तपस्या करके डूंगरगढ़ में पदार्पण किया था। यहाँ पहुँचने पर आपका पारणा हुआ। चार दिन डूंगरगढ़ विराज कर आप सरदारशहर की ओर अग्रसर हुए।

पूज्यश्री की इस विहार यात्रा की कठिनाइयों की कल्पना उन्हें नहीं हो सकती जिन्होंने कभी इस रेगिस्तान के दर्शन नहीं किये हैं। चारों ओर असीम फैली हुई बालुकाराशि शीतकाल के प्रातःकाल में ओलों की तरह ठंडी पड़ जाती है। कभी मन्द और कभी प्रबल वेग से बहने वाली वायु के ठंडे ठंडे झोंके सीधे कलेजे तक पहुँचकर प्राणों को भी स्पन्दनहीन बनाने के लिए यत्नशील रहते हैं। मार्ग में कोई वृक्ष नहीं जिसकी आड़ में पथिक क्षण भर सन्तोष की साँस ले सके। सर्वत्र अप्रतिहत वायु और अपरिमित बालुकापुंज उस मरुभूमि में पथिक का स्वागत करता है।

मध्याह्न में मरुभूमि मानों अपना रूप पलट लेती है। सूर्य की अनावृत धूप के स्पर्श से बालुका उत्तप्त हो जाती है और अपना सारा उत्ताप पथिक के पैरों में भर देना चाहती है। पथिक पूज्यश्री की भाँति नंगे पैर हुआ तो फिर कहना ही क्या है! नंगे सिर पर ऊपर आसमान से बरसने वाला सूर्य का प्रचण्ड सन्ताप और नीचे भाड़ की भाँति जलती हुई बालुका! दोनों ओर का यह दुस्सह सन्ताप पथिक की प्राण परीक्षा लेता है।

इस विकराल पथ पर तीव्र स्वार्थ साधना के लिए चलने वाले तो बहुत मिल सकते हैं किन्तु परमार्थ-बुद्धि से विचरण करने वाले महात्मा पूज्यश्री सरीखे विरले ही होंगे। पूज्यश्री शीतकाल के शीत को अपने तप की अग्नि से निवारण करते हुए और मध्याह्न के घोर सन्ताप को

हृदय के करुणामाय रूपी शीतल निझर से दूर करते हुए मरुभूमि में अग्रसर होते गये। पूज्यश्री जिन जीवों का उद्धार करने के हेतु यह सब सहन करते हुए विहार कर रहे थे उनकी ओर से पद पद पर अनेक प्रकार की असुविधाएँ उत्पन्न की जाती थी। आहार पानी एव स्थान आदि की सब असुविधाएँ पूज्यश्री के लिए तुच्छ थी। दया दान के विरोधी लोगों का विपरीत व्यवहार देख कर पूज्यश्री का हृदय दया मे अधिकाधिक द्रवित होता जाता था। अज्ञानी जीव की बाल दशा ज्ञानी पुरुष मे विषाद का कारण बन जाती है। ज्ञानी पुरुष उनकी बालदशा देखकर ही उनके उद्धार का सकल्प करते हैं। अतएव पूज्यश्री के पथ में ज्यो-ज्यो बाधाएँ उपस्थित की गई त्यो त्यो उनका सकल्प दृढ होता गया।

दया दान का प्रचार करने और दया दान के विरोधियों को सन्मार्ग पर लाने के सुदृढ सकल्प के साथ विचरते हुए पूज्यश्री सरदार शहर पधारे।

सरदार शहर तेरापथियो का सबसे बडा केन्द्र है। यहाँ ओसवालो के बारह सौ घर है। अधिकांश घर तेरापथियो के हैं। उन दिनों तेरापथ सम्प्रदाय के पूज्य कालुरामजी स्वामी वहीं मौजूद थे।

ज्यो ही पूज्यश्री सरदारशहर पधारे त्यो ही तेरापथियों मे खलबली सी मच गई। सामना करने की अनेक योजनाएँ बनाई गई, मगर खेद है कि उनमे एक भी ऐसी योजना न थी जिसका सभ्य ससार अनुमोदन कर सके। उचित तो यह था कि आत्म पर कल्याण की सच्ची इच्छा से दोनो आचार्य मिलकर परस्पर तत्त्व निर्णय करते और वीतराग भगवान के मार्ग का निश्चय करके अज्ञान जनता को मार्ग पर लाते। मगर तेरापथ के आचार्य ऐसा करके अपनी जमी दुकान उजाडना पसन्द नहीं करते थे। इसमे उन्हें अपनी प्रतिष्ठा के भग हो जाने का भय था। उन्होंने ऐसा नहीं किया। बल्कि उनके शिष्यों ने दूसरा ही रास्ता अख्तियार किया। वे पूज्यश्री को तथा उनके सन्तो को परेशान करके मैदान मारने की सोचने लगे। पूज्यश्री के संत साधु धर्म अनुसार भिक्षा लाने मे किसी प्रकार का भेद भाव नहीं करते थे। जिस भाव से दूसरो के यहाँ भिक्षा के लिए जाते उसी भाव से तेरापथी गृहस्थो के घर भी जाते। मगर कई एक पाषाण हृदय गृहस्थो ने सतो के पात्र मे आहार के बदले पाषाण रख दिये। इसी प्रकार की और भी जघन्य चेष्टाएँ की गई जिनका उल्लेख करने में मनुष्यता लजाती है और सभ्यता भी शर्मिन्दा होती है। इन भाइयो ने अपनी चेष्टाओ से यह जाहिर कर दिया कि हम वचन से ही दया दान के विरोधी नही अपितु व्यवहार मे भी दया और दान के कट्टर दुश्मन है।

पूज्यश्री के जीवन की पिछली घटनाएँ बतलाती हैं कि आप एक बार जो सत्सकल्प कर लेते थे लाख बाधाएँ भी उससे उन्हें विचलित नही कर सकती थी। आचार्य प्रभाचन्द्र कहते हैं

त्यजति न विदधान कार्यमुद्विज्य धीमान,
खलजनपरिवृत्तेः स्पर्धते किन्तु तेन।

खलजनों की चेष्टाओं से घबराकर बुद्धिमान पुरुष अपने आरम्भ किये हुए कार्य का त्याग नहीं करता वरन् उनसे स्पर्धा करता है। अर्थात् जैसे खल अपनी चेष्टाओ से बाज नहीं आता उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष भी अपने कार्य को पूरा किये बिना नही मानता।

थली की इस विहारयात्रा के समय पूज्यश्री ने भाँति भाँति के कष्ट सहन किये। कष्टो को उन्होंने जिस शान्ति और प्रसन्नता के साथ सहन किया उससे पूज्यश्री के अनेक छिपे हुए सद्गुण जनता मे प्रकाशित हो गये। इससे मध्यस्थ जनता का पूज्यश्री के प्रति अधिक आकर्षण हो गया। इसका श्रेय अवश्य ही उन विरोधी भाइयों के हिस्से में जाना चाहिए। महाकवि हरिश्चन्द्र कहते हैं—

खल विधात्रा सृजता प्रयत्नात
कि सज्जनस्योपकृत न तेन ?
ऋते तमांसि द्युमणिमणिर्वा—
विना न काचं स्वगुणं व्यनक्ति ॥

अर्थात—विधाता ने बड़ा भारी प्रयत्न करके खल की रचना की है मगर उसने इस रचना से क्या सज्जन का उपकार नहीं किया ? अवश्य किया है। अधकार के बिना सूर्य का महत्व समझ में नहीं आता और कांच के अभाव में मणि का मूल्य नहीं समझा जा सकता।

तात्पय यह है कि जैसे अधकार के बदौलत सूर्य की महिमा बढ़ती है और कांच के कारण मणि का महत्व बढ़ जाता है, उसी प्रकार खल जनो के कारण सत पुरुषों की महिमा बढ़ती है।

पूज्यश्री के विषय में यह सूक्ति पूरी तरह चरितार्थ होती हुई नजर आती है। कुछ लोगो ने अवांछनीय व्यवहार किया और पूज्यश्री ने अपने सत स्वभाव के अनुसार उसे साधारण भाव से सहन किया। परिणाम यह हुआ कि थली की सरल हृदय जनता ने पूज्यश्री का महत्व आक लिया। लोग उनके उपदेशो की ओर आकर्षित होने लगे। उनके आचार विचार की सराहना करने लगे।

जिस महापुरुष ने भारतवर्ष के प्रसिद्ध विद्वानो और नेताओं के समक्ष अपनी तेजस्विता प्रकट की थी, जिसके प्रवचनो से जनधर्म का गौरव बढ़ा था जिसके आदर्श चरित के सामने बड़े-बड़े विद्वान् नतमस्तक हो जाते थे, वही महापुरुष आज करुणा के स्रोत में बहकर थली प्रात में जा पहुँचा था और एक बड़े जनसमूह को अधकार से निकालकर प्रकाश मे लाने के लिए तपश्चर्या कर रहा था। वह असभ्य शब्दावली को अपनी स्तुति समझता था और परीषहों को जीवन साधना का अंग मानता था।

पाठक यह न समझें कि वहां सभी एक से थे। लका में रावण नहीं थे। कुछ लोग वहां सरल हृदय भी थे। पूज्यश्री के कुछ ही व्याख्यान हुए थे कि जनता प्रभावित होने लगी। अनेक तेरापथी भाई प्रकाश में आये। करीब पचास भाइयो ने जैनधर्म की सच्ची श्रद्धा ग्रहण की।

सरदारशहर के अग्रवाल, माहेश्वरी ब्राह्मण स्वर्णकार और दर्जी आदि जनेतर भाइयो ने पूज्यश्री के मुख से जनधर्म का स्वरूप सुना तो वे चकित रह गये। वे अभी तक समझते थे कि तेरापथ और जैनधर्म एक ही चीज है और जनधर्म, तेरापथी साधुओं के सिवाय औरों को दान देने में तथा मरते जीव को बचाने में पाप बतलाता है। पूज्यश्री ने जैनधर्म के अनुसार जब दया और दान का प्रतिपादन किया तो लोगो को सचाई का पता चला। सैकड़ो श्रोता व्याख्यान सुनने आने लगे। कई आपके भक्त बन गये। पूज्यश्री के व्याख्यान में आने वाले स्वर्णकार तथा दर्जी आदि भाइयों पर तेरापथी भाइयों की कोपदृष्टि थी। जो लोग सरल भाव से पूज्यश्री के व्याख्यान सुनने आते थे, उनका वे बहिष्कार करने से भी न चूके। उन्हें काम देना—दिलाना बन्द करके उनकी आजीविका का उच्छेद किया। फिर भी उन्होंने व्याख्यान सुनना बन्द न किया और भक्ति पूर्वक व्याख्यान सुनते रहे। वहां आपके कई जाहिर व्याख्यान हुए। अनेक जैनेतर भाई भी पूज्यश्री के भक्त बने। मध्याह्न में सेठ वृद्धिचन्दजी गोठी आदि शंकासमाधान करने आते और निरुत्तर होकर जाते थे।[1]

जब पूज्यश्री सरदारशहर में विराजमान [illegible] बाबा परमानन्दजी वहां आये। बाबाजी पूज्यश्री से मिले। उन्होंने [illegible] के लिए [illegible] तेरापथियों से शास्त्रार्थ करने के [illegible] जाएंगे।

१ उनके और थ य मज्जनों [illegible]

लिए कहा। मगर तेरापंथी शास्त्रार्थ के लिए तैयार न हुए। पूज्यश्री ने भी कई बार तेरा
कालूरामजी स्वामी को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया मगर वे सामने न आये।

सरदारशहर में चूरु के सुप्रसिद्ध धनिक सेठ मूलचन्दजी कोठारी पूज्यश्री की
उपस्थित हुए। उन्होंने चूरु पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर
माघ कृष्ण एकादशी को विहार कर तेले की तपस्या के साथ चूरु में प्रवेश किया। आ
पहुँचने से पहले ही आपकी कीर्ति वहाँ पहुँच चुकी थी। सैकड़ों की संख्या में जनता ने
भक्तिभाव पूर्ण अगवानी की। बड़े समारोह के साथ आपने नगर में प्रवेश किया।

उन दिनों चूरु में तेरापंथियों के माघ महोत्सव की तैयारियाँ हो रही थीं। सैक
साध्वियाँ और हजारों गृहस्थ इकट्ठे हो रहे थे। यहाँ भी उपद्रव करने की अनेक प्रकार की
की गई मगर तमाम चेष्टायें विफल हुईं।

चूरु में भी बहुत से तेरापंथी भाई शंका समाधान के लिए आते थे। पूज्यश्री अ
प्रमाणों के साथ युक्ति पूर्वक शंकाओं का समाधान करते। फल यह हुआ कि बहुत से व्यक्ति
तेरापंथ से श्रद्धा हट गई। सेठ धनपतिसिंहजी और गुणचन्दजी कोठारी दोनों भाइयों ने
से सम्यक्त्व ग्रहण किया। जैनेतर जनता में भी पूज्यश्री का प्रभाव खूब बढ़ा। श्रीयुत
सुगणा आदि भी शंका समाधान के लिए आये।

आचार्य श्री रतनगढ़ में

फाल्गुन कृष्णा द्वादशी को पूज्यश्री ने चूरु से विहार किया। सैकड़ों व्यक्ति
विदा देने के लिए आये। चूरु जैनेतर जनता ने पूज्यश्री चातुर्मास करने की प्रार्थना क
पूज्यश्री समग्र थली प्रान्त में विहार करके ऐसे स्थान पर चातुर्मास करना चाहते थे, जहाँ
विशेष उन्नति हो। अतएव चूरु की जनता की प्रार्थना स्वीकृत न हो सकी।

चूरु से विहार करके आप फाल्गुन शुक्ला प्रतिपद् को, तेले की तपस्या के साथ
पधारे। रतनगढ़ में संस्कृत-विद्या का अच्छा प्रचार है। इसे बीकानेर राज्य की काशी
सकता है। रतनगढ़ में ऋषिकुल नामक संस्था बड़ी सुन्दर है। पूज्यश्री जब वहाँ प
ऋषिकुल के ब्रह्मचारियों ने वैदिक मन्त्रों से आपका स्वागत किया। रतनगढ़ के बहुत से
आपके सम्पर्क में आये और जैनधर्म के संबंध में उनकी जो विपरीत धारणाएँ तेरापंथी
के प्रचार के कारण बन गई थीं, उनका निराकरण किया। यहाँ के हनुमान पुस्तक
पूज्यश्री का सार्वजनिक भाषण हुआ। व्याख्यान में तेरापंथी भाइयों ने कुछ उपद्रव मचाय
समय वहाँ तहसीलदार उपस्थित न थे। वे पीछे से आये और अपनी असावधानी के लिए पू
क्षमायाचना करने लगे। पूज्यश्री ने उदार हृदय से तहसीलदार साहब को क्षमा प्रदान की

रतनगढ़ में सेठ सूरजमलजी नागरमलजी तथा श्रीयुत् विलासरामजी तार्किक
सज्जनों ने पूज्यश्री के प्रति गहरा भक्ति-भाव प्रदर्शित किया। सत-समागम का उ
लाभ मिला।

जब रतनगढ़ में पूज्यश्री विराजमान थे तभी वहाँ से आपने श्रीसूरजमलजी म०, श्री
लालजी म०, श्रीभीमराजजी म०, श्री सिरेमलजी म० श्री जेठमलजी म० ठाणा ५ का
सुजानगढ़ की ओर करा दिया था।

कलई खुल गई

यहाँ से विहार करके पूज्यश्री पड़िहारा पधारे।

पड़िहारा में विदित हुआ कि जिन पाँच सन्तों ने अलग विहार किया था, उन
तेरापंथियों ने रणदीसर गाँव के कुण्ड से सचित्त पानी निकलवाकर पीने का आरोप लगा

सूंआ यात क दे के में काचो पानी साधा ने वरायो जद में कयो के मारी जीभ कट जाय मैं तो भूठ नहीं वोलुं जद फेर कया क नाथी को नाम ले स म माथी भू ंड को काचो पानी साधां न दियो जद म कयो कि नाथी भी काचो पानी साधां ने दिया नहीं भूंठो नाम मैं केवूं नहीं जद सेठानी क्यों कि मारी वात था गमाई दीं मैं तो तीन गांव म या बात चलाय दी वे वाईस टालारा साधां काचो पानी लिदा न लीधो ज में कया के थां इसी वात भूठी क्यूं चलाई थारी थे भुगतो म तो झूंठ नहीं वोलुं अंगूठारी निशानी धानदास सामीगी छ व जवर

या वात धानदासजी मां सब पंचो रे मामन कही वे पडिमारा सू अठ आ गया था जिकासूं हमने घेरा पड गया और हमारा गांव रणदीसर का जागीरदार और चौधरी सारा पंच मुकनराम जी मामन साराजीना मिलकरले उह कागद लिखकर पूज्यश्री जुवारीलाल जी ने दीनो स० १६८५ मिती चेत सुदी १० दीतवार श्री ठाकुरजी का मन्दिर म लिखियों पीरोयत सलजीरा कलम खुद

१ सलजीपुरोहितरोसहा	१ सई, दीपचन्दपोकरना की	१ सई खेमजी पुरोईतरी
१ सईसुखदासपुजारी	१ सईभगवसजीपुरोईतरी	१ सई विसनजी पुरोईतरो
१ सई असज पुरोईतरी	१ सई मुकन रामजीमाभनक नीराम हायरा	
१ सई पेमा जाटरी	१ वादरसिंगजी पुरोईतरी	१ सई मोती सिगकी छै
१ द जवर जी परोत	१ सई पुरषो डूडोरी	१ सई चोखा गोदार री

सैंतीसवा चातुर्मास (वि० स० १६८५)

सरदार शहर श्रीसंघ के सज्जनो के आग्रह स सं० १६८५ का चातुर्मास सरदार शहर म हुआ। प० र० मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज का चातुर्मास चूरु म हुआ। इस प्रकार थली प्रांत क दो प्रधान क्षेत्रो म दोनो महापुरुष दया दान धर्म का प्रचार करने लगे। सरदार शहर में प्रातःकाल पहले मुनिश्री हरखचन्दजी म० 'प्रश्नव्याकरण' सूत्र का व्याख्यान करते थे। उसके पश्चात् पूज्यश्री 'सुखविपाक सूत्र के आधार पर अपनी ओजस्विनी वाणी उच्चारते थे। प्रासंगिक विवेचन करते हुए आप शास्त्रीय प्रमाण उपस्थित करके अत्यन्त प्रभावशाली शब्दों मे दया और दान का समर्थन करते थ। मध्याह्न मे तेरापंथी भाई तथा दूसरे लोग शंका समाधान करने आते थे। पूज्यश्री प्रमाणपूर्वक उनकी शंकाओ का समाधान करते थे।

इस अवसर पर तपस्वी मुनिश्री मांगीलालजी महाराज ने उष्ण जल के आधार पर ४५ उपवास किये। तपस्वी श्री केसरीमलजी महाराज ने धोवन और गर्म जल के आधार पर ७१ दिन का तप किया।

सरदारशहर के सेठ श्रीमान् भूसराजजी दूगड़ तेरापंथियों के माने हुए कट्टर श्रावक थे। पूज्यश्री से व्याख्यानो से प्रभावित होकर वे शंका-समाधान के लिए आने लगे। कुछ दिनो समागम करने से उनका समस्त भ्रम दूर हो गया और वे पूज्यश्री के भक्त बन गये। इस उदाहरण का प्रभाव दूसरों पर भी पड़े बिना न रहा। थली में सैकड़ों लखपती और कई करोड़पति सेठ हैं। तेरापंथी श्रद्धा के कारण वे दया-दान मे पाप मानते हैं। बाढ़ या दुर्भिक्ष आदि प्राकृतिक प्रकोपो स पीडित मनुष्यों और पशुओं की सहायता करना भी पाप समझते हैं। एक मनुष्य, दूसरे मनुष्य की सहायता करना अधर्म मानता है। उनके धर्म गुरु उन्हें ऐसा ही पाठ पढ़ाते हैं! धर्म का यह कैसा भयानक विकार है। धर्म की सफेद चादर ओढ़ स्वार्थ की इस कालिमा का नग्न स्वरूप दिखलाने के उद्देश्य से ही पूज्यश्री ने यह प्रवास किया था। थली लोगों मे से एक भी व्यक्ति अगर दया और दान म धर्म मानने लगे तो कितने ही प्राणियों का भला हो सकता है! सेठ भूसराजजी दूगड़ के साथ उनकी पतिपरायण पत्नी ने भी अपना भ्रम दूर कर दिया। वह दया दान में धर्म मानने लगी।

द्वितीय श्रावण कृष्णा १४ के दिन तपस्वी मुनिश्री मागीलालजी म० की तपस्या का पूर था। उस दिन बहुत से तेरापथियो ने पूज्यश्री के चरण कमलो मे उपस्थित होकर सम्यक्त्व ग्रहण की और अपना जीवन ध र्म बनाया।

सवत्सरी के दिन बाजार और कसाईखाना बन्द रखा गया। तेरापथी भाई पूज्यश्री के बढ़त हुए प्रभाव को सहन न कर सके। उन्होंने उस दिन दुकाने खुलवाने का बहुत प्रयत्न किया। दुकान बन्द रखन वालो का बहिष्कार करने की धमकी दी मगर सारे शहर म ८ ६ दुकानो के अतिरिक्त सभी दुकानें बन्द रही। उस दिन तलियो न घानी नही चलाई। यह सब पूज्यश्री के उपदेशो का ही प्रभाव था।

इस निष्फलता का देखकर तरापथी भाई और चौकन्ने हो गये। उन्होंने देखा अब हमारे किले की ईंटें धीरे धीरे खिसकती जा रही हैं। वे उसकी रक्षा के लिए व्यग्र हो उठे। आहार पानी सबधी अडचनें डालकर भी वे कुछ कामयाब न हुए तो उनक साधुओ ने अपन श्रावकों और श्राविकाओं को स्थानकवासियो के व्याख्यान सुनने का त्याग कराना आरम्भ कर दिया। इस पद्धति से व्याख्यान सुनने वाला की सख्या अलबत्ता कुछ कम हो गई किन्तु भीतर ही भीतर लोगों की जिज्ञासा बढने लगी। मानव स्वभाव गोपनीय वस्तु की ओर स्वभावत अधिक आकृष्ट होता है। कईयो ने प्रेरणा करके पूज्यश्री के जाहिर व्याख्यान करवाये। बाजार मे तथा चौधरियो की धर्मशाला मे आम व्याख्यान हुए। तेरापथी और अन्य लोगो पर व्याख्यानो का बहुत प्रभाव पड़ा इस प्रकार चार मास पर्यन्त पूज्यश्री धर्म का उदघोष करत रह।

सरदारशहर का विजयी चातुर्मास पूरा होन आया तो चूरु के कोठारीजी ने पूज्यश्री स चूरु पधारने की प्रार्थना की। प्रार्थना स्वीकार कर पूज्यश्री ने चातुर्मास समाप्त होने पर चूरु की ओर विहार कर दिया। विहार के समय का दृश्य बडा ही करुणापूर्ण और द्रावक था। सरदार शहर की जनता न उमडते हुए हृदय से और धर्म प्रेम के कारण भीगी हुई आखो से पूज्यश्री को विदाई दी। सैकडों की सख्या मे लोग आपको पहुँचाने गये। बहुत-से व्यक्तियो न विदाई के अवसर पर भी शुद्ध श्रद्धाग्रहण की। इस बार चूरु मे श्रीमालचदजी तथा श्री चम्पालालजी कोठारी ने पूज्यश्री से विविध प्रश्नोत्तर किये। पूज्यश्री के उत्तरों से सतुष्ट होकर उन्होंने सम्यक्त्व ग्रहण किया।

कुछ दिनों चूरु विराजकर आप ठेलासर होते हुए 'रामगढ़' पधारे। रामगढ़ लक्ष्मी और सरस्वती का गढ ही समझिए। यहा बडे बडे सम्पत्तिशाली श्रीमान् भी हैं और धुरधर विद्वान् भी हैं। यहा की जनता में बडी गुणग्राहकता है। सभी ने हृदय से पूज्यश्री का स्वागत किया। यहाँ विद्वमडलो के होने के कारण तेरापथियों को फिर शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया गया किन्तु किसी ने सामने आने का साहस न किया। राजवैद्य प० नाथूरामजी ने एक विज्ञप्ति प्रकाशित करके तेरापथियों को शास्त्रार्थ क लिए आमन्त्रित किया और अजैन विद्वानो एव श्रीमानो को मध्यस्थ बनाने की सलाह दी। फिर भी तेरापथी भाइयो न शास्त्रार्थ करना स्वीकार नही किया।

रामगढ़ से विहार कर पूज्यश्री फतहपुर पधारे। फतहपुर म श्रीयुत रामनरेश त्रिपाठी ने पूज्यश्री से मिलकर सतसमागम का लाभ उठाया। यहा कुछ दिन तक धर्म प्रचार करके आप पुन रामगढ़ होते हुए चूरु पधार गये। चूरु में दो दीक्षाएँ होने वाली थी।

चूरु मे दीक्षामहोत्सव

गगाशहर निवासी वैरागी रेखचन्दजी ससार स विरक्त होकर पूज्यश्री क निकट दीक्षा ग्रहण करना चाहते थे। कोठारी तथा अन्य सद्गृहस्थो के आग्रह से पूज्यश्री चूरु म दीक्षा प्रदान करने की स्वीकृति द दी। फाल्गुन कृष्णा नवमी को धूमधाम के साथ वैरागी की सवारी निकली और धर्मशाला में पहुँची। दीक्षा के लिए यही स्थान नियत किया गया था। ५ ६ हजार व्यक्तियो

की भीड़ जमा थी। बाहर से भी बहुत से गृहस्थ आये थे। ३६ साधु और २० आर्यिकाएँ उपस्थित थीं।

इसी अवसर पर तेरापंथी साधु हमीरमलजी ने खड़े होकर कहा—मैंने तेरहपंथी सम्प्रदाय में दीक्षा ली है। मगर उस सम्प्रदाय के अनेक साधु दोषी हैं। मैंने अपने पूज्यश्री से उनकी शुद्धि के लिए कहा मगर वहाँ सुनवाई नहीं हुई। अतएव मैंने तेरहपंथ का परित्याग कर दिया है। साथ ही जीवरक्षा और दया दान विषयक शास्त्रों का परिचय प्राप्त करके मैंने समाधान प्राप्त कर लिया है मैंने आत्म कल्याण के लिए घर छोड़ा है। ऐसी स्थिति में जानबूझ कर असत्य मार्ग पर नहीं चलना चाहता। जीवरक्षा, दया दान और परोपकार शास्त्रविहित है, यह बात पूज्यश्री ने स्पष्ट करके बतला दी है। मैं सब भाइयों की साक्षी में पूज्यश्री को गुरु मानकर दीक्षा लेना चाहता हूँ। पूज्यश्री मुझ पर कृपा करें।

पूज्यश्री ने कोठारीजी तथा दूसरे प्रमुख व्यक्तियों की सम्मति से हमीरमलजी को भी दीक्षा दे दी।

हमीरमलजी ने अभी तक तेरापंथी सम्प्रदाय की दीक्षा पाली थी। उन्हें स्थानकवासी सम्प्रदाय के साधुओं की कठोर चर्या का भी पता नहीं था। इन साधुओं के संयम की कठोरता आहार पानी की गवेषणा आदि देखकर हमीरमलजी १५ दिनों में ही साधुत्व के पालन में अपने को असमर्थ अनुभव करने लगे। मगर लोक-लाज के कारण वह खुलकर बोल नहीं सकते थे। नतीजा यह हुआ कि एक दिन आहार करते समय करड़ा धोवन पीना पड़ा। तब वह बोले—इसो धोवण पीणा करता तो मरणोई चावो।' और उसी रात्रि को वह चुपचाप उठकर चल दिये।

दीक्षा प्रसंग पर चूरू के कोठारी परिवार ने जो उत्साह दिखलाया वह प्रशंसनीय और आदर्श था। सभी के स्वागत के लिए आपने सुप्रबंध किया था। पूज्यश्री, सेठ मालचन्दजी साहब की कोठी में ठहरे थे। उसी समय श्रीचम्पालालजी कोठारी तथा श्रीमालचंदजी कोठारी ने कई दिनों तक चर्चा करने के पश्चात् शुद्ध श्रद्धा ग्रहण की।

'जैनधर्म कायरों का नहीं वीरों का धर्म है' इस विषय पर पूज्यश्री का अत्यन्त प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। महाराज भैरोंसिंहजी साहब के० सी० आई० ई० जज, वकील तथा अन्य राज्याधिकारी उपस्थित थे। अजैन जनता भी बड़ी संख्या में व्याख्यान सुनने आई थी।

चूरू से विहार करके पूज्यश्री रतनगढ़ सुजानगढ़, राजलदेसर, बीकानेर आदि स्थानों में दया दान का प्रचार करते हुए अषाढ़ शुक्ला ८ को फिर चूरू पधारे। मार्ग में कई स्थलों पर तेरापंथी पूज्य कालूरामजी स्वामी को शास्त्रार्थ के लिए चुनौती दी गई किन्तु वे सामने न आये। बहुत से तेरापंथी भाई भी व्याख्यान सुनने आते थे। तेरापंथी साधु जगह जगह घूमकर पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने का अपने श्रावकों को त्याग करवाते थे फिर भी कुछ सुलभबोधि और सत्य जिज्ञासु व्यक्ति व्याख्यान सुनने आ ही जाते थे।

इसी विहार में पूज्यश्री ने अनुकम्पा की ढालों की रचना की जिनमें तेरापंथियों की युक्तियों का खंडन करके शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा अनुकम्पा का प्रबल समर्थन किया गया है। तेरापंथियों ने साधारण जनता को भ्रम में डालने के लिए थली प्रान्त की बोली में कुछ ढालें बना रखी हैं जिनमें दया दान का निषेध किया गया है। पूज्यश्री ने भी उसी बोली में उन ढालों का खण्डन करते हुए दया दान का समर्थन किया है। पूज्यश्री का जन्म मालवा में हुआ और थली प्रान्त की बोली से वह प्रारंभ में परिचित नहीं थे तथापि अल्पकाल के परिचय से ही वे उस बोली में ढालें रचने में सफल हो सके। यह उनकी प्रखर प्रतिभा का परिणाम है। इसी समय में पूज्यश्री ने एक बृहद् ग्रंथ की रचना भी की, जिसका नाम 'सद्धर्म मण्डन' है। यह प्रचलित

सरदारशहर, चूरू और बीकानेर के चौमासो में लिखा जाता रहा। तेरापंथियो के 'भ्रमविध्वंसन' नामक ग्रंथ मे जनागम के विपरीत जिन कपोल कल्पित बातो का समर्थन किया गया है, उन बातो की सद्धर्ममंडन मे बड़ी कुशलता और सावधानी के साथ परीक्षा की गई है और तेरापंथ की मान्यताओ को जिनागम विरुद्ध सिद्ध किया गया है। इस सम्बन्ध का यह अद्वितीय और प्रमाणिक ग्रंथ है। इसके अध्ययन से जहा तेरापंथ की मान्यताओ की कल्पितता विदित हो जाती है वहा पूज्यश्री की तीक्ष्ण समीक्षा शक्ति, अगाध सिद्धान्त ज्ञान और प्रखर प्रतिभा का भी सहज ही पता चल जाता है।

अडतीसवाँ चातुर्मास (स० १९८६)

वि० स० १९८६ का चौमासा पूज्यश्री ने चूरू मे किया। यहा विराजने से अन्यतीर्थिको पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। सिर्फ दो घर श्रद्धालु थे फिर भी सैकडो की संख्या मे बहुत श्रोता व्याख्यान का लाभ लेते थे। जो लोग जैनधर्म को दया दान परोपकार आदि का निषेधक समझ कर उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे उनके दिल मे भी उसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। श्रीयुत मूलचन्दजी कोठारी ने धनतरस के दिन अपने अनेक साथियो के साथ पूज्यश्री से श्रद्धा ग्रहण कर ली। श्रद्धा ग्रहण करते समय आपने घोषणा की—मैं सत्य समझ कर यह श्रद्धा ग्रहण कर रहा हू। इसमे मुझे लेश मात्र भी संशय नही है। हां अगर किसी को संदेह हो तो दोनो आचार्य आपस मे शास्त्रार्थ करें। अगर मेरा पक्ष पराजित हुआ तो मैं एक लाख रुपया गोशाला के निमित्त दान दूंगा। अगर तेरापंथी पक्ष पराजित हो जाय तो वह भले ही कुछ भी न दे।' कोठारी जी की यह ठोस चुनौती भी निरर्थक हुई। उसे किसी ने स्वीकार करने की हिम्मत न दिखलाई।

चौमासा समाप्त होने पर पूज्य ने चूरू से विहार किया और सरदारशहर पधारे सरदार शहर मे आपके आम व्याख्यान हुए। नेमिचंदजी छाजेड और मोहनलालजी दूगड आदि कई भाइयो ने यहा पर भी तेरापंथी सम्प्रदाय का परित्याग कर पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया।

सरदारशहर से विहार करके अनेक स्थानों पर धर्म का उद्योत करते हुए पूज्यश्री बीकानेर पधारे।

माघ शुक्ला सप्तमी को सुजानगढ़ मे तेरापंथियो का माघ महोत्सव होने वाला था। इस उत्सव के अवसर पर उस सम्प्रदाय के प्राय सभी साधु और साध्वियां एकत्र होते हैं। हजारो गृहस्थ दर्शन के निमित्त इकट्ठे होते हैं। इस अवसर पर दया और दान का प्रचार करने के निमित्त वहा की धर्मशील जनता के विशेष आग्रह से पूज्यश्री फिर सुजानगढ़ पधारे। तेरापंथियो का जमघट होने पर भी जनेतर जनता बड़ी संख्या में पूज्यश्री के उपदेशों का लाभ उठाती थी। जनता की प्रबल इच्छा थी कि इस अवसर पर दोनो आचार्यों का शास्त्रार्थ हो और दया दान संबंधी विवादग्रस्त विषय प्रकाश मे आ जाए मगर तेरापंथी पूज्य श्रीकालूरामजी भूल करके भी शास्त्रार्थ के फंदे मे नही फँसना चाहते थे।

तेरापंथी सम्प्रदाय के आचार्य को बारम्बार शास्त्रार्थ के लिए मध्यस्थ जनता ने उकसाया परन्तु वे सामना करने का साहस न कर सके। स्वभावत जनता इस दुर्बलता को समझ गई थी और उनके अनुयायी भी इस सचाई को मन ही मन समझ रहे थे। अपनी इस दुर्बलता को छिपाने का कोई उपाय करना उनके लिए आवश्यक हो गया। आखिर एक उपाय ऐसा निकल आया जिससे न साप मरे न लाठी टूटे। अर्थात शास्त्रार्थ की पराजय से भी बचा जा सके और दुर्बलता का अपवाद भी कुछ अंश मे दूर हो जाय। एक जाट पंडित नमिनाथ को वे कहीं से पकड़ लाए और उसे अगुवा करके शंका समाधान के लिए तैयार किया। इस शंका-समाधान मे जाट पंडित को किस प्रकार निरुत्तर होना पड़ा और क्या क्या शंका समाधान हुए, इत्यादि सभी

बातें 'सुजानगढ़ चर्चा' नामक पुस्तक में विस्तारपूर्वक प्रकाशित हो चुकी हैं। जिज्ञासु पाठक परिशिष्ट में देख सकते हैं।

यद्यपि तेरापंथी पूज्य स्वयं सामने नहीं आये तथापि इस शंका समाधान का प्रभाव बहुत सुंदर हुआ। लोगों को बहुत अंशों में सत्य का भान हो गया। पूज्यश्री की योग्यता से वहाँ की जनता पहले ही परिचित थी, इस शंका समाधान के पश्चात् तो आपका लोहा मानने लगी। श्री रामचंदजी ने तथा जैनेतर जनता ने अत्यंत श्रद्धाभाव से चौमासा करने का बहुत आग्रह किया किन्तु पूज्यश्री ने उस समय कोई निश्चित उत्तर नहीं दिया।

सुजानगढ़ से विहार करके पूज्यश्री छापर, पड़िहारा, रतनगढ़ राजलदेसर आदि स्थानों को पावन करते हुए भीनासर पधार गये। रतनगढ़ में सेठ श्रीसूरजमलजी नागरमलजी का तथा अन्य अनेक भाइयों का प्रबल आग्रह टालते हुए तपस्वी श्री बालचंदजी महाराज के संथारे के कारण पूज्यश्री शीघ्र ही गंगाशहर पधार गये।

तपस्वीराज श्री बालचन्दजी महाराज का स्वर्गवास

घोर तपस्या और उत्कृष्ट चारित्र के लिहाज से पूज्यश्री हुक्मीचंदजी महाराज के सम्प्रदाय का स्थान बहुत ऊँचा रहा है। पूज्यश्री स्वयं बहुत बड़े तपस्वी थे। उन्होंने २१ वर्ष तक बेले-बेले पारणा किया था। उत्कृष्ट चारित्र, सरलता, विद्वत्ता आदि अनेक गुणों के कारण विरोधी भी उनके भक्त बन गये थे। उनके पश्चात् दूसरे आचार्यों के समय भी अनेक घोर तपस्वी और उग्र संयमी मुनिराज होते रहे हैं। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के समय भी यह परम्परा अक्षुण्ण रही। मुनिश्री बालचंदजी महाराज का उग्र संयमी और तपस्वी मुनियों में एक विशिष्ट स्थान था। दीक्षा लेने के बाद आप तपस्या में तत्परता से प्रवृत्त हुए। ७० वर्ष की आयु तक आप बराबर छोटी बड़ी तपस्याएँ करते रहे। दीक्षित अवस्था का हिसाब लगाया जाय तो दीक्षित होने के बाद आपका अधिकांश समय तपस्या में ही बीता।

संवत १९८७ के चैत्र में आपको यह प्रतीत होने लगा कि इस जीवन का अंतिम समय अब सन्निकट आ गया है। आपकी आयु उस समय ७० वर्ष की थी। आपने उसी समय निराहार रहने की प्रतिज्ञा कर ली। पानी के अतिरिक्त सभी आहारों का त्याग करके तिविहार संथारा ले लिया। पूज्यश्री तपस्वीजी को दर्शन देने के लिये गंगाशहर पधार गये। तपस्वीराज ने आचार्य महाराज के दर्शन करके अपने को कृतकृत्य माना और पानी का भी त्याग कर देने का विचार प्रकट किया। आपकी परिणामधारा उत्तरोत्तर उत्कृष्ट होती जाती थी। आपने शरीर का और जीवन का मोह त्याग दिया था। पूज्यश्री ने द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव देखकर उस समय पानी का त्याग करना उचित नहीं समझा। तपस्वीजी किसी दिन पानी का सेवन कर लेते और किसी दिन नहीं भी सेवन करते थे।

ज्येष्ठ कृष्ण ४ की रात्रि को ९ बजे तपस्वीजी ने औदारिक शरीर त्याग दिया। अन्तिम समय तक आपके मुख पर एक प्रकार की अनुपम शान्ति और तेजस्विता विराजमान रही। अंतिम समय में आपने अनेक श्रावकों और श्राविकाओं को अनेक प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान करवाए। दूसरे दिन बड़ी धूमधाम के साथ आपका अन्तिम संस्कार किया गया।

ज्येष्ठ वदी ५ को पूज्यश्री भीनासर पधार गये।

उनतालीसवां चातुर्मास (सं० १९८७)

बीकानेर की जनता चातक की तरह पूज्यश्री की प्रतीक्षा कर रही थी। उसकी आकांक्षा बड़ी प्रबल थी कि इस बार का चौमासा बीकानेर में ही किया जाय। तदनुसार पूज्यश्री से प्रति आग्रहपूर्ण प्रार्थना की गई और वह स्वीकृत भी हो गई। चौमासे की स्वीकृति से बीकानेर की साधु मार्गी जैन जनता में उत्साह की लहर दौड़ गई।

आषाढ़ शुक्ला १० को पूज्यश्री १५ ठाणों मे चौमासा करने के निमित्त बीकानेर पधार गये। उसी वर्ष श्रीनन्दकुंवरजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती श्रीकिशनाजी ने १६ ठाणा से तथा श्रीरगूजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती श्री गुलाबकुंवरजी ने ठाणा ६ से बीकानेर मे चौमासा किया।

इस चातुर्मास मे तपस्वी मुनि श्री फौजमलजी म० ने धोवन के आधार पर ६८ दिन की तपस्या की। ७४ वर्ष की वृद्धावस्था होने पर भी आप एक दिन धोवन पीते थे और दूसरे दिन चौविहार उपवास करते थे। आपके अतिरिक्त अन्य सन्तो और सतियो ने भी विविध प्रकार की तपस्याएँ की। पूज्यश्री ने स्वय ७ दिन की थोक तथा प्रकीर्णक तपस्या की।

आसोज वदी ११ को तपस्वी मुनि श्रीफौजमलजी महाराज की तपस्या का पूर था। उस दिन राज्य की ओर से कसाई खाना बन्द रखा गया और स्थानीय श्रीसघ की प्रेरणा से ठठेरो, लुहारो, भटियारो तथा तेलियो ने अपना धधा बन्द रखा। जीव दया आदि अनेक उपकार हुए। आसौज वदी १२ को तपस्वीजी का पारणा निर्विघ्न हुआ। आप अन्त समय तक प्रसन्न रहे और प्रतिदिन व्याख्यान मे उपस्थित होते रहे।

इस चातुर्मास मे मन्दिर मार्गी भाइयों की ओर से कुछ प्रश्न किये गये जिनका उत्तर पूज्यश्री की ओर से दे दिया गया। वे प्रश्नोत्तर छप चुके हैं, अत उन्हें यहा देने की आवश्यकता नहीं है।

पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने के लिए हजारों की सख्या मे श्रोता उपस्थित होते थे। राज्याधिकारी, व्यापारी, जैन, जनेतर सभी श्रेणियो के श्रोता व्याख्यान से लाभ उठाते थे।

हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक श्रीरामनरेश त्रिपाठी पूज्यश्री के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। आपने पूज्यश्री के अनेक व्याख्यान सुने। तत्पश्चात् श्रीत्रिपाठीजी ने प्रयाग की मासिक पत्रिका सरस्वती में एक लेख प्रकाशित किया, जिसका अंश इस प्रकार है —

मेरी बीकानेर यात्रा

अब मैं एक बात की चर्चा और करने वाला हूँ, जो राजपूताने से भिन्न प्रान्त प्रान्त वालों के लिये नई ही नही, कौतूहलजनक भी है। बीकानेर मे जैनधर्मावलम्बी ओसवाल वैश्यो की संख्या अधिक है। ये लोग कलकत्ते-बम्बई में बड़ा-बड़ा व्यापार करते हैं और बड़े ही धनी होते हैं। इनमे दो सम्प्रदाय हैं एक के आचार्य श्री कालूरामजी हैं जो तेरहपन्थी कहलाते हैं दूसरे के आचार्य श्रीजवाहरलालजी महाराज हैं जो बाईस पथ कहलाता है। गतवर्ष फतहपुर मे जवाहरलालजी महाराज से मेरा साक्षात्कार हुआ था। उनका चरित्र बहुत ही अच्छा पवित्र और तपस्या से पूर्ण है। वे अच्छे विद्वान निरभिमानी, उदार सहृदय और निस्पृह हैं। चौमासे मे वे किसी एक स्थान मे ठहर कर चौमासा करते हैं और जनता को अपने व्याख्यानामृत से तृप्त करके सन्मार्ग पर ले चलते हैं। उनके व्याख्यान मे सामयिकता रहती है और देश की प्रगति का भी उन्हें काफी ज्ञान है। वे इतिहास से सत्पुरुषो के जीवन चरित्रों से उपकारी बातें लेकर अपने भक्तो को देने में कभी आलस्य और सकोच नहीं करते। इस वर्ष उनका चौमासा बीकानेर मे था। मैं इस मौसम मे खासकर उनका सत्सग करने के लिए ही बीकानेर मे गया था। मैं प्राय प्रतिदिन उनके व्याख्यान मे जाया करता था। कई बार उन्होंने श्रीमुख से मेरी चर्चा भी की। इससे उनके भक्तो का मैं प्रियपात्र हो गया और वे लोग मेरे साथ बड़ा प्रेम प्रदर्शन करने लगे। आचार्यजी के भाषणो का प्रभाव उनके सम्प्रदाय के स्त्री पुरुष दोनो पर बहुत अच्छा पड़ रहा है।

वे बड़े निर्भय वक्ता हैं, पर अप्रियवादी नहीं। उनका व्याख्यान सुनने के लिये बीकानेर के राजपदाधिकारी तथा अन्य मत-मतान्तरों के खास खास लोग भी आते थे।

कौतूहलजनक बात दूसरे सम्प्रदाय की है जिसके आचार्य श्रीकालूरामजी महाराज हैं। ये भी चौमासा करते हैं। इनके भी भक्तों की संख्या अधिक है। आचार्य कालूरामजी की शिक्षा का कौतूहलजनक अंश यह है—किसी के गले में फांसी लगी हुई हो तो उसे काट देना पाप है। गायों के बाड़े में आग लगी हो तो उसे बुझा देना या दरवाजा खोलकर गायों को बाहर निकाल देना पाप है। किसी दीन-दुखी पर दया करना या दान देना पाप है। कोई किसी निर्दोष वत्स के पेट में छुरी घासता हो तो उसे बचाना पाप है। कोई क्रोधावेश में गड्ढे में या कुएँ में गिरने जा रहा हो तो उसे बचाना पाप है इत्यादि। इसी प्रकार कौतूहलजनक की अनेक बातें हैं। जो श्रोताओं को समझाई जाती हैं और उनका प्रभाव भी पड़ता है। इस सम्प्रदाय में धनियों की संख्या बहुत है पर शिक्षितों की संख्या अत्यन्त कम। क्योंकि शिक्षा के लिये दान देना भी पाप है। हां खाने, पीने, पहनने में ये लोग किफायत नहीं करते। आचार्यजी का उपदेश भी ऐसा ही है। इस सम्प्रदाय वाले भक्त आचार्य कालूरामजी को ही ईश्वर तुल्य मानते हैं और उनके साथी साधुओं की सेवा तन-मन धन से करते हैं। अच्छी से-अच्छी चीजें खिलाते हैं। बढ़िया से बढ़िया वस्त्र पहिनाते हैं और उत्तम से उत्तम स्थान में ठहराते हैं। स्त्रियों को रात के पहले और पिछले पहर में आचार्यजी का व्याख्यान सुनने की स्वतन्त्रता रहती है। इस सम्प्रदाय के लोग खूब मौज की जिन्दगी बिताते हैं। सुनते हैं कि राजपूताने में इस सम्प्रदाय वालों की संख्या साठ हजार के लगभग है। साठ हजार लोग बीसवीं सदी में ऐसी भयानक शिक्षा के शिकार हो रहे हैं, क्या यह कम आश्चर्य की बात है?

'सरस्वती'

जनवरी १६३१ रामनरेश त्रिपाठी

सरदारशहर के सेठ सनसुखरामजी दूगड़ तथा अन्य सज्जनों ने सरदार शहर पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने साधुभाषा में समुचित आश्वासन दिया।

बीकानेर का यशस्वी चौमासा समाप्त होने पर पूज्यश्री गंगाशहर, भीनासर होते हुए मार्गशीर्ष कृष्ण १३ को देशनोक पधारे। २६ दिन तक विराजमान रहे। जैन जैनेतर जनता ने आपके उपदेशों से खूब लाभ उठाया। देशनोक के चारणों तथा दूसरे लोगों पर आपका बहुत प्रभाव पड़ा। आपके सदुपदेशों के प्रभाव से वहां निम्नलिखित सुधार हुए—

(१) यहां के ओसवाल मुकलेरे समय रात्रि में भोजन बनवाते थे। उसमें जीव हिंसा बहुत होती थी। पूज्यश्री के उपदेश से सब भाइयों ने रात्रि में रसोई बनाने-बनवाने का त्याग कर दिया।

(२) यहां के चारण जागीरदारों में दो पक्ष से पारस्परिक उग्र वैमनस्य के फलस्वरूप एक आदमी के प्राण भी चले गये थे। पूज्यश्री के प्रभावक उपदेश से वैमनस्य की ज्वालाएँ शांत हो गई और प्रेम की धारा बहने लगी।

(३) चारण, खत्री, सुनार आदि ने मांस, मदिरा, बीड़ी, तमाखू आदि अभक्ष्य और मादक द्रव्यों तथा वृक्ष काटने का त्याग किया।

(४) खूब तपस्या हुई। तीन पचरंगिया हुई।

(५) अनेक अजैनों ने, तेरापंथी तथा मन्दिरमार्गी भाइयों ने पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया।

(६) देशनोक तथा आसपास के जैनों का संगठन करने के लिए 'श्रीसाधुमार्गी जैन सभा' स्थापित हुई।

(७) बहुत से लोगों ने कन्या विक्रय करने तथा चर्बी लगे वस्त्र पहनने का त्याग किया।

देशनोक से विहार करके पूज्यश्री रासीसर पधारे। यहां चार तेरापंथी भाइयों ने सम्यक्त्व ग्रहण किया। सूरपुरा में तीन भाइयों ने सम्यक्त्व लिया। नारवा में बीस सुलभबोधि भाइयों को सम्यक्त्व दिया। पूज्यश्री नारवा से पाचू पधारे। वहां ७० तेरापंथियों ने शुद्ध श्रद्धा ग्रहण की। पाचू में शिथिल साधुमार्गी भाइयों को उपदेश देकर आपने दृढ़ धर्मी बनाया। तत्पश्चात पूज्यश्री का सरदारशहर में पदार्पण हुआ। यहां शेष काल विराजे। दो बाइयों ने दीक्षा ग्रहण कर अपना जीवन सार्थक किया। सरदारशहर से आप चूरू पधारे। चूरू में शानदार स्वागत किया गया। कुछ दिन यहां विराजने के अनन्तर ता० १२ ३ ३१ को आप राजगढ़ पधारे। ग्राम से बाहर शान्त एकान्त वातावरण में धर्मशाला में विराजमान हुए। पूज्यश्री का विहार के संवाद पाकर एक दिन पहले ही वहां तेरापंथी साधु भी आ पहुँचे थे। पूज्यश्री का प्रभावशाली स्वागत हुआ। ता० १३ ३ को बाजार में आपने आम जनता को लाभ पहुँचाने के लिए सुन्दर उपदेश दिया। समस्त राज्याधिकारी और एक हजार के लगभग अन्य श्रोता उपस्थित थे। यहां के तेरापंथी बन्धु सरल और भद्र थे। जनता पूज्यश्री के दर्शन से तथा उपदेश से अत्यन्त प्रसन्न और प्रभावित हुई। सभी लोग मुक्तकंठ से व्याख्यान की प्रशंसा करने लगे।

सेठ अमृतलाल रामचन्द जौहरी श्री आनन्दराजजी सुराणा और बीकानेर के अनेक श्रावक पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। तेरापंथी भाई प्रश्नोत्तर के लिए अकसर आते रहते थे। प्रभाव बहुत सुन्दर पड़ा। ता० २० को यहां के प्रसिद्ध तेरापंथी श्री भीखमचन्दजी सागवगी ने अपने सुयोग्य पुत्र के साथ पूज्यश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया। इस घटना ने ओसवालों में—तेरापंथियों में हलचल सी मचा दी।

यहां हासी और हिसार के श्रावक पूज्यश्री से अपने नगरों में पधारने की प्रार्थना करने के लिए उपस्थित हुए। उनका आग्रह इतना प्रबल था कि पूज्यश्री के लिए टालना अशक्य हो गया।

राजगढ़ में धार्मिक जागृति और विशेषतः दया दान के प्रति प्रबल श्रद्धा उत्पन्न करके पूज्यश्री ने विहार किया। यद्यपि पूज्यश्री हिसार की ओर पधारना चाहते थे मगर भादरा के सेठ पूनमचन्दजी नाहरा और खूबराम सर्राफ के अनिवार्य आग्रह के कारण आप भादरा की ओर पधारे। ता० ५ ४ ३१ को आप भादरा पधारे। लगभग २५० अग्रवाल भाइयों ने डेढ़ मील सामने जाकर पूज्यश्री का स्वागत किया। व्याख्यान में खासी उपस्थिति होती थी। राज्याधिकारी वर्ग ने खूब लाभ उठाया। यहां सेठ पूनमचन्दजी नाहरा पूज्यश्री के विशेष भक्त थे। सेठ खूबरामजी सर्राफ पूज्यश्री के उपदेशों से प्रभावित होकर पूज्यश्री के अनुरागी बने। तेरापंथी साधु अपने श्रावकों को संभाले रहने के उद्देश्य से यहां भी आ पहुँचे थे।

भादरा की भद्र हृदय जनता को भव्य उपदेश देकर, भव भ्रमण से छूटने का पथ प्रदर्शित करके पूज्यश्री विचरते हुए हिसार पधारे। यहां जाहिर व्याख्यान हुए। आर्यसमाज और दिगम्बर भाइयों के साथ प्रश्नोत्तर हुए। अच्छा प्रभाव पड़ा। हिसार के अनन्तर हासी में भी आपके आम व्याख्यान हुए। तेरापंथी भाई प्रश्नोत्तर के लिए आये। देहली श्रीसंघ की ओर से कुछ प्रमुख सज्जन देहली में आगामी चौमासा करने की प्रार्थना करने आये। यहां पं० मुनिश्री मदनलालजी महाराज से भी मुलाकात हुई। आप जैनशास्त्रों के अच्छे ज्ञाता हैं। पूज्यश्री पर आपकी गाढ़ी श्रद्धा थी। परस्पर प्रेमपूर्ण व्यवहार रहा।

पूज्यश्री भिवानी भी पधारे। यहां भी आपके जाहिर व्याख्यान हुए। यहां के तेरापंथी भाइयों ने अनेक प्रकार से विरुद्ध प्रचार करना आरम्भ किया। मगर पूज्यश्री की विद्वत्तापूर्ण वाणी और उत्कृष्ट संयम के सामने विरोधी प्रचार टिक न सका। आर्यसमाजी और दिगम्बर जैन भाइयों के कारण वह प्रचार एकदम ठंडा पड़ गया।

भिवानी से विहार कर पूज्यश्री रोहतक पधारे। देहली के श्रीसंघ की ओर से पुन चौमासे की प्रार्थना की गई। पूज्यश्री ने श्रीसंघ का आग्रह अनिवार्य सा समझकर साधुभाषा में समुचित आश्वासन दे दिया। आपने देहली की ओर ही प्रस्थान किया।

दादरी में पूज्यश्री मनोहरदासजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री मोतीलालजी महाराज तथा मुनिश्री पृथ्वीदासजी महाराज जो बाद में आचार्य पद पर आसीन हुए—तथा कविवर मुनिश्री अमरचन्दजी महाराज विराजमान थे। पूज्यश्री का इन सन्तों से प्रेमपूर्ण समागम हुआ। इन्हीं दिनों कान्फ्रेंस की ओर से एक संवत्सरी करने के लिए सभी मुनियों के पास विज्ञप्ति भेजी गई थी। पूज्यश्री ने तथा वहां विराजमान अन्य सन्तों ने उदारतापूर्वक कान्फ्रेंस के निश्चयानुसार संवत्सरी करने की स्वीकृति फरमाई।

चालीसवां चातुर्मास (१९८८)

रोहतक से विहार करके पूज्यश्री ता० ११ ७ ३१ को ठाणा १२ से देहली पधारे। देहली का श्रीसंघ चिरकाल से पूज्यश्री के लिए लालायित था। भक्ति में असीम शक्ति है। भक्त के हृदय की प्रबल भावना भक्तिपात्र को आकर्षित किये बिना नहीं रहती है। तदनुसार पूज्यश्री देहली पधार गये और वहां ता० १७ ७ ३१ के दिन चौमासा करने की स्वीकृति दे दी। देहली के श्रीसंघ के लिए पूज्यश्री की स्वीकृति अत्यन्त उत्साह और आनन्द देने वाली सिद्ध हुई। संघ में एक प्रकार की नई जागृति आ गई। उल्लास का वातावरण फैल गया।

भारतवर्ष के इतिहास में देहली दिल्ली या इन्द्रप्रस्थ का नाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भारत का इतिहास बनाने में दिल्ली ने जो भाग लिया है वह किसी दूसरे नगर ने नहीं लिया। अत्यन्त प्राचीन काल से दिल्ली राजनैतिक हलचलों का केन्द्र रहा है। दिल्ली ने भारतीय वीरों की वीरता देखी है मुगलों का वैभव विलास देखा है और फिरंगियों की कूटनीति देखी है। देहली भारत का शासक है। भारतवर्ष के लिए राजशासनादेश दिल्ली से जारी होते रहे हैं।

ऐसे नगर में पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज जैसे महान् धर्मोपदेशक का चौमासा होना भी एक विशेष घटना है। दिल्ली नगर भारत का राजनीतिक शासक है तो पूज्यश्री धर्मशासक थे। जैसे दिल्ली के आदेशों की प्रतीक्षा उत्सुकतापूर्वक की जाती है उसी प्रकार पूज्यश्री के आदेशों और उपदेशों की प्रतीक्षा लाखों व्यक्ति करते थे।

भारत की राजधानी में पूज्यश्री का यह चातुर्मास कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण रहा। पूज्यश्री देहली के प्रधान और दर्शनीय बाजार चांदनी चौक में महावीर भवन में ठहरे थे। आपके व्याख्यानों में जैन जैनेतर जनता की भीड़ लगी रहती थी। व्याख्यान इतने प्रभावशाली होते थे कि देहली जैसे विशाल नगर में भी उनकी कीर्ति फैलते देर न लगी। अनेक हिन्दू और मुस्लिम राष्ट्रीय नेता आपके विचारों से स्फूर्ति लेने के लिए व्याख्यान में आते थे। कांग्रेस के तत्कालीन प्रसिद्ध नेता शेख अताउल्लाशाह बुखारी और उनके भाई हबीबुल्ला शाह बुखारी आदि अनेक सज्जनों ने पूज्यश्री के व्याख्यान में सम्मिलित होकर नवीन प्रेरणा प्राप्त की। श्रीबुखारी ने ओजस्वी भाषण करते हुए मुक्तकंठ से पूज्यश्री के उपदेशों की प्रशंसा की और विदेशी तथा मिल के वस्त्र त्यागने की जनता को प्रेरणा की। काका कालेलकर जैसे विचारक विद्वान् भी पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए। आपने राष्ट्रोन्नति के विषय में पूज्यश्री के विचार सुने। काका साहेब ने अन्त में बड़ी प्रसन्नता प्रकट की।

ई० सन् १९३१ भारतवर्ष के स्वतंत्रता संग्राम में बड़ा ही गौरवपूर्ण समय है। उस समय भारत में एक छोर से दूसरे छोर तक क्रांति की लहरें लहरा रही थीं। महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग और सत्याग्रह-आन्दोलन अत्यन्त सफलता के साथ चल रहा था। पूज्यश्री का

अहिंसात्मक आन्दोलन का महत्त्व भली भाँति समझते थे। उन्हें विदित था कि यह अहिंसा की खरी कसौटी है। इसकी सफलता और असफलता पर अहिंसा की प्रतिष्ठा और अप्रतिष्ठा निर्भर है। अगर यह आन्दोलन सफल होता है तो यह अहिंसा धर्म की अभूतपूर्व विजय होगी। जैनधर्म अहिंसा का प्रतिपादक और जैन-समाज अहिंसा का समर्थक और पोषक है। उसे अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिए होने वाले इस विशुद्ध संघर्ष मे अपना समुचित भाग अदा करना चाहिए। ऐसा करके वे अहिंसा की महान् से महान् सेवा बजा सकेंगे। यही कारण था कि पूज्यश्री अपने प्रवचनो म राष्ट्रधर्म का अत्यन्त प्रभावजनक शब्दों म प्रतिपादन करते थे। देहली चातुर्मास के कतिपय व्याख्यान* जवाहरकिरणावली' के प्रथम और द्वितीय भाग मे प्रकाशित हो चुके हैं। उन्हें देखने से स्पष्ट हो जाता है कि पूज्यश्री ने अहिंसाधर्म के प्रचार का अनुकूल अवसर पहचान कर कितनी खूबी के साथ उसका उपयोग किया है। आचार्य महोदय की युगदर्शक तीक्ष्ण दृष्टि का इसमे भली भाति पता चल जाता है। उस समय के उपदेश किसी भी राष्ट्रीय नेता के उपदेशों से कम प्रभावशाली नही हैं, फिर भी तारीफ यह है कि आपने अपनी साधुभाषा का कहीं उल्लघन नही किया है और उन उपदेशों मे धार्मिकता उसी प्रकार व्याप्त है जसे दूध मे मिठास व्याप्त रहती है। निस्संदेह आपके यह उपदेश जनता को चिरकाल तक पथ प्रदर्शित करते रहेंगे।

जसे समग्र राष्ट्र मे नवीन चेतना दौड रही थी उसी प्रकार स्थानकवासी समाज मे भी जागृति की एक नई लहर उठ रही थी। सारे समाज का सगठन करने के लिए अखिल भारतीय 'साधु सम्मेलन करने की धूम थी। धर्मवीर सेठ दुर्लभजी त्रिभुवन जौहरी तथा दूसरे सज्जन जी जान से प्रयत्न कर रहे थे। समाज का प्रतिनिधि मडल प्रधान प्रधान मुनिराजो स मिल रहा था और आशाजनक आश्वासन प्राप्त कर रहा था।

ता० ११ १० ३१ को दिल्ली मे स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस की जनरल कमेटी का अधिवेशन हुआ। मुख्य विचारणीय विषय साधु सम्मेलन था। प्राय सभी प्रान्तो के और सभी सम्प्रदायो के प्रधान श्रावक उपस्थित थे। पूज्यश्री के इस विषय के उपयोगी, सुन्दर और महत्त्वपूर्ण विचार सुनकर सभी श्रोता गद्गद् हो उठते और उनमें नवीन उत्साह आ जाता था। साधु सम्मेलन के सिलसिले में एक दिन पूज्यश्री ने फरमाया—

पूज्यश्री का भाषण—ब्रह्मचारी वर्ग

आज निर्ग्रन्थवर्ग की स्थिति कुछ विषम सी हो रही है। साधु समाज और साध्वी समाज मे निरकुशता फलती जाती है। इसका कारण किस प्रकार के पुरुष और किस प्रकार की महिला को दीक्षा देनी चाहिए, इस बात का पूरी तरह विचार नही किया जाता रहा है। दीक्षा सबधी नियमों का पालन बहुत कम हो रहा है। इस नियमहीनता का दुष्परिणाम यहा तक हुआ है कि अपनी जन सम्प्रदाय से भिन्न जन सम्प्रदाय मे दीक्षा लेने के कारण मुकदमेबाजी तक हो जाती है।

साधु समाज के निरकुश होने और साधुता के नियमों म शिथिलता आ जाने के कारणों मे से एक कारण है—साधुओ के हाथ में समाज सुधार का काम होना। आज सामाजिक लेख लिखने, वाद विवाद करने और इस प्रकार समाज सुधार करने का भार साधुओ पर डाल दिया गया है। समाज-सुधार करने का काय दूसरा कोई वर्ग अपने हाथ मे नही ले रहा है। अतएव यह काम भी कई एक साधुओ को अपने हाथ मे लेना पडा है। इसलिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप म साधुओ द्वारा ऐसे ऐसे काम हो जाते हैं जो साधुता के लिए शोभास्पद नहीं कहे जा सकते।

यदि समाज सुधार का काम साधु वर्ग अपने ऊपर नहीं लेता तो समाज विगडता है और जो समाज लौकिक व्यवहार मे ही बिगडा हुआ होगा उसमे धर्म की स्थिरता किस प्रकार रह

*यह पुस्तकें श्रीमान् सेठ चम्पालालजी साहब बाठिया, भीनासर (बीकानेर) से प्राप्त हो सकती हैं।

सकेगी। व्यवहार से गया—गुजरा समाज धर्म की मर्यादा को किस प्रकार कायम रख सकेगा। इस दृष्टि से समाज सुधार का प्रश्न भी उपेक्षणीय नहीं है।

साधु वर्ग पर जब समाज सुधार का भार भी होगा तब उनके चारित्र की नियम परम्परा में बाधा पहुँचने से चारित्र में न्यूनता आ जाना स्वाभाविक है। इस प्रकार आज का साधु समाज बड़ी विषम अवस्था मे पड़ा हुआ है। एक ओर कुआं, दूसरी ओर खाई-सी दिखाई पड़ती है।

समाज सुधार का भार साधुओं पर पड़ने का परिणाम क्या हो सकता है यह समझने के लिए यति समाज का उदाहरण मौजूद है। पहले का यति समाज आज सरीखा नहीं था। लेकिन उस समाज-सुधार का कार्य अपने हाथ मे लेना पड़ा। इसका परिणाम धीरे धीरे यह हुआ कि सामाजिकता की ओर अग्रसर होते हुए उनकी प्रवृत्ति यहां तक बढ़ी कि वे स्वयं पालकी आदि परिग्रह के धारक बन गये। यदि वर्त्तमान साधुओं को समाज सुधार का भार सौंपा गया और उनमे सामाजिकता की वृद्धि हुई तो उनकी भी ऐसी ही—यतियों जसी—दशा होना संभव है। अतएव साधु समाज के ऊपर समाज का बोझ न होना ही उत्तम है। साधुओं का अपना एक अलग ही कार्यक्षेत्र है। उससे बाहर निकल कर भिन्न क्षेत्र भी अत्यन्त विस्तृत और महत्वपूर्ण है।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि ऐसा कौन-सा उपाय है जिससे समाज सुधार का आवश्यक और उपयोगी काम भी हो सके और साधुओं को समाज सुधार मे पड़ना न पड़े?

हमारे समाज में मुख्य दो वर्ग हैं—साधु वर्ग और श्रावक वर्ग। पर उक्त बोझ पड़ने से क्या हानियां हो सकती हैं, यह बात सामान्य रूप से मैं बतला चुका हूँ। रहा श्रावक वर्ग सो इसी वर्ग को समाज सुधार की प्रवृत्ति करनी चाहिए। मगर हमारा श्रावक वर्ग दुनियादारी के पचड़ा मे इतना अधिक फंसा रहता है और उसमे शिक्षा का भी इतना अभाव है कि वह समाज सुधार की प्रवृत्ति का यथावत् सचालन नहीं कर सकता। श्रावकों में धर्म सम्बन्धी ज्ञान भी इतना पर्याप्त नही है जिससे वे धर्म का लक्ष्य रखकर धर्म मर्यादा को अक्षुण्ण बनाये रखकर, तदनुकूल समाज-सुधार कर सकें। कदाचित् कोई विद्वान् श्रावक मिलता भी है तो उसमे श्रावक के योग्य आदर्श चरित्र और कर्त्तव्यनिष्ठा की भावना पर्याप्त रूप मे नहीं पाई जाती। वह गृहस्थी के पचड़ा में पड़ा हुआ होता है, अतएव उसकी आवश्यकताएं प्राय अन्य सामान्य गृहस्थों के समान ही होती हैं। ऐसी स्थिति में वह अर्थ के धरातल से ऊपर नहीं उठ पाता और जो व्यक्ति अर्थ के धरातल से ऊपर नहीं उठा है, उसमे निस्पृह निरपेक्ष भाव के साथ समाज-सुधार के आदर्श काम को करने की पूर्ण योग्यता नही आती। उसे अपनी आवश्यकताएँ पूर्ण करने के लिए धीमानों की ओर ताकना पड़ता है उनके समाज हित विरोधी कार्यों को सहन करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त त्याग की मात्रा अधिक न होने से समाज मे उसका पर्याप्त प्रभाव भी नहीं रहता। इस स्थिति में किस उपाय का अवलम्बन करना चाहिए जिससे समाज सुधार के कार्य में रुकावट न आवे और साधुओं को भी इस कार्य से अलहदा रखा जा सके? आज यही प्रश्न हमारे सामने उपस्थित है और उसे हल करना अत्यावश्यक है।

मेरी सम्मति के अनुसार इस समस्या का हल ऐसे तीसरे वर्ग की स्थापना करने से ही हो सकता है, जो साधुओं और श्रावकों के मध्य का हो। यह वर्ग न तो साधुओं में ही परिगणित किया जाय और न गृह कार्य करने वाले साधारण श्रावकों में ही। इस वर्ग में वे ही व्यक्ति सम्मिलित किये जाएँ जो ब्रह्मचर्य का अनिवार्य रूप से पालन करें और अकिंचन हों अर्थात् अपने लिए धन संग्रह न करें। वे लोग समाज की साक्षी से, धर्मालय में समस्त इन दोनों व्रतों को ग्रहण करें। इस प्रकार के तीसरे त्यागी श्रावक वर्ग से समाज सुधार की समस्या भी हल हो जायगी और धर्म का भी विशेष प्रचार हो सकेगा। साथ ही निर्ग्रन्थवर्ग भी दूषित होने से बच जायगा।

इस तीसरे वर्ग से समाज सुधार के अतिरिक्त धम को क्या लाभ पहुँचेगा, यह बात सक्षप म बतला देना आवश्यक है।

मान लीजिए कोई व्यक्ति धम के विषय मे लिखित उत्तर चाहता है। साधु अपनी मर्यादा के विरुद्ध किसी को कुछ लिखकर नहीं दे सकता। अतएव ऐसी स्थिति में लिखित उत्तर न देने के कारण धम पर आक्षेप रह जाता है। अगर यह तीसरा वग स्थापित कर लिया जाय तो लिखित उत्तर भी द सकेगा।

इसी प्रकार अगर अमेरिका या अन्य किसी विदेश म सवधम सम्मेलन होता है, वहा सभी धर्मों के अनुयायी अपन अपन धम की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करत हैं। एसे सम्मेलनो म मुनि सम्मिलित नही हो सकत अतएव धम प्रभावना का काय रुक पडता है। यह तीसरा वग एस ऐस अवसरा पर उपस्थित होकर जनधम की वास्तविक उत्तमता का निरूपण करक धम की बहुत कुछ सवा बजा सकता ह। आजकल एसे सम्मलनो मे बहुधा जनधम के प्रतिनिधि की अनुपस्थिति रहती है और इसस जनधम के विषय म इतर सहानुभूतिशील व्यक्तियों म भी उतना उच्च विचार उत्पन्न नहा हा पाता। व जनधम क गरिमा ज्ञान स वचित रहते हैं। तीसरा वग एसे सभी अवसरो पर उपयोगी होगा। इसस धम की प्रभावना होगी।

इसक अतिरिक्त और भी बहुतरे काय है जो सच्च सेवा भावी और त्यागपरायण तृतीय वग की स्थापना स सरलतापूवक सम्पन्न किये जा सकेंगे जैसे साहित्य प्रकाशन और शिक्षा आदि। आज यह सब कार्य व्यवस्थित रूप से नही हो रहे हैं। इनम व्यवस्था लाने के लिए भी तीसर वग की आवश्यकता है।

तीसर वर्ग क होने से धामिक कार्यो म बडी सहायता मिलगी। यह वग न तो साधुपद की मर्यादा म बधा रहेगा और न गृहस्थो के झझटों म ही फँसा होगा। अतएव यह वग धम प्रचार म उसा प्रकार सहायता पहुँचा सकगा, जस चित्र प्रधान न पहुँचाई थी। तात्पय यह है कि तीसर वग की स्थापना से एसे अनेक काय सम्पन्न हो सकगे, जो न साधुओ द्वारा होन चाहिए और न (साधारण) श्रावका द्वारा हो सकत है।

तीसरे वग क हान से एक लाभ और भी है। आज अनक व्यक्ति एसे हैं जिनसे न तो साधुता का भली भाति पालन हाता है और न साधुता का ढोग ही छूटता है। वे साधु का वेष धारण किये हुए साधु की मर्यादा क भीतर नहीं रहत। तीसरे वग की स्थापना से ऐसे व्यक्ति इस वर्ग म सम्मिलित हो सकगे और साधुत्व के ढोग क पाप से बच जाएँगे। लाग असाधु को साधु समझन के दोष स बच सकेंग।

तीसरे वग की स्थापना स यद्यपि साधुओ की सख्या घटने की सम्भावना है और यह भी सम्भव है कि भविष्य मे अनक पुरुष साधु हान के बदले इसी वर्ग में प्रविष्ट हो, लेकिन इससे घबडान की आवश्यता नही है। साधुता की महत्ता सख्या की विपुलता में नही है, वरन् चारित्र की उच्चता और त्याग की गम्भीरता म है। उच्च चारित्रवान् और सच्चे त्यागी मुनि अल्प-सख्यक हो तो भी साधु पद की गुरुता का सरक्षण कर सकगे। बहुसख्यक शिथिलाचारी मुनि उस पद के गौरव का बढान क बदल घटाएँगे ही। अतएव मध्यमवग की स्थापना का परिणाम यह भी होगा कि जो पूर्ण त्यागी और पूण विरक्त हांगे वही साधु बनेंगे और शष लोग मध्यम वग मे सम्मिलित हो जाएँग। इस प्रकार साधुओं की सख्या कदाचित घटेगी तो भी उनकी महत्ता बढ़गी। जो लाग साधुता का पालन पूणरूपेण नही कर सकत या जिन लागों क हृदय म साधु बनन का उत्कठा नहो है, व लाग किसी कारण विशेष से, वेष धारण करके साधु का नाम धारण कर भी लें तो उनस साधुता क कलकित होन क अतिरिक्त और क्या लाभ हा सकता है? इसलिए ऐस

लागों का मध्यम वर्ग में रहना ही उपयोगी और श्रेयस्कर है। इन सब दृष्टियों से विचार करने पर समाज में तीसरे वर्ग की विशेष आवश्यकता प्रतीत होती है।'

पूज्यश्री ने ब्रह्मचारी वर्ग की स्थापना की जो योजना कान्फ्रेन्स के सदस्यों के समक्ष उपस्थित की थी, आज भी विचार करने पर वह अत्यन्त उपयोगी है। पूज्यश्री की इस योजना को लोगों ने बहुत पसन्द किया। कान्फ्रेंस के अगले अजमेर अधिवेशन में वह स्वीकृत भी की गई और धर्मवीर श्रीदुलभजी भाई जौहरी ने उसी समय उसमें प्रविष्ट होने की पहली घोषणा भी की मगर खेद है कि यह योजना कार्यान्वित नही हुई। वह चाहे आज कार्यान्वित न हो सके मगर एक दिन आएगा जब उसे अमल में लाना अनिवार्य हो जायगा। अतएव पूज्यश्री की यह योजना अमर है और उसे काम में लाये बिना संघ का श्रेयस संघ नही सकता।

देहली चातुर्मास में तपस्वी मुनिश्री केसरीमलजी म० ने ४१ दिन का उपवास केवल उष्ण जल के आधार पर किया। पूर के दिन गरीबों को अन्न बांटा गया, दूध की प्याऊ लगाई गई और जीव दया के अन्य अनेक काय हुए।

पदवी प्रदान

देहली की जनता पूज्यश्री के व्याख्यानो को मन्त्र मुग्ध होकर सुनती थी। आपकी विद्वत्ता और सयमनिष्ठा से प्रभावित होकर देहली श्रीसंघ ने निम्नलिखित मानपत्र पूज्यश्री की सेवा मे समर्पित किया—

श्रीमान् भगवान् महावीर परम्परागत श्री स्थानकवासी जैनाचार्य पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज की पवित्र सेवा में सविनय समर्पित—

अभिनन्दन पत्र

मिथ्यात्विमत करिकुलकुहेतु कुम्भविदारण केसरिणम् ।
पूज्य जवाहरलाल जैनाचार्य स्मरामि सद्भक्त्या ॥
प्रतिभाजित वाचस्पतिरिति कृत्वा मुग्धमानसा नित्यम् ।
निवसति धन्यमन्या कंठे देवी सरस्वती यस्य ॥

पूज्यवर !

हमे आपके रोचक, मर्मस्पर्शी हृदयग्राही, एव महत्वपूर्ण व्याख्यान सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आप अपने व्याख्यान में जैन साहित्य का जो न्यायसंगत दिग्दर्शन कराते हैं, उसे तथा आपके त्याग, वैराग्य और क्षमा शान्ति आदि गुणो को देखते हुए हम इस निश्चय पर पहुँचे हैं कि आप जैन साहित्य तथा जैन न्याय के प्रतिभाशाली विद्वान् और वक्ता हैं। हम अपने आचार्य के गुण, विद्वत्ता, बुद्धिमत्ता और गम्भीरता पर गर्व है। आपकी अलौकिक प्रतिभा और विद्वत्ता हमे विवश कर रही है कि हम अपने आचार्य को कुछ भेंट करें। लेकिन क्या भेंट करें ! धन सम्पत्ति को तो आपने स्वय त्याग दिया है, इसलिए उसे आपकी भेंट करना आपका सम्मान नही कहला सकता। अत हम आपकी सेवा म अपनी श्रद्धा और भक्ति का परिचय देने के लिए केवल 'जैन साहित्य चिन्तामणि' और जैनन्याय दिवाकर' ये दो उपाधियाँ भेंट करते हैं। आशा है कि आप हमारी इस तुच्छ भेंट को स्वीकार करके हमे कृतार्थ करेंगे। इति शुभम्।

हम हैं आपके सेवक गण
श्री स्थानकवासी जैन श्रीसंघ
देहली

पूज्यश्री की अस्वीकृति

जीवन में एक ऐसी अवस्था होती है जब मनुष्य को पदवियों की प्रबल लालसा रहती है। मगर जब यह अवस्था व्यतीत हो जाती है तब उपाधियां व्याधियां प्रतीत होने लगती हैं।

जिसके जीवन का स्तर वास्तव मे ऊँचा उठ जाता है—जो अपनी आत्मा को ही ऊपर उठा लेता है, वह उपाधिया लेकर क्या करेगा ? ऊपर से जोड़ी हुई उपाधि वास्तविक व्यक्ति की हीनता की सूचक है। जब जीवन हीनता से ऊपर उठ गया तो उसे उपाधियो की कोई आवश्यकता नही रही। जैसे बालक सुन्दर वस्त्र और आभूषण पहन कर खुशी के मारे उछलने लगता है उसी प्रकार हीन व्यक्तित्व वाला पुरुष अपने नाम के आगे पीछे उपाधि लगी देखकर फूला नही समाता। पूज्यश्री इस कोटि के पुरुष नही थे। उनका व्यक्तित्व स्वत इतना उच्चतर था कि वह उपाधियो से परे पहुँच चुका था। उपाधियाँ उनके जीवन की ऊचाई तक पहुँच भी नहीं सकती थीं तो उनकी क्या महत्ता बढ़ातीं ?

इसके अतिरिक्त अवस्थासूचक पदवी के अतिरिक्त गुणो को व्यक्त करने वाली पदविया एक प्रकार का आन्तरिक परिग्रह हैं। जो महात्मा बाह्य परिग्रह को भी नही कर सकता वह आन्तरिक परिग्रह का कैसे स्वीकार कर सकता है ?

पूज्यश्री न देहली श्रीसघ द्वारा दी जान वाली पदवियो को स्वीकार नहीं किया। श्रीसघ ने यद्यपि अपनी प्रशसनीय गुणग्राहकता का परिचय दिया था फिर भी पूज्यश्री ने धन्यवाद के साथ पदवियां अस्वीकार कर दी। इस अस्वीकृति के मूल में शायद एक कारण यह भी था कि यह परम्परा आगे चलकर गलत रूप धारण कर सकती थी और साधुओ को पदवी के प्रलोभन में डाल सकती थी। पूज्यश्री ने पदविया अस्वीकार करके साधु समूह के सामने एक सुन्दर आदर्श खड़ा किया।

मुनियो की परीक्षा

इस चातुर्मास मे मुनिश्री श्रीमलजी महाराज तथा प० मुनिश्री जेठमलजी म० का सस्कृत भाषा का अध्ययन चालू था आप बड़े परिश्रम स अध्ययन करते रहते थे। एक बार कुछ श्रावको ने कहा—मुनिश्री कितना और कैसा अभ्यास कर रहे हैं, इस बात का पता तो हमे भी चलना चाहिए ? तब कलकत्ता विश्वविद्यालय मे सस्कृत भाषा के लेक्चरार प० सकलनारायण शर्मा ने मुनि महाराज की परीक्षा ली। सस्कृत की परीक्षाएँ यो तो अनेक जगह होती हैं परन्तु उन सब मे बनारस की परीक्षाओं का बहुत महत्व है और बनारस की परीक्षाएँ अच्छी योग्यता वाले ही उत्तीण कर पाते हैं।

प्रोफसर शर्मा ने मुनिश्री की सस्कृत व्याकरण की मध्यमा परीक्षा के ग्रथों में परीक्षा ली थी। हर्ष का विषय है कि मुनिश्री ने प्रथम श्रेणी के अक प्राप्त करके अपनी कुशलता का परिचय दिया। परीक्षक अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होंने निम्नलिखित प्रमाणपत्र दिया—

अस्माभि श्रीमुनिवर जवाहरलाल शिष्य श्री श्रीमल्ल श्वेताम्बरीयो मुनिर्वाराणसीस्थ राजकीय सस्कृत व्याकरणमध्यमापरीक्षापाठ्यग्रन्थै परीक्षित । योग्यता चास्य समीचीनाऽऽस्ते। अनेन प्रथमश्रेण्या उत्तीर्णाङ्का लब्धा। वय परीक्षापाटवप्रदशनेन प्रीता प्रमाणपत्रमुत्तीर्णतासूचक मस्मै प्रयच्छाम ।

सकलनारायणशर्मणाम् ।

कलकत्ता विश्वविद्यालय व्याकरण व्याख्यातॄणाम्।

यद्यपि साधुओं को परीक्षा देने की कोई आवश्यकता नहीं होती, तथापि उनके अध्ययन के लिए समाज का जो व्यय होता है वह सार्थक हो रहा है या नहीं और पढ़ने वाले मुनि कही प्रमोद तो नही करते, यह जानन के लिए परीक्षा ही उपयोगी उपाय है। पूज्यश्री जब अपने शिष्यो का अध्ययन कराते थे तो वे इस बात की बडी सावधानी रखते थे।

इसी प्रकार मुनिश्री जेठमलजी म० सा० ने भी सफलता के साथ उत्तीर्णता प्राप्त की। खेद है कि आप अल्प वय म ही स्वर्गवासी हो गये।

देहली का चौमासा बड़ी शान्ति से व्यतीत हुआ। चौमासे में अनेक उपकार के काम भी हुए। बंगाल के बाढ़ पीड़ितों की दयनीय दशा का पूज्यश्री ने हृदयद्रावक शब्दों में वर्णन किया। श्रोताओं पर गहरा प्रभाव पड़ा और देहली श्रीसंघ की ओर से अच्छी सहायता पहुँचाई गई।

चौमासे में श्रीमणिलाल कोठारी पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए। पूज्यश्री उन दिनों भी खादी के सम्बन्ध में प्रभावशाली वक्तव्य दिया करते थे। कोठारीजी पूज्यश्री से अत्यन्त प्रभावित हुए। एक दिन उन्होंने कहा—मैंने अपने जीवन में साधुओं में से सिर्फ गांधीजी और पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज को तथा नरेन्द्रों में मेवाड़ के महाराणा फतहसिंहजी साहब को ही सिर झुकाया है। मेरा उत्तम और किसी के सामने नहीं झुका।

श्रीमणिलाल कोठारी ने खादी के सम्बन्ध में एक अपील भी की और देहली के श्रावकों ने पर्याप्त खादी खरीद कर उनकी अपील का समुचित उत्तर दिया।

पूज्यश्री के सदुपदेश से बंदरों के प्राणों की भी रक्षा हुई।

इस प्रकार दिल्ली चौमासा बड़ी शानदार सफलता के साथ समाप्त हुआ।

जमुना पार गिरफ्तारी की आशंका

जिस समय पूज्यश्री दिल्ली में विराजमान थे यमुना पार के बहुत से सज्जन सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने अपने क्षेत्र में पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर ली और चातुर्मास समाप्त होने पर उस ओर विहार कर दिया।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि उन दिनों राष्ट्रीय आन्दोलन जोरों पर था। प्रायः सभी नेता जेल के सींखचों में बन्द कर दिये गये थे। पूज्यश्री के व्याख्यान धार्मिकता से सराबोर किन्तु राष्ट्रीयता के रंग में रंगे होते थे। श्रोताओं में जैन अजैन का भेद भाव लगभग उठ गया था। सभी प्रकार की जनता आप का व्याख्यान सुनने के लिए टूट पड़ती थी। शुद्ध खद्दर के वस्त्र, राष्ट्रीयता से सनी हुई ओजस्विनी वाणी अपार जनता के हृदयों पर जादू सा प्रभाव आदि देख कर सरकार भयभीत हो गई। धर्माचार्य के रूप में यह नया राष्ट्रीय नेता सरकार की आंखों में खटकने लगा। सरकारी गुप्तचर पूज्यश्री के पीछे पीछे फिरने लगे।

जब श्रावकों को इस परिस्थिति का पता चला तो उनका चिंतित होना स्वाभाविक था। श्रावकों को पूज्यश्री की गिरफ्तारी का भय होने लगा। कुछ श्रावकों ने पूज्यश्री से प्रार्थना की—'आप अपने व्याख्यानों को धर्म तक ही सीमित रखें। राष्ट्रीय बातों के आने से सरकार को संदेह हो रहा है। कहीं ऐसा न हो कि आप गिरफ्तार कर लिये जायँ और सारे समाज को नीचा देखना पड़े।

पूज्यश्री का सिंहनाद

पूज्यश्री ने उत्तर दिया— मैं अपना कर्त्तव्य भली भाँति समझता हूँ। मुझे अपने उत्तर दायित्व का भी पूरा भान है। मैं जानता हूँ कि धर्म क्या है? मैं साधु हूँ। अधर्म के मार्ग पर नहीं जा सकता। किन्तु परतन्त्रता पाप है। परतंत्र व्यक्ति ठीक तरह धर्म की आराधना नहीं कर सकता। मैं अपने व्याख्यान में प्रत्येक बात सोच समझ कर तथा मर्यादा के भीतर रहकर कहता हूँ। इस पर यदि सरकार हमें गिरफ्तार करती है तो हमें डरने की क्या आवश्यकता है? कर्त्तव्य पालन में डर कैसा? साधु को सभी उपसर्ग और परीषह सहने चाहिए, अपने कर्त्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिए। सभी परिस्थितियों में धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम है। यदि कर्त्तव्य का पालन करते हुए जैन समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज के लिए किसी प्रकार के अपमान की बात नहीं है। इसमें तो अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने आ जाता है।

पूज्यश्री के दृढतापूर्ण और वीरतापूर्ण उत्तर को सुनकर प्रार्थना करने वाले श्रावक चुप रह गये। आपके व्याख्यानो की धारा निर्बाध रूप से उसी प्रकार प्रवाहित होती रही।

विहार और प्रचार

देहली से विहार करके पूज्यश्री सदर, शहादरा, बिनोली, बड़ौत, शिरसली, एलम, निसार कांधला छपरौली आदि अनेक स्थानो मे विचरे। पूज्यश्री के व्याख्यानो का वहा के किसानो पर बहुत प्रभाव पडा। बहुतेरे किसान सर्दी के दिनो म, प्रात काल उठकर पाच पाच कोस की दूरी तय आकर पूज्यश्री के व्याख्यानो मे सम्मिलित होते थे। हजारो किसान चातक की भांति आपके व्याख्यानो के लिए उत्कठित रहते थे। जहाँ आपका व्याख्यान होता वहीं अपार भीड इकट्ठी हो जाती थी। पूज्यश्री थोडे ही दिनो का कार्यक्रम बनाकर उस ओर पधारे थे किन्तु कृषक जनता के भक्तिमय आग्रह से काफी दिन लग गये। किसानो म इस प्रकार धर्म और राष्ट्रीयता का प्रचार करने वाले आप प्रथम उपदेशक थे।

आपके उपदेशो से बहुत-से लोगो न पुरानी अदावटें छोडीं बीडी, सिगरेट, शराब मास आदि हानिकर पदार्थों के सेवन का त्याग किया और अनेक प्रकार के अनाचारो का त्याग किया।

खेखडा ग्राम मे दिगम्बर समाज ने हृदय से आपका स्वागत किया।

खट्टा गाव मे तमाखू का बहुत प्रचार था। आपके उपदेश से प्राय सभी ने उसका त्याग कर दिया। पूज्य जी खट्टा स लोहासराय पधार रहे थे तब मार्ग म जमीदारो ने आपको घेर लिया और व्याख्यान देने की विनीत प्रार्थना की। पूज्यश्री को रुकना पडा। व्याख्यान हुआ। श्रोताओ ने हुक्का तथा विदेशी वस्त्र आदि का त्याग किया। इसी प्रकार बडौत म भी हुक्का और चर्बी के वस्त्र का त्याग कराया गया। सिरसली में पचो में आपस मे वमनस्य था। आपके प्रभाव से वमनस्य दूर हो गया। जमींदारो ने हुक्के का तथा अमावस्या के दिन बैल जोतने का त्याग किया। नामनौली म पुराना झगडा मिट गया। जमीदारों ने अनेक प्रकार के त्याग किये। ईश्वर भजन करने का नियम लिया।

इस प्रकार पूज्यश्री क उदात्त चरित्र तथा तेजस्वी व्यक्तित्व और प्रभावशाली वक्तत्व से इस प्रांत में असीम उपकार हुआ।

इस ओर जैन साधुओ का विहार बहुत कम होता है। यहा की जनता ने चौमासा करने की प्रार्थना की—अत्यधिक आग्रह भी किया किन्तु कई आवश्यक कारणो स आपको मारवाड की ओर पधारना था, अतएव आपने यह प्रार्थना स्वीकार नहीं की। पूज्यश्री छपरौली होते हुए यमुना के इस पार पधार गये। वहा से भिवानी, हांसी, हिसार, राजगढ आदि क्षेत्रों को पवित्र करते हुए चूरू पधार गये। चूरु म जोधपुर से श्रीचन्दनमलजी कोचर आये। आपने जोधपुर में चौमासा करने की प्रार्थना की। मगर पूज्यश्री न सिर्फ नागौर की ओर विहार करने के भाव व्यक्त किये।

पूज्यश्री ने साधु सम्मेलन तथा समाचारी आदि आवश्यक विषयो पर विचार करने के लिए मुख्य मुख्य मुनिराजों को नागौर मे एकत्र होने का आदेश दिया था। तदनुसार मुनि श्रीमोडीलालजी महाराज मुनिश्री चौथमलजी महाराज मुनि श्रीरूपचन्द्रजी महाराज प० मुनि श्रीगणेशीलालजी महाराज, (वर्तमान आचार्य) आदि प्रधान मुनि यहा एकत्र हुए। पूज्यश्री ने मार्ग म 'श्रीवर्द्धमान सघ' की योजना तयार की थी। यह योजना मुनियों के समक्ष पढी गई और सबने स्वीकार की। योजना साधु सम्मेलन के प्रकरण में दी जायगी।

नागौर मे जोधपुर श्रीसघ की ओर से चौमासा करने की पुन प्रार्थना की गई। इस बार पूज्यश्री ने प्रार्थना स्वीकार कर ली। ता० १२ ५ ३२ को आपने नागौर स विहार कर गोगोलाव

पधारे। वहां तथा मार्ग में सर्वत्र धर्मोपदेश देते हुये और यथाशक्य त्याग प्रत्याख्यान कराते हुए आषाढ़ शुक्ला १ को आप जोधपुर पधार गये।

एकतालीसवां चातुर्मास (सं० १९८९)

विक्रम संवत् १९८९ का चौमासा पूज्यश्री ने ठाणा १३ से जोधपुर में व्यतीत किया।

आपके धर्मोपदेश से जोधपुर में बहुत उपकार हुआ। सैकड़ों व्यक्तियों ने मांस, मदिरा, बीड़ी, सिगरेट, चर्बी लगे वस्त्र आदि जीवन को पतित करने वाले पदार्थों का परित्याग कर उद्धार मार्ग की ओर कदम रखा। कई व्यक्तियों ने आजन्म ब्रह्मचर्य जैसा दुष्कर व्रत अंगीकार किया। राज्याधिकारियों ने तथा अन्य जनेतर जनता ने भी खूब लाभ उठाया। महाराज श्रीफतहसिंहजी सा० होम मिनिस्टर, रा० ब० रावराजा श्री नरपतसिंहजी मिनिस्टर, महाराज श्री विजयसिंहजी आदि विशिष्ट सज्जनों ने पूज्यश्री का उपदेश श्रवण किया। धर्म चर्चा की ओर खूब प्रभावित हुए। जोधपुर के युवकरत्न श्रीइन्द्रनाथजी मोदी और श्री जसवंतराजजी मेहता जैसे सज्जनों के हृदय में पूज्यश्री ने धर्म के प्रति विशिष्ट अनुराग का भाव उत्पन्न कर दिया।

जोधपुर में निम्नलिखित संतों ने तपस्या की—

(१) श्रीसूरजमलजी महाराज ३१ दिन
(२) श्रीभीमराजजी महाराज ६ का थोक
(३) श्रीजेठमलजी महाराज ६ दिन
(४) श्रीधनराजजी महाराज ७ का थोक
(५) श्रीसुगालचन्दजी महाराज ६ दिन
(६) श्रीजवरीमलजी महाराज ६ का थोक

इनके अतिरिक्त कतिपय महासतियों ने भी अच्छी तपस्या की। इस चातुर्मास में जोधपुर श्रीसंघ ने लोगों की टीका टिप्पणी की परवाह न करके आगत दर्शनार्थी भाइयों का सादे भोजन से स्वागत किया। श्रीसंघ का यह साहस सराहनीय था। जोधपुर के श्रीसंघ ने अन्य श्रीसंघों के सामने अच्छा आदर्श उपस्थित किया और छोटे श्रीसंघों को इससे राहत मिली।

साधु-सम्मेलन का प्रतिनिधि मण्डल

कार्तिक शुक्ला ११ को साधु-सम्मेलन का शिष्टमण्डल पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुआ। उसमें स्थानकवासी जैन समाज के निम्नलिखित प्रधान पुरुष सम्मिलित थे—

(१) श्रीमान् राजाबहादुर एस० ज्वालाप्रसादजी हैदराबाद
(२) " वेलजी लखमसी नप्पू बी० ए० एल० एल० बी० बम्बई
(३) " राय सा० ला० टेकचन्दजी जंडियाला
(४) " लाला रतनचन्दजी, अमृतसर
(५) " ला० त्रिभुवननाथजी, कपूरथला
(६) " सेठ दुलभजी त्रिभुवन जौहरी जयपुर
(७) " श्रीधीरजलाल केशवलाल तुरखिया
(८) " सेठ वर्द्धमानजी पीतलिया, रतलाम

उक्त सज्जनों के अतिरिक्त अजमेर में साधु सम्मेलन को आमंत्रित करने वाले चार सज्जन और उपस्थित हो गये थे। शिष्टमण्डल ने पूज्यश्री से साधु सम्मेलन के विषय में बातचीत की। उस समय मुख्य प्रश्न थे—'साधु सम्मेलन किया जाय या नहीं? किया जाय तो कब और कहां? साधु सम्मेलन में किन किन बातों पर विचार किया जाय? सभापति किसे बनाया जाय? संगठन किस प्रकार किया जाय? समस्त सम्प्रदायों का आचार्य एक हो या अनेक?

इन प्रश्नो पर पूज्यश्री ने बडी गभीरता के साथ अपने बहुमूल्य विचार व्यक्त किये। शिष्टमडल को इससे उत्साह और प्रेरणा प्राप्त हुई। पूज्यश्री के विचार सक्षेप मे इस प्रकार थे—

(१) इस सम्मेलन का नाम 'जैन साधु सम्मेलन रखा जाय। यहा पर साधु शब्द मे उन्ही का समावेश किया जाय जो मुख पर मुखवस्त्रिका बांधते हो रजोहरण एव प्रमाणोपेत श्वेत वस्त्र धारण करते हैं तथा धातुरहित काष्ठादि के पात्र रखते हो।

साधु का उपरोक्त लक्षण बताने का तात्पर्य यह है कि शास्त्र मे साधु के बाह्य और आभ्य न्तर दो लक्षण बताए गए हैं। उनमे से महाव्रतादि साधु धर्म का पालन अन्तरग लक्षण है। यह लक्षण अलौकिक है, क्योकि बाह्य रूप में दिखाई नहीं देता। अतएव ससार मे साधु की पहिचान के लिए बाह्य लक्षण होना अत्यावश्यक है। यह बात उत्तराध्ययन सूत्र के २३वें अध्ययन मे आई है। वह पाठ यह है 'लोगे लिंगप्पओयण'। टीका लोके लिंगम्म प्रयोजनम्। साधुवेशस्य प्रवतनम् यत्तीथकरुक्त तल्लोकस्य प्रत्ययाथम लोकस्य गृहस्थस्य प्रत्ययाथम्। तीर्थंकरो ने लिंगधारण करने का प्रयोजन बताते हुए कहा है कि जिससे गृहस्थों को पता लग जाय कि यह साधु है। इसलिए लिंगधारण करने की आवश्यकता है। इसी सिद्धान्त को लेकर 'जैन साधु सम्मेलन मे आने वाले साधुओ के लिए हमने खास तौर पर बाह्यलिंग (वेश) पर जोर दिया है। उपरोक्त लक्षण वाला साधु अर्थात् मुख पर मुखवस्त्रिका बाधना, आदि लिंग रखने वाला साधु बाईस सम्प्रदाय का हो तेरापथ सम्प्रदाय का हो, शुद्ध श्रद्धा वाला हो या विपरीत श्रद्धावाला हो, उग्र विहारी हो या शिथिलविहारी हो गच्छविहारी हो या एकलविहारी हो, मोटी पक्ष का हो या छोटी पक्ष का हो, इस सम्मेलन मे सम्मिलित न हो तो यह बात दूसरी है। सम्मेलन का द्वार उक्त चिह्न वाले प्रत्येक के लिए खुला होना चाहिए।

इस सम्मेलन के सम्मिलित होना किसी तरह के सम्भोग या आदर सम्मान की प्राप्ति के लिए नही हैं किन्तु भूत और भविष्य के सम्यक ज्ञान, दशन चारित्र आदि गुणों की शुद्धि और वद्धि के लिए है। इसमे सभी महानुभावो को निष्पक्ष होकर परस्पर प्रेमपूवक मिलकर एक समाचारी के लिए अपनी अपनी स्वतन्त्र सम्मति भेजनी चाहिए। साधु सम्मलन म उसी समाचारी पर शान्तिपूवक शास्त्रीय ऊहापोह के साथ विचार होना चाहिए। इसी मे साधु सम्मेलन की सफलता है और इसी क लिए सभी को सम्मिलित होना चाहिए। शास्त्रीय प्रमाणपूवक सच्चे हृदय स अपने विचार प्रकट करन क लिए सम्मेलन म प्रत्यक मुनि को भाग लेना चाहिए, किसी को सकोच न करना चाहिए। साधु-सम्मेलन स किसी की मान्यता को धक्का पहुँचने का भय नहीं है। किसी भी परम्परा को इसस बाधा नहीं पहुँचती। धम चर्चा द्वारा धार्मिक उन्नति करने के लिए एक स्थान पर सम्मिलित होना सभी सम्प्रदायो को सम्मत है।

किसी की प्रतिष्ठा को धक्का न पहुँचे इसलिए सभी महानुभावो की बठक भूमि पर समान रूप से गोलाकार रहनी चाहिए। इसलिए मेरा यह अभिप्राय है कि सभी महानुभाव नि सकोच वृत्ति स इस जन साधु सम्मेलन में पधारें।

सम्मेलन म प्रेमालाप द्वारा जो सच्चा और शास्त्रोक्त सुधार होगा, उस सुधार को जिन महात्माओ का जी चाहेगा व अपनाएंगे और उस सुधार को अपनाने वाले महात्मा ही आपस में सभोग आदि एक करने की योजना बनाएँगे। उस सुधार से जो असहमत होगे अथात उस सुधार में सम्मिलित न होंगे व उस सुधार सघ से अलग समझ जाएँगे।

इसके साथ ही आपने एक अत्यन्त दूरदर्शितापूर्ण सुझाव शिष्टमडल के समक्ष उपस्थित किया था। वह यह था कि सामान्य साधु सम्मेलन करने से पहले विभिन्न सम्प्रदायो क मुख्य मुख्य मुनिराजो का सम्मेलन करना बहुत उपयोगी होगा। उसमे समस्त योजनाएँ निश्चित कर ली जाएँ। उसके पश्चात् सामान्य (General) साधु सम्मेलन किया जाय तो लाभ होगा।'

पूज्यश्री का सुझाव अत्यन्त व्यवहार्य, सुविधाजनक, काम को सरलता से सम्पन्न करने वाला और उपयोगी था। साधारणतया विशाल सम्मेलन से पहले चुने हुए प्रधान पुरुष कार्य की दिशा निश्चित कर लेते हैं और ऐसा करने से ही कार्य सुकर बनता है। साधु-सम्मेलन के सम्बन्ध में यह सुझाव अमल में नहीं आ सका और इसी कारण लम्बे समय तक बैठकें करनी पड़ीं फिर भी जिस सुन्दर परिणाम की आशा की गई थी वह प्राप्त न हो सका। शिष्टमण्डल की प्रार्थना पर पूज्यश्री ने अजमेर पधारने की स्वीकृति दे दी।

दीक्षा-समारोह

जोधपुर चातुर्मास के समय पूज्यश्री की सेवा में तलपुडगाव (दक्षिण) निवासी श्रीमान् चुन्नीलालजी गूगलिया और उनके भतीजे श्रीगोकुलचदजी उपस्थित हुए। इसी धर्मपरायण परिवार में से पहले श्रीमोमराजजी और श्रीमल्लजी दीक्षित हो चुके थे। यह दोनों सज्जन मुनि श्रीमोमराज जी महाराज के ससार पक्ष के पुत्र और पौत्र थे। अपने पारिवारिक सुसंस्कारों के कारण आपको ससार के प्रति विरक्ति हुई और दीक्षा लेने के उद्देश्य से पूज्यश्री के चरण कमलों में उपस्थित हुए। पूज्यश्री इस परिवार से भली भाँति परिचित थे। आपने योग्य पात्र समझकर दोनों विरक्त सज्जनों को दीक्षा की अनुमति दे दी।

दीक्षा के समय वैरागियों के रिश्तेदार वहा उपस्थित थे। रिश्तेदारों की आँखों में स्नेह के आँसू थे और हृदय में प्रमोद एव गौरव का भाव था। पूज्यश्री ने जब उनसे दीक्षा की अनुमति मांगी तब उनकी स्थिति अनिर्वचनीय सी थी। आखो मे आसू छलछला आये मगर दृढ़तापूर्वक अनुमति दे दी। पूज्यश्री ने स्वय वैरागियो को दीक्षा देकर उनका उद्धार किया।

दीक्षा देने के बाद पूज्यश्री ने सक्षिप्त किन्तु सारगर्भित प्रवचन किया। तत्पश्चात् भगवान् महावीर और पूज्यश्री के यशोगान हुए। दीक्षा का समस्त व्यय भार जलगांव निवासी सेठ लछमनदासजी श्री श्रीपाल ने उठाया।

चातुर्मास समाप्त होने पर मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद को पूज्यश्री ने विहार किया। जोधपुर की जनता ने आखो में आसू भर कर गद्गद हृदय होकर विदाई दी। राजपूताना के ओसवाल समाज में जोधपुर शिक्षा के क्षेत्र में अग्रणी है। यहां के समाज में उत्साह है कार्य करने की क्षमता है और लगन भी है। पूज्यश्री के आकर्षक व्यक्तित्व, उच्च चारित्र और प्रभावक प्रवचन से यहां की जनता बड़ी प्रभावित हुई थी। यही कारण था कि आज विदाई की वेला उस वियोग की व्यथा साल रही थी।

पूज्यश्री विहार करके सरदारपुरा पधारे। पुष्टिकर हाई स्कूल और सरदार हाई स्कूल में आपका उपदेश हुआ[1]। यहां से विहार कर आप महामन्दिर पधारे। यहां अनेक प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान हुए। यहां से आप नागोरी बेरा पधारे। श्रीयुत हरदासजी पुरोहित उर्फ टल्लूजी—जो पुष्टिकर ब्राह्मण-समाज के नेता हैं और माली जाति के प्रमुख नेता तथा फतहसागर के सुपरिटेंडेंट श्रीनेनूरामजी पूज्यश्री से बहुत प्रभावित हुए। पूज्यश्री जोधपुर से विहार करके मंडोर के समीप माली भाइयों की बस्ती में पहुँचे तब श्रीनेनूरामजी ने सैकड़ा मालियों को आमन्त्रण देकर व्याख्यान का लाभ दिलाया तथा आस पास से आने वाली तीन हजार जनता के ठहरने की जगह में समुचित व्यवस्था की। माली भाइयों की पूज्यश्री पर इतनी अधिक श्रद्धा बढ़ी कि उन्होंने तीन दिन तक पूज्यश्री को विहार नहीं करने दिया। पूज्यश्री भी भक्ति के आग्रह को टाल न सके। यह स्थान जोधपुर से करीब ६ मील दूर है। रेलवे कम्पनी की ओर से यहां तक के लिए स्पेशल ट्रेनें चलाना

---

१ यह व्याख्यान 'जवाहरकिरणावली' के चौथे भाग में प्रकाशित है।

की व्यवस्था की गई। हजारो व्यक्ति पूज्यश्री के व्याख्यान सुनने के लिए जमा हो गए। अनेक राज्याधिकारी, ठाकुर साहबान, जागीरदार और शिक्षित मडल उपस्थित थे। उस समय का दृश्य बडा ही भव्य और सुहावना था। पूज्यश्री के स्थान के पास ऐसा जान पडता था मानो यहा स्टेशन बन गया है। करीब चार हजार व्यक्ति उपस्थित हुए। श्रीसघ की ओर से आगत सज्जनों के भोजन की व्यवस्था की गई। श्रोताओ ने मास मदिरा आदि का त्याग किया।

पूज्यश्री यहा स विहार करके मथानिया लोहावट तथा खिचन होते हुए फलौदी पधारे। यहा स पुष्करण भाइयो पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। मथानिया म आपके उपदेश से जागीरदारो ने करणीजी के मन्दिर म होन वाली हिंसा बन्द कर दी। अछूतो न मास मदिरा का त्याग किया।

फलौदी से विहार कर पूज्यश्री लोहावट आदि होते हुए फिर मथानिया पधारे। यहा दो तीन दिन विराजकर रीया पीपाड आदि म विविध उपकार करते हुए ता० २६ १ ३३ को जयतारण पधारे।

जयतारण मे दीक्षा-समारोह

जयतारण में पूज्यश्री ने श्रीमान् मोतीलालजी कोटेचा को दीक्षा प्रदान की। आप मलकापुर (खानदेश) के रईस थे। लाखो की सम्पत्ति के स्वामी थे। अखिल भारतीय श्वे० स्थानक वासी कान्फ्रेंस के छठे मलकापुर अधिवेशन म आप ही स्वागताध्यक्ष निर्वाचित हुए थे। उस समय भी आप कान्फ्रेंस के एक सेक्रेटरी थे। पाच भाई, तीन सन्तान, पत्नी आदि करीब सौ आदमियो का परिवार छोडकर उत्कट वैराग्य के साथ आपने दीक्षा लेने का निश्चय किया। उस समय आपकी भावना का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है—

दारा परिभवकारा, बन्धुजनो बन्धन विष विषया।
कोऽय जनस्य मोहो, ये रिपवस्तेषु सुहृदाशा॥

अर्थात्—पत्नी की बदौलत पर भव मे परिभव प्राप्त होता है बन्धु बाधव बन्धन रूप हैं और इद्रियो के विषय वास्तव मे विष हैं। फिर भी न जाने मनुष्य का कैसा मोह है कि वह शत्रुओं मे मित्र की बुद्धि रखता है।

इस प्रकार ससार से विरक्त होकर आप पूज्यश्री के चरण शरण मे आये। कुछ समय तक पूज्यश्री के साथ रहकर आपने मुनि जीवन की चर्या सीखी।

माघ शुक्ला दशमी ता० ४ फरवरी सन् १९३३ को जयतारण म बड समारोह के साथ आपका दीक्षा महोत्सव मनाया गया। दीक्षा के अवसर पर आपके लगभग सभी कुटुम्बीजन उपस्थित हुए। पूज्यश्री न स्वय दीक्षा देकर उनका जीवन सफल किया।

दूसरे दिन जयतारण मे विहार करके फाल्गुन कृष्ण द्वितीया को पूज्यश्री का ब्यावर म पदार्पण हुआ। अजमेर मे होने वाले साधु सम्मेलन म सम्मिलित होने से पहले आप अपने सम्प्रदाय के मुनियो का सम्मेलन कर लना चाहते थे। इस सम्मेलन के लिए ब्यावर स्थान उपयुक्त समझा गया। सभी मुनियो को ब्यावर पहुँचने के लिए समाचार भेज दिये गये थे। पूज्यश्री के ब्यावर पहुँचने तक ४२ साधु सम्मिलित हो चुके थे। अतएव जब पूज्यश्री ने ब्यावर नगर म ४२ सतो के साथ पदार्पण किया तो भगवान् महावीर के समय का दृश्य लोगो को याद आने लगा। अहा! कितना भव्य दृश्य रहा होगा वह जब पूज्यश्री जैसे महान धर्म नेता के नेतृत्व मे इतने मुनियो ने एक साथ प्रवेश किया होगा? उस समय ऐसा जान पडता था माना धर्म इन मुनियो का वेष धारण करके ब्यावर मे सजीव हो रहा है!

ब्यावर की जनता का क्या पूछना! उसके हृदय की उमगें हृदय म समाती नहीं थीं। उत्साह की उद्दाम ऊर्मियां मनुष्यो के मानस सरोवर में उमड रही थीं। हर्ष का पार नहीं था।

ब्यावर की जनता ने बड़ी उत्कंठा और उत्सुकता के साथ पूज्यश्री का तथा समस्त सन्तों का स्वागत किया।

कुछ दिनों में ब्यावर में ४५ सन्त एकत्र हो गये। मुनिश्री मोड़ीलालजी महाराज, मुनिश्री चांदमलजी महाराज, मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज, मुनिश्री (बड़े) गब्बूलालजी महाराज, प० र० मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज आदि साधु प्रमुख थे।

ब्यावर में पूज्यश्री ने सम्प्रदाय के प्रमुख मुनियों के साथ सम्मेलन के सम्बन्ध में, सम्प्रदाय के विषय में तथा अन्य आवश्यक विषयों पर विचार किया।

पूज्यश्री ने सम्मेलन में प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित होने के लिए अपनी ओर से पांच नाम निर्वाचित किये —(१) मुनिश्री मोड़ीलालजी महाराज, (२) मुनिश्री चांदमलजी महाराज, (३) मुनिश्री हरखचन्दजी महाराज (४) प० मुनिश्री घासीलालजी महाराज[1] और (५) प० मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज।

किन्तु मुनिराजों ने पूज्यश्री के बिना सम्मेलन में सम्मिलित होना उचित नहीं समझा। पूज्यश्री से प्रार्थना की— आप हमारे नायक हैं। आपका पथप्रदर्शन ही हमारे लिए मंगलमय होगा। आपके सम्मिलित होने से सम्प्रदाय की भी शोभा बढ़ेगी और साधु सम्मेलन की भी। अतएव कृपा कर आप अवश्य पधारें।' इस प्रकार मुनिराजों के आग्रह को देखकर पूज्यश्री ने फरमाया—'आप सबका मुझ पर पूर्ण विश्वास है और आप मुझे सम्मेलन में सम्मिलित होने का आग्रह करते हैं तो फिर उचित यह होगा कि मैं अकेला ही सम्मेलन में जाऊँ।'

पूज्यश्री का यह कथन समस्त मुनिराजों ने सहर्ष अंगीकार किया।

जैसे इंग्लैण्ड में होने वाली राउण्ड टेबिल कान्फ्रेंस के लिए राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) की ओर से एकमात्र प्रतिनिधि महात्मा गांधी चुने गये थे उसी प्रकार अजमेर के अ० भा० स्था० जैन साधु सम्मेलन के लिए पूज्यश्री एकमात्र प्रतिनिधि निर्वाचित किये गये। सम्प्रदाय के सभी साधुओं ने नीचे लिखे अनुसार प्रतिनिधि पत्र लिखकर पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित किया था—

श्रीमान् निज परशास्त्र सिद्धान्ततत्त्वरत्नाकर विद्वन्मुकुट चिन्तामणि, भव्यजनमानसराजहंस, भक्तगणकमलविकासन प्रभाकर वाणीसुधासुधाकर गाम्भीर्य धैर्य माधुर्य-औदार्य शान्ति दया दाक्षिण्यादि सद्गुणगण परिपूर्ण रमणीय त्रिशालभवान एवयन्तुवशिरोमणि, ज्ञानादिरत्नत्रय संरक्षक, शिरताज जैनाचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री श्री श्री जवाहरलालजी महाराज के चरणकमलों में सर्वसभागी मुनिमण्डल की यह सविनय प्रार्थना है कि आप निज शासन के उत्थान के लिए जैन साधु-सम्मेलन, अजमेर में पधार कर जो कार्य करेंगे हमें सर्वथा मान्य होगा। सम्वत १९८९ माघ शुक्ला ६, शनिवार।

(सभी उपस्थित साधुओं के हस्ताक्षर)

श्री० रघुजी महाराज की सम्प्रदाय की प्रवर्तिनी श्री आनन्द कुंवरजी म०, श्री० नन्दूजी

[1] मुनिश्री घासीलालजी महाराज उस समय ब्यावर में उपस्थित नहीं थे अतएव उन्हें बुलाने के लिए पहले संघ की ओर से पत्र दिया गया। किन्तु न वे आप और न पत्र का समुचित उत्तर ही दिया। तब ब्यावर के मा० उमरसिंहजी उनके पास गये और उन्होंने कहा— सम्मेलन के समय सभी सम्प्रदायों के सन्त अजमेर पधार रहे हैं तो आपको भी अवश्य उपस्थित होना चाहिए, ऐसा पूज्यश्री का फरमाना है। अतः आप ब्यावर की ओर पधारें। मगर फिर भी मुनिश्री घासीलालजी म० नहीं पधारे। अन्त में पूज्यश्री ने मुनिश्री गब्बूलालजी म० तथा श्री मोहनलालजी म० को उन्हें लाने के लिए भेजा। मगर खेद है कि फिर भी उन्होंने पूज्यश्री की आज्ञा का पालन न किया और वे इधर न आये।

ाराज की सम्प्रदाय की प्रवर्तिनी श्री केशर कुवरजी म० के तथा मोजूदा सब सतियों के भी
प्रतिनिधिपत्र पर हस्ताक्षर हुए। इस पत्र द्वारा पूज्यश्री १६३ साधु साध्वियों के प्रतिनिधि
यत हुए थे।

ब्यावर म मुनि मण्डल मे आवश्यक विचार विनिमय करके पूज्यश्री ने ता० २८ फरवरी
ो विहार कर दिया। साधु सम्मेलन का समय सन्निकट होने से तथा सम्मेलन मे सम्मिलित होने
ाले अन्य मुनिराजों से विचार विमर्श करने के हेतु आप ब्यावर के आस पास विचरने लगे।
ापका होली चातुर्मास बावरा ग्राम मे हुआ।

युवाचार्य श्रीकाशीरामजी महाराज से भेंट

बावरे से विहार करके पूज्यश्री जेठाणा पधारे। उधर मे पजाब केसरी युवाचार्य श्री
ाशीरामजी महाराज भी सम्मेलन मे सम्मिलित होने के लिए पधार रहे थे। जेठाणा मे दोनों
हानुभावो की भेंट हुई। दोनो बड़ प्रेम स मिले और सम्मेलन तथा समाज सुधार सम्बधी बातचीत
ी। दोनों ने साधु सम्मेलन मे विचारणीय विषयो की एक सूची तैयार की। वह नीचे लिखे
ुसार थी—

(१) पक्खी सवत्सरी आदि पर्वाराधन सारे सम्प्रदायो का एक ही समय म होना
ाहिए। पर्वो का निर्णय केवल पचागों के आधार पर न करना चाहिए। अग्रेजी महीनो में जिस
कार तारीखें निश्चित हैं और सभी कार्य नियमित रूप स निश्चित तारीख पर होते हैं उसी प्रकार
र्वाराधन के लिए तारीखें निश्चित करके साधारण नियम बना दिए जायें। जिससे सभी सम्प्रदाय
था सभी प्रान्तो में एक ही तिथि पर पर्वाराधन हो और पचाग की परतन्त्रता और उससे होने
ाले मतभेद न हो।

(२) मुनि विहार का कल्प, चातुर्मास और शेष काल के नियम भी बना लिए जायें
जिससे कोई भी मुनि कल्प मर्यादा को तोड़कर न रह सके।

(३) आवश्यक विधि (प्रतिक्रमणादि) का समय, पचम आवश्यक मे 'लोगस्स का ध्यान
था देवसी, रायसी, पक्खी, चौमासी, और सम्वत्सरी मे भी 'लोगस्स' का ध्यान सभी सम्प्रदायो
म एक रूप से होना चाहिए।

(४) शय्यातर किसे किस समय से समझना, इसका निर्णय।

(५) प्रतिदिन एक घर से बिना कारण आहार पानी ले सकते हैं या नही? यदि ले
सकते हैं तो एक दिन मे कितनी बार।

(६) केले आदि पके हुए फल कल्प्य हैं या अकल्प्य?

(७) दर्शनार्थ आये हुए का आहार पानी कितने दिन बाद ले सकते हैं?

(८) विहार मे साथ रहने वाले गृहस्थो से आहार पानी ले सकते हैं या नही?

(९) श्रावक प्रतिक्रमण मे श्रावकसूत्र गिनना या श्रमण सूत्र भी?

(१०) दीक्षा लेने वालों की उम्र और जाति का निर्णय।

(११) अपनी अपनी सम्प्रदाय म आचाराग और निशीथ बिना पढ़े साधु को अग्रेसर
बनाकर विहार नहीं कराना चाहिए।

(१२) सारे शिष्य और शास्त्र सम्प्रदाय के आचार्य की नेश्राय में हों। आचार्य होने
पर प्रवर्तक अथवा मुख्य साधु की नेश्राय मे हो। साध्विनी मे प्रवर्तिनी अथवा मुख्य साध्वी की
नेश्राय मे ही शिष्याएं तथा शास्त्र हो। दूसरे की नेश्राय म न हों।

(१३) बिना कारण ३ से कम साधु और ४ से कम साध्वियां न विचरें।

(१४) गोचरी के काल के सिवाय गृहस्थ के घर मे दो से कम साधु या साध्वियां प्रवेश
न करें।

(१५) दीक्षा के समय वैरागी या वैरागिन से नीचे लिखा प्रतिज्ञापत्र लिखा लि जाय—

मैं संयम पालन करता हुआ आचार्य और उसके अभाव में प्रवर्तक, मुखिया सन्त य प्रवर्तिनी की आज्ञा में रहूँगा। आज्ञा बिना कोई भी काम नहीं करूँगा। मेरे पास की पुस्तक पन्न शास्त्र आदि सभी वस्तुएँ आचार्य की नेश्राय की हैं। कदाचित मैं मोहवश सम्प्रदाय छोड़ कर जा तो शास्त्रादि उपाधि आचार्य की नेश्राय में होने से मैं नहीं ले जाऊँगा।'

(१६) दीक्षा लेने वाले का वस्त्र पात्र आदि उपकरण जितने चाहिए उससे ज्याद दीक्षा पर न रखने चाहिए।

(१७) ऊन और सूत के सिवाय किसी भी प्रकार के वस्त्र न रखने चाहिए।

(१८) प्रतिवर्ष चातुर्मास के लिए साधुओं का परिवर्तन किया जावे। उसमें आचार (यदि आचार्य न हों तो प्रवर्तक या मुखिया साधु) जैसा उचित समझें वैसा परिवर्तन करें। साथ चातुर्मास करने वाले साधु कारण विशेष के लिए परिवर्तन करने वाले से प्रार्थना कर सकते हैं लेकिन आचार्य और उसके अभाव में प्रवर्तक या मुखिया साधु की आज्ञा अन्तिम तथा मान्य होगी।

(१९) दीक्षा देने का अधिकार आचार्य (उसके अभाव में प्रवर्तक या मुखिया साधु) को रहे। यदि कारणवश या अवसर देखकर वे स्वयं दीक्षा न दे सकें तो उनकी आज्ञा से दूसरे साधु भी दीक्षा दे सकते हैं।

(२०) मुनि वेश में रहकर जिसने चौथा व्रत नष्ट किया है उसे सम्प्रदाय से बाहर किया जाय। उसे दुबारा दीक्षा न दी जाय।

(२१) दूसरे गच्छ से आए हुए साधु साध्वी को पुनः समझा कर उसी गच्छ में लौटा दें। यदि उस गच्छ के मालिक की आज्ञा आ जाय और योग्यता आदि देखकर उचित समझा जावे तो अपनी मर्यादा के अनुसार गच्छ में मिला सकते हैं।

(२२) दीक्षा छोड़कर जो साधु साध्वी चला जाय और फिर दीक्षा लेना चाहे तो सम्प्रदाय के मुख्य श्रावकों की राय बिना दीक्षा न दी जाय। तीसरी बार तो दी ही नहीं जानी चाहिए।

(२३) साधु साध्वी अपनी नेश्राय में उपकरण गृहस्थ की नेश्राय में न रखें, न उनसे किसी भी समय उपकरण आदि उठवावें। गृहस्थ की लाई हुई कोई वस्तु अपने काम में न लावें।

(२४) पुस्तक पन्ने शास्त्र आदि उपाधि के लिए गृहस्थ से रुपए इकट्ठे नहीं करवावें।

(२५) किसी तरह का कागज या चिट्ठी लिखकर गृहस्थ को न दें।

(२६) आचार्य के सिवा चार साधु से ज्यादा न विचरें, न चातुर्मास आदि करें। ठाणा पति साधु की बात अलग है।

(२७) साधु साध्वी को स्थिरवास रहने की जब जरूरत पड़े तो आचार्य की आज्ञानुसार रहें। आचार्य भी जहाँ तक सम्भव हो अलग अलग क्षेत्र में रखें। यथावश्य के लिए रखे गए साधुओं का भी यथावसर परिवर्तन किया जाय।

(२८) प्रत्येक सम्प्रदाय के सब साधु साध्वी एक या दो वर्ष में एक समय अपने आचार्य से मिलकर सम्प्रदाय की भावी उन्नति का और साधु आचार का विचार करें।

(२९) गुप्त समाचार सारे साधुओं को सभी प्रान्तों में विचरना चाहिए।

(३०) कोई साधु सम्प्रदाय में सदा परिवर्तन आचार्य की स्वीकृति के बिना न करे।

(३१) श्रमण सूत्र सीखे बिना वैरागी को दीक्षा न दी जाय।

(३२) साधु साध्वी गृहस्थ को अपने दर्शन का नियम न करावें।

(३३) किसी गृहस्थ को दीक्षा लेने म पहले मुनि वेश पहिनने की सम्मति नही देना, सहायता भी नही करना, स्वय दीक्षा ले ला यह सम्मति भी वारिस की आज्ञा बिना न देना यह अपनी इच्छा से स्वय दीक्षा ले ले तो उस अपने साथ नहीं रखना, अपने उतरने के मकान मे नही ठहरना, आहार पानी न स्वय देना न दिलाना। यदि कोई साधु साध्वी ऐसा करे तो उसे शिष्य हरण का प्रायश्चित लेना होगा।

(३४) साध्वियो को साधु के स्थान पर और साधु को साध्वियो के स्थान पर बिना कारण नही जाना व बठना। यदि आवश्यकता हो तो पुरुष स्त्री की साक्षी बिना न बठे।

(३५) साधु साध्वी अपना फोटो नही खिचवावें।

(३६) सारी सम्प्रदाय की श्रद्धा प्ररूपणा एक ही रहनी चाहिए।

(३७) उत्सग माग म साधु साध्वी का स्वदेशी वस्त्र ही रखने चाहिए, दूसरे नही।

(३८) प्रत्येक साधु-साध्वी को चारों काल स्वाध्याय करना चाहिए। चारो समय का स्वाध्याय कम से कम १०० श्लोक का होना चाहिए। यदि किसी को शास्त्र न आता हो तो नवकार मन्त्र का जाप करे।

(३९) बिना कारण साबुन से कपड नही धोने चाहिए।

(४०) आचाय अथवा सम्प्रदाय क मुख्य सन्त की आज्ञा के बिना बाहर विचरने वाले साधु साध्वी का व्याख्यान सघ के श्रावक श्राविका और साधु साध्वी नही सुनें। उसका किसी तरह पक्ष भी न करें और साधु को की जाने वाली विधिवन्दना आदर सत्कार आदि भी नही करें। अशान्ति दने का निषध नही है।

(४१) व्याख्यान के सिवाय साधुओ के मकान म स्त्रियो को और साध्वियो के मकान मे पुरुषों को नहा आना चाहिए। किसी कारण से आना पड़ तो स्त्री पुरुष की साक्षी बिना न आवें।

(४२) सारे साधु-सम्प्रदाय में आचाय की और साध्वी सम्प्रदाय म प्रवर्तिनी की स्थापना की जावे।

अजमेर साधु-सम्मेलन

जिस महान् आयोजन के लिए चिरकाल से तैयारियां हो रही थी। उसका समय निकट आ पहुँचा। ता० ५ अप्रल १९३३ मिति चैत्र कृष्ण दशमी का दिन साधु-सम्मेलन प्रारम्भ करने के लिए शुभ माना गया था। चारो तरफ से मुनिराज अजमेर म एकत्रित होने लगे। पजाब गुजरात काठियावाड, मारवाड, मवाड, मालवा आदि विभिन्न प्रातो में विचरने वाले साधुओ का एक जगह इकट्ठ होना जैन समाज के लिए बिलकुल नई बात थी। भगवान महावीर स्वामी के बाद अढाई हजार वर्षों म पहले तीन बार साधु इकट्ठे हुए थे। पहले पटना में, दूसरी बार लगभग ३०० वष पश्चात मथुरा मे और तीसरी बार वीरसवत ९८० मे दवर्द्धिगणि क्षमा श्रमण के प्रयत्न से वल्लभीपुर म। अन्तिम सम्मेलन का हुए १५०० वष बीत चुके थ। पूर्वोक्त सभी सम्मेलन शास्त्रा के उद्धार के लिय हुए थ।

वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए समाज के अग्रणी इस बात का अनुभव कर रहे थ कि साधुओं का ज्ञान दशन और चारित्र की उन्नति के लिए तथा साधु-समाज का पुन सगठन करने के लिए एक साधु सम्मलन करने की अत्यन्त आवश्यकता है। दो वष से इस काम के लिए डेपुटेशन घूम रहा था। धमवीर सेठ दुलभजी त्रिभुवन झवेरी इस आयोजना के विधाता थ और महान परिश्रम कर रहे थे।

अन्त मे वह प्रयत्न सफल हुआ। आठ-आठ सौ मील का लम्बा विहार करके सरदी गरमी तथा दूसरे परीषहो की परवाह न करके मुनिराज अजमेर के प्राङ्गण म पधार गए। ५

अप्रैल को प्रातःकाल पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने अपने सन्तों के साथ अजमेर में पदार्पण किया। ७६ सम्प्रदायों के २४० एकत्र हो गए।

पांच अप्रैल को सुबह नौ बजे मर्मया के नोहरे में सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। प्रथम दिन प्रातःकाल की कार्यवाही खुले रूप में करने का निश्चय हुआ था। इसलिए दर्शनार्थी हजारों की संख्या में पहले से ही जमा हो गए। जनता तथा साधुओं में अपूर्व उत्साह था। सभी के हृदय में समाजोन्नति की भावना थी। बाहर से इतने दर्शनार्थी आए थे कि अजमेर में स्थान मिलना मुश्किल हो गया था। स्वागत समिति ने तम्बू तथा दूसरी व्यवस्थाएँ विशाल परिमाण में की थीं।

सभी साधु एक ही पंक्ति में समान भूमि पर विराजे थे। छोटे-बड़े का भेद भाव भुला दिया था। श्रावकों को सभी के दर्शनों का एक साथ लाभ मिल रहा था।

सवा नौ बजे कार्य प्रारम्भ हुआ। पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज ने नवकार मंत्र द्वारा मंगलाचरण किया। इसके बाद शतावधानीजी, कविश्री नानचन्दजी महाराज तथा पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने प्रार्थना की। इसके बाद पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज ने सम्मेलन की सफलता के लिए संस्कृत पद्य उच्चारण किये।

इसके बाद शतावधानीजी तथा कविश्री नानचन्दजी महाराज को सम्मेलन की कार्यवाही के लिए निर्देशक (डाइरेक्टर) चुना गया। विभिन्न मुनिराजों ने सम्मेलन की सफलता के लिए अपनी कविताएँ तथा सन्देश सुनाए। इसके बाद श्री दुर्लभजी भाई ने अखिल भारतीय श्रीसंघ की ओर से मुनियों का आभार माना।

पूज्यश्री का स्पष्टीकरण

साधु सम्मेलन समिति का प्रतिनिधिमण्डल जब जोधपुर में पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुआ था तभी पूज्यश्री ने उसे अपने उपयोगी विचार दर्शा दिये थे। पूज्यश्री ने स्पष्ट शब्दों में बतला दिया था कि सम्मेलन से पहले मुख्य मुख्य मुनिराजों का एक सम्मेलन हो जाना आवश्यक है, जिससे महत्वपूर्ण और विवादग्रस्त विषयों पर विचार विमर्श हो जाय और निर्णय करने में सुविधा रहे। किन्तु सम्मेलन का समय इतना सन्निकट रखा गया था कि यह सुझाव अमल में नहीं आ सका। मगर इसके बिना सम्मेलन की वास्तविक सफलता संदिग्ध हो गई थी।

इसके अतिरिक्त गुजरात काठियावाड़ के छोटी पक्ष के सन्त सम्मेलन में सम्मिलित नहीं हुए थे। साथ ही सम्मेलन से पहले मुख्य मुख्य मुनिराजों से पूज्यश्री का जो वार्तालाप हुआ था, उससे पूज्यश्री को समझने में देरी नहीं लगी कि अभी तक विभिन्न सम्प्रदायों के मुनिराज संघ श्रेयस् के लिए यथोचित त्याग करने के लिए उद्यत नहीं हैं। अपनी अपनी सम्प्रदाय का सभी को आग्रह है और सब एक गच्छ में सम्मिलित होकर एकता का सूत्रपात नहीं करना चाहते।

ऐसी परिस्थितियों में पूज्यश्री की तीक्ष्ण दृष्टि से सम्मेलन का भविष्य साफ दिखाई देने लगा। अतएव अजमेर पधार करके भी आपने सम्मेलन में प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित न होने का निर्णय किया।

जब सम्मेलन आरम्भ होने लगा तो पूज्यश्री ने प्रतिनिधि मुनियों के समक्ष अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा—

मैं एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। मेरे सम्प्रदाय के समस्त मुनियों ने तथा मुझ पर पूज्य भाव रखने वाली सभी सतियों ने मुझे अपनी ओर से एक मात्र प्रतिनिधि निर्वाचित किया है। मगर कतिपय कारणों से मैंने प्रतिनिधि रूप में सम्मिलित न होने का निश्चय किया है। मैं एक दर्शक के रूप में यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। मगर इस सभा में सिर्फ प्रतिनिधि ही सम्मिलित हो सकते हों तो मुझ को जाने में किंचित भी संकोच नहीं है।

यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझता हूँ कि सम्मेलन के प्रति मेरा विरोधी भाव नहीं है। जब तक सम्मेलन जारी रहेगा तब तक मैं अजमेर में ही ठहरने की इच्छा रखता हूँ और आप चाहेंगे तो यथायोग्य सलाह सूचना आपको देता रहूँगा। ऐसा करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आप शास्त्रानुसार जो नियम उपनियम बनाएँगे, उन्हें मैं सहर्ष लेकर अपने संतो और सतियों में बांट दूंगा।

पूज्यश्री के इस वक्तव्य को सुनकर प्रतिनिधि मुनियों ने आपसे बैठक में ही विराजने की प्रार्थना की। और सलाहकार के रूप में योगदान करने का आग्रह किया। तदनुसार आप साधु सम्मेलन में सलाहकार के रूप में सम्मिलित हुए और महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर अपनी सम्मति प्रकट करके सम्मेलन का मार्ग प्रदर्शन किया।

पूज्यश्री ने वर्द्धमान संघ की महत्वपूर्ण योजना सम्मेलन में रखी। सभी मुनिराजो ने योजना का हार्दिक स्वागत किया मगर अमल में लाने में अपनी असमर्थता प्रकट की।

वास्तव में पूज्यश्री द्वारा प्रस्तुत योजना अत्यन्त उपयोगी थी और उसे काम में लाये बिना संघ का यथोचित अभ्युदय होना कठिन है। पाठकों की जानकारी के लिए योजना यहाँ दी जा रही है।

श्रीवर्द्धमान संघ योजना

वर्तमानकालीन सम्प्रदायों की प्रवृत्ति भिन्न भिन्न प्रणाली से चल पड़ने से शासन संगठन अस्त व्यस्त हो गया है। इससे श्रद्धा प्ररूपणा और आचार व्यवस्था की प्ररूपणा एकमुखी होने के बदले शतमुखी हो गई है। इस आपत्ति को मिटाने का सरल और सीधा उपाय यह है कि एक ऐसा संघ निर्माण किया जावे, जिसमें सम्मिलित होकर आत्मार्थी मुनिगण एक प्रणाली में चल सकें। इसके लिए 'वर्द्धमान संघ' की स्थापना करना उचित होगा। क्योंकि जब तक शास्त्र सम्मत नाम वाला संघ न स्थापित किया जाय, तब तक किसी भी सम्प्रदाय के मुनिगण अपनी सम्प्रदाय को छोड़कर दूसरे की सम्प्रदाय में सम्मिलित न हो सकेंगे। इस आपत्ति को मिटाने के लिए 'वर्द्धमान संघ' नाम के संघ की स्थापना करना उचित होगा। यह नाम रखने से किसी भी सम्प्रदाय के मुनियों को यह खयाल न होगा कि मैं अपनी सम्प्रदाय को छोड़कर दूसरे की सम्प्रदाय में क्यों जाऊँ। प्रत्युत यह खयाल आना स्वाभाविक है कि जब समस्त सम्प्रदायों के कल्याणार्थ और भविष्य में चिरकाल तक संघ मजबूत रीति से चलता रहे, इसके लिए एक शास्त्र सम्मत संघ का निर्माण होता है और उसमें किसी का पक्ष नहीं है। तो फिर ऐसे संघ में सम्मिलित होने से हमारा भी गौरव बढ़ता है और जैन शासन का भी गौरव बढ़ता है।

अपना और पराए का कल्याण करना ही मुनि-समुदाय का परम कर्त्तव्य है। किन्तु जब तक समस्त मुनि-महात्माओं की श्रद्धा प्ररूपणा आदि एक न हो तब तक विद्वान् मुनि महाराज अपना कल्याण तो किसी प्रकार कर भी सकते हैं परन्तु साधारण स्थिति वाले मुनिगण एवं साध्वी समुदाय और श्रावक श्राविकाओं की, जब तक श्रद्धा प्ररूपणा तथा व्यवहार समाचारी एक न हो, कल्याण सधना अत्यन्त कठिन है। ऐसी अवस्था में ऐसे कौन मुनि महात्मा होंगे, जो पक्ष को छोड़ कर—सबके कल्याण में अपना कल्याण है, इस बात को मान नवनिर्मित वर्द्धमान संघ में सम्मिलित होने से इन्कार करेंगे। अपितु सभी मुनि महात्मा इस संघ में सम्मिलित होंगे।

'वर्द्धमान संघ' यह नाम ही महान् कल्याणकारी है। इस नाम पर श्रीमान् चरम तीर्थंकर श्री वर्द्धमान जिनका, यह शासन है, के नाम की छाप लगी हुई है। इसके सिवाय इस संघ का नाम किसी व्यक्ति का सम्प्रदाय विशेष के नाम पर नहीं है। इसलिए इस नाम के विषय में किसी प्रकार के तर्क वितर्क को स्थान नहीं है।

वर्द्धमान सघ के नियम

(१) इस सङ्घ का जातिकुल सम्पन्न द्रव्य क्षेत्र काल और भाव का ज्ञाता, आचारादि मुनिक्रिया म निष्णात और नवीन सङ्घ का भार उठाने म समर्थ एसा एक सवमान्य मुख्याचाय स्थापित करना चाहिए।

(२) मुख्याचाय की अधीनता म उपरोक्त गुण युक्त अनक उपाचाय, उपाध्याय, प्रवत क, गणावच्छेदक, आदि स्थापित किए जायें और इनकी अधीनता में यथायोग्य मुनियों को कायकर्ता स्थापित कर कार्यभार सौंप दिया जाय। अपनी अधीनता के मुनि महात्माओं की देख रेख और आचार विचार ज्ञान ध्यान आदि की साल सम्भाल बड़े मुनि महात्मा करें और अधीनस्थ मुनि महात्मा जिनकी अधीनता म हैं उनकी आज्ञानुसार विनय भक्ति व्यावच आदि समस्त काय करें।

(३) साध्वी समुदाय म मुख्य प्रवर्तिनी और प्रवर्तिनी के नीचे गणावच्छेदिनी आदि स्थापित की जायें।

(४) मुख्याचाय जिस साधु साध्वियो का सघाडा बाध देवें उन साधु साध्वियों को उस सघाड में रहना होगा।

(५) देश विदेश भेजने या चातुर्मास कराने के लिए जो सघाड़े बांधे जावें, उनमें साधुओं के एक सघाडे में ३ स कम साधु और साध्वियों के एक सघाड़े में ४ से कम साध्वियां न होनी चाहिए।

(६) चातुर्मास या पूर्ण शेष काल में साधु और साध्वी किसी एक ही ग्राम म मुख्याचाय की आज्ञा बिना न रह सकेंगे।

(७) आचाय के समीप उस ग्राम नगर म साध्वियां मर्यादापूवक रह सकती हैं।

(८) जहा तक हो सके प्रवर्तिनी उसी ग्राम या नगर में चातुर्मास करें, जहाँ मुख्याचाय का चातुर्मास हो।

(९) वद्ध मान सघ की जो समाचारी तैयार की जावे, सभी साधु-साध्वियों को तदनुसार चलना होगा। यदि कोई साधु-साध्वी मोहवश उस समाचारी का उल्लघन करे तो छोट प्रातों का प्रायश्चित्त उपाचाय गणावच्छेदक प्रवत क, प्रवर्तिनी आदि से लेना होगा और बड़ा प्रायश्चित्त छेद या मूल देना हो तो ऐसा प्रायश्चित्त देन का अधिकार उपाचाय आदि को भी रहेगा, परन्तु उस दोष की आलोचना मुख्याचाय को सुनानी होगी। आलोचना सुनन और प्रायश्चित्त में कम ज्यादा करन का अधिकार मुख्याचाय का पूर्णरीति से होगा।

(१०) इस सघ के साधु साध्वी जिस भी श्रद्धा दें उसे वद्ध मान सघ के नाम स श्रद्धा देवें। वद्ध मान सघ के मुख्याचार्य को धर्माचाय (गुरु) श्रद्धवें और श्रावक श्राविकाओं का उन्हीं की श्रद्धा मे करें।

(११) जिस पुरुष स्त्री को दीक्षा देनी होगी, उसकी आयु प्रकृति, शिक्षा, जाति, कुल, वैराग्य और सम्बन्धियों की आज्ञा आदि की जांच जब तक मुख्याचाय स्वयं या किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा न करा लें और दीक्षा दने की आज्ञा न दे दें तब तक कोई साधु-साध्वी किसी को दीक्षा न दे सकेंगे। प्रत्यक दीक्षा मुख्याचाय की स्वीकृति म ही होगी।

(१२) शिष्य मुख्याचाय की और शिष्या प्रवर्तिनी की नेश्राय म की जावे, जिससे खींचातानी और सघ के टुकड़े न हों।

(१३) साधु साध्वियों को शास्त्र साहित्य पढ़ाने और उपदेश की शिक्षा देकर योग्यता उत्पन्न करने के लिए मुख्याचाय प्रबन्ध करें, जिससे विद्वान् साधु और विदुषी साध्वियां बन सकें। यदि मुख्याचाय उचित समझें तो इस विषय में उपाचाय, उपाध्याय, आदि की भी सम्मति ले लें।

(१४) हस्तलिखित शास्त्र पुस्तक, पाने आदि मुख्याचार्य की नेश्राय में रहे और वे योग्यतानुसार साधु साध्विया का पढने के लिए दे दें। गच्छ छोड कर या सयम त्याग कर जाने वाले को शास्त्र आदि अपने साथ ले जाने का अधिकार न होगा।

(१५) शास्त्र आदि लिखने वाले साधु साध्वी भी तैयार किए जावें, जिससे शुद्ध और सुन्दर लिपि के शास्त्र एव साहित्य की वृद्धि हो।

(१६) साध्वियों से बिना कारण आहार पानी लेना देना आदि शास्त्र म वर्जित है, इस लिए आहार पानी आदि का सभोग न किया जावे।

(१७) इस गच्छ म प्रवेश होने क लिए आलोचना का एक खरडा तयार किया जाय और उस मुआफिक प्रत्यक साधु साध्वी को प्रतिज्ञापूर्वक सच्चे दिल से पूर्वानिश्चित मुख्य मुख्य महात्माओ के पास आलोचना कराकर उस आलाचना म यदि व्रतो मे त्रुटि न हो तो जिस दिन सर्वप्रथम दीक्षा ली है, उसी दिन का दीक्षामिति कायम किया जाय और उसी मुआफिक छोटे बडे का दर्जा समझा जाय। इस खरड के मुताबिक काय हा जाने पर ही साधु साध्विया का सघ मे म सम्मिलित किया जावगा अन्यथा नही।

(१८) मुख्याचाय जिस साधु साध्वी को अयोग्य समझगे वह इस सघ म प्रविष्ट न हो सकेगा।

(१९) वद्धमान सघ के मुख्य आचाय जिस साधु साध्वी को अलग कर दें, उसके लिए सर्वसङ्घ को चाहिए कि वह उसे साधु साध्वी न माने और साधु साध्वी को की जाने वाली विधि वन्दना भी उस न करें। यह नियम तभी तक है जब तक वह मुख्याचाय से प्रायश्चित्त लेकर सघ में सम्मिलित न हा जावे।

(२०) किसी साधु साध्वी को दाप के कारण सघ से अलग करने का समय आवे तो उसे मुख्याचार्य की परवानगी लेकर ही अलग किया जावे। हा, मुख्याचाय की स्वीकृति के बिना जिनके साथ वह साधु साध्वी है व साधु साध्वी आहार पानी वन्दन आदि सभोगवृत्ति न करें, परन्तु जब तक मुख्याचार्य की आज्ञा न हो उसे साधु साध्वी को अपने पास से न तो अलग ही किया जावे न उसे अलग करने के विषय की कोई घोषणा ही सघ में की जावे। यदि जाहर व्यवहार बिगड गया हो ता सघ म यह प्रकट करे कि इस विषय की सब सूचना मुख्याचाय को दे दी गई है और उनका हुक्म जब तक न आ जावे, तब तक इसके साथ सम्भोग न रखते हुए भी हम इसे अपने पास रखते हैं। मुख्याचाय का हुक्म आने पर उनकी आज्ञानुसार कार्य किया जावेगा।

(२१) कोई साधु साध्वी छन्द या कविता बनावे तो मुख्याचाय को या मुख्याचाय जिसके लिए कहे उस बताए बिना और मुख्याचाय की स्वीकृति लिए बिना लोगा मे प्रसिद्ध न करे। केवल स्तुति रूप बालन की बात अलग है परन्तु उसम सघ की श्रद्धा के विपरीत बात न आनी चाहिए और आचाय क पास रजू करने पर उनके कथनानुसार फेर फार करना होगा।

(२२) वद्धमान सघ के साधु साध्वियों की श्रद्धा पुरूपणा एक रहनी चाहिए। मुख्याचार्य श्रद्धे, पुरुपे, वैसा ही सब साधु साध्वियो को श्रद्धना पुरूपणा चाहिए। यदि किसी का कोई तक उत्पन्न हो और वह तर्क सघ परम्परा के विरुद्ध हो तो जब तक मुख्याचाय स उसका समाधान न हो जावे तब तक प्रसिद्ध रूप मे किसी के पास पुरूपणा ही करें। मुख्याचार्य क पास निवेदन करने पर भी यदि उन्हे वह तक ठीक जचे तो उसके मुआफिक श्रद्धा पुरूपणा करने का मुख्याचाय को अधिकार है और उनसे पास हो जान पर सबकी श्रद्धा पुरूपणा उसी मुआफिक रहे।

(२३) वद्धमान-सघ की जो समाचारी तयार की जावे वह शास्त्रसम्मत और द्रव्य क्षेत्र, काल, भाव को देखकर होनी चाहिए। जिन बातो का शास्त्र में निषेध है। किन्तु अपवाद माग

म विधान शास्त्रसम्मत है ऐसी बातों का ध्यान में रखकर तथा लौकिक लोकोत्तर से अविरुद्ध जिताचार से समाचारी बाँधने की आवश्यकता है। उस समाचारी में समय समय पर देश काला नुसार फरफार करने का मुख्याचार्य को पूर्ण अधिकार रहेगा।

(२४) पाटपरम्परा के विषय में वर्द्धमान संघ की यह धारणा रहेगी कि भगवान् महावीर स्वामी का संघ भगवती सूत्र २० शतक के उद्देश्य ८ के पाठानुसार इक्कीस हजार वर्ष तक अविच्छिन्न रहेगा। उसमें चतुर्विध संघ शुद्ध श्रद्धा प्ररूपणा वाला रहा है और रहेगा। इसके अनुसार उन सब महानुभाव आचार्यों को यह संघ प्रमाण रूप मानता हुआ यह पाटपरम्परा कायम करता है कि अब से पाटपरम्परा वर्द्धमान संघ के मुख्याचार्य से ही मानी जावेगी। क्योंकि वर्तमान काल में अलग अलग सम्प्रदाय में अलग अलग पाटपरम्परा की पाटावलियाँ हैं। इसलिए आगे एक परम्परा कायम करने के लिए उपरोक्त पाटपरम्परा कायम की जाती है।

(२५) वर्द्धमान संघ पाटावली में शास्त्रोक्त सब मान्य आचार्यों का उल्लेख करके बाद में वर्द्धमान संघ के आचार्यों से पाटपरम्परा लिखी जावे। भिन्न भिन्न सम्प्रदायों के भिन्न आचार्यों का नामोल्लेख न किया जावे। जिससे एकता कायम करने में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित न हो—

शुद्धिपत्र

जो मुनि 'वर्द्धमान-संघ' में प्रविष्ट होना चाहें उन्हें अपनी शुद्धि के लिए अरिहंत सिद्ध तथा अपनी आत्मा की साक्षी से सत्य को सिर पर रख कर नीचे मुताबिक आलोचना करनी चाहिए।

ज्ञान—११ अंग १२ उपांग, ४ मूल, ४ छेद तथा आवश्यक इन ३२ शास्त्रों के मूल पाठ का अक्षरशः प्रमाणस्वरूप सत्य रूप न माना हो तथा उक्त शास्त्रों से अविरोधी वचनों को छोड़ कर शेष ग्रन्थों को प्रमाण भूत माना हो।

दर्शन—१८ दोष रहित वीतराग देव, तथा उनकी आज्ञा में विचरने वाले निर्ग्रन्थ गुरु, एवं सर्वज्ञप्रणीत निरारम्भ निष्परिग्रह स्वरूप वाला अहिंसामय धर्म इन तीन तत्त्वों सत्य स्वरूप न श्रद्धा हो तथा इनके विपरीत अर्थात् कुदेव, कुगुरु कुधर्म को देव, गुरु, धर्म श्रद्धा हो। एवं आरम्भ परिग्रह मूर्ति मन्दिर आदि के सावद्य कार्यों में धर्म श्रद्धा प्ररूपा हो, धावण आदि अचित्त पदार्थों में जीव की शंका की हो धान्यादि बीज में जीवन न श्रद्धे हो अनुकम्पादान में एकान्त पाप श्रद्धा हो तथा मिथ्यात्वी की करणी को वीतराग की आज्ञा स्वरूप मोक्ष का मार्ग श्रद्धा हो।

चारित्र—(१) जान बूझ कर प्राणियों की हिंसा की हो।

(२) जान बूझ कर झूठ बोला हो।

(३) जान बूझ कर स्वधर्मी या परधर्मी का अदत्त लिया हो। शिष्य, वस्त्र, पात्र, पुस्तक आदि की चोरी की हो।

(४) जानबूझ कर विषय विकार के लिए मनुष्यणी या तिर्यञ्चनी का स्पर्श किया हो, कुचेष्टा की हो, अनाचार सेवा हो हस्त मैथुन किया हो। ऐसे ही साध्वी ने पुरुष के साथ किया हो तथा साधु ने किसी अन्य पुरुष के साथ हस्त मैथुन किया हो या अन्योन्य मैथुन कर्म किया हो या अन्य किसी तरह की कुचेष्टा की हो, ऐसे ही साध्वी ने किसी अन्य स्त्री के साथ दुर्व्यवहार किया हो।

(५) जानबूझकर पैसा, रुपया, मोहर सोना, चांदी जवर, धातु नोट, चाक, सिगारें निविड़ आदि परिग्रह रखा हो।

(६) जान बूझकर अशन, पान खादिम स्वादिम औषध, सूंघने या मसलने की चीज रात्रि में रखी हो या भोगी हो, तथा प्रथम प्रहर की उपरोक्त चीजें चतुर्थ प्रहर में भोगी हों।

(७) जान बूझकर आधाकर्मी तथा माल का आहार, वस्त्र, पात्र आदि भोगे हो।
(८) जान बूझकर आधाकर्मी मकानो में उतरे हो।
(९) जान बूझकर सचित्त पानी, बीज, हरित, फल, फूल आदि भोगे हो।
(१०) क्रोधवश किसी पर लाठी मुक्की थप्पड, आदि से प्रहार किया हो।
(११) यन्त्र मन्त्र टूना, टोटका यज्ञ होम आदि सावद्य कार्य किए हो या कराए हो। गृहस्थ को इस लोक के वास्ते यन्त्र मन्त्रादि सिखाए हो।
तप—आहार करके अनशन की प्रसिद्धि की हो।

श्रावक-श्राविकाओ के सगठन के लिए श्रावक समाचारी

(१) वर्द्धमान सघ की स्थापना हो जाने पर, वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य को ही सब श्रावक—श्राविका अपना धर्माचार्य मानें। अर्थात गुरु आम्नाय श्रद्धा प्ररूपणा उन्ही की रखें। किन्तु उनके दूसरे साधुओ का अलग गुरु आम्ना स्वीकार नही करें।

(२) मुख्याचार्य स्थापित हो जाने पर भूतकाल मे जो गुरु आम्नाय श्राविका ने ले रखी हैं, उसे परिवर्तन करके वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य की गुरु आम्ना स्वीकार करें। (खुलासा)
इसका मतलब यह नही है कि पूर्व गुरुओ को अगुरु समझ कर यह परिवर्तन किया। किन्तु पूर्व के सदाचारी गुरुओ का उपकार मानते हुए जसे भगवान पार्श्वनाथ के सन्तानिक साधु भगवान महावीर के शासन में प्रवेश होने के समय मे अपने पूर्व-गुरु तथा प्रवज्या को शुद्ध मानते हुए शासन सगठन के महान उद्देश्य को लेकर प्रविष्ट होते हैं, उसमे उन महामुनियो की भावना सघ में एकता बढ़ाने की ही होती है। इसी तरह इस नवनिर्मित वर्द्धमान सघ के आचार्य की गुरु आम्नाय धारण करने के श्रावक श्राविकाओ की पूर्व आचरित श्रद्धा में कोई दोष नही आता है और न दोष समझ कर ही गुरु आम्नाय बदली जाती है। किन्तु सघ सगठन रूप महान् उद्देश्य को लेकर गुरु आम्नाय का परिवर्तन किया जाता है। इसलिए कोई भी श्रावक श्राविका यह सन्देह न करें कि इतने काल तक पालन की हुई हमारी श्रद्धा बेकार गई। किन्तु यह सरलता धारण करनी चाहिए कि जब अनेक सम्प्रदाय के साधु-साध्वी अपने-अपने गच्छ का परिवर्तन करके नूतन वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य की आज्ञा स्वीकार करते हैं और उन्ही की नेश्राय मे रहते हैं, तो फिर हम श्रावक श्राविकाओ को वर्द्धमान-सघ के मुख्याचार्य की आम्ना धारण करने में कोई हानि नही, किन्तु लाभ ही है।

(३) वर्द्धमान सघ के मुख्याचार्य की नेश्राय बिना आज्ञा बाहर स्वच्छन्दता के विचरने वाले साधु-साध्वियो को गुरु समझ कर वन्दन सत्कार आदि क्रिया न करें, किन्तु अनुकम्पा करके अन्नादि देने का निषेध न समझें।

(४) जिन साधु साध्वियों को मुख्याचार्य अपनी आज्ञा से बाहर करदें, और फिर जब तक उनको सङ्घ मे सम्मिलित न करें तब तक उनके साथ किसी प्रकार का पक्षपात श्रावक-श्राविका न करें। उनको मदद न देवें, वन्दनादि सत्कार भी नही करें और न उनका व्याख्यानादि ही सुनें।

(५) वर्द्धमान सङ्घ के मुख्याचार्य की समाचारी के विरुद्ध यदि कोई साधु-साध्वी प्रवृत्ति करे, तो उसकी सूचना मुख्याचार्य को श्रावक श्राविका करें। जिससे मुख्याचार्य विपरीत प्रवृत्ति करने वाले साधु का उचित प्रबन्ध करें या किसी साधु को आना देकर कराएँ।

(६) धर्म क्रिया तथा व्यवहार क्रिया के लिए जो मकान श्रावक लोग खरीदें, अथवा नया तयार करायें, उसमे साधु साध्वियो का भाव न मिलावें जिससे उस मकान में उतरने में साधु-साध्विया को दोष न लगे। साधु साध्वियो को उतारने के लिए बनवाया या खरीदा हुआ मकान हो तो उसमे साधु साध्वियो को नही उतारें न उतरने ही दें।

हो और दूसरी ओर मेहतरानी हो तो इन दोनों में जन साधारण के लिए उपयोगी कौन है? सोने की डंडी वाले चँवर तो किसी विरले पर ही ढोरे जा सकते हैं तथा उनके अभाव में किसी का कोई काम भी नहीं रुकता, लेकिन मेहतरानी तो जन साधारण के लिए उपयोगी है। ऐसा होते हुए भी अगर आपको चमर छत्रधारिणी ही अच्छी लगती है तो कहना चाहिए कि आप वास्तविकता से दूर हट रहे हैं। अभी आपको ज्ञान नहीं है। मेहतरानी गटर साफ करती है और नगर की जनता को रोगों से बचाती है। वह नगर की जनता के प्राणों की रक्षिका है। उसकी सेवा अत्यन्त उपयोगी और अनुपम है। फिर भी चँवर वाली को बड़ी समझना और मुकाबिले में मेहतरानी को नीच मानना भूल है अज्ञान है और कृतज्ञता से विरुद्ध है। क्या आपमें इतनी उदारता नहीं आ सकती कि आप इस प्रकार की सेवा करने वालों को भी मनुष्यता की दृष्टि से देखकर उनके साथ मनुष्योचित ही व्यवहार करें।

आज उलटी ही स्थिति दिखाई दे रही है। लोग उन्हें अछूत या अस्पृश्य कहकर उनके प्रति ऐसा हीनतापूर्ण व्यवहार करते हैं, मानों वह मनुष्य ही नहीं हैं। गंदगी फैलाने वाले वे बुरे और हीन! न्यायबुद्धि से उनके साथ अपने इस कर्तव्य की तुलना करके देखो तो आपकी आँखें खुल जाएंगी।

जैनधर्म कहता है कि चाण्डाल कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी मुनि हो सकता है और मुनि होने पर वह महान से महान् धर्म का ब्राह्मणों को भी उपदेश दे सकता है।

पूज्यश्री के उपदेश से प्रतिबोध पाकर इन हीन कहे जाने वाले सरल हृदय भाइयों का असीम उपकार हुआ। उन्होंने उपदेश श्रावक साधन किया।

हेमचन्द भाई का आगमन

श्री श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेंस के इतिहास में अजमेर का सर्वोच्च अधिवेशन अभूतपूर्व था। साधु सम्मेलन के कारण उसमें लगभग पचास हजार जनता इकट्ठी हो गई थी। समाज संगठन तथा पुनर्निर्माण के लिए इसमें कई योजनाएँ बनाई गई। इस अधिवेशन के सभापति भावनगर स्टेट रेलवे के चीफ इंजीनियर श्री हेमचन्द रामजी भाई महेता थे। कान्फ्रेंस में पास हुए प्रस्तावों को कार्यरूप में परिणत करने के लिये उन्होंने समाज के प्रमुख व्यक्तियों के साथ एक दौरा करने का निश्चय किया। उसी सिलसिले में जब आप उदयपुर पधारे, पूज्यश्री वहीं विराजते थे। उस समय पूज्यश्री तथा हेमचन्द भाई ने जो उद्गार प्रकट किये उनका सारांश यहाँ दिया जाता है। कान्फ्रेंस का डेपुटेशन उदयपुर में दो दिन ठहरा था। इस अवसर पर पूज्यश्री ने नीचे लिखे विचार प्रकट किये।

प्रथम व्याख्यान

ता० ९ ९ ३३

अभी कुछ ही दिन पूर्व आत्म धर्म, साधु धर्म और चारित्र धर्म की शुद्धि के लिए साधु व श्रावकों ने बड़ा परिश्रम किया है। इसी के लिए अजमेर में सम्मेलन भी हुआ था। जिन साधुओं या महात्माओं का केवल नाम ही सुना था या नहीं भी सुना था अजमेर में उन सभी का सम्मेलन हुआ। इसी प्रकार श्रावक भी बहुत से एकत्रित हुए। यदि श्रावकों में साधुओं के प्रति भक्ति न होती तो क्या कान्फ्रेंस के किसी और अधिवेशन के समय भी इतने आदमी इकट्ठे हुए थे? जो लोग अजमेर में एकत्रित हुए थे, वे लोग कितने कष्ट में रहे होंगे, इस बात को तो वे ही जानते होंगे, लेकिन यह तो स्पष्ट है कि लोगों की नसों में साधु भक्ति है। इसी से लोगों ने अपना सब काम छोड़कर श्रम उठाकर और कष्ट सहकर भी इस कार्य में भाग लिया।

चारित्र की शुद्धि कैसे हो, इस बात का निर्णय और उद्योत करने में साधु-सम्मेलन में सम्पद, किसी ने कोई कसर नहीं रखी। परन्तु अब कुछ बाकी नहीं है सब कह दिया की

चिन्ता नही होती। परन्तु बोने के बाद यदि बाड़ी सूनी छोड दी जाय तो बन्दर आदि उसे खा जावेगे, या नष्ट कर डालेंगे। यही बात साधु सम्मेलन के लिए भी है। दुलभजी भाई ने साधु सम्मेलन के लिए ही सकडो कोस का दौरा किया था। अब प्रेसिडेण्ट साहेब ने सारा बोझा अपने पर उठा लिया। इस प्रकार के परिश्रम से लगाई हुई वाटी को सूनी छोड देना ठीक नही है, यह जानकार ही प्रेसिडेण्ट साहेब ने प्रवास का यह कष्ट किया है।

प्रेसिडेण्ट साहेब का कांफ्रेंस के समय दिया हुआ सारा भाषण तो मैंने नही पढा परन्तु उसका कुछ अंश मैंने पढा है। प्रमुख साहब ने अपने भाषण मे यह बतलाया है कि मुझ इन्जीनियर को कांफ्रेंस का प्रमुख क्यो चुना ? कांफ्रेंस के प्रमुख साहेब ने तो इस विषय मे कुछ कहा ही लेकिन मैंने कुछ दूसरी ही कल्पना की है। एक गाडी दौडती हुई जा रही है। उसके भीतर इन्जीनियर शांति से बैठा है। फिर भी शक्ति-गाडी की बडी है या इन्जीनियर की ?

इन्जीनियर की

यद्यपि इन्जीनियर गाडी से छोटा है। गाडी का एक पुर्जा भी यदि इन्जीनियर पर गिर जावे तो इन्जीनियर को दबा सकता है। दूसरी तरफ गाडी ऐसी ताकतवाली है कि इन्जीनियर को भी जहा चाहे वहा ले जा सकती है। फिर भी गाडी की शक्ति बडी नही है किन्तु इन्जीनियरी की शक्ति बडी है। क्योंकि एंजिन मे पुर्जे इन्जीनियर ही लगाता है। साधारण आदमी और इन्जीनियर मे यह अन्तर है कि गाडी के विषय में इन्जीनियर जो कुछ कर सकता है साधारण आदमी वैसा नही कर सकता। इन्जीनियर म यह शक्ति है कि वह जोर भर दौडती हुई गाडी को रोक सकता है। रुकी हुई गाडी को चला सकता है। इसी प्रकार एंजिन से डिब्बे को अलग भी कर देता है और जोड भी देता है। इन्जीनियर टूटे फटे लोहे को भी एंजिन के रूप मे परिणत कर देता है। यद्यपि अग्नि और पानी म शक्ति है फिर भी उस शक्ति से काम लेना सब कोई नही जानते। लेकिन इन्जीनियर उससे काम ले लेता है। इस प्रकार इन्जीनियर पाचो भूतो पर मालिकी करता है, लेकिन देखना यह है कि इन्जीनियर जो कुछ भी करता है, वह शरीर की स्थूल शक्ति से करता है या ज्ञान शक्ति से ?

ज्ञान-शक्ति से

यदि ऐसा करने वाले इन्जीनियर मे से ज्ञान शक्ति निकाल ली जावे, तो इन्जीनियर म क्या बाकी रहेगा ? यह कहने का अभिप्राय यह है कि हम प्रेसिडेण्ट सा० को स्थूल शरीर के रूप म ही नही देखना चाहते। किन्तु ज्ञान शक्ति के रूप में देखना चाहते हैं।

गाडी दौड रही है और इन्जीनियर उसमे शक्ति से बैठा है। फिर भी इन्जीनियर कहता है कि 'यह गाडी का दौडना तो मेरा एक खेल है। मैं जब चाहूँ तब इस दौडती हुई गाडी को रोक सकता हूँ। क्योंकि मेरी ज्ञान शक्ति इस गाडी की दौड से बहुत बडी हुई है।

एक चीटी चल रही है और एक गाडी दौड रही है। इन दोनो म बडा कौन है ? बस तो गाड़ी के नीचे नित्य ही अनेक चीटिया दब मरती होगी फिर भी चीटी बडी है क्योंकि चीटी चेतन और स्वतन्त्र है। चीटी अपनी शक्ति से एक खडे पत्थर पर भी चढ सकती है परन्तु रेल नही चढ सकती। जब साधारण श्रेणी के जीव कीडो मे भी यह शक्ति है—कीडी भी गाडी से बढ़ी हुई है तो मनुष्य और मनुष्य मे भी इन्जीनियर की शक्ति का तो कहना ही क्या। इस प्रकार इन्जीनियर की शक्ति साधारण मनुष्यो से बढी हुई होती है। इसी कारण समाज ने इन्जीनियर को अपना नेता चुना है।

यदि इन्जीनियर की शक्ति केवल रेलगाडी चलाने तक ही सीमित रह जावे तब तो ऐसे बहुत से इन्जीनियर हुए हैं। उनका कोई नाम भी नही लेता। यहा तो उस इन्जीनियर की

हो और दूसरी ओर मेहतरानी हो तो इन दोनों में जन साधारण के लिए उपयोगी कौन है? सोने की डंडी वाले चँवर तो किसी विरल पर ही ढोरे जा सकते हैं तथा उनके अभाव में किसी का कोई काम भी नहीं रुकता, लेकिन मेहतरानी तो जन साधारण के लिए उपयोगी है। ऐसा होते हुए भी अगर आपको चमर छत्रधारिणी ही अच्छी लगती है तो कहना चाहिए कि आप वास्तविकता से दूर हट रहे हैं। अभी आपको ज्ञान नहीं है। मेहतरानी गटर साफ करती है और नगर की जनता को रोगों से बचाती है। वह नगर की जनता के प्राणों की रक्षिका है। उसकी सेवा अत्यन्त उपयोगी और अनुपम है। फिर भी चँवर वाली को बड़ी समझना और मुकाबिले में मेहतरानी को नीच मानना भूल है, अज्ञान है और कृतज्ञता से विरुद्ध है। क्या आपमें इतनी उदारता नहीं आ सकती कि आप इस प्रकार की सेवा करने वालों को भी मनुष्यता की दृष्टि से देखकर उनके साथ मनुष्योचित ही व्यवहार करें?

आज उलटी ही स्थिति दिखाई दे रही है। लोग उन्हें अछूत या अस्पृश्य कहकर उनके प्रति ऐसा हीनतापूर्ण व्यवहार करते हैं, मानों वह मनुष्य ही नहीं हैं! गंदगी फैलाने वाले वे बुरे और हीन! न्याययुक्त बुद्धि से उनके साथ अपने इस कर्त्तव्य की तुलना करके देखो तो आपकी आँखें खुल जाएगी।

जैनधर्म कहता है कि चाण्डाल कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी मुनि हो सकता है और मुनि होने पर वह महान से महान् धर्म का ब्राह्मणों को भी उपदेश दे सकता है।

पूज्यश्री के उपदेश से प्रतिबोध पाकर इन हीन कहे जाने वाले सरल हृदय भाइयों का असीम उपकार हुआ। उन्होंने उपदेश श्रावक सार्थक किया।

हेमचन्द भाई का आगमन

श्री श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेंस के इतिहास में अजमेर का नवाँ अधिवेशन अभूतपूर्व था। साधु सम्मेलन के कारण उसमें लगभग पचास हजार जनता इकट्ठी हो गई थी। समाज संगठन तथा पुनर्निर्माण के लिए इसमें कई योजनाएँ बनाई गई। इस अधिवेशन के सभापति भावनगर स्टेट रेलवे के चीफ इंजीनियर श्री हेमचन्द रामजी भाई मेहता थे। कान्फ्रेंस में पास हुए प्रस्तावों को कार्यरूप में परिणत करने के लिये उन्होंने समाज के अग्रणी व्यक्तियों के साथ एक दौरा करने का निश्चय किया। उसी सिलसिले में जब आप उदयपुर पधारे, पूज्यश्री वहीं विराजते थे। उस समय पूज्यश्री तथा हेमचन्द भाई ने जो उद्गार प्रकट किये उनका सारांश यहाँ दिया जाता है। कान्फ्रेंस का डेपुटेशन उदयपुर में दो दिन ठहरा था। उस अवसर पर पूज्यश्री ने नीचे लिखे विचार प्रकट किये।

प्रथम व्याख्यान

ता० ६-६-३३

अभी कुछ ही दिन पूर्व आत्म धर्म साधु धर्म और चारित्र धर्म की शुद्धि के लिए साधु व श्रावकों ने बड़ा परिश्रम किया है। इसी के लिए अजमेर में सम्मेलन भी हुआ था। जिन साधुओं या महात्माओं का केवल नाम ही सुना था या नहीं भी सुना था, अजमेर में उन सभी का सम्मेलन हुआ। इसी प्रकार श्रावक भी बहुत से एकत्रित हुए। यदि श्रावकों में साधुओं के प्रति भक्ति न होती तो क्या कान्फ्रेंस के किसी और अधिवेशन में कभी भी इतने आदमी इकट्ठे हुए थे? जो लोग अजमेर में एकत्रित हुए थे, वे लोग कैसे कष्ट में रहे होंगे, इस बात को तो वे ही जानते होंगे, लेकिन यह तो स्पष्ट है कि लोगों की नसों में साधु भक्ति है। इसी से लोगों ने अपना सब काम छोड़कर खर्च उठाकर और कष्ट सहकर भी इस कार्य में भाग लिया।

चारित्र की शुद्धि कैसे हो, इस बात का निर्णय और ऊहापोह करने में साधु सम्मेलन के समय किसी ने कोई कसर नहीं रखी। परन्तु जब तक बाड़ी नहीं है तब तक रखवाली की

चिन्ता नहीं होती। परन्तु बोने के बाद यदि बाडी सूनी छोड दी जाय ता बन्दर आदि उसे खा जावेंगे, या नष्ट कर डालेंगे। यही बात साधु सम्मेलन के लिए भी है। दुर्लभजी भाई न साधु सम्मेलन के लिए ही सकडों कोस का दौरा किया था। अब प्रेसिडेण्ट साहेब ने सारा बोझा अपने पर उठा लिया। इस प्रकार के परिश्रम से लगाई हुई बाटी को सूनी छोड देना ठीक नहीं है, यह जानकार ही प्रेसिडेण्ट साहेब ने प्रवास का यह कष्ट किया है।

प्रेसिडेण्ट साहेब का कान्फ्रेंस के समय दिया हुआ सारा भाषण तो मैंने नहीं पढा, परन्तु उसका कुछ अश मैंने पढा है। प्रमुख साहब ने अपने भाषण म यह बतलाया है कि मुझ इन्जीनियर को कान्फ्रेंस का प्रमुख क्यों चुना ? कान्फ्रेंस के प्रमुख साहेब ने तो इस विषय म कुछ कहा ही, लेकिन मैंने कुछ दूसरी ही कल्पना की है। एक गाडी दौडती हुई जा रही है। उसके भीतर इन्जीनियर शांति से बैठा है। फिर भी शक्ति-गाडी की बडी है या इन्जीनियर की ?

इन्जीनियर की

यद्यपि इन्जीनियर गाडी स छोटा है। गाडी का एक पुर्जा भी यदि इन्जीनियर पर गिर जावे ता इन्जीनियर को दबा सकता है। दूसरी तरफ गाडी एसी ताकतवाली है कि इन्जीनियर को भी जहा चाहे वहा ले जा सकती है। फिर भी गाडी की शक्ति बडी नहीं है किन्तु इन्जीनियरी की शक्ति बडी है। क्योंकि एजिन म पुर्जे इन्जीनियर ही लगाता है। साधारण आदमी और इन्जीनियर म यह अन्तर है कि गाडी के विषय में इन्जीनियर जो कुछ कर सकता है साधारण आदमी वसा नहीं कर सकता। इन्जीनियर म यह शक्ति है कि वह जोर भर दौडती हुई गाडी को रोक सकता है। रुकी हुई गाडी को चला सकता है। इसी प्रकार एजिन म डिब्बे को अलग भी कर देता है और जोड भी देता है। इन्जीनियर टूटे फूटे लोहे का भी एजिन के रूप मे परिणत कर देता है। यद्यपि अग्नि और पानी म शक्ति है, फिर भी उस शक्ति स काम लेना सब कोई नहीं जानते। लेकिन इन्जीनियर उसस काम ले लेता है। इस प्रकार इन्जीनियर पाचो भूतो पर मालिकी करता है लेकिन देखना यह है कि इन्जीनियर जो कुछ भी करता है, वह शरीर की स्थूल शक्ति से करता है या ज्ञान शक्ति से ?

ज्ञान-शक्ति से

यदि ऐसा करने वाले इन्जीनियर म से ज्ञान शक्ति निकाल ली जाव, तो इन्जीनियर मे क्या बाकी रहेगा ? यह कहने का अभिप्राय यह है कि हम प्रेसिडेण्ट सा० का स्थूल शरीर के रूप म ही नहीं देखना चाहते। किन्तु ज्ञान शक्ति के रूप म देखना चाहते हैं।

गाडी दौड रही है और इन्जीनियर उसम शक्ति से बैठा है। फिर भी इन्जीनियर कहता है कि यह गाडी का दौडना तो मेरा एक खेल है। मैं जब चाहूँ तब इस दौडती हुई गाडी को रोक सकता हूँ। क्योंकि मेरी ज्ञान शक्ति इस गाडी की दौड से बहुत बढी हुई है।

एक चींटी चल रही है और एक गाडी दौड रही है। इन दोनों म बडा कौन है ? बस तो गाड़ी के नीचे नित्य ही अनेक चींटिया दब मरती होगी फिर भी चींटी बडी है क्योंकि चींटी चेतन और स्वतन्त्र है। चींटी अपनी शक्ति से एक खडे पत्थर पर भी चढ सकती है परन्तु रेल नहीं चढ़ सकती। जब साधारण श्रेणी के जीव कीडो मे भी यह शक्ति है—कीडी भी गाडी से बढ़ी हुई है तो मनुष्य और मनुष्य म भी इन्जीनियर की शक्ति का तो कहना ही क्या। इस प्रकार इन्जीनियर की शक्ति साधारण मनुष्यो स बढी हुई होती है। इसी कारण समाज ने इन्जीनियर को अपना नेता चुना है।

यदि इन्जीनियर की शक्ति केवल रेलगाडी चलाने तक ही सीमित रह जावे तब तो एसे बहुत से इन्जीनियर हुए हैं। उनका कोई नाम भी नहीं लेता। यहा तो उस इन्जीनियर की

बात है जो समाज की चलती हुई गाडी के लिए इस बात का विचार रखे कि इस गाडी को किधर चलाकर किस दक्षता से निकाल ले जाय, ये हेमचन्द भाई गृहस्थ समाज के प्रमुख हैं। यदि ये समाज रूपी गाडी को न सम्हालें और सोते ही रहें तो हानि के विषय मे किस की जवाबदारी होगी ? आप समाज के नेता हैं, समाज रूपी गाडी के ड्राइवर हैं इसलिए समाज रूपी गाडी की जवाबदारी आप पर है। इस जवाबदारी को निभाना आपका काम है। इसी गाडी के विषय में प्रमुख साहेब को रात दिन चिन्ता रहती होगी। लेकिन गाडी के चलाने में अकेला इजीनियर कुछ भी नहीं कर सकता। इजीनियर गाडी तभी चला सकता है जब पुर्जे और कोयला पानी आदि सब सामग्री की सहायता बराबर प्राप्त हो।। यदि पुर्जे न हो, कोयलेवाला कोयले न दे और पानी के लिए कुआ जवाब देदे तो इजीनियर क्या करेगा ? इसलिए यदि समाज की इस गाडी को सुव्यवस्थित रूप से चलाना है तो सबको अपनी अपनी जिम्मेदारी समझकर उसके अनुसार काम करना होगा।

समाज की गाडी तभी चल सकती है जब इजीनियर अपना काम करे, पुर्जे वाला अपना का काम करे और पानी कोयल वाले अपना काम करें। ऐसा होने पर ही यह समाज की गाडी यथास्थान यानी निश्चित ध्येय पर पहुँच सकती है। समाज के किसी भी आदमी को यह समझ कर कभी निश्चित नही होना चाहिये कि हमने समाज के लिय प्रमुख चुन लिया है। वे ही इन्जीनियर की तरह इस समाज की गाडी को चलायेंगे। क्योंकि समाज के प्रमुख होने के कारण प्रमुख साहेब पर तो समाज की गाडी चलाने का भार है ही, लेकिन प्रमुख साहेब को प्रमुख पद के लिए समाज के लोगो ने ही चुना है। इसीलिए प्रमुख साहेब को चुनने वालो पर क्या जिम्मेदारी नही है ? चुनने वालों पर भी जिम्मेदारी है। ऐसा होते हुए भी यदि कोई आदमी यह कहे, कि समाज की गाडी कहीं भी जावे, हमारा क्या ? तो ऐसा कहना कृतघ्नता है। प्रमुख साहेब को आप ही ने अपना प्रमुख चुना है और हाथो पर बठा कर उनका जुलूस निकाला है। क्या आपने ऐसा प्रमुख साहेब का अपमान करने के लिए किया है ? यदि अपमान के लिए न हो, किन्तु सम्मान के लिए किया है तो फिर आप अपना कर्तव्य समझो।

सीता ने राम के गले में हार डाला था तो वह जब राम वन जाने लगे तब उनके साथ वन को गई थी या घर रही थी ? साथ वन गई थी।

इसी प्रकार आपने प्रमुख साहब का स्वागत किया है और इनके गले में हार डाला है। अब आपको भी सीता की तरह ककर पत्थर की ठोकरो के समान कष्टो से डरना उचित नहा है। काम के समय घर मे सो रहने से या कष्टों से भीत हो जाने से कदापि प्रशसा नही होती। सीता की प्रशंसा राम के गले में हार डालने मे ही नही है। किन्तु हार डालने के साथ ही राम के साथ वन जाने से है। हां, यदि राम वन को न जाते और अकेली सीता को ही वन भेजते तथा उस समय सीता वन को न जाती तब तो बात अलग थी लेकिन जब राम स्वय वन को जा रहे हैं तब सीता का कर्तव्य क्या है ? उस समय तो राम सीता का घर रहने के लिए भी कहते हैं। परन्तु ऐसे समय में सीता घर रहेगी या वन को जाएगी।

सीता कहती थी कुछ भी हो। जब राम अपना कर्तव्य पाल रहे हैं तब मुझ भी अपना कर्तव्य पालना ही चाहिए। इसी प्रकार जब समाज मे प्रमुख अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं, तब समाज का भी कर्त्तव्य प्रमुख का साथ देना है। यदि प्रमुख को प्रमुख चुन कर भी समाज प्रमुख का साथ न दे और अपनी जिम्मेदारी को भूल जाय तो जसे समाज अपने कर्तव्य को ही भूल गया।

यह बात तो समाज और प्रमुख साहेब के सम्बन्ध की हुई। अब मैं अपने सम्बन्ध की

बात कहता हूँ। प्रमुख साहब न या समाज ने साधु-सम्मेलन या और कान्फ्रेंस का सम्बन्ध जोडा है। यदि साधु सम्मेलन का और कान्फ्रेंस का सम्बन्ध न जोडा जाता तब शायद इन दोनो का जो महत्व समझ रहे है वह महत्व न समझते। साधु सम्मेलन और कान्फ्रेंस के सम्बन्ध का आकडा इस तरह मिला है कि साधु सम्मेलन में सन्तो ने मिल कर कई ठहराव सर्वानुमति से और बहुमत से पास करके कान्फ्रेंस के प्रमुख साहब को दिए। प्रमुख साहेब ने उन्हे समाज के सामने प्रकट किया। यद्यपि साधु सम्मेलन की रिपोर्ट में जल्दी आदि कई कारणो से अपूर्णता एवं भूल रह गई है। फिर भी मैं इस समय इस बात को गौण करके ही बोल रहा हूँ। मैं साधु-सम्मेलन मे किसी नियम से गया होऊं लेकिन प्रमुख साहब ने यह ठहराव पास किया कि—

'यहाँ हाजिर या गैरहाजिर और इन ठहरावो को मानने पर साधु-सम्मेलन के ठहराव बंधनकारक हैं।'

प्रमुख साहेब ने ऐसा ठहराव तो कर दिया लेकिन हम साधु लोग प्रमुख साहेब के ठहरावो को न मानें और साधु सम्मेलन के ठहरावो का पालन न करें तो पालन करने की जिम्मेदारी किस पर है ?

प्रमुख साहब ने उत्तर दिया—ठहराव करने वाले पर।

अर्थात् प्रमुख साहब पर। क्योकि प्रमुख साहेब ही कान्फ्रेंस हैं और कान्फ्रेंस ही प्रमुख साहब हैं। इसलिए प्रमुख साहब को यह ही मानना पड़ेगा कि हमारे ठहराव का पालन कराने की जिम्मेवारी हम पर है।

प्रमुख साहेब ने या कान्फ्रेंस ने साधु सम्मेलन के ठहराव हाजिर, गैर हाजिर आदि सभी सन्तो के लिए बंधन कारक ठहराए। सब साधुओ का कर्तव्य क्या है ? इस प्रकार का ठहराव संघ का हुआ है। संघ के हुक्म को साधु के लिए मानना आवश्यक है या नहीं ?

कभी कोई प्रश्न करे कि क्या संघ का हुक्म साधु पर भी चल सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि इस नियम में कथा में एक बात मिलती है। कथा में बताया है कि भद्रबाहु स्वामी एकान्त में योगसाधन कर रहे थे। उन्हीं दिनो संघ मे ऐसा विग्रह फैला कि महापुरुष के बिना उस विग्रह का निर्णय नही हो सकता था। संघ ने परामर्श करके दो साधुओ को भद्रबाहु स्वामी के पास भेजा और प्रार्थना की कि आप जल्दी से पधारें। आपके पधारे बिना संघ मे शांति नहीं हो सकती। साधु भद्रबाहु स्वामी के पास गये। उन्होंने संघ की प्रार्थना के उत्तर में कहा कि मैं खाली नहीं हूँ योगसाधन मे लगा हुआ हूँ ! मेरे आने से योगसाधन में कमी रहेगी। इसलिए मैं आने में असमर्थ हूँ।

साधुओ ने वापिस आकर भद्रबाहु स्वामी का उत्तर संघ को सुना दिया। संघ ने साधुओ को फिर उनके पास भेजा और कहलवाया—संघ की आज्ञा बडी है या योग बडा है ? यदि संघ की आज्ञा बडी है तो आपको शीघ्र आना चाहिए। यदि योग बडा है तो संघ का आपसे कोई सम्बन्ध नही है। साधुओ ने सारी बात भद्रबाहु स्वामी से कही। उनके मन मे आया कि संघ की आज्ञा बडी है योग बडा नही है और संघ में विग्रह होने देना कर्म बांधना है।

ठाणांग सूत्र में आठ आज्ञाएँ देकर कहा है कि इन आज्ञाओ का पालन करने में कभी प्रमाद नहीं करना। उनमे आठवीं आज्ञा इस प्रकार है—

साहम्मियाणमधिकरणंसि उप्पण्णंसि तत्थ अनिस्सितो वास्सितो अपक्खगाही मज्झत्थभावभूत कहणसाहम्मिता अप्पसद्दा अप्पझंझा अप्पतुमंतुमा उवसामणतो ते अभुट्ठियत्व भवइ।

अर्थात् जब साधर्मी में कलह हो तब किसी का पक्ष न लेकर उपशान्त हो यह देखना कि न्याय किधर है। ऐसे समय मे मध्यस्थ बन यह निश्चय करना कि मैं किसी का नहीं हूँ। न्याय

का हूँ। चाहे कोई मेरा मित्र हो या शत्रु, मैं सत्य बात ही कहूँगा। इस प्रकार के भाव रख कर जो सहधर्मी का कष्ट मिटाता है, भगवान् कहते हैं, उसे महानिजरा होती है। उत्कृष्ट रस आने पर वह तीर्थंकर गोत्र भी बाधता है। इस कार्य के करने में जितना आत्म-कल्याण हो सकता है उतना आत्म-कल्याण किसी दूसरे कार्य से नही होता।

जब सङ्घ म शान्ति कराने से महानिजरा होता है तो अशान्ति कराने से महापाप होगा ही। मेरी पूछ हो, इसलिए सङ्घ मे अशान्ति कराने से महाचिकने कर्म बँधते हैं।

भद्रबाहु स्वामी ने विचार किया कि मैं योग साधूँ या न साधूँ, इससे तो एक ही व्यक्ति के हानि-लाभ का सम्बन्ध है। परन्तु सघ के बिगडने पर परम्परा ही बिगड़ जाएगी। एक फल बिगड़ना दूसरी बात है और वृक्ष की जड ही बिगड जाना दूसरी बात है। मूल बिगड जाने स तो सभी फल बिगड जाएँगे। इसलिए न्याय धर्म किधर है, यह देख कर न्याय धर्म रूपी मूल को ही सींचना चाहिए। यदि वृक्ष की और डालें सूख गई हों केवल एक ही डाली हरी हो तब भी वृक्ष का मूल सींचने से सारा वक्ष पुन हरा होना सम्भव है। परन्तु मूल काटने पर तो सारा हरा वृक्ष भी नष्ट हो जावेगा।

भद्रबाहु स्वामी सङ्घ की आज्ञा मानकर सङ्घ के पास आए और सङ्घ से क्षमा माग कर उसका काम किया।

मतलब यह है कि 'सघ की शक्ति जबर्दस्त है।"

इस बात पर विश्वास रखकर सघ की आज्ञा मानना सभी का कर्तव्य है।

किसी बात से हमारा मतभेद हो यह बात अलग है। परन्तु सत्य और यथार्थ बात के लिए यदि हम सदा तैयार नहीं तो फिर सघ मे जाने से ही क्या? हमारा ध्येय सदा से यही है कि सघ में शान्ति रहे। इतने पर भी हम यही कहते हैं हम सरीखा एक व्यक्ति सघ मे शामिल हो या न हो, सघ मे शान्ति रहे, ऐसे उपाय करते रहना उचित है।

सघ की शक्ति बडी है। प्रमुख साहेब ने साधु-सम्मेलन के ठहराव सब साधुओं पर बन्धन कारक किस शक्ति से ठहराए हैं?

'सघ शक्ति से।

सघ ने साधुओं पर जो प्रतिबन्ध लगाया है, साधुओं का उसे मान देना पड़ेगा। लेकिन हमारा कहना यह है कि यदि साधु सघ के लगाए हुए प्रतिबन्ध तोडें तो संघ साधुओं की खुशामद न करे। यदि सघ ने खुशामद की तो साधु सघ के ठहरावों को केवल कागजी ठहराव कहेंगे और ऐसा होने पर यह होगा कि—

तू न कहे मेरी, मैं न कहूँ तेरी।
पोल पाल मे चलने द, यह मजेदार हथफेरी॥

पोल पाल रखने से काम न चलेगा। इसलिए आप मेरी या और किसी की खुशामद म मत पडो। जिसमें त्रुटि हो उसके साथ रियायत मत करो।

अन्त में मैं प्रमुख साहेब से यही कहता हूँ कि आप आए हैं और हमसे सम्मेलन सम्बन्धी बातचीत की है। हम से सम्मेलन का ठहराव टूटा है या नहीं और सम्मेलन के ठहरावों का पालन करने में हम से कोई त्रुटि हुई है या नहीं, इस बात का सर्टीफिकेट आप को हमारे लिए देना होगा। हमने त्रुटि की है या नहीं इस बात की आप हमारी जांच करें और दूसरे की भी जांच करें। इस प्रकार जाच करने मे ही सघ की आज्ञा का पालन हो सकता है और सघ की आज्ञा का पालन करने से ही कल्याण हो सकता है।

द्वितीय व्याख्यान

ता० १० ९ ३३

इजीनियर की शक्ति हजारो ट्रेनो से अधिक होती है, और इसी कारण ट्रेन की जिम्मेवारी इजीनियर पर रहती है। आप लोगो ने इस समाज रूपी गाडी की जिम्मेवारी प्रमुख साहब को दी है, तो इस गाडी पर नियन्त्रण रखने एव इसे चलाने की शक्ति भी प्रमुख साहेब को आपसे मिलनी चाहिए। मैं तो यह कहता हूँ कि इजीनियर मे बहुत शक्ति होती है। लेकिन प्रमुख साहेब मेरे लिए कहते हैं कि 'आप में बडी शक्ति है। यदि प्रमुख साहब की दृष्टि से मेरे म बडी शक्ति है तो मैं वह शक्ति प्रमुख साहेब को देता हूँ। प्रमुख साहेब इस शक्ति का अपने म लेकर देखें कि यह शक्ति कसी आनन्ददायिनी है।

अब इस समय आप लाग क्या करेंगे। केवल प्रमुख साहेब के शरीर के सत्कार म ही रहोगे या प्रमुख साहेब के बनाए हुए नियमो का भी सत्कार करोगे? उदयपुर के श्रीसघ की तरफ से प्रमुख साहेब का स्वागत किस उद्देश्य से किया गया है? हम साधु हैं हम प्रमुख साहेब का स्वागत किस तरह करें। हमारे पास वरमाला भी नही है जो हम प्रमुख साहेब के गले म डालें। लेकिन आप लोगो ने तो प्रमुख साहेब के गले म वरमाला डाली है और प्रमुख साहेब के सत्कार का प्रदर्शन किया है। किन्तु यह प्रदशन खाली तो नही है।

कल प्रमुख साहेब स्थूल शरीर स तो शायद आप लागो से जुदा हो जाएगे। परन्तु स्थूल शरीर दूर जाना ही जुदाई है या जुदाई अन्तकरण से होती है? प्रमुख साहब का स्थूल शरीर यदि यहा स चला भी जावे तब भी अन्त करण म भेद नहीं है तो जुदाई भी नही है।

आप लोगो को यह न समझना चाहिए कि प्रमुख साहेब यहा आए हमने इनका स्वागत किया और अब यहा से वे जाते है। इसलिए हमारी जवाबदारी पूरी हो गई। अब दूसरा पर जवाबदारी है। अन्त करण का मिलन और हिन्दुस्तानी लगन एक बार जुडने के बाद नही टूटते। प्रमुख साहेब से क्या आपने यूरापीय लग्न सम्बन्ध जोडा है जो आज किया और कल टूट जाव? ऐसा लग्न भारतीय नही करते। आय बाला अपने लग्न म सच्ची प्रीति रखती है और एक बार प्रीति कर लेने क बाद फिर नहीं छोडती। प्रीति दूध मिश्री की तरह होनी चाहिए। इसलिए प्रमुख साहेब यहा से चले भी जावें तब भी आप लोग प्रमुख साहेब के अन्त करण म जो सम्बन्ध जोड चुके हैं, वह तोडना उचित न होगा।

मैं अपने लिए कहता हूँ कि मेरे विषय की बात के लिए बाहर ही बाहर गडबड करने से कुछ लाभ नही। बस तो मुझ से सच्ची बात एक बच्चा भी कह सकता है और मैं मान सकता हूँ। परन्तु यह नहीं हो सकता कि कोई कह और मैं मान ही लू। यदि इस प्रकार मानने लगू तो मैं आचार्य क्या रहा मिट्टी का पुतला रहा। हा, यदि सच्ची बात मैं न मानू तो मुझे कोई भी टोक सकता है। मैं बार बार यही कहता हूँ कि मेरे विषय की जा भी बात हो, मेरे पास लाओ। मेरे पास न लाकर बाहर ही बाहर गडबड करने से चित्त कम होंगे। मैं यही कहता हूँ बाहरी गडबड करके धर्म की व्यवस्था को मत बिगाडो। बादशाह के रत्नखचित दुपट्टे को खीचकर चीथड मत बनाओ। इस धम की बहुत महिमा है। इस धम का भाग्य कम है इसी से वह आपको याद आया है। लेकिन आपका भाग्य तो इस धम के मिलने स बढा ही है। गडबड करके इस धर्म के चिथडे मत उडाओ। एक कवि कहता है—

पुरा सरसि मानस विकचसारसाली स्खलत्
परागसुरभीकृते पयसि यस्य यात वय ।
स पल्वल जलऽधुना मिलदनेक भेका कुले
मराल कुल नायक ! कथय रे कथ वतताम ॥

एक राजहंस तलया पर बैठा था। वह तलाई भी छोटी थी। पानी कम था, कीचड़ अधिक थी। मेंढक टर्राते हुए फुदक रहे थे। एक कवि वहां आया। राजहंस को देख कर कहने लगा—

हे राजहंस! तेरी यह क्या दशा आई है? तू मानसरोवर मे रहता था। खिले हुए कमल की पराग से सुगन्धित पानी को पीता था। मोती चुगता था। आज तू इस तलाई पर क्यों बैठा है? तेरे भाग्य मन्द हैं। किन्तु रे तलाई। तेरे भाग्य तो बड़े हैं। तेरे यहां ऐसा मेहमान आया है। तू अपने मेंढकों को रोक ले। उन्हें कहे कि वे इस तरह उछल कूद न करें। यह मानसरोवर का हंस समय का मारा हुआ ही तेरे यहां आया है। लेकिन तेरा भाग्य तो बड़ा ही है।

तलाई का इस प्रकार कह कर वह कवि राजहंस से कहता है, हे राजहंस! तू अपने पुराने दिन याद करके दुख मत कर। यद्यपि इस तलाई पर तुम्हें मानसरोवर सा आनन्द न मिलेगा किन्तु जीवन निर्वाह तो हो जाएगा। आज तुम्हें मानसरोवर का जल नहीं मिल रहा है। यदि तुम इस तलैया का जल नहीं पीओगे तो मर जाओगे। यदि धैर्य धारण करोगे तो मानसरोवर भी पहुँच सकोगे।

यह अन्योक्ति अलंकार है। इसके कहने का तात्पर्य यह है कि धर्म राजहंस-सा है। सिद्धान्त में कहा है—

> चइत्ता भारहं वासं चक्कवट्टी महड्ढिओ,
> सन्ती सन्तिकरे लोए पत्तो गइमणुत्तरं॥

हे धर्मरूपी राजहंस! तू जगत पर शासन करने वाले चक्रवर्ती रूपी मानसरोवर की गोद में रहने वाला था। बड़े बड़े चक्रवर्ती तुझे धारण करते थे और तेरी प्रतिष्ठा रखते थे। गौतमस्वामी और सुधर्मस्वामी सरीखे महापुरुषों ने तुझे धारण किया था। उस समय तुझे किसी छोटे आदमी की खुशामद नहीं करनी पड़ती थी परन्तु आज वही धर्म अपने यहां आकर पड़ा है। अपन लोग ठहरे तलाई के समान और धर्म मानसरोवर के समान चक्रवर्ती की गोद में रहने वाला ठहरा। आपको यह समझ कर आनन्द होना चाहिए कि हमारे यहां धर्मरूपी राजहंस आया है, परन्तु बीच में प्रकृतिरूपी मेंढक कूद फांद कर रहे हैं। अपनी प्रकृति के मेंढकों को शान्त करो।

इसी प्रकार हे धर्म! तुम अपने पिछले दिन याद करके दुःख मत करो। गर्मी के दिनों में माली वृक्षों को लोटा-लोटा जल पिलाकर जीवित रखता है। फिर वर्षा ऋतु में खूब पानी गिर जाता है। फिर भी वर्षा की अपेक्षा माली के जल का मूल्य अधिक है। क्योंकि माली के जल ने ही जीवन रखा है। इसीलिए यह कहा जाता है कि इस वृक्ष को माली ने सींचा है और इसके फल का अधिकारी वह माली ही है। इसी प्रकार हे धर्म! तेरे को रखने वाले वर्षा के जल के समान चक्रवर्ती आज नहीं हैं। परन्तु इन्हें गर्मी के दिन समझ कर धैर्य रख! आज जिनकी गोद में तू पड़ा है उन्हें लोटे का जल समझ कर सन्तोष रख! यद्यपि लोटे का जल वर्षा की अपेक्षा बहुत थोड़ा है फिर भी जीवन रखने के लिए इसी का सहारा है। गर्मी के दिनों में जीवन बना रहेगा तो वर्षा ऋतु भी देखने को मिलेगी।

मित्रो! इस धर्म पर ग्रीष्म ऋतु के से दिन हैं। इसलिए इस बात का ध्यान रखो कि यह धर्म रूपी वृक्ष कुम्हला न जाय। यदि इस की रक्षा करोगे तो आप भी यशरूपी फल प्राप्त करोगे। धर्म के विषय में न्याय की बात समझो समझाओ और भूल मिटाओ। तलैया के मेंढकों की तरह कूदा फांदी मत करो। ऐसा करने से आपका भी सम्मान न रहेगा। धर्म पर दृढ़ रहो।

> छोड़ो न धर्म अपना यदि प्राण तन से निकले।
> त्यागो न धर्म अपना यदि प्राण तन से निकले॥

जीना धरम को लेकर मरना धरम को लेकर ।
जाना धरम का लेकर जब प्राण तन से निकले ॥
आपत्तिया के भय से मुह मोडना न हरगिज ।
मत छोडना धरम को यदि जान तन से निकले ॥
हो जाओगे अमर तुम, भरकर रहोगे जिन्दा ।
हो धम पर निछावर यदि प्राण तन से निकले ॥
जिसने नही किया कुछ, अपना सुधार जग म ।
जिन्दा रहा तो क्या है चाहे जान तन से निकले ॥
है भावना हमारी हे दीनबधु वत्सल ।
रहकर धरम म कायम यह जान तन से निकले ॥

पद की कडियां कसी भी हों, परन्तु जब बात समझाई जाती है तब अपूर्व हो जाती है। पद का अर्थ समझाने को समय नही है इसलिए इसका अथ थोडे मे ही कहता हूँ कि अपना धर्म न छोडना ।

इस पद म अपना धम न छोडने का तो कहा किन्तु अपना धम कौन सा है ? जैन वैष्णव मुसलमान, ईसाई आदि सभी अपना-अपना धर्म कहते हैं। शास्त्र भी कहता है कि अपना धर्म नही छोडना चाहिए। किन्तु धम किसे कहना चाहिए ? इसका उत्तर यह है कि जिस से अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य आदि की स्थापना हो और झूठ आदि पापा का निराकरण हो, वही धम है। चाहे एसे धम का नाम कुछ भी हो। केवल जन नाम धराने से ही कुछ नही होता किन्तु उसमे ऊपर वाली विशेषताएँ होनी चाहिए। जिस धम में ये गुण हैं उसके लिए यदि प्राण भी देना पडे तो बुरा नही है। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज फरमाया करते थे कि कभी धम और धन दोना मे स एक के जाने का समय आवे तब यह भावना हो कि 'धन भले ही जावे किन्तु धम न जावे। ऐसे ही धम और प्राण जाने का समय आवे तो प्राण जायें परन्तु धम न जावे, यह भावना रखना। इस प्रकार की दृढ़ता रखने से ही धम का पालन होता है। श्रीप्रमुख साहब स मेरा यही कहना है ।

× × ×

पूज्यश्री के प्रवचन के बाद प्रमुख साहेब ने नीचे लिखे शब्द कहे—
पूज्य महाराज मुनिराज, बन्धुओ और बहिनो !

पूज्यश्री के जो व्याख्यान दो दिन सुने हैं, उनके बाद कहने की कुछ आवश्यकता नही रहती। आप बडे भाग्यवान् हैं कि पूज्यश्री का चातुर्मास आपके यहा है और आप नित्य व्याख्यान सुनते हैं। यद्यपि मेरी इच्छा भी यहां ठहरकर व्याख्यान सुनने की है परन्तु मेरा प्रोग्राम बन चुका है, इसलिए मैं नही रह सकता। यदि भाग्य से अवसर मिला तो किसी दूसरे चातुर्मास म मैं पूज्यश्री के व्याख्याना का लाभ ले सकूगा।

मुझे सब से पहले माटुगा में पूज्यश्री के दर्शन प्राप्त हुए थे। मैं उस समय बम्बई म केवल एक ही दिन रुका था। इसलिए पूज्यश्री की सेवा का लाभ केवल आध घन्टा ले सका। माटुगा मे जब मैं पूज्यश्री के दर्शन करके बठा तो उन्होंने प्रश्न किया—आप पेसेंजरों को इधर उधर पहुँचाने के लिए रेल की सडक तो बनाते हैं, परन्तु ऊपर (मोक्ष) जाने के लिए सडक बनाते हैं या नहीं ? पूज्यश्री के प्रश्न के उत्तर म मैंने उस समय क्या कहा था यह तो मुझे याद नहीं है लेकिन मैंने ऊपर जाने के लिए अब तक भी सडक नही बांधी है। अब मैं इसके लिए प्रयत्न

गाडी के लिए होशियार ड्राइवर भी मिल गया लेकिन गाडी तभी सकुशल यथास्थान पहुँचती है जब डिब्बे मजबूत साँकल से आपस में जुड़े रहते है। यदि किसी चढाई को पार करते समय जोडनेवाली सांकल टूट जावें तो आधे डिब्बे पहुँच जावेंगे और आधे नीचे गिर जावेंगे। गाडी के पीछे गार्ड रहता है। गाडी के अगले भाग की जिम्मेदारी ड्राइवर पर होती है और पिछले भाग की जिम्मेदारी गार्ड की होती है। जिन डिब्बों की जंजीर टूट गई है उनको यदि गार्ड होशियार हुआ तब तो रोक लेगा अन्यथा वे डिब्बे नीचे आते हुए उलट जावेंगे। इसलिए चाहे छोटी गाडी भी हो, परन्तु उसमें लगे हुए डिब्बों को जोडने वाली जंजीर मजबूत होनी चाहिए।

गाडी जब चलती है तब उसमें बैठे हुए मुसाफिर सोते या खेलते रहते हैं, परन्तु ड्राइवर और गार्ड जागते रहते हैं। ड्राइवर और गार्ड के भरोसे पर ही गाडी के मुसाफिर निश्चिन्त रहते हैं। परन्तु इन दोनों के भरोसे तभी निश्चिन्त रह सकते है जब सारा प्रबन्ध ठीक हो। इस प्रकार आप इस कान्फ्रेंस की गाडी में प्रेसीडेंट के भरोसे पर निश्चिन्त होना चाहते हैं तो पहले सब प्रबन्ध कर लीजिए। सब प्रबन्ध ठीक कर देने के पश्चात ही आप प्रेसीडेंट के भरोसे पर निश्चिन्त हो सकते हैं। सम्वत १९५३ /८ में रेलगाडी में एंजिन छोटे छोटे थे। आज के से राक्षसी एंजिन न थे। इस कारण गाडी कभी कभी चलती हुई रुक भी जाती थी। उस समय में गाडी में बैठे हुए मुसाफिर गाडी से उतर कर उसे धकेलते थे। ड्राइवर या गार्ड से यह नहीं कहते थे कि तुमने गाडी रोक दी या खराब कर दी। अपनी कान्फ्रेंस भी अभी छोटे एंजिन के रूप में ही है। इस कान्फ्रेंस की गाडी को धकेलने के लिए कभी कभी आपको अपना स्थान छोडकर उतरना भी पडेगा। यदि इस तकलीफ से बचना हो तो प्रबन्ध और राक्षसी एंजिन की जरूरत है। राक्षसी एंजिन एवं कोयले आदि का प्रबन्ध तथा चौकीदार आदि की व्यवस्था करने के पश्चात ही आप कान्फ्रेंस की गाडी में प्रेसीडेंट के भरोसे पर निश्चिन्त रह सकते हैं।

अब मैं इस बात पर प्रकाश डालता हूँ कि इस स्थिति में कान्फ्रेंस की आवश्यकता क्या है। गाडी आदि सब ठीक होने पर भी बिना पैसे दिये क्या आप मुसाफिरी कर सकते है? कदाचित् आप यह कहें कि गाडी के बनाने में हमने सहायता दी है, यानी गाडी हमारी बनाई हुई है तब भी आपको यही उत्तर मिलेगा कि आपको गाडी का किराया देना पडेगा। क्योंकि गाडी सभी लोगों ने मिलकर बनाई है और सभी लोग बिना किराया दिए मुसाफिरी करने लगें तो काम कब चल सकता है? इसी प्रकार इस कान्फ्रेंस की ट्रेन के लिए भी समझिए। कान्फ्रेंस को यदि प्रति कुटुम्ब प्रति दिवस एक ही पाई दी जावे तब भी एक वर्ष में डेढ दो लाख रुपया होता है। यदि सब लोग एक पाई रोज किराया देने लगें तो कान्फ्रेंस का कितना काम हो!

मैं यहाँ की शिक्षण संस्था विद्या भवन में गया था। वहाँ मैंने लडकों से गणित का यह हिसाब पूछा कि एक और एक कितने होते हैं। यही प्रश्न मैं यहाँ भी करता हूँ। साधारण आदमी तो एक और एक दो ही कहेगा लेकिन जो बुद्धिमान होगा वह एक और एक के बीच के सम्बन्ध यानी चिह्न पर ध्यान देगा।

एक और एक के बीच में यदि बाकी का निशान होगा तो परिणाम शून्य निकलेगा। यदि जोड का चिन्ह होगा तो एक और एक दो होंगे। यदि एक और एक के बीच में गुणा का चिह्न होगा तो गुणनफल एक आवेगा और यदि भाग का चिन्ह होगा तो भागफल भी एक ही आवेगा। इस प्रकार एक और एक के बीच में किसी प्रकार का भेद रहने पर एक और एक दो से अधिक न होंगे। परन्तु यदि एक और एक के बीच का भेद निकाल दिया जावे तो एक और एक ग्यारह होंगे। यदि तीन एक और बिना भेद भाव के होंगे तो १११ हो जावेंगे तथा बिना भेद के चार एक ११११ होंगे। इसी प्रकार यदि भेद रहित बीस एक हों तो कैसी बडी शक्तिशाली संख्या हो

जावेगी, इसे आप सरलता से समझ सकते हैं। इसलिए मैं आप लोगों से यही कहूँगा कि आप लोग कान्फ्रेंस की शक्ति बढ़ाने के लिए बीच के भेद को मिटाना सीखें। अन्यथा एक एक होने पर भी परिणाम एक दो या शून्य ही होगा।

घासीलालजी का पृथक्करण

पंडित रत्न मुनिश्री घासीलालजी महाराज पूज्यश्री की सम्प्रदाय के प्रमुख साधु थे। पूज्यश्री ने उन्हें अपने हाथों से दीक्षा दी थी और पढ़ा सिखाकर विद्वान् बनाया था। पूज्यश्री उनकी प्रत्येक दृष्टि से उन्नति चाहते थे। फिर भी सहज ईर्ष्या के कारण वे खिंचे से रहने लगे। कई ऐसे कार्य पूज्यश्री से बिना पूछे करने लगे जिनमें आचार्य की आज्ञा आवश्यक मानी गई है। कुछ बातों में आज्ञा का उल्लंघन भी किया। पूज्यश्री का हृदय जहाँ करुणापूर्ण था वहाँ बुद्धि कठोर अनुशासन चाहती थी। घासीलालजी की यह प्रवृत्ति पूज्यश्री को अनुशासन भंग के रूप में मालूम पड़ी। उन्होंने चेतावनी दी, किन्तु सन्तोषजनक परिणाम न निकला। अन्त में कार्तिक कृष्णा १ बुधवार ता० ४ अक्टूबर १९३३ को उदयपुर में श्रीसंघ के सामने आपने नीचे लिखा एलान किया।

मेरे शिष्य घासीलालजी तरावलीगढ़ वाले (जिनका चातुर्मास इस वर्ष मेमल ग्राम में है) ने कई वर्षों से सम्प्रदाय तथा मेरी आज्ञा के विरुद्ध अनेक प्रकार के कार्य आरम्भ कर दिए थे। तथापि मैं उन्हें निभाता ही रहा। लेकिन दो वर्ष से वे चातुर्मास भी मेरी आज्ञा बिना करने लगे हैं और बिना आज्ञा ही दीक्षा जैसे बड़े-बड़े विरुद्ध कार्य भी उन्होंने कर डाले हैं। फिर भी मैंने उनको समझा बुझाकर प्रायश्चित विधि से शुद्ध करने के लिहाज से सम्भोग से पृथक् नहीं किया। मैंने बावरा गाँव (मारवाड) से छोटे गब्बूलालजी तथा मोहनलालजी इन दोनों सन्तों को लिखित पत्र देकर मेवाड भेजा और घासीलालजी को साधु सम्मेलन के समय अजमेर आने के लिए सूचना दी। परन्तु घासीलालजी ने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया और वे अजमेर नहीं आए। केवल मनोहरलालजी व तपस्वी सुन्दरलालजी जिनको मैंने कुछ ही समय घासीलालजी के पास रहने की आज्ञा दी थी नवदीक्षित मागीलालजी को साथ लेकर साधु सम्मेलन के मौके पर अजमेर में मुझसे मिले। इन दोनों सन्तों ने उस पत्र पर हस्ताक्षर भी किए जिस पत्र में सम्प्रदाय के सन्तों ने मुझे यह लिखकर दिया था कि अजमेर साधु सम्मेलन में आप जो कुछ करेंगे वह हम सबको स्वीकार होगा।

अजमेर में पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की दोनों सम्प्रदायों को एक करने के विषय में पंच सन्तों ने भविष्य विषयक जो फैसला दिया था उस फैसले को स्वीकार करना या नहीं इस विषय में मैंने मुझ सहित उपस्थित ४२ सन्तों से पृथक् पृथक् राय ली तो सबने यही सम्मति दी कि फैसला स्वीकार कर लेना चाहिए। उस समय मनोहरलालजी एवं तपस्वी सुन्दरलालजी ने भी सब सन्तों के समान फैसला स्वीकार कर लेने की ही राह दी थी। तब मैंने पंचों की दिया हुआ भविष्य विषयक फैसला स्वीकार कर लिया और पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज के साथ ही फैसले की स्वीकृति के हस्ताक्षर किए तथा परस्पर सम्भोग किया। पश्चात् मेवाड के भूतपूर्व दीवान कोठारी जी सा० बलवन्तसिंहजी के द्वारा मेवाड में मुझसे मिलने का वायदा करके मनोहरलालजी और सुन्दरलालजी विहार कर गए। लेकिन मैं जब मेवाड में पहुँचा तो सुन्दरलालजी मेरे पास नहीं आए। वे देलवाड़ा ही रह गए। घासीरामजी मनोहरलालजी तथा कन्हैयालालजी मुझसे मावली गाँव में मिले।

मावली में उदयपुर के नगर सेठ नन्दलालजी और मेवाड के भूतपूर्व दीवान कोठारी बलवन्तसिंहजी सरीखे समाज हितैषी श्रावकों ने और मैंने घासीरामजी तथा मनोहरलालजी को सम्प्रदाय के नियमानुसार वर्ताव करने के लिए बहुत समझाया। परन्तु उन्होंने सम्मेलन के प्रस्ताव

तथा कान्फ्रेंस द्वारा स्वीकृत पंचों के फैसले को भी मानने से इन्कार कर दिया। कई बार पूछने पर भी उन्होंने मेरे सामने ऐसी कोई बात नहीं रखी जो विचारणीय हो। बल्कि मैंने उनके सामने कई ऐसी बातें रखी जो न्यायानुसार उन्हें अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए थी। परन्तु उन्होंने एक भी बात स्वीकार नहीं की तब मेरा विचार उसी समय उन्हें सम्प्रदाय एवं मेरी आज्ञा से बाहर घोषित करने का था। परन्तु कोठारीजी सा० तथा नगर सेठ साहब की प्रार्थना से मैंने वह विचार कुछ दिन के लिए स्थगित रखा। आखिर घासीलालजी मुझसे चौमासे की, आज्ञा माँगे बिना ही मावली में चले गए।

मैं उदयपुर आया। उदयपुर से सूरजमलजी तथा मोतीलालजी (मलकापुर वाले) इन दोनों सन्तों को मैंने पत्र देकर सेमल भेजा और घासीरामजी को कहलवाया कि सम्मेलन के नियमानुसार एक स्थान पर पाँच सन्तों से अधिक चातुर्मास न करें। आठ सन्तों में से तपस्वी सुन्दरलालजी, समीरमलजी और किसी तीसरे सन्त को मेरे पास भेज दें। लेकिन उन्होंने मेरी आज्ञा की अवहेलना की और सन्तों को ऐसा उत्तर दिया, जिससे वे निराश होकर मेरे पास लौट आए। मैंने यह भी सूचना कराई थी कि सम्मेलन के नियमानुसार धोवन पानी की तपस्या अनशन के नाम से प्रसिद्ध न की जावे। परन्तु उन्होंने इस नियम को भी तोड़ दिया और धोवन-पानी की तपस्या भी प्रसिद्ध कर दी। तपस्या महोत्सव मनाने में उपदेश द्वारा भी रुकावट नहीं डाली। इसी प्रकार पक्खी के ८, चौमासी के १२ और संवत्सरी के २० लोगस्स के ध्यान विषय में साधु सम्मेलन के ठहराव का पालन नहीं किया। इससे मुझे यह प्रतीत हुआ कि घासीरामजी ने मावली में पंचों का फैसला और साधु सम्मेलन के ठहरावों को नहीं पालने का जो कहा था उसे कार्य रूप में भी परिणत कर दिया इतना होने पर सेठ वर्द्धमानजी आदि की प्रार्थना से मैंने उनको आज्ञा बाहर करने की घोषणा कुछ समय के लिए और स्थगित रखी।

पश्चात् सेमल से सन्देश आने पर उदयपुर के श्रावक मेघराजजी खिवसरा, पन्नालालजी धर्मावत और मोतीलालजी हींगड़ सेमल गए। उन्होंने घासीरामजी को समझाने का बहुत प्रयत्न किया किन्तु घासीरामजी ने अपने विचार नहीं बदले। तत्पश्चात् राव साहब सेठ मोतीलाल जी मुथा, सतारावाले तथा जौहरी अमृतलाल भाई, बम्बई वाले भी उदयपुर आये और उन्हें समझाने सेमल गए। परन्तु उनके समझाने पर भी वे नहीं समझे और कहा—हमने कमेटी के नाम से कान्फ्रेंस के प्रेसीडेंट के पास एक चिट्ठी की नकल भी दी है। उन्होंने अमृतलाल भाई और मोतीलालजी को उक्त चिट्ठी की नकल भी दी जिसमें लिखा था कि हमने आयन्दा के लिए पूज्यश्री की आज्ञा मँगवाना भी बन्द कर दिया है, इत्यादि। वह नकल लेकर और निराश होकर मोतीलालजी और अमृतलाल भाई उदयपुर में मुझसे मिले और नकल मुझे दिखाई। उस नकल को देखकर मुझे बहुत खेद हुआ और मेरा कर्तव्य हो पड़ा कि अब मैं अविलम्ब उनके लिए 'सम्प्रदाय तथा आज्ञा बाहर' की घोषणा करदूँ। लेकिन उसी समय प्रेसीडेंट हेमचन्द भाई मय डेपुटेशन के उदयपुर आए। मैंने घासीरामजी सम्बन्धी सारी हकीकत उन्हें सुनाई। कान्फ्रेंस के रेजीडेण्ट जनरल सेक्रेटरी सेठ मोतीलालजी तथा अमृतलाल भाई ने घासीरामजी के पत्र की नकल भी अपने हस्ताक्षरों के साथ प्रेसीडेंट साहेब को दी। इस पर प्रेसीडेंट साहब ने भी मुझे यह सम्मति दी। कि आप सम्मेलन के ठहराव के अनुसार उनके साथ वर्ताव कर सकते हैं। लेकिन रात को उदयपुर के कुछ भाइयों की प्रार्थना पर प्रेसीडेंट साहेब ने मुझसे कहा कि मैं अपनी तरफ से एक चिट्ठी सेमल देता हूँ और घासीरामजी महाराज को समझाने की कोशिश करता हूँ। अतएव आप आश्विन शु० पूर्णिमा तक उनको 'आज्ञा बाहर' करने की घोषणा न करें।

मैंने प्रेसीडेंट साहेब की इस प्रार्थना को मान देकर उनकी बात स्वीकार कर ली। प्रेसीडेंट साहेब ने एक पत्र सेमल भेजा, वह घासीरामजी को मिल गया। उसके बाद उदयपुर के श्रावक थावरचन्दजी बाकणा तथा रणजीतसिंहजी हींगड ने समल जाकर घासीरामजी को समझाने की पूरी कोशिश की। परन्तु उनका प्रयत्न भी निष्फल हुआ। इन दोनों के लौट आने पर उदयपुर से मदनसिंहजी कावडिया जोरावरसिंह भाण्ड्या और मोहनलालजी तलसरा सेमल गये। किन्तु घासीरामजी को समझाने में वे तीनों भी सफल न हुए। अर्थात घासीरामजी ने किसी की कोई बात नहीं मानी।

कान्फ्रेंस के प्रेसीडेंट साहेब की दी हुई अवधि (आश्विन शु० १५ समाप्त हो चुकी। लेकिन घासीराम ने मेरी आज्ञा और सम्प्रदाय में रहने सम्बन्धी कोई बात स्वीकार नहीं की। इसलिए निरुपाय होकर उदयपुर के श्रीसंघ की सम्मति प्राप्त करने के पश्चात मैं श्रीसंघ के सामने यह घोषणा करता हूं कि—

(१) आज घासीराम जी मेरी आज्ञा और सम्प्रदाय के बाहर हैं। इसलिए पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के समस्त सन्त इनसे सम्भोग आदि कोई भी व्यवहार नहीं करें। इस सम्प्रदाय के साथ सम्बन्ध रखने वाले सन्त सतियाँ भी घासीरामजी से वन्दन-सत्कार आदि परिचय नहीं करें।

(२) घासीरामजी के पास रहे हुए मनोहरलालजी, सुन्दरलालजी, समीरमलजी आदि भी शीघ्र मेरे पास चले आवें। उनके पास रहने की मेरी आज्ञा नहीं है। मेरी आज्ञा को न मान कर उन्हीं के पास रहने वाले मेरी आज्ञा के बाहर समझे जावेंगे।

(३) चतुर्विध श्रीसंघ का भी कर्त्तव्य है कि जैन प्रकाश ता० ७ ५ ३३ के पृष्ठ ४५८ में प्रकाशित ठहराव नं० ४ 'साधु सम्मेलन द्वारा निर्णीत नियमों के उपयोगी सार की कलम नं० २५ के अनुसार इनके साथ वर्ताव करेंगे।

पुनश्च—यदि घासीरामजी अपने आज पर्यन्त के कृत्यों की प्रायश्चित विधि से शुद्धि तथा सम्प्रदाय आज्ञा के आजतक के नियमों को पालना स्वीकार करके सम्प्रदाय में शामिल होना चाहे, तो नियमपूर्वक सम्प्रदाय में शामिल करने को मैं इस समय तैयार हूँ?

उदयपुर मेवाड

ता० ४ १० १९३३

कार्तिक कृ० १ सं० १९९०

पूज्यश्री की घोषणा के अनुसार कान्फ्रेंस के प्रसीडेंट की ओर से नीचे लिखी सूचना प्रकाशित हुई—

आवश्यक सूचना

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साहब ने अपने शिष्य घासीराम महाराज को अपनी सम्प्रदाय और आज्ञा के विरुद्ध कार्य करने के कारण, अपनी आज्ञा के बिना जहाँ चाहे चातुर्मास करने से, अपनी आज्ञा के बिना दीक्षा देने से श्री साधु सम्मेलन के नियम जैसे—धोवन पानी की तपस्या को अनशन के नाम से प्रसिद्ध न करना पक्खी चौमासी और सवत्सरी के दिवस ठहराई हुई लोगस्स की संख्या, पांच साधु से अधिक एक ही जगह चातुर्मास न करना—आदि के भंग करने से श्री साधु सम्मेलन के प्रस्ताव नं० ४ के अनुसार (देखो जैन प्रकाश ता० ७ ५-३३ पृ० ४५८) हुक्मीचन्दजी म० साहेब की सम्प्रदाय और आज्ञा के बाहर आसोजवदी (मारवाडी कार्तिक वदी १) से कर दिया है। ऐसी खबर श्री साधुमार्गी जैन पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के हितेच्छु श्रावक मण्डल, रतलाम कि जिसके प्रेसीडेंट श्री वर्द्धमानजी पीतलियाजी साहब हैं, उनकी

तरफ से तथा उदयपुर श्रीसघ की तरफ से लिख कर भेजा गया है। जिससे ऊपर से यह खबर हिन्द के स्थानकवासी जन के श्री चतुर्विध-सघ को दी जाती है जिसमे कि साधु सम्मेलन और कान्फ्रेंस के धाराधारण के अनुसार व्यवहार किया जा सके।

हेमचन्द रामजी भाई महता
प्रमुख श्री श्व स्था जैन कान्फ्रेंस

तेरहपथी भाइयो का विफल प्रयास

साधु जीवन का मुख्यतम उद्देश्य आत्मिक अभ्युदय साधन करना है। जगत् के जजालों का त्याग कर व्यक्ति इसीलिए साधु बनता है कि वह सभी प्रकार के सयोगों से विमुक्त होकर आत्मा की चरम उन्नति कर सके। अतएव साधु-जीवन अगीकार करने वाला अगर दुनिया से अपनी पीठ फेर ले और परकीय श्रेयस अश्रेयस की चिन्ता छोड कर, एकाग्र होकर अपनी ही साधना मे लीन हो जाय तो वह अपना अधिक हित सम्पादन कर सकता है। इसस उसकी साधना म किसी प्रकार की अपूर्णता नहीं आ सकती वरन् पूर्णता ही आएगी। फिर भी साधु अपनी आध्यात्मिक आराधना के साथ जगत् के जीवो का कल्याण करने मे भी योग देते हैं। इसका क्या कारण है?

हमारी समझ में इसका प्रधान कारण यह है कि स्वभाव से परम दयालु मुनि जगत् के मूढ़ जीवो को जब अहित माग में जाते देखते हैं तो उनका हृदय दया स द्रवित हो जाता है और वे उन्हें कुमाग मे हटा कर सन्मार्ग पर लाने का समुचित प्रयत्न करते हैं। शास्त्र में साधु को 'सव्वभूयप्पभूयस्स' विशेषण दिया गया है। यह सर्वभूत-आत्मभूतभाव अर्थात् समस्त प्राणियों को अपने आत्म के समान समझने का भाव सतो में काफी उग्र हो जाता है। गीता के शब्दों मे इस आत्मौपम्यबुद्धि कह सकते हैं। इस आत्मौपम्य बुद्धि के कारण साधु दूसरे जीवों के कल्याण साधन मे प्रवृत्त होते हैं।

इस सहज दयालुता तथा आत्मौपम्य के कारण ही पूज्यश्री ने थली प्रान्त में विहार किया था और भ्रम मानकर घोर अधम म फसे हुए तेरापथी भाइयो के उद्धार की चेष्टा की थी। मरुभूमि का कष्टकर विहार तथा सर्दी गर्मी आहार पानी आदि की असुविधाएँ सहने का और कोई कारण नहीं था। अपने ध्यान मौन आदि में किंचित अन्तराय सहन करके भी आप इन भाइयों के उद्धार के लिए तयार हुए थे। मगर अधिकाश तेरापथियो ने पूज्यश्री के इस परम पुनीत और प्रशस्त प्रयास का मूल्य नहीं समझा। उन्हें उचित तो यह था कि वे इस अवसर से लाभ उठाते। सत्य को सर्वोपरि समझ कर, अपने आग्रह को थोडी देर के लिए भुलाकर अपने विवेक को आगे करते और पूज्यश्री के कथन को सुन समझ कर शास्त्रों म उसका मिलान करते। मगर उन्होंने विवेक का माग न अपनाकर दूसरा ही माग अख्तियार किया। उन्होंने सत्य को गौण और कदाग्रह को प्रधान स्थान दिया। इस माग का अवलम्बन करके उन्होंने जो अभद्र और अशिष्ट व्यवहार किया उसका किंचित वणन पहले किया जा चुका है।

पूज्यश्री जब थली से विहार कर उदयपुर पधार गये तो तेरापथी भाइयो ने एक और स्तुत्य (!) करतूत की।

पूज्यश्री ने तेरापथी सम्प्रदाय की आलोचना करने के लिए 'सद्धर्ममण्डन और 'अनुकम्पा विचार नामक दो ग्रथो का निर्माण किया था। इनम तेरहपथियों के मान्य ग्रन्थ 'भ्रमविध्वसन' का और उनकी अनुकम्पा की ढालों का खण्डन करके दया दान आदि को एकान्त पाप मानने का विरोध किया था। इन ग्रथो म शास्त्रीय विचार करने के अतिरिक्त और कोई आक्षेपजनक बात नहीं है। लेकिन तेरहपथी सम्प्रदाय अनुयायी इन ग्रथों स एस कुछ घबराये जैसे आजकल लोग अणुबम से घबराते हैं। उन्होंने बीकानेर राज्य की ओर स दोनो ग्रन्थ जब्त कराने के पक्ष

चलाने शुरू किये। इसके लिए उन्होंने एडी से चोटी तक पसीना बहाया, मगर उनकी तक्दीर में निराशा ही वदी थी और अन्त में वही उनके पल्ले पड़ी। बीकानेर रियासत के तत्कालीन स्थानापन्न प्रधानमन्त्री ठाकुर शार्दूलसिंहजी ने दोनो पक्षों की वात सुनकर जो न्याययुक्त निर्णय दिया वह इस प्रकार है—

'नकल हुक्म दफ्तर साहेब प्राइम मिनिस्टर

ता० ५ ७ ३३ मुसीव नकल न० ६२ ता० मुरजुआ ५ ६ ३३ फसला।

५ ६ ३३ मिसन मुकदमा जरिए रावकार महकमा कौंसिल ता० २० ३ ३३ दरबारे इसके कि एक किताब जिसका नाम 'चित्रमय अनुकम्पाविचार' है बाइस टोला सम्प्रदाय की तरफ से छपाई गई है व तेरहपथी समाज के चित्त को दुखाने वाली जाहिर की गई है। सेठ फूसराज वगैरह से दयाफ्त होवे कि यह किताब जब्त क्यो न की जावे? और किताब सद्धममण्डल' नामकी भी जिसके लिए ता० २० ३ ३३ को भी अलग दर्याफ्त किया है, क्यों नहीं जब्त की जावे? सीगा मुतफरकात माल। मिन जुमले दूसरी किताबो के कि जिनका काबिल एतराज पाए जाने पर बीकानेर की सीमा के अन्दर दाखिल होना मना किया गया है, दो किताबें जिनका नाम 'चित्रमय अनुकम्पाविचार और 'सद्धम मण्डनम है तेरहपथियों ने पेश करके जाहिर किया है कि इनको भी जब्त किया जाना चाहिए। मगर इनकी निस्वत पूरी तहकीत किए वगैर कोई हुक्म देना मुनासिब ख्याल न किया जाकर बाईस टोला सम्प्रदाय के मुअज्जिज्ञ शख्सा म से सेठ फूसराजदूगड साकिन सरदारशहर से, सेठ भैरोंदानजी सेठी बीकानेर, सेठ मूलचन्दजी कोठारी साकिन चूरू और सेठ कनीराम वाठिया साकिन भीनासर से दरियाफ्त किया कि वतलाया जावे कि इन किताबो को क्यों न जब्त किया जावे। चुनाचे सेठ फूसराज वगैरह ने हाजिर होकर अपने जवाव के साथ साथ किताबें भ्रमविध्वसनम्' ओर शिशुहित शिक्षा द्वितीय भाग नाम की पेश की जो तेरहपथियों की ओर से छपाई हुई है और जाहिर किया कि यह इन तेरहपथियों की बनाई हुई किताबो के जवाब म हमारे पूज्यश्री महाराज ने इसलिए बनाई हैं कि दूसरी सम्प्रदाय की तरफ से जनधम की मान्यता के प्रति जो झूठे आक्षेप भ्रम मे पड़कर कर रहे हैं न करें और शिशुहितशिक्षा और 'भ्रमविध्वंसनम्' नामक पुस्तको को पढ़कर अपने धम के सम्बन्ध मे कोई भ्रम न हो जावे। इसस केवल हमारा व्यक्तित्व सम्बन्ध नहीं है। बल्कि कुल स्थानकवासी सम्प्रदाय स है। साथ ही इस जबाव के फूसराज वगैरह ने एक लिस्ट उन अपमानजनक शब्दो की तैयार करके पश की है कि जो इन तेरहपथियो की बनाई हुई किताबों म दज है। एसा होत हुए भी एक सम्प्रदाय की पुस्तकों का जब्त करना और दूसरी का प्रचार रखना गवनमेण्ट बीकानेर के सहन करने योग्य नही है और न इनमें किसी के मान हानि कारक व अश्लील शब्द का प्रयोग किया गया है। हमने इन दोनो किताबों को देखा तो जाहिर है कि य किताब जिनको तेरहपथी जब्त करने की चेष्टा म हैं उनकी भ्रमविध्वसनम और शिशुहित शिक्षा द्वितीय भाग नामक किताबो के जवाब म बाईस टोला सम्प्रदाय वालो की तरफ स छपाई गई हैं कि जिनको गवनमेण्ट बीकानेर क नजदीक जब्त किया जाना मुनासिब नही है। लिहाजा कागजात हाजा दाखिल दफ्तर होवें।

ता० ५ ६ ३३ द० ठाकुर शार्दूलसिंहजी

एक्टिंग प्राइममिनिस्टर ६ ६ ३३

चातुर्मास के पश्चात्

उदयपुर का चौमासा समाप्त होने पर पूज्यश्री देलवाड़ा नाथद्वारा, माटागाँव आदि स्थानों में धर्मदेशना करते हुए निम्बाहेडा पधारे। यहाँ बाहर से बहुत से दर्शनार्थी आपके दर्शन और उपदेश से लाभ उठाने के लिए उपस्थित हो गये थे। अनेक राज्यकर्मचारी भी पूज्यश्री के व्याख्यान सुनकर आनन्दित होते थे।

द्वितीया को सन्तों की संख्या ३० और सतियों की संख्या ३४ हो गई। दर्शनार्थी श्रावक भी करीब ७००० की संख्या में एकत्र हुए। जावद श्रीसंघ के उत्साह का पार नहीं था। बड़ी स्फूर्ति और तत्परता के साथ आगत अतिथियों का सत्कार किया गया।

उस समय नीचे लिखे सन्त विराजमान थे—

१ जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज।
२ मुनिश्री चांदमलजी महाराज।
३ मुनिश्री रूपचन्दजी महाराज।
४ मुनिश्री मांगीलालजी महाराज।
५ मुनिश्री धूलचन्दजी महाराज।
६ मुनिश्री शान्तिलालजी महाराज।
७ मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज।
८ मुनिश्री सरदारमलजी महाराज।
९ मुनिश्री हजारीमलजी महाराज।
१० मुनिश्री पन्नालालजी महाराज।
११ मुनिश्री शोभालालजी महाराज।
१२ मुनिश्री श्रीचन्दजी महाराज
१३ मुनिश्री मोतीलालजी महाराज।
१४ मुनिश्री बख्तावरमलजी महाराज।
१५ मुनिश्री गब्बूलालजी महाराज।
१६ मुनिश्री कपूरचन्दजी महाराज।
१७ मुनिश्री हेमराजजी महाराज।
१८ मुनिश्री हर्षचन्दजी महाराज।
१९ मुनिश्री हमीरलालजी महाराज।
२० मुनिश्री नन्दलालजी महाराज।
२१ मुनिश्री भूरालालजी महाराज।
२२ मुनिश्री जीवनमलजी महाराज।
२३ मुनिश्री जेठमलजी महाराज।
२४ मुनिश्री चांदमलजी महाराज।
२५ मुनिश्री सुमालचन्दजी महाराज।
२६ मुनिश्री घासीलालजी महाराज।
२७ मुनिश्री जवरीमलजी महाराज।
२८ मुनिश्री चतुरसिंहजी महाराज।
२९ मुनिश्री अम्बालालजी महाराज।
३० मुनिश्री मोतीलालजी महाराज।

श्री रघुजी महाराज की सम्प्रदाय की महासती प्रवर्तिनी श्री आनन्दकुंवरजी महाराज ठा० २४।

श्री मोताजी महाराज की सम्प्रदाय की महासती प्रवर्तिनी श्री केसरकुंवरजी ठाणा १०।

कुल सन्त-सती ६४ उपस्थित थे।

युवाचार्य का संक्षिप्त परिचय

उदयपुर में ओसवालकुलभूषण श्रीसाहबलालजी मारू रहते थे। आप मेवाड़ रियासत के प्रामाणिक कर्मचारियों में से एक थे। फौजदारी महकमे में खजांची थे। आपकी धर्मशीला धर्मपत्नी श्रीमती इन्द्राबाई की 'कोख से श्रावण कृष्णा ३, शनिवार संवत् १९४७ के एक दिन एक पुत्र रत्न का जन्म हुआ। जैसे श्रावण मास पृथ्वी को हरा भरा, सम्पन्न और शोभामय बना देता है उसी प्रकार उस पुत्र ने अपने माता पिता और पारिवारिक जनों के हृदय को हरा भरा, आनन्दमय और उल्लास से परिपूर्ण कर दिया।' ग्रीष्म में ताप से तपी पृथ्वी श्रावण की वर्षा से शीतल हो जाती है उसी प्रकार इस पुत्ररत्न की प्राप्ति से माता पिता की चिरकालीन अभिलाषा पूर्ण होने के कारण उनका हृदय शीतल हो गया। यही पुत्र रत्न आज साधु रत्न है जिसे युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने की जावद में तैयारी हो रही है।

कौन जाने यह एक अकस्मात् था या विद्वान ज्योतिषी की दीर्घ दृष्टि का परिणाम था कि बालक का नाम गणेशीलाल' रखा गया! कुछ भी हो मगर 'गणेशीलाल' नाम सार्थक सिद्ध हुआ। उस समय बालक सिर्फ नामनिक्षेप से ही गणेश' था, अब युवाचार्य बन कर—साधुओं के गण—समूह का ईश बनकर भावनिक्षेप से भी 'गणेश' बना।

श्रीगणेशीलालजी ने अपने बचपन में हिन्दी और अंगरेजी भाषा के साथ साथ विशेष रूप से उर्दू भाषा की शिक्षा प्राप्त की थी। चौदह वर्ष की अवस्था में आपका विवाह हो गया और आप अपने पिताजी के साथ कचहरी का काम-काज सीखने लगे। जब आप १५ वर्ष के हुए तो अचानक ही आप पर वज्रपात सा हुआ। माता और पिता दोनों स्वर्ग सिधार गए। कुछ ही दिनों बाद आपकी पत्नी ने भी अपने सास ससुर का अनुगमन किया। इस प्रकार प्रकृति ने लगभग एक साथ ही आपको सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त कर दिया।

जब गणेशीलालजी का बचपन ही था, तब आप अपने पिताजी के साथ स्व० पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की सेवा में गए थे। पूज्यश्री ने उस समय दीक्षा लेने का उपदेश दिया था और आपके पिताजी से कहा था—'यदि आप अपने बालक को संयम दिला दें तो इससे धर्म की बहुत उन्नति होगी। यह बालक बहुत होनहार है। पूज्य श्रीलालजी महाराज मनुष्य को परखने में कितने कुशल थे यह बात इस घटना से सहज ही जानी जा सकती है। मगर पूज्यश्री के यह फरमाने पर भी आपके पिताजी ने पुत्रवात्सल्य के कारण दीक्षा न दिलाई। बल्कि संसार में अधिक जकड़ रखने के लिए आपको विवाह बन्धन में बांध दिया। फिर भी जिसके भाग्य में आत्मोन्नति का प्रबल योग हो उसे निमित्त मिल ही जाते हैं। माता, पिता और पत्नी के स्वर्गवास के पश्चात आप सब तरह से बन्धन मुक्त हो गए। यद्यपि आपकी एक सगी बहिन थी परन्तु पिताजी उनका विवाह पहले ही कर चुके थे। आपको किसी किस्म की कौटुम्बिक चिन्ता नहीं थी।

संयोगवश उसी वर्ष तपस्वी मुनि श्री मोतीलालजी महाराज और पूज्य श्रीजवाहरलाल जी म० का उदयपुर में चातुर्मास हुआ। पूज्यश्री ने आपको संसार का असार स्वरूप समझाया और संयम की उत्कृष्टता बतलाई। आपका मन संसार से विरक्त तो हो ही गया था, पूज्यश्री के उपदेश से विरक्ति और बढ़ गई। मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद् संवत १९६२ के दिन आपको मुनि श्री मोतीलालजी महाराज की नेश्राय में पूज्यश्री ने स्वयं दीक्षा दी। इस प्रकार आपने संयम ग्रहण करके अपने जीवन के असली अभ्युदय के पथ पर प्रयाण किया।

मुनिव्रत धारण करने के बाद आपने अनेक थोकड़े और शास्त्र सिखे। इसके पश्चात् आप पूज्यश्री के साथ दक्षिण प्रान्त में पधारे और वहाँ संस्कृत, व्याकरण साहित्य तथा न्याय शास्त्र

आदि का विशिष्ट अध्ययन किया। आपने जिस तत्परता के साथ इन सब विषयों का अध्ययन किया, उसका वर्णन पहले किया जा चुका है।

आप प्राय पूज्यश्री के साथ ही विचरते रहे हैं। अतएव दिन प्रतिदिन आपकी प्रतिभा का विकास होता गया। सवत् १९७६ ७७ में जब पूज्यश्री मालवा, मारवाड पधारे तब आपने चिचवड और सतारा म चातुर्मास किये।

पूज्यश्री के प्रति आपकी भक्ति बडी प्रगाढ थी। आपने सदैव मनोयोग क साथ पूज्यश्री की सेवा की। सवत् १९८१ म, जलगाँव चातुर्मास के समय जब पूज्यश्री के हाथ में भयकर फोडा हो गया था, आपने बडी ही तत्परता से सेवा की। उन दिनों एक बार पूज्यश्री की अवस्था चिन्ताजनक हो गई थी। उस समय सेठ वद्धमानजी पीतलिया, सेठ बहादुरमलजी बांठिया तथा सेठ लक्ष्मणदासजी, श्री श्रीमाल आदि सम्प्रदाय के मुख्य श्रावक वहाँ मौजूद थे। उनकी तथा वहाँ उपस्थित १७ सतों की एव मुनिश्री नजोडीमलजी म०, श्री हीरालालजी म० आदि अन्यत्र विराजमान सतों की सम्मति आपने मँगवा रखी थी कि आपको युवाचार्य पदवी प्रदान कर दी जाय। सघ के प्रबल पुण्योदय से पूज्यश्री का स्वास्थ्य ठीक हो गया, अत युवाचार्य पदवी देने की शीघ्रता नहीं रही। पूज्यश्री और मुनिश्री दोनों अनेक स्थानों पर विचरते हुए उपदेशामृत की वर्षा करने लगे।

सवत् १९८३ का चातुर्मास आपने जलगाँव मे ही व्यतीत किया। उस समय वहाँ महाभाग मुनि श्रीमोतीलाल जी महाराज बीमार थे। आपने जलगाँव में उपदेश अमृत बरसाते हुए अपने गुरुवर्य की तन मन से अविश्रान्त सेवा की। तपस्वी महाराज चातुर्मास के पश्चात् भी अस्वस्थ रहे और फाल्गुन वदी ११ को स्वर्ग सिधार गए।

गुरुदेव के स्वर्गवास के अनन्तर आपने जलगाँव से विहार किया और मालवा मारवाड होते हुए सवत् १९८४ में पूज्यश्री की सेवा में भीनासर पहुँचे। सवत् १९८५ म पूज्यश्री का चौमासा सरदारशहर हुआ, जब कि आपने चूरू मे चातुर्मास करके दया-दान आदि का प्रचार किया। आपके व्याख्यानों का जनता पर खूब प्रभाव पड़ा। आपने सवत् १९८७ का चातुर्मास ब्यावर में, १९८८ का फलौदी म किया। आपके सदुपदेश से माहूलियाजी मे प्रतिवर्ष होनेवाली सात आठ सौ बकरों की बलि बन्द हो गई। आपके उपदेश से अनेक क्षेत्रो म विविध प्रकार के उपकार हुए।

आप स्वभाव के सरल, भद्र और सेवाभावी हैं। अपने साथ के छोटे से छोटे सत को किसी प्रकार की तकलीफ हो जाय तो आप भोजन करना तक भूल जाते हैं। अपने शरीर की उतनी चिन्ता नहीं करते मगर मुनियों के लिए व्यग्र हो जाते हैं। मुनियों के साथ आपका व्यवहार अत्यन्त मधुर होता है मगर सयम पालन के विषय में अत्यन्त कठोर भी हैं। सयम की मर्यादा का भग होना आपको असह्य है। यों आप क्षमा के सागर हैं मगर असंयम को आप तनिक भी क्षमा नहीं कर सकते।

अजमेर-साधु सम्मेलन म पच मुनियो ने जो निर्णय दिया था, उसमे एक बात यह भी थी कि 'मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य बनाया जाय।' उस निर्णय म यह भी प्रतिपादन किया गया था कि निर्णय की सभी बातें फाल्गुनी पूर्णिमा से पहले ही अमल में आ जानी चाहिए।

इस निर्णय के अनुसार फाल्गुन शुक्ला तृतीया को युवाचार्य पदवी देने का निश्चय हुआ। पदवी प्रदान के समारोह के लिए एक विशाल मण्डप चुना गया। वहीं प्रतिदिन व्याख्यान होता था। प्रतिपद् के दिन युवाचार्य का भाषण हुआ। तदनंतर पूज्यश्री ने प्रभावशाली एवं रोचक व्याख्यान फरमाया। आपने कहा—

"जिस समय सूय अपनी सहस्त्र किरणो से प्रकाश फैला रहा हो उस समय लोगो को दीपक की सहायता की आवश्यवता नही रहती। परन्तु सूय के अभाव मे यदि सांसारिक लोग दीपक की सहायता न लें तो उनका कायव्यवहार सुविधापूवक कैसे हो सके? इसलिए सूय के अभाव मे दीपक की सहायता ली जाती है। सूर्य और दीपक मे यह अन्तर अवश्य है कि सूर्य स्वय प्रकाशमय है उसे किसी की अपेक्षा नहीं रखनी पडती। उसका प्रकाश प्रशस्त है। लकिन दीपक स्वय प्रकाशमय नही है। उसका प्रकाश सापेक्ष एव अप्रशस्त है। सापेक्ष होने के कारण दीपक से प्रकाश लेने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उसमे तेल दिया जाय और बत्ती रखी जावे और बत्ती को अग्नि लगाई जावे।

भगवान् तीथकर सूय के समान हैं। बल्कि उनकी समता करोडो सूर्यों से भी नही हो सकती। वे केवल ज्ञानी, अन्तर्यामी, और घट घट के भावो को जानने वाले होते हैं। उनका ज्ञान पूण होता है। लेकिन वर्तमान समय मे भगवान् तीर्थंकर भारतवष में विद्यमान नहीं हैं। इसलिए उनके अभाव मे चतुर्विध सघ के लिए आचार्यादिक ही आधार हैं। भगवान् तीथकर में और आचायदिक में वैसा ही अन्तर है, जैसा सूय और दीपक मे है। अर्थात् एक सापेक्ष है और दूसरा निरपेक्ष। पूण ज्ञानी होने क कारण भगवान तीथकर को किसी की अपेक्षा नहीं है न किसी की सहायता की ही आवश्यकता रहती है। लेकिन आचाय तीथकर के समान पूण ज्ञानी नही होते। इसलिए आचाय को चतुर्विध सघ की अपेक्षा रहती है। चतुर्विध-सघ की सहायता होने पर ही आचाय चतुर्विध सघ के आधार रूप हो सकते हैं। अन्यथा जिस प्रकार तेल बत्ती रहित दीपक प्रकाश नहीं दे सकता उसी प्रकार चतुर्विध-सघ की सहायता बिना आचार्य भी आचार्य-पद की जिम्मेदारी पूरी नहीं कर सकते।

आचार्य का काम चतुर्विध-सघ मे सारणा, वारणा धारणा और चोयणा, पचोयणा करना है। इन कामों के लिए यदि चतुर्विध-सघ सहायता न दे तो आचार्य को कठिनाई मे पड जाना पडे तथा आचार्यपद का गौरव भी न रहे। उदाहरण के लिए गच्छ के किसी रोगी ग्लान या तपस्वी साधु की सेवा का प्रबन्ध करना है। यदि इस काय म श्रमण सघ की सहायता प्राप्त न हो तो अकेला आचाय किस किस सन्त की सेवा सुश्रूषा कर सकता है? इस काय के लिए श्रमण संघ का सहकार आवश्यक है। इसी प्रकार आचार्य ने किसी उद्दण्ड सन्त को उद्दण्डता करने से रोका शिक्षा दी या सघ धम की रक्षा के लिए उसे सङ्घ से पथक कर दिया। सम्भव है कि अलग किया हुआ या दण्ड पाया हुआ व्यक्ति आचाय पर अपवाद लगावे और आचाय के विषय में झूठी-सच्ची बातें कहकर हो-हल्ला मचावे। ऐसे समय मे यदि सघ की ओर से ऐसे अपवाद का निराकरण न किया जावे तो आचार्य पद का गौरव न रहेगा। उस समय सङ्घ का यह कत्तव्य हो जाता है कि वह सत्य और न्याय को दृष्टि मे रखकर उस अपवाद का निराकरण करे और आचाय के गौरव की रक्षा करे। छद्मस्थ होने के कारण यदि आचाय से कोई भूल हुई हो तो आचाय को उनकी भूल सुझाकर न्याय पथ पर लाना उचित है लेकिन इस ओर स उपेक्षित रहना सवथा अनुचित है। मेरे कथन का अभिप्राय यह नहीं है कि थप्पड का बदला थप्पड से दिया जाय। लेकिन कायरता को क्षमा का रूप देना ठीक नहीं। झूठी और क्षणिक शान्ति के नाम पर असत्य एव अनुचित प्रचार होने देना धर्म और आचाय का गौरव घटना है।'

चादर-प्रदान-दिवस

फाल्गुन शु० ३ सम्वत १९९० को ग्यारह बजे से १ बजे तक का समय युवाचाय पदवी प्रदान करने के लिए शुभ माना गया था। उस दिन प्रातःकाल साढे बजे दीवान बहादुर श्रीमान् सेठ मोतीलालजी मूथा के नेतृत्व म एक जुलूस निकाला गया। जावद के तहसीलदार तथा दूसरे

राज्याधिकारी भी उसमें उत्साहपूर्वक सम्मिलित हुए। बैण्ड, डंका, निशान, कोतल घोड़े, चंवर छत्र आदि से सुसज्जित होकर पांच हजार नर नारियों के साथ जुलूस सुखदेवजी खूबचन्दजी के नोहरे से निकला। सारे शहर में घूमकर नौ बजे फिर उसी स्थान पर आ गया। मुनिराजों का दर्शन करके श्रावक श्राविकाएँ अपने स्थान पर चले गए।

दस बजे के लगभग सरकारी स्कूल का विशाल मैदान भरने लगा। आध घण्टे में हजारों प्रेक्षक इकट्ठे हो गए और मैदान ठसाठस भर गया। साढ़े दस बजे सन्त सतियां तथा युवाचार्यश्री के साथ पूज्यश्री पधारे। जनता ने जयध्वनि के साथ अपने वर्तमान तथा भावी आचार्य का स्वागत किया।

ग्यारह बजे पूज्यश्री तथा सभी सन्तों ने मिलकर नवकार मंत्र का पाठ किया और भगवान् शान्तिनाथ की प्रार्थना की। मंगलाचरण के बाद पूज्यश्री ने व्याख्यान प्रारम्भ किया। आपने फरमाया—

यह बात तो चतुर्विध संघ को विदित हो चुकी है आज मिति फाल्गुन शुदि ३ संम्वत १९९० का दिन परम आनन्द का और जीवन में पुनः पुनः स्मरण करने योग्य है। क्योंकि आज युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी को युवाचार्य पद की चादर दी जाने वाली है। यह विदित होने के कारण ही चतुर्विध सङ्घ एकत्रित हुआ है। चादर की क्रिया करने से पूर्व मैं महापुरुषों के अनुभूत प्रवचन आप लोगों को सुनाता हूँ।

चतुर्विध सङ्घ में साधु और साध्वी पूर्ण त्यागी कहे गये हैं। श्रावक तथा श्राविका आंशिक त्यागी हैं। इन दो पूर्ण और आंशिक त्यागियों का समूह ही चतुर्विध-सङ्घ कहलाता है और यह चतुर्विध सङ्घ भावतीर्थ भी है। चतुर्विध सङ्घ में बताए गए श्रमण सङ्घ के अन्तर्गत भगवान् अरिहन्त का भी समावेश हो जाता है क्योंकि भगवान् अरिहन्त साधु से भिन्न नहीं हैं।

यह प्रश्न हो सकता है कि अरिहन्त भगवान् तो अभी साधु ही हैं साधक हैं और इनके चार कर्म भी शेष हैं, लेकिन सिद्ध भगवान् के लिए साधना शेष नहीं है, वे कृतकृत्य हो चुके हैं तथा उनके आठों कर्म नष्ट हो चुके हैं। ऐसा होते हुए भी नमस्कार मन्त्र में भगवान् अरिहन्त को पहले और भगवान् सिद्ध को फिर नमस्कार क्यों किया जाता है? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि सिद्ध भगवान् की पहचान करानेवाले अरिहन्त भगवान् ही हैं। उपकारी को पहले नमस्कार करना कर्त्तव्य है। इसी लिए भगवान अरिहन्त को पहले नमस्कार किया जाता है।

कहा जा सकता है कि सिद्ध भगवान् की पहचान कराने के कारण ही यदि अरिहन्त भगवान् को पहले नमस्कार किया जाता है तो फिर अरिहन्त भगवान् को नमस्कार करने से पहले आचार्य को नमस्कार क्यों नहीं किया जाता? जिस प्रकार सिद्ध भगवान् की पहिचान कराने वाले भगवान् अरिहन्त हैं उसी प्रकार अरिहन्त भगवान की पहिचान कराने वाले आचार्य हैं। इस लिए अरिहन्त से पहले आचार्य को नमस्कार करना चाहिए। इस प्रश्न का उत्तर यह है कि आचार्य, उपाध्याय और साधु तीनों अरिहन्त भगवान् की परिषद् में हैं। भगवान् अरिहन्त उस परिषद् के नायक हैं। पहले सभा के नायक को ही नमस्कार किया जाता है, न कि सभासदों को। इसी कारण आचार्य से पहले भगवान् अरिहन्त को नमस्कार किया जाता है।

आचार्य उपाध्याय और साधु वही हो सकते हैं जो भगवान् अरिहन्त की आज्ञा में चलते हों। जो अरिहन्त की आज्ञा के बाहर हैं वह न तो आचार्य है न उपाध्याय और न साधु ही। किस प्रकार का आचरण करने वाले आचार्य, उपाध्याय और साधु भगवान् अरिहन्त की आज्ञा में हैं। इसकी व्याख्या शास्त्रों में भली भांति की गई है। यहाँ मुझे आचार्य का ही प्रसंग है इस लिए उपाध्याय और साधु के विषय में कुछ न कहकर आचार्य के ही विषय में थोड़ा सा कहता हूँ।

श्री स्थानांग सूत्र के तीसरे स्थान में तीन प्रकार के आचार्य बताए गए हैं—कलाचार्य

शिल्पाचाय और धर्माचार्य। कलाचार्य और शिल्पचार्य का यहाँ कोई सम्बन्ध नही है। यहाँ तो धर्माचाय से ही सम्बन्ध है। इसलिए धर्माचाय की व्याख्या की जाती है।

धर्माचाय की आराधना भगवान् अरिहन्त की आराधना है। स्थानांग सूत्र के चौथे स्थान मे धर्माचाय के चार भेद बताए गए हैं—नामाचार्य स्थापनाचाय द्रव्याचाय और भावाचाय। भावाचाय के लिए तो शास्त्र में यहाँ तक कहा है—

'तत्थण जे ते भावामरिया ते तित्थदरसया।'

अर्थात् जो भावाचाय है वह तीर्थंकर के समान है।

कोई भी व्यक्ति दीक्षा लेने मात्र से ही धर्माचाय नही हो जाता। धमाचाय पद चतुर्विध सघ द्वारा मस्कार किया हुआ व्यक्ति ही पा सकता है। चतुर्विध सघ मिलकर जिस व्यक्ति को धर्माचार्य पद पर स्थापित करे वही व्यक्ति धर्माचाय हैं। अपन मन से कोई भी व्यक्ति धर्माचाय नही हो सकता। जिस प्रकार राजा योग्य गुणो से युक्त तथा राज्य-व्यवस्था मे निपुण व्यक्ति का राज्यसिंहासन पर अभिषेक किया जाता है और जिसका राज्याभिषेक हुआ है वही व्यक्ति राजा कह लाता है, प्रत्येक व्यक्ति राजा नहीं कहला सकता उसी प्रकार चतुर्विध सघ द्वारा बनाया हुआ व्यक्ति ही धर्माचाय हो सकता है। प्रत्येक व्यक्ति धर्माचाय नहीं हो सकता। राजनीति मे बल प्रयोग हो सकता है मगर धर्म-नीति मे बलात्कार सभव नही है। यहाँ कोई जबदस्ती आचाय नहीं बन सकता।

शास्त्रानुसार धर्माचाय मे तीन गुणो का होना आवश्यक है। वे तीन गुण ये हैं गीतार्थ अप्रमादी और सारणा वारणा करने वाला। अर्थात् जो सूत्राथ को जानने वाला हो, प्रमाद रहित हो और सघ की व्यवस्था करने वाला हो। अर्थात सयम माग मे सिदाते हुए की रक्षा करने, उदण्ड का दण्ड देकर आज्ञा म चलाने या गुच्छा बाहर करने और सबकी साल सम्हाल रखने वाला ही सुयाग्य आचाय है।

आचाय पद देने के समय तो किसी में ये तीनों गुण नजर आए, परन्तु आचाय पद पाने के पश्चात् वह व्यक्ति मान-अभिमान मे पडकर मनमानी करन लग जावे, प्रमादी बन जावे शास्त्र स्वाध्याय करना छोड दे और सघ की उचित व्यवस्था न करे तो शास्त्र में एसे व्यक्ति को आचाय पद से पृथक कर देने का विधान है। ऐसे व्यक्ति को आचाय पद से पृथक करने का विधान करते हुए शास्त्र में तीन दृष्टान्त दिए गए हैं। पहला दृष्टान्त यह है—

किसी क्षेत्र मे दुष्काल पडा। पीने को पानी तथा खाने को अन्न मिलना मुश्किल हो गया। महामारी आदि रोग फैल गए। जिस प्रकार वह क्षेत्र तत्काल त्याज्य है उसी प्रकार अगीताथ आचार्य भी त्याज्य है।

दूसरा दृष्टान्त यह दिया गया है—कोई राजा राजसिंहासन पाने के पश्चात् मद्य, मांस, परस्त्री-गमन आदि दुर्व्यसनों में पड जावे तो जिस प्रकार ऐसा राजा त्याज्य है उसी प्रकार वह आचाय भी त्याज्य है जो आचार्य पद पाने के पश्चात् पूजा प्रतिष्ठा का लोभी बन कर खाने पीने आदि के पदार्थों के भोग में रड जाय और साता का इच्छुक, रस लोलुप तथा बुद्धि का अभिमानी बन जावे।

तीसरा दृष्टान्त यह दिया है—जिस प्रकार कुलधम को न पालने वाला, कुल के लोगों की सँभाल न रखने वाला कुलपति या गृहपति त्याज्य है उसी प्रकार न्याय अन्याय को समझन वाला, अपराधी को दण्ड न देने वाला और निरपराध को दण्ड देने वाला आचाय भी त्याज्य है। सघ ऐसे अयोग्य आचार्य को आचार्य पद से पृथक कर सकता है।

इस प्रकार का विधान करते हुए शास्त्र में यह भी कहा है कि संघ द्वारा आचार्य पद से पृथक कर दिए जाने पर भी यदि कोई व्यक्ति आचार्य पद को न त्यागे तो उतने ही दिन का दण्ड या छेद आता है जितने दिन उसने संघ द्वारा पृथक कर दिए जाने पर भी आचार्य पद नहीं त्यागा।

मतलब यह है कि उक्त तीन गुणों से युक्त व्यक्ति ही आचार्य बनाया जा सकता है। जिस में ये तीन गुण नहीं हैं वह आचार्य नहीं हो सकता और कदाचित् आचार्य-पद देने के समय किसी व्यक्ति में ये तीन गुण नज़र आवें, लेकिन आचार्यपद देने के पश्चात् ये न रहें तो ऐसे व्यक्ति को आचार्यपद से पृथक भी किया जा सकता है।

स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलाल जी महाराज फरमाया करते थे कि आचार्य पत्थर-सा कठोर भी न हो और पानी जैसा नम्र भी न हो। किन्तु बीकानेरी मिश्री के कूजे की तरह हो। अर्थात् जिस प्रकार बीकानेर की मिश्री का कूजा सिर पर मारने से तो सिर फोड़ देता है और मुँह में रखने पर मुँह मीठा कर देता है। उसी प्रकार आचार्य भी अन्याय का प्रतिकार करने के लिए कठोर से कठोर रहे और सत्य तथा न्याय के लिए मुँह में रखी हुई मिश्री के समान मीठा और नम्र रहे।

भगवान् महावीर ने अपना अधिकार श्री सुधर्मास्वामी को दिया था। श्री सुधर्मास्वामी के पास जम्बूस्वामी ने दीक्षा ली थी। दीक्षा लेते समय श्रीजम्बूस्वामी को यह पता नहीं था कि मैं सुधर्मास्वामी के पाट का अधिकारी होऊँगा। लेकिन सुधर्मास्वामी की कृपा से जम्बूस्वामी गुण निधान बन कर सुधर्मास्वामी के पाट के अधिकारी बने। यह उन्हीं की चलती हुई परम्परा है। इस परम्परा में उग्रविहारी तपोधनी और आत्मा का उत्थान करने वाले श्रीहुक्मीमुनी हुए। हुक्ममुनी जब गच्छा छोड़ कर निकले तब उनका अनादर भी हुआ। फिर भी वे अपने गुरु लालचन्दजी महाराज का उपकार ही मानते रहे और उनकी प्रशंसा करते रहे। तप आदि कारणों से हुक्ममुनी महाराज की आत्मा में एक दिव्य-शक्ति उत्पन्न हुई। उन्होंने यह नहीं चाहा था कि मेरे नाम से सम्प्रदाय चले। फिर भी उनके नाम से सम्प्रदाय चल रहा है। बैठा हुआ मुनि मण्डल उन्हीं की तपस्या का प्रसाद है।

पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज का इसी जावद शहर में स्वर्गवास हुआ था। उनके पीछे श्री शिवलालजी महाराज की पूज्य पदवी भी इसी शहर में हुई थी। उन्होंने ३६ वर्ष तक एकान्तर तप किया था। उनका स्वर्गवास भी जावद शहर में हुआ था पूज्यश्री शिवलालजी महाराज के पश्चात् पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज की पूज्य पदवी भी जावद में ही हुई थी। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज बहुत तेजस्वी और प्रभावशाली थे। उनके भक्तों में बड़े बड़े राजा महाराजा भी थे। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज ने इसी जावद शहर में विराजे हुए पूज्यश्री चौथमलजी महाराज को अपना युवाचार्य नियुक्त किया था और रतलाम से चादर भेजी थी। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज का स्वर्गवास रतलाम में हुआ। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज के बहुत समय तक विराजने से ही रतलाम नगर रत्नपुरी कहलाया। पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज के पश्चात् होने वाले पूज्यश्री चौथमलजी महाराज का स्वर्गवास भी रतलाम में ही हुआ था। रतलाम में ही पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की पूज्य पदवी हुई थी। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज से आप में से बहुत से लोग परिचित हैं। अतः उनका परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने अपने कर कमलों से मुझे रतलाम में युवाचार्य पद की चादर प्रदान की थी और जयतारण में वे स्वर्ग सिधारे थे।

कुछ काल से इस—पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज की—सम्प्रदाय के दो विभाग हो गए थे। ऐसा होने के कारण से तो आप लोग परिचित ही हैं। गतवर्ष अजमेर में होने वाले साधु सम्मेलन के अवसर पर सम्प्रदाय के दोनों विभागों को एक करने के लिए मुझे और पूज्यश्री मुन्ना

लालजी महाराज को छठे पाट पर मानकर पच मुनिया ने सातवें पाट पर श्रीगणेशीलालजी को युवाचाय बनाने का फसला दिया।

पच मुनियो ने सातवें पाट पर गणशीलालजी को युवाचाय बनाने आदि का जो ठहराव किया था, उसका समथन इस समाज की कार्फ्रेंस ने भी किया और कार्फ्रेंस के प्रेसीडेंट तथा सोलह सदस्य, इस प्रकार १७ व्यक्तियो के डेपुटेशन ने मरी व पूज्यश्री मुन्नालालजी महाराज की स्वीकृति से यह ठहराव दिया कि युवाचाय पद की चादर फाल्गुण सुदि १५ से पहले करने का निश्चय किया जाता है इस प्रकार युवाचाय पद के लिए श्रीगणेशीलालजी का चुनाव केवल मेरे या इसी सम्प्रदाय के सघ द्वारा नही हुआ है वरन् भारतवष के समस्त चतुर्विध सघ द्वारा हुआ है। तदनुसार ही आज युवाचाय पद की चादर देने का काय किया जा रहा है।

अजमेर म पच मुनियो द्वारा दिए गए फैसले के अनुसार गणेशीलालजी को युवाचाय पद की चादर देने के साथ ही खूबचन्दजी को उपाध्याय पद की चादर भी देनी चाहिए थी। इसके लिए मैंने खूबचन्दजी को जावद आने की सूचना करवादी थी और जावद सघ ने अपने दस्ती पत्र सहित खूबचन्दजी के पास डेपुटेशन भेजकर उनसे जावद आने के लिए प्रायना भी की थी, लेकिन वे नही आए। यदि खूबचन्दजी आजाते तो युवाचार्य पद की चादर देने के साथ ही उपाध्याय पद देने की क्रिया भी कर दी जाती। वे नहीं आए इसलिए युवाचाय पद की चादर देने की एक ही क्रिया की जा रही है।

पूज्यश्री का व्याख्यान समाप्त होने पर मुनिश्री वडे चादमलजी महाराज, मुनिश्री हरख चन्दजी महाराज और मुनिश्री वडे पन्नालालजी महाराज (सादडी वाले) ने पूज्यश्री के व्याख्यान और मुनिश्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचाय पद देने का समथन किया। शेष सन्तो की ओर से मुनिश्री छोटे गब्बूलालजी महाराज ने समथन किया। इसी प्रकार प्रवर्तिनी श्रीआनद कुवरजी महाराज तथा प्रवर्तिनी श्री केसरकुवरजी महाराज ने भी अनुमोदन किया।

इसके बाद बाहर से शुभकामना व सन्देश के रूप में आये हुए तार तथा पत्र पढकर सुनाए गए। उनमे से नीचे लिखे नाम विशेष उल्लेखनीय हैं—

(१) ब्यावर—पूज्यश्री हुकमीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय मे सबसे वडे दीक्षा स्थविर मुनिश्री प्यारचन्दजी महाराज।

(२) बालोतरा—मुनिश्री मोडीलालजी महाराज और मुनिश्री वडे गब्बूलालजी महाराज।

(३) सरसा (पजाव) तपस्वी मुनिश्री विनयचन्दजी महाराज। पजाब के स्व० पूज्यश्री श्रीचन्दजी महाराज के सन्त जो इस सम्प्रदाय की आज्ञा म विचरत हैं।

(४) ब्यावर—महासती श्रीलालाजी महाराज।

(५) भीनासर—महासती श्री राजकुवरजी महाराज।

(६) भावनगर—श्रीमान् हेमचन्द रामजी भाई मेहता प्रेसिडेंट अखिल भारतीय श्वे० स्था० जैन कार्फ्रेंस।

(७) बम्बई—श्रीमान डाह्यालाल मणिलाल महता सम्पादक "जैन जागृति।

(८) उदयपुर—प० प्यारेकिशनजी कौल, मेम्बर काउसिल।

(९) जयपुर—धमवीर श्रीमान सेठ दुलभजी त्रिभुवन जौहरी।

(१०) जयपुर—श्रीमान कसरीमलजी चोरडिया।

(११) अहमदनगर—श्रीमान् बाबू कुन्दनमलजी फिरोजिया बी ए एल एल बी

(१२) चिचवड (पूना) श्रीमान् रामचन्द्रजी पूनमचन्दजी लूकड अध्यक्ष श्रीफतहचन्द जन विद्यालय चिचवड।

(१३) चिचवड (पूना) श्रीमान् नवलमलजी धींवराजजी पारख अधिपति, गराडा ट्रस्ट।

(१४) धोदवड (खानदेश) श्रीमान सेठ लालचन्दजी रघुनाथदासजी।
(१५) जोधपुर— श्रीमान् सेठ लच्छीरामजी साह।
(१६) जोधपुर—पूज्यश्री रतनचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय का हितैषी मंडल, जोधपुर।
(१७) पंचकूला—पं० श्रीकृष्णचन्द्रजी, संस्थापक श्रीजैनेन्द्र गुरुकुल पंचकूला।
(१८) प्रतिभाशाली आचार्य पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज ने नीचे लिखा सन्देश भेजा—

बड़ा ही हर्ष का विषय है कि पूज्य श्रीहुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय में भावी आचार्य का पद शान्त, दान्त, गम्भीर मधुर वक्ता गणेशीलालजी महाराज को दिया जा रहा है। वैरागी, प्रथम त्यागी गणेशीलालजी महाराज जैसे भावितात्मा अनगार में आचार्य पद रूप मणि को रखकर पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने शुद्ध स्वर्ण में मणि को जड़ने वाले जौहरी के समान अपनी परीक्षा-बुद्धि का परिचय दिया है। आशा है कि भावी पूज्य गणेशीलालजी महाराज अपने शुद्ध व उदार विचारों से जन मानस को पवित्र बनाते हुए महावीर के शासन को दिपाने में समर्थ होंगे।

आदर के सन्देश पढ़ जाने के बाद नीचे लिखे श्रीसंघ के प्रधान पुरुषों ने युवाचार्य पद प्रदान का समर्थन किया—

(१) बम्बई—श्रीमान् सेठ अमृतलाल भाई झवेरी।
(२) दक्षिण—दीवान बहादुर सेठ मोतीलालजी मूथा, सतारा।
(३) बीकानेर—श्रीमान् सेठ बहादुरमलजी बांठिया, भीनासर।
(४) मद्रास—श्रीमान सेठ ताराचन्दजी गेलड़ा।
(५) मारवाड़—श्रीमान् बाबू अभयराजजी मुणोत जोधपुर।
(६) मेवाड़—श्रीमान् नगरसेठ नन्दलालजी, उदयपुर।
(७) मालवा—श्रीहीरालालजी नांदेचा खाचरोद।
(८) दिल्ली—श्रीमान् लाला कपूरचन्द जी जौहरी।
(९) खानदेश—श्रीमान् रावसाहब सेठ लक्ष्मणदासजी जलगांव।
(१०) कोटा हाड़ोती—श्रीमान् सेठ बसन्तीलालजी नाहर रामपुरा।
(११) नीमच व जावद—श्रीमान् पन्नालालजी चौधरी, नीमच। इसी प्रकार अनेक श्रावकों ने भी समर्थन किया।

चादर प्रदान

चतुर्विध-संघ का अनुमोदन हो जाने पर युवाचार्यजी पूज्यश्री के सामने खड़े हुए। पूज्यश्री ने नन्दी सूत्र का पाठ किया और अपनी चादर उतारकर युवाचार्यश्री को ओढ़ा दी। चादर ओढ़ाते समय दूसरे सन्तों ने भी चादर के पल्ले पकड़ कर अपने सहयोग का प्रदर्शन किया। सवा बारह बजे यह कार्य सम्पन्न हो गया। जनता ने जयनाद के साथ अभिनन्दन किया। पूज्यश्री ने चादर ओढ़ाकर नवकार मंत्र सुनाया। चतुर्विध संघ ने युवाचार्यश्री की वन्दना की। उसके बाद पूज्यश्री ने छोटा-सा प्रवचन किया। आपने फरमाया—

श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सातवें पाट पर श्री गणेशीलालजी आचार्य नियुक्त हुए हैं। ये मेरे युवाचार्य हैं। चतुर्विध संघ का कर्त्तव्य है कि इनके वचनों को सद्दहामि, पत्तियामि, रोएमि रूप से स्वीकार करें। युवाचार्यजी का भी कर्त्तव्य है कि धर्म मार्ग में सदा जागृत रहते हुए आस्था और विवेकपूर्वक चतुर्विध संघ को धर्म मार्ग में प्रवृत्त करते रहें। मुझे विश्वास है कि युवाचार्य जी इस पद की जिम्मेवारी को दक्षतापूर्वक निभावेंगे। इनका नाम गण+ईश=गणेश है। यह नाम इस पद के कारण सार्थक हुआ है। आशा है ये उत्तरोत्तर संघ की उन्नति करेंगे।

एक बात मैं और स्पष्ट कर देना उचित समझता हूँ। मेरी आज्ञा से बाहर किए हुए घासीलालजी आदि ईर्ष्या द्वेष के कारण युवाचार्यजी म दोष बताते हैं, परन्तु मैं अपनी जानकारी के आधार पर निश्चयपूर्वक कहता हूँ कि युवाचार्यजी में दोष नहीं है। इस पर भी मुझे किसी प्रकार का पक्षपात नहीं है। यदि विश्वस्त रूप से किसी भी समय यह मालूम होगा कि युवाचार्यजी में दोष है तो मैं उनको उसी समय दण्ड देने के लिए तैयार हूँ। लेकिन द्वेषपूर्ण बात पर ध्यान देना किसी को भी उचित नहीं है।'

पूज्यश्री का प्रवचन समाप्त होने पर युवाचार्यजी के नीचे लिखे अनुसार फरमाया—

अकामी यो भूत्वा निखिल मनुजेच्छा गमयति।
मुमुक्षु संसाराम्बुनिधितरिं वत्तारय विभो। ॥
महाराग द्वेषादि कलह मन्त्र हारिज्ञामृतदानम्।
सुबुद्धि मह्य हे जिन! गणपते! देहि सततम्॥

मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि मुझे वह शक्ति प्रदान करे जो शक्ति सारे संसार का कल्याण करने वाली है। आज मुझे जो गुरुतर उत्तरदायित्व सौंपा गया है, उसे मैं ऐसी शक्ति के सहारे ही वहन कर सकता हूँ। मैं सदैव भावना रखता था कि जीवन भर आचार्य द्वारा प्राप्त आज्ञा का पालन करता हुआ सन्तों की सेवा करता रहूँ। मेरी इस भावना के विरुद्ध पूज्य आचार्यश्री एवं चतुर्विध-संघ ने मुझ अल्पशक्ति वाले को यह भार सौंपा है। इसलिए मैं नम्रतापूर्वक आचार्य महाराज से भी ऐसी शक्ति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ जिसके द्वारा मैं इस महान बोझ को उठाने में समर्थ होऊँ।

पूज्यश्री के साथ ही सन्तों ने हाथ लगा कर मुझे जो चादर प्रदान की है वह चादर तन्तुओं की बनी हुई है। संस्कृत मे तन्तु का दूसरा नाम गुण है। अर्थात् यह चादर गुणमयी है। मुझे आशा है कि इस गुणमयी चादर के साथ ही मुझे गुणों की भी प्राप्ति होगी जिससे मैं इसकी रक्षा करने में समर्थ होऊँ। यद्यपि यह गुणमयी चादर मेरी रक्षा करने मे समर्थ है तथापि इस चादर की रक्षा होना भी आवश्यक है। मुझे यह चादर आचार्य महाराज सहित सब सन्तों ने प्रदान की है और चतुर्विध-संघ ने इसका अनुमोदन किया है। इस कारण मुझे विश्वास है कि चतुर्विध-संघ इसका रक्षक है। चतुर्विध संघ ऐक्य बल से इसकी रक्षा करता रहेगा तभी इस चादर का गौरव सुरक्षित रहेगा और तभी यह संघ की उन्नति करने म भी समर्थ होगी। मैं शासननायक और गुरु महाराज से यही भिक्षा मांगता हूँ कि इस चादर के गौरव की रक्षा करने की शक्ति मुझे प्राप्त हो।

भूकम्पपीडितों की सहायता

उन दिनों बिहार प्रान्त मे भयंकर भूकम्प के कारण हजारों व्यक्ति बेघरबार होकर घोर कष्ट का अनुभव कर रहे थे। हजारों के प्राण चले गए थे और शायद हजारों जीवित रहते हुए भी मृत्यु का कष्ट भुगत रहे थे। वहाँ की दशा अत्यन्त हृदयद्रावक थी। पर दुःखकातर पूज्यश्री बिहार की इस करुणाजनक स्थिति को सुनकर बहुत क्षुब्ध थे। उत्सव के समय उसे कैसे भूल सकते थे? महापुरुष महोत्सव के समय दुखियों का करुण क्रन्दन भूल नहीं सकते। समुचित अवसर पाकर पूज्यश्री ने बिहार प्रान्त की कष्ट कथा उपस्थित श्रावकों को सुनाई और उन्हें अपने कर्त्तव्य का स्मरण दिलाया। पूज्य श्री ने फरमाया—

इस प्रकार के शुभ अवसरों पर श्रावकगण सैकड़ो जीवों को अभयदान देते हैं। इस समय भारत मे भूकम्प आया है और बिहार मे उसने प्रलय की याद दिला दी है। हजारों मनुष्यों के प्राण चले गये हैं और लाखों अन्न तथा वस्त्र के अभाव में कष्ट पा रहे हैं। मनुष्य शरीर ईश्वर की सजीव प्रतिमा है। मनुष्य, ईश्वर का प्रतिनिधि और सर्वोत्कृष्ट प्राणी है। इस कारण मनुष्य

की रक्षा करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। भूकम्प के कारण करोड़ो की सम्पत्ति भूमि के गर्भ म विलीन हो गई है। जो लोग मग्न से बच गये हैं, वे भयङ्कर सकट मे हैं, आश्रयहीन हैं। उनकी सहायता का भार उन लोगो पर है जिन्हे इस प्रकार की आपत्ति का सामना नहीं करना पड़ा है। मनुष्य परस्पर सम्बन्धित हैं इस पर भी आप जैन हैं, जैनधर्म का अनुयायी अपने-आपको कष्ट मे डालकर भी दूसरे की रक्षा और सहायता करता है। सकटग्रस्त प्राणी की रक्षा करना मनुष्य का कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य को कभी भूलना नहीं चाहिए। दूसरों की सेवा सहायता म ही आपके सामर्थ्य और द्रव्य की सार्थकता है।

धन्यवाद तथा विभिन्न सतो और सतियों के उद्‌गारों के बाद तीन बजे सभा विसर्जित हो गई। बीकानेर स आये हुए सज्जनो की ओर स प्रभावना बांटी गई।

स्व० श्रीमान् नथमलजी चोरडिया ने प्रस्तुत समारोह के उपलक्ष में 'कान्फ्रेंस भूकम्प रिलीफ फण्ड' खोलने और उसमे यथाशक्ति चन्दा देने की अपील की। परिणामस्वरूप उस थोड़े से समय में ही लगभग दो हजार रुपया एकत्र हो गया।

कुछ दिनों बाद पूज्यश्री ने ठा० १२ से बेगू (मेवाड़) की ओर तथा युवाचार्यजी ने ठा ६ स रामपुरा की ओर विहार किया। पूज्यश्री भी कदवासा, सींगोली, डीकेन, कुकडेश्वर होते हुए रामपुरा पधार गये। मुनिश्री बडे चांदमलजी म०, श्री हुक्मचन्दजी म तथा युवाचार्यजी ठा० १० से वहा पहले ही विराजमान थे। यहाँ की जैन और जैनेतर जनता ने विशाल सख्या म उपस्थित होकर पूज्यश्री के उपदेशों से लाभ उठाया। जनता ने पूज्यश्री से चौमासा करने की प्रार्थना की। उत्तर में आपने फरमाया—आपका क्षेत्र खाली नही रहेगा। यथावसर देखा जायगा। मेरा चातुर्मास न भी हो सका तो किसी अन्य सत को भेजने का भाव है। रतलाम और कपासन में चातुर्मास करने के लिए भी वहाँ के श्रीसघों की ओर से प्रार्थनाएँ की गइ। पूज्यश्री ने युवाचार्यजी का रतलाम में चौमासा निश्चित कर दिया।

यहाँ से विहार कर पूज्यश्री विविध स्थानों को पावन करते हुए युवाचार्यजी के साथ ठा० १० से मंदसौर पधारे। यहाँ बाहर स बहुत से सज्जन दर्शनार्थ उपस्थित हुए। पूज्यश्री के व्याख्यानो का जैन जैनेतर जनता को लाभ मिला। यहाँ से आप कपासन पधारे। कपासन के भाइयों का अतीव आग्रह टाल न सकने के कारण पूज्यश्री ने वहाँ चौमासा करना स्वीकार कर लिया। पूज्यश्री की इस स्वीकृति से कपासन के श्रीसघ में आनन्द छा गया।

बयालीसवां चातुर्मास (स० १९९१)

कपासन श्रीसघ क पुण्योदय की सराहना करनी चाहिए कि पूज्यश्री जैसे महान् सत का उन्हें सुयोग प्राप्त हुआ। पूज्यश्री ने ठा० ९ से विक्रम सवत् १९९१ का चौमासा मेवाड़ के इस छोटे स किन्तु महत्त्वपूर्ण कस्बे में किया। प्रवर्तिनी श्रीकेसर कुँवरजी म० ठा० ६ से तथा श्री आनकुँवरजी म० ठा० ५ वहीं विराजमान थीं।

पूज्यश्री की प्रकृष्ट प्रतिभा तथा अमृतवाणी से यहां की जनता परिचित ही थी। हजारों की सख्या म श्रोताओं का जमघट होने लगा। बाहर से भी दर्शनार्थी श्रावकों का तांता लग गया। यहाँ के जैन और अन्य भाइयों ने बड़े उत्साह के साथ आगन्तुक श्रावकों का स्वागत किया। सब लोगों ने सराहनीय उदारता प्रदर्शित की। आस पास के ग्रामों से आये हुए लोगों की इतनी भीड़ होने लगी कि प्रति दिन पचास मन आटे की पूड़िया तयार करनी पड़ती थीं। अच्छे-अच्छे घरों के नवयुवक अपने कंधे पर पानी के घड़े उठाकर लाते किन्तु अतिथियों को असुविधा नहीं देना चाहते थे। सेवा का प्रत्येक काय स्वय करने म उन्होंने अपना गौरव समझा।

पूज्यश्री के भक्तो म एक बुढ़िया खातिन उल्लेखनीय है। उस भाग्यशालिनी बुढ़िया का नाम तो मालूम नही, मगर वह बहुत अधिक वृद्धा हो गई थी। फिर भी बहुत दूर से चलकर वह पूज्यश्री का व्याख्यान सुनने आती। चातुर्मास से पहले उसने पूज्यश्री को अपने गांव म एक दिन ठहराया था और दर्शनार्थी जनता की सम्पूण व्यवस्था की थी। विदुर के घर जाकर श्रीकृष्णजी के हृष का पार नही रह। था उसी प्रकार इस धर्मशीला वृद्धा के गांव म पहुच कर और उसकी भक्ति की प्रबलता देखकर पूज्यश्री भी प्रसन्न हो गये। वृद्धा खातिन पूज्यश्री को अपना आराध नीय देव समझती थी।

चातुर्मास स पहले पूज्यश्री के शरीर में कुछ अशान्ति उत्पन्न हा गई थी। धीरे धीरे अशान्ति दूर हा गई और श्रावण कृष्णा ५ से आपने उपदेश आरम्भ कर दिया।

पयु षण के अवसर पर खूब तपस्या हुई। सवत्सरी के दिन ७१६ पौषध हुए। समाज सुधार के कई महत्त्वपूण काय भी हुए। वहा की जनता ने निम्नलिखित निण य किये —

(१) जहा कन्या विक्रय हुआ हो उस विवाह मे भोजन न करला।
(२) मृत्युभोज मे मिठाई न खाना, न बनाना। मृत्युभोज न करना या उसम न जीमना।
(३) वर विक्रय रोकने के लिए पहले से तिलक' का निश्चय न करना।
(४) भाई भाई के विरुद्ध कचहरी म फरियाद न करे।

गोगु दा के श्रावक श्रीयुत गणेशलालजी ने गर्म पानी के आधार पर ४३ उपवास किये। दलित जातियो के उत्थान आर नतिक विकास क लिए पूज्यश्री बहुत जोर दिया करते थे। बहुत स अछूत आपका व्याख्यान सुनन आया करत थे। कार्तिक महीने में चार सौ रगरों ने आपके उपदेश से प्रभावित होकर मदिरा और मास के सेवन का त्याग कर दिया।

यहीं श्रीयुत फूलचन्दजी बुड़ (मेवाड) के निवासी ने दीक्षा धारण की।

राजकोट श्रीसघ की प्रार्थना

पूज्यश्री ने अपने साधु जीवन म विभिन्न प्रान्तों मे दूर-दूर तक विहार किया था। दक्षिण महाराष्ट्र में आपने कई चातुर्मास व्यतीत किये थे। मेवाड, मालवा, मारवाड तो आपके मुख्य विहारस्थल थे ही। देहली और पजाब में भी आपका पदापण हो चुका था। सिर्फ गुजरात काठियावाड को अभी तक पूज्यश्री के विहार का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। पूज्यश्री की भारतव्यापी कीर्ति अवश्य ही वहाँ तक जा पहुँची थी। उस कीर्ति और वाणी की तेजस्विता ने गुजरात-काठियावाड की धर्मप्रेमी जनता को पूज्यश्री के दशन और उपदेश श्रवण के लिए लालायित बना रखा था। धर्मवीर श्रीदुलभजी भाई जौहरी भी इसके लिए विशेष उत्सुक थे। अपनी जन्म भूमि मोरवी में पूज्यश्री का एक चौमासा अवश्य कराना चाहते थ।

जिस प्रान्त ने धर्मवीर लोंकाशाह जस महान् सुधारक पुरुष का जन्म दिया, जिस प्रान्त म लवजी ऋषि, धर्मसिहजी धर्मदासजी आदि महान् सत हुए, उस प्रान्त मे एक बार भी पूज्यश्री जसे महान् पुरुष के चरण कमल न पडें, यह बात भला कसे बनती?

अन्तत श्रीदुलभजी भाई के साथ गुजरात-काठियावाड के श्रीसघ के निम्नलिखित प्रमुख व्यक्ति २० अक्टूबर, १६३४ को पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुए—

(१) श्रीचुन्नीलाल नागजी वारा, सेक्रेटरी श्रीसघ
(२) राव साहब ठाकरसी भाई मनकजी घीया
(३) श्रीप्राण जीवन मोरारजी एज्यूकेशन इस्पेक्टर राजकोट
(४) सेठ गोपालजी लवजी मेहता
(५) सेठ गुलावचन्दजी मेहता

(६) मठ प्रेमजी वसनजी

(७) श्रीदुलभजी त्रि० जौहरी

शिष्टमण्डल के इन प्रतिष्ठित सदस्यों ने अत्यन्त आग्रहपूर्वक काठियावाड़ में पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री तत्काल कोई निश्चित उत्तर न दे सके। आपने अवसर देखकर निश्चय करने के लिए कहा।

पूज्यश्री के विराजने से कपासन की अजैन जनता अत्यन्त प्रभावित हुई। ता० १६.११.३४ को एक सार्वजनिक सभा करके यहाँ की जनता ने पूज्यश्री के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। सभा में उपस्थित लगभग २५०० जनता ने सर्वसम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किया।

'श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज साहब का चातुर्मास यहाँ (कपासन में) होने से धर्म का उपदेश प्राप्त हुआ है और साथ ही अनेक प्रकार के पापों तथा दुर्व्यसनों का त्याग हुआ है जिससे जनता को बहुत लाभ हुआ। पूज्यश्री ने कपासन की जनता का यह उपकार किया है, उसके लिए कपासन की जनता पूज्यश्री की चिरऋणी है। तथा पूज्यश्री का चातुर्मास कपासन में कराया है इसके लिए यह सभा कपासन के जैन संघ को धन्यवाद देती है।

चातुर्मास की पूर्ति के समय बाहर की करीब ५००० जनता उपस्थित थी। मार्गशीर्ष कृ० १ को पूज्यश्री ने विहार किया। पूज्यश्री की विदाई का दृश्य बड़ा ही भावपूर्ण रहा। सब मिलकर सात हजार नर-नारी आपकी विदाई में सम्मिलित हुए।

कपासन से पूज्यश्री ने उदयपुर की ओर विहार किया। मार्ग के छोटे छोटे ग्रामों में उपदेशों का बहुत प्रभाव पड़ा। मुख्य रूप से जैनेतर जातियों ने व्याख्यान का लाभ उठाया। आसना में श्रीयुत अमीन जफरहुसेन ने, जो एक बड़े प्रसिद्ध शिकारी थे, जीवन भर के लिए शिकार करने का त्याग कर दिया। नाथद्वारा में लाला डूंगरसिंहजी ने साधु-दीक्षा अंगीकार की। आप बड़े ही सरल हृदय और सेवाभावी संत हैं। बड़े धैर्य के साथ ठाणापति संतों की प्रेमपूर्वक सेवा कर रहे हैं। आपका सेवा भाव सचमुच अन्य साधुओं के लिए अनुकरणीय है। राजा धुमान सिंहजी पर पूज्यश्री के उपदेशों का बहुत प्रभाव पड़ा। उन्होंने अपने परिवार के साथ मद्य मांस सेवन का तथा शिकार खेलने का त्याग कर दिया। पूज्यश्री गढ़वाड़ा पधारे। यह ग्राम चारणों की बस्ती है। नवरात्रि के दिनों में यहाँ करणीजी के मंदिर में बलिदान होता था। पूज्यश्री के उपदेशों से यह बन्द हो गया। पचास साठ राजपूत सरदारों ने शराब मांस, जीव हिंसा और तम्बाकू आदि का त्याग कर दिया। यहाँ से गुरली होते हुए मगसिर शु० १४ को पूज्यश्री उदयपुर पधार गए।

उदयपुर की जैन जैनेतर जनता ने आपका हार्दिक अभिनन्दन और स्वागत किया। जनता हजारों की संख्या में अगवानी के लिए सामने आई। आपके व्याख्यानों का इतना व्यापक प्रभाव हुआ कि पं० प्यारेकिशनजी कौल (भूतपूर्व दीवान मेवाड़ स्टेट) मेम्बर स्टेट कौंसिल, पं० गोपीनाथजी आगा मेम्बर स्टेट कौंसिल हाकिम मोहनचन्दजी आदि उच्च श्रेणी के राज्याधिकारियों ने विशेष रूप से प्रार्थना करके चार व्याख्यान और ज्यादा करवाए। यह सब सज्जन अपनी मित्र मण्डली को साथ लेकर व्याख्यान में उपस्थित होते थे और पूज्यश्री की सुधास्राविणी वाणी का लाभ उठाते थे।

पूज्यश्री के उपदेश से कन्या विक्रय वर विक्रय, मद्य मांस सेवन तथा परस्त्री गमन आदि अनेक पापों का श्रोताओं ने त्याग किया। कई सज्जनों ने ब्रह्मचर्य-व्रत अंगीकार किया। इस अवसर पर स्थानीय जैन शिक्षण संस्था को तथा अन्य संस्थाओं को आर्थिक सहायता मिली।

पूज्यश्री पतित पावन थे और आपकी वाणी मे उग्र सयम का ऐसा तेज अन्तर्निहित रहता था कि श्रोता प्रभावित हुए बिना नही रहते थे। उदयपुर के श्रोतावर्ग म जहाँ रियासत के उच्च से उच्च पदाधिकारी और प्रतिष्ठित से प्रतिष्ठित नागरिक जन थे, वहाँ उदयपुर की प्रसिद्ध वेश्या मुमताजबाई भी थी। पूज्यश्री का उपदेश सबके लिए समान हितकर था और उसे सुनने के लिए मनुष्य मात्र के लिए द्वार खुला था। इस लिहाज से पूज्यश्री किसी वर्ग विशेष या जाति विशेष के नहीं, सभी के थ। वह जगत की अनमोल सम्पदा थे और सारा जगत उनका अपना था। मुमताजबाई ने पूज्यश्री का उपदश सुना। उपदेश उसके अन्तर तक पहुँचा और उसका जीवनव्यापी कलुप घुल गया। उस बाई ने जीवन भर के लिए वेश्या वत्ति का परित्याग कर दिया और मांस मदिरा के सेवन का भी त्याग कर दिया। उसके त्याग का बड़ा प्रभाव पडा। स्थानीय कन्या विद्यालय की मुख्याध्यापिका ने मुमताजबाई को गले लगाया तथा बहिन कहकर उसे सम्बोधन किया। प० प्यारेकिशनजी कौल ने उस बहिन की शुद्धि के लिए पूज्यश्री का आभार माना और मार्मिक शब्दो में उसके प्रति सहानुभूति प्रकट की। मुमताजबाई ने यह सिद्ध कर दिया कि पतित समझे जाने वाले व्यक्तियो मे भी उज्ज्वल आत्मा विद्यमान रहती है। चाहिए कोई पूज्यश्री सरीखा प्रभावशाली और सहानुभूतिशील सन्त जो उस आत्मा को जगा सके, उठा सके। दुरदुराने वाले दूसरो की भलाई नहीं कर सकते।

पौषकृष्ण दशमी को पूज्यश्री ने विहार किया। प० प्यारेकिशनजी, प० गोपीनाथजी, प० गगारामजी मोहले आदि क साथ हजारो नर नारियों ने उमडत दिल से पूज्यश्री को विदाई दी।

उस दिन पूज्यश्री देहली दरवाजे के बाहर कोठारी बलवन्तसिंहजी साहब की बगीची मे विराजमान हुए। बगीची और आहिड़ गांव मे एक एक दिन विराजने की इच्छा होने पर भी जनता के अनिवार्य आग्रह स दोनो जगह तीन तीन दिन ठहरना पड़ा। महाराज खुमानसिंहजी दक्षिण प्रान्त से आये हुए दर्शनार्थी और रेलवे कर्मचारियों का विशेष आग्रह था आपके उपदेश से अनेक श्रोताओ ने मास, मदिरा तथा हिंसा आदि का त्याग किया।

यहाँ से बबोडा और कानौड होते हुए आप बडीसादडी पधारे। आपके पदार्पण के उपलक्ष्य मे एक दिन अगता पलवाया गया। जैन भाइयो के अतिरिक्त यहाँ के राजराणा श्रीदूलहसिंहजी उनके सुपुत्र कल्याणसिंहजी, ठाकुर सामन्तसिंहजी तथा दीवान गणेशरामजी आदि ने व्याख्यानो का अच्छा लाभ लिया। अनेक व्यक्तियो ने हिंसा आदि पापो का परित्याग किया।

यहाँ से विहार करके आप छोटी सादडी नीमच जीरण, मन्दसौर नगरी होते हुए फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी के दिन जावरा पधारे। उस समय युवाचार्यजी महाराज, मुनिश्री बड़े चाँदमलजी महाराज आदि सन्त सम्मिलित हो गए थे। इस प्रकार ठा० १६ से आपने जावरा मे पदार्पण किया। यहाँ भी दया, प्रत्याख्यान आदि अनेक धर्म कार्य हुए।

होली के दूसरे दिन जावरा से विहार करके आप सरसी सेमलिया, नामली आदि होत हुए चैत कृष्ण ५ को ठाणा १३ से रतलाम पधारे। जनता ने सोत्साह और अपूर्व स्वागत किया। हितेच्छु श्रावण मडल की बैठक के कारण बाहर से अनेक सज्जन आए हुए थे। सभी ने इस अवसर से अच्छा लाभ उठाया।

रतलाम श्रीसघ ने अत्यन्त आग्रह के साथ इस बार रतलाम में ही चातुर्मास व्यतीत करने की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने अवसर देखकर अपनी मर्यादा के अनुसार स्वीकृति दे दी। इस स्वीकृति से जनता के हर्ष का पार न रहा।

चैत शुक्ला ६ को पूज्यश्री न झम्मुबाई तथा सम्पतबाई को दीक्षा दी।

पूज्यश्री खाचरौद पधारे। सोलह वर्ष बाद यहाँ आपका शुभागमन हुआ था इस कारण

कई लोग तो मेरे विवेक विषयक विचार कथन को यह रूप देते हैं कि महाराज तो हाथ से रोटी बनाकर खाने का उपदेश देते हैं। और इस प्रकार बात बिगाड़कर मुझ पर सावद्य उपदेश देने का दोष लगाते हैं। लोग पाप से बचना चाहते हैं और समाज में सावद्य उपदेश देने वाले को साधु नहीं माना जाता। इस प्रकार के कथन का उद्देश्य तो यही हो सकता है कि लोगों का मन मेरी ओर से हट जाय। फिर भी आप लोगों का चित्त मेरी ओर से नहीं हट रहा है। यह पूर्वजों का प्रभाव है। फिर भी मैं आप से अनुरोध करता हूँ कि मन में किसी प्रकार की शंका न रहने दीजिए। शास्त्र में शंका कांक्षा आदि को समकित का अतिचार माना है और उन्हें 'पयाला' शब्द देकर और व्रतों के अतिचारों की अपेक्षा बड़ा माना है।

सङ्कोच, अवकाश न मिलना, प्रकट करने की सामर्थ्य न होना आदि कारणों से दिल में शंका रह जाती है। किन्तु गीता में कहा है—'संशयात्मा विनश्यति।'

श्रद्धा को सबने महत्व दिया है और कहा है—'श्रद्धामयोऽयं पुरुष, यो यच्छ्रद्धः स एव सः।' अर्थात् पुरुष श्रद्धामय है। जैसी श्रद्धा होती है वैसा ही बन जाता है। इस प्रकार श्रद्धा को सब ने बड़ा माना है। शंका से श्रद्धा में दोष आता है। श्रद्धा में दोष आने के बाद कुछ नहीं बचता। इसलिए शंका मिटाते समय सङ्कोच न करना चाहिए। शंका बनी रहने से हानि होती है।

अल्पारंभ और महारंभ का प्रश्न उन्हीं के लिए हो सकता है जो सम्यक्दृष्टि और व्रती हैं। मिथ्यात्वी के लिए यह नहीं हो सकता। जैसे जहाँ बड़ा कर्ज लदा हुआ है वहाँ छोटे कर्ज की गिनती नहीं होती। जैसे १२३५ में से बड़ी संख्या दस हजार की है। जिस पर १० हजार रुपए का कर्ज है वहाँ पाँच या पैंतालीस के लेन देन की बात नहीं होती।

जो मिथ्यात्वी है उसके लिए दूसरी बात करने की आवश्यकता नहीं रहती। किन्तु जो सम्यक्दृष्टि है उसे इस बात का विचार रखना ही चाहिए कि अल्पपाप और महापाप कहाँ कैसे होता है? मैं निश्चय से नहीं कह सकता कि यह काम अल्पपाप का है और यह महापाप का। मैं तो यह कहता हूँ कि जहाँ विवेक है वहाँ अल्पपाप है, जहाँ विवेक नहीं है वहाँ महापाप है। मैंने सदा यही कहा है कि पाप की न्यूनाधिकता विवेक पर अवलम्बित है।

जो काम महारम्भ से होता है वही काम विवेक से अल्पारम्भवाला भी हो सकता है। इसी प्रकार अल्पारम्भ वाला कार्य अविवेक के कारण महारम्भ वाला बन जाता है।

जब मेरी आयु १० वर्ष की थी उस समय की बात है। हमारे गाँव के कुछ लोगों ने गोठ करने का निश्चय किया। उसमें मक्की के भुजिए बनाये गए। उसमें मेरे मामाजी भी सम्मिलित थे। वे धर्म का विचार रखते थे। चौविहार करते थे। नित्य प्रतिक्रमण करते थे। मेरे हृदय में उनके प्रति बड़ी श्रद्धा थी। माता पिता का देहान्त हो जाने के कारण मैं उन्हें पिता की तरह मानता था।

कुछ लोगों ने भांग के भुजिए बनाने की ठानी। मामाजी ने मुझे भांग की पत्तियां लाने के लिए कहा। मैं दौड़ा गया और लगभग सेर पत्तियाँ तोड़ लाया। वह पत्तियां लाते देखकर उन्होंने मुझसे कहा—'थोड़ी भांग काफी थी, इतनी पत्तियां क्यों तोड़ लाए?' उनके हृदय में धर्म का विचार आया और मुझे कोसने लगे। मैं बच्चा था, विवेकशून्य था। इसलिए ऐसा हुआ। समझदार होता तो उतनी ही पत्तियां तोड़ता जितनी आवश्यक थी। मामाजी ने भी पहले मुझे यह शिक्षा नहीं दी। इसलिए उस महारम्भ का कारण अविवेक हुआ। यदि वे स्वयं जाते तो थोड़ी पत्तियां लाते। इसलिए उनके करने के बजाय कराने में अधिक पाप हुआ। सेठ वरदभाणजी कहते थे कि जब मैं गाँव गया तो नौकर से पानी लाने के लिए कहा। वह नीलन फूलन आदि रौंदता हुआ गया और जल्दी से अनछना पानी भर लाया।' यह अधिक पाप किसको हुआ? क्या इस पाप की जिम्मेवारी कराने वाले पर भी नहीं है? यदि सेठजी स्वयं पानी भरने जाते

और विवेक से काम लेते तो कितना आरम्भ टाल सकते थे। उन्होंने नौकर को भेजा इसलिए क्या सेठजी को पाप नहीं हुआ ? इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं जिन से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्वय करने की अपेक्षा कराने म अधिक पाप हो सकता है। यदि किसी भाई के मन में शका हो तो वह जिज्ञासु वृत्ति से पूछ सकता है।

इस धम के उत्पादक क्षत्रिय थे। उन्होंने बडे बडे राज्य किए थे। उदायन सोलह देशों का राजा था। फिर भी वह अल्पारम्भी था या महारम्भी ? इतना बडा राज्य होने पर भी विवेक के कारण वह अल्पारम्भी बना रहा। भगवान् ने विवेक मे धम बताया है। यदि विवेक में धम न होता तो यह धर्म क्षत्रियों के पालने योग्य न रहता। विवेक रखकर एक राजा बडे स बडे राज्य को चला सकता है और अल्पारम्भी बना रह सकता है।

कभी करने में ज्यादा पाप होता है कभी कराने म और कभी अनुमोदना मे। विवेक न रखने पर जितना अनुमोदना में पाप हो जाता है उतना करने और कराने म नहीं होता।

एक राजा के सामने ऐसा अपराधी आया जो फासी का अधिकारी था। राजा सोचने लगा कि मैं इसके प्राण नहीं लेना चाहता, किन्तु यदि दण्ड न दिया गया तो न्याय का उल्लघन होगा और अव्यवस्था फैल जायगी। न्याय की रक्षा के लिए राजा ने बडे सकोच के साथ उसे फांसी का हुक्म दे दिया। फासी लगाने वाले उस अपराधी को ले चले और सोचने लगे इस प्रकार दूसरों के प्राण लेने का काम बहुत बुरा है। लेकिन राजाज्ञा माननी ही पडेगी। वे अपनी विवशता और लाचारी पर पश्चाताप कर रहे थे। इस प्रकार सोचते हुए वे अपराधी को फांसी के स्थान पर ले गए।

वधस्थान पर एक और आदमी खडा था। वह उस व्यक्ति को फासी चढ़ते देखकर बडा खुश हुआ और मन ही मन अनुमोदना करने लगा।

राजा और जल्लाद काम करने पर भी मन मे अच्छे विचार होने के कारण अल्पारम्भी हैं। वह व्यक्ति कुछ न करने पर भी अपराधी है। इस प्रकार अनुमोदना से भी महारम्भ हो सकता है। इन सब म विवेक ही प्रधान है।

फासी लगाने की जगह पर और लोग भी थे। कुछ लोगो को उस पर दया आ रही थी और वे सोच रहे थे। यदि इसने पाप न किया होता तो ऐसा परिणाम क्यो होता ? हम पाप से बचना चाहिए। कुछ लोग खुश हो रहे थे। वे उसकी मृत्यु पर हर्ष मना रहे थे। इन दोना विचार वाले दर्शकों मे महापापी कौन और अल्पपापी कौन है ?

मैं यह नही कहता कि करने से ही पाप होता है या कराने से ही होता है। मैं तो सिर्फ यह कहता हूँ, जहा अविवेक है वहा महापाप है। जहा विवेक है, वहा अल्पपाप है।

एक और उदाहरण लीजिए। एक डाक्टर चीर फाड का काम जानता है। लेकिन वह कहता है कि मुझे घृणा आती है, इसलिए मैं आपरेशन नहीं करता। वह अनाड़ी कम्पाउडर से ऑपरेशन करने के लिए कहता है। ऐसी दशा मे उस डाक्टर को स्वय करने की अपेक्षा कराने में अधिक पाप है। एक डक्टर स्वय ऑपरेशन करना नही जानता वह यदि जानने वाले से कहता है कि तुम ऑपरेशन कर दो तो इस कराने में अल्पपाप है। कराना दोनों जगह समान होने पर भी एक जगह अल्पपाप है दूसरी जगह महापाप। स्वय न जानने वाला यदि जानने वाले को रोक कर स्वय ऑपरेशन करता है तो ऐसा करने मे महापाप है। ऐसे आदमी का किया हुआ ऑपरेशन यदि सफल भी हो जाय तो भी सरकार उसे अपराधी मानेगी। पहले डाक्टर के कराने पर महापाप लगा दूसरे के कराने पर अल्पपाप। तीसरे के करने पर भी महापाप। तीनों का अन्तर विवेक पर निर्भर है। इस प्रकार धम मे विवेक की परम आवश्यकता है।

एक और उदाहरण है। एक बहिन विवेकवाली है और दूसरी विवेकशून्य। विवेकवाली बहिन सोचती है कि रोटी बनाने में पाप है किन्तु अपना तथा परिवारवालों का पेट भरना ही पड़ता है। इसलिए वह विवेक शून्य बाई को रसोई के काम में लगा देती है। असावधानी के कारण उसे आग लग गई और मृत्यु हो गई। उसके मरने पर विवेकवाली बहिन क्या यह सोच सकती है कि मैं पाप से बच गई? वह सोचेगी यदि मैं स्वयं काम करती तो इतना अनर्थ न होता। इस प्रकार कराने में अधिक पाप हुआ। यदि विवेकशून्य बहिन स्वयं करने बैठ जाती है और विवेक वाली बहिन को नहीं करने देती तो उस करने में अधिक पाप है।

स्वयं करने की अपेक्षा कराने और अनुमोदन करने में एक दूसरी दृष्टि से भी अधिक पाप है। स्वयं हाथ से काम करने पर कोई कितना भी करे, फिर भी मर्यादित रहेगा। कराने पर लाखों-करोड़ों व्यक्तियों से कहा जा सकता है। करने में दो ही हाथ रह सकते हैं। कराने में लाखों करोड़ों हाथ लग सकते हैं। करने का समय भी मर्यादित ही होगा। कराने में अपरिमित समय लग सकता है। करने का क्षेत्र भी मर्यादित ही होगा। कराने में क्षेत्र की कोई मर्यादा नहीं है। इस तरह करने में द्रव्य, क्षेत्र और काल तीनों मर्यादित रहते हैं। कराने में सभी विस्तृत हो जाते हैं। इस प्रकार स्वयं करने की अपेक्षा कराने में पाप का द्वार अधिक खुला है। अनुमोदन तो इससे भी आगे बढ़ा हुआ है। करने या कराने के लिए व्यक्ति आदि साधनों की आवश्यकता होती है। किन्तु घर बैठे ही सारे संसार के कार्यों का अनुमोदन किया जा सकता है। व्यक्ति ने आवश्यकता के लिए महल बनवाया किन्तु उसकी सराहना नहीं की। देखने वाले ने उसकी बड़ी सराहना की। तो महल बनवाने वाला अल्पपापी रहा और अनुमोदन करने वाला महापापी।

विलायती कपड़ा यहां नहीं बनता, किन्तु यहां बैठे ही उसका अनुमोदन हो सकता है। विज्ञापन देखकर कह सकते हो कि यह कपड़ा बहुत बढ़िया है। यह हमें मिल जाता तो कितना अच्छा होता। इस प्रकार विलायत में होने वाली हिंसा का यहां बैठे अनुमोदन हो जाता है। इस प्रकार अनुमोदन के द्रव्य, क्षेत्र और काल करने एवं कराने से बहुत अधिक हैं। अनुमोदन का पाप ऐसा है कि बिना कुछ किए ही महारम्भ हो जाता है।

भगवती सूत्र के २४वें शतक में तन्दुल मत्स्य की कथा आई है। वह बड़े मगरमच्छ की पलकों पर रहता है और इतना छोटा होता है कि किसी जीव को नहीं मार सकता। फिर भी वह मर कर सातवें नरक में जाता है। इसका कारण अनुमोदन या विचार है। बड़े मगर के मुँह में घुसती हुई और निःश्वास के साथ निकलती हुई मछलियों को जब वह देखता है तो सोचता है यह मत्स्य बड़ा मूर्ख है। जो इतनी मछलियों को वापिस जाने देता है। मैं होता तो एक भी मछली को न निकलने देता। इसी प्रकार हिंसामय अनुमोदन से वह सातवें नरक में जाता है। करने या कराने की उसमें कुछ भी सामर्थ्य नहीं है।

पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज एक स्तवन फर्माया करते थे—

जोवड़ा मत मलो रे मो मन मोकलो, सन मोकलड रे हाणा।
जिण हीज नयणेरे निरखे सुन्दरी विनहीज बनड़ जाण॥
पुण्य तणे परिणामे विचरता मोटी निपजेरे हाण। जीवड़ा।

एक व्यक्ति जिन आंखों से अपनी बहिन को देखता है, उन्हीं आंखों से पत्नी को देखता है किन्तु दोनों दृष्टियों में महान् अन्तर है आंखें किसी को बहिन या स्त्री नहीं बनातीं। यह सारा काम मन का है। जो स्त्रियां कामी पुरुष को विलासिनियां दिखाई देती हैं वे ही महापुरुष के पास पहुँचने पर बहनें बन जाती हैं। मन से पाप भी होता है और पुण्य भी। "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः"।

कोई कह सकता है कि जैनशास्त्रों में तो मन, वचन और काय तीनों को कर्मबन्ध का

कारण माना है। यह ठीक है, किन्तु मन पर बहुत कुछ निर्भर है। बहिन और स्त्री दोनो को देखना समान होने पर भी मन के कारण पुण्य और पाप बन जाता है। बिल्ली अपने बच्चों को जब एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाना चाहती है तो मुँह म दबा कर ले जाती है। इसी प्रकार वह चूहों को भी ले जाती है। आप चूहे को छुड़ाने के लिए दौड़ते हैं किन्तु बच्चो को नही छुड़ाते। इसका कारण यही है कि दोनों जगह बिल्ली की भावना म फरक है। एक जगह हिंसा की भावना है दूसरी जगह प्रेम की। बिल्ली सब चूहो को नही मार सकती फिर यह सब की वैरिन मानी जाती है। इसका कारण यही है कि उसके मन मे सभी चूहो के विनाश की भावना समाई हुई हैं। अत मन ही पाप का प्रधान कारण है।

'मैं सच्ची प्ररूपणा कर रहा हूँ। इसमे मुझे किसी प्रकार का भय नहीं है। चाहे ऐसा करने मे प्राण चले जावें। सत्य के लिए प्राण देने से बढकर खुशी का अवसर मेरे लिए क्या हो सकता है? मैं कोई नई बात नहीं कर रहा हूँ। शास्त्र और परम्परा के अनुसार ही कह रहा हूँ। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज तथा पूज्यश्री उदयसागरजी महाराज भी ऐसा ही फर्माते थे। लेकिन आज यह कहा जा रहा है कि मैं पूज्रजी के विरुद्ध प्ररूपणा कर रहा हूँ। कहने वालों का मुँह नहीं पकडा जा सकता, किन्तु आप लोगो को सत्य का निर्णय कर लेना चाहिए। मन मे किसी प्रकार की शका नही रखनी चाहिए।

यह प्रश्न हो सकता है कि यदि कराने वाला और जिससे कराया जाय दोनों विवेकी हों तो कार्य को स्वय न करके दूसरे से कराने म क्या हानि है? उस दशा मे तो कराने मे ज्यादा पाप न होगा? इसका उत्तर यह है कि विवेक की अपेक्षा से तो कराने मे अधिक पाप नहीं है। किन्तु यदि कराने का द्रव्य क्षेत्र और काल अधिक होवे तो ज्यादा पाप लग सकता है। इस विषय म विवेक तथा मन के भावो से अधिक जाना जा सकता है।

एक और प्रश्न होता है कि सामायिक म करने और कराने का ही त्याग किया जाता है। जब अनुमोदना मे पाप ज्यादा है तो उसका त्याग क्यों नही किया जाता? बडे पाप का त्याग तो पहले करना चाहिए। इसका उत्तर यह है कि अनुमोदना का त्याग करने की शक्ति नही होती। इसलिए उसका त्याग नही कराया जाता। प्रत्येक काय शक्ति के अनुसार ही कराना ठीक होता है। एक जगह छोटी और बडी कई प्रकार की मोगरी पड़ी हुई हैं। छोटा बालक बड़ी मोगरी नहीं उठा सकता इसलिए उसे छोटी मोगरी उठाने के लिए कहा जाता है। इसका अर्थ यह नही है कि बडी मोगरियाँ छोटी हो गई और छोटी बडी। भगवान् ने शक्ति देखकर त्याग कराने का विधान किया है। उन्होंने श्रावक म इतनी ही शक्ति देखी कि वह करने और कराने का ही त्याग कर सकता है अनुमोदना का नही। तदनुसार करने और कराने के त्याग का ही विधान है। इसका अर्थ यह नही है कि करने और कराने के पाप से अनुमोदना का पाप छोटा है। आप गृहस्थ होने के कारण अनुमोदना के पाप से बच भी नहीं सकते। जिस समय आप सामायिक में बैठते हैं उस समय स्वय करने और कराने का त्याग तो करके बैठते हैं किन्तु घर, दुकान कार खाने आदि मे जो काम हो रहा है उसका त्याग नहीं करते। इसलिए अनुमोदन तो हो ही जाता है।

उत्तराध्ययन सूत्र के ५ वें अध्ययन की २० वी गाथा म बताया है कि सब श्रावक एक तरफ हो जायें और एक साधु दूसरी तरफ तो उनमे साधु ही बडा है। इसका कारण यही है। कि साधु के अनुमोदना का भी त्याग होता है। श्रावक के करने और कराने का त्याग होने पर भी अनुमोदना का त्याग नहीं होता। इसलिए अनुमोदना का पाप बडा है।

(भाद्रपद शु० ३ सम्वत १९९२)

रतलाम में पूज्यश्री के विराजने से बहुत उपकार हुआ। नौ सज्जनों ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्यव्रत अंगीकार किया। इसी प्रकार परस्त्री गमन, मादक वस्तुओं के तथा चर्बी वाले वस्त्र, रेशमी वस्त्र, आदि के भी बहुत से त्याग हुए। दया, पोषा उपवास आदि बड़ी संख्या में हुए। साधु तथा श्रावकों ने विविध प्रकार की तपस्या की। गागुदा वाले श्रावक गणेशमलजी ने ४५ तथा कानोड़ वाले श्रावक माणकचन्दजी ने २२ उपवास एक साथ किए। अन्य छोटी मोटी तपस्याएँ भी हुई।

युवाचार्यश्री को अधिकार प्रदान

पाठक यह जान ही चुके हैं कि पूज्यश्री ने जावद में मुनि गणेशलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर प्रतिष्ठित कर दिया था, किन्तु सम्प्रदाय की देखरेख और व्यवस्था का भार अब तक आप स्वयं संभालते थे। कुछ दिनों के पश्चात् पूज्यश्री ने विचार किया—'अपनी मौजूदगी में ही युवाचार्यजी को साम्प्रदायिक व्यवस्था का भार सौंप देने से अनेक लाभ होंगे। प्रथम तो मैं निश्चिन्त होकर एकाग्र भाव से आत्मसाधना में लीन हो सकूँगा, दूसरे युवाचार्यजी को विशेष अनुभव हो जाएगा और आगे चलकर उन्हें सुविधा रहेगी।

इस प्रकार विचार करके आश्विन कृष्णा ११, सोमवार, ता० २३ सितम्बर १९३१ को आचार्यश्री ने व्याख्यान में उक्त विचार की घोषणा कर दी और युवाचार्यश्री को अधिकारपत्र प्रदान कर दिया। आपने फर्माया—

मैं दक्षिण में, पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज से दूर था। लेकिन पूज्यश्री ने, न मालूम मेरे हृदय को कैसे जाना ? उन्होंने कौन जाने क्या अनुभव किया ? उदयपुर में उन्होंने सम्प्रदाय का भार मुझे सौंपना तय कर लिया। मैं दूर दक्षिण में था और वे उदयपुर में थे। सम्प्रदाय का भार मेरे ऊपर रखना साधारण बात नहीं थी। यह उनके विशाल अनुभव और विचारशीलता की हद है। पूज्यश्री को विश्वास था कि मैं जो कुछ कहूँगा उसे वह (पूज्यश्री जवाहरलाल जी म०) अवश्य मान लेगा। इसी विश्वास के आधार पर रतलाम में सब तयारी कर ली गई। मैं पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुआ। मैंने लिखित प्रार्थना की कि मुझ पर भार डालने पर भी सारा कार्य आपको ही करना होगा। पूज्यश्री ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली। मैं यह पद स्वीकार करने को विवश हो गया।

कुछ समय तक पूज्यश्री कार्य संभालते रहे। तत्पश्चात् एक दिन उन्होंने फर्माया—सब चौमासे नियत करने आदि का काम तुम्हीं करो। मेरा चौमासा भी तुम्हीं निश्चत करो। अब तुम मेरा भी चौमासा निश्चत कराओगे तो मैं प्रत्येक काम के लिए सबसे यही कहूँगा कि अब सब कुछ जवाहरलालजी जाने।' पूज्यश्री ने यह फर्माया सही, मगर मैं ऐसा न कर सका। पूज्यश्री की विद्यमानता में मैं अपने हाथ में सब कार्य न ले सका। यह किसे मालूम था कि मुझे उत्तरदायित्व सौंपने के कुछ ही समय बाद पूज्यश्री स्वर्ग सिधार जाएँगे ? पूज्यश्री जयतारण में स्वर्ग पधार गये। उस समय मैं वहाँ मौजूद न था। अचानक सम्प्रदाय का समस्त भार मेरे माथे आ पड़ा। मैं तब अनुभव करने लगा कि अगर पूज्यश्री की मौजूदगी में ही मैं काम करने लगा होता तो यह अचानक आया हुआ भार मुझे दुस्सह न जान पड़ता।

इसी अनुभव को लेकर मेरी वृद्धावस्था ने मुझे प्रेरित किया है कि जो अवसर मिला है उसका उचित उपयोग कर लिया जाय। तदनुसार सम्प्रदाय का काम भार, जैसे—दण्ड प्रायश्चित देना चौमासे निश्चत करना, सम्प्रदाय के अन्य कार्यों को संभालना आदि, मैं युवाचार्य गणेशीलालजी को सौंपता हूँ।

कई भाइयो का ख्याल है कि मैं व्याख्यान देना बद करके मौन ग्रहण कर लूँगा। लेकिन सम्प्रदाय का भार सौंपने और व्याख्यान देने के काय का एसा कोई सबध नहीं है। यह कार्य अलग है। मैं सम्प्रदाय के काय का भार युवाचायजी को सौंप रहा हूँ।

युवाचायजी को सम्प्रदाय के भार सौंपने के सबध में मैंने जो पत्र लिखा है, वह इस प्रकार है। (पूज्यश्री के आदेश से मुनिश्री जौहरीमलजी महाराज ने पढकर सुनाया)।

अधिकारपत्र

सम्प्रदाय के आज्ञावर्ती सन्तश्री बडे प्यारचदजी महाराज आदि सब सन्तो, रगूजी महासतीजी की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनीजी आनन्दकुँवरजी आदि आज्ञावर्ती सतिया, मोताजी महासती की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनीजी केसरकुँवरजी, महताबकुँवरजी, आदि उनकी सब सतिया, एव खेतांजी महासतीजी की सम्प्रदाय की प्रवर्त्तिनीजी, राजकुँवरजी आदि उनकी सब सतिया, इसी तरह पूज्यश्री हुक्मीचदजी महाराज की सम्प्रदाय के हितेच्छु सब श्रावको और श्राविकाओं से मेरी यह सूचना है कि—

(१) अखिल भारतवर्षीय श्रीसघ और मैंने श्रीगणेशीलालजी का सम्प्रदाय के युवाचाय पद पर स्थापित कर ही दिया है।

(२) अब मैं अपनी वद्धावस्था व आन्तरिक इच्छा से प्रेरित होकर आपको सूचित करता हूँ कि मेरे पर जो सम्प्रदाय की जिम्मेवारी है, अथात सारणा वारणा करना सब सन्त व सतियो को आज्ञा मे चलाना सम्प्रदाय सम्बधी कार्यों की योजना करना एव सम्प्रदाय सम्बधी नियमों का पालन करन के लिए सघ को प्रेरित करना आदि यह सब काय भार अब मैं युवाचाय श्रीगणेशीलालजी के ऊपर रखता हूँ। अत आप चतुर्विध सघ आज से सम्प्रदाय के कुल काय की देखरेख, पूछ-ताछ आज्ञा लेना आदि सब काय उन्हीं से लेवें। मैं आज से सम्प्रदाय का पूर्ण अधिकार उन्ही को देता हूँ। केवल मेरी सेवा मे जिन्हें उचित समझूँगा, उन सन्तो को अपने पास रखूँगा और उन सन्तों पर मेरी देख रेख रहगी।

(३) आप श्रीसघ ने मेरी आणा, धारणा मानकर जसा मरा गौरव रखा है, वसा ही युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी का भी रखेंगे, यह मरे को पूर्ण विश्वास है। युवाचाय श्रीगणेशीलालजी भी श्रीसघ के विश्वास पात्र हैं। अतएव श्रीसघ ने उन्हें युवाचाय पद प्रदान किया है। इसलिए इस विषय म मुझको विशेष कुछ कहने की आवश्यकता नही है।

(४) युवाचाय श्रीगणेशीलालजी के प्रति मेरी हार्दिक सूचना है कि अब आप सम्प्रदाय के पूर्वजो के गौरव को ध्यान मे रखत हुए सम्प्रदाय का और श्रीसघ का काय विवेक के साथ इस प्रकार करें कि जिससे श्रीसघ सन्तुष्ट होकर किसी प्रकार की त्रुटि का अनुभव न करे।

श्री शासनाधीश श्रमण भगवत महावीर स्वामी एव शासन श्रेयस्कर श्रीमन् हुक्ममुनि आदि पूज्यपाद महानुभावो के तपोमय तेज प्रताप से श्री युवाचाय गणेशीलाल जी इस विशाल गच्छ को सुचारु रीति से चलाकर पूर्वजों के यश शरीर की रक्षा करते हुए शोभा बढावेंगे, ऐसा मेरा ही नही श्रीसघ का पूर्ण विश्वास है।

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति

काठियावाड की प्रार्थना

एक लम्बे अर्से से गुजरात और काठियावाड की धर्मप्रिय जनता पूज्यश्री के दर्शन और उपदेश श्रवण के लिए उत्कण्ठित थी। काठियावाड प्रान्त के कतिपय प्रधान श्रावकों ने कपासन चातुर्मास के समय वहाँ आकर पूज्यश्री से काठियावाड पधारने की प्रार्थना की थी। रतलाम म फिर १५ प्रमुख सज्जनों का एक शिष्टमडल उपस्थित हुआ। मोरवी जूनागढ़ गढ्ढा, अमरेली आदि के श्रीसघो ने तारो और पत्रों द्वारा शिष्टमडल की प्रार्थना म सहकार दिया। अहमदाबाद श्रीसघ

और वहाँ विराजे हुए मुनिमंडल ने भी उस ओर पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। इस प्रबल और व्यापक आग्रह को टालना पूज्यश्री के लिए कठिन हो गया। शरीर वृद्ध था और काठियावाड़ का कष्टकर लम्बा प्रवास करना था।

पूज्यश्री ने युवाचार्यजी से परामर्श किया और द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव के अनुसार उत्तर देने का आश्वासन दिया।

श्रीहेमचन्द भाई का आगमन

उन्हीं दिनों श्री श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेंस का प्रचार करते हुए उसके अध्यक्ष श्री हेमचंद रामजी भाई मेहता ता० १६ अक्टूबर १९३५ को रतलाम पधारे। उस समय श्रावकों और साधुओं का पारस्परिक सम्बन्ध प्रकट करते हुए पूज्यश्री ने व्याख्यान में फर्माया—

भगवान् महावीर स्वामी ने श्रावकों साधुओं के लिए 'अम्मा पिया' बतलाया है। इस प्रकार प्रभु ने हम साधुओं को श्रावकों की गोद में रखा। अपनी गोद में रखते समय भगवान् ने यह लिहाज से नहीं किया कि साधु महाव्रत धारी और श्रावक अणुव्रत धारी ही होता है। उन्होंने सिर्फ यह ख्याल रखा कि जिस प्रकार माता पिता पुत्र का पालन करते हैं, उसी प्रकार श्रावक संघ का पालन करता है अतएव वह साधु के लिए भी माता पिता के समान है। भगवान का तो यह फर्मान है। अब आप श्रावक लोग हम साधुओं को सुधारोगे या बिगाड़ोगे? हमारी भूल की उपेक्षा करके हमें फिर भूल करने के लिए प्रोत्साहन देना हमें बिगाड़ना है। एक बार आदत बिगड़ने के बाद फिर सुधार होना सरल नहीं रहता।

यही बात पूज्यश्री ने नाना दृष्टान्त आदि देकर बड़ी सुन्दरता के साथ समझाई और श्रावक वर्ग को अपने उत्तरदायित्व का भान कराया।

रतलाम-नरेश का आगमन

रतलाम के महाराजा कई बार पूज्यश्री के परिचय में आ चुके थे। वे पूज्यश्री की ओजस्वनी वाणी, प्रखर प्रतिभा, उत्कृष्ट संयम आदि गुणों से परिचित थे। पूज्यश्री पर उनकी बड़ी श्रद्धा थी। पूज्यश्री जिन दिनों थली प्रान्त में विचरते थे। रतलाम नरेश उनके विषय में अक्सर पूछते रहते थे। रतलाम में चातुर्मास होने के संवाद से उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

कार्तिक शुक्ला नवमी, ता० ५ नवम्बर १९३५ को रतलाम नरेश पूज्यश्री के दर्शनार्थ एवं उपदेश श्रवण के लिए पधारे। महाराजकुमार, मेजर शिवजी साहेब कमिश्नर, डाक्टर आदि रियासत के प्रायः सभी उच्च पदाधिकारी भी उस दिन वहाँ मौजूद थे। पूज्यश्री ने राजा और प्रजा के पारस्परिक सम्बन्ध एवं कर्त्तव्य पर बड़ा ही प्रभावशाली उपदेश दिया। रतलाम-नरेश उत्कंठा के साथ पूज्यश्री के मुखचन्द्र से झरने वाले अमृत का पान करते रहे। जब उपदेश समाप्त हुआ तो पुनः सेवा में उपस्थित होने की इच्छा प्रदर्शित करते हुए गये थे। जाते समय नरेश का मुखमंडल ऐसा प्रसन्न था मानो उन्होंने कोई अनमोल और दुर्लभ वस्तु पाई हो।

और जनता? जनता की प्रसन्नता का पार न था। जहाँ तहाँ 'धन्य धन्य' की ध्वनि गूंज रही थी। ऐसे समय और प्रभावशाली पथ प्रदर्शक अगर कुछ अधिक होते तो प्रजा और राजा के बीच जो गहरी खाई पड़ गई है वह न पड़ी होती। अवाञ्छनीय संघर्ष का यह अवसर न आया होता! राजा अपने को प्रजा, का सेवक समझता और प्रजा, राजा को अपना संरक्षक समझती! दोनों का सम्मिलित स्वार्थ होता। एक का सुख दूसरे का सुख और एक का दुःख दूसरे का दुःख होता! प्राचीन भारतवर्ष की परम्परा रूपी स्वच्छ चादर में जो अनेक मैले धब्बे लग गये हैं वे न लगे होते? मगर इस विशाल देश में एक निस्पृह उपदेशक जो कर सकता है, उससे कहीं बहुत अधिक पूज्यश्री ने कर दिखाया। उन्होंने नरेशों के नेत्र खोले, प्रजा को प्रतिबोध दिया और दोनों में नीति और धर्म को प्रतिष्ठित करने का प्रशस्त प्रयास किया।

बीकानेर की विनति

इसी अवसर पर बीकानेर श्रीसघ के प्रमुख श्रावक पूज्यश्री स बीकानेर की ओर पधारने की प्राथना करने आये। पूज्यश्री के समक्ष काठियावाड का प्रश्न उपस्थित था। अतएव पूज्यश्री ने उत्तर मे फर्माया— यदि मैं काठियावाड न गया तो बीकानेर फरसे बिना कहीं की विनति स्वीकार नही करूंगा।

विहार

चातुर्मास समाप्त होन पर पूज्यश्री ठा० १० से सलाना पधारे। यहां आपके तीन चार व्याख्यान हुए। जनता तया राज्याधिकारियो की प्राथना स्वीकार करके मगशिर कृष्णा ७ को आपका एक विशिष्ट व्याख्यान हुआ। इस व्याख्यान की प्रशसा सुनकर नवमी को सैलाना नरेश ने व्याख्यान सुनने की अभिलाषा प्रकट की। मगर अष्टमी की रात्रि को अचानक पूज्यश्री के कान म दर्द हो उठा अत दूसर दिन आपका व्याख्यान न हो सका। दो तीन दिनो तक इलाज करने के पश्चात भी दद कम नहीं हुआ। अतएव छाटे ग्रामो में घूमने का कायक्रम स्थगित करके आप अमावस्या का रतलाम पधार गये।

कुछ दिना पश्चात युवाचार्यश्री भी पूज्यश्री की सेवा म पधार गय। इलाज तथा संयम से पूज्यश्री के कान का दद कुछ कम हो गया। पौष शुक्ला दशमी को आप ठा० १४ से जावरा की ओर पधार गय।

कुछ दिन जावरा विराजकर पूज्यश्री निम्बाहेडा, चित्तौड, भीलवाडा आसीन, गुलाबपुरा विजयनगर, बदनौर आदि स्थानो को पवित्र करते हुए चैत्र कृ० १८ को ब्यावर पधारे।

दो आचार्यो का सम्मिलन

पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज ने मारवाड मे विचरत हुए पूज्यश्री से मिलने की इच्छा प्रकट की थी। तदनुसार अजमेर की ओर आपका विहार भी हो चुका था। पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज चैत्र शुक्ला ५ मगलवार का प्रात काल जेठाणा पधार गये। उसी दिन सायकाल पूज्यश्री भी युवाचायजी के साथ ११ ठाणो से जेठाणा पधारे।

दोना आचाय प्रेम और वात्सल्य के साथ परस्पर मिले दा दिन एक ही जगह व्याख्यान हुआ। दोना आचार्यो का एक ही स्थान पर विराजमान हाने का सवाद पाकर जोधपुर, अजमेर मालवा मेवाड मारवाड काठियावाड आदि से सकडो श्रावक दशनाथ आ पहुंचे। जोधपुर और अजमेर के श्रीसघ ने अपने-अपने यहां दोनो आचार्यो स इकट्ठा चातुर्मास करने की प्रायना की। उधर काठियावाड की ओर म श्रीचुन्नीलाल नागजी वोरा राजकोट निवासी ने काठियावाड की ओर पदापण करने की प्रायना की। ब्यावर बीकानेर और चित्तौड के श्रीसघा ने भी आग्रह किया।

ऐसे प्रसग बडे विकट होते हैं। सदय हृदय किसे निराश करे? और औदारिक शरीर से एक साथ अनेक जगह पहुंचे भी कैसे? अतएव पूज्यश्री ने युवाचायजी तथा प्रधान श्रावकों के साथ इस विषय पर विचार विमर्श किया। अन्त मे काठियावाड की ओर पधारना निश्चित हुआ। पूज्यश्री न ता० २९ ३ ३६ का निम्नलिखित अभिप्राय व्यक्त किया—

द्रव्य, क्षेत्र काल और भाव की अनुकूलता हो और हम दोनों को साथ रहने का अवसर मिले यह हम दाना चाहत हैं। परन्तु पूज्य हस्तीमलजी ने जयपुर फरसन की वहां के श्रीसघ को आशा बंधाई है अतएव उन्हे जयपुर पधारना पडेगा। हम दानो के मिलाप से आनन्द हुआ है। प्रेम की वृद्धि हुई। आशा है वह प्रेम भविष्य म बढता ही रहेगा।

मैंने बीकानेर-श्रीसघ को यह वचन दिया है कि काठियावाड न गया तो बीकानेर फरसे बिना अन्यत्र चौमासे की स्वीकृति देने का भाव नहीं है। अतएव बीकानेर जाऊं तो अजमेर भी

पहुँचने का समय नहीं है और न इतनी शारीरिक शक्ति ही शेष है। काठियावाडी भाइयों का बहुत समय से तीव्र आग्रह है और इनके कथन से मालूम होता है कि उधर जाने से विशेष उपकार होगा। मुख्य मुनियों और श्रावकों के साथ विचार विनिमय करने के बाद मैं कहता हूँ—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार छूट रखकर, कोई साम्प्रदायिक मामला हो और बीच में रुकावट आ पड़े तो बात अलग, वर्ना सुख-समाधे राजकोट चातुर्मास के लिए काठियावाड़ की ओर विहार करने का भाव है। रुकावट का कारण उपस्थित होने पर राजकोट-श्रीसंघ को सूचना दी जाय तो वह उदारतापूर्वक मुझे छुट्टी दे दे।

काठियावाड़ का लक्ष्य करके पूज्यश्री युवाचार्यजी के साथ फिर ब्यावर पधार गए। ब्यावर से पाली की ओर विहार हुआ। वैसाख कृष्णा ६ को पूज्यश्री १६ ठाणों से पाली पधार गये। एकादशी को वहां से विहार किया और सांडराव पधारे। यहाँ तक युवाचार्यजी आदि सभी संत साथ रहे। इसके बाद युवाचार्यजी ने मालवा तथा मेवाड़ की ओर विहार किया और पूज्यश्री ने, पं० मुनि श्रीसिरेमलजी महाराज आदि ने ठा० ६ से काठियावाड़ की ओर प्रस्थान किया।

गुजरात के प्रागण मे

गुजरात और काठियावाड़ की जन जनता पूज्यश्री की ऐसी प्रतीक्षा कर रही थी जैसे पपीहा मेघ की प्रतीक्षा करता है। भले ही पूज्यश्री प्रथम ही बार इस प्रान्त में पदार्पण कर रहे थे मगर आपकी कीर्ति तो भारतवर्ष के कोने कोने में व्याप्त चुकी थी। आपके यश के सौरभ से कौन प्रांत वंचित रहा था? आपके असाधारण तेज की प्रखर किरणावली सभी दिशाओं को आलोकित कर चुकी थी। यही कारण था कि ज्यों ही आपने गुजरात की सीमा में प्रवेश किया कि उस प्रान्त के श्रद्धाशील और भावुक भक्त श्रावक आपके दर्शनों के लिए उमड़ पड़े। यहाँ की सुपात्र जनता को देखकर पूज्यश्री को भी विशेष हर्ष हुआ। सुयोग्य पात्र पाकर उपदेशक को हर्ष होना स्वाभाविक था। इस प्रदेश में आकर पूज्यश्री ने जनता की सुविधा के लिए गुजराती भाषा में उपदेश देना आरम्भ किया।

वैसाख शुक्ला १५ को आप पालनपुर पधारे। उधर अहमदाबाद की ओर से मुनिश्री बड़े चांदमलजी महाराज तथा मुनि श्रीघासीलालजी महाराज ठा० ५ पधार गये। ज्येष्ठ कृष्ण ६ तक पालनपुर विराजमान रहकर मेहसाणा होते हुए आचार्य महाराज वीरमगाम पधारे।

काठियावाड मे

पूज्यश्री जब वीरमगाम पधारे तो वहां की जनता में अपूर्व उत्साह का वातावरण फैल गया। जनता ने बड़ी दूर तक सामने जाकर पूज्यश्री का स्वागत किया और चिरकाल से हृदय में जो भावना रही हुई थी उसे सफल किया। सेठ हठी भाई श्रीसोभागचन्द की धर्मशाला में पूज्यश्री का प्रवचन हुआ। मूर्तिपूजक जैन तथा जैनेतर भाई भी पर्याप्त संख्या में उपस्थित हुए अहमदाबाद के सेठ मणि जसिंह भाई आदि प्रमुख गृहस्थ एवं राजकोट के प्रतिनिधि भी दर्शनार्थ उपस्थित हुए।

ता० ३१ ५ ३६ को वीरमगाम से विहार करके पूज्यश्री ता० ४ ६ ३६ को सायंकाल बढवाण शहर में पधारे। शहर तथा छावनी की जनता विपुल-संख्या में पूज्यश्री के स्वागतार्थ दूर तक सामने गई। दूसरे दिन महाजनवाडी में विशाल जनसमूह के समक्ष पूज्यश्री का प्रवचन हुआ। पूज्यश्री ने परमात्मा की महिमा भावमयी वाणी में समझाई और जीवनोपयोगी विषयों पर व्याख्यान फरमाया।

इस व्याख्यान में राजकोट संघ तथा युवक-संघ के प्रमुख व्यक्ति उपस्थित थे। मध्याह्न में युवक-संघ के प्रतिनिधि पूज्यश्री की सेवा में आये। उस समय जैन समाज की परिस्थिति,

उपदेश के विषय, प्रजा और राजा का अस्तित्व, युवकों का कर्तव्य इत्यादि विषयों पर वार्तालाप हुआ। राजकोट मे होने वाली काठियावाड जैन युवक परिषद् के विषय में भी चर्चा हुई।

बढवाण शहर म दूसरा व्याख्यान फरमाकर आप बढवाण कैंट पधार गये। यहा राजकोट से आई बहुसख्यक जनता भी मौजूद थी। पूज्यश्री से अपने अपने क्षेत्रो म पधारने की प्रार्थना करने के लिए बोटाद तथा लाठी आदि सङ्घो के प्रतिनिधि भी यहा उपस्थित हुए। रविवार को बढवाण छावनी म उपदेश फरमाकर पूज्यश्री मूली, चोटीला आदि होते हुए ता० १७ ६ ३६ को राजकोट पधार गये।

सासारिक स्वार्थों के आधार पर जगत् मे जितने भी वर्ग खडे हैं, पूज्यश्री उन सबसे ऊँचे उठे हुए महापुरुष थे। वे किसी एक वर्ग के नहीं थे फिर भी, और शायद इसीलिए सभी वर्ग के थे। वे सभी को समान दृष्टि से देखते थे और इसीलिए सभी वर्ग उन्हें समान श्रद्धा भाव से झुकते थे। राजा प्रजा अमीर गरीब आदि का कोई भी भेद भाव उनके लिए नहीं था। अतएव इस विहार म भी चोटीला आदि के साहबान ने भी पूज्यश्री के दर्शन और उपदेश-श्रवण का लाभ लिया। मूली के ठाकुर साहब श्री हरिश्चन्द्रसिंह जी, कुमार सुरेन्द्रसिंहजी तथा जयेन्द्रसिंह जी एव वहा के दीवान साहब आदि ने उपदेश सुनकर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट की।

राजकोट-प्रवेश

ता० १७ ६ ३६ से शुभ मुहूर्त्त म पूज्यश्री ने राजकोट मे पदार्पण किया। राजकोट म उस दिन असीम उल्लास का प्रसार था। वनवास की अवधि समाप्त करके रामचन्द्रजी जब पुन अयोध्या मे आये होंगे और अयोध्यावासियो के हृदय में जो आनन्द उमडा होगा, राजकोट के नर-नारियों को देखकर उसकी कल्पना साकार सी हो उठती थी। जिधर देखो उधर चहल-पहल ही दृष्टिगोचर होती थी। नर, नारी बालक और बालिकाएँ उमगो से उछलते हुए, कतार-सी बाँधे उसी ओर बढे चले जाते थे, जिस ओर से पूज्यश्री का आगमन होता था। बहुत से लोग मीलो तक पूज्यश्री के सामने पहुँचे।

नये गाव से राजकोट आते आते तो एक लम्बा जुलूस बन गया। इम्पीरियल बैंक के सामने पहले से ही हजारों स्त्री पुरुष एकत्र थे। पूज्यश्री जसे ही वहा पधारे कि एक विशाल जनसमूह और उमड पडा।

जैन बालाश्रम मे पहुँचकर पूज्यश्री ने एक सक्षिप्त व्याख्यान देते हुए कहा— आज मैं जो उत्साह देख रहा हूँ, आशा है उसे आप लोग स्थायी बनाये रखेंगे।

सघ के मन्त्री रायसाहब मणिलाल शाह ने पूज्यश्री का उपकार माना। तत्पश्चात् स्थानीय युवकों की ओर से जैन-युवक सङ्घ के मन्त्री श्री जटाशकर मेहता ने पूज्यश्री का स्वागत तथा उनकी प्रभावक व्याख्यान शैली और समाज को जगाने की भावना की सराहना की।

प्रत्युत्तर देते हुए पूज्य श्री ने कहा—'महाप्रभु महावीर के आदेशानुसार उपदेश देना हमारा मार्ग है। उसी मे समाज तथा राष्ट्र की उन्नति का समावेश हो जाता है।

इसके पश्चात् पूज्यश्री ने तीन दिन मौन और उपवास मे व्यतीत किये। पण्डित मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज ने व्याख्यान फरमाया।

ता० २२ जून को स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की स्वर्ग तिथि मनाई गई। तत्पश्चात पूज्यश्री शहर म पधारे। जनता ने एक लम्बा और व्यवस्थित जुलूस का रूप धारण कर पूज्यश्री का स्वागत किया। जैनशाला तथा बालाश्रम आदि के बालक एक सी पोशाक पहनकर सम्मिलित हुए, इस कारण जुलूस अधिक भव्य दिखाई देने लगा। शहर से मुख्य मुख्य स्थानो मे होता हुआ जुलूस महाजनवाडी में पहुचा। चातुर्मास म पूज्यश्री उसी स्थान म ठहरने वाले थे।

चालीसवां चातुर्मास (सम्वत् १९९३)

संवत १९९३ का चातुर्मास पूज्यश्री ने राजकोट में व्यतीत किया। पूज्यश्री दशाश्रीमाली महाजनों की भोजनशाला के विशाल भवन में विराजमान हुए थे। ३० ठाणों से महासतियाँ भी राजकोट में विराजती थीं। जैनेतर हिन्दू भाइयों के अतिरिक्त अनेक मुस्लिम भाइयों ने भी पूज्यश्री के उपदेश का अच्छा लाभ उठाया।

राजकोट दरबार की श्री धीरजलालजी साहब, स्टेट और एजेंसी के छोटे बड़े अधिकारी तथा बाहर से आए मेहमानों ने भी पूज्यश्री का वचनामृत पान करके लाभ उठाया। बाहर के बहुत से गृहस्थ, मकान किराये पर लेकर चातुर्मास भर पूज्यश्री की सेवा में रहे और सद्वाणी श्रवण तथा समागम से अपने जीवन की कृतार्थता साधने लगे।

प्रातःकाल साढ़ेसात बजे पण्डित मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज गुजराती भाषा में व्याख्यान फरमाते थे। नवयुवकों का धर्म की ओर प्रवृत्ति करने में उनकी बड़ी लगन थी। आठ बजते ही पूज्यश्री व्याख्यान मण्डप में पधारते। उस समय वहाँ के वातावरण में सहसा स्फूर्ति समा जाती। पूज्यश्री भी गुजराती में ही व्याख्यान फरमाते थे। प्रतिदिन प्रारम्भ में आप प्रार्थना करते, प्रार्थना पर हृदयस्पर्शी विवेचना करते। तत्पश्चात् शास्त्र बाँचते और अन्तिम समय में कथा सुनाते थे। पूज्यश्री ने जब सती जसमा की कथा सुनाई तो श्रोताओं की आँखों से आँसू बहने लगे। जसमा का गुजरात के इतिहास में अमर नाम है। उसका चरित्र उदात्त, तेजस्वी और आदर्श है। सती जसमा बड़ी भाग्यवती निकली कि पूज्यश्री जैसे वक्ता उसे मिले। उन्होंने सती जसमा का चरित्र भी अमर बना दिया। जनता पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा। इसी प्रकार शील के मूर्तिमन्त सेठ सुदर्शन की कथा भी अत्यन्त भावपूर्ण, हृदय को हिला देने वाले और मर्मस्पर्शी शब्दों में आपने सुनाई। कोई भी कथा पूज्यश्री की वाणी का सहयोग पाकर निहाल हो जाती थी। पूज्यश्री के व्याख्यानों में धर्म और व्यवहार का अपूर्व सामंजस्य होता था। जैसे मानव जीवन अखण्ड है—उसे धर्म और व्यवहार के क्षेत्र में बाँटा नहीं जा सकता, आत्मा के दो विभाग नहीं हो सकते, उसी प्रकार जीवन को समुन्नत बनाने के लिए अखण्ड रूप से धर्म और व्यवहार के समन्वय की आवश्यकता है। व्यवहार धर्म शून्य और धर्म व्यवहारहीन होगा तो उससे आत्मा का उत्थान होना सम्भव नहीं है। मगर इस मर्म को बहुत कम लोग समझ पाते हैं। उपदेशक भी बहुत से इस तथ्य से अनभिज्ञ हैं। यही कारण है कि व्यावहारिक जीवन में धर्म का अभाव देखा जाता है और अनेक लोग व्यवहार से विमुख होकर धर्म की साधना का प्रयत्न करते हैं। मगर यह कल्याण का मार्ग नहीं। पूज्यश्री ने धर्म और व्यवहार का समन्वय स्थापित करके धर्म को सजीव और व्यवहार को समृद्ध बनाने का महत्वपूर्ण प्रयत्न किया। यही कारण था कि आपके व्याख्यानों में राष्ट्रीयता के अंगभूत तत्वों का भी समावेश बड़ी सुन्दरता के साथ होता था। आप यथा समय कुरीति निवारण मनुष्य कर्तव्य, कन्या विक्रय, वर विक्रय बाल वृद्ध विवाह मृतक के पीछे रोना आदि आदि व्यावहारिक समझे जाने वाले विषयों पर भी प्रभावशाली प्रवचन करते थे। आपके उपदेश से बहुतों ने बीड़ी-सिगरेट पीना छोड़ दिया। अस्पृश्यता निवारण पर तो आप अत्यधिक भार देते और अस्पृश्यता को जैन धर्म से विरुद्ध समझते थे।

दैनिक उपदेश के अतिरिक्त मानव धर्म ब्रह्मचर्य सन्तति नियमन आदि विषयों पर आपके विशिष्ट भाषण भी हुए। आपके उपदेशों का श्रोताओं पर अच्छा प्रभाव पड़ा। पन्द्रह भाइयों ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत अंगीकार किया, जिनमें श्रीचुन्नीलाल भाई नागजी वोरा, श्रीअम्बा भाई श्रीमलूकचन्दजी भाई तथा कुचेरा (मारवाड़) निवासी श्रीवारधचन्दजी डा० मेघजी भाई के नाम उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार बीड़ी, विदेशी खांड, चर्बी लगे वस्त्र आदि भी अनेक भाइयों ने

त्यागे। संघ के मृतक के पीछे रोने पीटने की प्रथा सर्वथा बन्द कर दी। सदर में मारे जाने वाले कुत्तो की रक्षा के लिए एक समिति बनी। अहमदनगर जिला में पड़े दुर्भिक्ष से पीडित जनता की सहायता के लिए २२००) रु० सहायता भेजी गई। पर्युषण के समय स्थानीय पिंजरापोल के लिए चन्दा इकटठा किया गया और उसमे भी लगभग २२००) की रकम भरी गई। पर्युषण की आठ तिथियो के लिए ५५१) रु० प्रतितिथि के हिसाब से ४४०८) रु० भरे गये। श्री जैन गुरुकुल ब्यावर को १२५०) रुपया की सहायता प्राप्त हुई। अन्य संस्थाओ को भी यथायोग्य सहायता दी गई। कुल ३००००) के लगभग सार्वजनिक कार्यो मे लगाए गए। अनेक भाइयो और बाइयो ने विविध प्रकार की तपस्या की। पर्युषण के दिनो मे लगभग १० हजार श्रोता प्रतिदिन व्याख्यान का लाभ उठाते थे।

पूज्यश्री अमोलकऋषिजी म० का स्वर्गवास

ता० १४ ९ ३६ को धूलिया पूज्यश्री अमोलकऋषिजी महाराज का स्वर्गवास हो गया। यह संवाद जब पूज्यश्री के पास पहुचा तो आपको अत्यन्त खेद हुआ। राजकोट श्रीसंघ मे शोक छा गया। उनकी स्मृति मे व्याख्यान बन्द रखा गया और चार 'लोगस्स' का ध्यान किया गया। उसी समय जीव दया के निमित्त चन्दा इकटठा किया गया। पूज्यश्री अमोलकऋषिजी महाराज के स्वर्गवास से जैन संघ मे जो कमी हुई, इसके लिए पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने व्याख्यान मे दुःख प्रकट किया।

महात्मा गांधी की भेंट

पूज्यश्री जब राजकोट मे विराजमान थे, तब २९ अक्टूबर को महात्मा गांधी भी कार्यवश राजकोट आये। पूज्यश्री की उपदेश शैली से उत्कृष्ट और उदार विचारो से तथा उनकी उच्च श्रेणी की संयमपरायणता से महात्माजी पहले ही परिचित हो चुके थे। अहमदाबाद से रवाना होते समय ही आपको मालूम हो गया था कि पूज्यश्री राजकोट मे विराजमान है और उसी समय आपने पूज्यश्री से भेंट करने का विचार भी कर लिया था।

महात्माजी का इधर उधर निकलना बडा कठिन होता है। जनता को मालूम हो जाय कि गांधीजी अमुक समय अमुक जगह आने वाले हैं तो वहाँ हजारो की भीड इकटठी हो जाती है। इस भय से गांधीजी ने अपना इरादा किसी पर प्रकट नही किया। जिस दिन राजकोट से विदा होने वाले थे उस दिन सन्ध्या से कुछ पहले ही आपने पूज्यश्री के पास आने का समय कहला दिया। तदनुसार गांधीजी आ पहुँचे। जनता को पता नहीं चल सका, अतएव बडी शान्ति से दोनों महापुरुष मिले।

गांधीजी ने कहा—जब मैं अहमदाबाद से रवाना हुआ, तभी से आप से मिलने की इच्छा थी। मैं राजकोट आऊँ और आप से बिना मिले चला जाऊँ, यह संम्भव ही नहीं था। मेरी इच्छा तो आपके उपदेश मे आने की थी, मगर लोग व्याख्यान सुनने नहीं देते। क्या किया जाय?

इस प्रकार प्रारम्भिक वार्त्तालाप होने के बाद पूज्यश्री ने फरमाया—'देखिए यह सामने घडी टँगी है। इसकी दोनो सुइयाँ चल रही हैं यह बात तो सभी लोग देखते हैं, पर इन सुइयो को चलाने वाली मशीनरी इसके भीतर है। उसे कितने लोग जानते हैं? असल चीज तो मशीनरी ही है।

गांधीजी ने सौम्य मुस्कराहट मे उत्तर दिया।

इसी प्रकार की कुछ और बातचीत के बाद गांधीजी रवाना हो गए।

आगामी चौमासे के लिए विनतियां

पूज्यश्री के चातुर्मास का सारे काठियावाड प्रान्त पर बहुत अधिक प्रभाव पडा। वहाँ की जनता ने पूज्यश्री के विषय मे जो प्रशंसात्मक बातें सुनी थी, वे सब उन्हें हीनोक्तियाँ प्रतीत हुई।

पूज्यश्री के अगाध सिद्धान्तज्ञान, द्रव्य क्षेत्र भाव का परखने का अद्भुत कौशल, चमत्कारपूर्ण वक्तृत्व शैली, विशाल प्रकृतिपर्यवेक्षण आदि गुणों के कारण आपका प्रभाव इतना अधिक पड़ा कि सारा काठियावाड़ आपके समागम के लिए उत्कंठित हो उठा। राजकोट का यह चातुर्मास समाप्त भी न होने पाया था कि जगह जगह से भाई आगामी चातुर्मास की प्रार्थना करने लगे। मोरवी, पोरबन्दर और जामनगर के श्रीसंघों ने भी चौमासे के लिए प्रार्थना की। रावसाहब सेठ लक्ष्मणदासजी तथा कुँवर गंभीरमलजी ने जलगांव के लिए आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। यह प्रार्थना अत्यन्त भावमय आग्रहपूर्ण और उत्साहप्रेरक थी। उसमें कहा गया था—

'यह दास आपकी सेवा में आज अपने हृदय की बहुत दिनों की अभिलाषा को प्रार्थना रूप में प्रकट कर रहा है। इस प्रयत्न में धृष्टता और उद्दण्डता भी सम्भव है, लेकिन जिस प्रकार पुत्र अपने श्रद्धाभाजन पिता से कुछ चाहने की धृष्टता एवं उद्दण्डता करता है मेरी धृष्टता और उद्दण्डता भी उसी सीमा की है इसलिए सर्वथा क्षम्य है।

'इस दास को उन स्वर्गीय पूज्यश्री १००८ श्रीलालजी महाराज की सेवा का भी सुयोग प्राप्त हुआ है जिनका जैन संसार चिरऋणी है। आचार्यश्री के गुणों, आचार्यश्री की प्रतिभा और शास्त्र-कुशलता से प्रायः सभी लोग परिचित हैं। ऐसे आचार्यश्री की सेवा का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। लेकिन दुर्भाग्यवश मेरी यह अभिलाषा—जो मैं आपकी सेवा में निवेदन करना चाहता हूँ—अपूर्ण ही रही। आचार्यश्री ने श्रीमान् को जब युवाचार्य पद दिया और वे साम्प्रदायिक कार्य से अलहिदा मुक्त हुए, उस समय मेरी भावना थी कि अब थोड़े ही काल में अनुनय विनय पूर्वक मैं आचार्यश्री को जलगांव ले आऊँगा और आचार्यश्री वृद्धावस्था में अन्त तक सेवा का लाभ लूँगा। मैं अपनी इस भावना को प्रकट भी नहीं कर सका और आचार्यश्री असमय में ही स्वर्ग सिधार गए।'' ''

'श्रीमान् का शरीर अब वृद्धावस्था को प्राप्त हुआ है। श्रीमान् ने सम्प्रदाय का कार्य भी विद्वान् एवं सुयोग्य युवाचार्य श्री १००७ श्री गणेशीलालजी महाराज को सौंप दिया है। साम्प्रदायिक कार्य से अब आप श्रीमान् बहुत कुछ निवृत्त हैं। वृद्धत्व भी पहले की तरह उग्रविहार करने से रोकता है। श्रीमान् का शरीर अब किसी एक स्थान पर रहकर शान्ति चाहता है। इसलिए मैं निवेदन करता हूँ कि श्रीमान् जलगांव पधार कर सदा के यहीं यहीं विराजें।

जलगांव में श्रीमान् के विराजने से मेरे श्रावक भाइयों को भी सब प्रकार से सुभीता रहेगा। जलगांव भारत के मध्य में है। इसलिए पंजाब और मद्रास तथा कलकत्ता और सिंध के लोगों को समान दूर पड़ेगा।

अन्त में मेरा यही निवेदन है कि आप श्रीमान् वृद्ध हुए हैं और मैं भी वृद्ध हुआ हूँ। इसलिए आप जलगांव में विराजकर मुझको तथा अन्य दक्षिण निवासियों को अपनी सेवा का लाभ देने की कृपा कीजिए। आपके द्वारा उत्तर भारत का बहुत उपकार हुआ है अब दक्षिण भारत को भी पावन कीजिए।

रावसाहब की प्रार्थना लम्बी थी। उसके कतिपय अंश ही यहाँ उद्धृत किए गये हैं। इस प्रार्थना से उनकी मनोभावना और पूज्यश्री की सेवा की उत्कटता टपकी पड़ती है। आपने पूज्यश्री से शास्त्रोद्धार के कार्य के लिए भी प्रार्थना की थी और उसमें आवश्यक रकम लगाने का भी विचार प्रकट किया था।

यह सब प्रार्थनाएँ सुनकर पूज्यश्री ने ४-१०-३६ को व्याख्यान में निम्नलिखित उत्तर फर्माया —

मेरे समक्ष मोरवी, पोरबन्दर और जामनगर के श्रीसंघ की विनति आयी है। एक विनति

सेठ लक्ष्मणदासजी जलगांववालों की है। वह विनति विवेक से भरी है कि जब मैं काठियावाड़ छोड़ूँ तब जलगांव ठहरूँ और शास्त्रों का उद्गार करूं। उनकी प्रार्थना की शक्ति ऐसी है कि वह जिसे चाहें, अपनी ओर खींच सकती हैं। धनवान् तो बहुत हैं किन्तु धन का सदुपयोग करने की उदारता रखने वाले कम होंगे। सेठजी ने शास्त्रीय कार्य के लिए जो उदारता दिखाई है, वह कार्य चाहे कभी भी हो, और मैं अपने को उसके लिए समर्थ भी नहीं मानता लेकिन इन्होंने तो विनति करके पुण्य कमा ही लिया और अपने साथ अपने उत्तराधिकारी का खड़ा करके बता दिया कि यह मेरा पुत्र केवल मेरे धन का उत्तराधिकारी नहीं है किन्तु मेरे धर्म का भी उत्तराधिकारी है। सेठजी ने तो इस तरह उदारता दिखाई। आपको भी इसका अनुमोदन तो करना ही चाहिए।

समाज की स्थिति उसके साहित्य से ही है। मैंने एक पुस्तक में पढ़ा था—हमारा और चाहे सब कुछ चला जाय लेकिन यदि हमारा साहित्य बचा रहेगा तो हम सब-कुछ कर सकते हैं। वास्तव में जिस समाज का साहित्य अच्छा है वह समाज उन्नत हो सकता है। इसलिए आप अनुमोदन करके तो सुकृत उपार्जन कर ही सकते हैं।

इन सब विनतियों का उत्तर देने से पहले मैंने अपने संतों और खास खास श्रावकों से परामर्श किया। सभी की यह सम्मति है कि अभी एक वर्ष और काठियावाड़ में विचरना ठीक होगा। यह सम्मति होने पर भी मुझे अपनी आत्मा से विचार करना है। आगामी चौमासा कहां किया जाय, यह तो अभी कह ही नहीं सकता, लेकिन एक वर्ष काठियावाड़ में ही विचरने की बात निश्चित रूप से कहना भी कठिन है। अतएव यही कहता हूँ कि यदि मेरा एक वर्ष या कम-ज्यादा काठियावाड़ में रहना हुआ तब मैं दूसरी रीति से विहार करूँगा और यदि जाना हुआ तो अलग रीति से। अभी किसी भी विनति का निश्चयात्मक उत्तर देने में मैं असमर्थ हूँ। आप सबकी प्रेमभरी प्रार्थना मेरे ध्यान में है और सेठ लक्ष्मणदासजी की प्रार्थना भी ध्यान में रहेगी। द्रव्य क्षेत्र काल भाव के अनुसार जैसा अवसर होगा, किया जायगा।

कार्तिकी पूर्णिमा के दिन बीकानेर श्रीसंघ ने भी प्रार्थना की, किन्तु उसे भी कोई निश्चित उत्तर नहीं मिल सका।

सरदार पटेल का आगमन

ता० १३ अक्टूबर को तीन बजे सरदार वल्लभभाई पटेल पूज्यजी के दर्शनार्थ पधारे। सरदार का आगमन सुनकर दूसरी जनता भी बड़ी संख्या में एकत्रित हो गई। उन दिनों गांधी सप्ताह चल रहा था। अतएव आगत जनता को पूज्यश्री ने गांधी सप्ताह के संबंध में अपना संदेश दिया—महात्मा गांधी के मौखिक यशोगान मात्र से गांधी सप्ताह नहीं मनाया जाता परन्तु महात्माजी ने जिस खादी को अपनाकर देश को समृद्ध बनाने का सुन्दर उपाय खोज निकाला है और गरीबों के भरण पोषण का द्वार खोल दिया है, उसे अपनाने से ही सच्चा गांधी सप्ताह मनाया जा सकता है। ऐसा करने से महारंभ से बचाव होता है इसलिए धर्म की भी आराधना होती है। इस प्रकार कहते हुए आपने देश-सेवा का समन्वय करते हुए संक्षिप्त किंतु सारगर्भित भाषण दिया।[1]

सरदार पटेल ने जनता को संबोधन करते हुए कहा—'आप लोग धन्य हैं जिन्हें ऐसे महात्मा मिले हैं जिन्हें नित्य ऐसे व्याख्यान सुनने को मिलते हैं। मगर यह सुनना तभी सफल है जब उपदेशों को जीवन में उतारा जाय। इत्यादि संक्षिप्त भाषण करने के पश्चात् सरदार पटेल ने पूज्यश्री से विदाई ली।

---

१ भाषणों के लिए 'अन्तर्ज्योति' देखिए।

कार्तिक शुक्ला चतुर्थी के दिन पूज्यश्री की जयन्ती थी। अत्यन्त उत्साह और प्रगाढ़ श्रद्धा के साथ संघ ने जयन्ती समारोह मनाया। उसी दिन श्रीसूयगडांगसूत्र के प्रकाशन का निश्चय किया गया, जो पूज्यश्री की निगरानी में प० अम्बिकादत्तजी ने तयार किया था। इसके निमित्त सुप्रसिद्ध दानवीर सेठ छगनमलजी मूथा बलुंदा श्रीचुन्नीलालनागजी वोरा आदि सज्जनों ने अच्छी रकमें प्रदान कीं।

चातुर्मास के पश्चात

राजकोट का चिरस्मरणीय चातुर्मास पूर्ण हुआ और पूज्यश्री ने मार्गशीर्ष कृष्णा प्रतिपद को विहार कर दिया। आप सदर में पधारे। अष्टमी तक आप यहां विराजे। राजकोट दशाश्रीमाली बोर्डिंग के कार्यकर्त्ताओं के अनुरोध पर आपका एक व्याख्यान छात्रालय में हुआ। पोरबन्दर के भाई लक्ष्मीदासजी ने ५००) रु० तथा चुन्नीलाल नागजी वोरा ने १००) छात्रावास को भेंट किये। पूज्यश्री ने काठियावाड़ निराश्रित बालाश्रम का भी निरीक्षण किया। बहुत से अजैन विद्वान् पूज्यश्री के परिचय में आये।

सदर से जब आपका विहार हुआ तो करीब १० हजार जनता आपको पहुंचाने आई। विहार करके कोठारिया पधारे। राजकोट की जनता यहां भी हजारों की संख्या में उपस्थित हुई पूज्यश्री का व्याख्यान हुआ। राजकोट श्रीसंघ ने सारे कोठारिया ग्राम को प्रीति भोज दिया, यहां तक कि ग्राम के सब पशुओं को भी मिठाई आदि खिलाई गई। यहां वृक्षों की सघन छाया में पूज्यश्री का व्याख्यान हुआ। राजकोट तथा अन्य स्थानों से आये यात्रियों की मोटरों, तांगों आदि का तांता सा लग गया। सारा मार्ग सवारियों से व्याप्त हो गया। जनता की भक्ति अपूर्व थी और विदाई की वेला वह और प्रबल हो उठी थी। कोठारिया के ठाकुर साहब ने व्याख्यान का लाभ उठाया और पूज्यश्री के प्रति अत्यन्त श्रद्धा भक्ति प्रकट की।

कोठारिया से विहार करके मार्ग के ग्रामों में एक एक दिन ठहरते हुए पूज्यश्री गोंडल पधारे। यहां सिर्फ एक सप्ताह ही रुकने का कार्यक्रम था मगर श्रीसंघ के अतिआग्रह से बारह दिन रुकना पड़ा। सभी प्रकार की जनता ने आपके उपदेशों से लाभ उठाया। दो विशिष्ट व्याख्यान भी हुए।

गोंडल से वीरपुर पधारे। यद्यपि आप दो ही दिन वीरपुर में ठहरे मगर वीरपुर-नरेश ने इतने समय में ही पूज्यश्री के समागम से अच्छा लाभ उठा लिया। पूज्यश्री के उपदेश से आपके ऊपर गो सेवा विषयक अच्छा प्रभाव पड़ा और वह प्रभाव सिर्फ हृदय की भावना में ही नहीं रहा। उन्होंने उसे कार्यान्वित भी किया।

वीरपुर से विहार कर एक दिन पीठड़िया विराजकर जेतपुर पधार गए जेतपुर में पूज्यश्री का अभिनन्दन करने के लिए पांच हजार नर नारी एकत्रित थे। गोंडल सम्प्रदाय के मुनिश्री पुरुषोत्तमजी महाराज तथा मुनि श्रीप्राणलालजी महाराज आदि साधु तथा साध्वियां धोराजी तक आपके सामने पधारे। पूज्यश्री जेतपुर में दो सप्ताह विराजे। पहले पहल तो व्याख्यान में जैनों की बहुतायत होती थी, धीरे धीरे अजैनों की संख्या इतनी बढ़ी कि जैनों से भी अधिक हो गई। शास्त्रीय विषयों के साथ पूज्यश्री कुरीति निवारण पर भी सुन्दर प्रवचन करते थे। परिणाम यह हुआ कि बहुत सी कुरीतियां समाप्त हो गई। चार सज्जनों ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य-व्रत अंगीकार किया। और भी अनेक व्रत नियम ग्रहण किये। मुनि श्रीप्राणलालजी म० और अन्य संतो एवं सतियों ने गुरुप्रेम-वात्सल्य प्रकट किया, जो प्रशंसनीय कहा जा सकता है। पूज्यश्री ने भी साधु सम्मेलन और कान्फ्रेंस के नियमों के पालन, संगठन तथा साधुओं के कर्त्तव्य पर प्रकाश डाला। भावनगर जनरल-कमेटी से लौटकर कान्फ्रेंस के अनेक सदस्य पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। साधु सम्मेलन और कान्फ्रेंस के विषय में वार्त्तालाप हुआ।

जेतपुर की एक बात का उल्लेख करना आवश्यक है अस्पृश्य कहलाने वाले भाइयो के विषय में पूज्यश्री का मन्तव्य पहले ही किया जा चुका है। यहा अस्पश्य भाई भी आपका उपदेश श्रवण करने आये। उन्हे व्याख्यान पीठ स काफी दूर बिठलाया गया। पूज्यश्री को यह व्यवहार अन्यायपूण प्रतीत हुआ। उन्होंने श्रावको को प्रभावशाली शब्दो म उपदेश दिया। नतीजा यह हुआ कि दूसरे दिन उन्हें आगे बैठने को स्थान दिया गया। अस्पृश्य जाति की महिलाएँ भी उपदेश श्रवण के लिए उपस्थित हुई थी। पूज्यश्री के उपदेश से अस्पश्य भाइयो और उनकी महिलाओ ने माम मदिरा का त्याग किया।

जेतपुर मे अमत वर्षा करके पूज्यश्री जेतलसर और धोराजी होते हुए ता० २० १ ३७ को मध्याह्न के समय जूनागढ पधारे। आपके साथ रायसाहब टाकरसी भाई धीया भी थे, जिन्होंने कठियावाड प्रवास म पूज्यश्री के साथ पदल भ्रमण करने का निश्चय किया था और उसे पूरा भी किया।

यहा के भाइयों बहिनो और बालको न तीन मील तक सामन आकर पूज्यश्री का स्वागत किया। पूज्यश्री स्थानकवासी जैन सघ के स्थान में उतरे थे। उसी के विशाल मदान मे व्याख्यान मण्डप बना था। पूज्यश्री का उपदेश सुनने के लिए जनों के अतिरिक्त सकडो हिन्दू मुस्लिम भाई उपस्थित होते थे। अनेक विद्वानो न भी लाभ उठाया। पूज्यश्री की सरल तथा हृदयस्पर्शी वाणी न श्रोताओ का हृदय इतना आकर्षित कर लिया था कि प्रतिदिन श्रोताओ की सख्या बढती जाती थी। अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचय, वीरता आधुनिक विज्ञान और जडवाद, इन्द्रियो और आत्मा की भिन्नता, आत्मा की अनन्त शक्ति आदि गम्भीर विषयो पर पूज्यश्री ने एसी सुगम और सुन्दर भाषा म विवेचन किया कि जनता मत्रमुग्ध सी हो गई।

पूज्यश्री के उपदेश से प्रेरित होकर यहां के स्थानकवासी श्रीसघ न मृत्यु हो जाने पर रोने पीटने की रिवाज मे सुधार करने का प्रस्ताव किया। कठियावाड स्थानकवासी जैन समाज के सगठन और सुधार के लिए सात गृहस्थो की एक समिति बनाई गई। अन्य श्रीसघो से भी इसी प्रकार की समितिया बनाने की अपील की गई।

मध्याह्न और रात्रि के समय पूज्यश्री धार्मिक विषयों पर चर्चा वार्त्ता, शका-समाधान किया करते थ। उस समय भी जैनेतर विद्वान राज्याधिकारी और मुस्लिम भाई उपस्थित होते और पूज्यश्री की अनुभवभरी विवेचनाओ से लाभ उठाते थे। पूज्यश्री के उच्चतर तप त्याग पर तथा विद्वता पर जैन और जैनेतर समान भाव स मुग्ध थे। इस प्रकार जूनागढ में धार्मिक भावना का एक नवीन गढ खडा करके पूज्यश्री ने विहार किया। बहुसंख्यक जनता आपको विदाई दने आई।

प्रासवा खडिया, बिलखा मेंदरडा, वरावल मागरोल राजवाड आदि स्थानो मे विचरते हुए आप फाल्गुन शुक्ला ६ को पोरबन्दर पधारे। बिलखा दरबार ने पूज्यश्री के उपदेश से प्रभावित होकर रियासत मे हिंसाबन्दी का ऐलान किया।* मदरडा म पूज्यश्री आलिधा दरबार श्री

---

*प्रतिलिपि इस प्रकार है —

मोहर
बिलखा दरबार

Naj Manzil
Bilkha (Kathiawar)

बी स्टे ओ ओ न० २७

ओफीस आडर

अमारा स्वस्थानमा दारु तथा मांसाहारनो प्रतिबंध छ। अन ते माटे कायदाओ अस्तित्वमा छे।

अहीना प्रजाजनो अने अमारी विनती तथा आग्रहने मान आपी विन्दाय पूज्य स्वामी

मोवा के दरबारगढ़ में ठहरे थे और भोजनशाला में बनाये गये पंडाल में आपका उपदेश होता था। आस पास के करीब पच्चीस ग्रामों के लोग आपका उपदेश सुनने इकट्ठे होते थे। दरबार श्रीनाथा वाला वगैरह भी उपदेश श्रवण करके हर्षित हुए। प्रजा, राज्याधिकारी, हिन्दू मुसलमान आदि सभी भाई उपदेशों से लाभ उठाते थे। आपका एक व्याख्यान बालमंदिर में भी हुआ। सेठ नथूभाई मूलजी की अध्यक्षता में पोरबंदर का शिष्टमंडल पूज्यश्री से पोरबंदर पधारने की प्रार्थना करने आया। बेगवस में पूज्यश्री का एक व्याख्यान हरिजन निवास में हुआ। अनेक हरिजनों ने मांस मदिरा को त्यागकर अपना जीवन सुधारा।

पोरबंदर में पूज्यश्री के स्वागत के लिए सैकड़ों स्त्री पुरुष माधवपुर तक गये। पूज्यश्री जब ओडदर गाँव में पधारे तो लगभग ४०० व्यक्ति दर्शनार्थ उपस्थित हो गये। दूर-दूर से आपका भावमय स्वागत करने आये हुए भावुक नर नारियों का समूह इकट्ठा था। वह दृश्य अतिशय भव्य और अपूर्व प्रतीत होता था।

पोरबंदर रियासत के मंत्री श्रीप्रतापसिंहजी भी पूज्यश्री के दर्शन और स्वागत के लिए सामने गये। पूज्यश्री के पदार्पण के समय ऐसा लगता था मानों कोई बड़ा सा धार्मिक मेला भरा हो! आपके उपदेश दशाश्रीमाली महाजनवाड़ी में होते थे। यहाँ के दीवान श्रीत्रिभुवनदास जे० राजा तथा राज्यरत्न सेठ माणजी लवजी, राज्यरत्न सेठ मथरशाह हीरजी भाई वाडिया आदि की पूज्यश्री के प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा थी। स्थानीय संघपति सेठ नथूभाई मूलजी ने आपका सार्वजनिक रूप से स्वागत किया। गोंडल सम्प्रदाय की सतियों ने भी पूज्यश्री के प्रति बहुत भक्ति प्रकट की। श्रीसंघ में उत्साह का पूर आ गया। अहिंसा, गो सेवा, मानव दया आदि विषयों पर आपके प्रभावशाली व्याख्यान हुए।

ता० २ ४ ३७ को पोरबंदर के राणासाहब श्रीनटवरसिंहजी दीवान साहब, उच्च राज्याधिकारी तथा समस्त गण्य मान्य व्यक्ति पूज्यश्री के उपदेश में सम्मिलित हुए। पूज्यश्री के समागम से राणा साहब अत्यन्त प्रभावित हुए। आपने पूज्यश्री से यहीं चौमासा करने की प्रार्थना की और सब प्रकार के समुचित सहयोग का आश्वासन दिया। मगर पूज्यश्री उस प्रार्थना को स्वीकार न कर सके। यहाँ मांगरोल राजकोट जूनागढ़ अमरेली मोरबी जेतपुर आदि से आये हुए दर्शनार्थियों की भीड़ लगी। जो साधक पूज्यश्री की अमी-वाणी का रसास्वादन कर चुके थे और जिन्होंने उनकी तप-तेज से विराजमान मुखमुद्रा की भव्यता का पान किया था, उन्हें पूज्यश्री के दर्शन और उपदेश श्रवण की उत्कंठा व्यग्र कर देती थी। उस अलौकिक विभूति को विस्मरण कर देना सहज बात नहीं थी। ऐसे महान् संत का समागम प्रबल पुण्ययोग से मिलता है। जब यह सुलभ हो तो कौन अपने को धन्य नहीं बनाना चाहेगा?

श्री पट्टाभी-सीतारामय्या का आगमन

डाक्टर पट्टाभी सीतारामय्या भारतीय राजनीतिक संग्राम के एक प्रसिद्ध सेनानी हैं। विद्वान्, धाराप्रवाह वक्ता और गंभीर विचारक हैं। जिन दिनों पूज्यश्री पोरबन्दर में विराजमान थे

श्रीजवाहरलालजी महाराज पधारता ते ओश्रीना उपदेशनो लाभ प्रजाजनाए संपूर्ण रीते लीधेल छे। तेओश्रीना अहीं पधारवाना मानमां आज रोज एम ठरावावामां आवे छे के अमारा राज्यमां दरमास महावीरजयंतीना रोज एकादशी तथा अमावस्या मारफत अगतो पालवो। त्युवामां प्राणीआनी कायम माटे अमारी मंजूरी शीवाय नीवाण करवी नहीं।

आ ओर्डरनो खबर लागता वगवगाओ तरफ आपनी अने एक नकल पूज्यपाद महाराज श्रीजवाहरलालजी महाराज तरफ सादर मोकलवो। बीलखा ता० ५ २ १९३७

(Sd) Rawatvala
बीलखा दरबार

आप भी यहां आये। पूज्यश्री की पुण्य प्रशस्ति कहां कहां नहीं पहुंच चुकी थी? आपने पूज्यश्री की प्रशंसा सुनी तो दर्शनार्थ आये।

पूज्यश्री से मिलकर और वार्तालाप करके डाक्टर पट्टाभी अत्यन्त प्रसन्न हुए। खादी के विषय में आपने जनता के समक्ष संक्षिप्त भाषण भी किया।

पूज्यश्री की सेवा में मोरबी तथा जूनागढ से चातुर्मास की प्रार्थना करने के लिए प्रतिनिधि मण्डल आये थे। आपने मोरबी वालों को यह वचन दिया था कि अवसर होगा तो मोरबी स्पर्श किये बिना अन्य स्थान की चातुर्मास की प्रार्थना स्वीकार नही की जायगी। मगर तारीख ८ ४ ३७ के दिन पोरबन्दर श्रीसघ ने चौमासे के लिए बहुत जोरदार प्रार्थना की। वहां के दीवान साहब भी प्रार्थना में सम्मिलित थे। उन्होंने भी बहुत आग्रह किया। मगर पूज्यश्री मोरबी वालों को जो वचन दे चुके थे वह टल नहीं सकता था। अतएव उस समय चौमासे के विषय में कोई निर्णय न हो सका।

ता० १५ ४ ३७ को पोरबन्दर की महारानी साहिबा पूज्यश्री का उपदेश सुनने आई। आपने भी चौमासे के लिए विनति की।

मासकल्प विराजकर चैत्र शुक्ला ६ को पूज्यश्री ने जामनगर की ओर विहार किया। शतश नर-नारियों ने दुखपूर्ण हृदय से पूज्यश्री को विदाई दी। विदाई का दृश्य बडा ही करुणापूर्ण था। महात्मा गांधी की इस जन्मभूमि मे इस महापुरुष के पदार्पण से बहुत उपकार हुए।

चैत्री पूर्णिमा को पूज्यश्री भाणवड पधारे। यहां हरिजन भाईयो ने भी व्याख्यान का लाभ उठाया। अन्य जनता ने उनके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार किया। वहां से विहार का जाम जोधपुर घ्राफा, मोटी, पानेली, भायावदर होते हुए अक्षय तृतीया के दिन आप उपलेटा पधारे। पूज्यश्री के पधारने से छोटे से छोटे गाव में भी उत्साह और उमग का प्रवाह बह जाता था। पानेली के तालाब मे पानी कम रह गया था। अत जीव दया पर पूज्यश्री का सयत भाषण हुआ। वहां के दयाप्रेमी सज्जनो ने मछलियो के लिए पानी और गौओं के लिए घास की समुचित और मक्य व्यवस्था की। दोनों कार्यों के लिए अच्छा फण्ड इकट्ठा हो गया। जाम जोधपुर मे श्री गोवर्धनदास मोरारजी वकील की अध्यक्षता मे एक डपुटेशन पूज्यश्री से जामनगर पधारने की प्रार्थना करने के लिए आया। पूज्यश्री ने सुखे समाधे जामनगर पहुंचने का आश्वासन दिया। सेठ नथुभाई मूलजी तथा सेठ लक्ष्मीदास पीताम्बर के साथ सौ आदमी आपके दर्शनार्थ आये। घ्राफा मे बहुत से गरासी भी पूज्यश्री का उपदेश सुनने आये। उन्होंने मांस और मदिरा का त्याग किया। सभी स्थानों पर पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया गया।

उपलेटा से कालावाड के रास्ते जामनगर की ओर विहार हुआ। खण्टेरा गाव में अचानक आपके दाएँ पर मे वात का प्रकोप हो गया। तकलीफ इतनी बढ़ गई कि विहार होना कठिन हो गया साथ के संत अपने कष्टो की चिन्ता न करके आपको झोली मे बिठलाकर जामनगर तक लाए।

जामनगर मे श्रीसघ में भी अपूर्व उत्साह था। नगर से दो मील दूर सामने जाकर श्रीसंघ ने पूज्यश्री का स्वागत किया। उपचार करने से पैर का दर्द कम हो गया। जामनगर श्रीसंघ ने चातुर्मास के लिए अत्यन्त आग्रह किया। अन्य स्थानों से भी प्रार्थनाएँ की गईं। किन्तु मोरबी फरसने का वचन दिया जा चुका था, अतएव किसी प्रकार का निर्णय न हो सका।

अब चातुर्मास का समय समीप आ चुका था। अतएव जल्दी मोरबी पहुंचने की इच्छा से पूज्यश्री ने १६ जून को जामनगर से विहार कर दिया। अभी आप तीन मील ही चले थे कि आपके पैर मे दर्द बढ़ गया। फिर भी विहार जारी रहा। पांच मील पहुंचते पहुंचते पैर सूज गया और चलना कठिन हो गया। साथ के संतो ने पूज्यश्री को झोली में मोरबी तक ले चलने का

विचार किया। किन्तु जामनगर श्रीसंघ और अनुभवी श्रावकों ने इस अवस्था में आगे बढ़ना वांछनीय न समझा। डाक्टर प्राणजीवनदास ने बतलाया कि देर तक इसी प्रकार रहने से बीमारी बढ़ जाने का खतरा है। अन्तत मोरवी श्रीसंघ को तार दिया गया। वहाँ से धर्मवीर श्रीदुर्लभजी भाई आदि पांच गृहस्थ आ पहुँचे। वर्षा आरम्भ हो चुकी थी और मार्ग की कठिनाई बेहद बढ़ गई थी। सारी परिस्थिति पर विचार करने के बाद अन्त में यही विचार किया गया कि इस चातुर्मास में पूज्यश्री जामनगर ही विराजें।

यहाँ यह उल्लेख कर देना अनुचित न होगा कि पोरबन्दर नरेश ने पूज्यश्री से पोरबन्दर में चौमासा करने की अत्यन्त आग्रहपूर्ण विनति की थी। पूज्यश्री ने जब मोरवी-श्रीसंघ को दिये वचन की बात कही तो नरेश ने मोरवी की स्वीकृति मँगा लेने की कोशिश की। उन्होंने समझा कि मोरवी का श्रीसंघ इतनी बात तो मान ही जायगा। मगर मोरवी संघ पूज्यश्री के दर्शन के लिए कितना व्यग्र और उत्कण्ठित था! चिरकाल से पूज्यश्री के दर्शन की अभिलाषा रूपी अंकुर को वह प्राणों की तरह से रखा था। अंकुर जब फल देने को तैयार हुआ तो पोरबन्दर-नरेश ने उसे हस्तगत कर लेने की चेष्टा की! मोरवी संघ और तो सब कुछ त्याग सकता था मगर यह त्याग उसके लिए असंभव बन गया। उसने स्वीकृति नहीं दी और पूज्यश्री ने अपना वचन निवाहने के लिए मोरवी की ओर प्रस्थान किया। किन्तु एकाएक पैर में दर्द उठ आने से पूज्यश्री मोरवी न पहुँच सके। इस आकस्मिक घटना से मोरवी श्रीसंघ को कितना सख्त आघात पहुँचा होगा, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। जामनगर के महाराजा के पिताश्री दाजी बापू साहब ने पहले ही चातुर्मास की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की थी। मगर वह उस समय स्वीकृत नहीं हुई थी। इस घटना से अनायास ही उनका मनोरथ पूर्ण हो गया। इससे उन्हें असीम आनन्द हुआ। एक ही घटना लोगों की विभिन्न भावना के अनुसार कितना विभिन्न प्रभाव उत्पन्न करती है।

ता० २१-६-३७ को नौ बजे पूज्यश्री डोली में जामनगर पधार गए। सब से आगे संत पूज्यश्री को डोली में उठाये जा रहे थे और पीछे पीछे सैकड़ों स्त्री पुरुष चल रहे थे। उस समय नामदार जामसाहब विलायत में थे। उनके पिता श्रीदाजी बापू प्रातःकाल पाँच मील चल कर पूज्यश्री के पास आये और धर्मोपदेश सुनकर प्रसन्न हुए।

पैर में दर्द के कारण पूज्यश्री शिष्य मण्डली के साथ बड़ी दरवाजे के बाहर दड़िया बिल्डिंग में ठहरे थे। व्याख्यान फरमाने के लिए पण्डित मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज नगर में पधारते थे और लौंकागच्छ के उपाश्रय में आपका मधुर व्याख्यान होता था। पूज्यश्री के स्वास्थ्य में पैर दर्द के अतिरिक्त और कोई खास खराबी नहीं थी। आषाढ़ शुक्ला तृतीया को पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की जयन्ती होने के कारण आप शहर में पधार गए। जयन्ती के दिन करीब सौ पौषधव्रत हुए। उसी दिन से आपने व्याख्यान फरमाना आरम्भ कर दिया।

पैंतालीसवां चातुर्मास
(सं० १९९४)

मोरवी न पहुँच सकने के कारण सं० १९९४ का चातुर्मास पूज्यश्री ने जामनगर में किया। पूज्यश्री के विराजने से संघ में खूब धर्म जागृति हुई। बाहर से दर्शनार्थी भी बड़ी संख्या में आने लगे। आषाढ़ी चौमासी पक्खी के दिन २५० पौषध हुए। तीन हजार नर नारियों ने आपका व्याख्यान सुना। अनन्य उपकार हुआ।

ता० १५-८-३७ को जाम साहब के पिताजी महाराज श्रीजयमानसिंहजी साहब, खानबहादुर दीवान सा० मेहरवानजी पेस्तनजी तथा राज्य के अन्यान्य अधिकारी और नगर के अन्य मान्य प्रतिष्ठित लोग पूज्यश्री का उपदेश सुनने के लिए उपस्थित हुए। व्याख्यान भवन में तिल धरने

को जगह न रही। जैनेतर भाई तथा मुसलमान सज्जन भी बडी सख्या मे आये थे। पूज्यश्री ने जब वचनामृत की वर्षा आरम्भ की तो श्रोताओ के श्रोत्र, अन्त करण और आत्मा मे शीतलता व्याप गई। सब पर बडा ही सुन्दर प्रभाव पडा।

ता० २९ ८ ३७ को जन्माष्टमी थी। उस अवसर पर आपके लौंकागच्छ के उपाश्रय में 'कृष्ण जीवन' पर विशिष्ट व्याख्यान हुआ। व्याख्यान में जामसाहब के पिताश्री, दीवान साहब, पोलिटिकल सेक्रेटरी, राज परिवार, राज्याधिकारी और अन्य जैन-जैनेतर श्रोता मौजूद थे। करीब अढ़ाई हजार श्रोताओ की भीड थी। व्याख्यान भवन खचाखच भरा था। फिर भी अत्यन्त शांति थी। तीन घटे तक पूज्यश्री का व्याख्यान चलता रहा। श्रीकृष्णजी की जीवनी पर आपने बहुत सुन्दर विवेचन किया। जन्म से लेकर अन्तिम समय तक की उनकी प्रवृत्तियों का रहस्य खोलकर समझाया। ऐसा लगता था मानो पूज्यश्री ने कृष्ण जीवनी का आपरेशन करके उसका अग अग सामने रखकर दिखला दिया हो! पूज्यश्री के व्याख्यान के पश्चात स्थानीय वकील श्रीगोवर्धन दास भाई ने पूज्यश्री के पवित्र जीवन का श्रोताओ को परिचय दिया तत्पश्चात पोलिटिकल सेक्रेटरी श्रीद्वारिकादास सरया ने भी कृष्णजीवन पर भाषण दिया। पूज्यश्री के उदार विचारों का तथा आकर्षक एव सारगर्भित व्याख्यान का जनता पर बहुत प्रभाव पडा।

सवत्सरी के दिन बहुत प्रात काल ही व्याख्यान भवन भर गया। उस दिन मेघ जल-वर्षा कर रहे थे। कौन जाने वे पर्यूषण महापर्व का स्वागत कर रहे थे या पूज्यश्री की अमृत-वर्षा की प्रतिस्पर्धा करने तैयार हुए थे। कुछ भी हो, जनता को जल-वर्षा से सतोष नही हुआ और वे पूज्यश्री द्वारा होने वाली अमृत वर्षा की लालसा से खिचे आए। पूज्यश्री ने धर्मप्राण लौंका शाह, पूज्यश्री लवजी स्वामी, पूज्यश्री धर्मदासजी महाराज, पूज्यश्री धर्मसिहजी महाराज आदि के जीवन पर प्रकाश डाला और उनके द्वारा हुए धर्मोद्धार का वर्णन किया। इसके पश्चात् कान्फ्रेस के निर्णयानुसार २० लोगस्स का ध्यान करने की याद दिलाई।

पर्यूषण में अनेक प्रकार के तप त्याग हुए। पूज्यश्री ने छह् उपवास स्वय किये। मुनि श्रीफूलचन्दजी महाराज ने १८ का थोक किया। सोलह वर्षीय बालक बाबूलाल चुन्नीलाल नाग नियाने आठ उपवास किये। ता० १०-९ ३७ को दोनो का पारणा हुआ। जलगाँव के सेठ लक्ष्मण दासजी ने और भीनासर (बीकानेर) के सेठ बहादुरमलजी तथा सेठ चम्पामलजी साहब बांठिया ने अपने-अपने स्थानों पर स्थिरवास करने की प्रार्थना की।

पूज्यश्री के पैर का दर्द अभी तक बिलकुल ठीक नहीं हुआ था। आपके दर्शनार्थ श्रीहेम चन्द भाई मेहता, दीवान बहादुर सेठ मोतीलालजी मूथा सेठ वर्धमानजी सा० पीतलिया, उदय पुर के भूतपूर्व दीवान ए० ए० कोठारी श्रीबलवन्तसिहजी आदि प्रतिष्ठित सज्जन उपस्थित हुए थे। मारवाड, मेवाड, मालवा, गुजरात, काठियावाड दक्षिण आदि सभी प्रान्तों से अनेक सद्गृहस्थ भी आये थे।

ता० २६ ९ ३७ को पूज्यश्री का 'अहिंसा और समाजसेवा विषय पर प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। इस दिन भी उच्च पदाधिकारी वकील, डाक्टर तथा अन्य प्रतिष्ठित पुरुष उपस्थित थे।

ता० ८ १० ३७ को श्रीठक्कर बापा तथा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने पूज्यश्री के दर्शन किये। आधा घटे तक पूज्यश्री से हरिजनोद्धार-सम्बन्धी वार्तालाप करके बहुत प्रसन्न हुए।

ता० १४ १० ३७ को श्री हरखचन्द मूलजी एव ता० १९-१० ३७ को श्रीरतनसी मानजी पुनातर वकील ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य-व्रत अंगीकार किया।

गांधी जयन्ती के दिन श्रीनारायणदास गांधी राजकोट से जामनगर आये थे। उन्हें ५५१)

रु० सार्वजनिक हित के लिए भेंट किये गये। स्थानीय अस्पताल को, अपाहिजों को तथा घाटकोपर जीवदया खाते को भी आर्थिक सहायता प्रदान की गई।

समाज में फैली हुई कुरीतियां जीवन को ऐसा गदला बनाये हुए हैं कि उनके कारण वास्तविक धार्मिकता पनपने नहीं पाती। जीवन की तह में कुरीतियां चट्टान की भांति जमी हैं, जिन पर धर्म का अंकुर बढ़ नहीं सकता। जब तक इस चट्टान को उखाड़ कर न फैंक दिया जाय तब तक धर्म-वृद्धि के लिए किये जाने वाले प्रयत्न प्रायः निरर्थक से हो जाते हैं। पूज्यश्री इस तथ्य को भली भांति समझते थे और इसी कारण वे सर्वत्र कुरीतियों के विरुद्ध उपदेश दिया करते थे। मृत्यु के बाद रोने पीटने की प्रथा घोर आर्त्तध्यान रूप है। राजकोट चातुर्मास से ही पूज्यश्री ने इसके विरुद्ध उपदेश देना आरंभ कर दिया था। राजकोट-संघ ने प्रस्ताव करके उस बन्द भी कर दिया था। जेतपुर-संघ ने भी राजकोट का अनुकरण किया था। अब जामनगर संघ ने भी इसी प्रकार का प्रस्ताव किया। इस प्रकार पूज्यश्री के उपदेश से यह रूढ़ि लगभग खतम-सी हो गई।

ता० १७।११।३७ धर्मप्राण लौंकाशाह की जयन्ती थी। पूज्यश्री ने श्रीलौंकाशाह के जीवन पर प्रकाश डालते हुए, निंदा, क्लेश आदि दुर्गुणों का त्याग करके एकता साधने का उपदेश दिया। करीब २०० पौषध उस दिन हुए।

सूर्य-किरण-चिकित्सा

सूर्य किरण चिकित्सा के विशेषज्ञ डाक्टर प्राणजीवन मेहता जामनगर के चीफ मेडिकल आफिसर थे। पूज्यश्री पर उनकी अगाध श्रद्धा भक्ति हो गई थी। उन्होंने अपने सूर्यगृह में पूज्यश्री का उपचार आरम्भ किया। पूज्यश्री के विनीत संत आपको सूर्यगृह तक उठाकर ले जाते थे। दो मास तक उपचार चला। इस उपचार से पूज्यश्री को धीरे धीरे कुछ लाभ हुआ।

यद्यपि आप साधारणतया चल फिर सकते थे परन्तु लम्बे विहार का सामर्थ्य अभी तक नहीं आया था। परीक्षा करने के लिए पूज्यश्री ने एक दिन पांच छह-मील का भ्रमण किया। भ्रमण से कुछ दर्द मालूम हुआ। डाक्टर ने कुछ दिन और विश्राम कर इलाज कराने की सम्मति दी। अतएव चातुर्मास के पश्चात भी पूज्यश्री को कुछ दिन और ठहरना पड़ा।

बीकानेर श्रीसंघ की ओर से सेठ मदनमलजी कोठिया और सेठ हरीदास जी राठौड़ ने पूज्यश्री से बीकानेर पधारने की विनति की। पूज्यश्री ने फरमाया—'द्रव्य-क्षेत्र-काल भाव की अनुकूलता का ध्यान रखते हुए मारवाड़ फरसने का भाव है।'

धीरे धीरे पैर का दर्द कुछ ठीक हो गया और पूज्यश्री ने विहार करने का निश्चय कर लिया।

जवाहर जयन्ती

कार्तिक शुक्ला ३ को पूज्यश्री का जन्म दिवस था। उस दिन पं० र० मुनिश्री श्रीमलजी महाराज ने एक घंटे तक पूज्यश्री के जीवन पर बड़े ही श्रद्धापूर्ण और सुन्दर शब्दों में प्रकाश डाला। फिर डा० प्राणजीवन मेहता, श्रीगोवर्धन भाई वकील आदि भाइयों ने अपने उद्गार प्रकट किये।

जैन और जैनेतर भाइयों ने आपके गुणों की मुक्तकंठ से प्रशंसा की और चातुर्मास में उपदेश देकर कृतार्थ करने के लिए आभार माना। जब सब लोग अपने अपने उद्गार प्रकट कर चुके, तब पूज्यश्री ने फर्माया—

मैंने इतना समय दक्षिण, मालवा मेवाड़ और मारवाड़ में बिताया। मैं दिल्ली की तरफ भी गया था मगर गुजरात काठियावाड़ बाकी था। इस प्रदेश में पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज पधारे थे और यहां की धर्म श्रद्धा और सरलता के विषय में मैंने बहुत कुछ सुना था। अतएव यहां की जनता के लिए मुझे आकर्षण था।

पहले तो मेरा विचार बीकानेर की ओर जाने का था, मगर आप लोगो का आग्रह बहुत प्रबल हुआ। सूरजमलजी, श्रीमल्लजी, बख्तावरमलजी आदि संतो ने भी मुझे इस ओर आने के लिए बहुत उत्साहित किया। कहा—'जीवन का कोई भरोसा नही अत श्रावको का आग्रह पूरा करना चाहिए। मैं काठियावाड़ आ गया।

आप सबने अभी जो कुछ किया है, उस पर विचार करते हुए मुझे बैठे बैठे ख्याल आ गया।

उपनिषद मे एक वाक्य है—

यानि अस्माक सुचरितानि तानि त्वया पालनीयानि।

गुरु, शिष्य से कहता है—हे शिष्य! मुझमें जो सुचरित्र हो, उसी की तू उपासना कर। मुझ मे जो बात प्रपचभरी जान पडे उसे तू मत ग्रहण करना।

यही बात मैं तुमसे कहता हूँ। आप लोगो न मेरी प्रशसा म जो कुछ कहा है, वह मेरे लिए भार स्वरूप है। वास्तव मे मुझे भाषा का भी पूरा ज्ञान नही। गुरु चरणो के प्रताप से जो वस्तु मुझे विरासत म मिली है, वही तुम्हे सुनाता हूँ और उसी के द्वारा सब के अन्त करण को सतुष्ट करने के प्रयत्न करता हूँ। यह बात सुनाने में मुझे भूल होती हो या जिसे आपकी आत्मा स्वीकार न करे, उसे आप न मानो। जिसे आपकी आत्मा स्वीकार करे, उसी को मानो।

मैं अपनी उम्र के ६२ वष पूण करके त्रेसठवें वष मे प्रवश कर रहा हूँ। हालांकि मेरी इच्छा यह थी कि मैं सदैव अपनी आत्मा का कल्याण करने मे ही लगा रहूँ और किसी भी दूसरे प्रपच म न पड़ूँ। मगर नहीं कहा जा सकता, वह सुअवसर कब प्राप्त होगा! फिर भी मेरी भावना तो यही रहती है। मेरे विषय म आपने जो कुछ कहा है, उसे सुनकर मुझे अभिमान नही करना चाहिए। मुझे यह विचार करना चाहिए की मुझमे जो गुण बतलाये गये हैं, वे अभी तक मुझमें नही आए हैं और उन्हें प्राप्त करन का मुझे प्रयत्न करना है। परमात्मा स यही प्रार्थना है कि मुझे सद्बुद्धि प्राप्त हो और सद्भावना की वृद्धि करके स्व पर का कल्याण साधन करूँ।

मैं तुम्हारे समक्ष जो कुछ कहता हूँ, उसे विचार कर ग्रहण करो। ठीक हो सो ग्रहण करो, ठीक न हो उसे छोड़ दो। मैंने अपने गुरु के समीप जो प्राप्त किया है, उसका यथावत् पालन करने म अभी तक मुझे पूणता प्राप्त नहीं हुई। मुझम अभी तक बहुत सी अपूणताएँ हैं। जैसे हस मोती चुगता है वसे आप मेरे कथन म स अच्छी बातें चुन लो और ग्रहण करो। समुद्र में लहरें तो बहुत आती हैं मगर सब लहरों म मोती नहीं आते। लेकिन मोती चुगने वाला हस उन्हीं लहरो मे से मोती चुन ही लेता है।

डाक्टर प्राणजीवन मेहता

इस चातुर्मास में तथा उससे पहले और बाद में भी डाक्टर प्राणजीवन मेहता की पूज्यश्री के प्रति सराहनीय सेवा रही। डाक्टर मेहता सूर्य किरण चिकित्सा के विशेषज्ञ हैं और जामनगर रियासत के चीफ मेडिकल आफिसर हैं। आपने तीव्र लगन और सच्चे सेवा भाव से पूज्यश्री की चिकित्सा की। पूज्यश्री जब तक जामनगर के आसपास विचरते रहे, आप प्रतिदिन मोटरकार से सेवा में पहुँचते रह और पूज्यश्री के स्वास्थ्य की दखभाल करते रहे। उन्हीं क परिश्रम, लगन और सतत सेवा से पूज्यश्री को स्वास्थ्य लाभ हुआ। उनके हृदय में पूज्यश्री के प्रति असीम श्रद्धा और अपार भक्ति है।

जामनगर से विहार

ता० २४ १२ ३७ को पूज्यश्री ने विहार करने का अन्तिम रूप से निश्चय कर लिया था। अत्यन्त सर्दी होने पर भी प्रात काल से ही सैकड़ों स्त्री पुरुष लौंकागच्छ के उपाश्रय म एकत्र हो गए। उपाश्रय खचाखच भर गया। ६ बजे पूज्यश्री ने विहार किया। भक्तिपूर्ण हृदय से जनता ने दूर तक साथ चलकर विदाई दी। पूज्यश्री ने विदाई-सन्देश देते हुए फर्माया—जैसे सुगन्धित

फूल अपनी सुगन्ध अधिकाधिक फैलाता है, उसी प्रकार मैंने सात महीनों में जो उपदेश दिया है, उसकी सुगंध आप लोग फैलाना। बालकों को जैसे व्यावहारिक शिक्षा देते हो उसी प्रकार धार्मिक शिक्षा भी अवश्य देना। उगते हुए बालक रूपी पौधों पर उपदेश रूपी जल अवश्य सींचना। अगर आप ऐसा करेंगे और हम सुनेंगे तो हमारा हृदय प्रफुल्लित होगा।'

श्रीयुत मानसिंह भगतजी महुता ने कहा—श्रीमान् का किसी कारण मन दुखा हो या संघ की ओर से कोई त्रुटि हुई हो तो हम क्षमाप्रार्थी हैं। आप क्षमा के सागर हैं। क्षमा प्रदान कीजिए।

पूज्यश्री ने प्रतिदिन घंटा, आधा घंटा, बीस मिनट, दस या पांच मिनट तक भगवान् महावीर के नाम का जाप करने का उपदेश दिया। बहुत से भाइयों और बहिनों ने यह नियम स्वीकार किया। तब पूज्यश्री ने कहा—'प्रस्थान के समय यही हमारा पाथेय है।"

पूज्यश्री उसी दिन हुपा पहुँच गये। वहाँ से विहार करके अलीयाबाड़ा पहुँचे। यहाँ ता० २६ १२ ३७ को जामनगर संघ स्पेशियल ट्रेन से दर्शनार्थ आया। विशाल मैदान में पूज्यश्री का व्याख्यान हुआ। आपने राम-भरत के और भरत के दुःख का रोमांचकारी वर्णन किया। जामनगर के वकील गोवर्धनदास मुरारजी ने संघ की ओर से हुई त्रुटियों के लिए क्षमायाचना की। वह दृश्य बड़ा ही करुण था। प्रत्येक व्यक्ति की आंखों से आंसू छलछला आए। पूज्यश्री अब जामनगर से दूर होते जा रहे थे और इस कारण जामनगर की जनता का विषाद उग्र से उग्रतर होता जा रहा था। अन्त में पूज्यश्री ने सत्य के विषय में एक कथा कहकर व्याख्यान समाप्त किया। जनता ने उस दिन प्रीतिभोज किया, जिसमें १५०० व्यक्ति सम्मिलित हुए। पूज्यश्री ने मोरबी के रास्ते मोरबी की ओर विहार किया।

मोरबी में पदार्पण

माघ कृष्ण ६, ता० २१ १ ३८ को प्रातःकाल १० बजे पूज्यश्री मोरबी पधार गए। मोरबी की जनता पूज्यश्री के दर्शन के लिए चिरकाल से उत्कंठित थी। श्रीदुर्लभजी भाई झवेरी तो कई वर्षों से अपनी जन्मभूमि में आपको लाने के लिए प्रयत्नशील थे। अचानक पैर-दर्द के कारण आपका चौमासा मोरबी में न हो सका और मोरबी को बड़ी निराशा हुई। मगर निराशा के बाद की आशा, उत्सुकता और प्रतीक्षा का आनन्द अद्भुत ही होता है।

जामनगर से विहार करके पूज्यश्री जब वांकानेर पधारे तब मोरबी के मुखिया श्रावक पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए और मोरबी पधारने की प्रार्थना की। उसके बाद तो मोरबी के धर्मप्रेमी लोगों का आगमन होता ही रहा। ता० २० १ ३८ को चार बजे पूज्यश्री हनाला पधारे। उस समय से ही सैकड़ों लोग दर्शनार्थ आने लगे। रात को नौ बजे तक तांता लगा रहा। ता० २१ १ ३८ को बहुत सुबह ही लोगों ने हनाला की तरफ आना आरम्भ कर दिया। ज्यों-ज्यों दिन चढ़ा, बाल जयघोष के साथ पूज्यश्री ने मोरबी की ओर प्रस्थान किया। मोरबी पहुँचते-पहुँचते भीड़ बेशुमार हो गई। स्वागत में उत्साहपूर्वक भाग लिया। दृश्य बड़ा ही भावमय, सात्विक और सुन्दर रहा।

पूज्यश्री भोजनशाला के विशाल भवन में उतरे। प्रातःकाल ८॥ बजे तक मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज व्याख्यान बांचते और फिर १० बजे तक पूज्यश्री पीयूष-वर्षा करते। सारी भोजन शाला श्रोताओं से खचाखच भर जाती, फिर खूब शान्ति रहती। बाहर से अनेक सज्जन पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए।

ता० २३ १ ३८ को काठियावाड़ के अग्रगण्य श्रीहेमचन्द भाई आए। उसी दिन धर्मवीर सेठ दुर्लभजी भाई ने तथा अन्य तीन सज्जनों ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। चार जोड़ों के साथ ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करने की यह घटना मोरबी में पहली ही थी। श्री हेमचन्द भाई ने चारों सज्जनों को दुशाले और चारों बहिनों को साड़ियां भेंटकर उनका सत्कार किया। तत्पश्चात् पूज्यश्री

ने ब्रह्मचर्य की महिमा पर सुन्दर और मननीय प्रवचन किया और बतलाया कि जो पूर्ण ब्रह्मचर्य नहीं पाल सकते उन्हें एकपत्नीव्रत का पालन अवश्य करना चाहिए। पूज्यश्री ने अपने जीवन में ब्रह्मचर्य की अलौकिक महिमा का चमत्कार साक्षात् अनुभव किया था। यही कारण था कि आप अत्यन्त तेजस्वी वाणी में, अधिकारपूर्ण शैली से ब्रह्मचर्य की महिमा का प्रतिपादन किया करते थे। आप अक्सर फर्माया करते थे—'अखंड ब्रह्मचारी में अद्भुत शक्ति होती है। उसके लिए क्या शक्य नहीं है? वह चाहे सो कर सकता है। अखंड ब्रह्मचारी अकेला सारे ब्रह्माण्ड को हिला सकता है।'

इस व्रतग्रहण के प्रसंग पर श्रीदुलभजी भाई झवेरी ने विविध संस्थाओं को २५०४) रुपये का दान दिया।

मोरबी-नरेश का आगमन जौहरीजी का दान

ता० ५ १ ३८ को प्रातःकाल मोरबी के नामदार महाराज साहब पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। महाराज साहब अभी बीमारी से उठे थे और आपका शरीर काफी कमजोर था, मगर पूज्यश्री का आगमन सुन अपने-आपको रोक नहीं सके। उनकी चिरकालीन आशा फलवती हुई। वे पूज्यश्री के दर्शन करके बड़े प्रसन्न हुए। जब आप पधारे तो उस समय राज्याधिकारी और जनता विशाल संख्या में उपस्थित थी। उस समय धर्मवीर श्रीदुलभजी भाई जौहरी ने कहा—महाराजा साहब मोरबी में कलाभवन स्थापित करना चाहते हैं। इस संबंध में बड़ौदा से पूछताछ भी की गई थी। इसी बीच महाराजा साहब की तबीयत खराब हो गई और वह योजना अभी तक यों ही रही है। अब महाराजा साहब स्वस्थ होकर यहाँ पधारे हैं। हम उनके दीर्घजीवन के लिए प्रार्थना करते हैं। कलाभवन के लिए मैंने भाजपुर में तथा उसके पीछे वाली अपनी दस हजार फुट जमीन पट्टे लिख दी है। अब उस जमीन में भवन बनवाने के लिए पाँच हजार रुपया भी भेंट करता हूँ। कुल मिलाकर आपने १५०००) रु० का दान किया।

रविवार के रोज मोरबी श्रीसंघ ने पूज्यश्री से चातुर्मास की प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया—मेरे पूर्ववर्ती आचार्य पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने काठियावाड़ में दो चातुर्मास किये थे। मैं भी दो चातुर्मास कर चुका हूँ। फिर भी संघ की विनति मेरे ध्यान में है।

बीकानेर का संघ भी चातुर्मास की प्रार्थना करने आया। मगर साम्प्रदायिक नियम के अनुसार होलिका से पहले चातुर्मास का निर्णय नहीं हो सकता था।

पूज्यश्री उत्तमचन्द्रजी महाराज का मिलाप

दरियापुरी सम्प्रदाय के पूज्यश्री उत्तमचन्द्र जी महाराज वृद्ध होने पर भी आपसे मिलन के लिए वांकानेर से पधारे। श्रीसंघ ने सामने जाकर उनका हार्दिक स्वागत किया। दोनों पूज्यों का सस्नेह समागम हर्षाश्रु बरसाने वाला था। पूज्यश्री के संतों ने नवागत आचार्यश्री का स्वागत और सन्मान किया। दोनों आचार्य हार्दिक उमंग के साथ मिले। श्रीसंघ के श्रेयस के लिए बातचीत की। साधुसम्मेलन के प्रस्ताव के अनुसार दोनों के सम्मिलित व्याख्यान के लिए प्रार्थना की गई। किन्तु दरियापुरी सम्प्रदाय के आचार्यश्री ने फरमाया—'हम सुनने आये हैं, सुनाने के लिए नहीं आये। हमें पूज्यश्री से मारवाड़, मालवा, मेवाड़ और दक्षिण आदि के अनुभव जानने हैं।

प्रातःकाल और मध्याह्न में दोनों पूज्य वार्तालाप करके स्नेह एवं हर्ष की वृद्धि करते थे। श्रावक समाज भी यह दृश्य देखकर अपना साम्प्रदायिक दायरा भूल रहा था।

सोमवार के दिन मोरबी-महाराज फिर उपदेश-श्रवण करने उपस्थित हुए। पौन घण्टा बैठने के बाद आपने पूज्यश्री से निवेदन किया—'गत वर्ष का चौमासा आकस्मिक बीमारी के कारण यहाँ नहीं हो सका। इस वर्ष हमें अवश्य लाभ मिलना चाहिए। धर्म के प्रताप से अच्छे कार्य होंगे।'

सोमवार ता० २७ २ ३८ को महाराजा साहब फिर तीसरी बार पधारे। इस बार [illegible] एक घण्टे तक उपदेशामृत का पान किया। जैनशाला तथा कन्याशाला के बालकों को [illegible] पारितोषिक वितरण किया।

मोरबी नरेश जब चौथी बार उपदेश सुनने आये तो आप भी मोरबी-संघ द्वारा चातुर्मास के लिए की गई पुन प्रार्थना में सम्मिलित हुए। मकान, उतारा आदि सभी प्रकार की राजकीय व्यवस्था के लिए आपने संघ को वचन दिया। समवसरण सरीखे इस अवर्णनीय प्रसंग पर पूज्यश्री ने मोरबी-महाराज की धर्म भावना और संत-समागम की अभिलाषा का अभिनन्दन किया, किन्तु सम्प्रदाय के नियमानुसार चातुर्मास के विषय में कोई वचन नहीं दिया।

इधर मोरबी महाराजा तथा वहाँ की धर्मप्रिय जनता पूज्यश्री के चातुर्मास के लिए प्रयत्नशील थी और उधर अन्य स्थानों के विवेकशील श्रावक भी सावधान हो गये थे। चातुर्मास का समय सन्निकट आ रहा था और लोग सोचते थे कि पहले चेतने वाला जीतेगा। तदनुसार काठियावाड़ में सर्वत्र चौमासा कराने की हलचल आरम्भ होने लगी। मगर गुजरात कब पीछे रहने वाला था? वहां के केन्द्रस्थान अहमदाबाद में भी चातुर्मास चर्चा आरम्भ हो गई। इसी सिलसिले [illegible] ३० १ ३८ के 'स्थानकवासी जैन' पत्र के सम्पादक ने एक टिप्पणी इस प्रकार लिखी—

परमपूज्य जैनाचार्य श्रीजवाहरलाल जी महाराज सा० नी व्याख्यान श्रेणी काठियावाड़नी [illegible] सत्तनकर्त्ता बनी छ। एटलु ज नहि पण काठियावाड़िनी जनताए शक्तिना प्रमाणमां [illegible] सद्व्यय करी पोताना गुरुदेवोनु उचित सम्मान कयु छे। स्थले स्थले धर्मभक्ति, [illegible], साहित्यविकास, चरित्रविकास आदि गुणोनी वृद्धि थई छे अने ए रीते प्रस्तुत जैन [illegible] काठियावाडनो प्रवास उभयने माटे कल्याणप्रद नीवड्यो छे। जो के तेओश्रीए हजु तो काठियावाडनो एक भाग स्पर्श्यो छे अने भावनगर तरफनो बीजो भाग स्पर्शवो बाकी छे। साथे [illegible] पूज्यश्रीनी शारीरिक स्थिति बराबर न होवा थी मारवाड़ तरफना स्वधर्मी उदार भक्तो [illegible] कायमी निवास पोताना प्रदेश में तात्कालिक करावना इच्छे छे ज्यारे बीजी तरफ काठियावाड मो ये भाग पूज्यश्री नी व्याख्यानवाणी थी वंचित छे ते भाग ते ओ श्री नो लाभ लेवा उत्कट इच्छा धरावे छो।

आजे स्थानकवासी जनो नु काय प्रदेश अने धर्म श्रद्धा के टलेक अशे उज्जड जेवा बनी [illegible] छो तेवे प्रसगे विद्वान् कार्यदक्ष मुनि महाराजना बोधनी अत्यन्त आवश्यक छे। आथी अमे [illegible] के पूज्यश्री काठियावाड ना बीजा भागना घणा खरा क्षेत्रो स्पर्शी ल्ये, तो तने श्री ने अहमदाबाद पधारतो घणो समय व्यतीत थई जाय ते स्वाभाविक छे अने पछी चातुर्मास के कायमी निवास माटे मारवाड़ तरफ पहोंची शयाय पण नहीं अने ए रीते स्थिति साधारण रीते विचारा [illegible] छो। आथी अमे अमदावादनी धर्म प्रेमी जनता जेओ पूज्यश्री ने शेषकाल माटे पधारवानो आग्रह करी चुकी छे, एटलु ज नही पण थोडा ज दिवसो मां [illegible] आम [illegible] करवा एक डेपुटेशन मोरबी मुकामे जनार छे, ते ओ ने अमे विनति करीए के पूज्य [illegible] आंगणे (अमदावाद) मा थाय एवा प्रयत्नो करे अने ए रीते अमदा[illegible] जैन प्रजा ने पूज्यश्री नी अद्भुत वाणी नो लाभ मली शके। साथे सा[illegible] ते ओ भी ठीक ठीक समय सुधी रोकाई न अन्य क्षेत्रों मां धर्म ना सुदृ[illegible] शके।

अहमदाबाद का शिष्टमंडल

पूज्यश्री से अहमदाबाद में चौमासा करने [illegible] को [illegible] का भी प्रतिनिधित्व करने वाला एक शिष्ट मण्डल [illegible] उपस्थित हुआ। पूज्यश्री के व्याख्यान के अनन्तर श्रीदुलभजी

हुए कहा—अहमदाबाद गुजरात का पाटनगर है और व्यापार का प्रधान केन्द्र है। किन्तु स्थानक वासी समाज के धर्मप्राण लोंकाशाह द्वारा किये गये क्रियोद्वार का आदि स्थान होने के कारण उसे और भी अधिक गौरव प्राप्त है। सूत्रा का टब्बा लिखने की प्रथा चलाने वाले पूज्यश्री धर्मसिंहजी महाराज की दरियापुरी सम्प्रदाय का यह पवित्र धाम है। श्रीधर्मदासजी, और श्रीलवजी ऋषि जैसे आद्य प्रचारकों ने यहीं से अपना धर्म प्रचार आरम्भ किया था और सैकड़ा वर्ष पहले पदल विहार करके काश्मीर तक क्रियोद्धार की ज्योति जगाई थी। आज भी काश्मीर के मुख्य नगर जम्मू में साधुओं के चातुर्मास होते हैं। भक्तशिरोमणि नरसिंह मेहता और दुनिया के सर्वश्रेष्ठ महापुरुष महात्मा गांधी की निवास भूमि तथा क्रियोद्धार की कर्मभूमि मे पूज्यश्री अवश्य नई प्रेरणा प्राप्त करेंगे और उसका फल हमे मिलेगा।

इसके बाद आपने एक एम० डी० डाक्टर का नीचे लिखा पत्र पढ़ा—

भगवान् महावीर का पुनीत वेषधारी

पूज्यश्री म्हारा भावपूर्वक वदन करशो अने कहेशो के हजी म्हारा सत समागमना अतरायओछा थया नथी आपश्रीनी वाणीनो सदुपदेश गले उतरे छे पण हजी रगोरगमां उतरतो नथी, त्या सुधी अमर आत्मानी प्रवृत्ति मूकी नाशवत देहनी प्रवृत्तियों रच्यापच्या रहीए छीए क्षण भर श्मशान—वैराग्य सभ ससारिनी प्रवत्ति रोकवा अभिलाष थाय छे, पण बीजी क्षणे संसार समुद्र म थया घसडाई जईए छीए तेनी खबर पण पडती नथी धोलने पादर झाड नीचे ठेल्लो उपदेश आपी हसते चेहरे महाराज साहेब विदाय थई झडपभेर चाली नीकल्या ते दृश्य नजर आगल तर्या करे छे, जाणे के पूज्य महाराज आपण ससारीना सग छोडी मुक्तिना मार्ग प्रमाण करी रह्या होय! पूज्यमहाराजश्रीना आहार विहारनो बारीक अवलोकन करवानो प्रसग आ वखते मल्यो, साधुदशामां शरीरने शु कष्ट हसि हॅसि दवाय तेनो ख्याल आव्यो, दु खता पगे उघाडा पगे, उघाडा पगे चालीने विहार करवो, भिक्षा मागी समयनु माप जालवी ज मले तेपर आहारनो आधार! काई वेला न पण मले!

रहेवाना स्थाननी अगवडता टाढ तडका मच्छर विगेरे जीवातनो परिषह, काई साधन नहि, कोईनी माया नहि, आ सो देहनी परम अजब जीतज गणाय देहने जे आटलो काबूमा राखी शके तेने देह तावेदार बने छे, जे देहने फुलावी फुलावी ने पोसे छे ते देहनो तावेदार छे, देह नौकर बने ता आत्मा मुक्त बने छे, देह धणी थाम छे ता आत्मा एटलोज बधु बधाय छे,'

शिष्टमण्डल की ओर से श्रीचन्दूलाल अचरजलाल शाह ने पूज्यश्री से अहमदाबाद पधारने की प्रार्थना की।

पूज्यश्री न उत्तर दिया—नामदार मोरवी महाराज साहेब तथा मोरवी-सघ की प्रार्थना होने पर भी शारीरिक कारणा से मैं आगे बढ़ने की इच्छा रखता हूँ। साम्प्रदायिक मर्यादानुसार होली से पहल चातुर्मास के विषय मे निर्णय नहीं किया जा सकता। फिर भी शेष काल के लिए अहमदाबाद फरसन की भावना है।

शिष्ट मण्डल के सदस्य सदस्य पूज्यश्री के इस आश्वासन से अत्यन्त प्रसन्न हुए। अहमदाबाद की जनता पूज्यश्री के चतुर्मास के लिए बहुत उत्कंठित थी। इस उत्तर से सभी को सान्त्वना मिली।

पूज्यश्री बुधवार को मोरवी से विहार करना चाहते थे किन्तु मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज तथा श्रीमोतीलालजी महाराज की अस्वस्थता के कारण आपको कुछ दिन और ठहरना पड़ा। अन्तत भा० २६ २ ३८ के दिन तीन सन्तों को मोरवी छोड़कर पूज्यश्री ने विहार कर दिया। सनाला लजाई, टकारा होते हुए फाल्गुन शुक्ला सप्तमी को आप बांकानेर पधार गए। लजाई गाव में भी मोरवी-नरेश आपके दर्शन और उपदेश-श्रवण के लिए पधारे और चौमासा मोरवी म

शुभ कार्यों में तथा मेहता वनमाली धरमसी ने १८००) रुपया गुरुकुल को भेंट देने की घोषणा की। सामाजिक रिवाज के अनुसार सातों भाइयों को पोशाक भेंट की गई। श्रीचुन्नीलाल भाई नागजी वोरा की धर्मपत्नी श्रीशंकसी बहिन ने सबको चाँदी के प्याले भेंट किए।

वैशाख कृष्णा द्वितीया के दिन पूज्यश्री ने सरधार की ओर विहार किया। वहाँ से विछिया होते हुए बोटाद पधारे। बोटाद में काठियावाड जैन गुरुकुल पाठशाला की व्यवस्था के लिए एक मीटिंग हुई, जिसमें काठियावाड के मुख्य-मुख्य सभी स्थलों के प्रमुख सज्जन एकत्र हुए। उसी समय लींबडी श्रीसंघ ने पूज्यश्री से लींबडी पधारने की प्रार्थना की। किन्तु समयाभाव के कारण वह स्वीकृति न हो सकी। यहाँ एक बात रह गई है और वह यह कि पूज्यश्री जब बोटाद पधार रहे थे उस समय सापला—ठाकुर साहब के गद्दी पर विराजने का संस्कार हो रहा था। इस प्रसंग पर बहुत से ठाकुर साहब वहाँ उपस्थित हुए थे। जब उन्हें पता चला कि पूज्यश्री इधर होकर पधार रहे हैं तो कई ठाकुर साहब पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित हुए और अत्यन्त आग्रह के साथ आपको सापला ले गए। वहाँ पूज्यश्री का महत्वपूर्ण व्याख्यान हुआ। वीरपुर के दरबार भी वहाँ उपस्थित थे। इन सब नरेशों का भक्तिभाव देखकर पूज्यश्री बहुत प्रभावित हुए।

पूज्यश्री जब चोटीला होते हुए थाना पधारे तो थाने के थानेदार ने पत्नी सहित ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया और अनेक त्याग प्रत्याख्यान हुए। छोटे छोटे ग्रामों मे भी पूज्यश्री के प्रति परम भक्ति थी। यहाँ बहुत से जागीरदार आपके दर्शनार्थ आए और आपके उपदेश से कइयों ने बीड़ी शराब तथा पर स्त्री गमन का त्याग किया।

इस प्रकार जगह जगह धर्मोपदेश करते हुए तथा अनेक जनों को सन्मार्ग पर लगाते हुए पूज्यश्री आषाढ़ कृष्णा १४ को मोरवी पधारे। कुछ दिनों तक आप नगर के बाहर विराजमान रहे। अषाढ़ शुक्ला ३ के दिन आपने नगर में प्रवेश किया। मोरवी की जनता ने चातुर्मास के लिए बहुत परिश्रम किया था। अनेक कठिनाइयों के बाद अपने श्रम को सार्थक होते देख वहाँ की जनता हर्ष विभोर हो रही थी। राजा और प्रजा म सवत्र उत्साह ही उत्साह नजर आता था। अत्यन्त भक्ति और सद्भावना के साथ जनता ने पूज्यश्री का स्वागत किया। मोरवी नरेश भी पधारे बहुत देर तक वार्तालाप की।

छयालीसवाँ चातुर्मास

(सं० १९९५)

श्री श्वे० स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस की जन्म भूमि मोरवी में पूज्यश्री ने सं० १९९५ का चातुर्मास किया। पूज्यश्री दशाश्रीमाली भोजन शाला के विशाल भवन में ठहरे थे, किन्तु व्याख्यान में इतनी भीड़ इकट्ठी होती थी कि वह भवन भी तंग पड़ता था। अतएव विशेष अवसरों पर अन्य स्थानों मे व्याख्यान का आयोजन करना पड़ता था।

पूज्यश्री के चातुर्मास के सम्बन्ध में वहा के नगरसेठ श्रीमुत वीरचन्द अमृतलाल ने समाचार पत्रों में निम्नलिखित विज्ञप्ति प्रकाशित की—

मोरवीनु आदर्श चातुर्मास

प्रसिद्ध पूज्यश्री के जवाहरलालजी महाराजना काठियावाड़ प्रवासे अनेक ओथीना समयोचित व्याख्यानोए श्रोताओं पर आदर्श असर करी छे काठियावाड़ी मुनियो माटे मार्गदर्शन, शिक्षण करेल छे जैन पोपवा पालवानु काम हवे कालजी थी तो ए थी वहेली तके पामसे।

धार्मिक, सामाजिक अने व्यवहारिक विटंबनाओनो तेओश्रीए सचोट, अहिंसक उपायो सूचवी श्रद्धा दृढ़ करी छे, पनी शर्के तेटलो लाभ लुंटी लेमो जोइए, वृद्ध शरीरे पण सिंहनी पेठे गर्जना करता ए आचार्यश्रीनी अमृतवाणी हृदय सोंसरी उतरी जाय छे, दर्शन आववा माटे हवार

अने सांजनी गाडी अनुकूल छे, रातनी गाडीमां मुश्केली रहे छ मोरबी श्रीसंघे स्वागत समितिओ नीमी छे।

राजकोट की स्पेशियल ट्रेन

ता० ५ ८ ३८ को राजकोट से लगभग ४०० व्यक्ति स्पेशियल ट्रेन द्वारा पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए। मोरबी के प्रमुख श्रावक तथा बोर्डिंग के विद्यार्थी उनके स्वागत के लिए स्टेशन पर उपस्थित थे।। सभी आगत और स्वागतार्थ उपस्थित जनसमूह नगरकीर्तन करता हुआ पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुआ। वह दृश्य कितना सुहावना, कितना भव्य, कितना प्रेरक, और मनोहर रहा होगा! इस दृश्य के निर्माता और दर्शक दोनों ही धन्य हैं और इन सबसे बढ़कर धन्य है पूज्यश्री की उज्जवल आत्मा, जिसने जनता में एक नवीन स्फूर्ति भर दी।

राजकोट-संघ ने मोरबी संघ को प्रीतिभोज दिया। ४००० व्यक्ति सम्मिलित हुए।

व्याख्यान मे महाराजा और राजकुमार

मोरबी महाराज साहब, पूज्यश्री का उपदेश सुनने अकसर आते ही रहते थे। उन्होंने जिस उत्साह से साथ चातुर्मास करवाया था उसी उत्साह के साथ सेवा का भी लाभ ले रहे थे। इस बार वे सायला के ठाकुर साहब और वीरपुर के पाटवी राजकुमार को साथ लाए। मोरबी के पाटवी राजकुमार तथा अन्य राजकुमार व्याख्यान में आते रहते थे। इनके अतिरिक्त राजकीय अतिथि, अधिकारी और अन्य राजवर्गीय सज्जन भी पूज्यश्री के उपदेश से लाभ उठाते थे। वीरपुर-नरेश तो व्याख्यान सुनने के निमित्त ही आए थे। यह सब दृश्य देखकर जैनधर्म के प्राचीन क्षत्रिय युग की याद आ जाती थी, जब भारतवर्ष के राजा महाराजा और सम्राट अनगारों के चरणों में मस्तक झुकाकर धर्म की विजय घोषणा करते थे।

जोधपुर, बीकानेर, ब्यावर, अजमेर, राजनादगाँव आदि दूर दूर के प्रदेशों से भी सैकड़ों दर्शनार्थी आते थे। राजकोट गुरुकुल के विद्यार्थी भी पूज्यश्री का आशीर्वाद लेने आये थे। संघ की ओर से सब के स्वागत की समुचित व्यवस्था थी। मोरबी की जैन-जैनेतर प्रजा स्वागत में समान रूप से भाग लेती थी। भोजनशाला का भवन व्याख्यान के लिए छोटा पड़ने लगा तो दरबार गढ़ में व्याख्यान की व्यवस्था की गई। मकान और मोटरो आदि की सुविधाएँ राज्य की ओर से प्रस्तुत थीं।

जूए की बन्दी

जन्माष्टमी के अवसर पर बहुत-से मारवाड़ी और गुजराती भाई पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए। जन्माष्टमी के दिन पूज्यश्री का व्याख्यान दरबारगढ के चौक मे हुआ। हिन्दू मुसलमान आदि सभी जातियों के लोग विशाल संख्या मे उपस्थित थे। मोरबी नरेश और राज्याधिकारी भी आए थे। पूज्यश्री ने श्रीकृष्ण के चरित्र पर बड़ा ही ओजस्वी और मार्मिक भाषण दिया। आपने जन्माष्टमी के दिन खेले जाने वाले जूए की असरकारक शब्दों मे निन्दा की।

इस व्याख्यान का फल यह हुआ कि मोरबी के नामदार महाराजा साहब ने कानून बना कर जूए का बन्द कर दिया। जूए के ठेके से हजारों रुपया वार्षिक की आमदनी रियासत को होती थी। महाराज साहब ने इस हानि की परवाह न की और प्रजा के नैतिक विकास को ही अधिक मूल्यवान् माना।

डा० प्राणजीवन मेहता का सत्कार

आश्विन कृष्णा ११ १२ को हितेच्छु श्रावक मंडल रतलाम का सत्तरहवां वार्षिक अधिवेशन हुआ। समाज के प्रमुख व्यक्ति इस अधिवेशन में सम्मिलित हुए। अधिवेशन में दूसरी

कार्यवाही के साथ जामनगर में पूज्यश्री की सेवा करने वाले धर्म प्रेमी डा० प्राणजीवन मेहता को अभिनन्दन पत्र अर्पित किया गया।

डाक्टर साहब ने अभिनन्दन पत्र के उत्तर में कहा—'मण्डल ने अभिनन्दन पत्र देने का निश्चय किया और श्रीदुर्लभजी भाई ने मुझे स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। किन्तु मेरे खयाल से ऐसा कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं थी। पूज्यश्री के पैर में दर्द हुआ। यह उनके असातावेदनीय का उदय था, लेकिन मुझे तो प्रत्येक दृष्टि से लाभ ही हुआ। पाश्चात्य संस्कारों के दोष से जैनधर्म और साधुओं पर आस्था बहुत कम थी। पूज्यश्री के सम्पर्क में आने पर, सेवा के लाभ के साथ ही मुझे तत्व ज्ञान की खूबियां समझने का अवसर मिला। मैंने जो उपचार किया सो अपना कर्तव्य-पालन किया है। इसमें विशेषता कुछ नहीं थी। फिर भी आपने मेरी सेवा की कद्र की, इसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ।'

इसके पश्चात् आपने तत्त्व ज्ञान संबंधी अपना एक लेख पढ़ा जो माननीय और रोचक था।

आश्विन शुक्ला १,२,३ को काठियावाड़ के दशा श्रीमाली भाइयों का जातीय सम्मेलन हुआ समस्त काठियावाड़ के सैकड़ों प्रतिनिधि उपस्थित हुए। सभी ने पूज्यश्री के दर्शन किये, उपदेश सुना और जाति सुधार का सन्मार्ग पूज्यश्री के संसर्ग से प्राप्त किया।

श्रीफूलचन्दजी महाराज ने मासखमण तप किया।

मोरवी में भावनगर बीकानेर तथा बगड़ी के सङ्घ पूज्यश्री से अपने अपने क्षेत्रों में पधारने की प्रार्थना करने आये।

कार्तिक शुक्ला ४ पूज्यश्री का जन्म दिन था। उस दिन मोरवी के नामदार महाराजा ने अपनी आन्तरिक प्रेरणा से दीन हीन, गरीब लोगों को भोजन दान दिया। पशुओं को भी उस दिन विशिष्ट भोजन दिया गया। इस प्रकार महाराजा साहब ने पूज्यश्री के प्रति अपनी आन्तरिक भक्ति का परिचय दिया।

मोरवी-चातुर्मास पूर्ण होने पर पूज्यश्री ने बीकानेर की ओर विहार किया। मोरवी-नरेश तथा हजारों नर नारियों ने दुःखपूर्ण हृदय से आपको विदाई दी। हजारों आदमी आपको दूर तक पहुँचाने गए। बहुत-से लोग तो सनाला ग्राम तक भी साथ-साथ गए। विदाई का दृश्य अत्यन्त करुणापूर्ण और भावमय था।

बीच के ग्रामों को पवित्र करते हुए आप बीकानेर पधारे। यहाँ राजकोट पधारने की प्रार्थना करने आया। तदनुसार आप राजकोट पधारे।

काठियावाड़ जैन गुरुकुल में

राजकोट श्रीसंघ की प्रार्थना से ता० ४ १२ ३८ को पूज्यश्री ने अपने चरणकमलों से गुरुकुल को पवित्र किया। राजकोट की भावुक जनता विशाल संख्या में उपस्थित थी। शहर से दूर होने पर भी लगभग ८०० नर-नारी गुरुकुल भूमि में उपस्थित थे सबसे पहले गुरुकुल के एक छात्र ने मधुर कण्ठ से प्रार्थना गायन किया। इसके बाद गुरुकुल के प्रिंसिपल श्रीअमृतलाल सनचन्द गोपाणी एम० ए० ने प्रासंगिक प्रवचन किया। आपने कहा—

जिस महापुरुष के समयोचित उपदेश से प्रेरित होकर समाज नेताओं ने गुरुकुल जैसी सर्वोच्च संस्था स्थापित की है उस महापुरुष के चरणकमलों से हमारी इस संस्था को पवित्र होते देखकर हमें अपूर्व हर्ष हो रहा है। प्रत्येक धर्म ने अपनी संस्कृति, तद्गत मौलिकतत्त्व ज्ञान और क्रिया-काण्ड को सुरक्षित रखने के अनेक प्रकार से अनेक प्रयत्न किए हैं। अब भी सभी प्रयत्न कर रहे हैं। संस्कृति को जीवित रखने के प्रबल साधनों में साहित्य, संघ और संस्था, इन तीनों का मुख्य स्थान है। प्राचीन समय में नालन्दा विश्वविद्यालय तथा तक्षशिला विद्यापीठ ने अपनी संस्कृति फैलाने में प्रबल सहयोग किया था। ऐतिहासिक सत्य खोजा जाय तो 'संस्था'

नाम का अग उपर्युक्त तीन अगो म भी विशेष बल वाला है ऐसा हम कह सकते हैं। क्योंकि इस मे सेवा का आदश सुरक्षित रखने के लिए शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास के सुन्दर समन्वय की ओर व्यवहार्य ध्यान देने का पूरा अवकाश है। ऐसी सस्था मे से आदश से ओत प्रोत एक विभूति निकल जाय तो भी कम नही है। ऐसी एक ही विभूति गुरुकुल जैसी अनेक आदश सस्थाएँ स्थान स्थान पर स्थापित कर देगी। वह अनेक विभूतियो को उत्पन्न करेगी तथा जगदुद्धारक, अहिसा प्रधान, तथा विश्व सस्कृति बनने योग्य जैन सस्कृति का साम्राज्य स्थापित कर देगी

वक्तव्य के बाद विदवय मुनिश्री श्रीमल्लजी ने महाराज ब्रह्मचारियों की सस्कृत, अधमागधी तथा धार्मिक विषयो की परीक्षा ली। चार महीने के अल्प समय म गुरुकुल की प्रगति देखकर हर्ष प्रकट किया। पूज्यश्री के आदेश मे मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज न प्रसगोचित प्रवचन करते हुए छात्रो को उपयोगी उपदेश दिया। उस समय गुरुकुल को करीब ४००) रु० भेंट मिला।

दो उल्लेखनीय प्रसग

राजकोट म यो तो बहुत से भाई पूज्यश्री के समागम क लिए आते जाते रहते थे, मगर इनमे दो प्रसग यहा उल्लेखनीय हैं—

एक दिन अहमदाबाद के करोडपति-परिवार की सदस्या श्रीमती मदुला बेन पूज्यश्री की सेवा मे उपस्थित हुई पूज्यश्री की उदार और प्रभावक वाणी सुनकर उन्होने कहा—

साधुओं के विषय मे मेरा अनुभव बडा कटुक है। मरा खयाल था कि साधु हमारे समाज के कलक है। पर आज पूज्यश्री का उपदेश सुनकर मुझे लगा कि मेरा खयाल भ्रमपूण था। सब धान बाईस पसेरी नहीं होते—सभी साधु एक सरीखे नही हैं। मेरा भ्रम दूर करने के लिए मैं पूज्य महाराज की बड़ी आभारी हूँ।

एक बोहरा सज्जन थे—गाधीजी के कट्टर भक्त। गाधीजी के प्रति उन्हें प्रगाढ श्रद्धा थी। गाधीजी के सिवाय उनकी निगाह म और कोई सत पुरुप था ही नही। अचानक वे अपने एक मित्र से मिलने के लिए राजकोट आय। उनके यह मित्र पूज्यश्री के व्याख्यानों का अमृत चख चुके थे। प्राय प्रतिदिन वे व्याख्यान सुनने आते थे। उन्होंने अपने मेहमान मित्र से पूज्यश्री की प्रशसा की और व्याख्यान सुनने के लिए कहा।

मगर वह गांधी—अद्वैतवादी थे। कहने लगे—मैं गांधीजी को छोड और किसी को साधु ही नही समझता और न किसी का उपदेश सुनता हूँ। मुझे माफ करो। मैं नही चलूँगा।

मेजबान अपने मेहमान का रूख देखकर, उनकी उचित व्यवस्था करके व्याख्यान सुनने चले गये। लौटकर जब घर पहुँचे तो व्याख्यान की अपन मेहमान के सामने तारीफ करन लगे। मगर कट्टर मेहमान का मन आकर्पित नहीं हुआ।

दूसरे दिन भी बहुत कुछ कहने सुनने पर भी वह बोहरा भाई व्याख्यान सुनने नहीं गया। लेकिन मेजबान से नही रहा गया। उसे एक दिन का नागा सहन नही हुआ। वह फिर अकेला व्याख्यान सुनने चला गया।

जब वह अकेला घर पर रह गया तो उसने सोचा—मैं थोडे ही दिनो के लिए अपने मित्र से मिलने आया हूँ। मेरा मित्र मुझे छोडकर व्याख्यान सुनने चला जाता है। वह मुझे छोड सकता है मगर व्याख्यान सुनना नहीं छोड सकता! ऐसी क्या विशेषता है उस साधु म?

इस प्रकार विचारों की तरगों में बोहरा भाई डूबता उतराता था कि उसी समय व्याख्यान सुनकर उसका मित्र लौट आया। आज उसका मित्र और दिनो से अधिक प्रसन्न था। आते ही बोला—भाई, मैंने तुम्हे मनाया था कि चलो व्याख्यान सुनने, मगर तुम नहीं माने। चलते तो आखें खुल जातीं! कितना सरस और सुन्दर उपदेश था! कल तुम्हें साथ ले चले बिना नही रहूँगा।

आखिर तीसरे दिन वह वोहरा सज्जन अपने मित्र के साथ व्याख्यान सुनने को राजी हो गए। पूज्यश्री के उपदेश में पहुँचे। पूज्यश्री की दिल हिला देने वाली मार्मिक वाणी सुनकर गांधी भक्त वोहरा चकित रह गया। बड़ी उत्कंठा के साथ उसने सम्पूर्ण उपदेश सुना। जब पूज्यश्री का उपदेश समाप्त हो चुका और अन्य श्रोता उठ उठकर जाने लगे तो वह पूज्यश्री के समीप आया। कहने लगा—महाराज, मैं बड़े घाटे में आ गया। तीन दिन से राजकोट में हूँ और आज ही उपदेश सुन पाया। दो दिन मेरे वृथा चले गये। अब इस घाटे की पूर्ति करनी होगी और वह इस तरह कि आप मेरे साथ भावनगर पधारें। भावनगर की जनता को आपका लाभ दिलवाऊँगा और मैं भी लाभ लूँगा। तब मेरा घाटा पूरा होगा।

पूज्यश्री ने हल्की सी मुस्कराहट के साथ कहा—'मौका होगा तो देखा जायगा।'

वोहरा—मौका ही मौका है। कल प्रातःकाल की ट्रेन से मैं जा रहा हूँ। आप भी साथ ही पधारिये। वहाँ आपकी समस्त आवश्यक व्यवस्था हो जायेगी। किसी किस्म का ख्याल मत कीजिए।

पास में खड़े एक श्रावक भाई बीच में बोले—महाराज तो ट्रेन में नहीं चलते, पैदल ही भ्रमण करते हैं।

वोहरा भाई इस प्रकार चकित रह गये मानों किसी ने ठग लिया हो। फिर भी उन्होंने कहा—तो फिर पैदल ही सही। मगर एक बार भावनगर पधारना ही पड़ेगा। आप सरीखे संत बड़े भाग्य से मिलते हैं। मैं अच्छी तकदीर लेकर आया था कि आपके दर्शन हो गए।

पूज्यश्री ने फिर वही उत्तर दिया। वोहरा सज्जन भक्ति से गद्गद् होकर लौट गये।

राजकोट का सत्याग्रह

पूज्यश्री जब राजकोट पधारे तब राजकोट का प्रसिद्ध सत्याग्रह चालू था। प्रजा में असंतोष की ज्वाला धधक रही थी। सैकड़ों प्रजा सेवक जेल में ठूँसे जा रहे थे और उन्हें नाना प्रकार के कष्ट दिये जा रहे थे। राजा और प्रजा का यह संघर्ष घोर अशान्ति का कारण बना हुआ था।

पूज्यश्री ने उस समय शान्त और त्यागमय जीवन बिताने की प्रेरणा दी। साथ ही जब तक सत्याग्रही भाई-बहिन कारावास की यातनाएँ भोग रहे हैं तब तक पक्वान्न न खाने, ब्रह्मचर्य पालने आदि के नियम रखने का अनुरोध किया। जैन और जैनेतर जनता ने आपके उपदेश को आदेश की तरह पालन किया।

पूज्यश्री ने सत्याग्रह के अवसर पर जनता को यह जो उपदेश दिया है, इसे पढ़ सुनकर साधारण बुद्धि वाला कह सकता है कि इन बातों से सत्याग्रह का क्या सम्बन्ध है? मगर सूक्ष्म बुद्धि से विचार किया जाय तो इनका भारी महत्व मालूम होगा। गांधीजी ने राजनीतिक क्षेत्र में सर्वप्रथम अहिंसा का प्रयोग किया, मगर पूज्यश्री के तो समग्र जीवन की साधना अहिंसा ही थी। उन्होंने अहिंसा की बारीकियों को, अहिंसा के तेज को, अहिंसा की अमोघता को न केवल समझा ही था, वरन् अपने प्रत्येक व्यवहार में उसका अनुसरण किया था। यही कारण है कि वे अहिंसात्मक उपायों द्वारा ही सत्याग्रह में योग देने की प्रेरणा कर सकते थे। उन्होंने तप-त्याग का जो उपदेश दिया है, इससे सत्याग्रह के प्रति सहयोग की भावना और सत्याग्रहियों के साथ सहानुभूति की भावना उत्पन्न होती है और प्रजा की सहानुभूति ही सत्याग्रही का सर्वोत्तम बल है। इस प्रकार प्रजा के मानस में सत्याग्रह और सत्याग्रहियों के प्रति सहानुभूति उत्पन्न करके पूज्यश्री ने सत्याग्रहियों को बलवान् और सत्याग्रह को प्रभावशाली बनाने का महत्वपूर्ण, कौशलपूर्ण, और व्यवहार्य उपाय खोज निकाला है। पूज्यश्री ने यह उपदेश देकर साधारण राजनीतिज्ञ की बुद्धि से भी परे की राजनीतिपटुता प्रकट की है। यह उनकी प्रतिभाशालिता का प्रमाण है।

सत्याग्रह के विषय में पूज्यश्री की धारणा मनन करने योग्य है। आपके यह शब्द कितने प्रभावशाली हैं —

'सत्याग्रह के बल की तुलना कोई बल नहीं कर सकता। इस बल के सामने, मनुष्यशक्ति तो क्या, देवशक्ति भी हार मान जाती है। कामदेवश्रावक पर देवता ने अपनी सारी शक्ति का प्रयोग किया, लेकिन कामदेव न अपनी रक्षा के लिए किसी अन्य शक्ति का आश्रय न लेकर केवल सत्योपार्जित आत्मबल से ही उस देवता की सारी शक्ति को परास्त कर दिया।

प्रहलाद के जीवन का इतिहास भी सत्याग्रह का महत्वपूर्ण दृष्टान्त है। प्रहलाद ने अपने पिता की अनुचित आज्ञा नहीं मानी। इस कारण उस पर कितने ही अत्याचार किये गए, लेकिन अन्त मे सत्याग्रह के सामने अत्याचारी पिता को ही परास्त होना पडा।

भगवान् महावीर ने सत्याग्रह का प्रयोग पहले अपने ऊपर कर लिया था। इससे वे चण्ड कौशिक ऐसे विषधर सर्प के स्थान पर, लोगो के मना करने पर भी निभयतापूर्वक चले गए।'

जिस प्रकार धर्म सिद्धान्त के लिए मनुष्य का असहयोग करना आवश्यक उसी प्रकार लौकिक नीतिमय व्यवहारो में राज्यशासन की ओर से अन्याय मिलता हो तो ऐसी दशा मे राज्य भक्तियुक्त सविनय असहकार-असहयोग करना प्रजा का मुख्य धर्म है। वह प्रजा नपुसक है जो चुपचाप अन्याय को सहन कर लेती है और उसके विरुद्ध चूं तक नही करती। ऐसी प्रजा अपना ही नाश नहीं करती परन्तु उस राजा के नाश का भी कारण बनती है जिसकी वह प्रजा है। जिस प्रजा में अन्याय के प्रतिकार का सामर्थ्य नही है, उसे कम से कम इतना तो प्रकट कर ही देना चाहिए कि अमुक कानून या कार्य हम हितकर नहीं है और हम उसे नापसद करते हैं।'

अन्याय के प्रति असहयोग न करने से बडा भारी अनर्थ हो जाता है। इस कथन की पुष्टि के लिए महाभारत के युद्ध पर ही दृष्टि डालिए। अगर भीष्म और द्रोण आदि महारथियो ने कौरवों से असहयोग कर दिया होता तो इतना भीषण रक्तपात न होता और इस देश के अधःपतन का आरम्भ भी न होता। अन्याय से असहयोग न करने के कारण रक्त की नदियाँ बहीं और देश को इतनी भीषण क्षति पहुँची कि सदियाँ व्यतीत हो जाने पर भी वह सँभल न सका।

राजकोट के सत्याग्रह में पूज्यश्री का धर्मार्पित योगदान बहुत सहायक रहा। पूज्यश्री के उपदेश के कारण सर्वसाधारण जनता में उनका मान और भी अधिक बढ़ गया।

मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी को राजकोट से विहार करके पूज्यश्री चोटीला आदि स्थानों की जनता को धर्म का अमृतपान कराते हुए माघ कृष्णा १४ को राणपुर पधारे। यहाँ भावनगर, लींबडी आदि अनेक सघो ने विनती की किन्तु आपने शीघ्र अहमदाबाद पधारने का विचार प्रकट किया। धुधुका होते हुए आप सुदामडा पधारे। यहाँ दो भाइयो ने ब्रह्मचर्य-व्रत अगीकार किया। सेजकपुर मे आपके उपदेश से श्रावको का पारस्परिक वैमनस्य हट गया।

पूज्यश्री ने वृद्धावस्था और अस्वस्थता होने पर भी काठियावाड में स० १९९३ में ४१७ मील का और स० ९४ मे ३२८ मील का लम्बा प्रवास किया और धर्म की अपूर्व प्रभावना की। तत्पश्चात आप गुजरात पधारे।

अहमदाबाद मे पदार्पण

ता० १७ २ ३९ को पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ अहमदाबाद पधारने वाले थे। आपके आगमन की सूचना एक पत्रिका द्वारा नगर में फैला दी गई थी। आपके स्वागत के लिए नगर मे अपूर्व उत्साह नजर आ रहा था। हजारो नर नारी प्रात काल ही एलिस ब्रिज की ओर चल जा रहे थे। विक्टोरिया गार्डन से जुलूस बनाकर पूज्यश्री को नगर में लाने का निश्चय किया गया था। अतएव सब को विक्टोरिया गार्डन के पास रोक लिया गया। कुछ आगेवान व्यक्ति मोटरो से प्रीतमनगर, पालडी और सरखेज तक पहुँच गए।

लगभग साढ़े आठ बजे पूज्यश्री विक्टोरिया गार्डन के पास पधारे। पूज्यश्री के जयनाद से आकाश गूँज उठा और जनता जुलूस के रूप में परिणत हो गई थी। सबसे आगे राष्ट्रीय ध्वजा लिए स्थानकवासी जैन बोर्डिंग के विद्यार्थी चल रहे थे। उनके पीछे छोटे छोटे बालकों का समूह था। बालकों के हाथ में आदर्श वाक्य सुशोभित हो रहे थे। भगवान् महावीर तथा पूज्यश्री की जयध्वनि से बीच बीच में दिशाएँ गूँज उठती थीं। उनके पीछे पूज्यश्री अन्य मुनियों के साथ अपनी गंभीर एवं तेजोमय मुखमुद्रा के साथ चल रहे थे। पीछे श्रीसंघ के आगेवान नेता थे। सब के पीछे महिलामण्डल था। महिलाएँ मांगलिक गीत गाती हुई उत्साह के साथ चल रही थीं।

जुलूस नगर के प्रधान भागों से होता हुआ घीकांटा रोड पर आ पहुँचा। फिर दिल्ली दरवाजे से निकल कर माधवपुरा में समाप्त हुआ। वहीं पूज्यश्री ठहरने वाले थे। समस्त नर नारियों के बैठ जाने पर पूज्यश्री ने मंगलप्रार्थना की। और फिर पन्द्रह मिनट भाषण दिया। अन्त में सब लोग विदा हुए। दूसरे सम्प्रदाय के सन्तों और सतियों ने भी आपके स्वागत में स्नेहपूर्वक भाग लिया था। दरियापुरी सम्प्रदाय के सन्तों के साथ, जो वहाँ मौजूद थे, पारस्परिक वात्सल्य रहा।

पूज्यश्री माधवपुरा में ठहरे थे किन्तु व्याख्यान देने के लिए जैन बोर्डिंग के समीप, एम० वाडीलाल के नवीन विशाल भवन में पधारते थे। प्रथम तो अहमदाबाद नगर ही काफी बड़ा है और फिर वहां पूज्यश्री जैसे महान् प्रभावक महापुरुष का पधारना हुआ। ऐसी स्थिति में भीड़ का क्या ठिकाना था! मूर्तिपूजक भाई तथा जैनेतर बन्धु भी बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे। व्याख्यान के अन्त में लोग तमाखू, बीड़ी, चाय आदि का त्याग करते थे। बाहर के दर्शनार्थियों की भीड़ रहती थी। फिर भी अहमदाबाद श्रीसंघ उत्साह के साथ सबका स्वागत करता था।

विविध विषयों पर पूज्यश्री का प्रवचन होता था। आपके प्रवचन श्रोताओं के अन्तःकरण पर गहरी छाप लगा देते थे। अपूर्व भक्ति और अद्भुत श्रद्धा का वातावरण था।

अहमदाबाद में पूज्यश्री का चातुर्मास कराने के लिए वहां की जनता बहुत अर्से से प्रयत्नशील और उत्सुक थी। शेष काल के लिए पधारने पर वहाँ के श्रावकों ने फिर प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया—'सम्प्रदाय के नियमानुसार द्रव्य, क्षेत्र काल भाव अनुकूल होगा तो इस बार चातुर्मास अहमदाबाद में करने का भाव है।

पूज्यश्री की इस स्वीकृति से जनता के हर्ष का पार न रहा। पूज्यश्री विहार करके, नगर के बाहर एलिस ब्रिज में श्रीचीमकलाल वकील की कोठी में विराजे।

फिर विहार

एलिसब्रिज से पूज्यश्री ने ठा० ६ से विहार किया। अस्वास्थ्य के कारण शेष संत अहमदाबाद में ही रह गए। अहमदाबाद से आप अनुक्रम से आकर बड़ौदा पधारे। मारवाड़ से आकर दो संतों के मिल जाने के कारण आप ८ ठाणा हो गये।

पूज्यश्री पहली बार ही बड़ौदा पधारे थे। वहां स्थानकवासी जैनों की संख्या भी बहुत अधिक नहीं है। किन्तु आपकी व्यापक कीर्ति और व्याख्यान शैली से प्रभावित होकर श्रोताओं की विशाल संख्या इकट्ठी हो जाती थी। वहाँ की विद्वान जनता पर भी पूज्यश्री का अच्छा प्रभाव पड़ा। यहां आप करीब १५-२० दिन ठहर कर क्रमशः विचरते हुए बीसलपुर पधारे। स्थान छोटा था और इस कारण अधिक धूमधाम नहीं रहती थी। पूज्यश्री को यह स्थान शान्तिप्रद प्रतीत हुआ। आप यहां आठ दिन ठहरे। गांव वालों के मानों भाग्य खुल गये। उन्होंने अतीव विनम्रता के साथ पूज्यश्री की सेवा की। बीसलपुर से मोरया साणन्द होते हुए फिर एलिसब्रिज पधारे और श्रीचीमकलाल वकील की कोठी में विराजमान हुए। आषाढ़ शुक्ला सप्तमी को नगर में प्रवेश किया।

बीच-बीच की अस्वस्थता ने यह चौमासा कुछ फीका सा कर दिया। पूज्यश्री में अब पहले जैसा उत्साह, वह गंभीर और वह विशिष्ट शक्ति न रह गई। प्रतीत होने लगा कि अब पूज्यश्री के वह दिन समीप आ रहे हैं, जब विश्राम और स्थिरवास आवश्यक हो जाता है।

घाटकोपर श्रीसंघ ने पूज्यश्री को ठाणापति के रूप में घाटकोपर में विराजने के लिए अहमदाबाद आकर प्रार्थना की। आगत दर्शनार्थी भाइयों के स्वागत के लिए ८० हजार के वचन भी वहाँ मिल चुके थे किन्तु जामनगर चातुर्मास के समय पूज्यश्री बीकानेर-श्रीसंघ को मारवाड़ की तरफ विहार करने का आश्वासन दे चुके थे तदनुसार चौमासा पूर्ण होते ही मारवाड़ की ओर आने का विचार था। मालवा की धर्मप्रेमी जनता को भी इससे बड़ी निराशा हुई। उनकी अभिलाषा थी कि पूज्यश्री मालवा मेवाड़ होते हुए मारवाड़ पधारें। रतलाम, थांदला और थादला आदि मालवा के श्रीसंघों ने बहुत आग्रह किया किन्तु पूज्यश्री इतना चक्कर काटकर मारवाड़ तक पहुँचने में अशक्त प्रतीत होते थे। रतलाम श्रीसंघ ने चाहा कि अगर आप मारवाड़ न पधार सकें तो रतलाम में ही स्थिरवास करें। वहाँ सब प्रकार उन्हें शान्ति मिलेगी। मगर पूज्यश्री ने उस समय कोई निश्चित उत्तर नहीं दिया।

कार्तिक शुक्ला ४ को पूज्यश्री का जन्म दिन था। अशक्ति के कारण उस दिन भी आप व्याख्यान में नहीं पधार सके। पंडित मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज ने पूज्यश्री के जीवन पर बहुत सुन्दर ढंग से प्रकाश डाला। अहमदाबाद संघ के मंत्रीजी ने उस दिन जीव-दया के लिए ६०००) रु० एकत्रित होने की घोषणा की।

अहमदाबाद से मारवाड़

मगसिर वदी १ को पूज्यश्री ने अहमदाबाद से विहार किया। हजारों नर-नारी आपको श्रद्धा के साथ विदाई देने आए। माधवपुरा से विहार करके आप जमालपुर दरवाजे के बाहर पधारे। वहाँ से एलिसब्रिज होते हुए ता० २-१२-३९ को ८ ठाणों से थोसलपुर पधारे।

थोसलपुर की जलवायु अनुकूल होने के कारण वहाँ आपका स्वास्थ्य कुछ ठीक रहा। संघ ने बहुत भक्ति की। २० दिन वहाँ विराज कर ता० २२ दिसम्बर को कलोल की ओर विहार किया। १५ दिन कलोल में विराजमान रहे और फिर महसाणा की ओर पधारे। तदनन्तर सिद्धपुर, ऊंमा और फिर पालनपुर पधार गए।

शतावधानी पं० र० मुनि श्रीरत्नचन्द्रजी महाराज पूज्यश्री से मिलना चाहते थे और मारवाड़ से उग्र विहार करके पधार रहे थे। उनकी प्रतीक्षा में पूज्यश्री पालनपुर विराज रहे। ता० १०-२-४० को शतावधानीजी पालनपुर पधारे। दोनों महापुरुष बड़े प्रेम और वात्सल्य के साथ मिले। शतावधानीजी ने सम्मेलन समिति के विषय में बातचीत की। उस समय राजकोट, अहमदाबाद, रतलाम उदयपुर तथा अजमेर आदि अनेक स्थानों के भाई उपस्थित थे। घाटकोपर में होने वाली साधु सम्मेलन समिति के सदस्य भी मौजूद थे। शतावधानीजी ने पूज्यश्री से उनकी बनाई हुई 'वर्द्धमानसंघ' की योजना ली और उसके आधार पर घाटकोपर में एक नई योजना बनाई। इस प्रकार विचार विनिमय के बाद ता० १८-२-४० को शतावधानीजी ने सिद्धपुर की ओर विहार किया। ता० २३-२-४० को पूज्यश्री मारवाड़ की ओर पधारे।

अनेक स्थानों को पावन करते हुए पूज्यश्री फाल्गुन शुक्ला १ को सादड़ी (मारवाड़) पधार गए। फाल्गुन शुक्ला १३ को युवाचार्यश्री भी पूज्यश्री की सेवा में सादड़ी पधारे। धर्म का ठाठ लगा रहा।

सादड़ी से विहार हुआ और चैत्र कृ० ७ को आप ठाणा ६ से राणावास पधारे। दो दिन वहाँ विराजे। देवगढ़ से १५० श्रावक श्राविकाएँ आपके दर्शनार्थ उपस्थित हुए। एक श्रावक ने

सपत्नीक ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। यहा से विहार करके सिरियारी, सारण होते हुए पूज्यश्री बगडी पधार गए। युवाचार्यश्री पहले दिन प्रात काल ही बगडी पधार चुके थे।

बगडी के सुप्रसिद्ध सेठ लक्ष्मीचदजी धाडीवाल, उनकी धर्म पत्नी सौ० श्रीमती लक्ष्मीबाई तथा समस्त श्रीसघ की उत्कृष्ट अभिलाषा थी कि पूज्यश्री का एक चौमासा बगडी मे होना चाहिए। कई बार प्रार्थना की गई थी। पूज्यश्री ने मारवाड की ओर पधारने पर बगडी फरसने का आश्वासन भी दिया था। तदनुसार आप बगडी पधारे।

बगडी पधारने पर श्रीसघ ने और वहाँ के कुवर साहब ने चातुर्मास के लिए प्रार्थना की। पूज्यश्री ने अत्यन्त आग्रह देख अपनी मर्यादा के अनुसार चातुर्मास करने की स्वीकृति दे दी।

ब्यावर मे

पूज्यश्री जब सादडी विराजमान थे ब्यावर के कई श्रावको ने पूज्यश्री की सेवा में उपस्थित होकर ब्यावर पधारने की आग्रहभरी प्रार्थना की थी। ब्यावर मे मण्डल का अधिवेशन होने वाला था और साम्प्रदायिक विषयो पर अन्य मुनियो के साथ विचार विनिमय भी करना था। अत पूज्यश्री ने ब्यावर पधारने की स्वीकृति दे दी थी। तदनुसार ता० १२ ४ ४० को आप १७ ठाणों से ब्यावर पधारे। युवाचार्य श्री साथ ही थे। लगभग २००० नर नारियो ने दूर तक सामने जाकर पूज्यश्री का हार्दिक स्वागत किया। पूज्यश्री ने जय घोषो के साथ ब्यावर मे प्रवेश किया।

पूज्यश्री के पधारने से आसपास विचरने वाले सत भी ब्यावर पधार गए। २९ साधु एकत्रित हो गए। ७३ सतिया भी वहा पधार गई। इनके अतिरिक्त श्रीनन्दकुवरजी महाराज तथा पूज्यश्री हस्तीमलजी महाराज के सम्प्रदाय की सतिया भी वहीं विराजमान थीं।

इतने सतो और महासतियो के एकत्र दर्शन करने के निमित्त बाहर की जनता का आना स्वाभाविक ही था। जिस पर पूज्यश्री लम्बे अर्से बाद गुजरात काठियावाड की तरफ से पधारे थे और इस प्रात की जनता आपके दर्शनों की प्यासी थी। सैंकडो भाई बाहर से आए। बीकानेर और भीनासर के भक्त दर्शनार्थी अधिक सख्या में थे। उस समय ब्यावर का क्या कहना! वह एक तीर्थ धाम सा प्रतीत होता था। वही उमग, असीम उत्साह और उत्कृष्ट धर्मप्रेम देखकर हृदय प्रफुल्लित हो उठता था। अब की बार विशेषता यह थी कि सभी सम्प्रदायो के श्रावक समान भाव से व्याख्यान मे आते थे। झगडे की झोपडी ने शान्ति कुटीर का रूप धारण कर लिया था। करीब ५ हजार जनता व्याख्यान मे उपस्थित होती थी।

युवाचार्य श्री ही प्राय व्याख्यान फरमाते थे और कभी कभी पडित—मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज भी। पूज्यश्री के मुखारविंद से निकलने वाली वाणी सुनने की लोगो की उत्कृष्ट अभिलाषा थी। उसके बिना लोगों के हृदय में एक प्रकार की असतुष्टि सी रहती थी। किन्तु कमजोरी के कारण पूज्यश्री व्याख्यान न फरमा सके। महावीर जयन्ती के दिन अत्यन्त आग्रह होने से पूज्यश्री ने व्याख्यान आरम्भ किया किन्तु आप प्रार्थना भी पूरी न कर सके और व्याख्यान स्थगित करना पडा।

मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज के व्याख्यानो से ब्यावर का युवक समाज बहुत प्रभावित हुआ। आपका व्याख्यान सामयिक और सरस होता था। निरन्तर पूज्यश्री की सेवा में रहने से उनके विचारों मे पूज्यश्री के विचारो की छाप दिखाई देने लगी थी। ता० १४ को जनता के आग्रह से आपने व्याख्यान फरमाया। श्रोता बहुत प्रभावित हुए। दूसरे दिन व्याख्यान का स्थान खचाखच भर गया। आपने सादगी देशभक्ति, धर्मप्रेम आदि पर सुन्दर प्रकाश डाला। नवयुवक समाज आपके व्याख्यानों के लिए उत्कण्ठित रहने लगा।

अजमेर के प्रसिद्ध सेठ गाढमलजी लोढा ने ब्यावर आकर पूज्यश्री से अजमेर पधारने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री, युवाचार्यश्री के साथ ता० ९ ५ ४० को अजमेर पधारे। आपके

पधारने से अजमेर में काफी धर्मजागृति हुई। ता० १० को अक्षय तृतीया के दिन, युवाचार्यश्री ने भगवान् ऋषभदेव के पारणा का सरस वर्णन करते हुए भगवान् के जीवन पर प्रभावक प्रकाश डाला। ता० ११ ५ ४० को युवाचार्यश्री ने वृद्ध विवाह की हानियाँ बतलाते हुए हृदयस्पर्शी व्याख्यान फरमाया। बहुत से भाइयों ने ४० वर्ष से अधिक उम्र वाले की शादी में सम्मिलित न होने और बाइयों ने गन्दे गीत न गाने की प्रतिज्ञा की। पूज्यश्री शेष काल अजमेर विराजे। उदयपुर, बीकानेर, टोंक ब्यावर आदि नगरों के बहुत से दर्शनार्थी भाई पूज्यश्री की सेवा मे आए।

ता० १० ६ ४० को अजमेर से विहार करके ब्यावर और फिर नीमाज पधारे। यहाँ लोगों में पार्टी बन्दी हो रही थी। पूज्यश्री के उपदेश से वमनस्य हट गया और प्रेम की प्रतिष्ठा हुई। श्रीचाँदमलजी फूनफगर ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत धारण किया। यहाँ से विहार कर आप आषाढ़ शु० १ ता० ५ ७ ४० को ठा० ७ से बगड़ी पधारे। श्रीसंघ ने अत्यन्त समारोह के साथ स्वागत किया और अपनी उत्कृष्ट भक्तिभावना प्रकट की।

अड़तालीसवा चातुर्मास (सं १९९७)

वि० सं० १९९७ का चातुर्मास पूज्यश्री ने ठा० ८ से बगड़ी में किया। यहाँ आपका स्वास्थ्य कुछ सुधर गया। कभी कभी व्याख्यान भी फर्माने लगे। नित्य का व्याख्यान मुनिश्री श्रीमलजी महाराज फर्माते थे।

प्रवर्तिनी महासती श्रीकेसरकुंवरजी महाराज ने ठा० १० से तथा प्र० श्रीआनन्दकुंवरजी महाराज के सम्प्रदाय की महासती कालीजी महाराज ने भी ठा० ४ से बगड़ी में चातुर्मास किया था। मुनि श्रीसूरजमलजी महाराज ने एकान्तर तप किया और महासती श्रीकालीजी ने ११ का थोक किया। पूज्यश्री के उपदेश और ब्यावर के खीवराजजी छाजेड़ के प्रयत्न से यहाँ के कसाई कासिमखां ने जीव हिंसा का त्याग कर दिया। श्रावण और भाद्रपद महीनों में खूब तपस्या हुई। एक बाई ने १५ का थोक किया श्रीलालचन्दजी देवड़ा ने परिपूर्ण पौषध के साथ अठाई की। एक ३१ वर्ष के जवान माली भाई ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया और श्रद्धा ग्रहण की। १० और ५ की तपस्या तो बहुतों ने की। काफी तपस्या हुई। अठाई बेला तेला, पचरंगिया थोक आदि भाइयों और बहिनों ने करके अपने कर्मों की निर्जरा की। खूब धर्मध्यान हुआ। पूज्यश्री का स्वास्थ्य साधारण तौर से ठीक रहा। पर्युषण के दिनों मे आधा घण्टा तक प्रवचन करते रहे। चातुर्मास के अन्त में चार सज्जनों ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत अंगीकार किया।

कार्तिक शुक्ला चतुर्थी के दिन यहाँ समारोह और उत्साह के साथ श्रीजवाहरलाल-जयन्ती मनाई गई। पं० र० मुनिश्री श्रीमलजी महाराज ने पूज्यश्री के प्रभावक चरित्र पर प्रकाश डाला। और आपकी गुणगाथा गाई। अन्य भाइयों ने भी पूज्यश्री को श्रद्धांजलि अर्पित की। यहाँ के उत्साही भाइयों ने इस उपलक्ष्य में 'जवाहर ज्योति (हिन्दी) प्रकाशित करने का निश्चय किया। बाद में यह महत्त्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है।

बगड़ी का चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्यश्री ने विहार किया। एक सप्ताह सेवाज और १० १२ दिन सोजतरोड ठहर कर सोजत सिटी पधार गए। यहाँ अन्य सन्तों के पधार जाने से कुल सन्त ठा० १७ हो गये।

जब पूज्यश्री चौमासे में बगड़ी विराजते थे, उन्हीं दिनों मोरवी की ओर भयंकर अकाल पड़ा था। इस अकाल के समय मोरवी नरेश ने किसानों को बैल आदि देकर तथा कुएँ खुदवाकर सराहनीय कार्य किया। हजारों—मनुष्यों को मरने से बचा लिया। मोरवी नरेश ने श्रीविनयचन्द भाई जौहरी के साथ संदेश भेजा—यह सब पूज्यश्री का ही प्रताप है कि मुझमें दुखियों के प्रति दया भाव उत्पन्न हुआ है!

सौ० सेठानी लक्ष्मीबाईजी

बगडी चातुर्मास के लिए वहाँ के संघ की प्रार्थना तो थी ही, मगर वहाँ के अग्रगण्य श्रावक सेठ लक्ष्मीचन्दजी धाणीवाल का विशेष आग्रह था और कहना चाहिए कि सेठ साहब का अपेक्षा भी उनकी धर्मशीला और पतिपरायणा धर्मपत्नी श्रीमती लक्ष्मीबाई का और भी अधिक आग्रह था।

सेठानी लक्ष्मीबाईजी पहले तेरापंथी सम्प्रदाय की अनुयायिनी थी। एक बार तेरहपंथी पूज्यश्री कालूरामजी स्वामी बगडी में आये। सेठानीजी पढी लिखी और समझदार महिला हैं। आपने कालूरामजी स्वामी से अनेक प्रश्न किये जिनमे एक प्रश्न यह भी था कि अगर कोई दुराचारी पुरुष किसी शीलवती महिला का शील भंग करके अपनी पाशविक वृत्ति को तृप्त करना चाहता है और वह महिला शील की रक्षा के लिए पास के लोगों से सहायता की याचना करती है। कहती है—भाइयो! तुम मेरे भाई और पिता के तुल्य हो। मेरे शील की रक्षा करो। दुराचारी पुरुष समझाने बुझाने से नहीं मानता। ऐसी स्थिति म अगर कोई दयालु धर्मप्रेमी उसे धक्का देकर अलग कर देता है तो उस शील के रक्षक पुरुष का धर्म होगा या पाप लगेगा?

महिलाओं के जीवन से सम्बन्ध रखने के कारण यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण था और कोई भी विवेकवती महिला इसका समाधान चाहे बिना सन्तुष्ट नही हो सकती। प्रश्न के उत्तर मे कालूरामजी स्वामी बोले—'दुराचारी पुरुष का अलग हटा देने वाले को भोगान्तराय कर्म लगता है।

सेठानी ने कहा—महिला शीलवती है। उसे भोग करने की लेश मात्र भी आकांक्षा नही है। दुराचारी पुरुष बलात्कार करने की चेष्टा कर रहा है। ऐसी स्थिति मे शील की रक्षा में सहायता देने वाला भोगान्तराय कर्म का बंध कैसे करेगा?

कालूरामजी ने कहा—महिला की इच्छा नही है तो न सही, पुरुष की तो इच्छा है!

जब यह प्रश्नोत्तर हो रहे थे तो करीब १०० १५० साधु वहाँ एकत्र हो गये। सेठानीजी ने कहा—जिस मत में शील की रक्षा करना भी पाप बतलाया जाता है, वह मत कम से कम महिला समाज के लिए तो ग्राह्य नही हो सकता।' इतना कहकर वे वहाँ से चली आई और तभी से उन्होंने तेरापंथ त्याग दिया।

श्रीमती लक्ष्मीबाई विवेकशीला और धर्मनिष्ठा हैं। समाज मे ऐसी महिलाओं की बडी आवश्यकता है। इस चातुर्मास मे आपने बडे ही उत्साह से धर्म सेवन किया।

चौथा अध्याय
जीवन की संध्या

काठियावाड़ प्रवास के पश्चात ही पूज्यश्री के जीवन की संध्या का आरंभ होता है। दीक्षा लेने के कुछ ही दिनों बाद आप सूर्य के समान चमकने लगे। दक्षिण मारवाड़, मेवाड़ मालवा, पूर्वीय पंजाब तथा देहली प्रांत को आपने अपनी प्रकृष्ट प्रतिभा से प्रभावित किया। थली के रज कणों पर भी आपने अपनी अमर छाप लगा दी। रेत के नीरस टीलों को दान दया के अमृत जल से सींच डाला। रेगिस्तान को हरे भरे उद्यान के रूप में परिणत कर दिया।

काठियावाड़ से पधार कर पूज्यश्री ने जैन धर्म का जो गौरव बढ़ाया वह न केवल स्थानक वासी इतिहास में, बल्कि जैन समाज के इतिहास में भी अमर रहेगा। मंत्र तंत्र तथा ऐसी ही अन्य कार्यवाइयों से दूर रहकर, सिर्फ शुद्ध आध्यात्मिकता और वाग्वैभव के द्वारा नरेशों के हृदय में धर्म का बीज बोने वाले महानुभाव विरले ही हुए हैं। समूचे धार्मिक इतिहास पर दृष्टिनिपात किया जाय तो भी ऐसे महात्मा उंगलियों पर गिनने योग्य ही मिलेंगे। पूज्यश्री ऐसे ही महान् पुरुषों में से एक थे।

राजा रंक, विद्वान् साधारण गृहस्थ वैज्ञानिक और अध्यात्मवादी, आधुनिक शिक्षा संस्कार से संस्कृत और रूढ़िप्रिय वृद्ध सभी आपके उज्ज्वल और तेजोमय व्यक्तित्व से प्रभावित थे।

खादी, मादक द्रव्य निषेध, अस्पृश्यता निवारण, गौ रक्षा, कुरीति निवारण आदि विषयों पर भी आपने धार्मिक दृष्टिकोण से सुन्दर से सुन्दर और प्रभावशाली से प्रभावशाली अनेक प्रवचन किये और धार्मिकता के साथ उनका समन्वय किया। यह देखकर उनकी सिद्धान्त ज्ञान कुशलता का पता चलता है और साथ ही उनकी दूरदर्शिता और व्यवहार पटुता भी प्रतीति हुए बिना नहीं रहती।

जो लोग साम्प्रदायिकता को देश का अभिशाप समझते हैं, उन्हें पूज्यश्री ने अपने जीवन व्यवहार से और अपने प्रवचनों से करारा उत्तर दिया है। एक रूढ़ि चुस्त सम्प्रदाय का आचार्य होने पर भी इतने उदार विचार रखने वाला महात्मा शायद ही दूसरा कहीं मिल सकता है। पूज्यश्री की साम्प्रदायिकता विशालता की विरोधिनी नहीं थी। उन्होंने अपने जीवन व्यवहार द्वारा यह प्रकट कर दिया था कि कोई भी व्यक्ति सम्प्रदाय विशेष के प्रति पूरी तरह वफादार रहते हुए भी विश्व हित और विश्व प्रेम की ओर किस प्रकार अग्रसर हो सकता है। उनके सब तरह के प्रवचनों का बारीक निगाह से और विवेचनात्मक बुद्धि से अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट प्रतीत होने लगती है।

इन सब कारणों से पूज्यश्री अपने जीवन को सफल बनाने में तो समर्थ हुए ही, साथ ही धर्मनिष्ठ लोगों को भी सुमार्ग सुझा सके। काठियावाड़ के नरेशों के हृदय में भी धर्म की महिमा अंकित करने में वे समर्थ हुए। मगर अत्यन्त विषाद के साथ लिखना पड़ता है कि इस समय पूज्यश्री का शरीर शनैः शनैः क्षीण होने लग गया था।

जामनगर की बीमारी के बाद पूज्यश्री उत्तरोत्तर अशक्त होते गए। मोरवी मे भी कई बार व्याख्यान बद करना पड़ा। अहमदाबाद की जनता का पूज्यश्री से तथा पूज्यश्री को अहमदाबाद की जनता से बहुत कुछ आशाए थी। किन्तु अहमदाबाद आने पर अनेक शारीरिक उपद्रव उठ खडे हुए। बीमारी ने धर दबाया।

या तो साधुओ का जीवन सयममय ही होता है किन्तु पूज्यश्री अपने भोजन पान में बेहद सयमी थे। जलगाँव मे हाथ के आपरेशन के बाद आपने अन्न का सेवन लगभग छोड दिया था। प्राय दूध और शाक पर ही रहते थे। जामनगर के बाद वह परहेज और बढ गया अपने परहेज के कारण ही आप अहमदाबाद मे अपना स्वास्थ्य सभाल सके।

रोगो के साथ वृद्धावस्था अथवा वृद्धावस्था के साथ रोग प्रबल वेग से आक्रमण करने लगे थे। पूज्यश्री अपने जीवन के तिरेसठ वर्ष व्यतीत कर चुके थे। जनता जान गई थी कि आप अधिक विहार नहीं कर सकेंगे।

बगडी छोटा गाँव है, यद्यपि वहाँ स्थानकवासी सम्प्रदाय की जनसख्या काफी है और गाँव के लिहाज से सम्पत्तिशाली लोग भी बहुत बडी सख्या में हैं, तथापि जनसख्या की दृष्टि से बगडी छोटा गाँव है। पूज्यश्री के यौवन काल के लिए स्थान इतना उपयुक्त न था। वहाँ आपकी शक्तियो का पूरी तरह उपयोग नहीं हो सकता था। मगर अब ऐसा ही स्थान उपयुक्त था जहाँ अधिक भीडभडक्का न हो, जलवायु अच्छा हो और शान्तिपूर्वक समय विताया जा सके। इन दृष्टियो से बगडी स्थान उपयुक्त रहा।

बीकानेर की ओर

पूज्यश्री के लिए अब स्थिरवास का समय आ गया था। इसके लिए भीनासर बीकानेर अजमेर, ब्यावर रतलाम उदयपुर और जलगाव आदि से बहुत आग्रह था। मगर भीनासर बीकानेर की जनता चिरकाल से प्रार्थना कर रही थी। भीनासर बीकानेर का अहोभाग्य था कि पूज्यश्री ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करली और तदनुसार उस ओर विहार कर दिया।

सोजत सिटी से आप जयतारण पधारे। वहाँ जोधपुर का एक डेप्यूटेशन पूज्यश्री से जोधपुर पधारने की प्रार्थना करने आया। श्रीजसवन्तराज जी मेहता ट्रिब्यूट सुपरिंटेंडेंट, जैन समाज की ओर से तथा श्रीउमरावसिंहजी कौंसिल सेक्रेटरी तथा पुष्टिकर समाज के नेता श्रीटल्लूजी तथा ज्वालाप्रसादजी जैनेतर समाज की ओर से नेतृत्व कर रहे थे। शेष सभी जोधपुर के प्रतिष्ठित और गण्यमान्य सज्जन थे। इन आगत सज्जनो ने शेष काल तक जोधपुर पधार कर विराजने की आग्रहपूर्ण प्रार्थना की। पूज्यश्री ने फरमाया— मेरा शरीर अस्वस्थ है। चौमासे से पहले बीकानेर फरसने का वचन दिया जा चुका है। जोधपुर होकर बीकानेर पहुँचने मे समय ज्यादा लगेगा। इस अवस्था में गर्मी मे मुझसे विहार होना कठिन है। अतएव अब जोधपुर ले जाने का आग्रह आप न करें। मेरी स्थिति का खयाल कीजिए।'

बलुदा मे अस्वस्थता

जोधपुर के सज्जन वापस लौट गए और पूज्यश्री विहार करके बलुन्दा पधारे। हाथ मे और जांघ मे फुंसियाँ निकलने के कारण आप फिर अस्वस्थ हो गए। कुछ दिनो के लिए विहार स्थगित कर देना पडा। अजमेर के सुप्रसिद्ध डाक्टर सूरजनारायणजी ने पूज्यश्री के शरीर की परीक्षा की और विहार कम करने की सलाह दी। पूज्यश्री के रुकने के कारण बलुदा मे आसपास के सैकडों दर्शनार्थी आने लगे। बलुदा के प्रसिद्ध दानवीर, उदार हृदय सेठ छगनमलजी साहेब मूथा ने पूज्यश्री की सब प्रकार से सभव सेवा बजाई, आगत अतिथियो का हार्दिक स्वागत किया। सब प्रकार की सुविधाएँ दीं और अच्छा धर्मप्रेम प्रकट किया।

कुछ दिन वलु दा विराजकर, स्वास्थ्य कुछ ठीक होने पर मेड़ता होते हुए मापस शुक्ला ८ को कुचेरा पधार। कुचेरा से नागौर, गागोलाव और फिर नोखामडी पधार गए। नोखामडी म कुछ तरापथी भाइ शका-समाधान के लिए आए। सात बहिनों ने दया दान विरोधी श्रद्धा त्याग कर पूज्यश्री को अपना गुरु स्वीकार किया। पूज्यश्री के आगमन के उपलक्ष्य म यहाँ श्री जैन जवाहर लाइब्रेरी' की स्थापना हुई।

नोखा से विहार करके पूज्यश्री सूरपुरा, देशनोक होत हुए उदयरामसर पधारे। कुछ लोग दवी के मन्दिर मे बकर की बलि चढ़ाने के लिए तयार खड़े थे। युवाचार्यश्री ने मौके पर पहुँच कर उन्हें ऐसी सुन्दरता से समझाया कि उन्होंने बकरे का अभयदान दे दिया। वे लोग दूसरे दिन उपदेश सुनने आये। यहाँ त्याग प्रत्याख्यान अच्छे हुए।

उदयरामसर स पूज्यश्री भीनासर पधारे। भीनासर का बांठिया परिवार स्थानकवासी समाज म समाज और धम की सवा करन क लिए प्रख्यात है। पूज्यश्री के पधारने पर इस परिवार का तथा अन्य भाइयों का उत्साह अनुपम था। कुछ दिनों भीनासर विराजकर आप बीकानेर पधारे।

बीकानेर की जनता भी बहुत दिनो से चातक की तरह पूज्यश्री की प्रतीक्षा कर रही थी। उदयरामसर और भीनासर म ही सकडो दशनार्थी आने लगे थे। जिस दिन पूज्यश्री न भीनासर से विहार किया, हजारो श्रावक और श्राविकाएँ सामने आई। श्रावकों के जयघोष और श्राविकाओं के मगलगीता क साथ पूज्यश्री ने ठा० १८ से बीकानेर में पदापण किया। पूज्यश्री पहले तो बीकानेर के प्रसिद्ध दानवीर और शिक्षाप्रेमी सेठ अगरचन्द भैरोंदानजी की कोटड़ी में विराजे थे किन्तु गर्मी अधिक होने के कारण आप श्रीडागाजी की कोटडी म पधार गए। फिर भी कभी कभी आप इच्छानुसार दिन को सेठियाजी की कोटडी और रात को डागाजी की कोटडी में विराजते थे व्याख्यान युवाचार्यश्री फरमाते थे।

बीकानेर बड़ा नगर होन क कारण गर्मी अधिक थी। सफाई की व्यवस्था भी उतनी अच्छी नहीं थी। उधर भीनासर में बांठिया परिवार की तथा समस्त श्रीसङ्घ की आग्रहपूर्ण प्राथना थी। अतएव पूज्यश्री ने भीनासर में चातुर्मास करने के भाव प्रकट किए। साथ ही आपने यह भी फरमाया कि मैं अपनी सुविधा के अनुसार बीकानेर, गगाशहर और भीनासर में से कहीं भी रह सकता हूँ।

युवाचार्यश्री की इच्छा पूज्यश्री की सेवा म रहने की थी, मगर सरदारशहर सङ्घ के आग्रह स पूज्यश्री के आदेशानुसार उन्हें सरदारशहर में चौमासा करना पड़ा। पूज्यश्री के साथ प० मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज तथा प० मुनि श्री जौहरीमलजी महाराज थे। आषाढ़ शुक्ला सप्तमी को पूज्यश्री चातुर्मास के लिए भीनासर पधार गए।

उनचासवाँ चातुर्मास (स० १९८८)

सवत् १९८८ का चातुर्मास पूज्यश्री ने भीनासर में किया। भीनासर बीकानेर का उपनगर है। अतएव बीकानेर से प्रतिदिन सैकड़ो श्रावक दशन और व्याख्यान श्रवण के हेतु आते थे। मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज और मुनिश्रीजोहरीमलजी महाराज व्याख्यान फरमाते थे। पूज्यश्री व्याख्यान भवन मे पधारते थ और विराजमान भी रहते थे, मगर अशक्ति के कारण व्याख्यान नहीं फरमाते थे।

महासती श्रीकालीजी महाराज ने ठा० ७ तथा श्रीसुन्दर कुँवरजी ने ठा० ५ से भीनासर म ही चातुर्मास किया।

पूज्यश्री के विराजने से बीकानेर, गंगाशहर तथा भीनासर के श्रावकों और श्राविकाओं

धर्मोत्साह छा गया। सब ने यथाशक्ति खूब धर्म ध्यान किया। मुनि श्रीकेशूलालजी म० ने पच रंगी की तपस्या की। ब्यावर मे करीब १२५ श्रावक श्राविकाओं का जत्था आया और उसने पूज्यश्री से ब्यावर पधारने की विनती की।

आसौज शुक्ला में हितेच्छु श्रावकमंडल की बैठक हुई। बम्बई, सतारा, रतलाम आदि के प्रतिष्ठित पुरुष सम्मिलित हुए। जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ को ६००) रुपये की सहायता प्राप्त हुई।

श्री जवाहर किरणावली का प्रकाशन

जिस भीनासर मे अनेको बार पूज्यश्री की गंभीर गर्जना सुनाई पड़ी थी, वही भीनासर आज पूज्यश्री की वाणी से वंचित था। सन १९२७ मे पूज्यश्री का चातुर्मास भीनासर मे था। उस समय के उनके व्याख्यान अत्यन्त गंभीर और प्रभावशाली थे। यह देखकर वहाँ के अग्रगण्य उत्साही श्रीमान् सेठ चम्पालालजी बांठिया के हृदय मे यह विचार आया कि पूज्यश्री के वर्तमान व्याख्यानों के अभाव में पहले के व्याख्यान क्यों न प्रकाशित किये जाएँ? कोई भी शुभ विचार आना चाहिए, फिर बांठियाजी उसे अमल मे लाने के लिए कसर नही रखते। तदनुसार आपने उसी समय रतलाम, हितेच्छुश्रावक मंडल से आज्ञा मंगवाई और प० श्रीशोभाचन्द्रजी भारिल्ल न्यायतीर्थ व्याख्यानो के सम्पादन का कार्य सौंप दिया। वे व्याख्यान 'श्रीजवाहर किरणावली' के रूप मे प्रकाशित हुए। यह किरणावली अभी तक चालू है।

श्रीजवाहर जयन्ती

सन्त पुरुष विश्व की अनमोल निधि हैं। सन्त पुरुष को 'निधि' कहना ठीक जंचता नही किन्तु उनकी महिमा प्रकट करने योग्य और कोई उपयुक्त शब्द भी तो हमारे पास नहीं हैं। जिस निधि के लिए दुनिया मरी जाती है, लोग क्रूर से क्रूर कर्म करते नही हिचकते, अपने प्राप्त सुखों का, यहाँ तक कि प्राणों का भी उत्सर्ग कर देते हैं उसी निधि को सहज भाव से ठुकरा देने वाले संत महात्मा को 'निधि' कहना कहां तक उचित होगा?

संत की महिमा का किन शब्दो द्वारा वर्णन किया जाय? संत पुरुष संसार के अकारण बन्धु हैं, निस्पृह सेवक हैं मनुष्य की आकृति मे मनुष्यता का बीज बोने वाले कुशल माली हैं नीति और धर्म के महान् शिक्षक हैं लोकोत्तर पथ के प्रदर्शक हैं। संसार के कल्याण के लिए रत रहते हैं। कौन सा ऐसा भीषण से भीषण कष्ट है जिसे वे जगत के उद्धार के लिए सहन करने को तैयार नही रहते!

जगत् को उनकी देन असाधारण है। संत पुरुषों के चरणों के प्रताप से ही जगत स्थिर है। संसार की घोर अशांति मे अगर कही शांति का आभास होता है तो उसका सम्पूर्ण श्रेय उन महान् संतो को ही है जिन्होंने मनुष्य की मनुष्यता को कायम रखने का अश्रान्त श्रम किया है। संत पुरुष समय समय पर हमारा पथ प्रदर्शन न करते तो मनुष्य समाज दुनिया के पशुओं की ही एक श्रेणी मे खड़ा होता! अतएव कहा जा सकता है कि मनुष्य का निर्माता कोई भी हो, मगर मनुष्यता का निर्माता तो संत ही है।

कहते हैं संत पुरुष संसार से विरक्त होता है। वह दुनिया की ओर पीठ फेर लेता है। मगर इससे क्या? उसकी विरक्ति ही तो हमारे लिए अमोल वरदान है। महाकवि हरिचन्द्र भट्टारक के शब्द बड़े सुन्दर हैं—

> पराङ्मुखोऽप्येष परोपकार व्यापारभारक्षम एव साधु।
> किं दत्तपृष्ठोऽपि गरिष्ठधात्री प्रोद्धार कर्म प्रवणो न कूर्म?॥

साधु पुरुष विमुख होकर भी परोपकार का भार सहन करने मे समर्थ होता है। पुराणो के अनुसार कछुवा ने यद्यपि पृथ्वी की ओर पीठ कर रखी है वह पृथ्वी से विमुख है, फिर भी

क्या वह भारी से भारी धरती को ऊपर नहीं उठाए हुए हैं ? उसी की पीठ पर धरती टिकी है !

यह महाकवि की कल्पना है। इसमें संत के स्वभाव का बड़ी सुन्दरता के साथ वर्णन किया है।

इस प्रकार संसार का अपार उपकार करने वाले संतों का ऋण कैसे चुकाया जा सकता है ? सारे संसार का वैभव एकत्र करके उनके चरणों में अर्पित करने की चेष्टा की जाय तो वे हमारी इस बाल चेष्टा पर कदाचित् मुस्करा देंगे। वैभव की उन्हें चाहना नहीं उन्होंने ठुकरा दिया है। पूजा प्रतिष्ठा का उन्हें लोभ नहीं। फिर उनके उपकारों से उऋण होने का क्या उपाय है ? वास्तव में कोई उपाय नहीं कि हम उनसे बेबाक हो सकें। मगर बहुत कुछ लेते ही लेते जाना और देना कुछ भी नहीं, यह दीवालिया की स्थिति स्वीकार करना भले आदमी को नहीं सोहता। अतएव हम उनके असीम उपकारों के बदले में अपनी आन्तरिक श्रद्धा भक्ति प्रकट करके और कृतज्ञताज्ञापन करके ही अपना कर्तव्य पालन कर सकते हैं।

पूज्यश्री जैसे महान् संत ने आधी शताब्दी पर्यन्त भारत के विभिन्न भागों में पैदल भ्रमण करके जो अनिर्वचनीय उपकार किये थे, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के उद्देश्य से उनके अन्तिम जीवनकाल में पूज्यश्री की जयन्ती और दीक्षास्वर्ण जयन्ती मनाने का निर्णय किया गया। बीकानेर—भीनासर का श्रीसंघ और विशेषतः इसके आयोजनकर्त्ता सेठ चम्पालालजी बांठिया इस सुकृत के लिए बधाई के पात्र हैं।

पूज्यश्री की जयन्ती

कार्तिक शु० चतुर्थी ता० २४-१०-४१ को भीनासर में पूज्यश्री का जन्मदिवस मनाया गया। सेठ चम्पालालजी बांठिया के बगीचे के विशाल भवन में भीनासर, गंगाशहर और बीकानेर के श्रावक श्राविका विशाल संख्या में उपस्थित थे। प्रातःकाल सवा आठ बजे पं० मुनिश्री श्रीमलजी महाराज ने व्याख्यान प्रारम्भ किया। आपने पूज्यश्री के जन्मस्थान, बाल्यकाल, दीक्षा आदि का संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित शब्दों में विवेचन किया। इसके बाद बांठिया कन्या पाठशाला की बालिकाओं ने मधुर शब्दों में पूज्यश्री का अभिनन्दन गीत गाया। वह इस प्रकार था—

सेवो सेवो रे भविजन मन से पूज्य जवाहरलाल॥
सेवो भक्ति भाव से भाई भवभय भंजन हारी।
कर्म महारिपु मेटन, भेटन शिव सुख जगप्रतिपाल॥ सेवो०॥
परम् तपस्वी उग्र बिहारी, ज्ञान भानु साकार।
पाखण्डी मद मदन गुरुवार, काम महारिपु काल॥ सेवो०॥
देश मालवा गाँव थांदला, नाथीबाई मात।
सोलह वय में भए मुनिंदर, जीवराज के लाल॥ सेवो०॥
दूर दूर विचरे अब ठाए, भीनासर चौमास।
नर नारी नगर उमगाती, गाए मंगल माल॥ सेवो०॥
कन्याशाला की बालाए करतीं यह अभिलाष।
युग-युग जीवें पूज्य जवाहर मुनिमन मान मराल॥ सेवो०॥

इसके बाद पं० घेवरचन्दजी बांठिया 'वीरपुत्र' न्याय व्याकरण तीर्थ, सिद्धान्तशास्त्री का भाषण हुआ। जिसमें आपने बताया कि पूज्यश्री के उपदेशों के प्रभाव से घाटकोपर में जीव दया खाते की स्थापना हुई। जहाँ प्रतिवर्ष हजारों पशु मृत्यु के फन्दे से छुड़ाए जाते हैं। राजकोट में आप ही के प्रभाव से 'जैन गुरुकुल पाठशाला' की स्थापना हुई। भीनासर गंगा शहर और बीकानेर के श्रीसंघों ने मिलकर 'श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हित कारिणी संस्था' की स्थापना की। जिसमें एक लाख से अधिक कोष है। इसकी तरफ से लोग्रा गांव, मोरा मही साहदा, भोजाग, उम्मार,

रासीसर आदि स्थानो म पाठशालाएँ चल रही हैं। अन्त मे आपने हितकारिणी सस्था के सदस्यो से प्रेरणा की कि पूज्यश्री का जीवनचरित्र प्रकाशित होना चाहिए। इसके बाद बाबू केमरीचन्दजी सेठिया ने अपनी कविता सुनाई। बाबू खेमचन्दजी सेठिया, सूरजमलजी बधावत नेमिचन्दजी बछावत, श्यामलालजी जैन एम० ए०, इन्द्रचन्द्रजी शास्त्री, शास्त्राचार्य, न्यायतीर्थ, वेदान्त वारिधि एम० ए० के भाषण हुए। प० मुनिश्री जवरीमलजी महाराज ने पूज्यश्री के जीवन पर प्रकाश डाला। आपने बताया कि ध्यान और प्रभु प्रार्थना म कितनी शक्ति रही हुई है। इन्हीं दोनो बातो से पूज्यश्री का साराजीवन ओत प्रोत है।

बीकानेर श्रीसघ की ओर से श्रीभानमलजी दसाली ने पूज्यश्री से बीकानेर पधारने की प्रार्थना की। पूज्यश्री न फरमाया कि चातुर्मास के बाद सुखे समाधे बीकानेर फरसने के भाव हैं। अन्त म बालिकाओ ने एक गायन और गाया और पूज्यश्री के जयनाद के साथ सभा विसर्जित हुई।

सेठ चम्पालालजी बाठिया ने जन्मदिवस के उपलक्ष्य मे जीव दया के लिए दान करने की अपील की। जिससे २३१५) रु० की रकम लिखी गई। उसे घाटकोपर जीव दया खाते मे भेज दिया गया।

भीनासर मे पूज्यश्री के विराजने से बहुत धर्मध्यान हुआ। अनेक सस्थाओ को सहायता प्राप्त हुई। चातुर्मास पूर्ण होने पर, १० ११ ४१ को पूज्यश्री बीकानेर पधार गये।

दीक्षा स्वर्ण जयन्ती

मार्गशीर्ष शु० २ ता० १८ फरवरी १९४२ को पूज्यश्री अपनी दीक्षा का पचासवा वर्ष पूरा करके इक्यावनवें वर्ष म प्रवेश कर रहे थे। उसके लिए 'श्रीइन्द्र' ने जैन प्रकाश ता० १ ११ ४१ में नीचे लिखी विज्ञप्ति प्रकाशित की।

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज का दीक्षा स्वर्ण महोत्सव

मार्गशीर्ष शु० २ तदनुसार ता० १८ फरवरी रविवार को पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साहब अपनी दीक्षा का पचासवाँ वर्ष पूरा करके इक्यावनवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। अपनी इस लम्बी साधना मे उन्होने आत्महित और सामाजहित के लिए जो कुछ किया है उससे स्थानकवासी समाज भली भाँति परिचित है। आचार्यश्री के कठोर सयम की गाथा भारतवर्ष के कोने कोने म गाई जाती है। उनकी ओजस्विनी वाणी ने जैन तथा जनेतर जनता के हृदय मे घर कर लिया है। उनके उपदेश वैयक्तिक तथा सामाजिक समस्याओ को सुलझाने मे 'मार्ग प्रदर्शन का काम कर रहे हैं। उनका जीवन, उनकी चर्या और उनका प्रत्येक क्षण महान आदर्श और शिक्षाओ से भरा है।

जिस व्यक्ति ने आचार्यश्री के एक बार दर्शन किये हैं या व्याख्यान सुना है वह अच्छी तरह जानता है कि आचार्यश्री की वाणी मे कैसा जादू है। अदम्य उत्साह, प्रखर प्रतिभा, गम्भीर तर्कशक्ति और मोहिनी वाणी को लेकर आपने जगह जगह अहिंसा धर्म का प्रचार किया। भयकर कष्ट और महान् कठिनाइयों का सामना करके आपने सच्चे धर्म को बताया और पाखण्डियो का किला तोड़ डाला।

मारवाड़ मेवाड़ मालवा मध्यप्रान्त गुजरात, काठियावाड़ बम्बई महाराष्ट्र आदि दूर-दूर क प्रान्त आपके उपदेशामृत का पान कर चुके हैं। पूज्यश्री के आगमन पर अपनी प्रसन्नता दिखाने के लिए स्थानीय श्रीसघों ने ऐसे कार्य किये हैं जिनका समाज को ऊँचा उठाने मे बहुत बड़ा हाथ है। घाटकोपर जीव दया फण्ड, श्री श्वेताम्बर साधु मार्गी जैन हितकारिणी सस्था बीकानेर राजकोट गुरुकुल आदि सस्थाएँ आप ही के उपदेशो का फल है।

महात्मा गांधी, मालवीयजी, लोकमान्य तिलक, सरदार पटेल आदि देश के महान् नेताओं ने आप का व्याख्यान सुनकर परम सन्तोष प्रकट किया है। जनतर जनता के सामने जैन धर्म का वास्तविक स्वरूप रख कर आपने बड़े बड़े विद्वानों को प्रभावित किया है और स्याद्वाद का मस्तक ऊँचा किया है।

अहिंसा खादी प्रचार आदि कर्त्तव्यों का राष्ट्रीय और धार्मिक दृष्टि से पूर्ण समर्थन करके आपने धर्म और राजनीति के कार्यक्षेत्र को एक बनाने में महान् उद्योग किया है।

स्थानकवासी समाज जैन जाति और अखिल भारतवर्ष आपके इन कार्यों के लिए सदा ऋणी रहेगा।

उनके इस उपकार के लिए कृतज्ञता प्रकाशित करना और इस स्वर्णमहोत्सव पर श्रद्धांजलि प्रकट करना प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है।

स्थानकवासी समाज को तो उस दिन कोई ऐसा कार्य करके दिखाना चाहिए जिससे आचार्यश्री की स्मृति अमर हो जाय और साथ में उनके उपदेश कार्यरूप में परिणत हो जायें। ऐसा करने के लिए त्याग की आवश्यकता है किन्तु त्याग के बिना किसी महापुरुष का उत्सव मनाया भी तो नहीं जा सकता।

रतलाम, उदयपुर, जोधपुर, अजमेर, ब्यावर, बीकानेर, बम्बई, सतारा, मद्रास आदि सभी नगरों के श्रीसंघ यदि किसी फण्ड की स्थापना करके उसे समाजोन्नति के किसी उपयोगी कार्य में लगावें तो समाज का भविष्य शीघ्र उज्ज्वल बन सकता है।

स्थानकवासी समाज सब तरह से सम्पन्न है अगर चाहे तो प्रत्येक श्रीसंघ लाखों का चन्दा कर सकता है और एक ही दिन में विद्यापीठ ही नहीं विश्वविद्यालय की स्थापना हो सकती है। इस प्रकार के परमप्रतापी आचार्य की दीक्षा का स्वर्णमहोत्सव सदियाँ बीतने पर भी भाग्य से ही प्राप्त होता है। ऐसा अपूर्व अवसर पर स्थानकवासी समाज तथा प्रत्येक श्रीसंघ को न चूकना चाहिए और कुछ ठोस कार्य करके दिखाना चाहिए। इस प्रकार के कार्य से ही आचार्यश्री के प्रति अपनी भक्ति का ठीक ठीक प्रदर्शन हो सकता है।

आशा है स्थानकवासी समाज के अग्रणी इस बात पर ध्यान देंगे और उस दिन कोई स्थायी कार्य करके आचार्यश्री के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धा प्रकट करेंगे।'

इस पर हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम के मन्त्री श्री मानचन्द जी श्री श्रीमाल ने तथा दूसरे सज्जनों ने अपने अपने विचार प्रकट किये। परिणामस्वरूप महोत्सव के दिन भारतवर्ष में अनेक स्थानों पर पूज्यश्री की स्वर्ण जयन्ती मनाई गई और विविध प्रकार के शुभ कार्य हुए। नीचे लिखे स्थानों की कारवाई उल्लेखनीय है—

जैन गुरुकुल ब्यावर

ता० २० ११ ४१ को रात्रि को ८ बजे परमप्रतापी पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की पचास वर्ष जैसे सुदीर्घ समय तक संयम साधना की स्वर्णजयन्ती मनाने के उपलक्ष्य में गुरुकुल परिवार की एक सभा गुरुकुल के कुलपति श्री सरदारमलजी सा० छाजेड़ के सभापतित्व में की गई।

प्रारम्भ में गुरुकुल के अधिष्ठाता श्री धीरजलाल भाई ने पूज्यश्री के प्रभावोत्पादक साधक जीवन का परिचय देते हुए सारगर्भित व्याख्यान दिया। तत्पश्चात् पं० शोभाचन्द्रजी भारिल्ल श्री शान्तिलाल व० सेठ, पंडित दुःखनारायणजी शास्त्री, श्री पुखराजजी सिंगी B A LL B तथा श्री मुनीन्द्र कुमार जैन इत्यादि ने पूज्यश्री के गुणगान करते हुए जीवन पर प्रकाश डाला। तत्पश्चात् निम्नलिखित प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुए—

प्रस्ताव १—जैन समाज के ज्योतिर्धर, जैन-संस्कृति प्राण रक्षक और प्रचारक परम

प्रतापी पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की पचास वर्ष जैसे सुदीर्घ समय तक संयम साधना के उपलक्ष्य में 'ब्यावर जैन गुरुकुल' का परिवार हार्दिक प्रमोद अभिव्यक्त करता है और शासनदेव से प्रार्थना करता है कि पूज्यश्री चिरकाल तक संसार को मार्ग प्रदर्शित करते रहें।

प्रस्ताव २—पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के उपदेश सार्वजनिक मौलिक, शास्त्रीय रहस्यों से परिपूर्ण और युग के अनुकूल हैं। उनमें आध्यात्म, धर्म और राष्ट्रीयता की असाधारण संगीत है। ऐसे लोकोपयोगी साहित्य के प्रकाशन और प्रचार के लिए यह सभा श्री हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था बीकानेर, श्री जैन ज्ञानोदय सोसायटी राजकोट तथा अन्य महानुभावों से अनुरोध करती है।

प्रस्ताव ३—यह सभा ऐसे महान् प्रभावक आचार्य और धर्मोपदेशक के जीवन चरित्र तथा अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन उनकी स्वर्णजयन्ती के उपलक्ष्य में उपयोगी समझती है। और रतलाम हितेच्छु श्रावक मण्डल से आग्रह करती है कि शीघ्र ही पूज्यश्री का जीवन प्रस्तुत किया जाय।

प्रस्ताव ४—यह सभा जैन समाज की महान् विभूति, पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के पचास वर्ष जैसे सुदीर्घकालीन साधक जीवन की स्वर्णजयन्ती के उपलक्ष्य में कोई जीवित स्मारक रखने के लिए समाज से साग्रह अनुरोध करती है और समाज के कर्णधारों से प्रार्थना करती है कि इस शुभ अवसर पर कोई महान् कार्य अवश्य हाथ में उठावें और उसे सफलीभूत बनावें।

प्रस्ताव ५—उक्त प्रस्ताव रतलाम, बीकानेर, राजकोट तथा अखबारों में भेजे जावें।

उक्त प्रस्ताव होने के बाद सभापतिजी का पूज्यश्री के जीवन पर सारगर्भित भाषण हुआ। इसी प्रकार जोधपुर, फलोदी आदि बहुत से स्थानों में महोत्सव मनाया गया।

घुटने में दर्द

बीकानेर में पूज्यश्री के घुटने में फिर दर्द आरम्भ हो गया। वृद्धावस्था और दुर्बलता के कारण औषधियों ने अपना प्रभाव कम कर दिया। बाहर आना जाना स्थगित हो गया। दिनोंदिन कमजोरी बढ़ती गई और शारीरिक स्थिति बिगड़ती गई। प्रिंस विजयसिंहजी मेमोरियल हास्पिटल बीकानेर के मेडिकल आफिसर प्रसिद्ध डाक्टर वेनगार्टन ने चिकित्सा प्रारंभ की।

कुछ दिनों बाद थली प्रान्त से युवाचार्यश्री, पूज्यश्री की सेवा में पधार गए। कुछ दिन सेवा करके आपने भज्जू आदि ग्रामों को फरसने के लिए विहार किया।

बीकानेर की गर्मी सहन न होने के कारण पूज्यश्री फिर भीनासर पधारे और श्रीवांठियाजी के विशाल मकान में ठहरे।

पक्षाघात का आक्रमण

घुटने के दर्द तथा अशक्ति आदि ने पहले ही पूज्यश्री को घेर लिया था। डाक्टरों के इलाज का कोई विशेष प्रभाव नहीं दिखाई देता था। ऐसी स्थिति में एक नई व्याधि और आ गई।

जेठ शुक्ला पूर्णिमा ता० ३०।५।४२ के दिन पूज्यश्री प्रतिदिन की भांति स्वाध्याय करने बैठे। उस समय तक कोई विशेष बात नहीं थी। जब आप स्वाध्याय करके उठने लगे तो आधे अंग में कुछ शिथिलता प्रतीत हुई। आप सहारा लेकर उठे और शौच पधारे। तदनन्तर अधिक शिथिलता प्रतीत होने लगी। चम्पालालजी बांठिया ने उसी समय डाक्टर बुलवाया और शरीर की परीक्षा करवाई। पूज्यश्री के दाहिने अंगों में पक्षाघात का आक्रमण हो गया था।

देशनोक में विराजमान युवाचार्यश्री को सूचना दी गई और आप दो तीन दिनों में ही भीनासर आ पहुँचे।

डा० वेनगार्टन की चिकित्सा आरम्भ हुई।

क्षमा का आदान-प्रदान

'विश्व के समस्त प्राणियों पर निर्वैरभाव रखना और विश्वमैत्री की भावना विकसित करना क्षमापणा का महान् आदर्श और उद्देश्य है। मनुष्य के साथ मनुष्य का सम्बन्ध अधिक रहता है, अतएव मनुष्य मनुष्य में कलुषता की अधिक सम्भावना है। अतएव मनुष्यों के प्रति निर्वैरवृत्ति धारण करने के लिए सर्वप्रथम अपने घर के लोगों के साथ, अगर उनके द्वारा कलुषता उत्पन्न हुई हो तो क्षमा का आदान प्रदान करके विश्वमैत्री का शुभ समारंभ करना चाहिए।

क्षमा का आदान प्रदान करने से चित्त में प्रसन्नता होती है। चित्त की प्रसन्नता से भाव की विशुद्धि होती है।

'क्षमा धर्म की आराधना करने वाला सम्यग्दृष्टि इस बात का विचार नहीं करता कि दूसरा मुझसे क्षमायाचना करता है या नहीं ? इस बात का विचार किए बिना ही वह अपनी ओर से विनम्रभाव से प्रेरित होकर क्षमा की प्रार्थना करता है। इस विषय में बृहत्कल्पसूत्र के शब्द स्मरणीय हैं। जो उवसम्मइ तस्स अत्थि आराहणा, जो न उवसमइ तस्स नत्थि आराहणा अर्थात् जिसके साथ तुम्हारी तकरार हुई है वह तुम्हारा आदर करे या न करे। उसकी इच्छा हो तो वंदन करे, इच्छा न हो तो वंदन न करे। उसकी इच्छा हो तो तुम्हारे साथ भोजन करे इच्छा न हो तो भोजन न करे। उसकी इच्छा हो तो तुम्हारे साथ रहे इच्छा न हो तो न रहे। उसकी इच्छा हो तो तुम्हारे प्रति उपशान्त हो इच्छा न हो तो उपशान्त न हो। तुम उसके इन कृत्यों को मत देखो। तुम अपने अपराध के लिए क्षमा मांग लो और उसके अपराधों को अपनी ओर से क्षमा कर दो।'

जिन महापुरुष ने अपने अनुयायियों को इस प्रकार क्षमाधर्म का उपदेश दिया और उनके अन्तःकरण को निष्कषाय बनाने का उपाय बताया, वह स्वयं उसका व्यवहार किये बिना कैसे रह सकता था ? पूज्यश्री ऐसे उपदेशक थे जो किसी भी सद्वृत्ति का अपने जीवन में व्यवहार करते थे और फिर दूसरों को उपदेश देते थे। उनका समस्त उपदेश उनके जीवन व्यवहार में ओतप्रोत था। इसी कारण उनके उपदेश की प्रभावकता बहुत बढ़ गई थी।

पूज्यश्री के शरीर पर जब विविध व्याधियों का हमला होने लगा और शरीर उनका सामना करने में असमर्थ प्रतीत होने लगा और लम्बे जीवन की सम्भावना न रही तब आपने प्राणी मात्र से क्षमायाचना कर लेना उचित समझा। कौन जाने, कब, क्या स्थिति हो ? क्षमायाचना का सुअवसर मिले या न मिले ? अतएव पहले ही अपना हृदय पूर्णरूप से विशुद्ध रखना उचित है इस प्रकार विचार करके पूज्यश्री ने सा० १८ ६ ४२ के दिन नीचे लिखे आशय के उद्गार प्रकट किए—

(१) साधु साध्वी, श्रावक और श्राविकारूप चतुर्विध श्रीसंघ से मैं अपने अपराधों के लिए अन्तःकरण पूर्वक क्षमायाचना करता हूँ।

(२) मेरा शरीर दिन प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा है। जीवन शक्ति उत्तरोत्तर घट रही है। इस बात का कोई भरोसा नहीं है कि इस भौतिक शरीर को छोड़कर प्राणपखेरू कब उड़ जाये। ऐसी दशा में जब तक ज्ञान शक्ति विद्यमान है भले-बुरे की पहिचान है तब तक संसार के सभी प्राणियों से, विशेषतया चतुर्विध श्रीसंघ से क्षमा-याचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हूँ। मेरी आप सभी से विनम्र प्रार्थना है कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करें।

(३) मेरी अवस्था ६७ वर्ष की है। दीक्षा लिए भी पचास वर्ष से अधिक हो गए हैं। इस समय में मेरा चतुर्विध संघ से विशेष सम्पर्क रहा है। सं० १९७५ में श्रीमान् स्व० पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज साहेब ने सम्प्रदाय के शासन का भार मेरे निबल कंधों पर रख दिया था। पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज के समान प्रतापी महापुरुष के आसन पर बैठे हुए मुझे अपनी कमजोरियों का अनुभव हुआ था फिर भी गुरु महाराज तथा श्रीसंघ की आज्ञा का पालन करना

अपना कर्त्तव्य समझकर मैंने उस आसन का ग्रहण कर लिया। इस के बाद शासन की व्यवस्था के लिए मैंने समयोचित बहुत से परिवर्तन और परिवर्द्धन शास्त्रानुसार किए हैं। सम्भव है उनमें से कुछ बातें किसी को गलत या बुरी लगी हो। मैं उनके लिए सभी से क्षमा मांगता हूँ।

(४) मैं साधुवर्ग का विशेष क्षमाप्रार्थी हूँ। उनके साथ मेरा गुरु और शिष्य के रूप में, शासक और शास्य के रूप में, सव्य और सेवक के रूप में तथा दूसरे कई प्रकारों से घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। मैंने शासनोन्नति के लिए, ज्ञान, दर्शन और चारित्र की रक्षा के लिए संगठनवृद्धि के लिए शास्त्रानुमोदित कई नियमोपनियम बनाए हैं, जिन्हें मुनियों ने सदा वरदान की तरह स्वीकार किया है। फिर भी यदि मेरे किसी वर्ताव के कारण किसी मुनि के हृदय में चोट लगी हो उन्हें किसी प्रकार का कष्ट पहुँचा हो तो मैं उसके लिए बार बार क्षमा याचना करता हूँ। मेरी आत्मा की शांति और निर्मलता के लिए वे मुझे क्षमा प्रदान करें। इसी तरह जो मेरे द्वारा क्षमा के उत्सुक हैं उन्हें मैं भी अन्तःकरणपूर्वक क्षमा प्रदान करता हूँ। मैंने अपनी आत्मा को स्वच्छ एवं निर्वैर बना लिया है।

(५) अपनी सम्प्रदाय का सचालन करने और सामाजिक व्यवस्था करने के लिए मुझे दूसरी सम्प्रदाय के आचार्य तथा बहुत से स्थविर मुनियों के सम्पर्क में आना पड़ा है। किसी किसी बात पर मुझे उनका विरोध भी करना पड़ा है। उस समय बहुत सम्भव है, मुझसे कोई अनुचित या अविनय युक्त व्यवहार हो गया हो। मैं अपने उस व्यवहार के लिए उन सभी से क्षमा माँगता हूँ। मेरी प्रार्थना पर ध्यान देकर वे सभी आचार्य तथा स्थविर मुनि मुझे क्षमा प्रदान करने की कृपा करें।

(६) मैं जिस बात को हृदय से सत्य मानता हूँ उसी का उपदेश देता रहा हूँ। बहुत से व्यक्तियों से मेरा सैद्धान्तिक मत भेद भी रहा है। सत्य का अन्वेषण करने की दृष्टि से उनके साथ चर्चा वार्ता करने का प्रसंग भी बहुत बार आया है। यदि उस समय मेरे द्वारा किसी प्रकार प्रतिपक्षियों का मन दुखा हो उन्हें मेरी कोई बात बुरी लगी हो तो उसके लिए मैं हार्दिक क्षमा चाहता हूँ। मेरा उसके साथ केवल विचार भेद ही रहा है। वैयक्तिक रूप से मैंने उन्हें अपना मित्र समझा है और अब भी समझ रहा हूँ। आशा है वे मुझे क्षमा प्रदान करेंगे।

(७) मैंने जो व्याख्यान दिए हैं उनमें से मण्डल ने कई कई चातुर्मासों के व्याख्यानों का संग्रह कराया है। इस विषय में मेरा कहना है कि जिस समय जो जो मैंने कहा है वह जैन आगमों और निर्ग्रन्थ प्रवचनों को दृष्टि में रखकर ही कहा है। यह बात दूसरी है कि समय के परिवर्तन के साथ साथ द्रव्य क्षेत्र काल, भाव के अनुसार विचारों में भी परिवर्तन होता रहता है। फिर भी मैं छद्मस्थ हूँ। मुझसे भूल हो सकती है। मैं सत्य का गवेषक हूँ। सभी को सत्य ही मानना चाहिए। असत्य के लिए मेरा आग्रह नहीं है मुझे अपनी बात की अपेक्षा सत्य अधिक प्रिय है।

(८) मेरी शारीरिक अशक्ति के बाद और पहले जो साधु मेरी सेवा में रहे हैं उन्होंने मेरी सेवा करने में कुछ भी बाकी नहीं रहने दिया। अपने कष्टों को भूलकर वे प्रत्येक समय प्रत्येक प्रकार से मेरी सेवा में तत्पर रहे हैं। स्वयं सरदी गरमी एवं भूख प्यास के परीषहों को सहकर भी उन्होंने मेरी सेवा का ध्यान रखा है। इसके लिए मैं उनकी सेवा का हार्दिक अनुमोदन करता हूँ। उनके द्वारा की गई सेवा का आदर्श नवदीक्षितों के लिए मार्गदर्शक बनेगा।

(९) लगभग आठ वर्ष से शारीरिक अशक्ति के कारण मैंने साम्प्रदायिक शासन का भार युवाचार्यश्री गणेशीलालजी को सौंप रखा है। उन्होंने जिस योग्यता परिश्रम और लगन के साथ इस कार्य को निभाया और निभा रहे हैं, वह आपके समक्ष है। मुझे इस बात का परम सन्तोष है कि युवाचार्यश्री गणेशलालजी ने अपने को इस उत्तरदायित्वपूर्ण पद का पूर्ण अधिकारी प्रमाणित कर दिया है और कार्य अच्छी तरह संभाल लिया है। साथ में इस बात की भी मुझे

प्रसन्नता है कि श्रीसंघ ने भी इनको श्रद्धापूर्वक अपना आचार्य मान लिया है। इनके प्रति आपकी भक्ति तथा आप सभी का पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिगत होता रहे और इनके द्वारा भव्य प्राणियों का अधिकाधिक कल्याण हो यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है।

(१०) सज्जनो ! जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। संसार में जन्म मरण का चक्र चलता ही रहता है। यह शरीर तो एक प्रकार का चोगा है। जिसे प्राणि स्वयं माता के गर्भ में तैयार करता है और पुराना होने पर छोड़ देता है। पुराने चोगे को छोड़कर नए नए चोगे पहिनते जाना जीव के साथ अनादि काल से लगा हुआ है। इसमें हर्ष या विषाद की कोई बात नहीं है। हर्ष की बात तो हमारे लिए तब होगी जब इस चोगे को इस रूप में छोड़ेंगे कि फिर नया न धारण करना पड़े। वास्तव में नवीन चोगे का धारण करना ही बन्धन है और उसे उतारना छुटकारा है। जब यह चोगा हमेशा के लिए छूट जाएगा वही मोक्ष है। अब यह चोगा छूटने पर भी आत्म-समाधि कायम रहे, यही मेरी भावना है।

(११) अन्त में मैं यही चाहता हूँ कि मैंने संसार त्याग कर जो भगवती दीक्षा स्वीकार की है। उसकी आराधना में जो प्रयत्न अब तक किया है उसमें मेरी शारीरिक या मानसिक स्थिति कैसी भी रहे, भंग न हो। उसमें प्रतिदिन वृद्धि हो और मैं आराधक बना रहूँ।

पूज्यश्री के यह उद्गार व्याख्यान में सुनाए गए। श्रोताओं के हृदय गद्गद हो उठे। अनेकों की आंखों ने अश्रु बहाकर उनका अभिनन्दन किया। व्याख्यान सभा में अनोखी शान्ति छा गई। विषाद फैल गया। महान संत की इस सात्विक वाक्यावली में उनके जीवन की साधना का सार था। उन्होंने क्षमायाचना करके जो आदर्श और उपदेश उपस्थित किया, वह उनके समस्त उपदेशों का मर्म कहा जा सकता है। इस परोक्ष उपदेश में जो शक्ति है, वह किसका हृदय नहीं हिला देती ?

जीवन साधना की परीक्षा

पूज्यश्री ने अपने जीवन के अनमोल पचास वर्षों में जो परम उच्च साधना की थी उसका एकमात्र लक्ष्य आत्मशुद्धि था। अमर आत्मा के लिए आपने नाशवान् शरीर की ममता त्याग दी थी। आप कहते थे—

'अनादिकाल से जड़ का चेतन के साथ संसर्ग हो रहा है। जब तक चैतन्य के साथ जड़ के रहने का सिलसिला जारी है तब तक आत्मा के दुःख का भी सिलसिला जारी रहेगा। जिस दिन जड़ चेतन के संयोग का सिलसिला समाप्त हो जायगा, उसी दिन दुःख भी समाप्त हो जायगा और एकान्त सुख प्रकट हो जायगा।'

पूज्यश्री ने इस संयोग के सिलसिले का अन्त करने में ही अपना जीवन लगा दिया। उन्होंने शरीर और आत्मा का भेद पहचान लिया था। इस पहचान को आपने इन शब्दों में घोषित भी किया था—

जो तुम्हारा है, वह तुमसे कभी विलग नहीं हो सकता। जो वस्तु तुमसे विलग हो जाती या हो सकती है, वह तुम्हारी नहीं है। पर पदार्थों में आत्मीयता का भाव स्थापित करना महान् भ्रम है। इस भ्रमपूर्ण आत्मीयता के कारण जगत् अनेक कष्टों से पीड़ित है। अगर 'मैं' और 'मेरी' की मिथ्या धारणा मिट जाय तो जीवन में एक प्रकार की अलौकिक 'लघुता' निरीहता निस्पृहता और दिव्य शांति का उदय होगा।

इस प्रकार पूज्यश्री ने आत्मा और शरीर आदि बाह्य वस्तुओं के भेद को समझा और समझाया था।

विद्यार्थी वर्ष भर पढ़ता है और अन्त में उसकी परीक्षा की जाती है। पढ़ाई विद्यार्थी की साधना है। परीक्षा देकर वह अपनी साधना की सफलता से संतोष मानता है। जिसकी जितनी उत्कृष्ट साधना होती है, उसकी परीक्षा भी उतनी ही कठोर की जाती है। जिसकी साधना ही

कठोर न होगी, उसकी परीक्षा कठोर क्या ली जायगी ! इसी नियम के अनुसार पूज्यश्री की परीक्षा प्रकृति ले रही थी। उनकी साधना बडी लम्बी और कठोर थी, अतएव परीक्षा भी लम्बी और कठोर हुई।

जहरी फोडा (Carbuncle)

लकवा की शिकायत पूरी तरह दूर भी नहीं हो पाई थी कि कमर पीछे बाईं ओर कारबक्ल फोडा उठ आया। फोडे के कारण दुस्सह वेदना थी और इसी कारण बुखार भी हो आया था। फोडा भयकर रूप धारण कर रहा था। सभी को विश्वास हो गया कि अब आचार्य महाराज का अतिम समय सन्निकट आ गया।

बीकानेर के चीफ सर्जन डा० एलन पूज्यश्री को देखने आए, उनकी सम्मति थी कि फोडे का आपरेशन न किया गया तो पूज्यश्री का बचना असम्भव है। साथ ही आपरेशन करने में भी आधी जोखिम है।

चीफ मेडिकल आफीसर जब दूसरी बार पूज्यश्री को देखने के लिए बुलाया गया तो उसने आश्चर्य के साथ कहा—ओह ! आचार्य अब तक जीवित हैं ! दवा नहीं ईश्वर ही उनकी रक्षा कर रहा है। बीमारी की ऐसी स्थिति में साधारण मनुष्य बच नहीं सकता था !

अन्त मे फोडा बिना आपरेशन किये ही फूट गया। दुस्सह वेदना होने पर भी पूज्यश्री अत्यन्त शान्तभाव से सब कुछ सहन कर रहे थे। 'आत्मा जगत् के एक दु ख को दूर करने के प्रयास मे दूसरे अनेक दु खो का शिकार बन जाता है। वह इस मूल तथ्य की ओर नहीं देखता कि—मैं जिन कष्टों को दूर करने के लिए व्यग्र हो रहा हूँ, उन कष्टों का उद्गम स्थान कहाँ है ? वह कष्ट क्यो और कहाँ से आए हैं ? और वे कष्ट किस प्रकार विनष्ट किये जा सकते हैं ? यह वाक्य जिसके मुख से निकले थे वह महात्मा भला शारीरिक कष्ट आने पर कैसे व्याकुल हो सकते थे ? उनकी सहनशक्ति और शान्ति अद्भुत थी, आश्चर्यजनक थी।

सघ के सौभाग्य से १०-१५ दिन बाद फोडे में कुछ सुधार दिखाई दिया। गगाशहर स्टेट हास्पिटल के डाक्टर श्री अविनाशचन्द्र प्रतिदिन आकर फोडे में से मवाद निकाल देते थे और मरहमपट्टी कर जाते थे।

छह महीने में फोडा बिलकुल साफ हो गया, किन्तु फोडे के दिनो मे लगातार लेटे रहने से पूज्यश्री के बाएँ अगो मे इतनी कमजोरी आ गई कि उठना-बैठना कठिन हो गया। यह अशक्ति अन्त तक बनी रही।

ता० २५ ७ ४२ को राजकोट के डाक्टर रा० सा० लल्लू भाई पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए। उन्होंने पूज्यश्री के इलाज की सराहना की और स्वस्थ हो जाने की आशा प्रकट की।

पचासवाँ चातुर्मास (स० १९९९)

बीमारी के कारण पूज्यश्री ने सवत् १९९९ का चातुर्मास भी भीनासर मे ही किया। युवाचार्य महाराज भी साथ थे और प० मुनिश्री श्रीमल्लजी महाराज तो काठियावाड प्रवास और उसके बाद भी बराबर पूज्यश्री की सेवा मे ही थे। कुल १९ ठाणा थे।

पूज्यश्री के फोडे में लाभ होते देख बीकानेर श्रीसंघ के अत्याग्रह से भाद्रपद कृष्णा ६ को युवाचार्यश्री बीकानेर पधार गए।

सेवा की सराहना

पूज्यश्री के दर्शनार्थ यो तो प्रतिवर्ष सैकडो हजारों दर्शनार्थी आया करते, किन्तु इस वर्ष बहुत बडी सख्या मे दर्शनार्थी आए। लोगों को प्रतीत होने लगा था कि सभवत यह दर्शन आपके अन्तिम होंगे। अत दूर-दूर से दर्शनार्थियो की भीड लग गई। बांठिया बन्धु तथा भीनासर

गंगाशहर सङ्घ सभी अतिथियों का उत्साहपूर्वक स्वागत कर रहा था। पूज्यश्री की रुग्णावस्था में बांठिया परिवार ने तथा श्रीसङ्घ ने जो सेवा बजाई वह अत्यन्त सराहनीय थी।

ता० २६ दिसम्बर १६४२ को भीनासर में हितेच्छुश्रावक मंडल की बैठक हुई। स्थानीय सदस्यों के अतिरिक्त बाहर से भी अनेक सज्जन पधारे। मंडल में बांठियाबंधुओं और चिकित्सकों के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुआ —

'श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यवर्य १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहब के शरीर में इस वर्ष भयंकर पीड़ा हो गई थी, जिससे आपके जीवन विषयक आशंका हो गई थी। किन्तु संघ के प्रबल पुण्योदय से श्रीमान् के शरीर में शान्ति हो गई और फोड़ा बिलकुल साफ हो गया। इसके लिए मंडल की यह सभा अपना अहोभाग्य मानती है और अत्यन्त हर्ष व्यक्त करती है। परन्तु फिर भी शरीर में कमजोरी बढ़ती जा रही है। इसके लिए यह कामना करती है कि पूज्यश्री का स्वास्थ्य शीघ्र ही सुधरे। साथ ही पूज्यश्री की पीड़ा के समय में डाक्टर अविनाशचन्द्रजी ने पूज्यश्री की जो महती सेवा बजाई है, इसलिए मंडल उनकी सेवाओं को लक्ष्य में लेकर उनको अभिनन्दनपत्र देने का ठहराता है।

इसी तरह श्रीबीकानेर, गंगाशहर, भीनासर के संघ ने एवं श्रीमान् सेठ चम्पालालजी ... (text as printed) शेर मलजी तथा चम्पालालजी साहब बांठिया ने विशेष रूप से पूज्यश्री की महती सेवा बजाई व बजा रहे हैं उसके लिये यह मंडल आपका अन्तःकरणपूर्वक आभार मानता है तथा डाक्टर साहब श्रीमान् बग साहब, पी० एम० ओ०, डा० सूरजनारायणजी आसोपा, वैद्य रामनारायणजी महता, स्वामी केवलरामजी, पं० भैरवदत्तजी आसोपा एवं पं० रामरत्नजी ने भी बहुत सेवा बजाई है। इतना ही नहीं वैद्यवर्यों ने फीस नहीं ली। इसलिए मंडल इन सब का आभार मानता है।'

दो दीक्षाएँ

चौमासे के अनन्तर मार्गशीर्ष कृ० ४ को श्रीईश्वरचन्द्रजी सुराणा देशनोक निवासी और श्रीनेमीचन्दजी सेठिया गंगाशहर (बीकानेर) निवासी की भीनासर में दीक्षाएँ हुई। श्रीईश्वरचन्द्रजी सरदारशहर में ही दीक्षा लेने का विचार कर रहे थे किन्तु माताजी की बीमारी के कारण विलम्ब हो गया। माताजी का स्वर्गवास होने के अनन्तर आपने बड़े भाई की आज्ञा लेकर दीक्षा ग्रहण की। श्रीनेमीचन्दजी ने पहले सपत्नीक शीलव्रत धारण किया और अपनी रुग्ण पत्नी की अम्लान भाव से अच्छी सेवा की। कुछ समय पश्चात् पत्नी का देहान्त हो जाने पर आप दीक्षित हुए।

आप (नेमीचन्दजी सेठिया) अन्यत्र गोद गये थे। वहाँ प्रकृति न मिलने के कारण आप दिसावर चले गये और वहाँ कमाने लगे और इस प्रकार स्वावलंबन का जीवन बिताने लगे। कुछ समय पश्चात आप दिसावर से लौट आये और आपके हृदय में वैराग्य भाव जागृत हो गये। आपकी गोदायत माता की ओर से जो जेवर आपकी शादी में चढ़ाया गया था वह सब वापिस उन्हें संभलवा कर उनके चित्त को सन्तुष्ट कर दिया। फिर उनसे दीक्षा की आज्ञा प्राप्त कर उत्कृष्ट वैराग्य के साथ दीक्षा धारण की, आपका दीक्षा-महोत्सव सुप्रसिद्ध दा० वी० सेठ भैरोंदानजी सेठिया के दूसरे पुत्र श्रीयुत पानमलजी सेठिया की ओर से समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ।

उक्त दोनों वैरागियों को पूज्यश्री ने 'करेमि भंते' का प्रत्याख्यान कराया।

पंजाबकेसरी की अभिलाषा अपूर्ण रही

पूज्यश्री की अस्वस्थता के समाचार सुनकर पंजाबकेसरी पूज्यश्री काशीरामजी महाराज ने आपसे मिलने की इच्छा प्रकट की। आप जोधपुर में चौमासा पूर्ण करके पीपाड़ तक पधारे मगर अचानक छाती में दर्द हो जाने के कारण आगे विहार न कर सके। अतएव आपने अपने शिष्य कविवर मुनिश्री शुक्लचन्द्रजी महाराज को पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की सेवा में भेजा। पंजाब-सम्प्रदाय के तीन संत पंजाब की ओर से पधार गए। पूज्यश्री के संत और श्रावक उनके

स्वागतार्थ सामने गए। दोनो सम्प्रदायो में सता मे खूब प्रेमपूर्ण व्यवहार रहा। सम्मिलित व्याख्यान होता था। कुछ दिन तक पूज्यश्री की सेवा म विराजकर पजाबी सत विहार कर गए।

सूर्यास्त का समय

वज्र की बन जा लेखनी ! नही तो पूज्यश्री के अंतिम जीवन का चित्र तू अकित न कर सकेगी। और हृदय ! त पाषाण की भांति कठोर हो जा। अरे हाय ! तू थर्राता क्यों है ?

जिस उत्तरोत्तर उमग के साथ और उछलते हुए उत्साह की तरगो पर चढकर, तुम सबन मिलकर एक महापुरुष की शाब्दिक आकृति खडी की है वह उमग भग हो गई और वह उत्साह समाप्त हो गया है। चित्रकार ने जो चित्र बडी श्रद्धा के साथ अकित किया था और जिस पर उसे बडा अभिमान था अब उसी चित्रकार को अपने चित्र के विनाश का भी चित्र अकित करना पडेगा ! हाय विडम्बना !

कर्त्तव्य कितना कठोर है ! मगर उसे करना पडेगा। मन स, बेमन से, चाहे हँसते हुए चाहे रोते हुए। वह अधूरा नही रहेगा।

फोडा ठीक हो जाने के बाद पूज्यश्री का स्वास्थ्य कुछ ठीक हो चला था। उस समय कोई खास बीमारी नही रही थी, यद्यपि बाया पैर बेकार हो गया था। सब सम्भव उपाय किये, काठियावाड़ियो ने तन मन धन से प्रयत्न किया, मगर कोई उपाय और प्रयत्न कारगर न हुआ। जौलाई १९४३ के आरम्भ म पूज्यश्री की गदन पर भयानक फोडा निकल आया। शरीर के दूसरे भागो पर भी उसी प्रकार के छोटे छोटे फोडे उठ आये। डाक्टरों ने बहुत प्रयत्न किया मगर कोई लाभ होता नजर न आया। डाक्टर अपने करने योग्य काय ही करते थे और शेष ड्रेसिंग आदि काय उनके शिष्यगण साधु ही करते थे। अन्त म डाक्टर निराश हो गए।

उसी समय भारत के कोने कोने मे तार द्वारा पूज्यश्री के चिन्ताजनक स्वास्थ्य के समाचार भेज दिये गए। अनेक स्थानो से अग्रणीश्रावक उपस्थित हो गए। का अ भा श्व स्था जैन कान्फ्रेंस की ओर से निम्न तार आया —

Conference, Praying Shoshandev long live Pujyoshri May this Jawahar remain ever shining —*Secretaries*

कान्फ्रेंस पूज्यश्री की दीर्घायु के लिए शासनदेव से प्रार्थना करती है। यह 'जवाहर सदा चमकता रहे यही कामना है।

आषाढ शुक्ला अष्टमी सं० १० ७ ४३ को पूज्यश्री की दशा अधिक निराशाजनक हो गई। युवाचार्यश्री ने पूज्यश्री के कथानुसार अन्य मुनियो एव श्रीसघ की अनुमति से पौने ग्यारह बजे तिविहार सथारा करा दिया।

उस समय पूज्यश्री की प्रशस्त भावना उनके सौम्य, शान्त और सात्विक चेहरे पर प्रतिबिम्बित हो रही थी। उनके मुखमण्डल पर एक अलौकिक आभा, अपूर्व ज्योति चमक रही थी।

युवाचार्य ने दूसरी बार एक बजे करीब चौविहार सथारा करा दिया। उसी दिन पांच बजे जवाहर रूपी भास्कर की आत्मा ने दुर्बल शरीर का बन्धन त्याग कर स्वर्ग की ओर प्रयाण कर दिया।

पूज्यश्री लगभग एक ही वर्ष पहले ही अपने समग्र साधुजीवन की आलोचना कर चुके थे। सिर्फ बीमारी की अवस्था म औषध आदि विषयक जो दोष लगे थे, उन्हीं की आलोचना करना शेष था। आषाढ शुक्ला सप्तमी की रात्रि को लगभग ग्यारह पूज्यश्री की नाडी मे कुछ गडबड देखकर युवाचार्य ने आप से वहाँ उपस्थित सब सन्तो के सामने आलोचना करने का निवेदन किया। पूज्यश्री ने दोषो की आलोचना की। तत्पश्चात युवाचार्यश्री ने स्वय ही प्रायश्चित लेने के लिए कहा ! तब पूज्यश्री ने फरमाया—क्या नवीन दीक्षा ले लूँ ? युवाचार्य ने कहा—नवीन

शैम्पा के योग्य कोई दोष तो आपको लगा नहीं है। सिर्फ उत्तर गुणों में साधारण दोष लगे हैं उसके लिए यथोचित प्रायश्चित्त ले लीजिए। तब पूज्यश्री ने फरमाया तुम्हीं प्रायश्चित्त दे दो अन्त में छह महीने का छेद लेकर अपनी आत्मशुद्धि की। उसी समय प्रातः काल सब के लिए सागारी अनशन भी धारण कर लिया।

अन्तिम दर्शन

प्राण निकलते समय पूज्यश्री के मुख मण्डल पर दिव्य शान्ति विराज रही थी। वदन का विषाद कहीं लेशमात्र भी दृष्टिगोचर नहीं होता था। ऐसा जान पड़ता था, जैसे जीवन संग्राम में सफलता पाने के बाद वीर योद्धा सन्तोषपूर्वक विदाई ले रहा हो।

पूज्यश्री ने अन्त तक शान्ति का सेवन किया। घोर कष्ट के नाजुक प्रसंग पर भी उनकी आत्मा में पूर्ण समाधि रही समग्र जीवन आदर्श रहा और उनकी मृत्यु भी आदर्श रही। जीवन व्यापिनी संयम साधना की परीक्षा में वे पूर्ण रूप से सफल हुए। उन्होंने पण्डितमरण प्राप्त किया। उनका जीवन मनुष्य मात्र के लिए एक महान् कल्याणमय उपदेश था और उनकी मृत्यु एक आदर्श सन्देश दे गई।

जिन भाग्यशालियों ने पूज्यश्री की अन्तिम समय की छवि देखी, उनके नेत्रों में वह सदा के लिए समा गई। कितनी सौम्यता! कितनी भव्यता! कैसी शान्ति! कैसी समाधि! निहारने वाले निहाल हो गए।

शोक-सागर लहराने लगा

पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार बिजली की तरह सारे भारतवर्ष में फैल गया। शोक के बादलों से आँसू बरसने लगे। धरती और आकाश सभी रोने लगे। प्रकृति अपना हृदय न सम्भाल सकी। उसने भी आँसू गिराकर उस दिव्य आत्मा के प्रति अपनी श्रद्धांजलि प्रकट की।

बीकानेर, गंगाशहर, भीनासर, उदयरामसर आदि आसपास के स्थानों के तथा बाहर से आए हुए सहस्रों श्रावक हृदय को किसी प्रकार थामकर आते और पूज्यश्री के निष्प्राण शरीर का दर्शन करके, अश्रुधारा की श्रद्धांजलि भेंट करते हुए चले जाते थे। भीनासर और बीकानेर के श्रीसंघ को ऐसा लगा मानो उसने समूचे संघ की अनमोल धरोहर खो दी हो।

बालक वृद्ध, नर नारी अमीर गरीब, साक्षर निरक्षर सभी के चेहरे पर अपूर्व गहरा विषाद दिखाई देता था। अकारण जगबन्धु का वियोग हृदय में ऐसा चुभ रहा था, मानों किसी अत्यन्त स्नेहपात्र आत्मीय जन का वियोग हो गया हो! पूज्यश्री के वियोग से जैनों ने अपना जवाहर खोया। सन्तों ने सिरताज खोया धर्म ने आधार खोया, संघ ने सेनानी खोया, पण्डितों ने पथ प्रदर्शक खोया, पथभ्रष्ट पथिकों ने प्रकाशस्तम्भ खोया, ज्ञान के पिपासुओं ने अमृत का स्रोत खोया।

देवताओं ने एक महात्मा अपने बीच पाकर कौन जाने, किस श्रद्धा के साथ उनका स्वागत किया है। काश, हमारी दृष्टि वहाँ तक पहुँच पाती!

श्मशान यात्रा

भीनासर के सेठ चम्पालालजी बांठिया की पूज्यश्री के प्रति अनुपम भक्ति थी। पूज्यश्री जब तक भीनासर में विराजमान रहे। आपने समस्त घरू काम-काज से छुटकारा लिया और अनन्य भाव से उन्हीं की सेवा में तल्लीन रहे। न दिन गिना, न रात। तन मन धन की तनिक भी परवाह नहीं की। पूज्यश्री की चिकित्सा में उन्होंने कोई बात उठा न रखी। फिर भी जब पूज्यश्री की हालत निरन्तर गिरती ही चली गई तो उन्होंने एक वर्ष पहले ही चांदी का एक सुन्दर विमान बनवाकर तैयार करा लिया।

पूज्यश्री की श्मशान यात्रा के लिए अषाढ़ शुक्ला ६ का प्रातःकाल निश्चित किया गया था। सूर्योदय के साथ साथ हजारों की भीड़ भीनासर मे एकत्र होने लगी। सर्वप्रथम युवाचार्य श्रीगणेशीलालजी महाराज को चतुर्विध श्रीसंघ के समक्ष आचार्य पद की चादर ओढ़ने की क्रिया विधिपूर्वक की गई।

निश्चित समय पर पूज्यश्री का शव स्वर्ण मंडित रजत विमान मे विराजमान किया गया। पूज्यश्री के जयनाद के साथ श्मशान का जुलूस रवाना हुआ। आगे आगे पूज्यश्री के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए राज्य की ओर से भेजे हुए नगाडा, निशान और बंड थे। उनके पीछे पूज्यश्री के यशोगीत गाती हुई भजन मंडलियां चल रही थी। उसके बाद पूज्यश्री का विमान था। विमान के पीछे महिलाएँ गीत गाती हुई चल रही थी और फिर पुरुषों का विशाल समूह था। सबसे पीछे उछाल करने के लिए ऊँटों पर सवार चल रहे थे। श्रावकों की पूज्यश्री के प्रति इतनी अधिक भक्ति थी कि करीब बीस हजार रुपया उछाला गया। धरती रुपयों से बिछ गई। कई एक मेहतरों के हिस्से में १०० १२५ रु० आए।

थोड़ी थोड़ी देर में विशाल जन समूह पूज्यश्री का जयघोष करता था। आकाश गूँज उठता था।

भीनासर और गंगाशहर में घूमता हुआ जुलूस १२ बजे श्मशान में पहुँचा। चन्दन, घी, कपूर खोपरा आदि सुगंधित पदार्थों से विमान सहित पूज्यश्री का अग्नि संस्कार किया गया।

बीकानेर में आषाढ़ महीने में घोर गर्मी रहती है और धूप इतनी तेज कि चार कदम चलना कठिन हो जाता है। मगर आज एक प्रकृतिविजयी महात्मा पुरुष की श्मशानयात्रा थी, अतएव प्रकृति ने अपना रूप पलट लिया। श्मशान यात्रा आरंभ होने से पहले, प्रातःकाल ६ बजे ही उसने करीब आधा इंच जल की वर्षा की और पृथ्वी शीतल हो गई। श्मशानयात्रा जब तक जारी रही तब तक मेघों ने सूर्य के आड़े आकर धूप को रोक रखा। अलबत्ता जब पूज्यश्री के शव का चितारोहण किया गया तब मेघ हट गए और धूप चमकने लगी। संतों की महिमा अपार है। प्रकृति भी उनकी तेजस्विता का लोहा मानती है।

राज्य का सन्मान

पूज्यश्री के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए राज्य ने डंका निशान लवाजमा आदि तो भेजा ही, साथ ही पूज्यश्री के शोक मे आषाढ़ शुक्ला नवमी को राज्य भर में छुट्टी भी घोषित की। सारे राज्य के स्कूल, कॉलिज तथा आफिस बंद रखे गये। इसी प्रकार बाजार, कसाईखाने भट्टियाँ बंद रखने की आज्ञा जारी की गई।

शोक सभाएँ

पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार बिजली की तरह सारे भारतवर्ष में फैल गया। इससे सारे जैन समाज मे शोक का समुद्र उमड़ आया। पूज्यश्री के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए स्थान स्थान पर सभाएं हुई। बाजार बन्द रखे गए और दूसरे प्रकारों से भक्ति एवं श्रद्धा प्रकट की गई।

स्वर्गवास के समाचारों के बाद फिर दूसरा तार आया—

Conference extremely sorry to hear sad demise of Pujyashri and prays Almighty for eternal peace to his soul Irreparable loss to jain community

अर्थात पूज्यश्री के दुखद अवसान का सुनकर कान्फ्रेंस को अत्यन्त दुख हुआ। उनकी आत्मा का अनन्त शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना है। उस महान् जवाहर के वियोग से जैन समाज को ऐसी हानि हुई है जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती।

बम्बई में पूज्यश्री के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के लिए १२ तारीख का शेयर बाजार, दाणाबन्दर, बीया बाजार आदि बाजार बन्द रहे। इसी प्रकार कान्फ्रेंस आफिस रत्न चिंतामणि स्कूल, तथा सूयकान्त प्रेस आदि भी बन्द रहे।

बम्बई में विशाल शोक सभा

बम्बई में पूज्यश्री के स्वर्गवास का समाचार मिलते ही वहाँ के श्रीसंघ ने शोक सभा का समय निश्चित कर समाचारपत्रों तथा हैण्डबिलों द्वारा सारे नगर में घोषणा कर दी। तदनुसार ता० १३ ७ ४३ को नप्पू हाल, माटुंगा में शोक सभा की गई। सभा का आयोजन श्री अ० भा० श्वे० स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस, श्री स्थानकवासी जैन सकल संघ, बम्बई तथा रत्न चिन्तामणि स्थानकवासी जैन मित्र मण्डल की तरफ से सम्मिलित रूप में किया गया था। शोक-सभा आत्मार्थी मुनिश्री मोहन ऋषिजी महाराज, प० विनय ऋषिजी महाराज विदुषी महासती श्री उज्ज्वल कुँवरजी महाराज आदि ठा० ६ से उपस्थित थे। बम्बई तथा उपनगरों के भाई बहिन भी अच्छी संख्या में उपस्थित थे। संघ के प्रमुख श्रीयुत वेलजी भाई नप्पु बी० ए० एल एल० बी ने प्रमुख का स्थान ग्रहण किया था।

सर्वप्रथम प० मुनिश्री विनयऋषिजी महाराज ने मदगत पूज्यश्री के प्रति श्रद्धांजलि प्रकट करते हुए उनकी विद्वत्ता व राष्ट्रीयता का वर्णन किया। अन्त में आपने कहा—'उनके व्यक्तित्व की मेरे हृदय पर जो गहरी छाप पड़ी है, वह यह है कि अपने समाज में धुरन्धर आचार्य हुँ और होंगे, लेकिन ऐसे आचार्य विरले ही होंगे। पूर्वाचार्यों ने अपना समग्र जीवन साहित्य तथा और दर्शन के खण्डन मण्डन में लगाया है जबकि पूज्यश्री का सम्पूर्ण जीवन राष्ट्रसेवा, जैनधर्म के सिद्धान्तों का प्रचार और प्राणिमात्र की रक्षा के उपदेश के पीछे खर्च हुआ है। उनका उपदेश हृदय की गहराई से निकलता था।'

इसके बाद आत्मार्थी मुनिश्री मोहन ऋषिजी महाराज ने अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि प्रकट करते हुए कहा—'पूज्यश्री द्रव्यमरण से मृत्यु पाने पर भी भाव जीवन से जीवित हो हैं। थोड़े घंटों पहले वे अपने जितने दूर थे अब उतने ही निकट हैं। यह शोक सभा नहीं किन्तु शान्ति सभा है। पूज्यश्री २०वीं सदी के अजोड़ आचार्य थे। भारत के लिए गांधीजी जितने उपकारक हैं उतने ही पूज्यश्री जैन समाज के लिए उपयोगी थे। खादी का पालन, गृह उद्योग और अल्पारम्भ महारम्भ के सम्बन्ध में विशेष प्रकाश डालकर उन्होंने समाज को जिम्मेदारीयों का जो दान दिया है उसके लिए समाज उनका खास ऋणी रहेगा। जब दया और धर्म के नाम पर महा आरम्भ जन्य उत्सव, संवर के स्थान पर आस्रव, वैराग्य के स्थान पर विलास, त्याग के स्थान पर भोग का समाज में बोलबाला था तब पूज्यश्री ने अल्पारम्भ और महारम्भ की व्याख्या समाज को समझा कर उसे पवित्रता के पुनीत पथ पर प्रयाण करने का मार्ग प्रदर्शित किया। पूज्यश्री के साहित्य द्वारा समाज का नवचैतन्य मिला है। भविष्य की प्रजा को भी इस साहित्यरूपी मसीहा से प्रेरणा मिलती रहेगी।'

तत्पश्चात् महासती श्रीउज्ज्वलकुँवरजी महाराज ने श्रद्धांजलि अर्पित की। आपने मार्मिक शब्दों में कहा—पूज्यश्री के स्वर्गवास से जैन-समाज के सूर्य का अस्त हो गया। इससे आन्तरदृष्टि में अंधकार छा गया है। जहाँ सूर्य का प्रखर प्रकाश भी नहीं पहुँच सकता तिन

अज्ञान तिमिराच्छादित हृदय पटलों को पूज्यश्री ने प्रकाशित किया था। दीर्घजीवन मे विशेषता नही है। महत्व तो आदर्श जीवन का है। पूज्यश्री का जीवन आदर्श था। जिस प्रकार यात्रा के जल, स्थल और आकाश तीन मार्ग हैं और उनमे आकाश मार्ग सर्वोत्कृष्ट है, इसी प्रकार जीवन यात्रा के भी तीन मार्ग हैं—आधिभौतिक आधिदैविक एवं आध्यात्मिक। आध्यात्मिक मार्ग सर्वोत्तम है। पूज्यश्री ने अपनी जीवन यात्रा इसी मार्ग से पूर्ण की। इसीलिए वे पूजे जा रहे हैं और पूजे जाएँगे। समाज का दुर्भाग्य तो यह है कि यह महापुरुषो के लिए फाँफा मारता है। मगर जब महापुरुष मिल जाता है तो उसे पचा नहीं पाता। जैन समाज को महापुरुषों का पचाना सीखना होगा।'

पश्चात् कान्फ्रेंस के मानद मन्त्री श्रीयुत चिमनलाल पोपटलाल शाह ने अन्तःकरण से शोक प्रदर्शित करते हुए नीचे लिखा शोक प्रस्ताव उपस्थित किया—

'श्री अखिल भारतवर्षीय श्वे० स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस, श्री श्वे० स्था० जैन सकल संघ बम्बई और श्री र० चि० जैन मित्र मण्डल बम्बई की तरफ से बुलाई गई यह आम सभा पूज्य श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहब के दुखद एवं आकस्मिक स्वर्गवास के प्रति अपना हार्दिक शोक प्रकट करती है। पूज्यश्री जैन सिद्धान्तों के प्रकाण्ड विद्वान, अहिंसा और सत्य के प्रखर प्रचारक एवं जीव दया ग्रामोद्योग, खादी आदि राष्ट्रोद्धारक प्रवृत्तियो के हिमायती थे। ऐसे संयमी चरित्रवान और विद्वान धर्मनायक के स्वर्गवास से जैन समाज ने तो सचमुच 'जवाहर' खोया है। जैनेतर जनता को भी विश्वप्रेम सत्य और संयम के निष्परिग्रही प्रचारक की अनिवार्य क्षति पहुँची है। ऐसा यह सभा मानती है। यह सभा पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज साहेब और उनके शिष्य मंडल तथा चतुर्विध स्थानकवासी जैन श्रीसङ्घ के दुःख मे अपनी हार्दिक समवेदना प्रकट करती है और स्वर्गस्थ पवित्रात्मा को चिरस्थायी शान्ति प्राप्त हो, ऐसी शासनदेव से अन्तःकरणपूर्वक प्रार्थना करती है।

इसके बाद पूज्यश्री के जीवित स्मारक रूप घाटकोपर जीवदया खाते की स्थापना में पूज्यश्री की प्रेरणा तथा उनके उपदेश का वर्णन करते हुए सहायता की अपील की गई। श्रीयुत गिरधरलाल भाई दफ्तरी के प्रयास से ४३००) की रकमें लिखीं गई।

श्रीयुत खीमचन्द भाई वोरा ने प्रस्ताव का समर्थन किया। इसके बाद श्री हीराणी ने अपनी कविताएँ सुनाई। पूज्यश्री की आत्मशान्ति के लिए ४ लोगस्स का ध्यान किया। मांगलिक प्रवचन के बाद सभा की कार्यवाही पूर्ण हुई।

इसी प्रकार घाटकोपर तथा दूसरे स्थानो में भी शोक सभाएँ हुई। नीचे लिखे स्थानो पर पूज्यश्री के लिए शोक सभा होने के समाचार मिले—

१ अ० भा० श्वे० स्था० जैन कान्फ्रेंस, बम्बई।
२ श्री श्वे० स्थानकवासी जैन सङ्घ, बम्बई।
३ श्री रत्नचिन्तामणि स्था० जैन मित्र मंडल, बम्बई।
४ श्री श्वे० स्था० जैन सङ्घ, घाटकोपर।
५ श्री सार्वजनिक जीवदया खाता, घाटकोपर।
६ प० रत्नचन्द्रजी जैन कन्यापाठशाला, घाटकोपर।
७ श्री स्थानकवासी जैन समाज सङ्घ, राजकोट।
८ दी ग्रेन मर्चेण्ट एसोसिएशन, बम्बई।

९ दी क्लोथ मार्केट एसोसिएशन, इन्दौर।
१० सर्राफा बाजार, इन्दौर।
११ श्री स्थानकवासी जैन सङ्घ, इन्दौर।
१२ „ स्थानक वासी जैन संघ, ब्यावर।
१३ „ हितेच्छु श्रावक मण्डल, रतलाम।
१४ „ धर्मदास जैन मित्र मंडल, थांवरोद।
१५ „ स्था० जैन बालचर सङ्घ, सादड़ी।
१६ श्री स्था० जैन सङ्घ, जमुनिया।
१७ „ श्वे० साधुमार्गी हि० संस्था, उदयपुर।
१८ „ वर्द्धमान सेवाश्रम, उदयपुर।
१९ „ जैन सभा, अमृतसर।
२० „ स्थानकवासी सङ्घ, बड़ी सादड़ी।
२१ „ श्वे० स्थानकवासी सङ्घ, सादड़ी।
२२ „ जवाहर मित्र मंडल, मन्दसौर।
२३ „ श्वे० स्था० जैन वीर मंडल, बेंकड़ी।
२४ „ जवाहर शोक सभा, बादेवड़।
२५ „ जवाहर शोक सभा, सींगापेसमल।
२६ „ जैन गुरुकुल, ब्यावर।
२७ „ तिलोकरत्न स्था० जैन परीक्षाबोर्ड पाथर्डी।
२८ „ जैन रत्न पुस्तकालय, पाथर्डी।
२९ „ अमोल जैन सिद्धान्त शाला, पाथर्डी।
३० जाटर सभा, बीसे पाग्स।
३१ „ स्थानकवासी जैन सङ्घ, मालेगांव।
३२ „ जैन बोर्डिङ्ग स्कूल, कुचेरा।
३३ „ का० शि० ओसवाल बोर्डिंग, जलगांव।
३४ „ स्थानकवासी जैन सङ्घ, लुधियाना।
३५ „ स्था० जैन जवाहर हि० धा० मण्डल, उदयपुर।
३६ „ जैन श्वे० स्था० संघ, कोटा।
३७ „ शान्ति जैन पाठशाला, पाली।
३८ „ जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस, रतलाम।
३९ „ स्था० जैन श्रीसङ्घ, नीमच।
४० „ स्था० जैन श्रीसङ्घ, अहमदनगर।
४१ „ स्था० जैन श्रीसङ्घ, चित्तौड़गढ़।
४२ „ जैन सभा, जम्मू।
४३ „ महावीर जैन स्कूल जम्मू।
४४ विजय जैन स्कूल, कानोड़।
४५ „ सारा बाजार, कानोड़।
४६ „ सारा बाजार, मालेगांव।
४७ „ श्री जैनसङ्घ जोधपुर।

इनके अतिरिक्त और बहुत से नगरों तथा ग्रामों में शोक सभाएँ की गईं।

श्रीजवाहर विद्यापीठ की स्थापना

आषाढ़ शुक्ला १० को प्रातःकाल ६ बजे बीकानेर, गगाशहर और भीनासर के चतुर्विध सघ की सम्मिलित शोक-सभा हुई। पूज्यश्री के प्रति अपनी श्रद्धांजलि प्रकट करने के बाद श्रीमान् लहरचदजी सेठिया ने अपील की। आपने कहा—'स्वर्गस्थ पूज्यश्री के प्रति वास्तविक और स्थायी श्रद्धाभाव व्यक्त करने के लिए आवश्यक है कि एक अच्छा स्मारक फड कायम किया जाय और उसके द्वारा समाज हित का कोई अच्छा काय किया जाय।' कई वक्ताओं ने इसका समथन किया। अपील करने वाले लहरचन्द जी सेठिया ने सेठिया-बन्धुओं की ओर स ११०००) रुपये भेंट करने का वचन दिया। उसी समय बांठिया-बन्धुओं ने भी ११०००) रुपय देने की घोषणा की। उसी समय चदा एक लाख के लगभग पहुँच गया।

स्व० पूज्यश्री शिक्षा के प्रबल हिमायती थ और धार्मिक शिक्षा पर बहुत जोर दिया करते थे। अतएव आपकी स्मृति मे शिक्षा सस्था की स्थापना करना उचित समझा गया। तदनुसार भीनासार मे 'श्रीजवाहर विद्यापीठ' नाम से एक सस्था स्थापित की गई है।

परिशिष्ट

पूज्य
श्रीजवाहरलालजी महाराज साहिब

के प्रति

मुनियो, राजा-महाराजाओ

तथा

प्रतिष्ठित व्यक्तियो

की

श्रद्धाञ्जलियां

परिशिष्ट न० १

मुनियों की श्रद्धाञ्जलियां

राज्य वर्ग की श्रद्धाञ्जलियां

प्रतिष्ठित व्यक्तियों की श्रद्धाञ्जलियां

पद्य में

परिशिष्ट न० २

जवाहर विचार-बिन्दु

परिशिष्ट न० ३

जयतारण शास्त्राथ

पूज्यश्री के प्रति मुनियो की श्रद्धाजलिया

१—प्रभावक पूज्यश्री

(ऋषि सम्प्रदाय के आचाय प० रत्न पूज्यश्री आनन्द ऋषि जी महाराज)

शास्त्रविशारद जनाचाय पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज साधुमार्गी समाज म जवाहर के समान चमक रहे हैं। आपकी व्याख्यान शक्ति ब ी आजस्विनी है। यद्यपि पूज्यश्री के साथ रहने या विशेष सौभाग्य नही मिला फिर भी अजमर मुनि सम्मेलन के अवसर पर आपके दर्शन हुए थे और वाणी सुनने का शुभ प्रसग भी प्राप्त हुआ। वे दिन मुझे याद आते हैं।

श्रमण सस्कृति की तरफ पूज्यश्री का लक्ष्य होने स लोगा क ऊपर अच्छी छाप पडती है, क्योकि विद्वान और क्रियावान् दोनों बातें क्वचित ही मिलती हैं। यही कारण है कि पूज्यश्री ने काठियावाड की तरफ विहार करके कानजी मुनि (सोनगढ वाले) के पजे म फँसने वाले अनान श्रावक श्राविकाओं को शुद्ध श्रद्धा मे कायम किया। इसी तरह जिस स्थली प्रदेश में श्री ऋषि सम्प्रदाय के ज्योति शास्त्र विशारद, पडित मुनि श्री दौलत ऋषिजी महाराज ने जाने के लिए प्रस्थान किया था और जैनाचाय स्वर्गीय पूज्यश्री श्रीलाल जी महाराज ने भी धर्म प्रचार करने की भावना से विहार किया था परन्तु वे इष्टसिद्धि नहीं कर सके उसी स्थली प्रदेश मे पूज्यश्री ने तप सयम म सुदृढ रहते हुए अपनी विद्वान् शिष्य मडली के साथ हिम्मत से जाकर चूरू, सरदार शहर आदि स्थानों मे जहाँ तेरहपथी समाज का विशेष प्राबल्य है जो एक प्रकार के दुग हैं उनमें प्रविष्ट होकर शुद्ध स्थानकवासी धम का प्रचार किया। उस प्रदेश के जनेतर लोग जैन धम के रहस्य को नही जानत थे उनके दिल पर भी प्रकाश डाला। यह कुछ साधारण बात नहीं है।

पूज्यश्रीजी ने साहित्यिक सेवा भी उत्कृष्ट रीति से की है जो कि व्याख्यान-संग्रह में से श्रावक का अहिंसाव्रत, सत्यव्रत आदि बारहव्रतो पर स्पष्टीकरण हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम ने प्रकाशित किया है। उसस लोगों के अन्त करण ने धम भावना सुदृढ होती है। राजकोट व्याख्यान सग्रह, जामनगर व्याख्यान सग्रह श्री सूयगडांग सूत्र का सविवचन भाषान्तर आदि प्रयास विशेष प्रशसनीय हैं।

तरहपथी समाज की तरफ से अनुकम्पा की ढालें नामक पुस्तक छपी है। भ्रमविध्वसन नामक ग्रथ जयाचाय जी (जीतमलजी) विरचित है। उस ग्रन्थ मे दया दान विनय रूप गुण रत्नो का खण्डन करने के लिए कुयुक्तिया लगाकर जनता की आँखो म फँसने का काम किया है। उसम अज्ञान जनता का फँस जाना स्वाभाविक है। गुरुगम से रहित पढे लिखे व्यक्ति भी उस के चक्कर म आ जाते हैं। ऐस अज्ञान और भनान लोगों की दया दान विनय की ओर प्रवत्ति कराने क लिए सचोट शास्त्रीय प्रमाण देकर उनकी कुयुक्तिया बताते हुए शुद्ध धम की श्रद्धा बढाने के लिए सद्धम मण्डन नामक वृहत पुस्तक की रचना की है। उसी प्रकार अनुकम्पा विचार नामक पुस्तक भी दया भगवती की स्थापना करने के लिए उसी भाषा म तयार की। पूज्यश्री का यह काय भी आदर्श और अद्वितीय है।

इस काय के करने से जैन धर्म और स्थानकवासी जैन सम्प्रदाय का मुख उज्जवल हुआ है ऐसा कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

पूज्यश्री जी के समान धुरंधर विद्वान् प्रतिभासम्पन्न वक्तृत्व शक्ति धारक, सुधारप्रेमी और गुरुभक्त जवाहरलाल अपने समाज में अनेक उत्पन्न होकर जैन धर्म की उन्नति करें, ऐसी शुभाकांक्षा रखता हूं।

२—पूज्य-परिचय

(पूज्य श्री रत्नचन्द्र जी महाराज की सम्प्रदाय के आचार्य पण्डितप्रवर पूज्य श्री हस्तीमलजी महाराज)

आज हमारे सामने तीर्थंकर या वैसे अन्य कोई अतिशय ज्ञानी नहीं हैं जो सुनिश्चित रूप से धर्म का स्वरूप समझावें और मतभेद या शंकाओं का निरसन कर सकें। मात्र एक धर्माचार्य ही आज संसार के पथ प्रदर्शक रह गए हैं और यह आचार्य पद ही ऐसा है जो तीर्थंकर के अभाव में भी चतुर्विध संघ का धर्ममार्ग में उद्बोधन व संचालन आदि के द्वारा नेतृत्व कर सकता है। इसलिए धार्मिक मर्यादाओं में योग्य परिवर्तन का अधिकार भी शास्त्रकारों ने इनके हाथ में दिया है। इन आचार्यों के बहुमत से स्वीकृत नियमावली जीत व्यवहार समझी गई है। इस से निश्चित है कि शास्त्र का सत्यरूप संसार को दिखाने वाले धर्माचार्य ही हैं। मगर इस उल्लेख से पाठक यह नहीं समझ बैठें कि धर्माचार्य नामधारी सभी में यह शक्ति होती है। क्योंकि योग्य धर्माचार्य संसार का तारक है वैसे अयोग्य धर्माचार्य संसार के मारक भी होते हैं। अतएव योग्य धर्माचार्य का संयोग प्राप्त करने के लिए पहले उनके योग्यता सूचक गुणों का परिचय करना आवश्यक है। शास्त्र में इन्द्रिय संयम आदि धर्माचार्य के ३६ गुण बताए हैं, जो प्रायः प्रसिद्ध हैं। किन्तु दशाश्रुतस्कन्ध की चतुर्थ दशा में उनका संक्षेप ८ दशाओं में मिलता है। जैसे—१ आचार विशुद्धि २ शास्त्रों का विशिष्ट और तलस्पर्शी वाचन, ३ स्थिर संहनन और पूर्णेन्द्रियता ४ वचन की मधुरता तथा आदेयता आदि, ५ अस्खलित वाचना व सूत्र अर्थ की निर्वाहकता ६ ग्रहण एवं धारणा मति की विशिष्टता, ७ शास्त्रार्थ में द्रव्य, क्षेत्र व शक्ति की अनुकूलता से प्रयोग करना ८ समय के अनुसार साधुओं के संयम निर्वाहार्थ साधन संग्रह की कुशलता। इन आठ विशेषताओं के साथ निर्दोष चारित्र धर्म का पालन करना एवं आश्रित संघ को ज्ञान क्रिया में प्रोत्साहित करते रहना यह आचार्य की खास विशेषता है।

मुझे आज जिन पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज का परिचय देने का प्रसंग मिला है, उन में पाठकों को इन विशेषताओं का अधिकांश दर्शन हो सकता है। आप धीर वीर और प्रभावक तथा प्राचीनता का न्याय युक्ति से शोधन करने वाले हैं। आपकी उपदेश शैली स्था० समाज में आदर्श समझी जाती है। आपके प्रवचन क्रान्तिकारी एवं सुधारणा के विचार को लिए रहते हैं। इन उपदेशों ने जिस सम्प्रदाय के आप आचार्य हैं उस में ही नहीं, किन्तु स्था० समाज में क्रान्ति की लहर उत्पन्न कर दी है। आज से ३० ३५ वर्ष पूर्व जो साधु साध्वियों का पण्डित से शिक्षण लेना अधिकांश सम्प्रदायों में (खासकर आपकी सम्प्रदाय में) निषिद्ध समझा जाता था, विरोध का सामना करके भी आपने उस प्रथा को आवश्यकतानुसार स्वीकार किया और आज जब प्रायः साधु साध्वी पण्डित प्रथा को अपनी प्रतिष्ठा समझने लगे और उनके लिए गृहस्थों से चन्दा इकट्ठा करके फण्ड बनाने लगे तब उसके दुरुपयोग का अनादर होते भी अपनी सम्प्रदाय में इस का प्रतिबन्ध करके आपने अपवाद रूप से ही उसको अपनाने की छूट रखी है। यह पूज्यश्री की मध्यस्थता है। इसके सिवाय चारित्र रक्षण की बाह्य मर्यादाओं में भी निर्भीकता से आपने कई परिवर्तन किए हैं। स्था० समाज की विशाल शक्ति संगठित रूप में आकर जगत को अपना अनुराग बतावे [illegible], इसके लिए मुनि सम्मेलन अजमेर के खास मुनियों के समक्ष प्रधानाचार्य पद की एक योजना भी रखी। किन्तु उस समय अनुकूल भूमिका के अभाव में यह भावना कार्य रूप में नहीं आ सकी। अस्तु जैसा समाज का भाग्य। उपरोक्त घटनाओं से आपकी प्रभावशालिता व उदार वृत्ति ज्ञात होती है। बुद्धिपूर्वक स्वीकृत तत्त्व के प्रचार में जैसे आप दृढ़ हैं वैसे ही अनुराग से आदर योग्य

अतिशय मृदु भी थे। सम्मेलन के सामान्य परिचय के सिवाय मरा पूज्यश्री स दो ही वार समागम हुआ है। प्रथम सम्मेलन के पूव लीरी गाँव म और दूसरा जेठान मे। उस समय के वे प्रेमल प्रसग आज भी स्मृति चिन्ह बनाये हुए हैं। विहार के समय तो आपने प्रीति की अतिशयता कर दिखाई। प्रीत्यथ या मेरे आचायपद के सम्मानार्थ मुझे मांगलिक सुनाने को फरमाया जो प्रेमावेश के बिना छोटे मुँह से बडी बात सुनना होता। मैंने भी आपके अनुरोध से मौन खोलकर काठियावाड से पुनरावतन की कुशल कामना करते हुए मांगलिक सुनाया। उस समय आपकी भावुकता व श्रद्धा का दृश्य दर्शनीय था। साम्प्रदायिक झझटो को भी आत्मरमण म बाधक समझ कर पूज्यश्री ने कई वर्षों स अपना अधिकार युवाचाय जी को दे दिया है। अपनी मौजूदगी में ही युवाचायजी सघ सचालन का पूण अनुभव प्राप्त कर लें और अपने को आत्मरमण म विशेष लाभ मिले इस दृष्टि से आपका यह काय भी आदर्श व दूरदर्शिता पूर्ण है। इस प्रकार आपकी विशेषताओं का सक्षिप्त परिचय है। विशेष परिचय पाठको को जीवन चरित्र से मिलेगा ही। शास्त्र म कहा है कि—

जह दीवो दीवसय, पइप्पए जसो दीवो।
दीवसमा आयरिया दिप्पंति परं च दीवंति॥

अर्थात्—आचाय दीपक के समान है। जैसे दीप सकडो दीपकों को जलाता है और खुद भी प्रकाशित रहता है ऐसे दीप के समान आचाय स्वय ज्ञान आदि गुणो से दीपते और उपदेश दान आदि स दूसरो को भी दीपाते हैं। अन्त में यही सदिच्छा है कि आप दीर्घायु लाभ करें और वर्धमान गच्छ जैसी योजना से समाज का दृढ़ हित साधने मे यशस्वी बनें।

३—एक महान ज्योतिधर

(जैनाचाय पूज्यश्री पृथ्वीचद्रजी महाराज)

किसी का नाम अच्छा होता है काम नही और किसी का काम अच्छा होता है नाम नही। अच्छा नाम और अच्छा काम किसी विरली आत्मा को ही मिलता है। हमारे सौभाग्य से पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज को दोनो प्राप्त हुए हैं। 'जवाहर' कितना सुन्दर सरस एव महत्वसूचक नाम है। और काम! वह तो आज जन ससार के प्रत्येक स्त्री पुरुष के समक्ष सूर्य के समान प्रकाशमान है। पूज्यश्री के जीवन का हर पहलू उज्वल है। उनका ज्ञान ऊँचा है उनका दशन ऊँचा है उनका चरित्र ऊँचा है अतएव उनका रत्नत्रय ऊँचा है। उनके जीवन का प्रत्येक प्रगति बिन्दु ऊँचा है। पूज्यश्री का साहित्य जीवन साहित्य है। उसने सुप्त समाज में जागरण पैदा किया है। साधु धम और गृहस्थ धम के पृथक्करण में वास्तविक माग का प्रदशन किया है। वर्तमान बीसवी शताब्दी मे, जैन आचार विचारों का महत्व यदि किसी ने नवीन दृष्टिकोण से ससार के सामने रखा है और साथ ही पुरातन सस्कृति का भी सरक्षण किया है तो वह पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज हैं। उन्हें जितना भूतकाल का पता है उतना ही वतमान काल का पता है और इन सब स बढ़कर पता है भविष्य काल का। अतएव आप समाज का प्रत्येक परिस्थिति का एक चतुर वद्य की भाँति निदान करते हुए हमारे सामने उस परिस्थिति के उपचार और परिचालन का आदश उपस्थित करते हैं। वतमान जैन समाज के पूज्यश्री बहुत बड़े आध्यात्मिक वैद्य हैं, जिनकी चिकित्सा प्रणाली अमोघ है। जिनके अहिंसा और सत्य के प्रयोगो स हजारो दुष्कम दूषित आत्माएँ आध्यात्मिक स्वास्थ्य प्राप्त कर चुकी हैं।

पूज्यश्री का भक्तियोग बहुत उच्चकोटि का है। व्याख्यान देने स पूव प्रार्थना के रूप म जब गद्गद हृदय से चौबीसी गान करते हैं तो साक्षात मूर्तिमान भक्ति रस सामने उपस्थित हो जाता है। कट्टर से कट्टर नास्तिक हृदय भी एक बार भक्ति से झूम उठता है। और जब प्रार्थना पर विवेचनात्मक प्रवचन होता है तब शान्त रस का समुद्र ठाठें मारने लगता है। जीवन की उलझी हुई गुत्थियों का गहन जाल एक एक करके सुलझने लगता है। श्रोताओं के अन्तहृदय से अविश्वास एव मिथ्याविश्वास का चिरकाल लग्न पाप मल बाहर बह निकलता है।

पूज्यश्री के प्रकाण्ड पाण्डित्य का परिचय हमें 'सद्धर्ममण्डन' से मिलता है। तेरापंथ समाज की युक्तियों का जाल बहुत विकट माना जाता है। अच्छे-अच्छे दिग्गज विद्वान भी कभी कभी उनके कुतर्कों में उलझ जाते हैं, परन्तु पूज्यश्री की प्रखर प्रतिभा के समक्ष 'भ्रमविध्वंसन' की एक भी युक्ति सुरक्षित नहीं रह सकी। 'भ्रमविध्वंसन' पर सद्धर्ममण्डन वह घातक चोट है जिसकी चिकित्सा के लिए तेरापंथ समाज के पास कोई औषधि नहीं है।

जिनभद्रगणि का विशेषावश्यक भाष्य बहुत दुरूह माना जाता है। किन्तु पूज्यश्री का उस पर कितना अधिकार है, यह मैंने खुद कान्फरी (जिद स्टट) में देखा जब आप शिष्यों को पढ़ाते हुए उस पर मौलिक विवेचन करते थे तो जटिल से जटिल पंक्तियों को सहज ही में सुलझा डालते थे। आपका आगम ज्ञान भी बहुत उच्च कोटि का है। इसका पता पाठकों को आपके तत्त्वावधान में सम्पादित होने वाले सूत्रकृताङ्ग के अनुपम संस्करण से मिलता है।

पूज्यश्री की कौनसी विशेषताएँ वर्णन की जावें और कौनसी नहीं—यह चुनाव ही अटपटा जान पड़ता है। आपके महान जीवन की प्रत्येक विशेषता अक्षरों का रूप लेना चाहती है परन्तु महान् आत्माओं के सम्बन्ध में ऐसा कभी नहीं हो सका है। पूज्यश्री वर्तमान जैन संसार के महापुरुष हैं अतः उनका महान जीवन कलम के नीचे न अब आ सकता है और न कभी आ सकेगा। यह तो आपके महान् व्यक्तित्व के प्रति साधारण या हार्दिक भावना का परिचय मात्र है। आज आपकी ६२वीं जन्मजयन्ती के अवसर पर जैन जाति के प्रत्येक हृदय में मंगल संकल्प है कि पूज्यश्री युग युग चिरंजीवी रहें।

४—स्थानकवासी सम्प्रदायना सितारो

(मुनिश्री प्राणलालजी महाराज)

विश्व मां जेओ आत्माना दरेक गुणोने सम्पूर्ण खीलावी वीतराग ना स्वरूप बनी गया छे तेओ सम्पूर्ण गुणी याने अविकारी गुणवन्त आत्मा परमात्मा स्वरूप गणाया छे। ए सिवायना दरेक आत्मा अपूर्ण गणाय छे। चालु वर्तमान काल मां आ भारतवर्ष नो दरेक मानवी पण अपूर्ण गणाय छे छतां जे मानवो सिद्धपद प्राप्त करवाना लक्ष्य बिन्दुए साधक दशामां आत्मगुणोनो विकास करी रह्या छे तेवा अनेक साधको वर्तमान मां विद्यमान छे। ते साधक वर्गमानां पूज्यश्री पण आपणी दृष्टीए एक उत्तम कोटिना साधक गणाय छे। आ सुसाधक पूज्यश्रीए पोतानी आत्मसाधना उपरान्त अनेक आत्माने साधक दशा तरफ लाववाना सारो प्रयास कर्यो छे।

पूज्यश्री महान् पुण्यशाली अने प्रभावशाली छे एम ज्यारे अमारा समागम मां जयपुर स्थाने महापुरुष सर्वज्ञ पुरुषोत्तम जी स्वामीनी साथ मां हुं अने अन्य अमारा गुरुओ आव्या हता त्यारे जोवायु हतु। तदुपरान्त पूज्यश्री स्वशास्त्र अने पर शास्त्र मां पण घणाज कुशल छे एम थोड़ दिननां टुंक सामगम मां समज्यु छे।

पूज्यश्री नी व्याख्यान शैली पण उत्तम अने गुणवाई थई जैन अने जैनेतर समाज ने आकर्ष्या, ते सारी सामान्यक नोंधवी छे।

विशेष शु लखु। पूज्यश्री स्थानकवासी समाजना एक सारा जवाहर गणाया छे।

५—(कोटा सम्प्रदाय के आचार्य तरणतारण आत्मार्थी

पूज्य मुनिश्री माणेकचन्दजी महाराज)

प्रसिद्ध वक्ता, जैन शासन दिवाकर परम पूज्य महाराज श्री जवाहरलालजी महाराज श्रीए सं० १९९२ मां काठियावाड़ जेवी पवित्र भूमि मां तेओए पधारी राजकोट मुकाम प्रथम चोमासु कर्यु। अने एवा विशाल प्रदेश मां स्थले स्थले विचरी जैन तथा जैनेतर उपरान्त राजा महाराजाओं ने पोतानी अमूल्य अने सदुपदेशनी मीठी सहाण करी 'दयाधर्म नी जागृती करी' ना टंका पर पर घणो छाप पाडी ज उपकार कर्यो छे ते अवर्णनीय छे।

स० १९९४ मा अमे शेषकाल राजकोट हता ते वखते पू० म० श्री जवाहरलालजी म० श्री नो अमोने समागम थयो। अने तेमनी अमूल्य वाणीनो लाभ पण अमोने मल्यो अने ते वखते 'गुरुकुल' जेवी जे उत्तम संस्था अस्तित्व मा आवी ते पण पू० म० श्रीजवाहरलालजी महाराज श्री ना सदुपदेश ने ज आभारी छ। अमोने तेओनी साथे खूबज प्रम बधायेल छे।

६—(वादिमानमदन, शास्त्राथ, विजयी, अजमेर साधु सम्मेलन के शान्तिरक्षक) महास्थविर गणि श्री उदयचन्दजी महाराज

नि सन्देह पूज्यश्री जवाहरलालजी इस समय के आचार्यों मे एव श्रेष्ठ और माननीय आचाय हैं जिनके उपदेश से श्री जन सघ मे बहुत ही उन्नति हुई है और इस समय जैन साहित्य मे जो सुन्दर सुन्दर पुस्तकें उपलब्ध हो रही हैं उनका सारा यश इन्ही पूज्यश्री को है।

७—आचाय श्री जवाहरलालजी महाराज का युगप्रधानत्व

(लिखक साहित्य रत्न जन धम दिवाकर उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज

तथा

कविरत्न उपाध्याय श्री अमरचन्द जी महाराज)

आज भारत के एक कोने में, मरुभूमि के सुन्दर नगर भीनासर में जन सस्कृति का एक महान उज्वल समुज्वल अत्युज्वल प्रकाशमान प्रतीक विराजमान है। आजकल कितनी लेखनियाँ उनके उपकारो के गुरुभार से लदी हुई कागज के पथ पर दौड रही होंगी और उस सत्पुरुष के चरणा म अपनी अपनी भावभरी श्रद्धाजलिया अपण कर रही होंगी! लेखक होने के नाते अपनी लेखनी को भी कुछ लिखने का अभ्यास है, अत यह क्यो चुप बैठे! यह भी चल पड़ी है, मगल भावनामय मोतियों की लडियाँ अक्षरा के रूप में अर्पण करने के लिए।

एक उपमा है। वर्षा की सुहावनी ऋतु हो। मेघाच्छन्न सुनील नभ से नन्ही-नन्ही जल कणिकाएँ गिर रही हों। फलस्वरूप भूतल पर नानाविध वृक्षावलियो स परिमण्डित उपवन की शोभा को चार चाँद लग रहे हों। चारो ओर रग बिरगे फूलो की भीनी भीनी सुगध हवा के घोडे पर चढ कर सुदूर देश की यात्रा को जा रही हो। भृङ्गावलियाँ मधुर झनकार के साथ दिखाई दे रही हो। भला कौन वह सहृदय सज्जन होगा, जो उपवन की प्रस्तुत मनमोहक सुषमा को देखने के लिए लालायित न हो। यह साधारण सा उपमान है और उपमेय ? वह तो उपमान से अनन्त, अनन्त, अनन्तगुणा बढ चढ कर है। विद्या एव चारित्र से सपन्न, दीर्घदर्शी, अनुभवी, देशकालज्ञ श्रमणसघ के एक मात्र आधार स्तम्भ दुरातिदूर देशो मे अनकान्त की जयपताका फहराने वाले कत्तव्य क पथ पर आचाय पद जस महान् गौरवमय पद को पूणतया चरिताथ करन वाले, उत्सर्ग एव अपवाद माग की जटिलतम गुत्थियो को सहज ही सुलझाने वाले आचार्य देव की अद्वितीय महिमा एवं सुषमा को जानकर कौन प्रसन्न न हो ? और कौन होगा वह महाअभागा जो अपने इस भाँति परमोपकारी सत्पुरुषो का गुण कीतन न करना चाहे।[1] 'वाग्जन्म वैफल्यमसह्यशल्य गुणाधिके वस्तुनि मौनिता चेत्" महामहनीय आचाय श्री जवाहरलालजी महाराज उन महापुरुषो में से हैं जिन्होंने अपने जीवन की अमर ज्योति जला कर जैनसस्कृति के महान् प्रकाश से ससार को प्रकाशित कर दिया है। आप जिधर भी गए उधर ही ज्ञान दीपक का प्रकाश फैलाते गए जनता के बुझे हुए हृदय दीपकों में ज्ञान प्रकाश का सचार करते गए और शास्त्रोक्त दीवसमा आयरिया के सिद्धान्त को पूण सत्य के रूप मे चमकाते गए। साधारण चन्द्र सूय, तारा आदि का महत्व अपने चमकने म ही है किन्तु दीपक तथा आचाय का महत्व अपने सा प्रकाश स्वसवधित दूसरो म उतारने क लिए है। आचाय श्री ने अपन महान व्यक्तित्व की छाया मे युवाचाय श्रीगणेशीलालजी आदि व महान

---

१ अधिक गुणो वाली वस्तु को देख कर मौन रहना वाणी और जन्म का व्यय खोना है। यह बात हृदय म असह्य काटे के समान चुभती है।

सत्व तैयार किए हैं, जो भविष्य में अधिकाधिक उद्भासित होते जाएंगे। आचार्य के जीवन का महत्व अपने निर्माण करने तक ही सीमित नहीं है, प्रत्युत उनके जीवन की सफलता पार्श्ववर्तियों के जीवन निर्माण तक है, इस दिशा में आचार्य श्री जी की सफलता शतप्रतिशत अभिनन्दनीय है।

आपकी भाषण शैली बड़ी ही चमत्कृति पूर्ण है। जिस किसी भी विषय को उठाते हैं आदि से अन्त तक उसे ऐसा चित्रित करते हैं कि जनता मन्त्रमुग्ध हो जाती है। चार चार पाँच पाँच हजार जनता के मध्य आपका गंभीर स्वर गरजता रहता है, और बिना किसी शोरगुल के श्रोता दत्तचित्त से एकटक ध्यान लगाए सुनते रहते हैं। बड़ी से बड़ी परिषद् पर आप कुछ ही क्षणों में नियन्त्रण कर लेते हैं। आप के श्रीमुख से वाणी का वह अखण्ड प्रवाह प्रवाहित होता है कि बिना किसी विराम के, बिना किसी परिवर्तन के, बिना किसी खेद के, बिना किसी अरुचि के, निरन्तर अधिकाधिक ओजस्वी, गम्भीर, रहस्यमय एवं प्रभावोत्पादक होता जाता है। व्याख्यान में कहीं पर भी भाव और भाषा का सामञ्जस्य टूटने नहीं पाता। प्राचीन कथानकों के वर्णन का ढंग, आपका ऐसा अनुपम एवं सुरुचि पूर्ण है कि हजार हजार वर्षों के जीर्ण शीर्ण कथानकों में नव जीवन सा हो जाता है। आपकी विचारधारा आध्यात्मिक, तीक्ष्ण, सूक्ष्म एवं गम्भीर होती है। सहसा किसी व्यक्ति का साहस नहीं पड़ता कि आपके विचारों की गुरुता को किसी प्रकार हलका कर सके, या उसे छिन्न भिन्न कर सके। आपका कल्पनाशील मस्तिष्क विचारों की इतनी अच्छी उर्वरा भूमि है कि प्रत्येक व्याख्यान में नए से नए विचार, नया से नया आदर्श, नए से नए संकल्प उपस्थित करती है। आप की साहित्य सेवा भी कुछ कम प्रशंसनीय नहीं है। श्रावक के बारह व्रतों का आपने जिस सुन्दर और अद्यतन शैली से वर्णन किया है उस ने जैन आचारप्रणाली के महत्व को आकाश की भूमिका पर चढ़ा दिया है। अहिंसा और सत्य आदि का हृदयस्पर्शी मर्मभरा वर्णन प्रत्येक भावुक हृदय को गद्गद कर देने वाला है। आप की वर्णन पद्धति इतनी सजीव होती है कि पढ़ने वाला सहसा आप के चरणों में श्रद्धा अर्पण कर देता है। 'धर्मव्याख्या' में तो आपने कमाल ही कर दिखाया है। स्थानांगसूत्र के संक्षिप्त नाममात्र दस धर्मों को लेकर आपने यह अनुपम व्याख्या की है कि जो युग युग तक ग्राम नगर राष्ट्र और संघ आदि के गौरव को अक्षुण्ण रख सकेगी। धर्म के साथ राष्ट्र को और राष्ट्र के साथ धर्म को छूते रहने की आप जैसी अनूठी कला विरले ही किसी सौभाग्यशाली सत्पुरुष में मिलती है। आप के हाथों यदि आगमों की टीका का निर्माण होता तो क्या ही अच्छा होता! भूत और वर्तमान काल के जैन संसार में आप जैसा विद्वान और कौन मिलेगा? एक आपकी सब से बढ़ कर अमर कृति और है। वह है "सद्धर्ममण्डन"। तेरा पंथ सम्प्रदाय के आचार्य श्री जीतमल जी ने भ्रम विध्वंसन नामक ग्रंथ में जैनधर्म के अहिंसा, दया, दान, आदि सिद्धान्तों को बहुत विकृत रूप में उपस्थित किया है। आगमों के पाठों को तोड़ मरोड़ कर ऐसा विकृत बना दिया है कि सहृदय पाठक सहसा जैनधर्म से घृणा करने लगता है। भ्रमविध्वंसन के कुतर्कों का इतना अच्छा स्पष्ट, अकाट्य युक्तियुक्त उत्तर नहीं दिया गया था जैसा कि आपने सद्धर्ममण्डन में दिया है। आगम पाठों एवं युक्तियों को लेकर यह अभेद्य दुर्ग निर्माण किया गया है, जो युगयुगान्तर तक विपक्षियों की कुतर्कवाहिनी के लिए अजेय सा बना रहेगा। सद्धर्ममण्डन की प्रत्येक पंक्ति आपके गंभीर आगमाभ्यास का प्रमाण है। कहीं कहीं तो आप इतनी सूक्ष्मता में उतर गए हैं कि बड़े बड़े शास्त्रज्ञ भी वहाँ पहुँच कर हैरान हो जाते हैं। आप केवल सद्धर्ममण्डन लिख कर ही सन्तुष्ट न हुए, प्रत्युत थली में जाकर तेरापंथ समाज से साक्षात् शास्त्रार्थ टक्कर भी ली। धर्मजिज्ञासु जनता जो मिथ्या भ्रम में पड़ी हुई थी, आपके सम्यग्ज्ञान के प्रचण्ड व्याख्यानों के प्रकाश से उन्मुख हो उठी और साथ ही दया दान रूप सत्य धर्म पर आरूढ़ हो गई। जानने वाले जानते हैं कि तेरापंथ समाज का कितना जोर होता है, उसके विरोध में प्रचार करने वालों को किन रोमहर्षक कठिनाइयों का सामना करना

होता है। किन्तु आपके अदम्य साहस ने आपत्तियों की कोई परवाह न की। दृढ़ता से कतव्यपथ पर अग्रसर होकर माया का जाल एक बार छिन्न भिन्न कर ही ता दिया। आपका यह काय जैन इतिहास के उन सुनहले पष्ठो म से है जो शत वर्षों तक अध्ययन का प्रिय विषय बने रहेंगे तथा समय समय पर सम्यग्ज्ञान का विमल प्रकाश देते रहेंगे।

मानव जीवन के उत्थान के दो पहलू हैं—विचार और आचार। विचार के बिना आचार निष्प्राण रहता है और आचार के बिना विचार। दोनो का समतुलन सौभाग्य से इनी गिनी आत्माओ मे ही दृष्टिगोचर होता है। हप है कि पूज्यश्री दोनो ही पहलुओ से उन्नत हैं। आप के आचार और विचार दोनो ही एक दूसरे के पूरक हैं। आपकी आचार सम्बधी कडक काफी ख्यातिप्राप्त है। जब से आपने आचाय पद का गुरुतर भार सभाला है आज तक आप कतव्य के प्रति सतत जागरूक रहे हैं। आगम मे सयमसमाचारी तपसमाचारी, गणसमाचारी आदि जितनी भी समाचारियो का उल्लेख आया है, आपने सभी के महत्व को यथास्थान सुरक्षित रखा है। अपनी शासन सम्बधी कठोर नीति के कारण आप के माग म बाधाएँ भी कुछ कम उपस्थित नहीं हुइ। कितु सब विघ्नबाधाओ को कुचलते हुए सबकी खरी खोटी सुनते हुए, निभय निष्कम्प गजगति से अपने कतव्य पथ पर दढ़ता से बढ़ते ही गए। दशवकालिक सूत्र के 'अणासए जो उ सहिज्ज कटए, वईमए कनसरे सपुज्जा, के कथनानुसार सच्चे शब्दो म आप पूज्यपद के अधिकारी हुए। आपका विहार क्षेत्र अत्यधिक विशाल है। आपने अपने पयटक जीवन म मारवाड़, मेवाड़, मालवा गुजरात, पजाब प्रान्त आदि दूर दूर तक के प्रदेशो मे भ्रमण करके जैन सस्कृति का विशुद्ध रूप जनता के समक्ष उपस्थित किया है और भगवान महावीर के शासन का गौरवगान गुजाया है। जहाँ आपके पास साधारण से साधारण जनता पहुँची है, वहाँ देश के धुरधर अधिनायक महात्मा गाँधी जसे नेता भी श्रद्धा और स्नेह का अर्घ्य लिए पहुँचे हैं। आज के युग म गाँधीजी का महान् व्यक्तित्व भारत की सीमाओ को लाँघ कर दूर दूर फला हुआ है। राष्ट्र के इस महान् नेता का आप जसे सन्तो की सवा म पहुँचना वस्तुत श्रमण सस्कृति के लिए महान् गौरव की बात है। आपका महान् व्यक्तित्व अनेकानेक चमत्कारो से भरा पड़ा है। जीवन का बहुमुखी होना ही युगप्रधानत्व का महान् गौरव का प्रतीक है। आचाय श्री सभी के आदरास्पद हैं। जन सस्कृति की महान् विभूति हैं। उनकी सवा म श्रद्धाजलि अपण करना प्रत्येक सहयोगी का कर्तव्य है। इसी कतव्य के नाते उपरोक्त पक्तियां लिखी गई हैं। हम समझते हैं कि आचाय श्री की महत्ता इन अक्षरो मे आबद्ध नही हो सकती, फिर भी भाषण और लेखन मनुष्य के आन्तरिक भावो के परिचय का आंशिक किन्तु अनन्य संकेत हैं। हृदय का पूण चित्रण इनम नही हो सकता।

आचार्यश्री का जन सघ पर महान् उपकार है उन्हे स्मृतिपथ म लाकर पजाब प्रान्त के सुदूर प्रदेश म अवस्थित हमारा हृदय अतीव पुलकित है, हर्षित है, आनन्दित है। चिरजीव महाभाग।

आचाय श्री के प्रति हम क्या मगल कामना करें। उनका महान् उत्कृष्ट जीवन ही मगल मय है। जिसके लिए भगवान् महावीर स्वामी ने भगवती सूत्र म कथन किया है—

आयरिय उवज्झाएण भत ? सविसयसि गण अगिलाए सगिण्हमाणे अगिलाए उवगिण्हमाणे कतिहिंभवग्गहणेहिं सिज्झति जाव अत करेति ? गोयमा। अत्येगतिए तेणेव भवग्गहणेण सिज्झति अत्येगतिए दोच्चेण भवग्गहणेण सिज्झति तच्च पुण भवग्गहण णातिक्कमति।

(भगवती श० ५, उ० ६ सू० २११)

शुद्ध भावना से गच्छ की सार-सभाल रखने वाला आचाय तीसरे भव म तो अवश्य ही मोक्ष प्राप्त करता है। इससे बढ़कर जीवन की सफलता के सम्बध म और कौनसा मगल प्रमाण हो सकता है ? परन्तु सक्षेप म सम्पूर्ण जन समाज की हार्दिक भावनाओ के साथ हम भी अन्त हृदय से भावना करते हैं कि आचाय श्री की जन ससार म अभी बड़ी आवश्यकता है। उन जैसा

ना प्रलाप पर ध्यान न आपता सत्य जैन धमर्नुं स्वरूप समजाव्युं ने तेनो असर समाजना मोटा भाग पर पडी पण सम्प्रदायान्धो नी अज्ञ समाज पूववत् वर्तमान मा पण घुवड दृष्टि ने लीधे कायम छे। त बाल वग श्रीजी ने अपमानित करवा अनक प्रयत्नो कर्या, पण जेम सूय सामे घुवड पोतानी शक्ति प्रमाणे लाखो प्रयत्न करवा छता सूयना एक किरण ने पण दाबी शकतो नथी, तेम सम्प्रदायान्धो निष्फल थया ने तेमनी निष्फलता अज्ञानता जेमनीतम तेमनी बाल दशा ने लीधे कायम छे। वतमान मा बीसमी सदी मा लोकाशाहना जमाना करतां पण समाजनी सविशेष करुणा पात्र न विज्ञान ने लीध यन्त्रवादो महारम्भी प्रवत्ति अनुभवाई, जथी श्रीजीए समाज मा अल्पा रभ ने महारमनी व्याख्या नो बोध आपवा शुरु कर्या।

समाजनी बाल समजना नमूना

श्रावक लीलानरी वेची न शक पण विलायती दवा निर्भयता थी वेचीशके ने तमा पोतानु सन्मान समज छ ने लीलोतरी वचनार ने पापी न दयापात्र मान छे, पोतान धर्मात्मा मानी सतोप वदे छे धा य नो वेपार न थाय पण मोती नो व्यापार थई शके

मीठु या माटा न वेचाय पण विलायती टाल विलायती नलिया तथा चीनी ना कप रकाबी आदि वेची शकाय, माटीना वासण न वचाय पण धातुना वचाय न माटीना वासण करता धातुना वासण वेचवा मा ओछु पाप

माटीना कोडीया न वेचाय बिजली ना दीवा वेचा शकाय गस ना दीवा वची शकाय, दूध, न वेचाय पण वेजीटेबल घी वेवी शकाय, लाकडा न वेचाय पण कोलसा वचाय ग्रास ना पखा न वेचाय पण बिजली ना पखा वचाय बास न वेचाय पण लोढा ना गडर वेचाय। फूल न वचाय पण अत्तर वेचाय, कपास न वेचाय पण चरबी ना तथा रशम ना वस्त्र निष्पाप मानी निर्भयता थी वेचाय घाणी न चलावाय पण तल नी मील खालाय चर्खा ना धधो न कराय, मील खोली शकाय, गाडा न चलावाय न वेचाय पण माटर वेचाय तथा चलावाय

आदि व्यापार ना विषय मां अधाधु ध महारम्भ न अल्पारम्भ न अल्पारभ न महारभ आवो समाजनी विपरीत समज माटे श्रीजीए प्रकाश पाड्यो ने समाज न सम्यक पथ बताव्या के गृह उद्योग करतां यन्त्रवाद मा सविशेष आरम्भ ने महापाप छ जीवनोपयागी वस्तुओ सिवायना तमाम अन्य विलासी श्रृङ्गारो ने शोखना पदार्थों आत्मानु पतन कर छ तवा पदार्थो ना व्यापारी पोताना एक ना स्वाथ माटे करोडो नु पतन करे छे यन्त्रवाद थी लाखो मानव तथा करोडो पशुओ नी हिंसा थाय छे मील मालक तनां वस्त्र वेचनार खरीदनार सहनार सीवनार धोनार न खानार तमाम यन्त्र वादना महापाप न पोपण आपे छ गृह उद्योग त आग धधा छ यन्त्रवादी साधनो से अनाय छ व्यापार नी आवक ने विलासी साधना नो विनाश थता होवा थी अध परम्पराए श्री जीनो उपदेश सावद्य मान्यो ने त माटे अनेक मिथ्या दलीलो क कुतर्को करवा लाग्या छता श्रीजी पाताना सत्य सिद्धान्त माटे आज सुधी अचल रह्या छ ने रहेवा माट, सव न वाघ आपे छे।

धमने नामे पण व्यावक अधाधु धी जोईने श्रीजी नो आत्मा विचार मग्न वन्यो थया प्रभुनो अहिंसा सयम सादगी ने रसना विजय नो माग अनवया दया पालवा ना निमित्त रात्रे तथा दिवस मदाई नी भट्टिओ चलाववी ने विविध प्रकारनी नवी नवी मीठाइओ मगाववी न दया ना त्याग तप व्रत मां ठासी ने खावानो रिवाज रसना न वश थई ने विशेष खावना स्वभाव ने पाचन न थवाथी शरीर मां अनेक प्रकार ना रोगो नी उत्पत्ति तथा मनुष्यो न अजीण ना ने दस्त लाग वाना रोगनी गदकी अनुभवी जेथी श्रीजीए दयाना व्रतमा सादु भोजन करवाना उपदश आप्यो न कदोई ना त्यानी अयत्नामय मीठाईओ खरादवाना महापाप थी वचवा माटे समाज ने उपदश आप्यो छे दर्शनार्थे आवनार माटे पण विविध प्रकार नी मीठाइओ वनवा लागी ता तेनो पण विरोध कर्यो ने सादा भोजन थी सतोप मानवाना वोध आप्यो आ उपदश थी रसना लोलुपी लोगे

ना प्रलाप पर ध्यान न आपता सत्य जैन धर्मनु स्वरूप समजाव्युं ने तेनो असर समाजना मोटा भाग पर पडो पण सम्प्रदायाधा नी अन समाज पूर्ववत् वतमान मा पण धुवड दृष्टि ने लीधे कायम छे। त बाल वग श्रीजी ने अपमानित करवा अनेक प्रयत्नो कर्या पण जेम सूय सामे धुवड पोतानी शक्ति प्रमाणे लाखो प्रयत्न करवा छता सूयना एक किरण ने पण दाबी शकतो नथी, तेम सम्प्रदायाधो निष्फल थया ने तेमनी निष्फलता अज्ञानता जेमनीतम तेमनी बाल दशा ने लीधे कायम छे। वतमान मा बीसमी सदी मां लोंकाशाहना जमाना करतां पण समाजनी सविशेष करुणा पात्र न विज्ञान न लीध यन्त्रवादी महारम्भी प्रवत्ति अनुभवाई, जेथी श्रीजीए समाज मां अल्पा रभ ने महारम्भनी व्याख्या नो बोध आपवा शुरु कर्या।

समाजनी बाल समजना नमूना

श्रावक लानानरी वेची न शक पण विलायती दवा निर्भयता थी वेचीशके ने तेमा पोतानु सन्मान समज छे न लीलोतरी वचनार ने पापी न दयापात्र मान छे पोतान धर्मात्मा मानी सतोष वदे छे *धान्य नो वेपार न थाय पण मोती ना व्यापार थई शके*

मीठु या माटा न वचाय पण विलायती टाल विलायती नलिया तथा चीनी ना कप रकाबी आदि वेची शकाय, माटीना वासण न वचाय पण धातुना वचाय ने माटीना वासण करता धातुना वासण वेचवा मा आछु पाप

माटीना कोडीया न वचाय विजली ना दीवा वेची शकाय गस ना दीवा वची शकाय, दूध, न वेचाय पण वेजीटेवल घी वेची शकाय, लाकडा न वचाय पग कोलसा वचाय वास ना पखा न वेचाय पण बिजली ना पखा वचाय बास न वेचाय पण लोढा ना गडर वेचाय। फूल न वचाय पण अतर वचाय, कपास न वेचाय पण चरबी ना तथा रेशम ना वस्त्र निष्पाप मानी निर्भयता थी वचाय घाणी न चलावाय पण तल नी मील खोलाय चर्खा ना धधो न कराय, मील खोली शकाय, गाडा न चलावाय न वेचाय पण मोटर वेचाय तथा चलावाय

आदि व्यापार ना विषय मां अधाधुध *महारम्भ न अल्पारम्भ ने अल्पारंभ न महारंभ* मानी समाजनी विपरीत समज माट श्रीजीए प्रकाश पाड्या ने समाज न सम्यक् पथ बताव्या के गृह उद्योग करता यन्त्रवाद मा सविशेष आरम्भ ने महापाप छ, जीवनोपयागी वस्तुओ सिवायना तमाम अन्य विलासी श्रृङ्गार न शोखना पदार्थों आत्मानु पतन करे छ तथा पदार्थों नो व्यापारी पाताना एक ना स्वाथ माट करोडो नु पतन कर छे यन्त्रवाद थी लाखो मानव तथा करोडो पशुओ नी हिंसा थाय छे, मील मालक तना वस्त्र वेचनार खरीदनार सहेनार सावनार धोनार न खानार तमाम यन्त्र वादना महापाप न पोषण आपे छ गृह उद्योग त आर धधा छ यन्त्रवादी साधनों ते अनाथ छ व्यापार नी आवक न विलासी साधनों ना विनाश थता हावा थी अध परम्पराए श्री जीनो उपदेश सावद्य मान्यो ने त माटे अनेक मिथ्या दलीलो कुतर्कों करवा लाग्या छता श्रीजी पाताना सत्य सिद्धान्त माटे आज सुधी अचल रह्या छ ने रहेवा माट, सव न वाध आपे छे।

धर्मने नामे पण व्यापक अधाधुधी जाईने श्रीजी नो आत्मा विचार मग्न बन्यो, कया प्रभुनो अहिंसा सयम सादगी ने रसना विजय नो माग अनमया दया पालवा ना निमित्त रात्रे तथा दिवस कदोई नी भट्टिओ चलाववी न विविध प्रकारनी नवी नवी मीठाइओ मगाववी न दया ना त्याग तप व्रत मा ठासी ने खावानो रिवाज रसना न वश थई ने विशेष खावना स्वभाव ने पाचन न थवाथी शरीर मा अनेक प्रकार ना रोगो नी उत्पत्ति तथा मनुष्यो न अजीण ना ने दस्त लाग वाना रोगनी गदका अनुभवी जेथी श्रीजीए दयाना व्रतमा सादु भाजन करवाना उपदश आप्यो ने कदोई ना स्थानी अयत्नामय मीठाईओ खरीदवाना महापाप थी वचवा माटे समाज ने उपदश आप्यो छे दशनार्थे *आवनार* माटे पण विविध प्रकार नी मीठाइओ बनवा लागी ता तनो पण विरोध कर्यो ने सादा भोजन थी सतोष मानवाना बोध आप्यो आ उपदक थी रसना लोलुपी लोके

भराया पण श्रीजीए पोतानो उपदेश प्रवाह चालु राख्यो ने समाज ने महारंभ ना पापमांथी बचावी समाज पर परम उपकार करेल छे

बाल लग्न वृद्ध लग्न कन्या विक्रय, वर विक्रय, लग्न तथा मरण पाछल थता जमणवारो आ प्रथा बंध करवा माटे पण श्रीजीए पोताना उपदेश प्रवाह वडे वहावी समाज पर महान उपकार कर्यो छे नाना वाछी उमर ना बलद या घोडा गाडी ने जोड्याहोय ने तेमां बेसनार मानव दयालु न गणी शकाय तेम बाल लग्न मा भाग लेनार तो सविशेष दया करुणा तथा मानवता हीन मानी शकाय आवा प्रकारनी अकाट्य दलीलो थी समाज वस्तु स्वरूप समजती थई ने पूज्यश्री ना प्रवचन नी परम प्रशंसक बनी

आनन्द तथा कामदेव आदि श्रावको ४० हजार, ६० हजार ने ८० हजार सुधी गायो राखता हता तेथी पशुओनी हिंसा थती न हती, खेती ने पोषण मलतु दुष्काल आदि ना भय न होता त्यारे वर्तमान नो श्रावक समाज गोपालन ने खेती करवा मां पाप मानवा लाग्यो ने बाजारु घी खावा मा ने व्याज नो धंधा करी पोतानु पेट भरवा मा पोतानु जीवन पाप रहित ने धार्मिक मानवा लाग्यो, आवी समाज नी विपरीत समज माटे पण पूज्य श्री ने प्रकाश नाखवानी फरज पडी काची समज ने काची श्रद्धावाली समाज श्रीजीनो उपदेश पाचन न करी शकी ने उपदेश ना विरोध थवा लाग्यो छतां श्रीश्री सत्य सिद्धान्त मा परम दृढ रह्या ने

मुंबई ना कसाई खाना ना अनुभव श्री जी ने थयो नित्य हजारो पशुओ दूध माटे कपातां अनुभव्यां आ प्रत्यक्ष देखाव थी बजारू दूध तो लोही करतां विशेष पवित्र नज मानी शकाय तथा दृढ निश्चय मा वृद्धि थई ने मुंबई नी जनता ने बाजारू दूध पीवानु परम पाप समजाव्यु पशुओ प्रति पोतानी फरज समजावी जेथी त्यांना विचारशील श्रावकोए कसाई खाते कपाता पशु अटके ने जनता ने अहिंसक शुद्ध दूध मले एवी योजना विचारी ने ते प्रमाणे श्रावकोए गोरक्षक संस्था नी स्थापना करी जेना प्रताप हजारो कसाईखाना मां कपाता पशुओनी रक्षा थई ने नित्य हजारो मान शेर शुद्ध अहिंसक दूध मली रहेल छे। समाज पण बाजारू दूध ने हिंसक दूध मानवा लागी ने पशुओनी प्रतिपालना करी, अहिंसाधर्म नी आराधना करवा लागी

व्याजखाउ व्यापारीओ ने समजाव्युं के व्याजना लोभ वेपारीओ कसाई आदि ने पण धीरे छे ने कीडी मकोडा नी दया पालनार पोतानार पैसा पर व्याजना लोभे कसाई ना धंधा ने उत्तेजन आपे छे ते धंधो परम पापनो छे

कापडना वेपारी ने रूपीया व्याजे आपनार पण चरबीवाला तथा रेशमना पापमय व्यापार ने उत्तेजन आपे छे ने ते व्याजखाउपण ते पापनो भागीदार बने छे।

व्याजनो धंधो या सट्टा ना धंधा तने समाज पवित्र ने पापरहित मानती हती पण ते धंधा सविशेष पापमय समजाव्यो ते धंधाना पाप थी बचावी श्रीजी समाज ना महान् रक्षा करी गया छे बैंकमा व्याजे रूपीया आपनार ना रूपीया बैंक शोप मज्जूर मशीनरी ने योग्य गोमा धनाढयना कारखाना ने विशेष व्याजे आपे छे ने तेज योग्य गोसा तथा मज्जूर नी गरीबी बैंक मां व्याजे मुकनारनी छाती मां वाग छे तो मरण पामे छे तेना रूपीया बैंक मां रही जाय छे

मुसलमानों मां व्याज लेवाना प्रथा नथी। त्यारे साहूकारो व्याज वसूल करवा माटे कचेरी मां दावा करे छे ने गरीब ना घर, खेतर तथा पशु आदिनु लिलाम करावे छे

कसाई मछी मार या अन्य पापना धंधा करनार ने पोतानो पाप दुष्कर्म छुपा राखे छे त्यारे व्याजखाऊ वेपारी व्याज वसूल करवा माटे तमाम लगाड्या तथा अन्य पाप ना कमाणी मोती दुकान नी चिन्ता करे छ कसाई नी दुकान सारी पडे पारका व्याज टाला पर मजीवन, कसाई एकज दुकान चलावे छे त्यारे व्याज खाऊ मोंघड़ा कमाऊओनी दुकानो चलावे छे

कसाई ने पाताना धधा माटे पश्चात्ताप थाय छे त्यारे व्याजखाउ ने पश्चात्ताप ने वदले विशेष व्याज मलवा थी प्रमोद अनुभवाय छे

पूर्वना साहूकारो कुवा वावडी धर्मशाला औषधालय ने सदाव्रतो माटे प्रतिवर्ष लाखो रुपीया दानमा खरचता हता त्यारे वर्तमान ना व्याजखाउ व्यापारी मक्खीचूस वनी व्याज द्वारा पाई पाइ भेगी करी पोतानी पाप परम्परा मां वृद्धि कर छे

जेना हाथ पग न चलता होय तेवा लुला लगडा आंधला बहेरा ने मुगा माणसो व्यापार न करी सके तो तेवा आपति काल समजी ने व्याज थी विधवा अनाथ स्त्री वृद्ध पातानु पेट भरी शके छे

कोडी, पाई तथा पसा थी जुगार रमनार सरकार नी सजाने पात्र थाय छे त्यारे नित्य सट्टा मां लाखो नी हार जीत करवा छतां सरकार पोते तेने सन्मान आपे छे न ते साहूकार मनाय छे आ थी विशेष आश्चर्य अन्य शु हा शके ?

चामडा नो व्यापारी तथा घी ना व्यापारी बन्ने नफा नी आशा राखे छे सुकाल थाय तो पशु न मर या पशु मां रोग फेलवा न काम तोज चामडु मोघु थाय ने तेने नफो मली शके छे त्यारे घी वाला न दुष्काल पडे या पशु मा रोग फलाय तोज घी मांघु थये नफो मली शके छ बन्ने नी भावना पर आधार छे

धान्यना व्यापारी पण नफा नी आशाए व्यापार कर छ ने दुष्काल पड तज वध तेमने माटे सारु गणाय छ प्रजा मा रोग चारो वधे त्यारे डाक्टर कमावानी ऋतु मान छे प्रजा मां क्लेश वध त्यारे वकील कमावनी ऋतु माने छ

लड़ाई मा तमाम पदार्थो ना भावा वमणा त्रणगणा थवा थी व्यापारी प्रसन्न थाय छे न लडाई वध थवा थी भावो घटी गया थी व्यापारी खेद ना अनुभव कर छ लडाई जल्दी पूरी थाय तवी भावना लडनार राजाओ नी होय छ त्यारे व्यापारीओ लडाई विशेष लवाय तो विशेष लाभ मल तेवी भावना राखे छ जथी लडनार राजाओ करता पण व्यापारी तदुल मच्छवत् विशेष मलीन भावना भावी पाप उपाजन करे छे

आवा प्रकार नी पूज्य श्री नी सचोट दलील थी श्रोताओ ना मन पर शीघ्र असर थवा पाम छे छता केटलाक मताग्रही पोतानी मिथ्या समज ने सत्य मानी तवी समज नी स्थापना तथा प्ररूपणा करे छे न पाप परम्परा मां वद्धि करे छ

समाज नी समज नो प्रवाह अंधपरम्परा नो छे छता प्रवाह न भेदा ने श्रीजीए समाज समीप सत्य तत्व मूको न समाज पर परम उपकार कर्यो छे

धार्मिक विकृतियों माटों पण श्रीजीए पूर्ण प्रकाश पाडल छे

दयाकरा न लीलोतरी न खाय पण मवा मिठाई खावामा पाप न मान

आठम चौदस लीलोतरी न खाय पण झूठ वोलवाना या गरीव ने ठगवामा विशेष व्याज या नफा न लेवाना त्याग न करी शके

पवना दिवस स्नान करवा मां पाप माने पण तेवु पाप चरवी ना रेशमना आभूषण पहेरवा मा न माने

दलवा खाडवा भरडवाना त्याग करे पण ते दिवसे रसास्वाद माटे विविध प्रकार नी वानी ओ बनाववाना त्याग न करे

रात्रि भोजन ना त्याग कर पण सीनमा रात्रे जोवा न जवु तवा त्याग भाग्यज कर

एक वखतना जमवाना या आयवीलना त्याग करनार घणा छ पण व्यापारादि मां मात्र एकज भाव बोलनार अल्प छे ने व्यापार मां असत्य बोलवा मा पाप मानवा मा भाग्येज आवे छे

उपवास करवो सरल अनुभवाय छे पण चाय वगना त्याग करवा माटे ध्यान अपातु नथी

नवकारसी या पारसी करवानों रीवाज छ पण तटला समय माट सत्य या क्षमामय जीवन माटे भाग्यज ध्यान अपाय छ

काचु पाणी पीवाना त्याग करायं छ पण गरीबो पासे थी विशेष व्याज या विशेष नफो लेवा मां भाग्येज पाप मानवामां आवे छ

आदि त्याग प्रत्याख्यान माटे ध्यान अपाय छे पण व्यापार मां सत्य नीति न्याय नो प्रमाणिकपणानो व्यवहार राखवामाटे भाग्येज लक्ष आपवा मां आवे छे आ विषय पर प्रकाश पाडी ने श्रीजीए समाज नो व्यापार तथा व्यवहार मां सत्य नीति ने न्याय मय जीवन बीतावबा माटे समाज ने सत्यबोध आपी जागृत करी छे

धमना सत्य स्वरूप ना बोध ना अभावे धमना नामे मानव ज्यां त्यां फांफां मारतो अनुभवाय छ न पोताने धर्मात्मा मानवाना ढोंग करे छ न जगत पासे थी धर्मात्मा नु प्रमाण पत्र मेलववा यत्न लेवे छ

मोती ना व्यापार करे छे न माछलाने ममरा नाखे छे

रेशम नो व्यापार करछे ने करुणा नी प्रभावना करे छे

मील चलावे छ न शरीर पर खादी धारण करे छे

सम जमाड ने गरीबो ने मजूरी आपवा मां कर कसर करे अन्याय करे

रोज सामायिक कर न बजार मां एक पैसा माटे क्लेश झगडा ने गाला गाली करे

रोज व्याख्यान साभले पण वचननो सयम न राखी शक प्रतिक्रमण नित्य करे पण प्रमाणिकतानु पालन न करी शक

खानपान ना द्रव्यो नी मर्यादा करे पण द्रव्य कमावानी मर्यादा न करे

पौषध करे ने पारणु करी ने कचेरी मा झूठो दावो माडे

हजारोनु दान आप ने गरीबो थी लेवाय तटलु विशेष व्याज ने विशेष नफो ले व्यापार मां असत्य अनीति करे ने बारह व्रत नी पुस्तक छपावी प्रभावना करे

पृथ्वी पाणी वनस्पति नारकी देवता पशु तथा पक्षी साथे धमत खामणा करे पण मनुष्यो साथे वैर राखे आवा प्रकार ना सगवडीया नियमो ने धम ना नियमो मानी समाज धम ने मोक्ष मार्ग मानती हती त्यारे श्रीजीए सत्य व्रत नियम ने प्रत्याख्यान नु स्वरूप समजावी सत्य वस्तु स्वरूप समजावा माटे समाज ने नवीन प्रेरणा आपी छ

वर्तमान मां श्रावको ना जीवन मां जवी अधाधु धी जोवामा आवे छ तेथी विशेष दयापात्र स्थिति साधु समाजनी श्रीजीए अनुभवी शिष्य ना लोभी साधु आर्याओ योग्य नो विचार कर्या सिवाय जेवा तवाने या वधाता छाकरा छोकरी ने लेवरावी दीक्षा आपवा लाग्या ते थी साधुसमाज मां शिथिलाचार ने शासन तथा जैनागम विरोधी प्रवृति श्रीजीए अनुभवी साधु सस्थानी पामर ने पतित दशा जाई श्रीजीए शासन नी उन्नति माट सविशेष जागृत थवा ने अयोग्य दीक्षाओ अटकाववा माट आचार्य सिवाय कोईए पोताना शिष्यो न बनाववा नवा शिष्यो मात्र आचार्यनी नेश्राय मां करवा आ नियमनु पालन थायतो गम तेवा जवातेवा ने आयोग्य दीक्षा आपे छे ते अटकी जाय आ पवित्र आशये अयोग्य दीक्षा पर प्रतिबन्ध मूक्यो

भिन्न भिन्न सम्प्रदायो नी भिन्न भिन्न मान्यता ने समाचारी जोई ऐक्यता माटे संगठन माटे अजमेर सम्मेलन समये यत्न सख्यो छता ते योजना अमल मां न आवी शकी ने निरकुशता नो पवन वधवा लाग्यो साधु साध्विओ वधाता शिष्यो लेवा माटे पण्डितो राखवा माटे, पुस्तको छपाववा माटे पोताना मण्डल तथा समिति ने धनवान बनाववा मटे, पोताना नाम नी सस्थाओ खोलाववा माटे पोताना फोटू पडाववा माटे तेना ब्लोक बनाववा न प्रचार करवा माटे साथे मुनीमो, पण्डितो राखवा लग्या छे ने तेमनी द्वारा अनेक बहाना तल द्रव्य स्वहस्ते नही पण पर हस्त लेवा लाग्या पुस्तको छपाववी ग्राहको बनाववा वेचवी पसा एकत्र करवा ने पुन छपाववी आवी साधु समाज नी प्रवृति थी श्रीजीए वीर संघ या ब्रह्मचारी वर्ग नी मध्यम योजना विचारी जेथी साधु धर्म

चारित्र धम नी मश्करी थवा न पामे ते योजना हजीसुधी मूत स्वरूप मा आवी नथी ने साधुता ने नामे असाधुता दभ न पाखड अनुभवाय छ जेथी श्रीजीए सविशेष प्रकाश पाडी निवृत्ति धारण करी ने एकान्त आत्म साधना ना मार्ग ग्रहण करवानी पोतानी भावना सफल करी छे

साधु सस्था मा पण्डित प्रथा नो पवन वधवा लाग्यो ने ते माटे महव्रत नी मर्यादा ने मूकी ने केटलाक साधुओ गामोगाम फरी हजारा रूपीया एकत्र करवा लाग्या पडितोना स्थायीत्व माटे पाप परपरा वधवा लागी ने साधुओ पडितोना गुलाम बनी तेमनी खुशामद करवा लाग्या ने तेमनी प्रसन्नता माटे यत्न सेववा लाग्या पण्डितो पासे पुस्तको लखावी पोताने नामे छपाववा लाग्या पाताना यशोगान पडितो पासे लखावी छपाववा लाग्या साहित्य छपाववा माटे तथा शिक्षण ना बहाने पडित प्रथा नो प्रचार वधवा लाग्यो अजैन पण्डितोना ससग श्री साधु साध्विओ मा शिथिलाचार वधतो श्रीजी ना साभलवा मा आव्यो पडितो पासे आर्याओ पण भणवा लागी ने जैनागमनो आत्श नष्ट थतो अनुभव्यो ज थी श्रीजीए पोतानी सम्प्रदाय मा पगारदार पडिता न राखवानो नियम कर्यो ने पडित प्रथाना पाप थी पातानी सप्रदाय ने बचावी समाज समीप सयम माग नो आदश राखी महान उपकार करेल छे

मेरुथी अनन्त उच्च ने समुद्र थी अनन्त विशाल जैन धम मां पण अस्पश्यता ना प्रवेश थवा पाम्यो हतो ते अस्पश्यता ना कलक ने दूर करवा माटे श्रीजीए पोतानी उपदश धारा द्वारा प्रकाश पाड्यो ने पोताना व्याख्यान मां हरिजनो ने आववा माटे व्याख्यान साभवा ने चर्चा करवा माटे सहर्ष घमस्थाननां बध दरवाजा उघाडा कराव्या ने पोतानी विशालता नो सव प्रथम परिचय आप्यो जेना परिणामे वतमान मां केटलाक गामामा हरिजनो व्याख्यान श्रवण करे छे सामायिक पौषध आदि धार्मिक क्रियाओ करे छे केटलाक श्रावकोए हरिजनो ने पोतान त्वा नौकर राख्या छे केटलाक श्रावको हरिजनो आश्रमा चलावे छे ने तन मन धन थी तमने मदद करे छे

पूज्यश्रीए जे सम्प्रदाय ना आचाय छ ने सम्प्रदायना श्रावको सविशेष पणे रूढ़िना पुजारी हता तेमनी संख्या पण घणी मोटी सख्या मा छ न तेओनो मोटो भाग श्रीमन्त छे छ्ता समाज नी खुशामद क्या सिवाय पोताना तत्वचिन्तन न मनन मां छे सत्य अनुभव्यु तेनी प्ररूपणा करी त माटे स्व सम्प्रदाय तथा पर सम्प्रदाये ना चार तीथना अनेक विरोधी हिम्मत करी न झील्या पचाव्या ने पोतानी निभ रता मां वद्धि करी समाज सामे सत्यताना प्रकाश किरणो फेंकी समाज ने अज्ञानान्धकार मांथी काडी प्रकाशना पथना पथिक तराके बनावा पोताना जीवन नी सफलता करी चुक्या छे जे माटे समस्त समाज तेमनी परम ऋणी छ

हाथे दलवाना खाडवाना भरडवाना राधवाना चर्खा चलाववाना वणवादा आदिना त्याग रूढी चुस्तो कराववा लाग्या जेथी बकरी काढता ऊँट पेसवा जेवो अनथ वधता श्रीजीए अनुभव्यो हाथे दलवाना त्याग थी आटानी मीलो न उत्तेजन मलवा लाग्यु जेमां पाप वहेपारनो पार नहीं ते उपरान्त धान्य ना सात्वनो नाश न शरीर मा रोगो नी उत्पति आदि अनर्थो न महारभनी उत्तजना जोई श्रीजीए अल्पारभनी व्याख्या समजावी

चर्खाना त्याग करावदा थी मीलोनी उत्पत्ति वधवा लागी ने मीला द्वारा मानवो नो शोषण न पशुओ नी हिंसा थवा लागी जेथी अल्पारभी खादी नी पवित्रता श्रीजीए समजावी

गोपालन न खेती ना पण रूढ़ी चुस्तो त्याग कराववा लाग्या जेथी गोधन नो नाश खेती नो नाश आरोग्य धम ना नाश ने कसाईखाना ने उत्तेजना आदि पापथी बचाववा सत्योपदेश फरमाव्या न रूढी चुस्ता द्वारा समाज नी चुक्ओ पर महारभ ना महापाप ना पाटा बाधवामां आव्याहता ते महापापना परुणाभावे श्रीजीए छोडाव्या ने समाज न अल्पारभ महारभ गहउद्योग न यत्रवाद आदि नी व्याख्या समजावी ज्ञानचक्षु नु दान आपी समाज पर महान उपकार कर्यो छ छ्तां केटलाक रूढ़ी चुस्तो पोतानी आँख महारभ ने यत्रवादना पापना पाटा बाँधी रह छे न

समाज ने बांधवी रहेल छे जेथी पाटा बांधनार तथा वधावनार उभय महाअज्ञानना खाडा मा पडी ने सम्यग ज्ञान थी अनन्त काल माट विमुख बनी दुलभ बोधी बनी रहल छे

श्रीजीना परम उपासको ने शास्त्र ना ज्ञाता श्रीमत श्रीवको श्रीजीना दशनार्थे या व्याख्यान मा रेशम ना वाट, रेशमना खमीस रेशमना धोतीया ने गला मा मोतीना हार पेहरी ने अवता आवा शृङ्गारी वस्त्राभूषण थी श्रीजीनो आत्मा धक्की उठयो रशी समाजना वस्त्राभूषणनें शृङ्गार तो मर्यादा नी हद बाहर हतो छता श्रीजीना पवित्र सदुपदेश ना परिणामे श्रीजीना अनुयायी श्रावक ने श्राविका वग परम शुद्ध पवित्र खादी धारण थया ने पवित्र सादगी प्रधान खादी धारण करता थी आभूषणो नो मोह पण स्वाभाविक घटी गया ने समाजमा सादगी ने सयम नी वद्धि थवा लागी वतमान मा जन समाज मा गोपालन, खादी स्वावलबी जीवन ने सादगी मय जीवन नी समाजमा प्रवत्ति जोवामा आवती होय तो ते श्रीजीना प्रवचननोज पुण्य प्रभाव छ

वतमान मां रूढ़ी चुस्त साधुओ खादी पहेरवा मां विशेष पाप माने छे ने दलील करछ के तेने धोवा मा पाणी ना जीवो नी हिंसा थाय छे आवी दलील करनाराओ ने ज्ञान नथी होतु के मीलना कपडा मा तो चरबी नु महापाप लागे छे ते महापाप ने भूली ने कुतर्को करी पोत विपरीत पथे गमन करे छे समाज ने पाप पथ ना पथिक बनावे छे

सदभाग्ये श्रीजीनी सदुपदेश ने श्रावको समजया लाग्या ने ते प्रमाणे पोताना जीवन मा शक्य सुधारा माटे पण यत्न सेवेछे

जेम मासाहार दोष रहित मले तो पण मुनिराज या श्रावक पोतान प्राणना भोगे पण न वापरी शके। तेवी रीते चरबी वाला कपडा दोष रहित मलता होय तो पण महाव्रतधारी मुनिराज या श्रावको ते नज वापरी शके जेम खान पान मा वनस्पत्याहार नो आग्रह राखवा मां आव छे तेवी रीते वस्त्रो माटे पण शुद्ध खादी नो आग्रह राख तोज श्रावक या साधु पोताना अहिंसा व्रतनो पालन करीशके छे। अन्यथा तेमने अहिंसानु ज्ञान नथी ने जो तेमने ज्ञान न होय तो त पोताना व्रत केवी रीत पालीशके न व्रतधारी तरीके नो वेष केवी रीते धारण करीशके। अनेकानेक प्रकार नी समाज नी मिथ्या समज पर श्रीजीए प्रकाश पाडी महान् उपकार करेल छे सूयना सान धूलनाखनार पोतानी आंखमाज धूल नाखे छे तेज स्थिति विरोधी रूढ़ी चुस्ती नी थवा पामी छे तवाने पण सदवुद्धि नी प्राप्ति माटे श्रीजीनी भावना ने प्राथना चालुजछ

प्रभु महावीर ना शासन तथा वीतराग धमना सत्य प्रचार माटे श्रीजीए मारवाड नी रेताल भूमि मां ने गुजरात तथा काठियावाड मा उग्र विहार करी सत्य धमनो ध्वज फरकाव्यो

गमे ते धमवाला साथ धार्मिक चर्चा करवानो प्रसग उपस्थित थाय त्यार गमे तेवावाली ने पोतना कुशाग्र बुद्धि थी निरुत्तर करी देवानी प्राकृतिक बक्षीस श्रीजीनी छ जेथी समस्त जैन समाज माटे गौरवनो विषय छ

व्याख्यान शैली पण अलौकिक छ तमना जेवा वक्ता जन समाज मा तो नहीं पण भारत वर्ष मा आगली ना टेरवे गणी शकाय जेटली सख्या मा भाग्येज हशे जेथी वतमान पत्र ना सम्पादक श्री मेघाणीए श्रीजी माट खास एडीटोरियल लेख लख्यो क भारतवष मा एक नहीं पण बे जवाहर छे एक राष्ट्र नेता छ त्यारे बीजा धमनेता छे श्रीजीनी व्याख्यान शैली थी प्रो० रामसूर्ति मदनमोहन मालवीया जी ने लोकमान्य तिलक आदि प्रसन्न थया हता ने महात्मा गांधी जी पण श्रीजीनी सुवास थी आकर्षाई समागम माटे आव्या हता

पूज्य श्री ना व्याख्यान नो विशाल संग्रह समाज पासे छ त लोक भोग्य ने सव माटे समान उपयोगी छे साधु साध्वी गण पोताना व्याख्यान मां आ सग्रहनो उपयोग कर नो त समाज माटे विशेष उपकारी नीवडशे ने स्व० तन्त्रन वा० मो० शाह नी पूज्यश्री ना व्याख्यान माटे नी जे भावना हती ते सफल थवा पामशे आ लेखन मां जे कई अल्प प्रमाण मा सत्य गमज होय तो ते श्रीजीना साहित्य न समागम नो ज प्रताप छे

१०—पूज्यश्री की निखालसता

(गोंडल सम्प्रदाय के पण्डितरत्न मुनि श्री पुरुषोत्तम जी महाराज)

अजमेर मा साधु सम्मेलन थयु त्यारे मारी हाजरी न हती, परन्तु हुँ पालणपुर मा ते वखते हतो त्या रही हु सम्मेलन मा थी थी प्रवृत्ति थई तेथी वाकेफ रहेलो पूज्य श्री जवाहर लालजी महाराजे माउड स्पीकर ऊपर प्रवचन न कयु तेमज तेओ सम्मेलन मा कोई नी शोर मा न दवाता पोताना मन्तव्य मा मक्कम रह्या ए बे बाबतो थी मारा अत करण मा ते श्रीना माटे छाप पडी अने पालणपुर व्याख्यान मा उपयुक्त माहिती मलता नी साथेज त्या ना अग्रगण्य श्रावको हीराभाई जीवा भाई भणशाली आदि समक्ष मारा मुख मा थी उद्‌गारो नीकली पडयाके "शाबास जवाहर"

राजकोट सघ ना आगेवानो पूज्य श्री ने चातुर्मास नी बीनती करवा त्रण वखत मारवाड तरफ गयेल ते त्रण वखत मारी सम्मति थी गयेल अने मे पण हार्दिक सम्मति आपेली अने पूज्य श्री काठियवाड मा पधारवाना छे ए समाचारने हृष पूवक वधावी लीधा हता

काठियावाड मा त्रण चातुर्मास करी तेओ श्रीए पोतानी प्रतिभाशाली व्याख्यान शैली, गुजराती भाषा ऊपर नो काबू अने समाज ने योग्य रस्ते दोरवानी शक्ति वडे तेओए काठियावाड नी जैन अजन जनता उपर जे प्रभाव पाडयो छ अने जन शासन नी उन्नति मा जे प्रशसनीय फालो आप्यो छे वधु जोई ने मने खूबज आह्लाद उत्पन्न थयो छे

राजकोट मा तेओ श्रीए चातुर्मास कयु त्यार थी तेओ श्री ने मलवानी मारा हृदय मा वणी उत्कण्ठा हती अने राजकोट चातुर्मास पूर्ण थया पछी तओ श्री जेतपुर पधार्या त्या तेओ श्री ना दर्शन नो लाभ मेलवी हु घणोज आनन्द पाम्यो तेओ श्रीनी साथे शास्त्रिय चर्चा मां पण मन वहु रस उत्पन्न थयो विविध प्रकारना प्रश्नो म तेमने पूछेला तेना तओ श्रीए शास्त्री शैली अने टीकाने आधारे यथा शक्ति खुलासा कर्या आ चर्चा दरमियान हु आचार्य छु के ज्ञानी छु एवु थलण जरा पण जोवा मा न आव्यु ऐ तेमनी निखालसता अने निरभिमानताए मारा हृदय उपर सुन्दर छाप पाडी

पूज्यश्री नो अमारा ऊपर नो अगाध प्रेम भूलाय तेम नथी

११—उज्वल रत्न

(पूज्य श्रीजयमलजी महाराज की सम्प्रदाय के पण्डितप्रवर मुनि श्रीमिश्रीमल्लजी महाराज "वाद काव्यतीर्थ")

यद्यपि पूज्यश्री के साथ मेरा विशेष और गहरा परिचय नही रहा फिर भी ऐसी बात नही है कि उनके तेजस्वी जीवन से मैं अनभिज्ञ होऊँ।

पूज्य श्री के जीवन की महत्ता बहुत व्यापक है। आपके जीवन इतिवृत्त से आपके प्रतिभा शाली व्यक्तित्व का अच्छा परिचय मिलता है और व्यक्तित्व ही जीवन है। व्यक्तित्वहीन जीवन किस काम का ! वह तो निरा पामरपन है।

पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज अपने समाज के उज्वल रत्न हैं। आपके अध्ययन मे गम्भीरता है भावो म विशदता है विचारो म विशालता है। यही नहीं आपका वक्तृत्व भी प्रभाव शाली विशुद्ध, व्यापक और युगानुसारी है। भाषा म सरलता सयतता और अनुकृति है। शैली प्रवाहमयी रसोद्भिन्न और प्रौढ़ है।

पूज्यश्री के ससर्ग म आने के दो प्रसग मुझे खूब याद हैं। पहल प्रसग पर मेरे श्रद्धेय गुरु पूज्य श्रीजोरावरमलजी महाराज भी विद्यमान थ। मेरे गुरु महाराज भी अपनी समाज के एक माने हुए मनीषी मुनि महात्मा थे। जन शास्त्रो के ममज्ञाने म आप अगाध पाण्डित्य रखत थ।

जब पूज्य श्री ब्यावर का चौमासा पूर्ण करके बीकानेर की ओर विहार करते हुए कुचेरा पधारे उस समय मेरे गुरु महाराज भी वहीं विराज रहे थे। यह घटना सन् छब्बीस की है। आप के और मेरे गुरु महाराज के बीच बहुत अच्छा व्यवहार था। दोनों आचार्य बड़े प्रेम के साथ मिल करते थे। वह सुन्दर दृश्य अब भी मेरे नेत्रों के सामने ज्यों का त्यों है दोनों आचार्य सब निकालने के बाद जंगल में पधारते और बहुत लम्बे समय तक प्रेमभीनी सात्विक चर्चा किया करते।

दूसरी बार भी आप का सम्मेलन कुचेरा में ही हुआ। यह घटना सन् चालीस की है जब आप बगड़ी चातुर्मास के बाद यहाँ पधारे थे। सयोगवश उस समय भी मेरे वर्तमान पूज्य गुरु महाराज अर्थात् मेरे पूज्य बड़े गुरु भ्राता शान्तस्वभावी प्रवर्तक मुनि श्री हजारीमलजी महाराज भी वहीं विराजमान थे। आपभी एक उदार आत्मा प्रकृत्या भद्र और पवित्र मुनि महाराज हैं। इस बार भी दोनों महानुभावों में कितना प्रेम रहा यह लिखा नहीं जा सकता। वास्तव में वह प्रेम अपार था।

यद्यपि दोनों प्रेम प्रसगों पर मैं आप से यथेष्ट लाभ न ले सका, क्योंकि पहली बार मैं नव दीक्षित और अल्पवयस्क था और दूसरी बार आप वय परिपाक और शारीरिक अस्वस्थता के कारण अधिकतर मौन रहते थे। फिर भी जितना आप से परिचय हुआ उस से मुझे अधिक आनन्द का ही अनुभव हुआ है और उन के व्यक्तित्व की छाप हृदय पर अंकित हुई है।

पूज्य श्री के विचारों और व्यवहार की उदारता प्रकट करने के लिए इतना लिखना ही पर्याप्त होगा कि आप को और आपकी सम्प्रदाय के दूसरे सन्त मुनिराजों को मैंने अपने गुरु महाराज से सद्भावना और प्रेमपूर्वक पेश आते देखा है।

मैं अपने समाज का अहोभाग्य समझता हूँ कि जिस में आप सरीखे पूज्यपाद सन्त मुनिराज हैं। आज अगर समाज में साम्प्रदायिकता की वज्रभित्तियाँ खड़ी न होतीं तो मेरा खयाल है पूज्य श्री सरीखे परमपुनीत मुनिराजों के सम्पर्क से अपना यह समाज अपने अतीत गौरव को प्राप्त करने में बहुत बढ़ गया होता।

१२—जैनाचार्य पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० की जीवन झांकी

(प्रवर्तिनी महासतीजी श्री उज्वल कंवरजी)

जैनाचार्य जैसे महान् विचारक एवं विवेचक सन्तपुरुष के लिए कुछ कहना मेरे लिए जितना सदभाग्य पूर्ण है, उतना ही मुश्किल भी, क्योंकि उनके घनिष्ठ परिचय में आने का मुझे अवसर ही नहीं मिला! परन्तु सूर्य को दूर से देखने वाला कोई भी व्यक्ति यह तो कह सकता है कि सूर्य पृथ्वी पर प्रकाश फैलाने वाला ज्योतिपुंज है, वैसे ही मुझे भी कहना चाहिए कि वे एक धर्म प्रवर्तक हैं।

विद्वानों का यह वाक्य — 'I come like light in the world भावार्थ—मैं जगत में प्रकाश की तरह आता हूँ' धर्म (सत्य) प्रवर्तकों ही के लिए है। इतना होने पर भी वास्तव में देखें तो धर्मप्रवर्तकों का रास्ता हमेशा सरल साफ नहीं होता। उन्हें प्रचंड विरोधों का सामना करते हुए प्रगति करनी पड़ती है। सच कहें तो सर्वसाधारण लोग सत्य—प्रकाश को समझ भी नहीं पाते हैं। वे तो अज्ञान अन्धकार में चाहे जिसके पीछे घूमते रहते हैं। यही कारण है कि आम जनता का मानसिक और आत्मिक विकास बहुत ही कम हो पाता है। इस वास्ते यह कहते हैं कि सामान्य लोगों के हृदय उल्लू के नेत्रों की तरह ज्ञानयुक्त प्रकाश को ग्रहण करने में असमर्थ रहते हैं। उल्लू अपने नेत्रों की कमजोरी न समझते हुए सूर्य—प्रकाश को चाहे बुरा कहे या नहीं, परन्तु साधारण लोग तो अपने हृदय की दुर्बलता नहीं पहचान कर सत्य प्रकाश को ही बुरा बताते हैं। अन्याय, दुराग्रह और प्रमाद (आलस्य) के पहलुओं को सर्वसामान्य लोग आज भक्षक के बदले रक्षक मान बैठे हैं। इस कारण आज के सत्यप्रवर्तकों के कंधों पर लोगों के इन मोह

जालो को चीरने की दुगनी जिम्मेवारी आई हुई है। क्योंकि इन मोहजाल के पर्दों को चीरे बिना उनके दिलो दिमाग सत्य प्रकाश को ग्रहण नहीं कर सकेंगे।

पूज्यश्रीजी के जीवन की विशेषताएँ भी ऐसी ही हैं। उनके भी जीवन का अधिक भाग (ऊपर लिखे अज्ञानियो की गैरसमझ दूर करके सत्य प्रकाश उनके दिलोदिमाग मे पहुचाते हुए) अनेक विरोधी एव विरोधियों का सामना करने म व्यतीत हुआ, कहा जा सकता है। इस वास्ते वे आज न केवल जैन पथ प्रदर्शन के नाते से बल्कि मानवीय उदारता के मार्गदर्शक की भांति चमक रहे हैं और यह चमक हर प्रवर्तक को अनेक खडतर विरोधो का मुकाबिला करने पर ही मिल सकती है।

वर्तमान युग म वैज्ञानिक शोधो के फलस्वरूप उसकी यशस्विता विमान, रेडियो और वायरलेस जैसे साधनों के रूप म हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं। ये सब धीरज, लगन, विवेक और साहस के परिणाम हैं इतने पर भी वैज्ञानिको के सहारे से तो हम हजारों मील दूर की बातें ही देख और सुन सकते हैं, परन्तु पूज्यश्री जैसे वैज्ञानिको के सहारे से हम बिना किसी साधन के केवल अपने हृदय रूपी यत्र का उपयोग करके विश्व भर की भूत, वर्तमान और भविष्य की बातें देख सुन और बता भी सकते हैं इतना ही नही चाहे तो हम अपना आत्मिक विकास साध कर अमरता को भी प्राप्त कर सकते हैं। अब पाठक स्वय बतावें कि कौनसा वैज्ञानिक कल्याणकारी एव महान है ? इस तरह स्वय पूज्यश्री भी वर्तमान समाज म जैन समाज का गौरव बढ़ाने वाले वैज्ञानिक हैं। इनकी वाणी हमें महारम्भ (यन्त्रवाद) की उत्थानाशी प्रवृति से बचा कर अल्पारम (गृह उद्योग) की प्रवृति की ओर लेजाने वाली है। इसलिए स्तुत्य है।

इस तरह की विवेचना के बाद हर व्यक्ति जान सकता है कि मनुष्य जीवन की महत्ता उसकी भौतिक विजय पर हो नही किन्तु उसके आत्मिक सत्य की शोध पर आश्रित है। इसलिए वास्तविक तौर पर आत्मिक सत्य ही मनुष्य का हर जगह चिरशांति दे सकता है। वैसे ही इतिहास भी उन्ही के नाम सुवर्णाक्षरो में लिखे रहते हैं, जिन्होंने आत्मिक विजय पाई है।

इसलिए कह सकते हैं कि समय सूरवीरों को भुला सकता है परन्तु सत्पुरुषो को नही। सत्पुरुषों का भुलाना उसके सामर्थ्य से बाहर है। पराक्रमी पुरुष प्रजा के शरीर पर राज्य कर सकता है न कि हृदय पर। जनता के हृदय सम्राट तो सन्त महात्मा ही हो सकते हैं।

पराक्रमियो की पाशविक शक्ति अपने भय द्वारा लोगो से अपने सामने अपनी आज्ञा आज भी मनवा सकती है। परन्तु गाय बछड़े की भांति अपने पीछे लोगों को रखने वाली तो सत्पुरुषो की दवी भक्ति और उनकी विश्वप्रेम की भावना ही है। हम आज जैन जवाहर का इस हेतु अनुसरण कर सकते हैं कि उनके सहारे से अपने भक्त हृदय को विकसित कर उनके साथ आत्मविकास कर सकें।

राजा-रईसो आदि की श्रद्धांजलियाँ

१३—महाराजा साहिब श्री लाखाधिराज बहादुर एस वी ई, के ई एस आई, एल एल डी, मोरवी नरेश

श्री स्थानकवासी जन सम्प्रदाय ना प्रतिभाशाली धर्मनायक जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराजश्री जेवा वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध संतनु राजकोट मां सं० १९९२ नु चातुर्मास थतां, मोरवी मां तेमज काठियावाडना अन्य स्थलों मां तेमनी यशकीर्ति फलाता, आवा महानुभावनु चातुर्मास मोरवी मां थाय तो अमारी जन अने जनतर प्रजा तेमना सदुपदेश ना लाभ लई कृतार्थ बने एवी भावना थी अमारा महेरना अग्रेसरो मारफत मोरवीना चातुर्मास माटे अमे पू० महाराजश्री ने विनती करेली, जे तेओ श्रीए सहर्ष स्वीकारी सं० १९९३ नु चातुर्मास मोरवी मा पसार कर्यु ।

मोरवी नी अमारी स्थानकवासी जैन प्रजाए जे उत्साह थत अने प्रेमभरी लागणी थी पूज्यश्री नु स्वागत कर्यु, तेमज बहारना सैंकडों मेमानो ना अतिशय सत्कार माटे अमारी जैन प्रजाए जे जहमत उठावी हती तेनी अत्रे नोंध लेवामां अमने संतोष थाय छे।

पू० महाराजश्री ना चातुर्मास दरम्यान तेओश्रीना प्रवचन ना तेमज अंगत परिचय नो लाभ लेवानो अमन घणा प्रसंगो मल्या हता। पू० श्री ना व्याख्यान मां जन धर्म नी व्यापकता, सहिष्णुता अने उदारता ने व्यक्त करता जैन तत्व विषयक मधुर व्याख्यानो अमे सांभलेला। तेनी अमारा ऊपर ऊंडी छाप पडी छे।

पू० श्री ना दरेक व्याख्यानो मां प्रार्थना न महत्त्व नु स्थान मलतु। जीवन ने सात्विक अने प्रभुमय बनाववामा प्रभु प्रार्थना एक अमोघ साधन छे अने ए कारण पूज्यश्री प्रार्थना उपर हृदय स्पर्शी विचारो द्वारा सचोट उपदेश आपता अने प्रभु भक्ति तरफ जनता नु लक्ष खेंचता।

पूज्य महाराज श्री नी तलस्पर्शी विद्वत्ता, समन्वय शैली अने कोई ने पण कडवु न लागे एवा हितकर सत्य उच्चारवानी सादी छतां भव्य पद्धति थी अमने घणोज संतोष थयो हतो।

पूज्य महाराजश्री दीर्घायु भोगवे धर्मशास्त्र नी उन्नति ना कार्यो करता रहे अने एमना देदीप्यमान प्रकाश थी भारतवर्षी कल्याण साधे एज अमारी भावना छे।

१४—श्रीमान् ठाकुर श्री दीपसिंह जी साहिब वीरपुर नरेश

श्रीमान् जैनाचार्य महाराज श्री जवाहरलाल जी महाराज ज्यारे विक्रम संवत १९९२ थी १९९५ सुधी काठियावाडमां विहार करता हता ते दरम्यान मने युवराज अने राजकर्ता तरीके तेमने वीरपुर, राजकोट थायला अने मोरवी मां मलवानो प्रसंग मल्या हतो। जवाहरलाल जी महाराज ज्यारे सं० १९९२ ना अरसा मां पहेला वीरपुर पधार्या त्यारे संयोगवशात् हुं राजना काम प्रसंगे बाहरगाम गयलो। पाछल थी पूज्य पिताश्री हमीरसिंह जी साहेब तेमने मलवा पधार्या। तेमने मली पोते बहुज खुशी थया अने तेमना ज्ञाननो तथा तेमना प्रवचन नो लाभ पोताना युवराज ने मले एटला खातर एक दिवस आग्रह करी वीरपुर मां पधारे रोक्या अने मने तुरत वीरपुर मां बोलावी महाराज साथे मेलाप कराव्यो। महाराजनु प्रवचन पांच मिनट सांभलताज मारा मननी अंदर छाप पडी के 'यथा नाम तथा गुणा'। प्रमाणे जवाहरलाल जी महाराज नु जेनु नाम एवाज पोते भारतवर्ष ना एक जवाहीर छे एवी जाणती मने ऊंडी छाप पडी अने तेमनु प्रवचन खूब

साभल्यु । छतां एटला थी मने सतोष नही थवायी म ऊपर लख्या स्थलोए अनेक वखत पोतान मलवानो प्रसग उपस्थित करी वखतो वखत हुँ तेमना प्रवचन मां राजा अने प्रजा ने पोत पोताना कर्तव्य नो बोध आपता सामली बहु आनन्द मेलवतो अने ते काई दिवस भुलाय तेम न थी। एटलु ज नही पण तेमना प्रवचन नो वखतावखत लाभ लेवा ज्या महाराजश्री विहार करता होय त्या जई साभलवानी तीव्र इच्छा थती अने हजी थाप छे पण महाराजश्री काठियावाड मा विहार करता हता ए दरम्यान मां ज पूज्य पिताश्री नो स्वर्गवास थता राजनो बोझो मिर ऊपर आवी पडता सासारिक उपाधि ने लई जवाहरलाल जी महाराज ना दर्शन नो लाभ वधारे उठावी शक्यो नथी जे माटे घणो दीलगीर छु ।

प्रभु पासे मारी एवी प्रार्थना छे के परमात्मा तेमने तदुरुस्ती साथे लाबु आयुष्य आपे अने तेमना ज्ञाननो लाभ भारतवर्षनी जनता लीए अने जीवन मा तेमना बोध उतारी जीवन ने उज्वल बनावे ।

१५—हिज हाईनेस महाराणा राजा साहेव वहादुर श्री वाकानेर नरेश

श्री स्थानकवासी जन सम्प्रदाय ना जैनाचार्य पूज्य श्रीमान जवाहरलाल जी महाराज श्रीनु वाकानेर पधारवु थयु ते वखते तेओ श्रीना प्रवचनो साभलवानो लाभ अमने प्राप्त थयो हतो। पूज्यश्रीना व्याख्यान घणा सुन्दर अने आकर्षक हता। तेओश्रीना उत्तम चारित्र नी, सरल मायालु स्वभाव नी अने ऊँचा ज्ञाननी अमारा ऊपर ऊँडी छाप पडी छे। पूज्यश्री दीर्घायु भोगवे अन पतित अवस्थाने पामता जीवने पोताना ज्ञाननो लाभ आपे एज अमारी भावना छे।

१६—श्रीमान ठाकुर साहेव श्री मूली नरेश

श्री स्थानकवासी जैन सम्प्रदायना पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराजनु राजकोट चातुर्मास थएलु ते वखते राजकोट जता एक दिवस माटे अही तेओनु पधारवु थएलु, ज्यारे अमोने तेओ श्रीनो फकत एकज व्याख्यान साभलवानो प्रसग प्राप्त थएल हतो ।

पूज्य महाराज श्रीए व्याख्यान मा जन धर्म मां समाएला कटेलाक पवित्र तत्वोनी सारी समजावट करवा उपरान्त शुद्ध चारित्र साथे प्रभु भक्ति करवा थी थता महान् लाभो अने मनुष्य जिंदगीनु साथकय ए बहुज सुन्दर रीत समजावेलु हतु ।

पोते वयोवृद्ध छता धर्मना फेलावना खातर घणो परिश्रम वेठे छे। तेओनी बोध आप वानी एवी तो असाधारण शैली छ के जैन अन जन सिवायना बधा साभलनाराओ ने तेओश्री तरफ पूज्यभाव उत्पन्न थाय ।

टुक वखतना परिचय मां पण तेओश्री ना ज्ञान अन विद्वत्ता माटे अमोने घणीज खुशी उत्पन्न थयेल छे।

१७—श्री मालदेव राणा साहव, पोरवन्दर

परम कृपालु परमपूज्य, जैनाचार्य सन्तशिरोमणि श्री जवाहरलाल जी महाराज श्रीना पवित्र चरण कमलनी सेवा मा—

पोरवन्दर थी लखी चरण रज सेवक मालदव राणा ना सविनय साष्टांग दण्डवत प्रणाम स्वीकारशो जी लखवा विनंती ए के आप श्री अत्रे पोरवन्दर पधारी पोरवन्दर नी प्रजाने तेमना आत्मकल्याण माटे जे सद्बोध रूपी अमृत रसनु पान कराव्यु छे त कदी पण भुलाय तेम नथी। आप श्रीनो सवमान्य उपदेश, आप श्रीनु अति सादु जीवन, उच्च चारित्र शुद्ध अहिंसा पालन आदि उच्च सद्गुणा सदा याद आव्या करे छे। आप श्रीना उदार दिल ना परिणामे कोई पण जात के धर्म ना भेदभाव राख्या शीवाय समभावे विशाल दृष्टि थी आप श्रीए प्राणिमात्र नु कल्याण केम थाय ए भावना थी ज उपदेश आप्यो छ ए खरेखर अमूल्य अने प्रशसा पात्र छे।

महाराज श्री ! आप श्री ना जीवन ने धन्य छे। आप श्रीं ना सदुपदेश मुजब जो अमे वर्ती शकीए तो जरूर अमे मानव जीवन नी सार्थकता करी शकीए।

आप श्री ना उपदेश वचनो हृदयना ऊंडापण थी निकलता। ए हतो शुद्ध आत्मा नो आवाज अने तेथीज श्रोता जनो पर तेनी सचोट छाप पडती। सत पुरुषो पोतानी प्रशसाना लोभा न ज होय छता गुणवान विभूति ना सत्य गुणगान करवा मा पण एक प्रकार ना आनन्द छे। एटले आप श्री ने प्रिय गुणवान विभूति ना सत्य गुणवान करवा मां पण एक प्रकार नो आनन्द छे। एटले आप श्री ने प्रिय लगाडवा मा आ शब्दो नथी पण जे सद्गुणो आप श्री मां जोया ए स्वाभाविक बोलाई जाय या पत्र मा लखाइ जाय तो कदाच आप श्रीने प्रिय न लाग तो क्षमा करशो जी। सतो ते खुशामद प्रिय होता नथी।

एटले आ खुशामद ना शब्दो नथी पण अनुभवेली सत्य हकीकत छे। अने ते स्वाभाविक लखाइ जाय छे।

१८—सर मनुभाई मेहता kt C S I, फोरेन एण्ड पोलिटिकल मिनिस्टर ग्वालियर भूतपूव प्रधानमन्त्री वडौदा तथा बीकानेर

I had the privilege and rare advantage of attending at Vyakhyanas of Swami Guru Jawaharlalji at Bikaner when I had the honour of holding the post of Prime Minister here Swami Jawaharlalji has the art of expressing highly philosophic truths in language easily intelligible to the masses. He holds liberal and Catholic views about the truths of Diverse religious creeds in the country and his mode of treatment of a subject that is capable of polemical and controversial treatment with tolerance and fair play was very praiseworthy

I wish him a long and successful carrier as a spiritual Guru and guide to the Jain fraternity

हिन्दी-अनुवाद

'जब मैं बीकानेर में प्रधान मन्त्री था उस समय स्वामी गुरु जवाहरलालजी महाराज के व्याख्यान सुनने का दुलभ अवसर एव लाभ प्राप्त हुआ था। स्वामी जवाहरलालजी म महान् दार्शनिक तत्वों को एसी सरल भाषा मे प्रकट करने की कला है जिसे साधारण जनता भी आसानी से समझ सकती है। देश के विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो म रहे हुए सत्य के प्रति आपके उदार सहानुभूतिपूर्ण विचार हैं। विवाद अथवा वचावाल विषय को सहनशीलता एव न्याय के साथ प्रकट करने का आपका ढग बहुत प्रशसनीय है।

जैन समाज क पथ पदर्शक तथा आध्यात्मिक गुरु क रूप मे मैं उनके दीर्घ एवं सफल जीवन की कामना करता हूँ।'

१९—दीवान बहादुर, दीवान विशनदासजी kt जम्मू

I had the honour of paying my homage to the most venerable Jain muni Shree Maharaj Jawaharlalji During my visit to Ajmer In the course of several interviews which His Holiness permitted me to hold with him there I was much impressed by his vast Knowledge of Jain Shastras

जब मैं अजमेर गया हुआ था मुझे जैन मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करने का लाभ प्राप्त हुआ था। पूज्यश्री के साथ वार्तालाप करने के जो थोड़े से अवसर प्राप्त हुए उनमें उनके जैनशास्त्र सम्बन्धी विशाल ज्ञान का मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा।

× × ×

२०—श्री त्रिभुवनदास जे राजा, चीफ मिनिस्टर, रतलाम।

I came in contact with the gifted teacher when he was on a religious tour and paid a visit to Porbandar in 1937 April-May on his way to Morvi to spend the Chaturmasa at the latter place I attended his many of soul-stirring lectures at Porbandar and the lay public both Jain and non jain were so keen to persuade Pujyashri to stay on at Porbandar During the ensuing rainy season that I was literally compelled to make an open and public Appeal to him His Highness the Maharaja Rana Sahib Shri Natwarsinghji Bahadur K C S I of Porbandar and other members of the Raj family, state Officials and gentry, learned Brahmins Sirdars and Jagirdars Orthodox Vaishnavas, even musalmans, flocked in thousands to hear Pujyashri's learned discourses and almost every one male and female audience felt personally ennobled by his direct appeal to live and let other live a life of Peace and Piety and Non-Violence Maharaj Shri Jawaharlalji is not only a great orator but a great soul whose human sympathies extend for beyond the narrow pole of Jain asceticism or dogma I wish there were more religious teachers in India of the type of Pujya Shri so that there would be no communal bitterness I have personally felt myself a betterman after having come in contact with him and the influence that his spiritual megnatism has exerted on me would not be wiped off

I called on Pujyashri again while he was indisposed at Jamnagar and another happy audience with him

सन् १९३७ अप्रैल मई का महीना था। पूज्यश्री का चातुर्मास मोरवी में तय हो चुका था। धर्म प्रचार करते हुए आप पोरबन्दर पधारे। उसी समय मुझे इस प्रतिभाशाली धर्मोपदेशक का परिचय हुआ। मैंने पोरबन्दर में आपके कई व्याख्यान सुने जो आत्मा में हलचल पैदा कर देते थे। आगामी चातुर्मास में पूज्यश्री को पोरबन्दर ठहराने के लिए जैन एवं अजैन जनता इतनी उत्कण्ठित थी कि मुझे सर्वसाधारण की ओर से खुले रूप में प्रार्थना करने के लिए वस्तुतः बाध्य होना पड़ा। पूज्यश्री के विद्वत्तापूर्ण भाषण सुनने के लिए हिज हाईनेस महाराजा राणासाहेब श्री नटवरसिंहजी बहादुर के० सी० एस० आई० पोरबन्दर नरेश राज परिवार राज्याधिकारी और प्रतिष्ठित नागरिक विद्वान् ब्राह्मण सरदार और जागीरदार कट्टर वैष्णव, यहाँ तक कि मुसलमान तक हजारों की संख्या में आते थे। जीना और जीने देना एवं शान्ति पवित्रता तथा अहिंसामय जीवन के लिए जब आप साक्षात् देशना देते थे तो प्रत्येक स्त्री पुरुष अपने व्यक्तित्व को ऊँचा उठा हुआ पाता था। महाराजश्री जवाहरलालजी महान् उपदेशक ही नहीं किन्तु महान्

आत्मा हैं। आपकी सहानुभूति जैन साधु संस्था या सिद्धान्तों तक ही सीमित नहीं है किन्तु उनके बाहर भी दूर तक फैली हुई है। मेरी कामना है कि भारतवर्ष में पूज्यश्री के समान बहुत से धर्मोपदेशक हों जिससे साम्प्रदायिक कटुता दूर हो जाव। आपके परिचय मे आने के बाद से मैं अपने व्यक्तित्व को कुछ उन्नत अनुभव कर रहा हूँ। आपके आध्यात्मिक आकर्षण ने मुझपर जो असर डाला है वह कभी मिट नहीं सकती।

जामनगर म जब पूज्यश्री अस्वस्थ थे मुझे मिलने का फिर सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इस समय के वार्तालाप से भी मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई।

× × ×

२१ श्री जे एल जीवनपुत्र, चीफ मिनिस्टर सचिन स्टेट

I had the privilege to hear three sermons of this learned Swamiji when he had kindly camped at Rajkot in 1938-39 India is still a land of saints and Jawaharlalji Maharaj is one of the eminent jewels in the galaxy His attitude towards life s noble mission is robust and cheerful He possess in a pre eminent degree the most outstanding qualities of an Acharya and his sermons balanced with fitting anecdotes full of worldly wisdom go deep into the mind of his hearers Truth is one and indivisible, but so long as there appears the veil of Maya or ignorance, the preachings of such Sadhus help to clear the way of the Sadhakas While every soul (Jivatma) is on its evolutionary path to liberation and catches so much of the preachings of such Sadhus for which they have "Adhikar" the benevolent associations of such Sadhus with the public do not fail to do some good to every one of them They are like trees that give shelter to all who resort to them and like rivers that purify the land they traverse They come on earth to help and guide the souls that have developed and need nourishment Every sermon of Jawaharlalji Maharaj was full of not only of his Masterly groop of the Jain Philosophy, but replete with his deep study of comparative philosophy of other Darshanas

विद्वान् स्वामी जी (जवाहरलाल जी महाराज) सन् १९३८ ३९ म जब राजकोट विराजमान थे उस समय मुझे उनके तीन व्याख्यान सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भारतवर्ष अभी तक सन्तभूमि है और जवाहरलाल जी महाराज उस सन्तमाला के प्रधान रत्नों म से हैं। जीवन के महान् उद्देश्य के प्रति उनका रुख दृढ़ और आनन्दपूर्ण है। उनमें एक आचार्य की मुख्यतम विशेषताएँ अत्यधिक मात्रा म विद्यमान हैं। दुनियावी सूझ स परिपूर्ण छोटे छोटे चुटकुलों वाले उनके व्याख्यान श्रोताओं के हृदय म गहरे उतर जाते हैं। सत्य एक तथा अविभाज्य है। किन्तु जब तक माया या अविद्या का परदा रहता है, ऐसे साधुओं के उपदेश साधकों के मार्ग को स्पष्ट करने में सहायता करते हैं। जब कि प्रत्येक जीवात्मा अपनी मुक्ति के लिए विकास के पथ पर चल रहा है और ऐसे साधुओं के उपदेशों को ग्रहण करता है जिन के लिए उसका अधिकार है जनता का ऐसे साधुओं के साथ उपयोगी सत्संग प्रत्येक व्यक्ति के लिए कुछ न कुछ लाभ अवश्य करता है। वे उन वृक्षों के समान हैं जो पास आने वाले को आश्रय देते हैं और उन नदियों के समान हैं जो जहाँ-जहाँ

प्रवाहित होती हैं उस क्षेत्र को पवित्र बना देती हैं। वे उन आत्माओ को सहायता पहुँचाने तथा पथप्रदर्शन करने आते हैं जिन्होने मार्ग प्राप्त कर लिया है और उस पर चलने के लिए शांति चाहते हैं। पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज का प्रत्येक व्याख्यान उनके जैन दर्शन पर पूरे अधिकार के साथ साथ दूसरे दर्शनो के भी गहरे तथा तुलनात्मक पाण्डित्य से परिपूर्ण होता है।

२२—राव साहब अमृतलाल टी मेहता बी ए, एल-एल बी, भूतपूर्व दीवान पोरबन्दर, लीमडी और धमपुर स्टेट

I had the good fortune to attend several lectures of the highly revered Jain Acharya pujya maharaj Shri Jawaharlalji in Morvi as well as Rajkot My admiration for him is not due to only his being Jain Ascetic but to his being a preacher of moral principals common to most religious

I was very much impressed by his learning, earnestness, eloquence and marvellous lucidity of expression and ex position His strong desire for the welfare of his flock often prompted him to take a deep interest in their social life and entitled him and endeered him to them to be called their guide, philosopher and friend

मोरवी तथा राजकोट में परमपूज्यश्री जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के कुछ व्याख्यान सुनने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। केवल जैन साधु होने के नाते ही नहीं किन्तु सर्वधर्म साधारण नैतिक नियमो के उपदेशक होने के कारण भी वे मेरी प्रशसा के विषय हैं।

उनकी विद्वत्ता, भावप्रवणता, वाग्धारा एव व्याख्यान तथा अभिव्यजना की सरसता ने बहुत प्रभावित किया है। अपने अनुयायियो के हित की तीव्रभावना से प्रेरित होकर वे सामाजिक कार्यों में बडी रुचि लेते हैं। इसी लिए वे लोग आपको अपना नेता, धर्माचार्य तथा मित्र मानते हैं जिसके कि आप पूर्ण अधिकारी हैं।

२३—राव साहेब माणेक लाल सी० पटेल, रिटायर्ड डिपुटी पोलिटिकल एजेंट W I S Agency

I had occasion to listen to some of his (Pujya Shri Jawahrlal ji's) sermons during the first satyagraha Campaign of the year 1938 when I was member of the State Executive Council He was then on a tour in Kathiawar and came down to Rajkot from Jamnagar with a view to bring about peace between the Rajkot State and its people He had religious ceremonies performed, delivered sermons and used all his persuasive powers and influence to bring about peace which was attained when his camp was actually at Rajkot His sermons preached constructive peace and contentment in a spirit of duty and bore the impress of a disciplined life with a broad minded univarsal morality acceptable to all creeds and communities I wish the Maharaj Shri a long life in his useful humanitarian mission in the disturbed times of brutal wars through which the earth is passing at the present moment

१९३८ म राजकोट के प्रथम सत्याग्रह संग्राम के समय मुझ आपके (पूज्यश्री के) कुछ व्याख्यान सुनने का अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय मैं स्टट एक्जीक्यूटिव काउसिल का सदस्य था। पूज्यश्री उन दिनों काठियावाड में विचरते हुए राजकोट राज्य तथा प्रजा में शान्ति स्थापित करने के लिए जमानगर से पधारे थे। आपने धार्मिक अनुष्ठान करवाए, व्याख्यान दिए और शान्ति स्थापित करने के लिए अपनी सारी प्रवतक शक्तियों तथा प्रभाव का प्रयोग किया। परिणाम स्वरूप उनके राजकोट मे विराजते समय ही शान्ति हो गई वे अपन व्याख्यानो म रचनात्मक शान्ति तथा सन्तोष को कर्तव्य समझने का उपदेश दते थे। वे हृदयविशालता से भरी हुई सार्वजनिक नैतिकता के साथ साथ जीवन के अनुशासन पर जार दते थ। उनम उदार हृदयता स परिपूर्ण सार्वजनिक नतिकता तथा अनुशासित जीवन की छाप रहती थी। जब कि पृथ्वी दानवी युद्धो के इस क्षुब्ध वातारण म से गुजर रही ह मानवतापूर्ण कार्यों के लिए मैं महाराज श्री क दीर्घायुष्य की कामना करता हूँ।

२४—श्री वकुण्ठप्रसाद जोशीपुरा सेक्रेटरी टू दी दीवान पोरबन्दर

I cherish the happiest recollections of the visit of revered Jain Acharya Shri Jawaharlal ji maharaj to Porbandar during his tour in Kathiawar about five years ago Brief as was his stay at Porbandar, it proved to be of lasting benefit to the hundreds of citizens who attended his inspiring discourses every morning among whom I was privilaged to be one, one whose admiration of the Preceptor has perhaps been second to none His versatile exposition of the highest principle of Ahinsa" as applied to daily life and his powerful exortation to envolve all that is best in human life evoked spontaneous response and created around him spiritual atmosphere in which one is roused to the consciousness of the frailities to which man is prove and at the same time of the infinite strength he is capable of exerting to overcome them My devout feelings go forth to the distinguished Jain Acharya Shri Maharaj and I consider it my great good fortune to have had the opportunity of paying him my humble and respectful tribute

पाच साल पहले काठियावाड में भ्रमण करते हुए जब जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज पोरबन्दर पधारे, उस समय की आनन्ददायक स्मृतियां मेरे हृदय पर अंकित हैं। पोरबन्दर में आपका विराजना अल्प समय के लिए ही हुआ था फिर भी सैकड़ा लोगों ने आपके प्रेरणा से भरे हुए उपदेश सुने और स्थायी लाभ उठाया। प्रतिदिन सुबह व्याख्यान सुनने वाले भाग्यशालियों म से मैं भी एक था किन्तु उन उपदेशक के प्रशसकों में मेरा स्थान सम्भवतया किसी से पीछे नहीं था। दैनिक जीवन मे आचरण करने के योग्य अहिंसा के उच्चतम सिद्धान्त पर आपकी भावमयी वाग्धारा तथा मानव जीवन में रही हुई श्रेष्ठ बातो को प्रोत्साहित करने वाले आपके प्रेरक शब्द तत्काल असर करते थे। चारो तरफ एक ऐसा आध्यात्मिक वातावरण बन जाता था जिससे आत्मा मानवीय प्रलोभनों की तुच्छता समझकर ऊँचा उठ जाता था। साथ ही वह अपनी अनन्त शक्ति का अनुभव करने लगता था जिससे अपने को उन्हें जीतने के प्रयत्न के लिए पूर्ण समर्थ मानने लगता था। असामान्य जैनाचार्य श्रीजीमहाराज के प्रति मेरी भक्ति भावना रखता हुआ मैं इसे अपना सौभाग्य मानता हूँ कि उनके प्रति श्रद्धांजलि प्रकट करने का अवसर मिला।

२५—श्री द्वारकाप्रसाद एल सरय्या, बी ए, एल एल बी, पोलिटिकल सेक्रेटरी नवानगर स्टेट

I first attended his discourse on the life of Lord Shri Krishan on Shravan Vad 8th, in that year I was struck by the great spirit of toleration shown by him in his remarks about Lord Shri Krishna whom I revere and adore sincerely being a Vaishnav mseylf

There is no mention in Sanatani Shastras about the near relationship of Lord Shri Krishna with the great Jain Tirthankar Shri Neminath ji, which he explained at great length I was charmed with his nice performance and so greatly attracted that I then made it a point to attend as many of his discourses as possible consistently with my other duties I remember to have not only attended several of his discourses but also found pleasure in seeking his company, whenever it suited me to do so His lectures were charactinized by a high pitch of learning and erudition His eloquence was so impressive and attractive that many non jain like myself took pleasure in listening to him

I may be pardoned if I mention that he even once paid a visit to my humble habitation It so happened that the late Modi Shamji Shivji who was a great philanethropist was my next door neighbour He invited the Maharaj Shri once to his place I was then at home and on my request the Maharaj Shri immediately came to my house and not only honoured me by a visit, but accepted some milk from my house It so happened that my cows were being milked at the time and following the Jain Principle of सूजती आहार of the spontenous gift, he was pleased to accept it from me I think it is the theory of कम or action, that every man is responsible not only for his own actions but also for thing done for him That is, if certain things are done not by you, but for you by others, you cannot escape your responsibility for such things I think this सूजती आहार means the acceptence gifts not intended for the recipient It creates no responsibility for the individual enjoying its benefit This is how I understand this principle and I believe in accepting this gift of milk from my cows, being spontaneous and not originally meant for the Maharaj Shri was acceptable to him What I want to convey by this incident is that, his spirit of toleration was so great as not to make any distinction between a Jain and non-Jain In his eyes all were equal and this spirit of true generasity adorns his lite I

take this opportunity of paying my humble but sincere homage to Maharaji Shri Jawaharlal ji by this short note of mine which I hope will be acceptable to him like my milk

उस वर्ष की श्रावण वदी अष्टमी के दिन मैंने पहले भगवान कृष्ण के जीवन पर उन का व्याख्यान सुना। मैं स्वयं वैष्णव हूँ और भगवान कृष्ण का भक्त तथा पुजारी हूँ। मुनि श्री ने श्री कृष्ण का वर्णन करते हुए जो सहिष्णुता की भावना बताई मैं उस से चकित रह गया। भगवान श्री कृष्ण और महान जैन तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ जी के निकट सम्बन्ध की बात सनातनी शास्त्रों मे नहीं है। इस कथा का उन्होंने बड़े विस्तार के साथ वर्णन किया। मैं उन के सुन्दर भाषण पर मुग्ध हो गया और इतना अधिक आकृष्ट हो गया कि मैंने अपने दूसरे कार्यों के साथ साथ उन के यथा सम्भव अधिक से अधिक भाषण सुनने का निश्चय कर लिया। मुझे स्मरण है कि मैंने उन के भाषण ही नहीं सुने किन्तु सुविधानुसार सत्संग भी किया। उनके भाषण शिक्षा और पाण्डित्य के उच्च आदर्श से भरे होते थे। उनका भाषण प्रभावशाली तथा आकर्षक था कि मेरे सरीखे बहुत से अजैन भी उसे सुन कर प्रसन्न होते थे।

इस बात का निर्देश करते हुए मैं क्षमा चाहता हू कि उन्होंने मेरे तुच्छ निवास स्थान पर भी पदार्पण किया था। बात यह थी कि प्रसिद्ध दानी स्वर्गीय मोदी श्याम जी शिवजी मेरे पड़ोसी थे। मुझ से दूसरा उन के घर का द्वार था। उन्होंने एक बार महाराज श्री को अपने घर पर निमन्त्रित किया। मैं उस समय घर पर था। मेरी प्रार्थना को महाराज श्री ने शीघ्र स्वीकार कर लिया और मुझे आपने पदार्पण द्वारा ही सम्मानित नहीं किया किन्तु मेरे घर से थोड़ा सा दूध अङ्गीकार किया। मेरी गौएं उसी समय दुही जा रही थी और 'सूजतो ,आहार' के सिद्धान्तानुसार उस स्वतः सिद्ध भेंट को उन्होंने स्वीकार कर लिया। मेरे खयाल में यह कर्मवाद का सिद्धान्त है कि मनुष्य अपने द्वारा किए गए कार्यों के लिए ही नहीं किन्तु उन बातों के लिए भी उत्तरदायी है जो उस के लिए की जाती हैं। तात्पर्य यह है कि कुछ वस्तुएं आप नहीं करते, किन्तु आपके लिए दूसरे करते हैं। ऐसी वस्तुओं के उत्तरदायित्व से आप नहीं बच सकते। मेरी दृष्टि में सूजतो आहार का अर्थ है ऐसी वस्तु को स्वीकार करना जिसमें ग्रहीता का निमित्त न हो। इस प्रकार से उपभोग करने वाला व्यक्ति उस वस्तु के उत्तरदायित्व से बच जाता है। मैंने इस सिद्धान्त को इसी रूप में समझा है।

यही बात मेरी गौओं का दूध स्वीकार करने में भी मैंने समझी है क्योंकि वह दूध स्वाभाविक रूप में दुहा जा रहा था महाराज श्री के निमित्त से नहीं इसीलिए वह उनके लिए स्वीकरणीय हुआ। इस घटना से मैं यह कहना चाहता हू कि उन मे सर्वधर्म सहिष्णुता की भावना इतनी बढ़ी हुई है कि वे जैन और अजैन में कोई भेद नहीं डालते। उनकी दृष्टि में सभी समान हैं। यह सच्ची उदारता उन के जीवन को अलङ्कृत करती है। मैं इस छोटे लेख द्वारा महाराज श्री जवाहरलालजी के प्रति नम्र और श्रद्धापूर्ण भक्ति अर्पित करता हूँ। आशा है, मेरे दूध की तरह वे इस भी स्वीकार करेंगे।

२९—एक मुस्लीम ना हृदयोद्गार

(लें० जनाब अब्दुल गफुर नूरमोहम्मद बलोच कामदार मटियाणा स्टेट जूनागढ़)

पूज्यपाद धर्मात्मा सुप्रसिद्ध जैनाचार्य गुरुवर महाराज श्रीजवाहरलालजी नु जीवन चरित्र सम्बन्धि छे एम मारा सांभळवामां ते सांपडेली अमूल्य तके मारा जेवा एक मुस्लीम श्रोता ने तेओ श्री नी वाणि-श्रवण अने वांचन तेमज अनुभव थी थयल धर्म भावनाए उत्पन्न करेली मानबुद्धिना आवेशे म पूज्य महात्मा निसबते बे शब्दो लखवा प्रेरायो छु।

तेओ श्री पोतानी जन्मभूमि मारवाड दूर देश थी विहार करी वि० स० १९९२ मा काठियावाड मा पधारी आप्रान्तनी जनता ने दर्शन नो लाभ आपवा उपरान्त राजकोट, जामनगर अने मोरबी मा स० १९९२ थी १९९४ सुधीत्रण चोमासा करी जे धर्मोपदेश आपी लाखो श्रोताजनो ना मलीन आत्माओ ने पावन कर्या छे तेमज पावन थवाना नेक पवित्र रस्त चढाव्या छे ते महान उपकार काठियावाड नी धर्मनिष्ट प्रजा सेंकडों वर्ष नही भूलवा साथे तेओश्रीए आपला ज्ञानसागर रूपी व्याख्यानों ऊपर थी भविष्यनी प्रजापण बोध ग्रहण करती रही पावन थती रहे शे अने तओ पूज्य महात्मा नी वार्षिक जन्म तिथि उजववाना के ते निमित्त कई धर्मनीय करवानो हमेशने माटे योग्य प्रबन्ध करी ते ऋषिवर नु सस्मरण ताजु राखता रही जन समाज अने विशेषे करीने जैन समाज ऊपर करेला उपकार नु यत्किंचित ऋण अदा करता रहशे एम मानु छु

ज्योरे पूज्य महर्षि विहार करता-करता जूनागढ पधारेला त्यारे अकिंकरने दर्शन नो लाभ मारा परम पूज्य परमोपकारी वडील भ्राता के पिता जे थहू तेना मा मे वकील मुरब्बी जेठालाल भाई प्रागजी रूपाणी ना अहर्निश समागम ना प्रतापे मलववा हू भाग्यशाली थयो हतो अने महाराज श्री ना व्याख्यानो तथा धर्म चर्चा सांभलवा नो अमूल्य लाभ मल्यो हतो ए सन्त समागम तेमज धर्मना महान सद्धान्तिक व्याख्यानो नी मारा अन्त करण ऊपर थयेली विचलोक असर थी मारा हृदय मा थी अधकार रूपी मलीनताना नाश थवा साथे प्रकाशरूपी धर्मभावना जो जागृत थई होय तो ते वन्दनीय पूज्य तपस्वी जवाहरलालजी महाराज श्री नी धन्यवाणि नो ज प्रताप मानी रह्यो छु

तेओश्रीए पोताना अलौकिक ज्ञान सागरमा थी मधुरवाणी रूपी आपला व्याख्यानो ना तय्यार थयेला पुस्तको ना हू ग्राहक हतो ते बधा पुस्तको खरीद करी तेना वाचन मनन नो पूरतो लाभ में लाधो छ ए वाचन मनन थी मारो आत्मा रगाई जवा साथ मारा भविष्यना बाकी रहेला जीवन ने दया नीति, सत्कर्म, अहिंसा दान धर्म विगराना सत्यामार्गे दोरनारा तरीके हमेशने माटे सहायभूत बनशे ए बोध ने हू मारा जीवननी ज्ञान नौका तरीके मानु छ

जैन धर्म ना महान आचार्य पूज्य जवाहरलालजी महाराज पोताना उपदेश व आचरण द्वारा लोको पर जे महान उपकार करे छे त काई ओछो उपकार नथी। पण तेओ पोते उपकार करेलो नहि मानता पोताना आत्म कल्याणर्थे करी रहेला माने छे। परन्तु तओ श्री ना महाज्ञान प्रतापे लाखो मनुष्यो ना आत्मकल्याण थया छे थाय छे अने थशे ए बात जन समाज भूली शकशे नही खरेखर तओ श्री जगदगुरु सम छे

महात्मा श्री पोते जन धर्म ना आचार्य महापडित छे अने महान उपकार छे परन्तु पोताना व्याख्यान मा सर्वधर्म मां थी बोधिक दाखला दृष्टान्तो आपी सर्वधर्म नु सरखापणु बतानी श्रोता जनो मा दुनियाना सर्वधर्मो प्रत्ये मानबुद्धि उत्पन्न करावे छे कोई पण धर्म नी निंदा करवी के सांभलवी तेमा पाप माने छे अने मनावे छे तेओ श्री कुरान शरीफ गीता रामायण भागवत, बाईबल आदि ग्रन्थो नो अभ्यास करी वाकेफी मेलवी चुका छे तेओश्री लबु आयुष्य भोगवे एम इच्छु छु

२७—राव बहादुर मोहनलाल पोपट भाई, भू० पू० सदस्य स्टेट काउंसिल, रतलाम

सन् १९३५ मे श्रीमज्जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी म० सा० के शुभ दर्शन का सौभाग्य मुझ रतलाम मे प्राप्त हुआ था। उस समय पूज्यश्री के व्याख्यानों का लाभ मैंने पूरे चार मास तक लिया था तथा आपकी यथेष्ट सेवा भी की थी। पूज्यश्री की भव्य एवं प्रभवान्वित मुख मुद्रा का मेरे अन्तस्तल पर जो प्रभाव पडा था वह शब्दों द्वारा नहीं कहा जा सकता। आपके मुख कमल से वह शान्तिस्रोत प्रवाहित होता है, जिसमे अवगाहन करके मानवमात्र कृतकृत्य हो जाता है। जब आपके दर्शनमात्र से मानव अपना अहोभाग्य समझता है तब हार्दिक उद्गारों के साथ

प्रवाहित होने वाली आपकी सात्विक वाग्धारा से मनुष्य कितना प्रभावित हो सकता है यह स्वत कल्पनागम्य है। इसका अनुभव जब मैं श्रीमान रतलाम नरेश के साथ चातुर्मास में गया था, तब हुआ था।

श्रीमान रतलाम नरेश ने आपका व्याख्यान सुनने के लिए आधा घंटा निश्चित किया था, किन्तु जब पूज्यश्री ने योग्य राजा, प्रजा एवं योग्य अधिकारियों के कर्तव्याकर्तव्यों की तात्विक मीमांसा प्रारम्भ की तब आध घंटे के बजाय दो घण्टे का समय व्यतीत हो जाने पर भी श्रीमान रतलाम नरेश की व्याख्यान श्रवण करने की पिपासा शान्त नहीं हुई। व्याख्यान की सर्वप्रियता का इससे बढ़कर और उदाहरण क्या दिया जा सकता है। आपके व्याख्यानों मे जैनदर्शन के साथ अन्य दर्शनों की तुलनात्मक प्रक्रिया और साथ ही सर्वधर्म समन्वय की जो पद्धति दृष्टिगोचर होती है वह बड़ी ही चित्ताकर्षक है। किसी भी गूढातिगूढ विषय को सर्वसाधारणगम्य भाषा में समझाना तो आपकी व्याख्यान शैली की खास विशेषता है।

जब पूज्यश्री प्रभु प्रार्थना करते हैं तब आपकी तन्मयता के साथ सारा श्रोतृ मण्डल भी तन्मय हो जाता है। आपकी अलौकिक प्रार्थना शैली मे भक्त एव भगवान के अनन्यतम सम्बन्ध का मानों प्रत्यक्ष भान हो जाता है। आत्मा और परमात्मा का साक्षात्कार करा देने का सामर्थ्य आपकी प्रार्थना म विद्यमान सा प्रतीत होता है। संक्षेप म कहा जाय तो एक सुयोग्य प्रतिभाशाली वक्ता म जो गुण होने चाहिए, वे सब गुण पूज्यश्री मे पूर्णतया विद्यमान हैं।

पूज्यश्री भारतीय महापुरुषों मे अग्रगण्य हैं सम्यक ज्ञान सम्यक दर्शन एव सम्यक चरित्र रूप रत्नत्रय का पूर्ण सामञ्जस्य आपके जीवन में ओतप्रोत दिखाई देता है। आप केवल जन समाज के लिए ही नहीं बल्कि सारे भारतवर्ष के लिए आदर्श स्वरूप एवं पथप्रदर्शक हैं। पूज्यश्री 'जवाहर' नाम वाले यथार्थ मे भारत के जवाहर हैं।

अन्य शब्दों म कहा जाय तो पूज्यश्री अहिंसा और सत्य के महान प्रचारक, श्रमण संस्कृति के जाज्वल्यमान रत्न धर्म और कर्म मार्ग के अप्रतिम प्रकाशक, मोक्ष मार्ग के अद्वितीय प्रसाधक, तत्वज्ञान के अपूर्व व्याख्याता एव जैनधर्म के प्रबल प्रचारक हैं। आप जैसे आदर्श मुनिराज के जीवन चरित्र के प्रकाशन की कमी का दीर्घकाल से अनुभव किया जा रहा था परन्तु बड़े हर्ष की बात है कि इस कमी को पूरा करने का श्री जवाहर जीवन चरित्र समिति भीनासर ने निश्चय किया है।

अन्त म मेरी शासनदेव से यही विनम्र अभ्यर्थना है कि पूज्यश्री दीर्घायु हों एव देश, समाज और राष्ट्र के पथप्रदर्शन में सदैव अग्रगण्य रहें।

२८—श्रीयुत काज़ी ए अख्तर, जागीरदार, जूनागढ स्टेट

The late Swami Dayanand was an ideal monotheis, whom the fertile soil of our Kathiawar had produced and who wrought a mighty change to the Hindu hierarchy by his gigantic reforma tion Of such a class of reformers and preachers comes Maharaj Shree Jawaharlalji as very learned preacher and a great mission ary of the Sthanakwasi cult It is a privilege to write something about such a sainty personage who is deeply revered not only by the votaries of his own faith but has a large circle of admirers outside it, and as such an admirer I have been asked to give here a reminiscence of my personal contact with him some six years ago

It was in the year 1936 that I came in contact with this great man who during his missionary perigrimations came down to Junagarh by travelling on foot from a long distance to give benefit of his learned discourse to his co-religionists After incessant anxieties and worries of this worldly life one finds great comfort and solace in the company of learned sages and leaders of spiritual thought Such an opportunity was apporded to me by my valuable friend Jethalal Bhai Rupani through whose kind courtesy I had the pleasure of meeting this Jinacharya who deeply impressed me with his simple habits polite manners, tolerant spirit and friendly behaviour His learned discourses had won the hearts of many of his visitors while in his Company everybody felt as ease as if they were sitting with a friend and chatting with him on different topics There was no air of pretentions sanctity about the Maharaj nor any sort of lugubrious, sobriety, but a calm serene and well composed propriety which marked the high and noble mind in this great savant I had a little chat with him on different religious topics and the satisfactory answers to my que rries on certain pertinent inter-religious points made me to think of the man as a compromising theosophist rather than a garrulous controversialist

I was much interested in his talks or rather popular lectures which he delivered to a large audience including men, woman and members of other sects and creeds I attended those sermons for three consecutive days and was much benifitted by his moral and religious precepts which represented the gist and essence of all the true religions His delivery and power of speech in Hindi and even in Gujarati which he spoke with same ease were remarkable and the audience heard him with rapt attention He did not confine himself to any particular topic but spoke on different aspects of religion and commented on the ethical and spiritual teachings of great sages of yore in a masterly fashion He mostly dwelt on the intricacies of human life, its miseries and troubles and showed the way how to get out of this tangle by means ascetic practices and austere habits through which a higher plane of spiritual life could be reached His philosophical analysis of the subjects he dealt with, was not only non technical and free from scientific terminology, but it was so clear cut, expressive and practical that it weht home to the hearts of his heares The parables and stories which he related by way of illustration were

इतनी असरकारक होती है कि प्रत्येक व्यक्ति उस बात को उसी समय कार्यरूप में परिणत करने की नितान्त आवश्यकता अनुभव करने लगता है।

महाराज श्री अपने धर्म के ही विद्वान नहीं हैं किन्तु आपने दूसरे धर्मों के सिद्धान्तों का भी अध्ययन किया है। धर्म ग्रन्थों के इस तुलनात्मक अध्ययन के कारण ही आपकी सभी धर्मों के प्रति सद्भावना है। आप विविध धर्मों में ईश्वरीय सत्य को देखते हैं। इसी कारण आप में अन्य धर्मों के अनुयायियों प्रति मित्रता सहानुभूति, प्रेम तथा सद्भावना जागृत हुई है। वर्तमान धर्मोपदेशकों में यह सहनशीलता नहीं पाई जाती। सुधारकों और राजनीतिज्ञों में तो यह और भी कम है। आप सहनशीलता तथा धर्मों में पारस्परिक मित्रता पर बहुत जोर देते हैं। आजकल की यह सब से बड़ी आवश्यकता है। मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि महाराज श्री जवाहरलाल जी सरीखे बहुत से उपदेशक हों। ऐसे उपदेशक ही धार्मिक सम्प्रदायों में मधुर सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। यदि अनेक जवाहरलाल होते तो राष्ट्रीय एकता का कार्य सरल बन जाता।

अन्त में मैं प्रार्थना करता हूँ कि महाराज श्री चिरजीवी हों और जनता को धर्म के पवित्र बन्धन में बाँधने तथा उसे स्वर्गीय आनन्द और अनन्त सुख का पथ प्रदर्शन करने के अपने महान उद्देश्य को पूरा करें।

२६—सौराष्ट्र द्वारे स्वागत

(श्री कालीदास नागरदास शाह एम ए एज्युकेशनल ऑफिसर, वढवाण स्टेट)

परमप्रतापी जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराजना दर्शनना तथा व्याख्यानो अनुपम लाभ वढवाण शहेरना श्री स्थानकवासी जैन संघ ने संवत १९९२ ना जेठ मास मा मलेल हता।

श्री सौराष्ट्र ना द्वार रूपी श्री वर्धमानपुरी मा पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज नो प्रवेश थयो त्यारे तेओश्रीना स्वागत माटे तथा दर्शन माटे जैन समाज मां जे आनन्द अने उत्साह उभराई रह्या हता ते अवर्णनीय हता। आखा काठियावाड ना जे शहेरो तथा गामडोना संघोने आ आवन ना खबर अगाउ पडेल हता। त ते संघोना सख्याबन्ध पुरुषो अने स्त्रियो पूज्य साहेब ना दर्शन माटे आवी पहोच्या हता। हजारो नी संख्या मां पूज्यश्रीनु स्वागत घणा हर्ष थी करवामां आव्यु हतु। वढवाण शहेर ना बाहरना भाग मा श्री हाथीपुरा मां आवेल श्री शहाजन नी विशाल धर्मशाला मां पूज्य साहेब तथा तेमनी साथे पधारेल अनेक शिष्यो ने उतारवा मां आवेल हता अने व्याख्यानो पण तेज स्थले राखवा मां आवेल हतां।

श्री महावीर प्रभुना समय मां जेम जैन तथा जैनतर पुरुषो अने स्त्रियो प्रवचन सांभलवा माटे हजारो ना टोला मा जता हतां तेम वढवाण शहेर मा पण जाति अने धर्मनो भेद जाण्या सिवाय सैकडों स्त्री पुरुषो व्याख्यान नो लाभ लेवा माटे आवता हता। पूज्यश्रीना आगमन थी खरेखर स्थानकवासी धर्मनो घणो उद्योत थया हतो। अने हालना समय मां श्री स्थानकवासी मथो मां एक या बीजा कारणे जे छिन्न भिन्नता थयेल हती तथा श्री महावीर प्रभुना फरमावेल सिद्धान्तो प्रमाणे वर्तन करवानु शिथिल थई गयु हतु, ते समये पूज्य साहेबनु आगमन एक महान धर्मप्रचारक धर्मोत्तेजक तरीके उपयोगी थई पडेल हतु। तेओ साहेबनु जैनधर्मनु ऊडु अने तलस्पर्शी ज्ञान दरेक सिद्धान्त ने सरल रीत समजाववानी शक्ति अति प्रशंसनीय वक्तृत्वशक्ति वगेरे गुणो थी श्रोताओ ना हृदय मां अंतर ना प्रेम अने उत्साह ना प्राण संजीवन थयां हतां, अने तीव्र गति थी वहेता हता।

आवा कठिन काल मा पांचमां आरामां पण चोथा आरानी स्थितिनु चित्र खडु करनार आ महान आचार्य प्रति एक एक व्यक्ति ना प्रेम अने पूज्य भाव उभराई जतां हतां। तेओ साहेब

नी सरलता, निर्व्याजता, सस्कारिता राष्ट्रप्रेम देदीप्यमान थई विद्युत नी माफक दरेकने असर करता हता। जन धमना ऊंडा ऊंडा सात्विक रहस्यो सादा दाखला दलील थी तेओ साहेब एवी सरल रीते समजावता अने एवी सचोट रीते असर करता के ते असर मनन्न तथा हृदय ना ऊंडा ऊंडा क्षेत्र मां सचोट रीते प्रसरती हती। अने तेथी ते समय ना काठियावाड मा ववायेल बीजो मा बहु सुन्दर वक्ष फली फूली नीकलेल छे।

राजकोट जामनगर मोरबी वगेरे स्थले पूज्य साहब चातुर्मास सधारवा कृपा करेल हती, जेना फल रूपे राजकोट मां जनगुरुकुल नी उत्पत्ति थयेल छे। जे सस्था आजे सारी प्रगति करी रहेल छे।

तेआ साहेब ना काठियावाड ना, प्रवास दरम्यान घणां वेर भेद भूली गया हता। अने धम प्रेम तथा मानव प्रेम मा मानवदयाना मोजाओ ससाररूपी दरिया मा उछली रहेल हता।

आजे विद्वानों अने तेवा साधुमार्गी उच्चतम रहणी करणी वाला साधुजीओ मां तेमनी मुख्य गणत्री छे। तओ सरलहृदयी उच्चतम ज्ञानी, अने बोलवान अनुपम छटा तथा उपदेशक तरीके एक महान विजेता काठीयावाड मां नियड्या छे एम सौ कोइए कह्या वगेर चाले तेम न थी।

३०—पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज

ले० श्री गौरीशकर दफ्तरी L C E सुपरिण्टेण्डिग इ जीनियर, बम्बई।

सने १९२३ २४ ना चौमासा मा ज्यारे महाराजश्री घाटकोपर मा विराजता हता त्यारे हुँ दसेक माइल दूर थाणा मा एक्जीक्यूटिव इजीनियर हतो। त्यारे महाराज श्री ना व्याख्यान माटे अवार जवार घाटकोपर जतो। त प्रसंगे तेओश्रीना व्याख्यान तेमनी वात समजाववानी छटा, तमना ऊंच चारित्र वगेरेनी मारा ऊपर घरिज ऊंडी छाप पडी हती। ते वखमाना तेमना प्रयासोने अंगेज घाटकोपर गाशाला सस्था हयाती मा आवी अने हाल पण ते सस्था जे उमदु काम करी रहेल छे तेनो क्षाभो यश पूज्य महाराज श्री जवाहरलालजीने आपवो घटे छे।

सने १९३७ मां म्हारा न्हाना भाईनो लग्न प्रसगे हुँ जामनगर डाक्टर प्राणजीवन म्हेता ने त्या गयेल, त्यारे पू० महाराज श्रीनु त्या चोमासु होई म्हारे अनेक रोज नो मेलाप थएल। ते दिवसो मा महाराजश्री साथे एक प्रश्न चर्चायेल अने तेओश्री तेनो करेल खुलासो आजे पण तादृश खडो थाय छे। सवाल ए हतो के जमानाने अगे आपणा साधु मुनिराजोए पण पोतानी रहेणी करणी मा फरफार करवो न घटे के? हालनु धोरण पूज्य लोकाशाए सवाओ पूव घडयु। त्यार बाद काल मां घणा घणा पलटा आवी गया। खास करीने छेला ३० ४० वष मां थएल अजब शोधो अने सुधारा ना जमाना मा वर्षो पहला नु बधाएल धोरण नीभाववु अशक्य ज मनतु चाल्यु छे।

पूज्य महाराज श्री नो जवाब हता के जवाब बे भागो मा वेहचवो जोइए। (१) एक तो चालु व्रतधारी साधुओ के जूना धोरण मुजब व्रतो आदरी बठा छ—जेवा के पोताने अने तेमना शिष्यो विगेरे—तवाओ ने माटे तो तेमनी फरज एज छे के तेमण लीधेली व्रतो सागोपांग पार उतारवा अने तेमा व्रतभग नो दोष क्यांय अथवा केवो नहीं।

(२) बीजो भाग रहया भविष्य ना धम उजालनाराओ जेओ व्रतधारी थया नथी। ते वाओ जरूर सारा अने विद्वान श्रवको नु एव मडल रची तमां चचा अने विचारनी आपले करता कांई—जमाना ने बंध बेस्तु धोरण नीपवाजी काढे—मोटे भागे पूज्य महाराज नो आग्रह श्रावक्नु धोरण जमाना ने बध बस्तु गोठववामां अने त प्रमाणे आचार मा मूकवा मां आवे त तरफ नो हता। ऊंचा चारित्रधारी श्रावको पण धमप्रचारम थई शक छे। अने आगम मा साधुपणा ना जूना रिवाज तेमने कडव अगर काल न नहीं बध बेसता लागता होय ता तेओ पोता

ने माट जरूर श्रीजु मार अने वध वेसतु धोरण नीपजावी शके छे। आ बात अगत पसन्दगीना नसटगी नी नहीं रहता सांप्रदायिक निर्णय अन धोरण नी बनवी जोइए।

पू० महाराज श्री आपणा स्थानकवासी गच्छ मां एक घणा अग्रगण्य मुनि छे। पोताना चारित्र चुस्तता, ऊँडा ज्ञान, समजाववानी शैली उदार विचार, गभीर वाणी वगेरे अनेक ऊचा गुणो थी आपणी जनतानी तेओ श्रीए घणी अमूल्य सेवा वर्षो सुधी बजावी छे। न तेथी ते श्रीनो आपणा सर्व ऊपर महा उपकार थयो छे। प्रभु तमने दीर्घायुष्य आपे एम प्रार्थना।

३१—दानवीर खा साहेव होरमशाह कुवरजी चौधरी, (एक पारसी सज्जन)

काठियावाड अनाथालय तथा चौधरी हाई स्कूल के भवन निर्माता राजकोट

पूज्य महाराज श्रीजवाहरलालजी नु गुणगान करवु ते पण जे आत्माए तेमना आत्मा नु अवलोकन कर्यु तेना थीज बनी शके।

मारे प्रथम थीज कहेवु जोइए के मने एमनो अगत परिचय नो लाभ लेवा बहु थोडी तक मली छे, एटले—तेमना व्याख्यान जे मे साभल्या छे न उपरज हु बे शब्दो कही शकु छु।

तेमनी विद्वत्ता पोताना परमात्मानी कृपा थी तेमना मा जे प्रज्ञा रूपे उद्भवेल छे ते तमणे पाताना जीवन मा उतारी छे। एटले एवा व्याख्यान करनारानी वाणी जनता नां आत्मा ऊपर शिक्षा रूपे असर कारक थाय, ए एक खरा सिद्धान्त नी वात छे।

एमना व्याख्यान मा थी जे बे वोलोए मारा ऊपर सचोट असर करी छे ते ब्रह्मचर्य अन भक्तिमार्ग नो महिमा छे।

आ रीत पूज्य महाराज श्रीए पोतानां जवाहरलाल' नाम ना खरा गुण प्रमणे जनता न ब्रह्मचय अने मुक्ति मार्ग ऊपर जे अति अमूल्य व्याख्यान अप्या छे त साभलनाएओ मांथी जेओए पोताना जीवन मा उतार्या हशे, तओ ज तेनो लाभ पामी पूज्य महाराज श्रीना व्याख्यान ना खरी कदर करशे अने गुण गाता रहेश।

बीजी तेमना व्याख्यान नी खूबी मन जणाई हती ते तेमनी जिंदगी पर्यन्त मा शुद्ध चारित्र ने परिणामे तमनी समझाववानी शैली, ऊँच विचार अने गम्भीर वाणी हता।

आ रीते पूज्य महाराज श्री पोताना जवाहीर ना नाम प्रमाणे गुणो धरावता होई ने तेमणे जनता नी जे अमूल्य सेवा बजावी छे त तेमना तरफ थी एक महान उपकार तरीके स्वीका रवाने आपणते हृप थाय छे।

तेमनो वियोग आपणने निराश करे ए स्वाभाविक हावा थी जनता मां थी घणा आत्माओ तेमनी साथे पगे चाली ने लाम्बो साथ आपी छुटा पडया हता ज हृदयना प्रेमनी भावना बगर बनी शकतु नथी।

महाराज श्री जन समाज नु जवाहर छे एम कहेवामा आवे छ पण महुवा मां कांई अपूर्णता मने देखाय छे। ते ए छे के त एक जन धर्म ना जवाहर करता सर्वधर्मो नु जवाहीर' तरीके गणवा ने लायक छे केमके तेमण विश्वधर्म ने ध्यान मां राखीनेज सघला व्याख्यानो जनता ने समजाव्या छे। थी तेओ जनोनी साथे बीजी सर्व जनता न प्रिय थई पड्या छे।

परमात्मा तेमनु दरेक रीते रक्षण करो देहना अन्न सुधी पूरतु आरोग्य भोगवो अने जनेपरिणामे पोता थी वननो लाभ जनता ने आपता रहे एवी महृदयनी भावना अने प्रार्थना थाय।

एक पुण्य स्मरण

३२—राजरत्न सेठ मचरशाह होरजी भाई वाडिया पोरबन्दर

पांचेक वर्ष ए पुण्यस्मरण ने काराए वही गयां परन्तु मानसदेशे ए सदा जीवन्त रहेश।

पोरबन्दर मां प्रतिदिन प्राहटना दोरा फूटे अन ज्ञान तरस्या मुमुक्षुओ मां प्राणने पगला भाणक

चौकनी उत्तरे स्थानिक दशा श्रीमाली वाणिआनी महाजनवाडी नी पगथार पर पलता। घडीआल ना नव ने पणकारे जडवाद डूब्या जगत ने आध्यात्मिकता न आदेश आपवा तप्या तरणि न तापने टालवा जर ने जजाल सरजी माया छायडी मा भूलेला जीवन नी साची केडी दर्शाववा उत्तरीय ओढेला प्रगट कायधारी, शान्ति ने अहिंसा नी साक्षात् सौम्य मूर्ति शा एक साधुराज पधारता अन जरा शा उन्नत आसने विराजता त्यारे तो उल्टेली मानवभेदिनी ललो ललो नमती तोये न नम्याना ओरना सेवती। एवो एमनो अप्रतिम पुण्य परिमल म्हेक हतो। पोताना प्रिय अने पथ्य प्रवचन नो प्रारम्भ प्रार्थना थी आदरता ने जणे जुग जुग नो जोगन्दर सर्वधम समभा वनी आराधना ने आराधवो न होय एवी आत्म प्रतीति थती एना नयनो तपप्रभानी पुण्य प्रोज्व लता थी प्रकाशता ललाटे तत्त्वचिन्तन नी रेखाओ गोरानी ने ज्ञानभारे नमता पोपचा मा थी अभ्यास ने अनुभवना अमी आपोआप ढलता। एमना सौम्य ने साधु जीवन ना प्रेरणा बोल क कै ने 'निद्रा' मां थी लवड दई ने जगाडता। एता शोधी दाखवता हता जीवन मां, जगतमा ने जिंद गानी मा हटाई गयला जवाहीरो ने। हता जन आचाय, परन्तु समत्व ने सत्याग्रह भावे थया हता जनो ना आचाय उद्घोषता श्री महावीरना मोंघाभूला उपदेश भत्रो परन्तु पारकाना गुण धम ने परभागवानी ने नाणवानी महानुभाविना एमने सहज वरी हतो। ए महानुभाव महाराज ते जैनाचाय श्री जवाहीरलाल जी महाराज। जनता ने एओश्री नो केवल बीस दिवसनो ज लाभ मल्यो परन्तु त्रीस वर्षे पण न पचे एवी ए आत्म औषधि हती। पुण्य होय, पुरुषाथ होय तो पचे।

शास्त्रो ने शोध, सत्वसग्रही आचारी उद्घोधे ने आचरावे एवा ए अहिंसा ना आचाय छे एमनी अहिंसा न भावना विशाल ने विस्तृत छे। व्यावहारिक जीवन मा जीवी जीवी शकाय एवी छ। एक अथवा अन्य प्रकारे हिंसामा डूबेली जनता ने एमनु अहिंसा दर्शन आध्यात्मिकता नु वातावरण उभु करे छे। ने ते साथे पोताने सदा अपूव मानता मानव मां केवी ने कटेली अमाप आत्मशक्ति सदुपयोग साधे तो वसेल छे तेनु आत्मदर्शन थाव छ। आवा एक तपस्वीना सद्बोध श्रवण नो सुयोग मन जे सांपडेलो अने सघनु मारु आ जीवन जीवन धन रहशे। आत्म सागरना मोंघामूलां मोती ने मूलवतां आवडे तो ए सतो नी सात्विक भूमिका जवाय।

सतनी ए पण्य प्रोज्वल सात्विकता ने मारा सदाना सहस्रधा वदन हो।

३३—मेहता तेजसिंह जी कोठारी, बी०ए०, एल-एल० बी० कलेक्टर उदयपुर

श्रीमद् जनाचाय पूज्य श्री १०८ श्री श्री जवाहरलाल जी महाराज वाई सप्रदाय व जैन समाज म ही नही किन्तु ससार की इनी गिनी उच्चकोटि की महान आत्माओं मे से एक महान आत्मा जीती जागती तपश्चर्या की सजीव मूर्ति एव धम की एक महान विभूति हैं।

चरित्र गठन तपबल आत्मधम दृढता सयमशीलता, शास्त्र निपुणता एव विद्वत्ता आपके प्रवचन श्रवण के पहले ही प्रथमदशनमात्र मे दर्शक को हृदयगम होकर उसे प्रभावित कर देती है। यदि ऐसे सौ पचास महात्मा भी इस समय विद्यमान होकर देशसेवा, समाजसेवा एव धमप्रसार मे अपना सवस्व लगादे तो गृह समाज एव राष्ट्र का महान उद्धार होकर उन्नत दशा की प्राप्ति अवश्यमेव सुलभ हो सकती है।

मुझे आपके दशनो का एव सत्सग का शुभ अवसर मेरे पूज्य स्व० पितामह के पुण्य प्रताप से प्राय प्राप्त हुआ करता था और लगभग मेरे बालकाल म (अब से पाच वप पीछे तक जब तक पूज्य पितामह आराध्य थ व अब भी) अब तक करीब तीस वप का समय हो जाता है आपके तपोबल दर्शन श्रवण एव मनन स दिनों दिन मेरी भावना आपके सद्गुणो की ओर बढती रही है। सत्य अहिंसा, ब्रह्मचर्य परिग्रह त्याग एव तपश्चर्या आपके य आपके धर्म के तीव्र सद्गुण हैं।

आपकी विशेष प्रशसा करना मेरे जैसे अल्पज्ञ एव सामान्य व्यक्ति के लिए सूर्य को दीपक दिखाने के तुल्य होगा किन्तु आपके प्रति श्रद्धा एव भक्ति ने मेरे मनमन्दिर मे स्थान क्यों लिया और उसका मूल कारण क्या था इसको यदि प्रकट न किया जाय तो मैं अपने आपको कर्तव्यशून्य एव कृतघ्न मानने को बाध्य हो जाता हू । अब इस विषय मे दो शब्द नीचे कहना चाहता हूँ ।

मैं ऊपर कह चुका हूँ कि एस महात्मा की सेवा का महान लाभ प्राप्त होना केवल मात्र मेरे पूज्य पितामह स्व० कोठारी जी साहब बलवन्त सिंह जी भूतपूर्व प्रधान राज्य मेवाड की पहली कृपा का कारण था, ५ वर्ष की आयु मे मेरी माता का स्वर्गवास हो गया तब से पूज्य पितामह ने मुझे अपने पास ही रख लालन किया मेरे शिशु काल से यौवन काल तक जब तक मुझे पूज्य पितामह की सेवा का लाभ एव सौभाग्य मेरे भाग्य मे सदा रहा एव उनका कृपा रूपी छत्र मेरे मस्तक पर सुशोभित रहा लगातार पितामह की सेवा मे मेरे बराबर साथ रहने से पूज्यश्री की सेवा का सौभाग्य भी प्राय प्रतिवर्ष मुझे मिलता ही रहा और उन्ही पूज्य पितामह की कृपा का फल है कि उन्ही संस्कारों के कारण अब भी पूज्यश्री की सेवा का लाभ लेने की सद्भावना बनी हुई है ।

पूज्य पितामह अन्धविश्वासी एव वेशपुजारी न थे वे विचारशील एव स्पष्ट भाषी व्यक्ति थे । या तो जैन समाज मे मुख्यत बाईस सम्प्रदाय के साधुओ के प्रति उनके विचार श्रद्धायुक्त एव भक्ति को लिए हुए न थे, यही नहीं बल्कि विरोधी भाव को लिए हुए कहा जाय तो भी अत्युक्ति नही होगी उन्हें इन साधुओं के प्रति प्रेम न था बल्कि यहाँ तक अमान्यता थी कि १९४५ के वर्ष हमारे घर में पितामह की विमाता ने जैन साधुओं का चातुर्मास करवाया तो मेरे चातुर्मास मे कारण विशेष पर उन्होंने उन्हें घर से निकलवा दिया था ।

सयोगवश १९५३ वि० के वर्ष स्व० पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का चातुर्मास उदयपुर मे हुआ तब आपका भी स्व० पूज्यश्री से समागम हुआ पितामह ने सथारा व स्वहत्या करने में क्या अन्तर है, मैले कुचले कपडे की क्या आवश्यकता है इत्यादि इत्यादि अनेक प्रश्न स्व० पूज्य श्री से किये और उन सब ही प्रश्नो का सतोषजनक उत्तर मिलने व जैन धर्म के विशेषत हृदयगम होने पर आपकी विरोधी भावना मिटकर यकायक इस धर्म के प्रति उच्च भावना एवं श्रद्धा बढने लगी और तब से लेकर अन्त समय तक आप पूज्यश्री की सेवा का लाभ बराबर उठाते रहे और हमेशा के लिये अनन्य भक्त बन गये । इतना होने पर भी जिस विषय में आपको शका रह जाती खुले दिल पूज्य श्री से प्रश्न कर शंका समाधान करते थे । हाँ मे हाँ मिलाना व अन्धविश्वासी बन हाथ जोडे रहना यह पितामह के स्वभाव से परे था पूज्य पितामह को महाराणा साहब की सेवा का अवसर प्राप्त हुआ और स्व० म० सा० फतहसिंह जी जसे न्यायशील, नीतिनिपुण, धर्म निष्ठ नरेश के दीर्घकाल तक मुख्य मन्त्री रहे आप अपने विचारो के धनी एव चरित्र के मानी थे ससार के सुख व दुख दोनों का आपको अनुभव था । जो आप से परिचित हुआ वह प्रभावित हुए बिना नहीं रहा । ऐसे योग्य अनुभवशील वयोवृद्ध मन्त्री को दोनो पूज्य श्री के तपोबल ने क्योंकर अपनी ओर आकर्षित किया, इस विषय मे क्या ही अच्छा होता यदि पूज्य पितामह द्वारा उनके जीवन काल मे उनकी सम्मति के दो शब्द लेखनी द्वारा पृष्ठ मे अवतीर्ण हो जाते किन्तु सचमुच दुख का विषय है कि इस देश मे प्राय इतिहास एव ऐतिहासिक सामग्री की ओर लोगो की धारणा व लक्ष्य बहुत ही कम रहता है । पूज्यश्री जैसे महापुरुष ने हजारों ही उपकार किये और कई एक को धर्म मार्ग दिग्दर्शन कराया होगा किन्तु इन शुभ कार्यों का सग्रह, जो भावी जनसमुदाय को भी कल्याणकारक एव सन्मार्गदर्शक बन सके करने की ओर अब तक उद्योग नही किया गया । फिर भी किसी कदर यह जान कर सतोष एव हर्ष होता है कि पूज्यश्री के जीवन चरित्र की सामग्री

तैयार की जा रही है। ऐसे समय में पितामह के विद्यमान नही होने से उनकी लिखित सम्मति प्राप्त नहीं है, किन्तु मैं पूण विश्वास के साथ कह सकता हू कि स्व० पूज्यश्री एव वतमान पूज्यश्री के प्रति पूज्य स्व० पितामह के विचार उच्च एव श्रद्धा युक्त थे और अन्त समय तक वे पूज्य श्री के अनन्य भक्त रहे हैं। इन दोनो महापुरुषा के आदश चरित्र, धर्मतप एव सयम के बल ने पितामह को प्रभावित किया और वे नित्य इनके सत्समागम के लिए तृषित ही रहे। पूज्यश्री के दर्शन, श्रवण एव मनन से पूज्य पितामह ने धार्मिक तत्वा का मनन कर बहुत कुछ लाभ उठाया। और आत्मोन्नति में साधक बनाया था।

मेरे दो शब्द प्रकट करने से पितामह के विचारो का रूप किसी अश मे भी यहाँ परिणित हो सका है तो मैं अपने को कृतकृत्य मानता हुआ परम पिता परमात्मा से प्रार्थना करता हू कि ऐसे सन्मार्गदर्शी महात्मा को आने वाले कई वर्षों के लिए चिरायु करे और एक वट की अनेक शाखा तुल्य ऐसे महापुरुष से अनेक महापुरुष बन जायें व साथ ही पूज्यश्री के युवाचार्य श्री गणेशी लाल जी महाराज आदि सन्त समुदाय पूज्य श्री के गुणों का अनुकरण करते हुए स्व आत्मा एव पर आत्मा के कल्याणदायक एव हितकर सिद्ध हो।

जैन शासन की वर्तमान परिस्थिति और परम प्रभावशाली आचार्य श्रीजवाहरलालजी म० जैसे मुनिवरों की आवश्यकता

३४—(डा० प्राणजीवन माणिकचन्द मेहता, M D., M S, F C P S
चीफ मेडिकल आफिसर, नवानगर स्टेट)

महाराज श्री जवाहरलालजी तत्वज्ञानोपदेश और अपने विशुद्ध चारित्र द्वारा जैन धर्म और जैन चतुर्विध सघ की उत्कृष्ट सेवा कर रहे हैं। भक्त गुरु की प्रशसा करे यह प्रेम और विनय की सामान्य प्रथा है। उसके द्वारा कहे गए प्रशसावचन यथार्थ हैं या अयथार्थ, यह जानने के लिए वैज्ञानिक दृष्टि की आवश्यकता होती है। जब इस दृष्टि से गुरु की श्रेष्ठता सिद्ध होगी तभी वे जगत् के वदनीय गिने जाएँगे।

जैन तत्वज्ञान विश्व का अनुपम तत्वज्ञान है। जैन साधु सस्था कठोर चारित्र की उच्चतम श्रेणी पर टिकी हुई है। नवयुग में श्रावक सस्था धर्मरहित होती जा रही है। ऐसे समय में धर्म की ज्योति जाज्वल्यमान रखने वाले उच्च चारित्रवान् साधु ही हैं। अपना चारित्र सर्वदा पूर्ण विशुद्ध रखते हुए जैन जनता को धर्मोपदेश देने वाले, विश्वप्रेम की भावना पैदा करके समाज को रुचिकर, हृदयगम और देश कालानुकूल व्याख्यान देने वाले साधु ही जैनधर्म की ज्योति को अखण्ड रख सकते हैं।

ऐसे परम प्रभावशाली महाराज श्रीजवाहरलालजी के दर्शन हमारे लिए बड़े भाग्य की बात थी। वि० सं० १९९३ के शेषकाल में एक मास निवास करने के लिए पूज्य महाराज जाम नगर आए। उस समय आपके दाहिने घुटने में शोथ के कारण दर्द हो रहा था। मास पूर्ण होने पर आपने विहार किया। यहा से पाच मील 'हापा' नामक गाव में पहुँचते ही दर्द बढ़ गया। उस व्याधि के उद्भव से जामनगर की जनता का भाग्य खुल गया। पूज्यश्री का चातुर्मास मोरबी में निश्चित हो चुका था। उसके बदले जामनगर में ही चातुर्मास हुआ। सूर्यकिरण चिकित्सा के लिए पूज्यश्री को डोली में बैठाकर जामनगर लाया गया। उस मुनीश्वर के चारित्र दर्शन और

अनुपम उपदेश से जनता को बहुत लाभ मिला। इतने समय में सोलेरीयम के प्रभाव से पूज्यश्री के घुटने की व्याधि निर्मूल हो गई। चातुर्मास पूर्ण होने पर आपने पैदल विहार किया।

एक बार उनसे प्रार्थना की गई कि विद्युत्चिकित्सा से तत्काल आराम हो जायगा। धार्मिक बाधा के कारण पूज्यश्री ने उसे स्वीकार नहीं किया।

महाराज श्री की हम कितनी प्रशंसा करें? प्रतिभाशाली देह, मधुर वाणी, तेजस्वी मुखारविन्द, गद्यपद्य दृष्टान्त तथा शास्त्रीय प्रमाणों से भरपूर प्रवचन। केवल जैन जनता के लिए ही नहीं किन्तु जामनगर की अन्य जनता के लिए भी महाराज श्री का प्रवचन रुचिकर तथा आकर्षक था। न किसी की निन्दा, न किसी के प्रति बुरे विचार, विवाद में भी उदार और उदात्त भावना आदि अनेक गुणों से आकृष्ट होकर अनेक विद्वान् मध्याह्न और संध्या समय पूज्यश्री के पास धर्म चर्चा के लिए आते थे।

काठियावाड़ को दो वर्ष के बदले तीन वर्ष महाराजश्री सदुपदेश का लाभ मिला। यदि पाव में दर्द न होता तो दो वर्षों में ही अपना संकल्प पूरा करके पूज्यश्री दूसरी जगह पधार जाते।

महाराज श्रीजवाहरलालजी पंचम आरे में जैनधर्म के आभूषण रूप हैं। जैनधर्म की ज्योति प्रकाशित रखने के लिए आपने यावज्जीवन उच्चतम चारित्र का पालन किया है। लोकोपयोगी पद्धति से जनता को उपदेश दिया है। सहस्रों जीवों को सन्मार्गगामी भी बनाकर स्वकीय साधुजीवन दीप्त किया है।

उस मुनि को मेरा अनन्तानन्त वन्दना हो।

३५—श्रीरसिलाल थेला भाई मेहता, एज्यूकेशनल इन्स्पेक्टर, राजकोट स्टेट

From a few of the sermons I attended, however, I could see, as everybody else, that the Maharaj Shree adopted his teachings and methods in such a way as to suit all conditions of modern life He expounded the spiritual truths in a simple and lucid, yet vigorous and impressive manner which appealed not only to the inellect but also to the hearts of large congregation of men and women of all classes, Jains of course preponderating who, one and all, though they could ill afford to miss the sermon ever for a day

The precepts of Maharaj Shree suited men and women of all castes creeds and communities, and in all circumstances of life, be they philosphers or simple folk-a peculiar aspect which was the secret of his success as an ideal Guru He stressed the doctrine of Universal love and brotherhood and warned the Jain Devotees against internal dissentions asking them to realise that self seeking had no place in the higher ideal of humanity

What charmed the hearers most was the facts that he invariably prefaced his discourses by prayers explaining their efficacy as an aid to meditation and elevation of the mind

He showed in the course of his narratives, how a householder (गृहस्थ) can best discharge his duties as such by a strict

observance of the religions vows and abandonment of last hatred, unity and other foes of mankind, as running after earthly pleasures only tend to shorter the happiness and peace of mind

In conclusion it would be no exaggeration to say that the education of the soul under such a worthy Acharya as the Maharaja Shree can alone elevate our minds to the highest prefection our life would be worth living only if we know ourselves and what we live for

This was all the essence of the Maharaj Shree's teachings as I understand it

मैंने महाराज श्री के थोडे समय से व्याख्यान सुने। उनसे मालूम पडा कि आपके उपदेश तथा भाषण ऐसे ढांचे म ढल होते हैं जिससे वतमान जीवन की सभी अवस्थाओ के लिए उपयोगी बन सकें। आप के व्याख्यान सुन कर प्रत्येक व्यक्ति इस बात को जान सकता है। आप आध्यात्मिक सत्यो को सरल तथा सुगम किन्तु ओजस्वी एव प्रभावशाली ढग से प्रकट करते थे। आप के भाषण विद्वानो का ही नही सुहात किन्तु सभी श्रणियो के स्त्री पुरुष उन्ह हृदय से पसन्द करते हैं। जनियो की सख्या निस्सदेह बहुत अधिक रहती है। वे तो एक दिन क लिए भी आपके व्याख्यान को नही चूकना चाहते।

महाराज श्री क उपदेश सभी जाति, पथ समाज तथा जीवन की अवस्थाओं के लिए उपयोगी होते हैं। बडे बडे दार्शनिक और साधारण गृहस्थ आपके व्याख्यानो से समान लाभ उठात हैं। यह विशेषता आदश गुरु की सफलता का रहस्य है। विश्व प्रेम तथा बधुत्व के सिद्धान्त पर आप बहुत जोर देत थ। जनधम के अनुयायियो को आतरिक कलह से दूर रहने का उपदेश देते थ तथा कहते थे कि मानवता के उच्च आदश म स्वाथ साधना का कोई स्थान नहीं है।

वे अपन सभी व्याख्यान ईश्वर की स्तुतियो से प्रारम्भ करते थे। इसके बाद प्रायना का महत्व बताते हुए कहत थे कि आत्मचिन्तन तथा मानसिक उन्नति क लिए यह समर्थ साधन है। यह बात सभी श्रोताओ को मोह लेती थी।

कथानको के आख्यान में आपने बताया कि गृहस्थ अपने कत्तव्यों को उत्तम रूप स कैसे पाल सकता है। धार्मिक व्रतो का कठोर पालन, राग द्वेष, अहंकार तथा मानव जीवन के दूसरे शत्रुओं का त्याग श्रावक को ऊँचा उठा सकता है, भौतिक सुखो के पीछे दौडना मानसिक शान्ति तथा आनन्द को नष्ट कर देता है।

अन्त म यदि यह कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी कि ऐसे आचार्यों की सेवा म आत्म शिक्षा प्राप्त करके ही हमारा मस्तिष्क ऊचा उठ सकता है तथा पूणता प्राप्त की जा सकती है। हमारा जीवन तभी सफल है जब हम अपने को पहिचानें तथा यह जानें कि हमार जीने का क्या प्रयोजन है।

मैंने जहाँ तक समझा है पूज्य श्री क उपदेशा का यही सार है।

३६—डा० ए० सी० दास, एम० डी० (U.S A) बबई

I had a great fortune to meet Pujaya Shree Jawaharlalji Maharaj (a Jain Sadhu) twice or thrice at Jalgaon and Ratlam I had also occasion to listen to his discourses an spiritual subjects, which has convinced me that he is a great apostle of self renun

ciation and realisation of truth, which is the only path of peaceful salvation in human lives

जलगाँव और रतलाम म पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज के दर्शन करने का मुझे दो बार सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आध्यात्मिक विषयो पर उन के व्याख्यान सुनने का भी अवसर मुझे मिला है। इससे मेरी धारणा बन गई है कि आप आत्म त्याग और सत्य की खोज के महान् प्रचारक हैं। मानव जीवन म शान्ति और दु खा से छुटकारे का यही एक माग है।

३७—डा० एस० आर० मुलगावकर एफ० आर० सी० एस०, बम्बई

My memory goes back to the year 1923 when I saw Pujya Maharaj Jawaharlalji at Jalgoan, when he had a septic infection in the hand As it is well known such infection are very painful and one of the things that was impressed on my mind was the fortitude with which bore the pain There were many of his followers and among them my friend, the late M/S Amrit lal Rai Chand Javeri, Those were all Sthanakwasis, who are a division of Shvetambari Jains The Pujya Maharaj, who was then about 47 years old, bore his infliction with great patience and almost cheerfully The thing that impressed me most as I have said was his fortitude and great patience

मुझे वे दिन याद आ रह हैं जब १९२३ म मैंने पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज के जलगाँव मे दशन किए थे। उस समय उन के हाथ मे जहरीला फोडा हो गया था। यह बात सभी जानते हैं कि ऐसे फोडे भयङ्कर कष्ट देने वाले होते हैं। जिन बातो ने मुझे प्रभावित किया उन मे स एक उनकी सहनशीलता है जिसके द्वारा उन्होंने कष्ट को सहा (बिना क्लोरोफार्म सूँघे ऑपरेशन करवाया था)। उस समय उन के बहुत से अनुयायी उपस्थित थे और उन म मेरे मित्र स्व० सेठ अमृतलाल रायचन्द झवरी भी थे। वे सभी स्थानकवासी थे जो कि श्वेताम्बर जैनों का एक फिरका है। पूज्य महाराज न जो उस समय ४७ वष के थे, उस कष्ट को धैर्य और सवथा प्रसन्न रह कर सह लिया। जसा मैं पहल कह चुका हूँ मुझ पर सब से अधिक प्रभाव डालने वाली बात पूज्य श्री की सहनशीलता और महान धैय है।

३८—श्री इन्द्रनाथ जी मोदी बी० ए०, एल एल० बी०, जोधपुर

I consider it a privilege to have this opportunity of offering my humble tribute of devotion to His Holiness Maharaj Shree Jawaharlalji It was about twelve years ago that I had the esteemed opportunity of sitting at the feet of Guru Maharaj during his Chaturmasa in Jodhpur His remarkable personality and greater still his reasoned exposition of the Jain religion, his fear less out look on the many burning problems of modern life and more than all the magnificient catholicity of his teachings was little short of a revelation to me To my mind today as it was is vivid the picture of heat broken Jodhpur at the departure of His Holiness from our midst, and if I am permitted to say so, few

religious personalities have created greater impression on my little self then that of the great Maharaj His Holiness is without doubt the pride of the Jain wherever they may be and occupies a highly honoured place whenever religious and ethical thought and culture shine in their true light It is my earnest hope and prayer that the Guru Maharaj may bespared long to help, heal the gaping wounds of the erring humanity irrespective of caste or creed

पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज के प्रति भक्तिपूर्ण श्रद्धाजलि प्रकट करने का अवसर प्राप्त होना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। बारह वर्ष पहिले गुरु महाराज का चातुर्मास जब जोधपुर मे हुआ था उस समय मुझ उनकी चरणसेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ था। आपका असाधारण व्यक्तित्व और उससे भी बढ़कर जनधर्म के सिद्धान्तो का युक्तियुक्त प्रतिपादन आधुनिक जीवन की ज्वलन्त समस्याओं पर निर्भय विचार और सब से अधिक स्वर्गीय विश्वप्रेम से परिपूर्ण आपके उपदेश मेरे लिए ईश्वरीय सत्य के समान थे। पूज्यश्री के विदा होते समय जोधपुर को जो हार्दिक दुख हुआ उसका चित्र मेरे हृदय में अब भी स्पष्ट रूप से अंकित है। पूज्यश्री का मुझ पर जो प्रभाव पड़ा ऐसा किसी दूसरे धार्मिक नेता का नहीं पडा। निसन्देह पूज्यश्री सभी जैनो के गौरव हैं चाहे वे कही भी रहते हो। जहाँ भी धार्मिक एव नतिक विचार तथा संस्कृति अपने वास्तविक प्रकाश मे चमक रहे हैं वहाँ पूज्यश्री का बहुत ऊँचा तथा सम्मानित स्थान है। मेरी हार्दिक कामना है कि गुरु महाराज दीर्घकाल तक जीवित रहे तथा जाति और पन्थ की पर्वाह न करते हुए गलत रास्ते पर चलती हुई जनता के बढते हुए घावो को भरने म सहायता करें।

३९—श्री शभूनाथ जी मोदी, सेशन जज, उपाध्यक्ष साधुमार्गी जैन सभा, जोधपुर

मुझे जोधपुर के चातुर्मास के समय श्रीमज्जनाचार्य पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० के उपदेशप्रद व्याख्यान श्रवण का सुखद सौभाग्य प्राप्त हुआ। पूज्यश्री की विद्वता, व्याख्यान गम्भीरता, विवेचन शक्ति की पटुता सैद्धान्तिक तात्विक रहस्योद्घाटन की दक्षता ही उनकी मुख्य विशेषताएँ हैं। आप श्री मे व्याख्यानो में एक ऐसी चमत्कारान्विता शक्ति की प्रधानता रहती है जो कि जन व जनेतर सभी जनसमुदाय के हृदयपट पर समान रूप से धार्मिक प्रभाव अंकित करती है।

आप श्रीमान के प्रकाण्ड पण्डित्य से केवल जैन विद्वान ही मुग्ध नहीं हुए हैं अपितु जनेतर जनता भी पर्याप्त मात्रा मे प्रभावित हुई है। पूज्यश्री की इस गौरवगाथा पर हम व हमारी समाज को नाज है, साथ ही शासननायक से प्रार्थना करते हैं कि पूज्य श्री दीर्घायुष्य होकर जैन जनता का विशेष कर्तव्य ज्ञान कराने मे सहायक सिद्ध हो।

४०—डाक्टर मोहनलाल एच० शाह M B B S (Bom) D T M (Zia) Z U (Wien)

प्रतापी पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज नी अस्वस्थावस्था बखत जलगाँव मां त्रण मास जटलो लाम्बो वखत सेवा करवानो अलभ्य लाभ मने मल्यो हतो।

पूज्य श्री ना पोताना मन ऊपर नो काबू देह पर नी अममत्व, प्राणिमात्र प्रत्येनो उभरातो अनुकम्पाभाव अद्भुत अनुभव्या। एमनो अने एमनी साथे ना मुनिमडल नो त्याग, सयम, शान्ति, ज्ञानरमणता अने चरित्रशीलताए मारा ऊपर अद्भुत जादू कर्यु। अहन्नीति ऊपर ना एमना व्याख्यानोए मारा मन ऊपर घणीज ऊडी असर कीधी हती। आ समय मारा जीवन माटे परम सुख अने शान्तिमय हतो। जीवन मा आयो छ य गला थोडी पण मन ता स्वर्गीय सुख अनुभवाय एम मने लागे छ।

६ उठने से पहले प्रत्यक व्यक्ति में यह दृढ़ विश्वास जम जाता था कि वे वास्तव म मानवता के महान् उपदेशक, गम्भीर विद्वान, सुधारक तथा सबसे ऊपर महान् देशभक्त हैं।

७ यदि जवाहरलाल जी महाराज गाडी से मुसाफरी करने में स्वतन्त्र होते और उन्हें समस्त ससार की यात्रा के लिए अनुमति मिल जाती तो इसमें सन्देह नहीं है कि वे ससार म करोडों व्यक्तियों को अपना भक्त या जैनधम का अनुयायी बना लेते।

८ श्रीजवाहरलालजी महाराज उन महापुरुषो मे से हैं, जो जनता के आध्यात्मिक तथा नतिन जीवन को ही ऊँचा उठाने की कोशिश नही करते, किन्तु उन विचार तथा शक्तियों को भी अस्तित्व म लाने की कोशिश करते हैं, जिन स व एक बडे परिमाण म जनता का साधारण दनिक जीवन नियन्त्रित तथा नियमित होता है और जो उनके दृष्टिकोण तथा विचारों पर स्थायी असर डालते हैं। वे जहाँ जात हैं वहीं अपना स्थायी तथा कभी नही मिटन वाला असर डाल देते हैं वहाँ एक आश्चयपूण आध्यात्मिक वातावरण पदा कर देते हैं और उन हजारो व्यक्तियों को आलाक प्रदान करते हैं, जो इसक लिए अँधेरे म भगड रहे हैं।

९ टॉमस कार्लाइल के शब्दो मे मैं श्रीजवाहरलालजी महाराज की महानता का उपसहार करता हूँ— 'मानवसमाज की अधकारपूर्ण यात्रा मे महापुरुष अग्निस्तम्भ हैं। वे नक्षत्रो के समान चमकते रहते हैं, बीती हुई घटनाओं के सदातन साक्षी हैं, भविष्य में प्रकट होन वाली बातो के लिए भविष्यसूचक चिह्न हैं तथा मानवप्रकृति की मूर्तिमती संभावनाएँ हैं।

१० वे चिरकाल तक बने रहें तथा उनकी बौद्धिक तथा शारीरिक शक्ति आजीवन काम देती रहे जिससे वे मानवसमाज की आध्यात्मिक तथा नैतिक उन्नति के अपने लक्ष्य को जारी रख सकें।

श्रेष्ठ ज्ञान और चरित्र के धनी

(श्री मणिलाल एच० उदानी० एम० ए० एल-एल० बी० एडवोकेट, राजकोट)

42

I had the good Luck of knowing Jainacharya pujya Shree Jawaharlalji, when he happened to pass his *monsoon sojourn* at Rajkot in the year 1936 I heared from the city that an orthodox Jain Saint has come to Rajkot in the Bhojanshala and was giving his lectures which were very valuable I inquired from different direction and heard that he was very particular in rites & rituals according to the Jain Sutra, was keeping anti granted dress and that many Persons who were orthodox Jains were collecting round him every day for religious discussions

It came into my mind then not to lose the opportunity of paying a visit to him and coming into his contact So I went to his place one afternoon and saw him On seeing the very face of pujya Maharaj Shree and his brilliant forehead his deep and peaceful discussions I could immediately find that he was a person of sound knowledge His very physiognomy impressed upon me and inspired respect for him in my heart This was our first meeting A learned pandit was reading a Sanskrit Book of

philosophy with him and he was following every Stanza with very great interest I could find that at this age Maharaj Shree was studying Sanskrit like student He was comparing the Jain and Vedant philosophy and minutely showing the substance and the truth of Jainism I could see that he had read all the Jain Scriptures thoroughly well and had a sound knowledge of the Magdhi language After that his reading with the pandit was finished I commenced disussions and after a few questionnaire, I could see the vast knowledge that Pujya Maharaj Shree had acquired and thoroughly dijested We went upon discussing the soul philosophy according to Jainism and he explained it fully well to my entire satisfaction He could show me how soul and matter were to different objects and with what chord of Karm as they were joined together and causing birth and re-birth His simplicity of style and masterly way of explaining were sufficient proof of his vast knowledge and great experience Our first interview was sufficient to impress upon my mind that he was one of the Geno in the Jain Saintsangh the preaching of such a great person would be very useful to the society

Then I went to his lecture A number of Sadhus were sitting on different benches with Pujya Maharaj Shree in the middle He commenced with a manglacharan (introductory song) with a tringling voice and in a Chorus and then pujya Maharaj Shree caught one sentence from it and went on preaching for an hour and a half on one word He never looked up into any of the books which is usually done by other Sadhus His brain was like an ocean from which all the waves of thought were coming out with all their force In the lecture, he was preaching sound principles of Jainism, comparing them with other religions, taking out the substance of all and giving out the cream of all his vast reading to the public and I found that even if a man were to attend, understand, grasp and digest one lecture it was sufficient for him to get the right knowledge and to acquire Samkit (true knowledge) He was illustrating every philosophical text with illustrations from the Jain Sutras which were also at the tip of his tongue It was in the same style that Lord Mahavir was preaching Jain principles in the Samavsaran He concluded his lecture with blessings and benedictions to the audience Having found the Pujya Maharaj Shree was an ocean of right knowledge I made up my mind then not to miss any of his lectures, although

it was difficult for me to spare time in the morning and to go to such a long distance every day But the value of his lecture was thousand times more precious then my time and so I went to his lectures practically every day during his stay at Rajkot

In the other lectures I could find various distinguishing features, although orthodox in stayle & dress, I could find that in his knowledge he was upto date, with the present educated persons who very rarely attend the Jain temples, would find from his lectures anything and everything about religious, social, moral, intellectual & practical lessons of life, If a man were to follow his directions, he can move in the fashionable society with perfect ease and comfort can aquire wealth name and fame and still remain a true Jain who would be honoured in every society and who can still conquer his karmas & acquire salvation One day when he was talking of the educated persons he distinguished independence from insolence with a masterly hand, and convinced that Everybody should have independence of thinking but it should be in perfect harmony with the principles of religion and with complete respect to the leaders It should not be self conceited and insolent which is always due to want of thorough knowledgde he impressed very well on different occasions upon the necessity of complete obedience to the parents and respecting their experienced mind He said that real education consists in acquiring knowledge and in putting it into practice by a correct understanding of the various phases of life and how to become useful to society

One day he gave preaching on the subject of birth-control and it was a very important subject & his lecture was also very valuable In these fashionable times when the value of Brahma charya its masterly results are totally forgotten and when men and women forget their real manners of living and go about openly in the publications, send for advertisement of birth-control appliances Pujya Maharaj Shree s lecture was a marvelous lesson He started with the stavan of lord Neminath and showed the instance of his great Brahmacharya He said that the world was a garden and all the living beings were different trees in it Man is a mango tree They do not know how to keep the mango tree sweet and fertile People have no control over the tongue They have no control over the other organs and thus they create children, make themselves miserable and come into trouble, if

they have to preserve Brahmacharya power, knowledge, position strength and religion would all come automatically He gave many instances of greatmen, who by preserving their strength, left an immortal name in the world He said "man has to understand whether passion is the enemy of men or whether creation is the enemy This is to understand by the right sense and there would be solution to problems He gave the instance of Bhishampitamah & explained how people of India were strong in the past and passionate thoughts and waste of energy He gave the instance of Sati Anjana & impressed upon the audience that it was absolutely necessary for every man and woman to own benefit that every man should be devoted to his wife and every woman should be devoted to her husband If the generation is getting weaker, every day, it is due to bad company and their own actions of thinking

One day he gave a very useful lecture upon the present condition of the society and he explained so nicely the necessity of complete union in the family in the country, and in all the societies, people should do away with all sorts of jealousy and evil thoughts for each other, should regard every creature as a soul should maintain divine love towards each other and should see how he can be useful to the society and to the humanity in general On the New Year's day people put on new clothes and go to their friends and relatives for offering their best wishes but on the very next day they put quarrells and so all such false show is absolutely unnecessary and there should complete harmony and feelings for all, pujya Maharaj Shree said 'disiples of shri Mahaveer should visit of helpless and distressed and if they can be helpful in the houses removing their miseries, that would be their real duty on the Diwali holiday On this day, we have to think why our situation in the world is so much lowered, and by what means and ways we can elevate the status of your people put the principle of Lord Mahaveer into the depths of your heart and see what are the defects and self examination will make you completely perfect He explained with complete scientific treatment, how by religion alone one can make oneself happy acquire Nirvan and can become useful to society and the present miserable condition of the people will then come to an end'

I went to several of his lectures and I must say that they were very instructive and coming out from masterly brain and

on all the subjects, Pujya Maharaj Shree had complete knowledge and was up to date He always punctual in each and every programme and I found him working for the whole-day at this advanced age Everybody who came to him was received respectfully and I found that sometimes youngmen coming to him for jokes were also appeased and passified with he coolness of replies of Maharaj Shree and they went away ashamed of their own behaviour

When Maharaj Shree went for bringing his food, he was very particular that everything was served with perfect obedience to Jain rituals and he was always regular in every respect He had a number of disciples, who are all trained under his own direct care and they were also remaining busy with he work that was alloted to them

Pujya Maharaj Shree is a person of very high character very great knowledge and experience, sound intellect, and sharp memory and he was devoting all his time to make his life useful to the society He has done a great obligation upon the people of Kathiawar by coming to Rajkot and giving us the blessings of his very high preachings His life is extremely pious and bene ficial to all Many of his lectures are printed and it a very useful accumulation of excellent thoughts

I went to Morvi also and I found that he had impressed so highly upon the people of Morvi by his very high preachings He could give the best of thoughts and the substance of philosophy in very simple and impressive language and the orthodox as well as the refined classes had both very muct to learn from him His gospel of non violence and peace and not injuring the feelings of anybody was also very impressive and I must say in a word that I could see in Pujya Maharaj Shree all the traits of highest knowledge, highest character, simplest living and highest thinking I found myself very fortunate to have come to know him and to have the pleasure of hearing his valuable lectures which have benefitted me so much He is a very useful asset in the Jain Community and has done valuable work thought his life and I do not think any word would be sufficient for express ing our gratitude to him for all this valuable service

In conference matters, Pujya Maharaj Shree is also taking keen interest giving all practical directions and was giving spirit to the leaders of the different provinces He was perfect in

everything and by his experience could guide even the minds of the best of the leaders

I wish and pray that his great and masterly soul may always remain healthy He may continue to give his valuable preachings to the community and may be able to improve the present condition of the Jains and that he may have a healthy long-life which is always useful and serviceable to every body

जनाचाय पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज न सन १९३६ का चातुर्मास राजकोट म किया था। उसी समय मुझ उनके परिचय मे आन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैंने सुना कि एक साम्प्रदायिक जैन महात्मा राजकोट की भोजनशाला म पधारे हैं। उनके व्याख्यान बडे महत्वपूर्ण हैं। विविध उपायो से पूछताछ करके मैंने जान लिया कि वे जन शास्त्रानुसार क्रियाकाड का पालन करने मे बहुत सावधान हैं किन्तु रूढि की परवाह नही करत। बहुत स रूढिवादी जैन प्रतिदिन उनके पास जाकर चर्चावार्ता करते हैं।

उस समय मेरे मन म आया कि उनके दशन और परिचय म आने के इस अवसर को न खोना चाहिए। एक दिन सायकाल मैं उनके स्थान पर गया और दशन किए। पूज्य महाराजश्री की मुखाकृति दीप्त भाल तथा गभीर एव शान्त चर्चावार्ता को देखते ही मैं समझ गया कि वे ठोस विद्वान है। उनकी आकृति ने ही मुझ बहुत प्रभावित कर लिया और मेरे हृदय मे उनके प्रति सन्मान पदा कर दिया। यह हमारा प्रथम मिलन था। एक विद्वान पण्डित सस्कृत म लिखी हुई दशनशास्त्र की पुस्तक उन्हे सुना रहे थे और वे प्रत्यक श्लोक को बडी रुचि के साथ समझ रहे थे। मुझे ऐसा मालूम पडा कि इस अवस्था म भी महाराजश्री एक विद्यार्थी के समान सस्कृत पढ रहे हैं। वे जन और वेदान्त दशन की तुलना कर रह थे तथा जैनदशन के रहस्य तथा उसकी सत्यता का सूक्ष्म निरूपण कर रहे थे। मुझे ऐसा मालूम पडा कि व सभी जैन आगमो के पूर्ण ज्ञाता हैं और मागधी भाषा के भी अच्छे पण्डित है। पण्डितजी का वाचन समाप्त हो जाने के बाद मैंने चर्चा प्रारम्भ की। पूज्यश्री ने जो विशाल ज्ञान प्राप्त करके पचा लिया है उसका पता मुझे कुछ प्रश्नों के बाद लगा। हमने जनदर्शन के अनुसार आत्मतत्त्व पर चर्चा की। पूज्यश्री न उसकी सर्वांगीण तथा सुन्दर व्याख्या की। मुझे उससे पूर्ण सन्तोष हो गया। उन्होने बताया कि किस प्रकार आत्मा और पुदगल दो भिन्न वस्तुएँ हैं किस प्रकार वे कर्मों की रस्सी से जुडी हुई हैं तथा जन्म और पुनजन्म का कारण बनी हुई हैं। तत्त्वों को समझाने का ढग तथा अधिकारपूर्ण वार्तालाप उनके विशाल ज्ञान तथा महान अनुभव को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त थे। प्रथम दशन से ही मैं मानने लगा कि वे जैन महात्माओ मे एक रत्न हैं। ऐसे महापुरुष के उपदेश समाज को बहुत उपयोगी होंगे।

इसके बाद मैं उनके व्याख्यान मे गया। कई साधु भिन्न भिन्न आसनों पर बैठे हुए थे। पूज्यश्री सबके मध्य मे थे। पूज्यश्री ने कांपती हुई वाणी म मगलाचरण किया, अपने गीत का ध्रुवपद गाया और उसी म से एक शब्द लेकर डेढ घण्टे तक बोलते रहे। जसा कि दूसरे साधु साधारणतया किया करते हैं पूज्यश्री ने एक बार भी किताब म नहीं देखा। उनका मस्तिष्क एक समुद्र के समान मालूम पडता था जिसमे विचारो की तरगें अपनी पूर्ण शक्ति के साथ उठ रही थी। उस व्याख्यान म वे जन धम के मूल सिद्धान्तो का उपदेश दे रहे थे उनकी दूसरे धर्मों के साथ तुलना कर रहे थे जनता को उन सभी का निचोड तथा अपने विशाल अध्ययन का मक्खन निकाल कर दे रहे थे। मुझे ऐसा मालूम पडा कि यदि कोई व्यक्ति उनके एक व्याख्यान को भी सुन ले समझ ले, ग्रहण कर ले और पचा ले तो वह सम्यग्ज्ञान और सम्यग्दशन प्राप्त करने

के लिए पर्याप्त है। अपने उपदेशो के साथ-साथ वे जैन शास्त्रों के उद्धरण देते जाते थे जो कि उनके जिह्वाग्र पर स्थित थे। भगवान् महावीर इसी प्रकार समवसरण में जैन सिद्धान्तो का उपदेश दिया करते थे। जनता के लिए शुभ कामना तथा आशीर्वाद के साथ उन्होंने अपना व्याख्यान समाप्त किया। यद्यपि प्रतिदिन सुबह समय निकालना और इतनी दूर जाना मेरे लिए कठिन था फिर भी जब मैंने यह जान लिया कि पूज्यश्री यथार्थ ज्ञान के समुद्र हैं तो निश्चय कर लिया कि उनके किसी भी व्याख्यान को न चूकूँगा। उनके व्याख्यानो का मूल्य मेरे समय से हजार गुना अधिक था। जब तक वे राजकोट मे ठहरे मैं प्रतिदिन व्याख्यान में जाता रहा।

दूसरे व्याख्यानो में कई प्रकार की असाधारण विशेषताएँ मालूम पडी। यद्यपि उनका ढंग और वेशभूषा पुरानी थी किन्तु उनमे भरा हुआ ज्ञान पूर्णतया सामयिक तथा वर्तमान जनता के उपयोग का था। मेरा विश्वास है कि वर्तमान शिक्षित व्यक्ति, जो जैन मन्दिरो में बहुत कम जाते हैं उनके उपदेशो से धार्मिक, सामाजिक, नैतिक, बौद्धिक तथा व्यावहारिक सभी प्रकार की जीवनोपयोगी शिक्षाएँ प्राप्त कर सकते हैं। यदि मनुष्य उनके उपदेशानुसार चले तो वह वर्तमान सभ्य समाज मे सुख और सरलता के साथ उठ बैठ सकता है धन यश तथा नाम कमा सकता है और फिर भी सच्चा जैन बना रह सकता है। प्रत्येक समाज में उसका आदर भी होगा और साथ ही कर्मों का क्षय करके वह मोक्ष भी प्राप्त कर सकता है। एक दिन वे शिक्षित व्यक्तियो के साथ वार्तालाप कर रहे थे। उस समय उन्होंने अधिकारपूर्ण ढंग से स्वतन्त्रता को धृष्टता से अलग करके समझाया। सुनने वाले अच्छी तरह मान गये कि वर्तमान सन्तति धृष्टता और स्वतन्त्रता का सम्मिश्रण कर रही है और इसीलिए जीवन में विफल हो रही है। प्रत्येक व्यक्ति को विचार करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए किन्तु धर्म के मूल सिद्धान्तो के साथ पूरी संगति और बड़ों के प्रति आदर होना आवश्यक है। स्वतन्त्रता का अर्थ आत्म वञ्चना या मिथ्या दम्भ नहीं है। इसके विपरीत धृष्टता हमेशा पूरे ज्ञान की कमी मे होती है। माता पिता की आज्ञा का पालन तथा उनके अनुभवी मस्तिष्क के प्रति आदरभाव होने की आवश्यकता पर उन्होंने कई अवसरों पर उपदेश दिया और इस बात को जनता के हृदय में बैठा दिया। उनका कथन है कि ज्ञान को प्राप्त करना तथा जीवन के विविध पहलुओं को ठीक ठीक समझकर और समाज के लिए उपयोगी बनने के उपायों को सीख कर उन्हें जीवन में उतारना ही सच्ची शिक्षा है।

एक दिन उन्होंने सन्ततिनियमन पर व्याख्यान दिया। जिस प्रकार विषय महत्वपूर्ण था उसी प्रकार पूज्यश्री का व्याख्यान भी मननीय था। फैशन के इन दिनों में जबकि ब्रह्मचर्य की कीमत और उसके अपूर्व परिणाम सर्वथा भुला दिए गए हैं स्त्रियाँ और पुरुष जीवन के वास्तविक संगीतों को भूलकर अपने विचारों का खुल्लमखुल्ला प्रचार करते हैं सन्ततिनियमन के विज्ञापन देखते हैं और कृत्रिम साधनों को काम में लाते हैं, ऐसे समय में पूज्यश्री का उपदेश अत्यधिक शिक्षाप्रद था। उन्होंने अपना व्याख्यान भगवान् नमिनाथ के स्तवन के साथ प्रारम्भ किया और उनके उत्कृष्ट ब्रह्मचर्य का उदाहरण पेश किया। उन्होंने कहा कि संसार एक उद्यान है और इसमें रहने वाले सभी प्राणी विविध प्रकार के वृक्ष हैं। मनुष्य आम्र वृक्ष है। लोग यह नहीं जानते कि इस वृक्ष को मीठा और हरा भरा कैसे रखा जाय? रसनेन्द्रिय उनके वश में नहीं होती। इसी प्रकार दूसरी इन्द्रियों पर भी नियन्त्रण नहीं होता। बच्चे पैदा होते हैं और रोग एवं आपत्तियाँ खड़ी हो जाती हैं। यदि वे ब्रह्मचर्य का पालन करें तो शक्ति ज्ञान सम्मान बल और धर्म सभी स्वयं आ जायगे। उन्होंने बहुत से महापुरुषों के उदाहरण दिए जिन्होंने वीर्य की रक्षा करके संसार में अमर नाम प्राप्त किया। उन्होंने कहा कि मनुष्य को विवेकपूर्वक समझना चाहिए कि उसका शत्रु काम है या सन्तान? यदि इस बात को ठीक ठीक समझ लिया जाय तो उपरोक्त समस्या अपने आप सुलझ जाय। भीष्म पितामह का उदाहरण देते हुए आपने बताया कि प्राचीन समय में

लाग कितने बलवान् होते थे और आजकल वीयनाश और गन्दे विचारो के कारण कितने निबल हो गए हैं। सती अजना का उदाहरण देकर अपने श्रोताओ के चित्त म बैठा दिया कि पत्नी को अपन पति में अनुरक्त रहना चाहिए और पति को अपनी पत्नी म अनुरक्त रहना चाहिए। इससे स्त्री और पुरुष को लाभ है। सन्तान के प्रतिदिन निबल होने का कारण बुरा सगति और बुरे विचार ही हैं।

एक दिन आपने समाज की वतमान दशा पर सारगर्भित भाषण दिया। परिवार देश तथा सभी समाजो मे पूण एकता की आवश्यकता का आपने बहुत सुन्दर प्रतिपादन किया। जनता को पारस्परिक ईर्ष्या और बुरे विचार छाड दना चाहिए। प्रत्येक प्राणी को अपनी आत्मा के समान समझना चाहिए। परस्पर पवित्र प्रेम बढ़ाकर समाज और मानवमात्र के लिए उपयोगी बनन का प्रयत्न करना चाहिए। नए वष के दिन लाग नए कपड़े पहनते हैं। अपने मित्रो और सम्बन्धियो स मिलने जाते हैं और अपनी शुभकामना प्रकट करते हैं। किन्तु दूसरे ही दिन झगडा खडा कर लेते हैं। ऐसी दशा म मिथ्या प्रदर्शन स कोई लाभ नही है। सभी के प्रति एकता और प्रेम की भावना वास्तविक होनी चाहिये। महावीरनिर्वाण के दिन पूज्यश्री ने कहा कि महावीर के अनुयायियो को दुखी और असहायो क घर जाना चाहिए। यदि वे उनके कष्टो को दूर करने मे कुछ भी सहायक हो सकें तो दीवाली के त्यौहार की सच्ची आराधना होगी। आज हम सोचना चाहिये कि ससार में हमारी दशा इतनी गिरी हुई क्यो है, किन साधनो तथा उपायो से हमारे समाज का स्तर ऊँचा किया जा सकता है। भगवान् महावीर के सिद्धान्त को हृदय मे उतारो और अपनी कमियो पर विचार करो। आत्म परीक्षा तुम्हें पूण बना देगी। आपन सवथा वनानिक ढग से बताया कि किस प्रकार केवल धर्माराधना से मनुष्य आनन्द प्राप्त कर सकता है निर्वाण हासिल कर सकता है और समाज के लिए भी उपयोगी बन सकता है। उस समय ससार की वतमान अशान्ति का अन्त हो जाएगा।

मैं उनके बहुत से व्याख्यानो में गया। यह कहना पडगा कि वे सभी शिक्षा से भरे हुए होते थे। वे एक अनुभवी तथा परिपक्व मस्तिष्क की उपज थ। सभी विषयो पर पूज्यश्री का ज्ञान सर्वाङ्गीण और बिलकुल सामयिक था। वे अपने प्रत्येक कायक्रम के लिये समय के पूरे पाबन्द थे। वृद्धावस्था म भी सारा दिन काम मे लगे रहते थे। वे अपने पास आने वाले प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान करते थे। मैंने कई बार देखा कि नवयुवक जो उनका मजाक उड़ाने के लिए आते थे वे भी पूज्यश्री के शान्तिपूण उत्तरो से शान्त तथा सन्तुष्ट होकर अपने व्यवहार के लिए शर्मिन्दा होते हुए लौटते थ।

जब महाराज श्री आहार के लिए जाते तो इस बात का बहुत ध्यान रखते थे कि प्रत्येक वस्तु जैन शास्त्रानुसार शुद्ध प्राप्त हो रही है। वे प्रत्येक बात म सदा नियमित रहते थे। उनके साथ कुछ शिष्य भी थे। वे सभी उनकी साक्षात देख रेख तथा चरित्र की शिक्षा प्राप्त करते थ। वे पूज्यश्री द्वारा बताए कार्यों मे व्यस्त रहत थे।

पूज्यश्री का चारित्र बहुत ऊँचा है। ज्ञान तथा अनुभव अति विशाल हैं। बुद्धि स्वस्थ तथा प्रगाढ़ है स्मरण शक्ति तीव्र है। उन्होंने अपना सारा समय जीवन को समाज के लिए उपयोगी बनाने में लगा दिया है। राजकोट पधार कर और अपने उत्तम उपदेशो का वरदान देकर आपने काठियावाड पर महान् उपकार किया है। आपका जीवन परम पवित्र और सभी के लिए कल्याणप्रद है। आपके बहुत से व्याख्यान छप चुके हैं। वे श्रेष्ठ विचारों क उपयोगी सग्रह हैं।

मैं मोरबी भी गया था। वहाँ भी अपने श्रेष्ठ भाषणो द्वारा आपने जनता को प्रभावित कर लिया था। उत्तम से उत्तम विचार और दशनशास्त्र के रहस्यो को वे सरल और प्रभावशाली भाषा म समझा सकते हैं। पुराने और सुधरे हुए विचारो वाले सभी उनसे बहुत कुछ सीख सकते

हैं। आपका अहिंसा शान्ति और दूसरे के मन को न दुखाने का संदेश भी बहुत प्रभावोत्पादक था। एक शब्द म कहा जाय तो पूज्यश्री म श्रेष्ठ ज्ञान श्रेष्ठ चरित्र तथा सादा जीवन और श्रेष्ठ विचार के सभी गुण विद्यमान हैं। मैं इस बात के लिए अपने को भाग्यशाली मानता हूँ कि आपके परिचय मे आने तथा अमूल्य व्याख्यान सुनने का अवसर मिला। उन व्याख्यानों से मुझे बहुत लाभ हुआ है। आप जैन समाज क अत्युपयोगी रत्न हैं। आपने सारा जीवन उपयोगी कार्यों म लगा दिया है। आपकी अमूल्य सेवाओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए हमारे पास शब्द नहीं हैं।

कान्फ्रेंस के मामलो में भी पूज्यजी बहुत रुचि लेते रहे हैं। वे विभिन्न प्रान्तों के नेताओं को व्यावहारिक आदेश देते थ और सभी के मार्ग प्रदर्शक थ। व प्रत्येक बात म पूर्ण थे और अनुभव द्वारा सर्वश्रेष्ठ नेताओं के मस्तिष्क को भी सचालित कर सकते थ।

मेरी हार्दिक अभिलाषा है और साथ ही ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी महान् आत्मा सदा स्वस्थ बनी रहे। व अपने अमूल्य उपदेश समाज को सुनाते रहें जिससे जैन समाज की वर्तमान दशा सुधरे। उन्हें और दीर्घ जीवन प्राप्त हो जो कि सदा से प्रत्येक व्यक्ति की सेवा और उपयोग मे लगा हुआ है।

४३—श्रीमूलजी पुण्यस्मरण भाई सोलंकी, राजकोट

श्री जवाहरलालजी म० मोरबी हता सन् १९३८ ना चातुर्मास दरम्यान मने तेमनो प्रथम परिचय थयो। आ समये मोरबी शहर दूर दूर देश थी आवता जैन स्त्री पुरुषो अने बालको थी उभरातु ते एक महान् यात्रा ना परमधाम समु बनी रह्यु हतु। कोई एक व्यक्ति ना दर्शनार्थे आटली मोटी मानव मेदिनी मे आ पहेला कदी जाई न हती। ए मात्र मानव मेदिनी नहि परन्तु भावभीना अने कल्याण कांक्षी जीवो ना प्रेम नो सतत चालतो स्रोत हतो।

तमना प्रथम दर्शन कर्या ते पहेला तमने विषे जाण्यु हतु के श्री जवाहरलाल जी एक प्रखर विद्वान् सम्पूर्ण चारित्रवान् अने महान् आत्मनिष्ठ व्यक्ति छे। मारा प्रथम परिचयज तमना विषे म जे सांभल्यु हतु तनी प्रतीति थई। त्यार पछी तो बखतो बखत तेना व्याख्यानमां जतो अने व्याख्यान ना समय बहार पण तेमना सत्संग ना लाभ लेतो। तमना व्याख्यानोनी मारा ऊपर शु असर थएली तनी नोंध हुँमारी रोजनीशि मां राखता। ते रोजनीशिमांथी केटलाक अवतरणो आ साथे मोकलु छु। ते अवतरणा थी आप समजी शकशो के ते वखते श्री जवाहरलालजी प्रत्ये मारो शु भाव हतो।

शुद्ध खादी ना बनेला मात्र बे चीवर थी ढंकाएलु तेमनु जरा जर्जरित स्थूल शरीर व्याख्यान माटे आसनबद्ध थतु त्यार तेमनामां साचा धार्मिक जीवननी प्रभा निर्भयता अने आत्म विश्वास थी उत्पन्न थती कार्यशक्ति तरवरता त वखते तेमना प्रशस्त मुख नक्शान् दर्शनथी तेमना प्रत्ये जनसमूह पूज्य भावथी आकर्षातो।

तेमना व्याख्याननी शैली शान्त छतां अमरयारक हती। तमना व्याख्यान सांभलकर भाग्येज कोई व्यक्ति हश के जेन ते व्याख्यान सांभल्या पछी पोताना जीवननी धर्मशिथिलतायी दुःख थतु न होय। तेमना व्याख्यानो सामान्य जन समाज माट करवामां आवता हाई तमां जैन तत्वज्ञान नी झीणी छणावट आवती नहीं। परन्तु भगवान बुद्ध तथा महावीर सौरो न नैतिक जीवनना उत्कर्ष माटे ज बोधपद्धति ग्रहण करेली तज पद्धति स्वामीजी नी पण हती। सामान्य जनता न माटे तत्वज्ञान नी सूक्ष्म चर्चा साधारण रीते शुष्क बन छे।

पाताने ज सत्य लाग्यु त कहवामां पोताना समाज नी के श्रोताजननी कोई व्यक्ति नी तमना मां परवाह न हती। साचा साधु जीवननी तेमनी निर्भयताने छाज तथा विश्व मर्यादा त कदी भूलता नहीं। घडी बखत मारमी सपना केटलाक अटपटा प्रश्न ऊपर त छूटथी बाबत

त्यारे सघनी कहेवाती ! 'समझदार' व्यक्तियो ने लागतु के महाराज श्री मा व्यवहारकुशलता नथी। आवा व्यवहारकुशल माणसो धार्मिक जीवन मा आजवता नु स्थान न समजी शके, तेमा काई आश्चय थवानु नथी। To be great is to be misunderstood (महान् बनने का अथ है गलत समझा जाना) जगत नी महान् व्यक्तिओ ना सम्बन्ध मा आ सूत्रमा जणावेली स्थिति सामान्य बन छे। जेटनी तमना सम्बन्ध मा वधारे गेरसमज तेटलीज तेवी व्यक्तियो नीमहत्ता छे।

मोरवी राज्यमा सप्तमीना तहेवारमा मला भराय छे। आ मेलाओमा राज्य तरफ थी जुगार रमवाना खास परवाना अपाता अने तमा थी राज्य ने ठीक आवक पण थती। आ वात नी महाराज ने जाण थता जुगार नी बदी ऊपर तमने व्याख्यान आप्यु। आ बाबत मोरवी ना श्रीमान् महाराजा साहेब पण हाजर हता। तेमना ऊपर स्वामीजी ना व्याख्यान नी एटली सुन्दर असर पडी के स्वामी जी नु व्याख्यान पूरू थयु के तरतज श्रीमान् महाराजा साहेबे जुगारना परवाना नही आपवा हुक्म कर्यो। श्री जवाहरलालजी नु मोरवी नु चतुमास आ एकज बनाव थी चिरकाल स्मरणीय रहेशे।

पूज्य श्री स्वामी जी मां धमसकुचितता नथी तेतो परिचय आपणने तेमना कृष्णजयन्ति ऊपर ना व्याख्यान थी थयो। तेज वखत अमारी खात्री थई के हिन्दू धम अने जैन धर्म एकज महान् वृक्ष नी ब शाखाओ छे। त दिवस तेमना गोपालन ना उपदेशनी बहु सुन्दर असर थई। चुस्त जन जे अन्य धर्मो प्रत्य उभय सहिष्णुता बतावता चूके तो तमने जन कहेता मने आंचको लागे। स्वामी जी जेवा चुस्त जनज अन्य धर्मो प्रत्ये उदार वलण राखी शक। कोई पण धम के सम्प्रदाय नी श्रेष्ठता-ते धम अथवा सम्प्रदाय अन्य धम तथा सम्प्रदाय तरफ केटली उदारता बतावी शके तेना ऊपर थी ज धरावी शकाय। आ श्रीकृष्ण जयन्ता न व्याख्यान ना अन्ते स्वामीजी मा मे जैनधम नी मूर्ति ना दशन कर्या।

व्याख्यान ना समय वहार पण घणी वखत श्री जवाहरलालजी ना उत्तम सत्सग नो मने लाभ मल्यो छे। त्या म तेमनो विद्याप्रेम अनुभव्यो छे। बीजा पण प्रसगो छे परन्तु आपनी समिति नु काम हु करवा मागता नथी। एटल विरमु छु।

पूज्य स्वामी जी ने अन तमना शिष्य श्रीमलजी ने मारा वदन कहेवडावशो तो उपकृत थईश।

43

EXTRACTS FROM MY DIARY

22nd July 1938

In the morning I went to the Upashraya to hear Swami Jawaharlalji a reputed Jain Muni, I was anxious to hear him as I had heard he has the reputation of a good speaker and a learned man Moreover he has a reputation of a man who puts in practice his conviction When I went to the lecture I found him quite up-to his reputation He has certain peculiarities common to Jain Munis, but one can easily see in him a noble soul His words are really stimulating

30th July, 1938

Yesterday morning I had been to the Vyaknayan of Jain Muni Jawaharlalji I find in Muniji a sincere and transparent soul His speeches are learned, practical and inspiring, because,

I believe, Muniji does not give advice which he does not practice or desire to practice

1st August, 1939

Yesterday morning I had been to the lecture of Muni Jawaharlalji More I hear him, more I feel his sincerety He is a man who can flare up revolutions, but unfortunately his audience is too plaint for that His speach was telling and inspiring

6th August, 1938

In the morning I had been to the Upasharaya More I hear Swami Jawaharlalji more I admire him He is a fearless speaker

मेरी डायरी के उद्धरण

२२ जुलाई १९३८

प्रात काल प्रसिद्ध जन मुनि स्वामी जवाहरलालजी का व्याख्यान सुनने के लिए मैं उपाश्रय म गया। एक अच्छे वक्ता और विद्वान् के रूप मे उनकी प्रसिद्धि मैं सुन चुका था इस लिए मैं विशेष उत्सुक था। इसके साथ साथ उनके लिए यह भी प्रसिद्ध था कि वे अपनी धारणाओं को कायरूप में परिणत करते हैं। जब मैं व्याख्यान सुनने गया तो उन्हें वैसा ही पाया जसी प्रसिद्धि थी। जन साधुओं की साधारण विशेषताएँ उनम विद्यमान हैं किन्तु उनमें एक उच्च आत्मा का अनुभव किया जा सकता है। उनके शब्द वास्तव मे उत्तेजना से भरे हैं।

३० जुलाई १९३८

कल सुबह मैं जन मुनि जवाहरलालजी का व्याख्यान सुनने गया था। मुझे मुनिजी में एक सच्चा और निमल आत्मा दिखाई देती है। उनके भाषण विद्वत्तापूर्ण, व्यावहारिक और प्रभावशाली होते हैं। क्योंकि मेरे खयाल मे मुनिजी किसी एसी बात या उपदेश नहीं देते जिसे स्वय आचरण में नहीं लाते या लाना पसन्द नहीं करते।

१ अगस्त १९३८

कल सुबह मैं मुनि जवाहरलाल जी का व्याख्यान सुनने गया था। मैं जितना सुनता हूँ उनमें उतना ही यथार्थता का अधिक अनुभव होता जा रहा है। वे एसे व्यक्ति हैं जो क्रान्ति फूक सकते हैं किन्तु दुर्भाग्य स आपके श्रोता इस बात के लिए बहुत शान्त हैं। उनकी वाणी प्रेरणा और उत्तेजना से भरी होती थी।

६ अगस्त १९३८

सुबह मैं उपाश्रय मे गया था। स्वामी जवाहरलाल जी को मैं जितना सुनता हूँ उतनी अधिक प्रशंसा करता हूँ। व एक निर्भय वक्ता हैं।

आदर्श उपदेशक

४४—श्री वीरचन्द पानाचन्द शाह महामन्त्री श्री जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस, बम्बई

पूज्य महाराज श्री ना हूँ जे थोडा परिचय मा आव्यो छु तेनी मारा मन ऊपर घणीज ऊडी छाप पडी छ। मन व प्रसग महज याद आवे छे।

एक वखते तेओ श्री पासे हूँ बठो हतो। एक बहेन आव्या। गुरु श्री ने विनति करी के 'महाराज श्री मने सत्य (बोलवा) नी प्रतिज्ञा संवरावो।

महाराज श्री खूब शांतिपूर्वक ते बहेन ने कह्यु के "बहुन खाद्य वस्तुओ नी बाधा लेवी सामायक प्रतिक्रमण ना नियम लेवा आयबील, उपवास विगेरे तपश्चर्या करवी अने देह-दमन करवु ते घणु दुष्कर छे। अने मनोनिग्रह तो तेथी पण वधारे दुष्कर छे। तमारो सत्य बोलना आचरवा माटे आग्रह हशे परन्तु आ रूपरानु वातावरण तम ने ज्यारे तमारी प्रतिज्ञा पालवा मा प्रतिकूल जणाशे त्यारे तमन कोई वार खेद थशे। हमणा थोडे समय तमे वातावरण जोता रहो अने तेने सुधारता रहो। आ प्रश्न ऊपर हजु वधारे मथन करजो अने पछी निणय पर आवजो।

ते बहेने मक्कम मनथी अनेसरल भावे एटलु ज कह्यु—"महाराज श्री मे विचार करी जोयो छे, मात्र कोइक वार भूल थइ जाय छे प्रतिज्ञा मन वधार जागृत राखशे। आप प्रतिज्ञा लेवरावी अने त पालवानु मन बल मले तेवी आशीवाद आपा।'

पूज्य महाराज श्रीए योग्य समजण आप्या पछी बाधा आपी। आपणोआथी उल्टु घणीवार जोइए छीए। पात्र नी पूरी शक्ति जोया सिवाय साधुवग तेमने प्रतिज्ञा लेवडाववा मा बहु तत्पर होय छे। तेओ अति उत्तम आशय थी प्रेरायला होय छे के प्रतिज्ञा अने व्रतो माणसना जीवन ने उच्च कक्षाए लाववामा मन्द रूप थाय छे। त वात साची छे। छता योग्यायोग्य नो विचार तो करवो जोइए। केटलाक बाधा लेनारा भाई बहेनो समाज निन्दा ने कारण अने केटलाक शरमथी परन्तु अनिच्छाए हा पाड छे अने तथी तेवा माणसो पाछल थी प्रतिज्ञा न पाली शके तो तेओ ऊँचे आववाने बदले नीचे जाय छे। अने प्रतिज्ञा प्रत्ये वधार उदासीन बने छे। पूज्यश्रीए सामे थी प्रतिज्ञा लेवा भावनार व्यक्ति ने बधी वस्तुस्थिति समजावी ने पछी योग्य निणय करवा जणाव्यु। तेओश्री नी आ रीत प्रत्य मने घणु ज मान थयु।

एक बीजो प्रसग—श्री अखिल हिंद हरिजन सेवक सघ वाला श्री अमृतलाल विट्ठलदास ठक्कर जेओने ठक्कर बापा ना अति परिचित नामे ओलखीए छीए एतओ राजकोट खास आव्या छे एवी पूज्य गुरुदेव न खबर पडी। तेओ हमेशा साधु जीवन नी मर्यादा मा रहीने पोतानु जीवन गाले छे। छता देशोदय अने समाजोद्धारना कार्यो मा शुद्ध प्रवति करनाराओ तथा आत्म भोग आपनाराओ प्रत्य तमना हृदय मा आदर अने सहानुभूति हता। तओए तेमने मलवानी इच्छा व्यक्त करी अने अम त वात श्री ठक्करबापा न करी। त ओ राजी थया अने अति व्यवसायी अने पोताना कायक्रम ने अति चुस्तपणे वलगी रहनारा तरीके तेमने बधा ओलखे छे। तेओ समय नो योग्य प्रबध करी महाराज श्री ना दर्शने जैन उपाश्रय मां आव्या।

महाराज श्रीए तेओ ने उद्देशी ने कह्यु के 'अमारा श्रावक समुदायना थोडा आगे वानो आ प्रसगे अहा हाजर छे। तो आप हरिजना भीलो विगेरे पछात कोमोनी बच्चे जे काम करो छो ते विष अने तमारा अनुभव विष ब शब्दो कहो।" श्री ठक्कर बापाए अति नम्रता भावे जणाव्यु के महाराजश्री! हु तो आपना दर्शने आव्यो छु। आप अमने काईक वाणी समलावो।" परन्तु पूज्य महाराज श्री ना आग्रह थी तओ थोडु बोल्या अने पछी महाराज श्री ए हरिबल मच्छीमार मताराज मुनि वगेरे नु जीवन प्रथम केवु पतित हतु ? पछी तेमनो केवी रीते उद्धार थयो ? ते बधु सविस्तर समजाव्यु ान। साधुओए भूतकाल पतितोनी कव रीते सेवा करी छे तना दृष्टान्तो आप्या। जैन शास्त्र मां अस्पृश्यता विषयनु मन्तव्य शु छे ते पण स्पष्ट शब्दो मां शब्दो मां कह्यु। तेओए जणाव्यु के वण धम जातिभेद अने अस्पृश्यता ने जनधम मा स्थान नथी परन्तु काल करीने हिन्दुधम अने जैनधमनी परस्पर एक बीजाना ऊपर घणी असर थई छे वगेरे बधु सूक्ष्मरीते समजाव्यु। ते थी अम जाणु ठक्कर बापा ने बहु सतोष थयो हशे। अम बहार नीकल्या त्यारे ठक्कर बापा मात्र एटलु बोलेला के महाराज श्री मा साम्प्रदायिकतानी

सकुचितना नथी, के एवो कोई जातनो आग्रह नथी। ए जोइने मने बहु आनंद थाय छे। आवा पवित्र आत्माओ समाजन घणी सवा आपी रह्या छे।

आ वे प्रसगो उपरान्त महाराजश्री साथे मारे एकाद वे मुद्दा ऊपर चर्चा थई हती। आपणे जैनो अत्यार जे प्रकार नी जीवदया पालाए छीए अने जे री ते जीवरक्षा करीए छीए आस बधे ते आ श्री नु मन्तव्य पूछ्यु हतु। महाराज श्री शास्त्र आज्ञाओने मान्य राखी आ मुद्दा ऊपर एटली बधी सुन्दर तलस्पर्शी मीमासा करी के सनातन अने सुधारक विचारवाला बन्नने—तमना मोटा भागने मान्य रही शके। वचन तओश्रीना उपदश ग्राह्य जणाता तेओ श्री ए एक वस्तु बहु स्पष्ट करी सुने क्यां भूल थाय छे त जणाव्यु 'साधु जीवन नी अमुक मर्यादाओ छे परन्तु 'विशेषनु विशेष फल' एवा खयाला मा साधु जीवन नी मर्यादाओ ने श्रावकजीवन साथे मलवी आमा थी केटलोक गोटाली बधी वस्तुस्थिति न जाई तपासी काले काले मिश्रित थई गयली वस्तुआ नु सम्माजन करवु जोईए।

आ प्रश्न तेओ श्रीए सप्तनय विगेरे बधी दृष्टीए चर्च्यो हतो जेना उपर घणु लखी शकाय। परन्तु मे तो पूज्य गुरुदेवना टुका परिचयनी नोंघ करी छे।

पूज्य महाराज श्री सवत १९९८ ना विहार दरम्यान समढीआ थी पसार थता तेओ श्रीए 'श्रीग्राम सुधारण समिति नी मुलाकात लीधी हती। परतु ए समये हु अने मारा पत्नी विगेरे मलाया अने जावानी मुसाफरी ऊपर गया हता। एटले ए समये अमारी गैरहाजरी मा अमारी श्री सार्वजनिक होस्पिटल ना डाक्टर श्री मणिलाल शाह M B B S, तथा श्रीरामजी भाई विगेरेए तेमनो सत्कार कर्यो हतो अने सस्था विषेनो तओश्री न परिचय आप्यो हतो। महाराजश्रीए पोताना सतोष व्यक्त कर्यो हतो अने शिष्य समुदाय साथे तओश्रीए पछी आटकोट विहार कर्यो हतो।

पूज्य महाराज श्री काठियावाड मां ज्या ज्या विचर्या छे त्या त्या जैनो अने जनेतरो ऊपर तमना पवित्र जीवन नी अने उपदेश शली जेमा हमेशा मिष्ट प्रिय अने हितकारी वाणी नो उपयोग थतो रह्यो हतो तेनो घणी ऊँडी असर थई छे। एम म अनुभव्यु छे।

पूज्य महाराज श्री नो शिष्यवर्ग गुरुदेवनी उत्तम प्रणालिका ने चालु राखवा शक्तिमान थाओ एवी हार्दिक नम्र प्रार्थना साथे विरमु छु।

अगणित-वन्दन

४५—रायसाहेब डाक्टर लल्लूभाई सी० शाह लल्लूभाई बिल्डिंग, राजकोट

राजकोट चतुर्मास माटे मारवाड तरफ थी विहार करता करता पूज्यश्री चोटीला मुकाम पधार्या (राजकोट थी ३० माइल दूर) त वखते हु मारा कुटुम्ब साथे मोटर मा चोटीला पूज्य श्री ना दर्शनार्थे गयो। सौथी प्रथम चोटीला गामे में तमना दर्शन कर्या। व्याख्यान मा गाम ना प्रमाण मां माणस घणु हतु। पूज्यश्रीए व्याख्यान नो विषय पण बहु सुन्दर पसन्द कर्यो। भगवान श्री रामचन्द्रजीना जीवन मा ना केटलाक प्रसगो ऊपरनु पूज्य श्री ए घणी सारी सुन्दर अने सरल गुजराती भाषा मा असर कारक व्याख्यान आप्यु। (तेम नी मातभाषा गुजराती नहीं होवा छतां तेमनो गुजराती भाषा ऊपरनो काबू अजब हतो)। शु भगवान श्रीरामचन्द्रजी चा बीडी पीता हता ? ज्यारे तमा तना भक्तो चा बीडीना व्यसन राखो त केटलु शरम भरलु कहेवाय ? आ सचोट उपदेश थी घणा लोकोए ते वखत था तमज बीडी नहीं पीवानी बाधाओ लीधला।

आ तो चोटीला गाम पूरती प्रस्तावना करी। हवे पूज्यश्री राजकोट पधार्या। राजकोट नी जैन प्रजाए घणी मोटी सख्यामां राजकोट थी अमुक माइल सुधी सामे जइने घणो भावभीना सत्कार कर्यो। चातुमास दरम्यान पूज्यश्रीए श्री अनाथी मुनि ना अधिकार (सनाथ अनाथ) घणोज सुन्दर सचोट विद्वत्ताभरी अने सामलनारी प्रजा न असर कर अने छाप पाडी शके तेवी सारी सीधी

अने सरल गुजराती भाषा मां आवो अधिकार समझावेलो त भूली शकाय तेम नथी (पुस्तक रूपे सनाथ अनाथ निणय प्रकट थयो छे) सावजनिक उपदेश खातर हर रविवारे तेमना व्याख्यानो जुदा जुदा विषय ऊपर राखवामा आव्या हता, जे साभलवा माटे जैनेतर वग माटो सख्या मा आवतो अने लाभ मेलवतो। आ व्याख्यानोनु जुदु पुस्तक श्री महावीर जैन ज्ञानोदय सोसाइटीए 'श्री जवाहर ज्योति' ना नाम थी प्रकट करल छे। उपरान्त तेमना हमेश ना व्याख्याना पण पुस्तक रूपे श्री जवाहर व्याख्यान सग्रह भा० १/२ श्री महावीर जन ज्ञानोदय सोसाइटीए प्रगट करेल छे।

व्याख्यानमा प्रखदा घणीज माटी सख्यामा भराती। अने व्याख्यान शला एवी सु दर हती के साभलयाज करवानु मन थाय। तेमनी व्याख्याननी शरुआत प्राथना थी थती। प्रायना मा श्री चौबीस तीथकर प्रभुनी सर्तन राखवा मा आवी हती। प्रायना वखते वध सतो साथे गाना गाता पूज्य श्री एक तार थई जता। व्याख्याा पूरु थवाना पतेला थोडा टाइम श्रीसुदशन चरित्र नो अधिकार समझायता, जेनु पण काव्य रूप मा 'श्री सुदशन चरित्र' नाम थी पुस्तक प्रगट थयेल छे।

पूज्यश्री नो अभ्यास एकलो जन धमना सूत्रो पूर्ो न होतो। श्री गीताजीना दरेक अध्ययन तेमने कठस्य हता। व्याख्यान मा गीताजी ना श्लोका तथा वद कुरान तेमज वाइबिल मा थी पण समय अनुसार दष्टातो आपता। त थी पूज्यश्री ने जनधम उपरात बीजा धार्मिक ग्रथा नो अभ्यास घणा सारो होयो जोइए, एम श्रोताओ ने लाग्या विना रहे नही।

एक आत महत्व ना प्रसग ए हतो के ज्यार अत्रे सत्याग्रह नी चलवन चालती हतो अने अशान्तिनु वातावरण हतु त प्रसग पूज्य श्री फक्त शप काल माटे श्री बाकानेर थी (राजकोट थी २० माइल) राजकोट नी जैन जनता ना खास आग्रह था अत्रे पधारेला। ते प्रसगे तेमने विचार आव्यो के जो एक अठवाडीआ सुधी श्री शान्तिनाथ प्रभु ना जाप अखड रात अन दिवस सतत चालू रहे तो जरूर राजकोट मा शान्ति थाय। तमनी इच्छा ने मान आपीने श्री शान्तिनाथ प्रभु नो जाप अखड रात अने दिवस आठ दिवस सुधी चालू राख्यो हता। अन आश्चय साथे राजकोट नी लडत नु समाधान थयु अने कान्ति थई जवाथी तआ श्री ना श्रद्धापूवक ना वचन माटे अमा तेमना ऋणी छीए।

मारा ऊपर तेमनो घणोज उपकार छे। मारी मादगी वखत पूज्य श्री सीडी ऊपर चडी शकता न हाता छता मन मगलीक सभलाववा माटे पूज्य श्री वारबार मारा घर पधारता। मगलीक तथा आत्मिक औषध रूपी धार्मिक उपदेश थी मने अत्यन्त शाता उपजती अन मारु मादगीनु दद भुलाई जतु त खातर हु तेम नो सदाना ऋणी छु।

आवा सत महात्माओ ना पगला थी अने तेमनी सुवाणी अने सु उपदेश थी जैनधम नो वावटो फरकी रह्या छे।

एक छेल्लो हमणा नोज प्रसग। पूज्यश्री नी भीनसर (बीकानेर) गाम घणी सख्त मादगी ना समाचार अत्रे आव्या। मारे डाक्टरी नी मीटींग ने अगे ते अरसा मा दील्ही जवानु हतु। दील्ही जवानी तारीख मोडी हती। छता पण पूज्य श्री नी मादगी साभली न हु तुरत अत्रे थी बीकानेर गयो। त वखते तमना सेवा करवानो ज लाभ मने मल्यो ते माटे हु मारी जात न घणी भाग्यशाली मानु छु। तेमनी मादगी घणीज भयकर हती अने तेमने दद पण घणु असह्य हतु, छतां तेमनो शान्ति अने समभाव आश्चय पमाडे तेवा हता। त्यांथी थी मारे बनारस (मारा दीक रानी त्या बनारसी कापड नी दुकान छे) जवानो विचार हतो परतु पूज्य श्री नी मांदगी नी स्थिति चिंताजनक हती जे थी मीटींग नु काम पूरु थये हु तरतज पाछो बीकानेर गया। पूज्य श्री ना तबीयत सुधारा ऊपर जोई, अन तेम नी सेवाना विशेष लाभ मल्या।

त वखते त्यांना श्रीमान मेठ चपालाल जी बाठिया, स्व० सेठ श्री अमृतलाल रायचन्द झवेरी ना पत्नी ग० स्व० येन केसरबाई नी तथा अन्य गृहस्थो नी तथा त्या ना डाक्टर श्री अवि नाश जेओ पूज्यश्रीनी सारवार करता हता ते बधानी सेवा जोइन मने घणोज आनद थयो। पूज्यश्री पास सैआ बधा उभे पास हाजर रहेला हता।

श्रीमान् सेठ चम्पालाल जी बाठिया न ममागम मा हु पहल वहेला आ प्रसग आव्या। मारा भीनासर पहोच्या पछीना बीजज दिवसे पूज्य श्री नी मादगी छणीज भयकर अने अति वेदना वाली हती तेनु आ दु ख जोइने श्रीमान् सेठ चपालाल जी बाठीयाए मने जणाव्यु के पूज्य श्री ने कोईपण रीत वहेलो आराम थाय अने जेम बने तेम दन ताकीद ओछु करी शकाय तम तमो ने लागतु होय अने ते माटे काई पण मु बई ना माटा डॉक्टर ने बोलाववानी जरूर लागती होय ता गमे त खच ग भोगे तमो बोलावी शका छा। आ सामनी न पूज्य श्री तरफ नी प्रमनी आवी महान भक्ती जोई मन छणोज हप थया। श्रीमान् सठ चपालाल जी बांठिया नी पूज्य श्री प्रत्येनी केटली वधी अजब भक्ति छे तनो वाचनारने आ ऊपर थी खयाल आवशे। बे दीवस तबीयत तपास्या बाद तबीयत मा सारो सुधारो जोवा थी बहारगाम थी डॉक्टर न बोलाववा नी जरूर मने लागी नहीं।

राजकोट थी ज्यारे पूज्य श्री विहार कयो त्यारे शहर नी बाहर सौदाई-वाणी सांभलतां श्राताओ नी चक्षुओ अश्रु भीनी थएली, एवु मानीन के हवे आ सत महात्मा नी अमृत वाणी ना प्रसादी राजकोट मा मलवानी नथी। पूज्य श्री बधा सतो साथे आगल अने आगल विहार करता रह्या जने तमना पवित्र चरणरजनी प्रसादी पामता उदात्त भावे प्रवदा वीखरवा लागी।

आवा सत महातमा न मारा अगणित वदन हो।

दो—पत्र

४६—(प्रसिद्ध देशभक्त श्रीमान् सेठ पूनमचन्द जी राका)

वेलोर जेल १४ १० ४२

जवाहरज्योति नाम की पुस्तक इस बार जेल में पढने का अनायास ही मौका मिल गया। मथाकी कथा म सारा निचोड आगया। आप की राष्ट्रवृत्ति, विद्वत्ता, त्याग आदि से परिचित हूँ। इसी भावना से आप की याद बनी रहती है। मने अनेक सन्तो के दर्शन किए। राष्ट्रवृति म आप की रुचि विशेष देखी। ऋषि सप्रदाय के मुनिश्री मोहन ऋषी जी का वृत्ति भी ठीक देखी। भगवान् महावीर के तत्त्वो के प्रचार तथा आचार का यही समय है। अहिंसा सत्य का ससार पर असर होकर रहेगा पर उसके लिए त्याग आदि की जरूरी है। गतवर्ष नागपुर जेल म स्व० से० जमनालालजी बजाज आदि साथ थे। वे आप से जलगाँव मे मिले थ। एक दिन आप के सम्बध म हम दोनो की बात हुई कि कभी मौका मिला तो दर्शन करन चलेंगे। ऐसा सोचा गया पर उनकी इच्छा सफल नहीं हुई। एक दिन आगे पीछे सभी को इसी रास्ते पर जाना है। कृपा रखें। प्रत्यक्ष म मैंने आप की सेवा की नहीं और भविष्य मे भी होगी नहीं। यह होत हुए भी परस्पर का प्रेम अत तक रहेगा। दोनो का माग एक ही है।

× × ×

पूज्य श्री को राष्ट के दृष्टिकोण स देखा और समझा। मैंन उनको जो कुछ समझा वह ठीक है या नहीं, इसलिए महात्मा भगवानदीन जी तथा स्व० सेठ जमनालाल जी बजाज को पूज्यश्री से मिलाया। हम तीनों का एक मत रहा। वह इस स्थल (जेल स) लिखन में उपयोगी नहीं होगा। पूज्यश्री ने अपने जीवन का सदुपयोग ही किया पर शिष्य और श्रावकों म उन स उपयोग लेने वाले नहीं निकले। वतमान परिस्थति भगवान् का नाम दीपाने की है पर पूज्यश्री

का २ ३ वष से शारीरिक रोग से लाचार हो जाने मे विशेष उपयोग न होना स्वाभाविक है। फिर भी पूज्यश्री को ऐसे समय म भक्तो की तो क्या, शिष्य गणो का प्रेरणा कर के उन की परीक्षा ले लेनी चाहिए। २ ४ भी मिल जाएगे तो पूज्यश्री की आयु, त्याग, तपश्चर्या का उपयोग हो जाएगा। पूज्यश्री का भी यह अतिम समय है जो कुछ सचय किया है वह भगवान् के अहिंसा सत्य म होम दें। उस का उनके पीछे समाज को कुछ भी तो उपयोग होगा।

४७—पूज्यश्री सबधी मेरे सस्मरण

(ल०—धमभूषण दानवीर सेठ भैरोदानजी सेठिया बीकानेर)

श्रीमज्जैनाचाय पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज के प्रति मेरी जो सहज स्वाभाविक श्रद्धा सदा स रही है और उनके उच्च आचार विचारो स प्रभावित होने के कारण जो उत्तरोत्तर वृद्धिगत होती रही है उसी की प्रेरणा न मुझे यहाँ अपने मनोभाव सक्षेप म व्यक्त करने को प्रेरित किया है। उनके जीवन की मीमासा आलोचना, अथवा विश्लेषण करने की मेरी स्थिति नही है। यह काय तो विद्वद्वरो की लेखनी स ही सुसपन्न होता है। एक पूज्य आचाय के प्रति एक श्रद्धालु श्रावक की दृष्टि स ही मैंने उन्हें देखा है और उसके बाद तटस्थ होकर जब तब उन पर विचार किया है उसी का साराश मैं यहाँ दे रहा हूँ।

पूज्य श्री का मेरा सम्पक बहुत पुराना है। युवा तपस्वी की उग्र तेजस्विता मैंने उनके चेहरे पर देखी थी वही धीरे धीरे सौम्य, स्निग्ध शाति मे कैसे परिवर्तित हो गई ? यह मैं जब आज सोचता हू तो हृदय पुलकित हो उठता है। मुझे लगता है कि उन्होने जीवन के इस परम सत्य को किस अच्छी तरह अवगत कर लिया था कि मानवजीवन कुशा की नोक पर रखी हुई ओस की उस बूद की तरह है जो क्षण भर म अपने अस्तित्व स रहित हो जायगी। इसीलिए काया के मोह को उन्होने छोड दिया था। असह्य वेदना को कितनी दृढता और कितने धैय के साथ उन्होने सहन किया था ? इस बीच मुझे जब जब उनके दशनो का सुअवसर मिला था, मैंने कभी उनके मुख पर व्यथा या वेदना के चिह्न नही देखे उनकी जिह्वा से कभी सिसकना नहीं सुना। हम आप सब का विदित है कि Carbuncle (जहरी फोडे) म कैसी असह्य वेदना मनुष्य को होती है। उसकी यत्रणा के समय बडे बडे धैर्यशालियो का धैय छूट जाता है। वे छटपटाते हुए देखे जाते हैं। पर पूज्यश्री ने जैसे उस वेदना पर विजय प्राप्त कर ली हो इस प्रकार परम शाति से उसकी घोर पीडा को समभाव पूवक सहन किया। मैंने ही क्या, किसी ने भी उनके मुँह से उफ तक न सुनी। शायद वे इस आस्था से सदा बलवान रहे कि वेदना से जीव कभी अजीव नही हो सकता। कर्मों के ऋण को चुकाने पर ही जीव मुक्ति पा सकता है।

अपने जीवन के अतिम समय मे बीकानेर व भीनासर म पूज्यश्री ने लगभग तीन वष तक स्थिर वास किया था। इस बीच वे कुछ दिन पारखजी की बगीची में कुछ दिन डागाजी की बगीची में, कुछ दिन ऊनप्रेस म और फिर बाद म अन्त समय तक भीनासर मे थे। मुझे इस बीच अनेक बार आपके दशनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। आपके व्यक्तित्व म जो विशेष प्रकार का आकषण था उससे लोग सहज ही आपकी ओर खिचते थे। आपके चेहरे पर महर्षियों का शीतल सौम्य तेज इस काल म मैंने सदा विराजमान देखा। उसी प्रकार आपकी वाणी म अपूण सयम और विशुद्ध निमल भावना का प्रभाव पाया। ऐसा प्रतीत होता था कि मन वचन और काया के अन्तरबाह्य दोनो को उन्होंने परिशुद्ध कर लिया है। ऐसी परिशुद्धि जीवन म तभी सम्भव हो सकती है जब तपश्चर्या और साधना की चरम प्राप्ति के कठोर और कष्टकर माग पर चल कर उसकी मजिल पूरी कर ली गई हो एव कषायो पर विजय प्राप्त कर ली गई हो। ऐसा सुयोग और सम्भाव बडे बडे महात्माओ और योगनिष्ठ भाग्यशालियो को ही प्राप्त होता है। मनोभावो और परिणामों की अत्यन्त निमलता बिना कौन इस पा सका है ? मुझे यह देख कर

सदा ही सन्तोष हुआ कि चतुर्विध सघ के शाप पर विराजमान हमारे धर्माचार्य श्री म देवोपम ज्योति झलमला रही थी। जिस आदर्श की स्थापना के लिए व पूज्य पद पर आरू थे, जिनवरो के उस आदर्श को उन्होंने चरितार्थ करके दिखा दिया था। समाज की आत्मा ने अवश्य ही ग्रहण किया होगा ऐसा मेरा विश्वास है।

पूज्यश्री ने साधु साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध सघ से जिन शब्द क्षमायाचना एव क्षमादान किया था व बार बार याद करने योग्य हैं। आपने फरमाया था

मेरा शरीर दिन प्रति दिन क्षीण होता जा रहा है। जीवन शक्ति उत्तरोत्तर घट है इस बात का कोई भरोसा नहीं कि इस भौतिक शरीर को छोड कर प्राणपखेरु कब उड जा ऐसी दशा म जब तक ज्ञानशक्ति है भले बुरे की पहचान है तब तक ससार के सभी प्राणिय तथा विशेषतया चतुर्विध श्रीसघ स क्षमायाचना करके शुद्ध हो लेना चाहता हूँ मेरी आप सभ विनम्र प्रार्थना है कि आप भी शुद्ध हृदय से मुझे क्षमा प्रदान करें। इसी तरह जो द्वारा क्षमा पाने के उत्सुक हैं उन्हें मैं भी अन्त करणपूर्वक क्षमा प्रदान करता हूँ। मैंने अ आत्मा को स्वच्छ एव निर्वैर बना लिया है।'

यह केवल कथन मात्र नहीं था। जिन्होंने अन्तिम समय में उनके दर्शन किये हैं इस बात का अनुभव होगा कि ये शब्द उनकी आत्मा के अन्तरतम प्रदेश से निकले हुए स्वाभा उद्गार थे। ससार के व्यवहार के प्रति उन्हें समदृष्टि रखने की अवस्था प्राप्त हो गई थी। जीव व्यापी साधना की परम सिद्धि पर उन्होंने अधिकार कर लिया था। यदि ऐसा न होता तो उनके चेहरे पर वह परम शान्ति रह पाती जिसका अखण्ड साम्राज्य अन्त समय तक अक्षुण्ण रह उन्होंने इसी समाधि की अवस्था म वर विरोध, भयभीति रागद्वेष सबसे तटस्थ होकर पण्डितम पूर्वक शान्ति की अमर गोद म शयन किया। उनका सारा जीवन ही इस परिणाम की प्राप्ति निरत रहा। बीच-बीच म जो कई ऐसे स्थल आये हो जहाँ शासन के उत्तरदायित्व के लिए सत्य की स्थापना के लिए उन्हें कठोर होना पडा हो वे उनके द्वारा प्रस्तुत आदर्शों म मुख्य न हो सकते क्योंकि आखिर उन्होंने ऐसे प्रसङ्गो के लिए भी क्षमायाचना कर ली थी, उनके प्र किसी तरह का आग्रह नहीं दिखाया था प्रत्युत अपनी आत्मा को निर्वैर बना कर समस्त प्राणि के साथ मैत्री भाव स्थापित किया था। किसी के साथ किसी प्रकार के वैर विरोध का शेष न रखा था। तब आज उनके जीवन म आलोक की किरणें बटोरते समय हमें क्या अधिकार है हम उन्हें स्थान दें ? हमारे लिए क्या न उनके चारित्र का वही परमोज्ज्वल शात और समतह पथ प्रदर्शन का काम करे—वही जो उनके महिमाशाली जीवन का सार तत्त्व था।

पूज्यश्री का हृदयस्पर्शी उपदेश

(४८—श्रीयुत प० शोभाचन्द्रजी भारिल्ल, ब्यावर)

जीवन को ऊचा उठाने के लिए प्रवृत्ति और निवृत्ति रूप दो पखों की आवश्यकता है जिस पक्षी का एक पख उखड जायगा वह अगर अनन्त और असीम आकाश मे विचरण करने की इच्छा करेगा तो परिणाम एक ही होगा—अध पतन। यही बात जीवन के सम्बन्ध म है। जीव में एकात निवृत्ति निरी अकर्मण्यता है और एकात प्रवृत्ति चित्त की चपलता है। इसीलिए ज्ञान पुरुषो ने कहा है—

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्त ॥

अर्थात्—अशुभ से निवृत्त होना और शुभ मे प्रवृत्ति करना ही सम्यक्चारित्र समझना चाहिए। और चारित्र ही धर्म है इसलिए इस कथन को सामने रख कर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि धर्म प्रवृत्ति और निवृत्ति रूप है। अहिंसा निवृत्ति भेद है पर उसकी साधना विश्व

मैत्री और समभावना' का जागृत करने रूप प्रवृत्ति से होती है। इसी से अहिसा व्यवहार्य बनती है। किन्तु हम प्राय जीवघात न करना सिखाया जाता है पर जीवघात न करके उसके बदले करना क्या चाहिये ? इस उपदेश की ओर उपेक्षा बनाई जाती है।

आचार्य श्रीजवाहरलालजी महाराज के उपदेशो ने इस त्रुटि को पूर्ण किया था। उन्होंने धर्म का व्यवहार्य, सर्वांगीण और प्रवृत्तरूप देने की सफल चेष्टा की थी। अपने प्रभावशाली प्रवचनो द्वारा उन्होंने शास्त्रो का जो नवनीत जनता के समक्ष रखा, निस्सन्देह उसमे सजीवनी शक्ति है। उनके विचारो की उदारता ऐसी ही थी जैसे एक मार्मिक विद्वान जैनाचार्य की होनी चाहिये।

आचार्य श्री की वाणी मे युगदर्शन की छाप थी। समाज मे फैले हुए धर्म सम्बन्धी अनेक मिथ्या विचारो का निराकरण था। फिर भी वे प्रमाणभूत शास्त्रो से इच मात्र भी इधर उधर नहीं होते थे। उनमे समन्वय करने की अद्भुत क्षमता थी। वे प्रत्येक शब्दावली की आत्मा को पकडते थे और इतने गहरे जाकर चिन्तन करते थे कि वहाँ गीता और जैनागम एकमेक से मालूम होने लगते थे।

गृहस्थ जीवन को अत्यन्त विकृत देखकर कभी कभी आचार्यश्री तिलमिला उठते थे और कहते थे— मित्रो ! जी चाहता है, लज्जा का पर्दा फाडकर सब बातें साफ साफ कह दूँ। नैतिक जीवन की विशुद्धि हुए बिना धार्मिक जीवन का गठन नही हो सकता पर लोग नीति की नही, धर्म की ही बात सुनना चाहते है। आचार्य श्री उन्हें साफ साफ कहते थे—'लाचारी है मित्रो ! नीति की बात तुम्हें सुननी होगी। इसके बिना धर्म की साधना नही हो सकती। और वे नीति पर इतना ही भार देते थे जितना धर्म पर।

आचार्य के प्रवचन ध्यानपूर्वक पढने पर विद्वान् पाठक यह स्वीकार किये बिना नही रह सकते कि व्यवहार्य धर्म की ऐसी सुन्दर उदार और स्पष्ट व्याख्या करने वाले प्रतिभाशाली व्यक्ति अत्यन्त विरल होते हैं। आचार्यश्री अपने व्याख्येय विषय को प्रभावशाली बनाने के लिए और कभी कभी गढ विषय को सुगम बनाने के लिए कथा का आश्रय लेते थे। कथा कहने की उनकी शैली निराली थी। साधारण से साधारण कथानक मे वे जान डाल देते थे। उसमे जादू-सा चमत्कार आ जाता था। उन्होने अपनी सुन्दरतर शैली प्रतिभामयी भावुकता एव विशाल अनुभव की सहायता से कितने ही कथा-पात्रो को भव्यवान बना दिया है। वे प्राय पुराणो और इतिहास मे वर्णित कथाओ का ही प्रवचन करते थे पर अनेको बार सुनी हुई कथा भी उनके मुख से एकदम मौलिक और अश्रुतपूर्व सी जान पडती थी।

आचार्यश्री के उपदेश की गहराई और प्रभावोत्पादकता का प्रधान कारण था—उनके आचरण की उच्चता। वे उच्च श्रेणी के आचारनिष्ठ महात्मा थे।

आचार्यश्री के प्रवचनो का उद्देश्य न तो अपना वक्तृत्व कौशल प्रगट करना था और न विद्वत्ता का प्रदर्शन करना ही यद्यपि उनके प्रवचनों से उक्त दोनो विशेषताएँ स्वय झलकती हैं। श्रोताओ के जीवन को धार्मिक एव नैतिक दृष्टि से ऊँचा उठाना ही उनके प्रवचनो का उद्देश्य था। यही कारण है कि वे बार बार उन बातों पर प्रकाश डालते हुए नजर आते थे जो जीवन की नीव के समान है। इतना ही नही उनके एक ही प्रवचन मे अनेक जीवनोपयोगी विषयो पर भी प्रकाश पडता था। उनका यह कार्य उस शिक्षक के समान था जो अबोध बालक को एक ही पाठ का कई बार अभ्यास कराकर ऊंचे दर्जे के लिए तैयार करता है।

गुरुदेव !

(४९) श्री बालेश्वरदयालजी, सस्थापक एव सचालक डूगरपुर विद्यापीठ—

मैं तुलसीदास नहीं जो अपने राम के प्रति श्रद्धा प्रगट कर सकूँ, अर्जुन जितनी प्रतिभा

नहीं जो योगिराज कृष्ण का शिष्य कहला सकूँ स्वर्गीय महादेव भाई की भाँति शान्त एव क्रिया शील भी नहीं जिन्होंने अपने चरित्रनायक गाँधी की जीवनसफलता के लिए अपनी श्रद्धा और भाव की भेंट चढ़ा दी मैं गुरुकुल विद्यार्थी भी नहीं जिसने स्वामी दयानन्द के जीवन को अपने हृदय पर अंकित कर लिया, बड़ी देर यही विचारमन्थन रहा कि क्या मैं इतना योग्य हूँ कि पूज्यश्री के जीवन के प्रति यथार्थ श्रद्धाभाव का परिचय दे सकूँ अन्त को चचल मन ने इस विचार विनिमय पर विजय पाई ।

पूज्यश्री के दर्शन के अवसर मुझे बहुत कम मिले हैं, मैं जब जब उनकी सेवा म उपस्थित हुआ मुझे वे एक ही आशय का प्रश्न पूछते—कहिये भीलों की क्या हालत है ? इस वर्ष उनकी फसल कैसी है ? प्रश्न एकसा ही होता परन्तु उत्तर म मुझे सदैव नवीनता का अनुभव होता ठीक उसी भाँति जैसे कि सूर्य प्रतिदिन एक सा ही उगता है, परन्तु प्रत्येक दूसरे दिन उसम नवीन स्फूर्ति नव्य जीवन एव नया ही सदेश रहता है ।

मर कल्पित किले के नायक ! भीलों के आन्तरिक जीवन के प्रति आपकी इतनी लागणी देखकर हे गुरुदेव ! कभी कभी मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यदि सयोगवश इस महाविभूति की शक्ति कोई भील सेवा की दिशा म प्रयुक्त कर देता तो अधोगति की इस मौजूदा अवस्था में भील जनता न दिखाई देती प्रत्युत लाखों भीलों का यह इलाका रचनात्मक सेवा का एक आदर्श उपस्थित करता, जो भारत के अन्य प्रान्तों के सेवकों को कष्टसहन और त्याग म पथ प्रदर्शन का काम देता ।

कल्पना बड़ी सुन्दर और सुखद है कि पूज्यश्री इस सेवा क्षेत्र के आचार्य होते और लेखक उनकी उद्देश्यपूर्ति म एक छोटे से सेवक का स्थान सम्हालता । विदेश की कलुषित सभ्यता के जो कांटे आज सरल और सौम्य भावपूर्ण देहाती भील जनता म घर कर गये हैं वे न होते और होता एक प्राचीन समाज का अर्वाचीन चित्र जिसे देख हिन्दुस्तान तो क्या बिजली की चकाचौंध वाला जगत चकित हो उठता । परन्तु ऐसा होता कैसे ! ! ! आपको तो लाखों ही नहीं वरन् कोटि कोटि जनता म वीर वाणी का सुरसरि स्रोत बहाना था ।

करोड़ों के उद्धारक को लाखों म सीमित कर रखने की मेरी कल्पना कोरी विचार कृपणता ही सही परन्तु भाव भीनी होने से क्षम्य है ।

गरीब की गुदड़ी के लाल

नारकी जीवनलीला के क्षेत्र म नर ककाल और भूखे नंगे भीलों के डूगरा (पर्वतों) मे कहीं कोई जवाहर भी हाथ लग जायगा यह किस कल्पना थी ?

अज्ञान तिमिर मे चलने वाली डूगर प्रदेश की जनता ने "अन्धे के हाथ बटेर" की भाँति जवाहर की ज्योति पाई । इस अलौकिक देन के लिये मैं प्रकृति और परमात्मा का आभारी हूँ । महान् आत्माएँ धनवानों के महलों म भी जन्म ले सकती हैं और गरीबों की झोंपड़ियों में भी । इस बात की एक नई पुष्टि आपके गौरवशाली जन्म से मिलती है । प्राय निर्धनता और तपस्या का वातावरण ऐसे महापुरुषों के शुभागमन के लिए अधिक अनुकूल होता है । आपका एक साधारण कुल मे पैदा होना इन सब बातों का एक ज्वलन्त उदाहरण है ।

क्रान्तिकारी धर्मगुरु

महापुरुषों के अस्त्र शस्त्र तथा प्रयोग भी भिन्न भिन्न होते हैं । कोई तीर, तलवार बन्दूक और तोपों की विध्वसक गर्जना से विरोधियों के गर्व को चूर करता है तो कोई क्षमा का चोगा पहन साधु रूप म अपनी विवेकपूर्ण वाणी और लेखनी से सिंह गर्जना करता है कोई सशस्त्र क्रान्ति करता है तो कोई शास्त्र संगत क्रान्ति कर प्रभावकार बन जाता है और शत्रुओं को शिष्य

बनाता है। अहकार, अनीति वथाडम्बर और पाखण्ड के वातावरण में पली भ्रष्टा मुख कपिसतति को आपने धम की मूल वाना का वास्तविक अथ दिया आपके भाषणा पर से लिखी गई अनेक पुस्तको में स धम व्याख्या एक छोटी सी पुस्तक भी जैनधम की व्यापकता को निर्विवाद बनाने के लिए पर्याप्त है।

भारत के विविध स्थानो मे पूव से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक घूम फिर कर कुमाग गामियो को प्रबल तक अद्भुत युक्तियो स परास्त कर गम्भीर विचार पूण कई ग्रथो की रचना की। आस्तिकता, दया और सुधार का नया स्रोत बहाया।

गीता के गायक गुरुदेव !

प्राचीन ऋषियो की भांति जब आप गीता के गुह्य उपदेशो की व्याख्या करने बठते हैं तो एक ही वाणी से अवस्थानुकूल भिन्न २ अर्थो की सृष्टि होने लगती है वयोवृद्ध उससे निवृत्ति का उपदेश मान सन्तुष्ट दिखाई देते हैं और युवा हृदय उसी उपदेश को प्रवृत्ति माग का प्रेरक मान कमवीर की भांति तरगो में बहता हुआ नव नैतन्य प्राप्त करता है। यह केवल अनुभवगम्य है जिनका आनन्द केवल उन्ही को मिला है जिन्होंने गुरुवाणी का लाभ लिया हो।

हे विशालबुद्धि तपस्वी, दार्शनिक गुरुदेव ! आपको मेरा त्रिकाल वन्दन ?

आचाय श्री जवाहरलालजी के कुछ सस्मरण

(श्री मणिलाल सी० पारेख, राजकोट)

50

Some years ago when Acharya Shri Jawaharlalji Maharaj was here I had the opportunity to hear a few of his sermons and I must say that I was deeply impressed by them, I found in these sermons a quality which is not often present in the (व्याख्यान) vyakhyans as they are Called by the Jains It was not the matter so much as the manner in which Acharya Shri presented whatever he had to say that constituted the charm and the attraction of his sermons These came not from his intellect but from his heart which was full of sympathy and love for the congregation Not that the matter was not very important and of a high quality, but the manner was of the essence there of He speaks from a deep experience of religious life and because of this he created an atmosphere which was very helpful to his hearers.

The most important part of his sermons lay in the fact that he began them with prayers and a short sermon on the meaning of these prayers and the place of prayerfulness in life This put his lectures on a different level altogether, making them sermons in the true sense of the term From my boyhood I have heard a number of Jain Sadhus giving their (व्याख्यान) Vyakhyanas, but I have never known any who gave such prominence to prayer This puts a new spirit in the sermon proper that Shri Jawaharlalji gives The atmosphere is surcharged with devotion and the

congregation is decidedly better prepared to receive the teaching given in the (व्याख्यान) Vyakhyana proper

As for the (व्याख्यान) Vyakhyana, it was always full of sound moral and religious teaching This was, however, of a practical kind and speculation had a small place in it

So far I have said something about the matter and the manner of the sermons of Acharya Shri Jawaharlalji These I noticed when I saw him first But there is somthing more which I must mention here I came to know the Maharajshri personally better when he came to the Rajkot civil station after some months' stay in the city proper I had two intimate talks with him about things concerning spiritual life and it was these which revealed to me that he is a true Sadhu We talked about the way in which peace could be obtained and when I told him what my personal experience was in regard to this matter, he agreed with me and told me that he too had the same experience To be more explicit, I told him to start with that since I believed in God, the secret of religious life lay in being smaller and smaller, less and less and that it was this alone which gave real peace to me He replied to this by saying that he himself had found this to be true in his own case that it was only when he thought of himself, not as a big person or a great Sadhu or a leader or a Guru, but as an ordinary man, one among the others, that he had peace of mind He added that when he ceased to think in this way, the disturbance in mind began My feeling is that he said this last in reference to his position as one of the most important leaders of the Jain Sadhus

Whatever this be, I found in the course of these too short but extremely intime personal talks that he is a true Sadhu and when I say this I am paying him a great tribute I found in him the most important qualities, according to my own idea of the Sadhu life viz Simplicity of soul humility of heart and sincerity He has certainly the qualities usually expected in a Jain Sadhu, but the ones mentioned above are the basic qualities and also the crown and fulfilment of the ordinary virtues of Sadhu life It is these which prevent a man and much more a Sadhu from becoming a prey to pride, which is always ready to attack and take possession of those who would follow the higher path Pride especially in its subtler form is the greatest enemy of those who are apt to think themselves as Sadhu and as such superior to

laymen or the Shrawaks, and it is still more so of those who attain to a high position among the Sadhus Both in the East and the West, a number of Saints have said that it is easy to renounce the world, both (कंचन और कामिनी) the Kanchan and Kamini, wealth and woman, but that the hardest thing to renounce is pride Because of this one must have true humility in one's heart, and the roots of this must go deep into one's soul I am glad to say that I found something of this humility in Acharya Shri Jawaharlalji and it was this which evoked true love and respect for him in my heart I have seen a number of deeply religiousmen and women of various communities such as the Jains the Brahmans, the Christians the Hindus etc, etc and I place Shri Jawaharlalji among the very few who have impressed me the most for their truly Sadhu life

This is what it should be, especially in a congregation numbering hundreds of people and containing all sorts of men and women and even boys and girls In such congregations the teaching should be such as sustains the interest of all throughout a matter in which Shri Jawaharlalji Maharaj's sermons never failed The teaching was full of illustrations of all kinds drawn from Jain scriptures and other books and also from the scriptures of other religions and even from ordinary life From the way in which Shri Jawaharlalji Maharaj dealt with various subjects it seemed to me that he is not only extremely tolerant towards all religions but has a positive friendly and reverent attitude towards them This too is but proper and it adds to his spiritual stature While drinking deeply from the fountains of Jain Scriptures, he has drawn much inspiration from such great scriptures as the Gita the Upanishads and the Bhagvata Even the Bible and the Kuran are not alien to him and he is ready to receive inspiration from them In this also I found him a class by himself among the Jain Sadhus, especially when we look to his age and early surroundings His power of impressing the congregation also lay in the fact that he is fully alive to what is going on in the world to day, in his close acquaintance with our present political, economic and social problems He knows the besetting temptations and the sins of our people to day and has sound advice to give as to how we should avoid these All this makes his sermons truly vital

In addition to this I found in these sermons an original quality which I have noticed in few Jain preachers This comes, from

Shree Jawaharlalji's deep thinking on various subjects and from talents which he has been endowed with from his birth There is a touch of poetry in this originality which also must be mentioned Had he thought it propet to devote himself to literary work I am sure he could have earned a good name for himself in the literary world But he has wisely chosen to be a Sadhu and his occupation is certainly higher that of a literary man

The qualities mentioned above have with them another which may be partly the cause and partly the effect there of This is no other than what is called child likeness, one of the greatest qualities a human being can have When some children were brought to Jesus Christ by their mothers to be blest by him, his disciples would not allow them to come near him thinking that thereby his dignity would suffer Seeing this he said to the disciples "Let them come for such is the Kingdom of heaven made' The innocence, the sense of wonder the teachableness etc are the qualities of children and I found in Maharaj Shri Jawaharlalji some of these He is alive to the fact that knowledge is infinite and that it can be had in all directions, provide one does not close the doors of ones soul by stupid bigotry I found in him this openness of soul, this readiness to learn and appreciate other people's points of view and even to assimilate whatever may be good in them

I had a concrete proof of this not only in my talks with him but in the following incident which is indeed remarkable I presented him two small books of mine before leaving him finally, one of these was (जीवन वेद) Jeewan Veda by the great Bengali religious teacher Brahmarshi Keshub Chander Sen It is a kind of his autobiography and is in many ways a most remarkable production After leaving this book with him, I went to hear him the next day in the open meeting and my surprise can only be imagined when he gave us a talk on prarthana, prayer, which is indeed a favourite Sadhan with him but which was in the present case suggested to him by the very first chapter of (जीवन वेद) the Jeewan Veda He had read it and even based his sermon on it, of course he treated the subject from his own point of view, but his appreciation of the other was visible throughout He did a similar thing again the next day when he gave his talk on the Sense of Sin which formed the second chapter of the book An incident of this kind shows the magnanimity of his mind as

nothing else can

I believe very soon after this he left Rajkot, perhaps the next day, and when we went to see him off, there was a large crowd of people, all of whom were extremly sorry to part with him After having bade him good bye to them all amidst scenes of sorrow and pain, when his eyes fell on me while passing by me he said to me "We are carrying with us your booklets"

After having such experience with him I must say that things of this kind are not done by ordinary men I may also add that, taken all in all, Acharya Shri Jawaharlalji is a Sadhu, in the truest sense of the term

कुछ वर्ष पहले जब आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज यहाँ विराज रहे थे, मुझे उनकी वक्तृताएँ सुनने का अवसर प्राप्त हुआ था। निस्सन्देह उनका मुझ पर गहरा असर पड़ा। मुझ उन मे एक ऐसी विशेषता मालूम पड़ी जो जैनों द्वारा व्याख्यान शब्द से कहे जाने वाले उपदेशो म प्राय नही होती। आचार्य श्री के उपदेशो म जो बात आकर्षक और प्रभाव को पैदा करती है वह उनका कथनीय विषय नही किन्तु उसे जनता के सामने रखने का शैली है। वे उपदेश उन के मस्तिष्क से नही किन्तु उस हृदय से निकलने हैं जो श्रोतृसमाज के प्रति सहानुभूति और प्रेम से पूर्ण है। यह बात नही है कि उनका विषय महत्वपूर्ण और ऊँचे दर्जे का नही होता किन्तु प्रभाव का वास्तविक रहस्य उनकी शैली है। वे अपने धार्मिक जीवन के गहरे अनुभव के आधार पर बोलते हैं। इस कारण एक ऐसा वातावरण उत्पन्न कर देते हैं जो श्रोतृवर्ग के लिए बडा सहायक है।

उनके उपदेशो का सब से अधिक महत्व इस बात म है कि वे उन्हे प्रार्थनाओ के साथ प्रारम्भ करते हैं। उस के बाद प्रार्थनाओ के अर्थ तथा जीवन म प्रार्थना के स्थान पर छोटा सा भाषण देते हैं। यह बात उनके व्याख्यानो को एक दूसरे स्तर पर पहुँचा देती है। वे उस समय सच्चे अर्थ म धर्मोपदेशक बन जाते हैं। मैंने अपने बचपन से बहुत से जैन साधुओ के व्याख्यान सुने हैं किन्तु प्रार्थना को इतना महत्व देने वाला कोई नही मिला। जवाहरलाल जी महाराज के उपदेशों म यह बात नई जान डाल देती है। सारा वातावरण भक्ति म परिणत हो जाता है और जनता अगली व्याख्यान को सुनने के लिए अधिक तयार हो जाती है।

आप का व्याख्यान नीति और धर्म के ठोस उपदेशों से भरा होता है। वह सारा का सारा व्यावहारिक होता है। थोथी सैद्धान्तिक बातें उसम कम रहती हैं। उपदेश ऐसा ही होना चाहिए विशेष रूप से ऐसी सभा मे जहाँ सकड़ो की सख्या म स्त्री पुरुष, बालक बालिकाएँ आदि सभी प्रकार की जनता हो। ऐसी सभा में ऐसी व्याख्यान होना चाहिए जिसम सभी के काम की बातें हो। श्री जवाहरलाल जी महाराज के उपदेश इस बात म कभी नही चूकते। उनके व्याख्यान विविध प्रकार के दृष्टान्तो स भरे होते हैं जिन्हें वे जैन आगम तथा दूसरे ग्रन्थो के साथ साथ इतर सम्प्रदायो के धार्मिक ग्रन्थो तथा सामान्य जीवन स उद्धृत करते हैं। श्री जवाहरलाल जी महाराज भिन्न भिन्न विषयो की जिस रूप से चर्चा करते हैं उनसे मालूम होता है कि दूसरे धर्मों के प्रति वे अत्यधिक सहनशील ही नही हैं किन्तु विध्यात्मक मित्रता तथा सम्मान का भाव रखते हैं। यह बात भी उन की विशेषता है और उनके आध्यात्मिक पद को ऊँचा करती है। जैन वाङ्मय के गहरे अध्ययन के साथ गीता, उपनिषद् आदि भागवत सरीखे महान् ग्रन्थो स भी उन्हें गहरी प्रेरणा मिली है। बाइबिल और कुरान स भी वे अपरिचित नहीं हैं और उनसे भी आध्या

त्मिक प्रेरणा लेने को तैयार हैं। इस बात के लिए भी जैन साधुओं में आप अपनी श्रेणी के एक ही है, विशेषतया जब हम उनके समय और आस पास के वातावरण को देखते हैं। उनमें जनता को प्रभावित करने की जो शक्ति है उसका एक कारण यह भी है कि वे संसार की सामयिक हलचल मे पूर्ण जागरूक रहते हैं। वर्तमान राजनीतिक, आर्थिक, तथा सामाजिक समस्याओं से वे पूर्ण परिचित हैं। आधुनिक जनता को जो प्रलोभन और पाप घेरे हुए हैं वे उन्हें जानते हैं तथा उन्हें दूर करने के लिए निर्दोष परामर्श देते हैं। ये सभी बातें उनके उपदेशों को सजीव बना देती हैं।

इनके साथ साथ आपके उपदेशों में मुझे एक मौलिक विशेषता दिखाई दी है जो दूसरे जैन उपदेशकों में नहीं देखी गई। यह विशेषता श्री जवाहरलाल जी महाराज में विभिन्न विषयों पर किए जाने वाले गंभीर विचार तथा जन्मसिद्ध स्वाभाविक प्रतिभा के कारण आई है। उनकी इस मौलिकता के साथ कवित्व का भी उल्लेखनीय सम्मिश्रण है। यदि वे अपना जीवन साहित्यिक क्षेत्र मे लगाते तो मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि वे साहित्यिक संसार में अच्छा नाम पैदा करते। किन्तु उन्होंने समझ बूझ कर साधु बनना पसन्द किया है और उनका कार्यक्षेत्र एक साहित्यिक से निःसन्देह बहुत ऊँचा है।

अभी तक मैंने आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज द्वारा दिये गए उपदेशों के प्रतिपाद्य विषय और उनकी शैली के विषय में कहा है। जब मैंने उनके पहले पहल दर्शन किए तभी इन बातों की ओर मेरा ध्यान गया था। किन्तु इनसे भी अधिक कुछ और बातें हैं जिनका उल्लेख अवश्य करना चाहिए। महाराज श्री कुछ महीने राजकोट नगर में विराजने के बाद जब राजकोट सिविल स्टेशन पर आए उसी समय मुझे उनके व्यक्तिगत परिचय का अधिक लाभ मिला। आध्यात्मिक जीवन से सम्बन्ध रखने वाले विषयों पर मेरा उन से दो बार घनिष्ठ वार्तालाप हुआ। उसी समय यह बात स्पष्ट हुई कि वे एक सच्चे साधु हैं। हमने शान्ति के मार्ग पर वार्तालाप किया था। जब मैंने इस विषय मे अपने विचार उनके सामने रक्खे तो वे सहमत हो गए और कहने लगे मेरा भी यही अनुभव है। मैंने उनसे कहा—मैं ईश्वर में विश्वास करता हूँ। इसलिए मानता हूँ कि धार्मिक जीवन का रहस्य यही है कि मनुष्य अपने को छोटे से छोटा अनुभव करता जाय। इसी अनुभव ने मुझे वास्तविक शान्ति प्रदान की है।

उन्होंने उत्तर दिया—मुझे अपने जीवन में भी यही बात सत्य प्रतीत हुई है। जब मैं अपने आपको एक बड़ा आदमी, बड़ा साधु, नेता या या गुरु न समझ कर साधारण व्यक्ति समझता हूँ, अपने को दूसरे साधारण प्राणियों मे से ही एक मानता हूँ उस समय मुझे मानसिक शान्ति प्राप्त होती है। जब मैं इस प्रकार सोचना बन्द कर देता हूँ, मस्तिष्क क्षुब्ध हो उठता है।"

मेरा विचार है यह अन्तिम बात उन्होंने जैन सम्प्रदाय में नेता के रूप में अपने ऊँचे पद को ध्यान में रख कर कही थी।

जो कुछ भी हो, इन दो छोटे किन्तु अन्तरङ्ग वार्तालापों के सिलसिले में मुझे मालूम हो गया कि वे एक सच्चे साधु हैं। ऐसा कहकर मैं उनके प्रति अपनी महान् श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर रहा हूँ। आत्मा की सरलता, हृदय की नम्रता तथा निष्कपटता आदि जो विशेषताएँ मेरे विचार से एक साधु में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं वे मुझे उनमें प्रतीत हुईं। निःसंदेह, जैन साधु में साधारणतया जो विशेषताएँ होनी चाहिए वे सभी उन में विद्यमान हैं, किन्तु मैंने जो विशेषताएँ ऊपर बताई हैं वे साधु जीवन का आधार है तथा उसके लिए आवश्यक साधारण गुणों मे मूर्धन्य तथा उन्हें पूर्ण करने वाली हैं। यही विशेषताएँ साधारण व्यक्ति, विशेषतया साधु को अभिमान के आक्रमण से बचाती हैं, जो कि ऊँचे मार्ग में चलने वालों पर आक्रमण करने तथा अधिकार जमाने के लिए सदा तैयार रहता है। अपने को श्रावकों से बड़ा तथा साधु समझने वाले व्यक्तियों का अभिमान, विशेषतया अपनी सूक्ष्म अवस्था में सब से बड़ा शत्रु है। साधुओं में भी ऊँचे पद को

प्राप्त करने वालो के लिए तो यह और भी घातक है। पूर्वीय और पश्चिमी बहुत से साधुओ ने कहा है कि कचन और कामिनी को छोडना आसान है किन्तु अभिमान को छोडना कठिन है। अभिमान को छोडन के लिए हृदय मे सच्ची नम्रता होनी चाहिए और इस की जडें आत्मा में गहरी उतरनी चाहिए। मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज में यह नम्रता मुझे किसी हद तक मिली और इसी न मेरे हृदय में उनके प्रति सच्चे प्रेम और आदर को जन्म दिया। जन ब्राह्मण, क्रिश्चियन हिन्दू आदि जातियो के धर्म म गहरे उतरे हुए बहुत से स्त्री और पुरुषा के मैंने दर्शन किए हैं, उन मे जिन्होंने अपने सच्चे साधु जीवन के द्वारा मुझ पर प्रभाव डाला है उन थोडे से इने गिने महापुरुषा म साधी श्री जवाहरनाल जी महाराज के लिए मेर हृदय म स्थान है।

ऊपर बताई गई विशेषताओं के अतिरिक्त एक और विशेषता है जो कि काय और कारण दोनो रूप से विभक्त है। वह है उनकी बालक सी सरलता। यह मानवजीवन की सबसे बडी विशेषताओ म से है। ईसामसीह का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए जब कुछ माताएँ अपने बच्चों को लेकर उनके पास आई तो उनके शिष्यो ने बालको को पास न आने दिया। वे सोचने लगे कि इससे ईसामसीह का माहात्म्य घट जायगा। यह देख कर ईसामसीह ने अपने शिष्यो से कहा—बच्चों को आने दो। इन्हीं के द्वारा स्वर्ग का साम्राज्य बनता है।" भोलापन, आश्चर्यान्वित बुद्धि, ग्रहणशीलता आदि बालकों क गुण हैं। इनम स कुछ मुझे जवाहरलालजी महाराज म भी प्राप्त हुए। वे इस बात को अच्छी तरह जानते है कि ज्ञान अनन्त है और वह सभी दिशाओ से प्राप्त किया जा सकता है, बशर्ते कि मूर्खतापूर्ण धर्मान्धता के द्वारा व्यक्ति अपनी आत्मा के द्वार बन्द न करे। आत्मा का यह खुलापन, दूसरे व्यक्तियो के दष्टिकोण का समझन, उनका आदर करने तथा उनमे रहे हुए अच्छेपन को अपनाने की तत्परता पूज्य श्री में मुझे स्पष्ट प्रतीत हुई है।

उनके साथ की गई बातचीत ही नही किन्तु एक घटना के रूप मे मेरे पास इस बात के लिए ठोस प्रमाण है। यह घटना वास्तव मे उल्लेखनीय है—

अन्तिम विदा से पहले मैंने उन्हें दो छोटी छोटी पुस्तकें दी। उनमे से एक का नाम था 'जीवन वेद' जो कि बगाली धर्मोपदेशक ब्रह्मर्षि केशवचन्द्र सेन द्वारा लिखी गई थी। यह एक प्रकार स उनकी आत्म-कथा है और कई बातो के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण पुस्तक है। वह किताब उनके पास छोडने के बाद दूसरे दिन मैं उनका जाहिर व्याख्यान सुनने गया, जब उन्होंने प्रार्थना, जिसे वे अपने जीवन का साधन मानते हैं, पर व्याख्यान दिया तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसमें 'जीवन वेद के पहले अध्याय की बहुत सी बातें थी। उन्होंने उसे पढ़ा था और अपने उपदेश को उसी के आधार पर दिया था। नि सदेह उन्होंने विषय की चर्चा अपने दृष्टिकोण के अनुसार ही की थी किन्तु जीवन वेद' के प्रति उनका आदर सारे व्याख्यान में प्रतीत होता था। यही बात दूसरे दिन भी हुई जब उन्होंने 'पाप की बुद्धि' पर व्याख्यान दिया। यह पुस्तक का दूसरा अध्याय था। यह घटना उनके हृदय की विशालता को प्रकट करती है, जिसके बिना यह हो ही नहीं सकता।

इस घटना के बाद बहुत शीघ्र सम्भवतया दूसरे ही दिन उन्होंने राजकोट छोड़ दिया। जब हम उन्हें पहुँचाने गये तो वहाँ बहुत भीड इकट्ठी हुई थी। उनके वियोग से सभी बहुत दुखी थे। शोक और दु ख के उस दृश्य म सब को अन्तिम मगलाचरण सुनाने के बाद मेरे पास से निकलते समय जब उनकी दृष्टि मुझ पर पडी तो कहा—आपकी पुस्तकें हम अपने साथ ले जा रहे हैं।

उनके विषय म इस प्रकार का अनुभव प्राप्त करके मैं कहूगा कि ऐसी बातें साधारण

व्यक्त नहीं कर सकता। सभी बातों को लिया जाय तो हमें कहना पड़ेगा कि श्री जवाहरलालजी महाराज साधु शब्द के सच्चे अर्थ में साधु हैं।

श्रद्धांजलि

बा० मस्तराम जैनी, एम० ए० एल० एल० बी० अमृतसर

51

It was in the summer of most probably, 1932, that I had Darshans of His Holiness at Delhi Baradari, Chandni Chowk where I had gone with the Punjab batch, to attend a meeting of the All India Sthanakwasi Sadhu Sammelan, which was held a year after at Ajmer Before I had heard a good deal about the austerity learning and diction of His Holiness discourses, which made an impression on the hearts of his audience At Delhi what struck me the most was the disciplined and spontaneous divotion of the Shrawak Sangh that he enjoyed, as over a thousand people were sitting spell bound while he was delivering his discourse in the morning, in a lucid manner in which he was placing, will find and intricate philosophical principles before his audience It was really a treat to hear him and I consider myself lucky indeed that I was afforded an opportunity of being present there In that discourse I remember what a fine tribute he paid to his late-Holiness Acharya Shiromani Shri Pujya Sohanlalji Maharaj for his piety, learning and austerity, and who can deny the worth of such a tribute when paid by one great man to another equally great, for merit and worth alone can recognise and apperciate what merit and worth means and where it lies

Just on the eve of the Ajmer Sadhu Sammelen, at Beawar, I had his darshan again along with Rai Sahib Tekchand ji and lala Rattanchandji of Amritsar As it is a open secret, he could not easily reconcile himself with the holding of the Sammelan and the final Sanction attaching to its decisions, till some preliminary doubts were resolved and removed But once this was over, he was a whole hearted supporter of the Sammelan As soon as we entered, he was having a talk with the late Seth Gadhmalji Lodha, of Ajmer He immediately had a talk with us regarding the sammelan and what impressed me was the ready and quick manner in which he was catching our points, and vast and comprehensive out look that he was bringing to bear on the problems discussed, and at once appreciating the point of view other than his own I had so far the experience of people leading a life of specialisation

seclusion having a great natural difficulty to understand other points of view, what to say of appreciating them This meeting was really a pleasant and welcome surprise for me

Then finally his opening speech at the time of the open session of the Ajmer Sadhu Sammelan by itself an event of great historical importance was the most important and impressive event of the occasion, and I noticed what command he had over the hearts of the largest member of men and women present in the whole concourse, and the utmost devotion that was shown to him It is not wonder that with this devotion and discipline on the one side and the deep insight, knowledge, piety, austerity, lofty idealism save and well balanced views and a comprehensive out look on the other is a combination, which, though luckily, is a very rare one indeed, but is nevertheless capable of producing results most fruitful and abiding

I along with others, join in paying my humble tribute to the qualities of head and heart of His Holiness and pray that he be spared for more time, in full possession of his physical and mental powers to guide the destinies of the Jain Samaj

सम्भवतया १६३२ की गरमी म जब पूज्यश्री चादनी चौक देहली की बिरादरी म ठहरे हुए थे मैंने आप क दशन किए। म उस समय अखिल भारतीय स्थानकवासी साधु सम्मेलन की एक बैठक म सम्मिलित होने के लिए पजाबी दल के साथ गया था। सम्मेलन का अधिवेशन एक साल बाद अजमेर में हुआ था। पूज्यश्री के कठोर सयम विद्वता और श्राताओ के हृदय पर स्थायी प्रभाव डालने वाली आप की भाषण शली के विषय म मैंने पहले सुन रखा था। देहली म जिस बात ने मुझे सब स अधिक प्रभावित किया वह थी श्रावक सघ की आपके प्रति स्वाभाविक तथा अनुशासनपूर्ण भक्ति। प्रात काल जिस समय आप भाषण दे रहे थे, हजारों व्यक्ति मन्त्र मुग्ध से बठ थे। अत्यन्त सूक्ष्म तथा उलझ हुए दार्शनिक सिद्धान्तो को श्राताओ के सामने आप बडी प्रांजल भाषा और सुगम शली म रख रह थ। वास्तव मे आपका भाषण सुनना एक दुर्लभ वस्तु है। उस समय उपस्थित होने का अवसर मिलने के लिए मैं अपने का भाग्यशाली मानता हूँ। मुझे स्मरण है कि उस समय स्वगस्थ आचार्यशिरोमणि पूज्य श्री सोहनलाल जी महाराज के प्रति उनकी पवित्रता, विद्वता, सयम के लिए श्रद्धाजलि समर्पित की थी। जब एक महापुरुष अपने ही समान दूसरे के प्रति श्रद्धांजलि समर्पित करता है ता उसके महत्व के विषय म किसी को सदेह नही हो सकता। क्याकि गुण और योग्यता किसे कहते हैं और व कहाँ रहते हैं, इस बात की पहचान और कदर गुण और योग्यता ही कर सकते हैं।

अजमेर साधु सम्मेलन क कुछ ही पहले मैंने ब्यावर मे आप क फिर दर्शन किए। उस समय रायसाहेब लाला टेकचन्द जी और अमृतसर के लाला रतनचन्द जी मेरे साथ थे। यह एक सर्वविदित रहस्य है कि पूज्य श्री साधु सम्मेलन करने और उसके निश्चयों को मानने के लिए तब तक तयार नही थे जब तक कि उन का प्रारम्भिक शङ्काए समाधान द्वारा दूर न कर दी गई। किन्तु एक बार शङ्काएँ दूर होने पर व सम्मेलन का हार्दिक समर्थन करने लगे। जिस समय हम

अन्दर गए आप स्व० सेठ गाढ़मलजी लोढा अजमेर से बात कर रहे थे। आपने तुरन्त हमारे साथ सम्मेलन के विषय में बातचीत आरम्भ कर दी। जिस शीघ्रता और तत्परता के साथ वे हमारे विचारों को समझ रहे थे, विवादग्रस्त समस्याओं के लिए वे जिस विशाल तथा व्यापक दृष्टिकोण को अपना रहे थे और विरोधी दृष्टिकोणों का जिस प्रकार स्वागत कर रहे थे, इन सब का मुझ पर बहुत असर पड़ा। मुझे अब ऐसे व्यक्तियों का अनुभव हुआ था जो या तो अपने विचारों को बहुत महत्व देते हैं या सर्वथा अलग हो जाते हैं। दूसरे के दृष्टिकोण को समझना भी उन के लिए स्वभावतः कठिन होता है उस का आदर करना तो दूर की बात है। यह मुलाकात मेरे लिए वास्तव में आनन्द और आदरणीय आश्चर्य से भरी थी।

अजमेर में साधु सम्मेलन का खुला अधिवेशन हुआ। यह बात स्वयं अपना ऐतिहासिक महत्व रखती है। किन्तु उस में भी सब से अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली घटना थी सम्मेलन का प्रारम्भ करते समय दिया गया आपका भाषण। सम्मेलन में बहुत बड़ी जनसंख्या थी। सभी स्त्री और पुरुषों के हृदय पर आपका प्रभुत्व और आपके प्रति सभी की अत्यन्त भक्ति मुझे उसी समय देखने को मिली। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि एक ओर इस प्रकार की भक्ति और अनुशासन तथा दूसरी ओर गम्भीर सूक्ष्म दृष्टि, ज्ञान पवित्रता, तपस्या, उच्च आदर्श, सुसंगत और समतुल विचार तथा व्यापक दृष्टिकोण एक ऐसा मेल है जो भाग्य से बहुत ही विरले महापुरुषों में उपलब्ध होता है। ऐसा मेल बहुत ही लाभदायक तथा स्थायी कार्य कर सकता है।

पूज्यश्री के हृदय और मस्तिष्क की विशेषताओं के लिए दूसरों के साथ मैं भी अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि वे अपनी शारीरिक मानसिक शक्तियों को अक्षुण्ण रखते हुए चिरकाल तक जीवित रहें और जैन समाज के सिद्धान्तों के लिए मार्गप्रदर्शन करते रहें।

जैनसमाजनुं जवाहर

५२—(ले० प्रो० केशवलाल हिंमतराय कामदार एम० ए० वडोदा)

मैं अनेक जैन साधु साध्वीओनो समागम कर्यो छे, तेमां श्री जवाहरलाल महाराज ने हुँ उच्च कोटिमा मूकुं छुं। मने स्थानकवासी मूर्तिपूजक अने दिगम्बरी साधुओनो थोडो घणो परिचय छे। तेमनी पासे थी में अनेक वार बोध लीधो छे। तेमां ना घणाओ साथे मारो संपर्क गाढ़ छे एम पण हुँ कही शकुं। ए बधा मंडलमां मने श्री जवाहरलाल जी महाराज उच्च कोटिना साधु लाग्या छे।

बोटाद मुकामे अमे त्रण चार दिवस रोकाया हता। त्यारे मने पूज्य महाराजनां व्याख्यानो सांभलवानो लाभ मल्यो हतो। महाराज श्री व्याख्यान शरू करता ते अगाडी हमेशा तेओ एकाद तीर्थंकरनुं स्तवन करता हता। ए स्तवन अत्यन्त भाववाही हतुं। ते ते स्तवन नो अर्थ तेओ अमने सुन्दर रीत समजावता हता। वृद्ध उमरे पण तेमनो आवाज सकडो नर नारीओना समुदाय ने छेडे सुधी जई शकतो। महाराज श्री ना व्याख्यानो श्रोता जनोना स्वभाव ने अनुकूल पडे तेवा हतां। तेमां न्याय, विद्वत्ता करुणारस बोध, लोककथा, फिलसुफी वगेरे बधां तत्वो आवतां। नारी फिलसुफी सामान्य श्रोता जनोने स्पर्शी शकती नथी। नर्यो न्याय सामान्य श्रोताजनोना मगजमां बेसी शकतो नथी। नरी विद्वत्ता लूखी लागे छे। महाराजश्रीना व्याख्यानो मां बधां तत्वो नो समावेश थतो हतो ते थी अमने तेमां घणो रंग पडतो अने अमारा ऊपर तेनी सचोट असर पडती। एवां तेमना व्याख्यानो ना संग्रहो राजकोट निवासी तेमना प्रशंसको तरफ थी अने तेमां पण मारा मित्र भाई श्री चुनीलाल नागजी वोराना प्रयास थी बहार पडेला छे, जे वाचकोने मली शके छे अनेक कुटुम्बो आ संग्रहोने वाचीने चरित्रशील अने विनयशील बन्यां छे।

महाराज श्री जवाहरलाल जी वृद्ध उपरे पण नवीन विचारो धरावे छे। एटले के तेओ सर्वे स्वभावना समुदाय ने अनुकूल नीवड्या छे। तओ सम्प्रदाये स्थानकवासी साधु छे, पण तमना मा कशो दुराग्रह नथी। अलबत्त, स्थानकवासी सप्रदायनी साधुत्वभावना ने अवलबी ने तेओ रहे छे ते खरु छे। तेओ बीजा मत मतान्तर प्रत्ये उदार दृष्टि धरावे छे। शास्त्रो नो अथ तेओ नवीन दृष्टि ने अनुकूल पडे तेवी रीते करी शके छे। तना पालन मां तेओ कशी शिथिलता चलावता नथी। पोताना प्रशसको द्रव्य सग्रह करी जैन समाज नी व्यावहारिक उन्नतिमा तेने सपयोग करे ते प्रत्ये तेओ एकदम उदासीनता सवे छे। स्थानकवासी सप्रदायनी सघव्यवस्थामा जन दृष्टि सचवाई रह तेटलु तओ इच्छे छे। तमने पक्षापक्षी जरा पण गमती नथी जो के स्थानकवासी दृष्टि थी कई साधु नु वतन विरुद्ध जाय तो त तेमन अनुकूल आवतु नथी।

महाराज श्री जवाहरलालजीनो पोताना शिष्यसमूह मोटा छे। ते समूहमा योग्य व्यक्तिओ ने तओ अनुकूल शिक्षण आपवा हमेशा तत्परता धरावता रह्या छे। तम ना शिष्यो मा केटला एवोनु सस्कृत साहित्यनु ज्ञान मने उच्चकोटिनु लागेलु। वडोदरा मुकामे तेओ पधार्या हता त्यारे तेनना एक शिष्य ने हु प्राच्य विद्यालयाम लई गएलो त्यारे मने तनो खास अनुभव थएलो।

पूज्य श्री जवाहरलाल जी ना चातुर्मासो बधा जन समुदाय ने अवलबे छे। तेओ एकज देशमा के विभागमा रह्या नथी। तमण जैनोने मोटे भाग बोध्या छे। पोत जन साधु छे ते बात तेओ भूली जता नथी। जन साधुओ जनेतर समाज ने बोधे त वरजीय छे पण केटलीक बार कोइ कोइ जन साधुओ फक्त जनतर समाजनज सवे छे अने जैन वेश धारे छे छता जैनेतर दृष्टि थी जीवन चर्चा करे छे अने लोकोना प्रेम मेलववा प्रयत्न करे छे। श्री जवाहरलाल जी महाराज आवा विचित्र स्वभाव थी दूर रह्या छे, अने छता तेओ जनोन प्रिय छ तटलाज जनतरो ने पण प्रिय छे।

महाराजश्री के साथ कुछ घडिया

५३—कुमारी सविता वेन मणिलाल पारेख, बी० ए० राजकोट C S

In the year 1939 Maharajshri Jawaharlalji with his disciples benefited the Rajkot public by his arrival in Rajkot Rajkot was thus made a sacred place

But this fact I realized only a few days before the Maharaj shri s departure from Rajkot to other places, and so far I was quite unfortunate because I could not take full advantage of the religious knowledge of the holy minded Saint

I was made to respect him and was attracted to talk to him by his instructions in holy knowledge to the Rajkot public and especially the Jains I heard him in Hindi too and that made me pay my respects to him more and more

First I shall deal with his (व्याख्यान) "Vyakhyans" and the impressions they left upon my mind

The thing which impressed me the most is that he is a nationalist saint He aspires after the Kalyan' of Bharat and Bhartiya He asks and preaches the people to follow Gandhiji,

the great national leader of India, in Ahimsa and Khadi especially He gives much importance to Gandhiji's constructive programme His meetings, here, in Rajkot, with Gandhiji and Vallabhbhai Patel shows that he is really a nationalist Saint That he is a nationalist Saint is a truism, but at the same time he can never even think of injuring the Britishers' interests, which show his greatness Britishers and other nations are in no way his enemies, they are brethern to him and he aspires after their 'Kaly in' too

Another great thing in him is his philosophy Much can be said about it Prayer and the Prayed one are the most important elements of his philosophy These are the centres around which the whole of his philosophy revolves He says that the prayer should be 'Nishkama' which is one of the greatest preachings of the Gita, he says that the prayer should be made for the welfare of all people He gives very great importance to the peace of mind, and he always says that prayer is the only way to make our life happy and peaceful

In the few hours which I passed with him I found him to be the very soul of virtue

His kindness attracts the people to him the most He treats all individuals equally He was talking to me as he used to talk with what we call big people, even though I was very young at that time and almost a child He can become childlike with children and can thus make them happy At the same time one must say that he is so influential that he can impress upon even great men

He is a socialist so far as his treatment of different sorts of people is concerned And so, we may call him, a spiritual socialist. He does not cease talking to a child even if a great man comes

I have not come in close contact with Gandhiji, but from what I have known about him, I have concluded that Maharajshri Jawaharlalji and Mahatma Gandhiji, are exactly alike in certain spheres He is a Gandhi of Jainism

सन १६३६ मे महाराज श्री जवाहरलाल जी ने अपने शिष्यो सहित राजकोट पधार कर यहाँ की जनता को लाभ दिया। उनके पधारने से राजकोट तीर्थस्थान बन गया।

किन्तु मैंने इस तथ्य को महाराज श्री के विहार से कुछ ही दिन पहले पहिचाना। उस पवित्रहृदय सन्त के धार्मिक ज्ञान से इतने दिन लाभ न उठा सकने के लिए मैं अपने को हतभाग्य मानती हूँ।

राजकोट की साधारण जनता तथा विशेषतया जैन समाज में उनके पवित्र ज्ञान की प्रसिद्धि ने मेरे हृदय में उनके प्रति आदर तथा बातचीत करने की इच्छा पैदा की। मैंने उन्हें हिन्दी में भाषण करते हुए सुना जिससे मेरी श्रद्धा उन के प्रति और बढ़ गई।

पहले मैं उन के व्याख्यान तथा मेरे हृदय पर उन के प्रभाव का जिक्र करूंगी।

सब से अधिक जिस बात ने मुझ पर असर किया वह यह है कि वे एक राष्ट्रीय विचारों के सन्त हैं। वे भारत और भारतीयों के कल्याण की आकांक्षा करते हैं। वे जनता को विशेषतया अहिंसा और खादी के लिए महान राष्ट्रीय नेता गांधी जी का अनुसरण करने के लिए कहते हैं तथा उपदेश भी देते हैं। वे गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम को बहुत महत्व देते हैं। राजकोट में गांधी जी और वल्लभ भाई पटेल के साथ उन की जो मुलाकात हुई थी, उस से स्पष्ट मालूम पड़ता है कि वे राष्ट्रीय सन्त हैं। राष्ट्रीय सन्त होने के साथ साथ यह भी सत्य है कि वे ब्रिटेन निवासियों के स्वार्थों पर आघात करने की कभी इच्छा भी नहीं करते। यह बात उन की महानता को प्रकट करती है। ब्रिटिश नियोगी या दूसरे राष्ट्र उन के शत्रु नहीं हैं। वे उन के भाई हैं, और वे उन के भी कल्याण की कामना करते है।

उन मे दूसरी बड़ी बात उन के दार्शनिक विचार हैं। इस विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। उनके दार्शनिक विचारों में प्रार्थना और जिस की प्रार्थना की जाय, ये दोनों महत्वपूर्ण तत्व हैं। वे वह हैं जिन के चारों तरफ उनके विचार घूमते हैं। वे कहते है कि प्रार्थना निष्काम होनी चाहिए जो कि गीता का सब से बड़ा सिद्धान्त है। वे कहते हैं कि प्रार्थना सर्वसाधारण के कल्याणार्थ होनी चाहिए। मैंने की शान्ति को वे बहुत महत्व देते हैं और कहते हैं कि प्रार्थना ही एक ऐसा मार्ग है जो हमारे जीवन को आनन्दमय और शान्तिपूर्ण बना सकता है।

थोड़ी सी घड़ियाँ ही मैंने उन के साथ बिताई। उन से मालूम पड़ा कि वे धर्म की आत्मा हैं।

उन की दयालुता जनता को उन की ओर विशेष आकृष्ट करती है। वे सभी के साथ समान बर्ताव रखते हैं। यद्यपि मैं उस समय बहुत छोटी थी और बिलकुल बच्ची थी फिर भी मेरे साथ उन का वर्ताव ऐसा ही था जैसा कि वे बड़े कहे जाने वाले व्यक्तियों से करते थे। वे बच्चों के साथ बच्चे बन जाते हैं और इस प्रकार उन्हें प्रसन्न कर देते हैं। इस के साथ यह भी कहना पड़ेगा कि वे इतने प्रभावशाली हैं कि बड़े बड़े व्यक्तियों को भी प्रभावित कर सकते हैं।

भिन्न भिन्न प्रकार के व्यक्तियों के साथ उन का जो बर्ताव है उस से वे समाजवादी मालूम पड़ते हैं। हम उन्हें आध्यात्मिक समाजवादी कह सकते हैं। किसी बड़े आदमी के आने पर भी वे बालक से बातचीत करना बन्द नहीं करते।

मैं गांधी जी के घनिष्ठ परिचय में नहीं आई हूँ किन्तु उन के विषय में मैं जितना जानती हूँ उसके आधार से कह सकती हूँ कि महाराज श्री जवाहरलाल जी और महात्मा गांधी जी बहुत सी बातों में समान हैं। वे जैन समाज के गांधी हैं।

अनुभवोद्‌गार

५४—(लि० श्री जयचन्द व्हेचर झावेरी वकील, जूनागढ़)

टूंक वखत मां तेओ श्रीए मारा अंतःकरण पर जे सुन्दर छाप पाडी छे अने तेओ श्री माटे मने जे मान तथा प्रेम अने सद्भावना प्रकटया छे तेनो खरो चितार मारो द्वारा हुं आपी शकु तेम नथी। परन्तु तओ श्री प्रत्येनो मारी सद्भावना व्यक्त करी आत्मसन्तोष मनववा खातर हुं मारा अनुभवोद्‌गार अति सक्षप मां व्यक्त करु छु।

श्रोत्रिय अने ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवो महेश्वर ।
गुरुरेव पर ब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे नम ।।

गुरु ब्रह्म रूप छे गुरु विष्णु रूप छे, गुरु महेश्वर (महादेव) रूप छे, गुरुराज परब्रह्म छे, माटे श्री गुरु ने नमस्कार हो ।

गुरु गोविन्द दोनु खडे, किसके लागू पाय ।
बलिहारी गुरुदेव की, गोविन्द दियो बताय ।।

पूज्यपाद महाराज श्री जैनधर्म ना एक महान् आचार्य होवा उपरान्त अन्य सम्प्रदाय वालाओ ने पण पोताना सदुपदेश द्वारा धर्म नु खरु रहस्य समजावी पावन करे छे। अने आथी करी अन्य सम्प्रदाय वाला घणा माणसो पण तेओ श्री प्रत्ये गुरु भावना राखी तेओ श्री ने परम वदनीय माने छे। तेओ श्री सद्गुरु होवा साथे श्रोत्रिय (शास्त्र विशारद) अने ब्रह्मनिष्ठ (परमात्मा परायण) छे। जैन समाज ने आवा सदगुरु सहजे प्राप्त छे। तेमने हुँ परमभाग्यशाली मानु छु ।

प्रखर वक्ता

पूज्यपाद महाराज श्री वयोवृद्ध अने अति प्रभावशाली छे। शान्त, गंभीर, अने सौम्य मुद्रा वाला प्रसन्न वदन छे। आथी करी पाताना व्याख्यान थी श्रोता पर सारी छाप पाडे छे। तेओ श्री नी व्याख्यान करवानी पद्धति हलक अने वाक्यपटुता एवां तो कोई अजब छे के व्याख्यान वखते श्रोताओ ने सन्मय बनावी दे छे। तेओश्रीनी मातृभाषा मारवाडी होवा छता गुजराती भाषा पर पण सारो काबू धरावे छे।

समर्थ ज्ञानी

महाराजश्रीनु ज्ञान पण कोई अजबज छे। तेओश्रीना व्याख्यान मा हरवख्त प्रसग ने अनुसरतां हृदयस्पर्शी सुदर दृष्टान्तो आवे छे। आथी तेओश्रीनु बहु श्रुतपणु जणाई आवे छे। व्यावहारिक अने शास्त्रीय अनेक सुन्दर आख्यायिकाओथी श्रोताओना मन रजन करी शके छे। *एटलु ज नहि पण कोई दिव्य शक्ति थी श्रोताओ ने पोता प्रत्ये गुरु भावना वाला बनावी तेओ श्री* ना बधु व्याख्यान सामलवा सौ कोई ने परम उत्सुक बनावे छे।

पूर्ण-त्यागी

कोई कविए कह्यु छे के—

"त्याग न टके वैराग्य विण ज्ञान न शोभे लगार'

गमे तेवु ज्ञान अने चाहे तेवु वक्तृत्व होय छतां पण जो त्याग के वैराग्यवृत्ति न होय तो ज्ञान के वक्तृत्व शोभतु नथी। महाराज श्री तो आचार प्रथमो धर्म माननार छे अने कहे छे ते सहस गणु अनुसरणा करी लोकोने पोताना दाखला थी सन्मार्गे वालनारा छे। पूज्यपाद महाराज श्री ने मारा स्नेही वकील बधु जेठालाल भाई प्रागजी रूपाणीए एक नानु सरखु उपवस्त्र व्होरी पावन करवा विनती करली। परन्तु पोताने हाल तो जरूर नथी एम प्रसन्न कही ते उपवस्त्र पण लीधलु नहि।

मे पोते एक पुस्तक वांचवा माटे महाराज श्री ने आपेलु। विहार थती वखत ते पुस्तक मने पाछु आपवा माडयु त्यारे मारा थी सहेज कहेवाई गयु के आप आ पुस्तक राखो। जवाब मां जणाव्यु के अमारे अमारो भार मुसाफरी मां जातेज उपाडवा जोइए एटले विना कारण आ भार लेवो नथी। पुस्तक मने पाछु आपेलु ।

महाराज श्री फरता फरता एक वखत पूज्यपाद महाराज श्रीनाथ शर्मा ना विलखाना आनन्दाश्रम मा पधारेला। ज्या तेमने दूध के कई फलाहार म्होरवा विनती करवा मां आवेली। जेना जवाब मां तेओ श्री ए जणावेलु के नियत स्थल विना तेमज नियत समय विना पोता थी आहार पाणी लई शकाय नहिं।

वहो आया अदभुत त्याग अने वैराग्यशील महात्मा ने कोण पोताना मस्तक न नमावे। आचार अने विचार नी एकता दाखवनार संत महानुभाव नो ज्वलन्त दाखलो महाराजश्री बतावी आपे छे। अने कहेणी रहेणा एक बतावनार विरला पंक्ती ना एक छे।

कहेणी मिसरी खाड है, करणी कच्चा लोह।
कहेणी रहणी एक होय, ऐसा विरला कोय॥

अति नियमित अने सतत उद्योगी

महाराजश्री समयपालनमा पण पूर्ण आग्रही चे। सवारथी साज सुधीना तमाम नियत कर्मो शरीर वृद्ध छता नियमसर अने समयसर करवा आग्रह राखी कर छे अने अति नियमितता जालवे छे। तेमज क्षण पण नकामी जवा देता नथी। स्वाध्याय पण कर्या करे छे अने शिष्यो ने अध्यापन पण कराव्या करे छे।

मनुष्य बनावनार

व्यवहार सुधर्या विना परमार्थ सुधरतो नथी। महाराज श्री ना उपदेशनु मुख्य लक्ष्य मनुष्यो ने मनुष्य बनाववानु छे। एटले मनुष्यो पोतानो व्यवहार सुधारी परमार्थ ने पंथे चले ए उद्दश्य ने प्रधानपणे जालवी उपदेश आपे छे।

'धर्मेण हीना पशुभि समाना

आकृतिए मनुष्य रूपे देखाता छता जो धर्म थी रहित होय तो पशु समान गणाय। ब्राह्मण कुल मा जन्मवाथी नहि पण उपनयन सस्कार थी ब्राह्मण थवाय छे।

जन्मना जायते शूद्र सस्कारद् द्विज उच्यते।

मनुष्य योनि मा जन्म ग्रहण करवा थी नहि पण मनुष्य ना गुण ग्रहण करनार मनुष्य बने छे। महाराज श्री असत्य, कुसम्प रागद्वेष ईर्ष्या, काम क्रोध, लोभ, मोह विश्वासघात दगो, फटको, चौर वृत्ति वगेरा पशु भावा त्यजी सत्य सम्प वगरा सद्गुणा पालवा उपदेश आपी धर्म नु खरु रहस्य समजावी धर्म भावना जाग्रह करावी पशुवृत्ति तजावी मनुष्याकारे देखाता मनुष्या ने खरा मनुष्य एटले धर्म संस्कार वाला बनावे छे।

समाजसुधारक

महाराज श्री दुर्व्यसन तजवा अने समाजना सडा काढ़वा नो पण सदबोध आप्या करे छे। भा, तमाखु बीडी भाग, दारु मद्य, मांस, परस्त्री गमन, जुआ चोरी आदि अनेक दुर्व्यसनो तजवा अने रोवु कूटवु खोटा नाता वरा बाललग्न वृद्धलग्न, कन्या विक्रय वगेरा अनेक कढंगा रीति रिवाजो तजवा व्याख्यान मा आग्रह पूर्वक भलामण करे छे अने चमत्कारी ढगे प्रतिज्ञा करावे छे।

सर्वधर्मसमभाव

महाराजश्री श्रेय नो सव शास्त्र मा सामान्य रीते प्रतिपादन करेल पथ एटले सामान्य धर्म ना मूल तत्त्वो बहुज युक्ति प्रयुक्ति थी समजावी बधा धर्मनी एकता प्रतिपादन करे छे। अने 'राम कहो रहेमान कहा एवा वाक्य थी शुरु थतु पद अजब प्रमाई भावे गलकारी बधा धर्मनी

एवता सिद्ध करी विश्व बंधुत्व ना पाठ भणावी अन्य धर्म पंथ के सम्प्रदाय वाला ने पोता प्रत्ये मान, प्रेम अने गुरु भावना वालां करी ज छे।

कुटुम्ब धर्मे वैष्णव होवा छतां जैन धर्म प्रत्ये मने मान तथा प्रेम ता हतां ज परन्तु महाराजश्री ना सत्समागम पछी तेमां घणो वधारो थयो छे।

समाजसुधारक अने राष्ट्रप्रेमी

५५—(ले० श्री जटाशंकर मणेकलाल मेहता, मंत्री जैनयुवक संघ राजकोट)

प्रथम परिचय—स्थानकवासी जैन कान्फरन्सना बीकानेर नी पासेना भीनासर नामना गामडा मां पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज विराजता हता। तेमना दर्शनार्थे हुँ दर रोज सवारमां जतो अने तेमना व्याख्यान नो लाभ मेलवतो आ व्याख्यानो मां मे पहेली ज वखत जैन साधु ने सचोट रीते अने धर्मशास्त्रो ना अनुमोदना टांकी ने सामाजिक सुधारणा ना उपदेश आपता जोया। एमनो उपदेश मुख्यत्वे वरविक्रय कन्या विक्रय नी रूढीनो विरोध, व्यापार धंधा नी प्रामाणिकता, बाललग्न सामे विरोध रेशम ना उपयोग सामे सख्त विरोध, अस्पृश्यता निवारण, सादु जीवन, खर्चाल न्यातवरा अने सामाजिक प्रगति मां सुधारा नी आवश्यकता वगेरे सम्बन्ध मां हतो तेओ श्री एम पण कहेता ज्यां सुधी मनुष्य मानव धर्म समज्यो नथी अने एनु सामाजिक जीवन शुद्ध नथी, त्यां सुधी आध्यात्मिक जीवन गालववानो ते अधिकारी थतो नथ

आ सांभली मने संतोष थयो तेमां पण खास करी ने पूज्य महाराज श्री आ सामाजिक सुधारणा नी आवश्यकता पर धर्मशास्त्र नी छाप मारता अने 'ज्यां सुधी माणस मां ए प्रकार ना दोष रह्या होय त्यां सुधी ए जैन कहेवा ने लायक नथी एवु मन्तव्य स्पष्ट रीते जाहेर करता, ते सांभली ने मने वधु आनन्द थयो। आ महा पुरुषना दर्शन थी मारी जात ने कृतकृत्य थयेली मानतो, अने जे आशय थी हुँ आटले दूर सुधी धमडाई आव्यो हतो, ते एक नहिं तो बीजे प्रकारे परिपूर्ण थयेलो जोइने मारु मन तृप्त थयु।

बीजी मुलाकात—आ वात ने आठ नव वर्ष वीती गया। अमे काठियावाड़ जैन युवक परिषद् नु प्रथम अधिवेशन नोलववानो निर्णय कर्यो हतो आज अरसा मां पूज्य श्री नु स्वागत करवा हुँ अने मारा मित्रो वढ़वाण गया जवा मां अमारो ए पण आशय हतो के परिषद् ना अधिवेशन वखते पूज्य श्री ना विचारो थी अमने अमारा काम मां सहायता मलशे के विरोध।

विचारोनी उदारता

अमे महाराज श्री नी मुलाकात लीधी, अनेक सामाजिक प्रश्नो नी मुक्त रीते चर्चा करी एमना विचारो अमने बधा न गम्या जो के विधवा विवाह अने लग्न विच्छेद ना विचारो सामे एमनो विरोध हतो। ते तेमणे स्पष्ट रीते जाहेर कर्यो। परन्तु तेओ श्री एकंदरे अमारी प्रवृत्तिओ थी खुश थया हता। अने परिषद ना अधिवेशन ने आवकार आप्यो हतो। आ तेमना विचारो नी उदारता अने सेलदिल स्वभाव ना नमूनो हतो।

अधिवेशन थवाने नक्की थया उडी के पूज्य महाराज श्री नो आ अधिवेशन सामे विरोध छे। तरत अमे एमनी सभा मां पहोंच्या अने हकीकत मोभमी ने एमने खरेखर नवाई लागी। बीजी सवारे व्याख्यान मां तेमणे जाहेर कयु के जुवान वर्ग ना आमुक उद्दाम विचारो साथे हुँ सहमत न होवा छतां नवजुवानो नी प्रवृत्तिओ अने एमना विचारो जाणी ने मने आनन्द थयो छ। एमनी परिषद् सामे मारे कोई जातना विरोध नथी। जेमने एमना विचार भूल भरेला लागता होय तेमणे परिषद मां हाजरी आपी एमनी भूल दर्शाववानी अने पोतानु मंतव्य रजु करवानी छे।

राष्ट्रीय प्रेम—

मारा परिचित एक सज्जन ते हुँ घणा समय थी खादी पहेरवा समजावी रह्यो हतो पण हुँ

सफल न थयो। परन्तु आचार्य महाराज ना उपदेश थी अने खादी मा अहिंसा नु पालन होवानु तेओ श्रीए कारण दर्शाव्या थी आ बहने आजीवन खादी परिधान नु व्रत अंगीकार कयु हतु। राष्ट्रीय भावना मा महाराज श्री नी प्रगतिशीलता मे राजकोट सत्याग्रह नी लडत वखत निहाली हती। जुगार विरोधक लडत मां जेल जइ आव्या पछी पूज्य महाराज श्रीए मने एमनी समक्ष बोलावी ने अभिनदन आप्यां हता।

राजकोट सत्याग्रह वखत जेल मा पण मने समाचार मल्या हता के आ प्रजाकीय लडत प्रत्ये पूज्य महाराज श्री नी सहानुभूति छे। अने तेओ श्री जारशोर थी खादी प्रचार अने स्वदशी नी भावनान उत्तेजन आपी रह्या छे। लडत चालु होवा थी आ मथनकाले संघ जमण न करवा तेमणे आगेवानो ने आपेली सलाह सफल निवडी हती।

समाधान थना राजद्वारी केदीओ ने मुक्त करवा मा आव्या। तेमनो सरघस ज्यारे पूज्य महाराज श्री ना निवासस्थान पासे थी पसार थतु हतु त्यारे महाराज श्री बहार पधाया जेल गएला सत्याग्रहीओ नु सन्मान कयु अने प्रजा ने अतंद ना आर्शीवाद आप्या। आ दृश्ये मारा हृदय ऊपर घणी माटी असर करी हती।

महात्मा जी साथे मुलाकात—

राजकोट मा पूज्य महात्मा गाधी जी नु तेमना काका श्री खुशालचद भाइ नी मादगी ने कारणे पधारवु थयु त वखते महात्मा जी अने पू० आचार्य महाराज नी मुलाकात नो प्रसग खरेखर हृदयगम हतो। महाराज श्री न म० गाधी जी अने तेमना सिद्धाता प्रत्ये घणु ऊचु मान हतु। ए हुं आ मुलाकात वखत ज जाणी शक्यो।

आज नो आपणो साधु समाज पूज्य श्री जवाहरलाल जी म० ना जीवन मां थी काइ प्रेरणा मेलवशे तो तेओ देश अने समाज नु घणु कल्याण साधी शकशे।

स्टेट जेल
राजकोट १२ ११ ४२

प्रभावक वाणी और उच्च विचार

५६—लेखक—ला० रतनचन्द जी तथा राय सा० टेकचन्द जी जैन

We had the good fortune of paying our respects to His Holiness on several occasions First of all we had his Darshana at Delhi where we were rightly struck to note his devotion to Shree Jain Dharma and force of his character and strict discipline The way of his speech and expression of his thoughts was so powerful that it pierced right through the hearts of his hearers who were just convinced of the doctrines preached by His Holiness

Afterwards during the tour of the All India Jain Deputation convened for inviting the acharyas and prominent munis of different sampradayas of India to attend the All India Sadhu Mahasammelan to be held at Ajmer We visited Jodhpur and made our request to His Holiness He was not at first favourably inclined to join the deliberations of the Sammelan as he was doubtful about the ultimate result But on discussion and pur-

suation he was pleased to give way and thus proved his high sense of responsibility and showed that he was always amiable to reason and right

At Ajmer we came in contact with His Holiness almost everyday and had continued opportunities to notice his force of character straight-forwardness and willingness to do justice to all but not to yield haphazardly to any one In our opinion His Holiness is a symbol of a true Monk, devoted to right path and wedded to firm convictions of righteousness and piety

At all times we noted how sincerely he was revered and held in esteem by all who haypened to see him Lala Rattan-Chand Ji had also another occasion of his Darshans at Morvi in 1938, where even His Highness the Maharaja of Morvi regularly attended and heard his sermons and discourses He was accompanied by Lala Moti Lal Lala Hans Raj of Amritsar and Lala Muni Lal of Lahore These gentlemen also got a very high impression about His Holiness as anyone who heard him once wished to hear him again and again

पूज्यश्री के दर्शन करने का हमें कई बार सौभाग्य प्राप्त हुआ है। पहले पहल हमने आपके देहली में दर्शन किए थे। जैनधर्म के प्रति आपकी श्रद्धा, चारित्र बल, और आपके कठोर अनुशासन को देख कर हम चकित हो उठे। आपकी वाणी और विचारों का व्यक्त करने का ढंग इतना प्रभावशाली था कि वह श्रोताओं के हृदय में सीधा उतर जाता था। आपके उपदेश श्रोताओं के हृदय में जम जाते थे।

अजमेर में होने वाले अखिल भारतीय साधु सम्मेलन में सम्मिलित होने की प्रार्थना करने के लिए सभी आचार्यों और प्रमुख मुनियों के पास समस्त भारत के चुने हुए व्यक्तियों का एक जन शिष्ट मण्डल गया था। उस समय भी हमने पूज्य श्री के दर्शन किए थे। हम आप से जोधपुर में मिले और सम्मिलित होने की प्रार्थना की। प्रारम्भ में उन्हें सम्मेलन की बात पसन्द न आई। आपको उसके अन्तिम परिणाम के विषय में सन्देह था। किन्तु विचार विनिमय और लगातार प्रार्थना करने पर वे हमारी बात मान गए। अपने उत्तरदायित्व का आप को कितना मान है, यह बात इससे सिद्ध हो जाती है। आपने यह भी बता दिया कि युक्ति और सत्य के सामने आप सदा झुकने को तैयार हैं।

अजमेर में प्रायः प्रतिदिन हम पूज्यश्री के परिचय में आते थे। आपके चारित्र बल, स्पष्टवादिता सभी के प्रति न्याय करने की अभिलाषा तथा बिना सोचे विचारे किसी की न मानना आदि गुण देखने के हमें बहुत से अवसर प्राप्त हुए। हमारी राय में पूज्यश्री सच्चे साधुत्व के प्रतीक हैं, सत्य मार्ग में लीन हैं तथा सत्य और पवित्रता पर दृढ़ विश्वास रखते हैं।

हमने इस बात को हमेशा ध्यान से देखा कि जो व्यक्ति आपके दर्शन करने आते हैं वे किस प्रकार हृदय से आपका सम्मान करते हैं। १९३८ में लाला रतनचन्दजी ने आपके दर्शन मोरवी में भी किए थे। मोरवी नरेश भी आपके भाषणों में आया करते थे और उन्हें अच्छी तरह सुनते थे। लाला रतनचन्द जी के साथ अमृतसर के लाला मोतीलाल और लाला हंसराज तथा लाहौर के

लाला मुन्नीलाल भी थे। इन सज्जनों में भी पूज्यश्री के विषय में बहुत ऊँचे विचार हैं। आपकी वाणी को जो एक बार सुन लेता था वह बार बार सुनने की इच्छा करता था।

जीवन कला का दिव्य-दान

५७—(ले० शन्तिलाल वनमाली शेठ जैन-गुरुकुल, ब्यावर)

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज एक साधक महात्मा हैं। उन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग 'आत्म साधना और जन कल्याण साधना' रूप धर्मकला की उपासना करने में व्यतीत किया है। ४१ वर्ष जितनी सुदीर्घ संयमी जीवन की सतत 'साधना ने उनको धर्म जीवन के कुशल कलाकार और 'स्थविर कर्णधार धर्मनायक बना दिया है। सच्चा स्थविर धर्मनायक कैसा होना चाहिए इसके विषय में ठीक ही कहा गया है कि—

न तेन वयो सो होति येनस्स फलित सिरो।
परिपक्को वयो तस्स मोघजिण्णो त्ति वुच्चति॥
यम्हि सच्च च धम्मो च अहिंसा सजमो दमो।
स वे वन्तमलो धीरो सो थेरात्ति पवुच्चति॥

—धम्मपद

अर्थात—जिनके मस्तक के बाल पक गये हैं अथवा जो वयोवृद्ध हो गये हैं उन्हें 'स्थविर नहीं कह सकते। उन्हें तो मोघजीर्ण' ही कह सकते हैं। सच्चे स्थविर धर्मनायक तो वे ही हैं जिनके हृदय में अहिंसा संयम सत्य दम तप इत्यादि धर्मगुणों का वास हो और जो दोष रहित और धीर वीर हो।

खुद के जीवन को सफल बनाना और दूसरों का जीवन निर्माण करना—इन दोनों में काफी अन्तर है। जगत में आत्म साधना और आत्म ध्यान करने वाले और उसी में तल्लीन रहने वाले निवर्तक साधु पुरुष कम नहीं हैं लेकिन शास्त्रविहित निवृत्ति धर्म के आचार नियमों का यथाविधि पालन करने के साथ साथ जन समाज का जीवन निर्माण करना जन को ज्ञान और चरित्र का शक्ति दान देकर जन बनाना और मानव समाज को सद्धर्म का मर्म शास्त्र रीति तथा विज्ञान नीति के द्वारा युक्ति प्रयुक्तिपूर्वक समझाकर धर्मनिष्ठ बनाना—आदि धर्ममूलक सत्प्रवृत्तियाँ करने वाले साधु पुरुष महात्मा विरले ही होते हैं। ऐसे विरले महापुरुषों में पूज्यश्री का स्थान अपूर्व और अद्वितीय है।

बंबई के सुप्रसिद्ध गुजराती दैनिक पत्र 'जन्मभूमि' साहित्य विभाग के संपादक ने कलम अने किताब नामक स्तंभ में पूज्यश्री की 'जीवन कला पर (पूज्यश्री के व्याख्यानों के आधार पर इन पंक्तियों के लेखक द्वारा संपादित धर्म अने धर्मनायक नामक पुस्तक की) समालोचना करते हुए थोड़ा सा प्रकाश इस प्रकार डाला है—

धर्माचार्यों पर ऐसा आरोप-आक्षेप किया जाता है कि उन्होंने प्राचीन शास्त्रग्रंथों को संकीर्ण अर्थों में कैद कर रखा है। आज एक जैनाचार्य ने अपने आदि पुरुषों की धर्मवाणी को उदार रूप देकर बंधनमुक्त कर दिया है। जिस सरलता से दधिमंथन नवनीत को उपरितल पर ला सकता है उसी सरलता को इस विद्वान आचार्यश्री ने शास्त्र दोहन और शास्त्र मंथन की 'कला के रूप में रख दिया है। उन्होंने शास्त्र अर्थ को मोड़ा-तोड़ा नहीं है न किसी प्रकार की खींचातानी ही की है। उन्होंने तो प्राचीन जैन ग्रन्थों को नवयुग के नूतन मानव धर्मों के स्वर वाहक बना दिये हैं। यह उनकी प्रतिभा का द्योतक है।

वर्तमान जीवन को महत्त्व देकर जिन आचार्य श्रीने प्राचीन धर्मबोध को पुनर्जीवित किया है उन्हें हम सच्चे समय धर्मी-युगप्रधान के नाम से संबोधित करेंगे और सच्चा समयधर्म युगधर्म-सनातनधर्म से भिन्न नहीं है यह भी हम साथ में कहेंगे।'

पूज्य श्री के जीवन परिचय मे एक बार भी आने वाले उनकी धर्मवाणी सुननेवाले उक्त उल्लेख से पूर्ण सहमत होंगे, ऐसा मुझे विश्वास है। उक्त उल्लेख से पूज्यश्री ने जैनधर्म के शास्त्रमर्यादाओं को ध्यान मे रखते हुए युगधर्म का रूप देकर और उसे विश्व शान्ति का सन्देशवाहक बनाकर समाज और राष्ट्र मे नवजीवन का संचार किया है और इस प्रकार श्रमण संस्कृति का समुत्थान करने मे अपनी जीवन कला का दिव्य दान दिया है—इस बात का सामान्य प्रतिभास मिलता है।

पूज्यश्री को अपने उत्तरदायित्व का पूरा भान है। उन्होंने अपनी सारी जीवन शक्ति सद्धर्म के प्रचार में और मुख्यत जैन समाज के तथा सामान्यत जन समाज के उद्धार के लिए समर्पित करदी है और उनकी उद्बोधक प्रेरक और रोचक व्याख्यान वाणी के द्वारा समाज और राष्ट्र को आशातीत लाभ भी पहुँचा है।

उन्होंने धार्मिक अन्धश्रद्धा के स्थान पर 'धार्मिकता' की पुन प्रतिष्ठा की है। समाज जीवन मे घुसी हुई कुरूढ़ियों के थरों को समाज के अंग प्रत्यंग क्षत विक्षत न हो ऐसी सतर्कता के साथ—एक कुशल कलाकार की भाँति से कौशल से उखाड़ कर फेंक दिया है और उनके स्थान पर समाज की नवरचना की है। समाज मे से, रूढ़िच्छेद करने से धार्मिक अन्धश्रद्धा दूर करने से समाजोद्धार सघोद्धार और राष्ट्रोद्धार की प्रवृत्ति को काफी बल मिला है और समाज व धर्म की जागृति के द्वारा राष्ट्र की जागृति भी हुई है। इसका श्रेय पूज्यश्री की धर्म प्रचारकता, समय सूचकता और उनकी जीवन कला की उपासना को प्राप्त होता है।

इस प्रकार जब पूज्यश्री की सर्वाङ्गीण जीवन विकासकी-जीवन कला के अन्य उपासक और उसके प्रखर प्रचारक की दृष्टि से—समीक्षा करते हैं तब हमें कहना पड़ता है कि पूज्यश्री केवल जैन समाज की ही नहीं अपितु समस्त भारतवर्ष की वदनीय विभूति हैं। जैन-समाज के तो जगमगाते ज्योतिधर 'जवाहर' हैं ही उन्होंने अपनी जीवन ज्योति के द्वारा राष्ट्र समाज और धर्म को आलोकित किया है।

वास्तव मे पूज्यश्री की ओजस्विनी प्रभावोत्पादक धर्मवाणी वाग्विलास की बानगी नहीं है अपितु सुदीर्घ सयम साधना के फलस्वरूप अन्तस्तल से निकली हुई युगवाणी है। इस उदात्त वाणी मे उद्गातान जैनधर्म के प्राण भूत तत्त्वों का युगदृष्टि से पर्यवेक्षण करके जैन धर्म को युगधर्म बनाने मे बड़ा भारी योगदान दिया है। यही उनका दिव्य दान है। पूज्यश्री की यह बहुत बड़ी देन है।

हिन्दना धर्मगुरुओ अने क्रान्ति

५८—(सौराष्ट्र राष्ट्रनायक राजकोट सत्याग्रह सेनानी श्री ढेबर भाई)

खरेखर हिन्दुस्तान बीजा देशो करता जुदो जातनो मुल्क छे। बीजा दशो करतां तेनी विशिष्टता एमां समायली छे के तेनो व्यवहार सामाजिक तथा राजकीय होवा छतां साथे साथ आध्यात्मिक पण छे। हिन्दुस्थान नी भूतकाल नी लगभग बधीज क्रान्तिओना प्रणेताओ राजपुरुष होवा ने उपरान्त अथवा विशिष्टपण सत अने महात्माओ हता। अने आजे पण तज इतिहास नुं पुनरावर्तन आपणी नजर समक्ष आपणे देखीए छीए।

आथी ज्यारे-ज्यारे हिन्दनी वर्तमान क्रान्ति नु विचार करु छु त्यारे साथी साथ हिन्दमा विचरता धर्मगुरुओ धारे तो हिन्दने अत्यार नी पतित अने अनाथ दशा मां थी उगारवानी दिशामां केटलु काम थई शके छे तने केटला वेग मळे? अने केटो आगो थाय? तेवा विचारो मारा मा आगल तरी आव छे।

मारी आ लागणीना जवाब रूपेज जाणे होय नहिं तेम १६३८ नी सालमा राजकोट सत्याग्रह वखत श्रीमद जवाहरलालजी महाराज राजकोट मां विराजता हता। आने जैन अने जनेतर समाज ने हिम्मत भरी रीत तेज दिशमा मागदशन आपी रह्या हता।

तमनु प्रभावशाली व्यक्तित्व तमनु सिद्धासन तेमनो अस्खलित वाणी प्रवाह, आध्यात्मिक विषयनी चर्चा करती वखते पण श्रोताओनी मर्यादा अने तेने परिणामे उपस्थित थती धम प्रवक्ता तरीकनी पोतानी जवाबदारी नो ऊडा ख्याल ए मर्यादाओ न लक्षमा राखी ने व्यवहार शुद्धि ऊपर तमनो भार अने अहिंसा ना आचार धम तरीके खादी न अपनाववाना, दरिद्र नारायण मानी सेवा करवानो राष्ट्रभावना नो विकास साधवानो अने सव रीते जीवन मां स्वाश्रयी वनवानो तेमनो आग्रह ए बधा आज पण मारी नजर आगल तर छे।

गीताशास्त्र के ममज्ञ

५६—(श्री हरनाथजी टल्लू पुष्करण समाज नेता, जोधपुर)

जब से पूज्यश्री जोधपुर म चतुर्मास कर अपन व्याख्यान रसास्वादन का मुझे चस्का लगा कर गये हैं तब से आज तक मेरी यही हार्दिक मनोकामना रही आई है कि मैं एक बार उसी आत्मशान्ति का पुन अनुभव करू जा कि पूव चातुर्मास म कर चुका हूँ। तदनुसार प्रयत्न आरम्भ कर एक बार मैं स्वय कौंसिल सेक्रटरी श्रीउमरावसिहजी के साथ जेठाणे तथा दूसरी बार श्रीमान् जसवन्तराजजी के साथ जयतारण भी विनत्यथ गया किन्तु पूज्यश्री की शारीरिक अस्वस्थता के कारण हम अपने प्रयास मे सफलता प्राप्त न हो सकी। फिर भी मुझे उनके सम्पर्क म रहने पर उनके व्यक्तित्व के सम्बध म जो कुछ अनुभव हुआ है उसके आधार पर मैं यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा गीता शास्त्र के पूण ममज्ञ हैं। गीता के गभीर श्लोकों का जो अथ स्पष्टीकरण करते हैं यह वास्तव म अनुपम सरल और सुबोध है। ऐसे ममज्ञ साधु अन्य समाज म कम पाये जाते हैं। उनकी शान्त मुखमुद्रा और ध्यान स्थिति ने मेरे हृदय पर भक्तिभावना के नवीन ही अकुर अकुरित किये हैं।

प्रभावक प्रवचन

६०—(शाहजी श्री हनयतचन्द्रजी लोढ़ा, जोधपुर)

मेरे मन मे चिरकाल स यह उत्कठा तीव्र रूप धारण करती जा रही थी कि मैं पूज्यश्री जवाहरलालजी म सा जैसे उच्च महात्मा पुरुष का समागम करू व उनके सारगर्भित रहस्य पूण व्याख्यान का श्रवण करू। निदान मेरी यह भावना उनके जोधपुर चातुर्मास के समय पूण हुई। उक्त महात्मा के प्रवचनामृत का पान मैंने पूण उमग और हार्दिक भक्तिभावना से किया। अन्य सत महात्माओं की अपेक्षा भी उनमे जो प्रशसनीय गुण मैंने पाया वह यह कि उनके उपदेश तत्व विद्वान, मूर्ख, आबाल वृद्ध वनिता आदि सब पर एक समान जादू का असर डालकर सबको सन्मार्ग की ओर तत्काल आकर्षित कर लेते हैं। उनकी व्याख्यानशैली की विशिष्टता भूरि भूरि प्रशसनीय है।

परम प्रतापी श्रीजवाहरलालजी म० के घाटकोपर चातुर्मास की एक महती स्मृति

६१—(श्री छत्रसिंह चुन्नीलाल परमार मैनेजर घाटकोपर जीवदया खाता)

शास्त्र मे और व्यवहार मे यह बात सवमान्य कही जाती है कि जहाँ जहाँ सत पुरुष के पदार्पण होते हैं वहाँ सुख और शान्ति का साम्राज्य छा जाता है। यह भी एक ऐसी घटना है जो उपरोक्त कथन का सविशेष समर्थन करती है।

स० १९७९ की साल थी। परमप्रतापी श्रीमज्जैनाचार्य १००८ श्री जवाहरलालजी म० दक्षिण प्रान्त को पावन करते हुए चातुर्मास के लिये बम्बई के प्रति विहार कर रहे थे।

घाटकोपर शेष काल बीता कर आगे बढ़े। बीच मे बांदरा और कुरले के कसाई खाने म कतल किये गये पशुओ के मास को ले जाते हुए टोकरो पर पूज्य महाराज साहब की दृष्टि पड़ी। पूज्य महाराज साहब ने साथ में चलते हुए श्रावको से सभी हाल मालूम कर लिया और बम्बई के दोनो कसाई खानो मे प्रतिदिन होती हुई हजारो निर्दोष दुधारू पशुओ की कतल को सुनकर उपस्थित सभी किं कर्तव्य विमूढ से हो गये। पूज्य महाराज ने भी मन में सोच लिया कि इन निर्दोष दुधारू पशुओ की कतल हमारे देश जाति धर्म मानवता का एक महान कलक रूप है। पूज्य महाराज साहब के मन म यही मथन चला। अन्त म कई कारणो को ध्यान म लेते हुए बम्बई चातुर्मास से इनकार करते हुए बम्बई को बिना फरसे ही बीच म वापिस घाटकोपर लौट आये और अनायास ही पूज्य महाराज साहब के चातुर्मासका अपूर्व लाभ घाटकोपर को मिल गया।

घाटकोपर के चातुर्मास में पूज्य महाराज साहब अपने व्याख्यानो में जीवदया के प्रश्न की चर्चा करते ही रहते थे परन्तु साथ ही साथ एक ऐसा अपूर्व अवसर आ मिला जिसके फल स्वरूप इस श्री घाटकोपर सार्वजनिक जीव दया खाता की स्थापना म खास निमित्त मिल गया।

पूज्य श्री जवाहरलाल जी म० के सुशिष्य तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलाल जी म० ने ८१ दिन के उपवास की घोर तपश्चर्या शुरू की। तपस्वी जी के दर्शनार्थ बम्बई शहर के और दूर सुदूर के जैन जनेतर भाई बहन आने लगे। व्याख्याना में जीव दया का सतत उपदेश, तपस्वी जी के तपश्चर्या के प्रभाव और स्थानीय तथा दर्शनार्थ आनवाले आगेवान जैन जैनेतर भाइयो के सत्प्रयत्न से ता० १९ ८ २३ तदनुसार मिति स० १९७९ की श्रावण शुक्ला सप्तमी के रोज 'श्री घाटकोपर सार्वजनिक जीवदया मण्डल' की स्थापना हुई।

जवाहिर-ज्योति

६२—[ले० प० रतनलालजी सघवी "न्यायतीर्थ विशारद, छोटीसादड़ी (मेवाड़)]

वर्तमान-काल की विश्व विभूतियों मे जैनाचार्य श्री जवाहिरलालजी महाराज भी एक उच्च कोटि की विभूति थे, ऐसा कहना, न तो अत्युक्ति पूर्ण है और न मिथ्या-कल्पना। उनका स्वतन्त्र व्यक्तित्व, वैराग्यमय साधुत्व मौलिक विचारधारा अल्पारभ महारभ रूप विवाद के प्रति उनका अपना गभीर सचोट विवेचन, आत्यतिक श्रद्धामय उनकी ईश्वर भक्ति, राष्ट्रीय भावना का प्रतीक रूप उनका खादीप्रेम प्राञ्जल शैली युक्त प्रसाद गुण सपन्न उनकी साहित्य रचना और समय समय पर राष्ट्रधर्म के प्रति उन द्वारा दिये गये व्याख्यानो स प्रकटित उनका राष्ट्रीय नेतृत्व निस्पृहतापूर्ण उनका आचार्यत्व अछूतोद्धार भावना, सत्य के प्रति उनका स्नेह और अहिंसा के प्रति उनकी आस्था—ये वे गुण हैं जोकि उनके जीवन मे मन म, वचन में कर्म में आत्मा मे ओतप्रोत थे। उनके इन्हीं गुणो ने मुझे लेख की आदि म यह लिखने को विवश किया कि 'वे विश्व विभूति थे।'

श्री स्थानकवासी समाज के दायरे म जीवन यापन नही कर यदि राष्ट्रीय क्षेत्र म जीवन यापन का प्रसग उपस्थित होता तो पूज्य श्री महात्मा गांधी और प० जवाहरलाल नेहरू के समान ही भारत के राष्ट्रीय क्षितिज पर अपनी दिव्य ज्योति के साथ चमकते। एव यह भी निस्सकोच कहा जा सकता है कि उस दशा में भी इनकी कार्यप्रणाली और साधन अहिंसा, एव सत्य ही रहते।

आचार्य श्री का पांडित्य पल्लवग्राही नहीं था बल्कि उन्होंने सब आगम भारतीय दर्शनों के साथ-साथ भारतेतर मुस्लिम, ईसाई आदि के धर्म ग्रन्थो का भी वाचन, मनन और श्रवण किया

था। आपकी व्याख्यानशैली-मधुर, अनुभूतिपूर्ण, सरल किन्तु मार्मिक और शब्दाडम्बरों से रहित होती हुई भी प्रभावशाली एवं हृदयतक पहुँच करने वाली होती थी। व्याख्याता की वाणी श्रोताओं के हृदय तक तभी पहुँच सकती है जबकि वह हृदय से निकली हुई हो। वे केवल व्याख्यान देने के लिये व्याख्यान नहीं देते थे, किन्तु हृदय की अनुभूति को प्रकाश में लाने के लिये ही व्याख्यान दिया करते थे। उनकी त्यागमय श्रद्धा शब्द शब्द में टपकती थी। उनका आत्मबोध स्वपर कल्याण कर था। उनकी ईश्वरीय भक्ति सांसारिक मोह को काटने में एक अमोघ अस्त्र थी।

उनके स्वतन्त्र व्यक्तित्व ने यह उक्ति प्रचलित कर दी है कि भारत में दो जवाहिर हैं— एक धर्मनायक तो दूसरा राष्ट्रनायक। निस्सन्देह इस उक्ति में सच्चाई है क्योंकि उनके त्यागमय जीवन और वैराग्यमय भावना ने उनको एक आध्यात्मिक महापुरुष के रूप में परिणत कर दिया था। भारतीय दार्शनिक संस्कृति के अनुरूप उनमें अनुभूति पूर्ण आत्मिकता और ईश्वरीय प्रेम, ईश्वरीय अनुभव, प्राचीन ऋषियों के समान ही ज्योति रूप से विद्यमान था। इसी मौलिक विशेषता में उनका स्वतन्त्र व्यक्तित्व निवास करता था जो कि जनता को उनके प्रति आकर्षित, मोहित और श्रद्धामय करता था।

इनकी मौलिक विचार धारा का पता इसी से लगता है कि ये अपने राष्ट्रश्रण राष्ट्र धर्म को साधु मर्यादा में भूल नहीं गये थे बल्कि खादी अछूतोद्धार देशभक्ति और राष्ट्र प्रेम के मार्ग में बड़ा सुन्दर और स्तुत्य व्याख्यानों द्वारा जीवनपर्यन्त चलता रहा। स्थानकवासी जैन समाज के साधुओं की व्याख्यानों की परिपाटी में उपरोक्त प्रयत्न से सुधार का विकास हुआ और अनेक साधुओं के हृदय में "देश क्या है और समाज का—श्री संघ का क्या कर्तव्य है" की भावना और विचार जागृत हुए।

अल्पारंभ महारंभ का प्रश्न उनके जीवन में बड़ा ही सुन्दर चला था। आपने बड़ी सुन्दर रीति से तात्विक तर्कों के साथ—मशीन वाद रूप महारंभ को और अन्य कृत वस्तु की खरीदने में हाथ की कारीगरी और स्वीकृत वस्तु के उपयोग के आगे महारंभ सिद्ध किया था। आज भी अनेक साधुओं के मस्तिष्क में यह बात नहीं आ रही है—यह आश्चर्य और दुःख की बात है। स्थलसंकोच से इस विषय में यहाँ पर अधिक नहीं लिखकर यह प्रयत्न करूँगा कि एक अलग ही स्वतन्त्र लेख में इस विषय पर प्रकाश डालूँ।

खादी उनके व्याख्यानों का एक अभिन्न अंग थी। खादी में वे सत्य और अहिंसा की झाकी देखते थे। मीलवाद बनाम मशीनरीवाद उनकी दृष्टि में आत्मा का हनन करने वाला और नैतिक पतन के साथ साथ महान गरीबी लाने वाला था। खादी को वे गरीबों की रोटी, विधवाओं का सहारा और अन्धों की लकड़ी समझते थे कहना प्रासंगिक ही होगा कि स्थानकवासी समाज के अनेक धनाढय व्यक्तियों ने आप ही के उपदेश से खादी को पहनना प्रारम्भ किया था।

उनकी साहित्य रचना की शैली भी युगानुसारिणी थी। यही कारण है कि आपका साहित्य सैकड़ों वर्षों तक जनता में इसी प्रकार आदर प्राप्त करता रहेगा जैसा कि उसे आज आदर प्राप्त है। उनकी स्मृति में जो धन राशि एकत्र की जा रही है, अच्छा यह हो कि इस धन राशि से उनके अमर साहित्य का अत्यल्प मूल्य में जनता-जनता में प्रचार किया जाय, एवं नूतन-मौलिक साहित्य की रचना करवा कर उसे प्रकाशित किया जाय। तात्पर्य यह है कि उनकी पवित्र स्मृति की रक्षा साहित्य निर्माण के कार्य से की जाय और एकत्र धन राशि का यही उपयोग किया जाय।

सं० १९७९ की साल थी। परमप्रतापी श्रीमज्जैनाचार्य १००८ श्री जवाहरलालजी म० दक्षिण प्रान्त को पावन करते हुए चातुर्मास के लिये बम्बई के प्रति विहार कर रहे थे।

घाटकोपर शेष काल बीता कर आगे बढ़े। बीच में बांदरा और कुरला के कसाई खाने में कतल किये गये पशुओं के मांस को ले जाते हुए टोकरों पर पूज्य महाराज साहब की दृष्टि पड़ी। पूज्य महाराज साहब ने साथ में चलते हुए श्रावकों से सभी हाल मालूम कर लिया और बम्बई के दोनों कसाई खानों में प्रतिदिन होती हुई हजारों निर्दोष दुधारू पशुओं की कतल को सुनकर उपस्थित सभी कि कर्तव्य विमूढ़ से हो गये। पूज्य महाराज ने भी मन में सोच लिया कि इन निर्दोष दुधारू पशुओं की कतल हमारे देश जाति धर्म मानवता का एक महान कलंक रूप है। पूज्य महाराज साहब के मन में यही मंथन चला। अन्त में कई कारणों को ध्यान में लेते हुए बम्बई चातुर्मास में इनकार करते हुए बम्बई को बिना फरसे ही बीच में वापिस घाटकोपर लौट आये और अनायास ही पूज्य महाराज साहब के चातुर्मासका अपूर्व लाभ घाटकोपर को मिल गया।

घाटकोपर के चातुर्मास में पूज्य महाराज साहब अपने व्याख्यानों में जीवदया के प्रश्न की चर्चा करते ही रहते थे परन्तु साथ ही साथ एक ऐसा अपूर्व अवसर आ मिला जिसके फल स्वरूप इस श्री घाटकोपर सार्वजनिक जीव दया खाता की स्थापना में खास निमित्त मिल गया।

पूज्य श्री जवाहरलाल जी म० के सुशिष्य तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलाल जी म० ने ८१ दिन के उपवास की घोर तपश्चर्या शुरू की। तपस्वी जी के दर्शनार्थ बम्बई शहर के और दूर दूर के जैन जैनेतर भाई बहन आने लगे। व्याख्यानों में जीव दया का सतत उपदेश, तपस्वी जी के तपश्चर्या के प्रभाव और स्थानीय तथा दर्शनार्थ आनेवाले आगेवान जैन जनेतर भाइयों के सत्प्रयत्न से ता० १८-८-२३ तदनुसार मिति सं० १९७९ की श्रावण शुक्ला सप्तमी के रोज 'श्री घाटकोपर सार्वजनिक जीवदया मण्डल' की स्थापना हुई।

जवाहिर-ज्योति

६२—[ले० प० रतनलालजी संघवी 'न्यायतीर्थ' विशारद, छोटीसादड़ी (मेवाड़)]

वर्तमान-काल की विश्व विभूतियों में जैनाचार्य श्री जवाहिरलालजी महाराज भी एक उच्च कोटि की विभूति थे, ऐसा कहना, न तो अत्युक्ति पूर्ण है और न मिथ्या कल्पना। उनका स्वतन्त्र व्यक्तित्व वैराग्यमय साधुत्व, मौलिक विचारधारा, अल्पारंभ महारंभ रूप विषय के प्रति उनका अपना गंभीर सचोट विवेचन, आत्यंतिक श्रद्धामय उनकी ईश्वर भक्ति राष्ट्रीय भावना का प्रतीक रूप उनका खादीप्रेम प्राञ्जल शैली युक्त प्रसाद गुण सपन्न उनकी साहित्य रचना और समय समय पर राष्ट्रधर्म के प्रति उन द्वारा दिये गये व्याख्यानों से प्रकटित उनका राष्ट्रीय नेतृत्व निस्पृहतापूर्ण उनका आचार्यत्व, अछूतोद्धार भावना, सत्य के प्रति उनका स्नेह और अहिंसा के प्रति उनकी आस्था—ये वे गुण हैं जोकि उनके जीवन में मन में, वचन में कर्म में आत्मा में ओतप्रोत थे। उनके इन्हीं गुणों ने मुझे लेख का आदि में यह लिखने को विवश किया कि "वे विश्व विभूति थे।"

श्री स्थानकवासी समाज के दायरे में जीवन यापन नहीं कर यदि राष्ट्रीय क्षेत्र में जीवन यापन का प्रसंग उपस्थित होता तो पूज्य श्री महात्मा गांधी और पं० जवाहरलाल नेहरू के समान ही भारत के राष्ट्रीय क्षितिज पर अपनी दिव्य ज्योति के साथ चमकते। एवं यह भी निःसंकोच कहा जा सकता है कि उस दशा में भी इनकी कार्यप्रणाली और साधन अहिंसा, एवं सत्य ही रहते।

आचार्य श्री का पांडित्य पल्लवग्राही नहीं था, बल्कि यहाँ तक आपने भारतीय दर्शनों के साथ साथ भारतेतर-मुस्लिम ईसाई आदि के धर्म ग्रन्थों का भी वाचन, मनन और चरण किया

था। आपकी व्याख्यानशली-मधुर, अनुभूतिपूण, सरल किन्तु मार्मिक और शब्दाडम्बरो से रहित होती हुई भी प्रभावशाली एव हृदयतक पहुँच करने वाली होती थी। व्याख्याता की वाणी श्रोताओ के हृदय तक तभी पहुँच सकती है जबकि वह हृदय से निकली हुई हो। वे केवल व्याख्यान देने के लिये व्याख्यान नही देते थे, किन्तु हृदय की अनुभूति को प्रकाश मे लाने के लिये ही व्याख्यान दिया करते थ। उनकी त्यागमय श्रद्धा शब्द शब्द म टपकती थी। उनका आत्मबोध स्वपर कल्याण कर था। उनकी ईश्वरीय भक्ति सांसारिक मोह को काटने में एक अमोघ अस्त्र थी।

उनके स्वतन्त्र व्यक्तित्व ने यह उक्ति प्रचलित कर दी है कि भारत में दो जवाहिर हैं— एक धमनायक तो दूसर राष्ट्रनायक। निस्सदेह इस उक्ति म सच्चाई है, क्योकि उनके त्यागमय जीवन और वराग्यमय भावना न उनको एक आध्यात्मिक महापुरुष के रूप मे परिणत कर दिया था। भारतीय दार्शनिक सस्कृति क अनुरूप उनम अनुभूति पूण आत्मिकता और ईश्वरीय प्रेम ईश्वरीय-अनुभव, प्राचीन ऋषियों के समान ही ज्योति रूप से विद्यमान था। इसी मौलिक विश पता म उनका स्वतन्त्र व्यक्तित्व निवास करता था जो कि जनता को उनके प्रति आकर्षित, मोहित और श्रद्धामय करता था।

इनकी मौलिक विचार धारा का पता इसी से लगता है कि ये अपने राष्ट्रऋण राष्ट्र धर्म को साधु मर्यादा म भूल नही गय थ बल्कि खादी, अछूतोद्धार, देशभक्ति और राष्ट्र प्रेम के माग में बडा सुन्दर और स्तुत्य व्याख्याना द्वारा जीवनपयन्त चलता रहा। स्थानकवासी जन समाज के साधुओ की व्याख्याना की परिपाटी म उपरोक्त प्रयत्न म सुधार या विकास हुआ और अनक साधुओं क हृदय मे "देश क्या है और समाज का—श्री सघ का क्या कत्तव्य है' की भावना और विचार जागृत हुए।

अल्पारभ महारभ का प्रश्न उनके जीवन म बडा ही सुन्दर चला था। आपने बड़ी सुन्दर रीति से तात्विक तर्को के साथ—मशीन वाद रूप महारभ को और अन्य कृत वस्तु को खरीदने मे, हाथ की कारीगरी और स्वीकृत-वस्तु के उपयोग के आगे, महारभ सिद्ध किया था। आज भी अनेक साधुओं के मस्तिष्क म यह बात नही आ रही है—यह आश्चय और दुख की बात है। स्थलसकोच से इस विषय मे यहाँ पर अधिक नही लिखकर यह प्रयत्न करूँगा कि एक अलग ही स्वतन्त्र लेख मे इस विषय पर प्रकाश डालू।

खादी उनके व्याख्यानो का एक अभिन्न अग थी। खादी म व सत्य और अहिंसा की झाकी देखते थे। मीलवाद बनाम मशीनरीवाद उनकी दृष्टि मे आत्मा का हनन करन वाला और नतिक पतन के साथ साथ महान् गरीबी लान वाला था। खादी को वे गरीबों की रोटी विधवाओं का सहारा और अन्धो की लकडी समझते थे कहना प्रासगिक ही होगा कि स्थानकवासी समाज के अनक धनाढय व्यक्तियो न आप ही के उपदेश से खादी का पहनना प्रारम्भ किया था।

उनकी साहित्य रचना की शैली भी युगानुसारिणी थी। यही कारण है कि आपका साहित्य सवदा वर्षों तक जनता म इसी प्रकार आदर प्राप्त करता रहेगा जैसा कि उसे आज आदर प्राप्त है। उनकी स्मृति मे जो धन राशि एकत्र की जा रही है अच्छा यह हो कि इस धन राशि से उनके अमर साहित्य का अत्यल्प मूल्य म जनतर-जनता मे प्रचार किया जाय, एव नूतन मौलिक साहित्य की रचना करवा कर उसे प्रकाशित किया जाय। तात्पय यह है कि उनकी पवित्र स्मृति की रक्षा साहित्य निर्माण के काय स की जाय और एकत्र धन राशि का यही उपयोग किया जाय।

धर्माचार्य जवाहर

६३—श्री इन्द्रचन्द्र शास्त्री एम० ए० शास्त्राचार्य, वेदान्तवारिधि, न्यायतीर्थ प्रोफेसर वैश्य कालेज, भिवानी।

विशाल हृदय, सूक्ष्म निरीक्षण दृढ़ निश्चय तथा मानव समाज को उन्नत-ऊँचा उठाने की तीव्र भावना महापुरुष के आवश्यक गुण हैं। जीवन के आन्तरिक रहस्य को खोजकर संसार के सामने रखना महान् आत्माओं का सब से बड़ा कार्य होता है। जो व्यक्ति सर्वप्रथम उस रहस्य की अभिव्यक्ति करता है उसे अवतार कहा जाता है। जो उसे संगीतमय बना देता है वह महाकवि है। जो उसके लिए युद्ध करता है वह नेता है। जो उसके लिए साधना करता है वह तपस्वी है। जो उसे जनता में फैलाता है वह उपदेशक है। धर्माचार्य में नेता, तपस्वी और उपदेशक तीनों का सम्मिश्रण होता है। पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज सच्चे धर्माचार्य थे।

एक सम्प्रदाय के गद्दीधर नायक होने पर भी उनका हृदय विशाल था। मत मतान्तरों में का पारस्परिक विरोध आपकी दृष्टि नगण्य था। समुद्र की एक तरंग इधर से उठती है, एक उधर से उठती है। दोनों शत्रु बनकर टकराती हैं किन्तु समुद्र में विलीन होकर एक हो जाती हैं। गम्भीर समुद्र एक है। तरंगें ऊपर का खेल हैं। इसी प्रकार वास्तविक धर्म एक है। मत मतान्तर तो केवल तरंगें हैं। उसका विकार हैं। बुदबुद हैं। आध्यात्मिक रहस्य एक ही है। विभिन्न परिस्थितियों के कारण ऊपरी विरोध खड़े होते हैं और परस्पर टकराकर एकता में लीन हो जाते हैं। चिरकाल से परस्पर विरोधी मानी जाने वाली श्रमण और ब्राह्मण संस्कृतियों के मूल में भी पूज्य श्री एकता का दर्शन करते थे। भगवद्गीता और जैन शास्त्रों में आपको निष्काम कर्मयोग या अनासक्तिवाद का तत्व समान रूप से दिखाई देता था।

आप मानवता के परम पुजारी थे। मानवता आपकी दृष्टि में सब से बड़ा धर्म था। दया, प्रेम परस्पर सहानुभूति मानवता के स्वाभाविक गुण हैं। जो मत या सम्प्रदाय इनके विरुद्ध प्रचार करे वह आपकी दृष्टि में मानवता का रोग है। उसका प्रबलतम विरोध करना तथा उसे मिटा देना आप अपना कर्तव्य मानते थे। इसके लिए कष्टों की परवाह न करते हुए वाणी लेखनी और तपस्या के साधनों द्वारा आपने अथक परिश्रम किया और जनता के सामने सच्चाई रखी। आप कहा करते थे—"जब गरीब आपको प्यारे नहीं लगते तो क्या दूसरों को मारने के लिए ईश्वर से बल की याचना करते हो?

ईश्वर रक्षा के लिए बल देता है, संहार के लिए नहीं।

धर्म की निर्जीवता का कारण क्या है? इस प्रश्न पर आपने सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया था। आपका यह विश्वास था कि सांसारिक द्वन्द्वों से डरा हुआ व्यक्ति धर्म का पालन नहीं कर सकता। उन द्वन्द्वों पर विजय प्राप्त करने वाला ही धर्म का सच्चा आराधक हो सकता है। आप की दृष्टि में धर्म केवल उपाश्रय या स्थानक में बैठकर करने की चीज नहीं है। किन्तु जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति में, प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक क्षण में उसकी उपासना होनी चाहिए। धर्मस्थान में सन्ध्या, उपासना, सामायिक आदि करता हुआ भी जो व्यक्ति व्यापार के समय धर्म को भूल जाता है, अपने भाइयों के साथ बर्ताव करते समय धर्म की परवाह नहीं करता वह सच्चा धर्मात्मा नहीं है। उसका धर्म निष्प्राण है। निःसार है। निर्जीव है।

समाज में फैली हुई अन्ध श्रद्धा और कुरीतियों पर आपकी आत्मा तिलमिला उठती थी।

बीकानेर राज्य के प्रधानमन्त्री सर मनुभाई मेहता गोलमेज कान्फ्रेंस में सम्मिलित होने के लिए इंग्लैण्ड जा रहे थे। उस समय आप आचार्य श्री का सन्देश प्राप्त करने आए। आचार्य ने कहा—

लोग कहते हैं, धर्म व्यक्तिगत वस्तु है। इसलिये गोलमेज कान्फ्रेंस मे धर्म का कोई प्रश्न नहीं हो सकता। मैं कहता हूँ, गुलाम और अत्याचार पीडित जनता मे वास्तविक धर्म का विकास नहीं हो सकता। धार्मिक विकास के लिए स्वतन्त्रता अनिवार्य है।"

"विधवाओं की दुर्दशा देख कर आप की आत्मा पुकार उठती है—मित्रो ! विधवा बहिनें आपके घर की शील देवियाँ हैं। इनका आदर करो। इन्हें पूज्य मानो। इन्हे खोटे दुखदाई शब्द मत कहो। ये शीलदेवियाँ पवित्र है। पावन है। मंगल रूप हैं। इनके शकुन अच्छे हैं। शील की मूर्ति क्या कभी अमंगलमयी हो सकती है ?'

"देशसेवा से प्रेरित होकर आपने एक दिन कहा—याद रखिए आपके ऊपर मातृभूमि का ऋण सब से अधिक है। आपके माता पिता इसी भूमि में पले हैं और इसी के द्वारा आपका तथा उनका जीवन टिक रहा है। आपका सर्वप्रथम कर्तव्य मातृभूमि का ऋण चुकाना होना चाहिए। मातृभूमि और माता का ऋण चुकाने के बाद आगे पैर बढ़ाना चाहिए।"

आचार्य श्री की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। राष्ट्रीय, सामाजिक आध्यात्मिक नैतिक अथवा व्यावहारिक ऐसा कोई भी विषय नहीं है जिस पर आपने अधिकार पूर्ण विवेचन न किया हो। आप की वाणी मे जादू था। बिल्कुल साधारण सी बात को प्रभावशाली एवं रोचक बनाने में आप सिद्धहस्त थे। सभी धर्म तथा सभी सिद्धान्तों का समन्वय करके नवनीत निकालने की कला अद्भुत रूप से विद्यमान थी। जीवनकला के आप महान कलाकार थे। वैयक्तिक तथा सामाजिक राष्ट्रीय तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों मे आप की कला अव्याहत थी। आपके उपदेश सभी मार्गों के संगम स्थल थे।

जहाँ प्राणियों का दुख देख कर आपका हृदय रो पड़ता था वहाँ आप कठोर अनुशासन के भी पक्षपाती थे। किसी प्रकार का दोष लगाने पर प्रिय से प्रिय शिष्य को भी आपने उचित दण्ड दिया। योग्य होने पर दूसरे को भी ऊँचे से ऊँचा पद दिया। जिस बात को आपने ठीक समझा उसके लिए विरोध की परवाह न की। उसी के युक्ति द्वारा गलत साबित हो जाने पर अपनी भूल स्वीकार करने में कोई हिचकिचाहट नहीं की। उस समय आप विरोधी दल के अग्रणी बन गए। विरोध के सामने झुकना आपने सीखा ही नहीं किन्तु युक्ति के आगे सिर झुकाना अपना कर्तव्य माना।

वह प्रतिभा, वह त्याग, वह तपस्या, वह तेज, वह सत्यप्रियता और वह वाणी अब कहाँ ?

६४—अहिंसा और सत्य के महान प्रचारक प्रतिभाशाली जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज

(श्री पदमसिंह जी जैन)

जन जाति के उद्धार के लिए जिन्होंने आजीवन अविश्रान्त श्रम किया, थली जैसे मिथ्या श्रद्धा वाले देश में पैदल भ्रमण कर हजारों मिथ्या श्रद्धा वालों को शुद्ध श्रद्धा वाले बनाये, मोरवी नरेश आदि ऐसे अनेक राजा महाराजाओं को जैन धर्म की श्रेष्ठता और जैन धर्म के सिद्धान्त समझाये। गुजरात काठियावाड, मारवाड, मेवाड, मालवा थली दक्षिण खानदेश, बम्बई, दिल्ली आदि प्रान्तों में पैदल भ्रमण करके जैनों में से अज्ञानजन्य रूढ़ियाँ दूर कराई और जिनके उपदेश मात्र से अनेक लोकोपकारी संस्थाएँ स्थापित हुई ऐसे स्वनाम धन्य जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज के सम्बन्ध मे यह लेखनी लिखने की कुछ भी शक्ति नहीं रखती।

सामाजिक धार्मिक एवं देशोद्धारक कार्यों मे रात दिन लगे रहने पर भी आपने अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना ऐसी सरल व सरस भाषा में की है जिसके कारण आज उनके द्वारा अनेक और जैन धर्म के सत्य सिद्धान्तों का घर घर में प्रचार हो रहा है।

एक चतुर कलाकार मिट्टी के लोंदे को जिस तरह अपनी अंगुलियों की करामात से चाहा रूप दे देता है, उसी तरह पूज्यश्री को लोगों के दिल अपने अनुकूल बना लेने की शक्ति प्राप्त है। आपके उपदेश में एक खास विशेषता है। वह यह कि—यद्यपि पूज्यश्री जवाहरलाल जी महाराज जैनाचार्य हैं परन्तु आपका उपदेश सर्वसाधारण के लिए ऐसा रोचक और उपयोगी होता है जिससे ब्राह्मण, जैन, क्षत्रिय, मुसलमान और पारसी आदि समस्त लोग मुग्ध हो जाते हैं।

वाल्मीमान मदक प्रात स्मरणीय स्वर्गीय जैनाचार्य श्री माधव मुनिजी तो आपको समाज में शार्दूलसिंह समान शक्तिशाली और शंख जैसा पवित्र समझते रहे। ऐसी महान् आत्मा की छाया हम पर बनी रहे यही शासन देव से प्रार्थना है।

६५—तीर्थराज जवाहर

(लेखक—श्री तारानाथ रावल विशारद)

यों तो 'तीर्थ' शब्द के कोष में १७ अर्थ लिखे हैं, मुझे उन सबसे कोई मतलब नहीं। मैं तो यहाँ उन्हीं अर्थों को लिखूंगा जो मुझे अभिप्रेत हैं। वे अर्थ ये हैं—१—माता पिता, २—ईश्वर, ३—तारने वाला, ४—ब्राह्मण, ५—गुरु, ६—अवतार, ७—यज्ञ, ८—शास्त्र, ९—कोई भी पवित्र स्थान, १०—वह पवित्र या पुण्य स्थान जहाँ धर्म भाव से लोग यात्रा, पूजा या स्नान आदि के लिए जाते हों।

अब विज्ञ पाठक समझ गये होंगे, कि तीर्थ शब्द का प्रयोग मैंने यहाँ किन अर्थों में किया है और क्यों इस लेख का शीर्षक 'तीर्थराज जवाहर' लिखा है।

मैंने पूज्यश्री के सबसे प्रथम बार दर्शन जयपुर राज्य में किए और अपनी बुद्धि के अनुसार कुछ चर्चा भी की। चर्चा के विषय गांधीजी, अहिंसा और तत्कालीन राजनीतिक समस्याएँ थीं। उस समय मुझे यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि एक जैन साधु के मस्तिष्क में भी कई राजनीतिक समस्याओं का कितना सुन्दर, सरल और व्यावहारिक हल था। अहिंसा पर काफी देर तक चर्चा हुई। मैंने अनुभव किया कि गांधी जी द्वारा राजनीतिक हथियार के रूप में प्रचारित अहिंसा में और जैन शासन द्वारा प्रचारित अहिंसा में जमीन आसमान का अन्तर है। मैंने यह भी अनुभव किया कि जैन शासन द्वारा समर्थित अहिंसा सिद्धान्त पर अमल करने वाला व्यक्ति ही गीतावर्णित स्थितप्रज्ञ की दशा को प्राप्त कर सकता है। और पूज्यश्री का बात कहने का ढंग कुछ ऐसा हृदयग्राही था कि प्रतिवादी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था। वे to the point बोलते थे—अपने विषय के केन्द्र पर डटे रहते थे। परिणाम यह होता था कि प्रतिवादी को या तो उनके सिद्धान्तों की लाल हिचकिचा स्वीकार करनी पड़ती थी या उनके अकाट्य तर्कों का लोहा मानना पड़ता था और पूज्यश्री का यही सर्वोपरि गुण था, जो अनगिनत नर नारियों को उनकी ओर आकर्षित कर देता था। यही वह अदृश्य डोरी थी जो असंख्य श्रद्धालुओं को देश के कोने कोने से पूज्यश्री के चरणों पर, फिर वे चाहे कहीं हों, ला पटकती थी।

एक दिन खबर सुनी कि आज महाराजश्री के व्याख्यान में दीवान साहब पधारेंगे। उन दिनों बीकानेर में दीवान सर मनू भाई मेहता थे, और वे शीघ्र ही दूसरी गोलमेज कान्फ्रेंस में जाने वाले थे। मैं उस दिन व्याख्यान स्थल पर जल्दी ही जा पहुँचा। पूज्यश्री पधार गये थे। व्याख्यान प्रारम्भ करने का समय हो गया था। पर दीवान साहब नहीं आये थे। मैंने समझा, शायद दीवान साहब के आने तक प्रतीक्षा करेंगे। पर यदि उस दिन प्रतीक्षा की जाती, तो मुझ जैसे के मन पर तो दीवान साहब के बड़प्पन का छाप अंकित होना ही स्वाभाविक थी, पर नहीं पूज्यश्री ने अपना भाषण ठीक समय पर प्रारम्भ कर दिया। दीवान साहब देर से आये। आकर वे अपने आसन पर बैठ गये। दीवान साहब के आने पर भी पूज्यश्री के रंग-ढंग और व्यवहार में

कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर न हुआ। वे अपना भाषण उसी प्रकार देते रहे। दस पन्द्रह मिनिट तक तो पूज्यश्री के व्याख्यान मे धार्मिक कथाएँ चलती रही। मैंने मन म सोचा कि इस ढग की बातो मे सर मनूभाई जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के मुत्सद्दी को क्या रस आ रहा होगा। मगर वाह! पूज्यश्री ने विषयातर न करते हुए दीवान साहब के आगे कुछ ऐसे सुझाव रखे कि दीवान साहब को वहाँ पूज्यश्री को धन्यवाद देते हुए विश्वास दिलाना पडा।

सन् ४२ के अगस्त या सितम्बर मे मैं इन्दौर था और वही पूज्यश्री की बीमारी की खबर सुनी। दिल म एकाएक धक्का सा बैठा। मन मे सवाल उठा—क्या जैन जाति अपनी इस अलौकिक विभूति से वंचित हो जायगी? पर श्री सेठ चम्पालाल जी बांठिया को पूज्यश्री की सेवा करके उन्हे एक साल और रख सकने का श्रेय मिलना था। हालाकि निराश तो तभी सभी हो चुके थे। मेरा खयाल है तत्कालीन युवाचार्य और वर्तमान पूज्यश्री श्री गणेशीलाल जी महाराज, प० मुनि श्री सिरमल जी महाराज आदि साधु सन्तो की तथा सेठ चम्पालाल जी बांठिया और भीनासर गगाशहर बीकानेर तथा आस पास के अन्य श्रावको की श्रद्धा, भक्ति, निष्काम सेवा और प्रार्थनाओ का ही यह प्रभाव था कि पूज्यश्री का औदारिक शरीर एक साल तक रह गया। नहीं तो उन्होंने अपने शरीर को तप अग्नि म इतना तपा डाला था कि वह इस लोक मे टिक सकने योग्य नहीं रह गया था।

सन् ४३ के फरवरी म और फिर एप्रिल से अन्तिम दिन तक मुझे पूज्यश्री के दर्शन करने का सौभाग्य मिलता रहा। इन्ही दिनो मुझे अपने अकारण मित्र श्री शोभाचन्द जी भारिल्ल द्वारा सम्पादित और भीनासर के श्री सेठ चम्पालाल जी तथा सेठ बहादुरमल जी बांठिया द्वारा प्रकाशित जवाहर किरणावली के तीनो भाग पढने को मिले। उक्त पुस्तको में महाराज श्री के व्याख्यान पढकर तथा उनके विचारो पर मनन करके मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि यदि यह विभूति इस पराधीन भारत में, खास जैन जाति म उत्पन्न न होकर, किसी स्वतन्त्र देश म उत्पन्न हुई होती तो वहाँ वाले आज तक इसके विचारो का प्रचार करने के लिए क्या-क्या न कर चुके होते। दक्षिण वालो ने पूज्यश्री को जैनियो का 'दयानन्द' ठीक ही कहा था। मैं कहता हूँ कि यदि ये पाश्चात्य देशो मे होते तो क्या इन्हे लूथर न कहा जाता?

एक दिन मैं महाराज के दर्शन करने गया। पूज्यश्री तख्ते पर लेटे थे। आँखें मुँदी हुई थी। उन्हे बोलने मे कष्ट भी होता था। पूज्यश्री की तन्मयतापूर्वक अनुपम सेवा करने वाले मुनि श्री सिरेमल जी महाराज ने मेरा कुछ परिचय दिया। पूज्यश्री ने आँखें खोली। मेरे प्रणाम के उत्तर मे हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम तो गत वर्ष भी मिले थे। मुझे पूज्यश्री की इस स्मरण शक्ति पर आश्चर्य हुआ, फिर ईर्ष्या भी हुई। यह भयकर बीमारी! यह जरा जर्जर देह!! और गत वर्ष मिलने की बात याद!!! मुझ से पहले और बाद म मुझे जैसे कितने ही उपस्थित हुए होंगे। चरण छूकर और अन्य प्रकार से न जाने कितने अनको ने अपनी असीम श्रद्धा और भक्ति का प्रकटीकरण न किया होगा इस तपोधन के आगे! पर मैं, जिसने कभी साधारण प्रकार से प्रणाम करने के सिवा पूज्यश्री के प्रति अपनी भक्ति प्रगट न की इस असाधारण शारीरिक कष्ट म भी एक वर्ष के बाद तक याद कैसे रह गया।

उक्त पंक्तियाँ लिखने से मेरा आशय यही है कि पूज्यश्री का पंच भौतिक देह यद्यपि निर्बल था, तो भी उनका मानस निर्बल नहीं था।

भगवान् बुद्ध ने भी अपने निर्वाण के समय, अपने आस पास उपस्थित अपने रोते हुए शिष्यों को बडे जोरदार शब्दो मे सान्त्वना दी थी। भगवान् कृष्ण ने अपने पर तीर चलाने वाले बहेलिये को सांत्वना देकर निर्भय किया था। और महर्षि दयानन्द ने तो अपने अन्तिम क्षणो में

हँसते हुए अपने ईश्वर की लीला की प्रशंसा कर, और मानो उससे बातें करते हुए अपना शरीर छोड़ा था। ये सारे उदाहरण मानसिक कमजोरी के परिचायक नहीं हैं। खैर।

एक दिन मैं महाराज के दर्शन करने भीनासर गया था। मैंने समझा कि बीमारी के कारण पूज्यश्री लेटे हुए होंगे। सम्भव है निद्रा में हों। अतः मैं हॉल के आस पास एक ही दिशा में इधर उधर मँडराने लगा पर जब दूसरी दिशा में पहुँचा तो वहाँ का दृश्य देख कर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। पूज्यश्री तख्ते पर एक दो शिष्यों के सहारे बैठे थे। और गणेशीलाल जी महाराज श्री भगवद्गीता का पाठ सुना रहे थे और पूज्यश्री बड़े प्रेम से सुन रहे थे। मैं भागा भागा श्री सिरेमल जी महाराज के पास पहुँचा। अपने आश्चर्य का कारण कहा। महाराज ने कहा—पूज्यश्री के लिए न तो यह नई बात है और न आश्चर्य की। आज सोमवार है। प्रति सोमवार को पूज्यश्री मौन रहते हैं। और जैन शास्त्रों के अलावा अन्य धर्म ग्रन्थों का भी कुछ समय तक पाठ सुनते हैं। आज श्रीमद्भगवत् गीता की बारी होने से उसी का पाठ हो रहा है।

मैंने मन में कहा—यदि भारत के सभी धर्माचार्य अपने में उदारता रख कर अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णुता रख कर उनके धर्म ग्रन्थों का मनन किया करें तो देश के धार्मिक झगड़े बहुत कुछ दूर हो सकते हैं।

इसके बाद फिर मैं जब जब गया पूज्यश्री की तबियत गिरती ही गई।

उस दिन शनिवार था। सायंकाल के चार या पाँच बजे मैं बीकानेर में सेठिया विद्यालय में बैठा महाराज श्री के विषय में ही अपने एक-दो मित्रों से बातें करता करता लगभग गोधूली के समय जब कोट दरवाजे के बाहर पहुँचा और सेठ लाभू जी श्रीमाल के कटले को बन्द होते देखा, तभी समझ गया कि पूज्यश्री का संथारा सीझ गया है। और जरा देर में तो सारे शहर में यह बात बिजली की तरह फैल गई।

फिर मैंने उस दिन के अपने सब कार्यों को छोड़ा और भीनासर चल दिया। रास्ते में भीनासर जाने वाले भक्त नर नारियों का तांता सा लगा था। भीनासर पहुँचा। हॉल में घुसा। भीड़ को चीरता हुआ आगे बढ़ा। जो कुछ दिखाई दिया अन्तिम दर्शन थे। अंतिम झाँकी थी। पूज्यश्री तो वहाँ जा पहुँचे थे, जहाँ के लिए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं, "यद् गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमं मम।" पर पूज्यश्री का औदारिक देह, जो उस दिन से ६९ साल पहिले मालवे के थांदला ग्राम में बालरूप में अवतरित हुआ था, जिसने युवा, प्रौढ़ और वृद्ध रूप धारण किया था, अभी वहीं था। अभी उस निर्जीव देह से भी कुछ कार्य होना बाकी था।

एक लकड़ी के तख्ते पर, जिस पर बैठे-बैठे पूज्यश्री ने स्वस्थावस्था में अनेक व्याख्यान और रुग्णावस्था में अपने भक्तों को आशीर्वाद ही दिये होंगे, उनका देह व्याख्यान देते समय बैठने की स्थिति में रखा था, हॉल के एक खम्भे से टिकाया हुआ। मालूम होता था व्याख्यान दे रहे हैं। मुख पर मुखवस्त्रिका लगी थी। पास में रजोहरण पड़ा हुआ था। आँखें खुली थीं। दोनों हाथ घुटने पर रखे थे। सुखासन से बैठे थे। रात हो चुकी थी। हॉल में लगभग १०० कैंडल पावर की बत्ती जल रही थी। उसी के प्रकाश में पूज्यश्री का मुखमण्डल जगमगा रहा था। मानो दोनों एक दूसरे की ज्योति को बढ़ा रहे थे। दर्शनार्थी आ जा रहे थे। आते अधिक थे जाते कम थे। क्योंकि जो सुबह वापिस आने का कष्ट न भोगना चाहते थे उन्होंने वहीं रात बिताने का इरादा किया।

इस भीड़ में मैंने सेठ चम्पालाल जी बांठिया को ढूंढ़ना चाहा। पर उस समय तो वे पूरे अगम जीव बने हुए थे। बीकानेर से बाहर सब जगह तार से सूचना पहुँचाना, राज्याधिकारियों से राज्य के सवाजमे का प्रबंध करना और कहाँ तक गिनाएँ सारा प्रबंध उस एक बुड्ढे

पतले व्यक्ति के कधो पर आ पडा था। हां, कुँवर लहरचन्द जी सेठिया अवश्य उनके साथ इधर उधर दौड धूप कर रहे थे।

रात को नींद न आई। सुबह पहुँचना जो था। बिस्तरा छोड कर, अपने आवश्यक कार्य से निपट कर अँधेरे अँधेरे ही भीनासर की ओर चल पडा। गगाशहर की घाटी के ऊपरी सिरे पर पहुँचते पहुँचते मैंने अपने को इक्के, तांगे और पदल जाने वालो की भीड म खोया हुआ सा पाया। पानी की बूँदें शुरु हो गई थी। लोग भीगते चले जा रहे थे। किसके लिए? तीर्थराज जवाहर के अन्तिम दर्शन के लिए। उस तीर्थराज जवाहर के लिए जो अपने जीवनकाल म अपने देश जाति और सम्प्रदाय के लिए अलौकिक विभूति साबित हुआ था।

हॉल, सामने का बरडा, पीछे का बरडा, बाग, सामने की सडक, आस पास के कमरे, नर नारियो से ठसाठस भरे थे। प्रबन्ध पूरा था। स्वयसेवक जी जान से काम कर रहे थे। इस समय जाने वाला कोई नहीं था। सब आने वाले थे। देवियां दर्शन के लिये टूटी पडती थी। उनके लिये प्रबन्ध अलग था, फिर भी उन्हें इस बात की पर्वाह नहीं थी कि उनका कोई जेवर कही गिर न पडे या किसी पुरुष से उनका स्पर्श न हो जाय। बच्चे भीड को चीरते हुए घुसे जाते थे।

कई आदमी उछाल के लिए फण्ड एकत्र करने म लगे थे। और देने वाले बडी श्रद्धा भक्ति से दिये चले जा रहे थे। उस दिन पूज्यश्री के लिए कागज के रूप म चांदी बरस रही थी। महिलाओ की दानशीलता उस दिन देखने के काबिल थी। जवरो से लदी हुई श्रीमती अगर एक अच्छी रकम दे देती थी तो कौन आश्चर्य की बात थी पर जब एक ऐसी देवी जिसका वस्त्र विन्यास लक्ष्मी की उदासीनता प्रगट करता था, फलाये हुये पल्ले में मुक्त हस्त से कुछ डालती नजर आती थी तो बरबस मुँह स धन्य धन्य ही निकल पडता था।

अन्त मे गगनभेदी जयघोस के साथ चांदी का विमान, जिसम पूज्यश्री का शव रखा गया था, और जिसे श्री सेठ चम्पालाल जी बाठिया न पहले से तैयार करवा रखा था उठाया गया। मार्ग तो नरमुण्डो से ठसाठस भरा ही था, पर आस पास के मकान भी दर्शनार्थियो से भरे नजर आते थे। गगाशहर के एक अच्छे भाग म विमान घुमाया गया। लोग विमान के आगे दण्डवत करने के लिए और उस कधा देने के लिए टूटे पडते थ। शवयात्रा दिवगत आचार्य की जीवन काल के गौरव के अनुरूप ही थी। विमान के आगे राज्य की ओर से आया हुआ नवाजमा था। फिर दण्डवत करने वालों, जय घोष करने वालों, भजन गान वालो और स्वयसेवको की भीड थी। इसके बाद विमान। विमान के बाद पुरुषो की अपार भीड। पुरुषो की भीड के बाद गीत गाती हुई स्त्रियां। और सब के बाद ऊँट पर चढ़े हुए, रुपये और सोने चांदी के फूल उछालने वाले। और सब के बाद लूटने वाले।

पूज्यश्री के शव के फोटोग्राफरो ने फोटो भी खीचे। जीवितावस्था म तो फोटो खीचे जाने के लिए वे तो अपने धार्मिक सिद्धान्तों के कारण कभी स्वीकृति दे ही न सकते थे। पर इस समय फोटोग्राफर और प्रेस वाले कब चूकने लगे थे? खासतौर से तब, कि जब उन्हें कोई रोकने वाला न हो? पूज्यश्री की शवयात्रा के विमान उठने के स्थान स नगाशहर श्मशान पहुँचने तक के कोई पांच सौ फोटो खीचे गये होंगे।

विमान नौ बजे उठा था। गगाशहर के परले सिरे तक घूम कर श्मशान तक पहुँचने म १ १॥ मील का चक्कर लगा होगा। पर इतने ही चक्कर मे, भीड की अधिकता के कारण ३ ४ घन्टे लगे। श्मशान म विमान की चांदी लूटने को लोग टूट पड़े।

यहा मुझे महाकवि तुलसीदास की एक चौपाई याद आ रही है—

नयनन्हि सत दरश नहिं देखा। लोचन मोरपख कर लेखा॥
ते सिर कटु तुबरि समतूला। जे न नमत हरि गुरु पद मूला॥

यही बात मैं उन लोगों के लिए भी कहूँ, जिन्होंने न तो पूज्यश्री के दर्शन किये, न उनके आगे अपना सिर झुकाया, और न उनकी शवयात्रा का जुलूस देखा।

६६—प्रखर तत्ववेत्ता श्रीमज्जवाहिराचार्य

(श्री भैरवचन्द बाँठिया 'वीरपुत्र' जा न्यायव्याकरणतीर्थ, सि० शास्त्री, बीकानेर।)

परम प्रतापी श्रीमज्जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलाल जी महाराज साहब जैन समाज की ही विभूति नहीं अपितु विश्व विभूति थे। उनमें एस अनेक गुण विद्यमान थे जिन्होंने उन्हें विश्व विभूति बना दिया था। वे सच्चे महात्मा, महायोगी, प्रखर तत्ववेत्ता, कुशल उपदेशक, प्रकाण्ड विद्वान् त्यागी तपस्वी और कठोर संयमी थे। उनका हृदय अत्यन्त निर्मल और पवित्र था। इस महात्मा के दर्शन और वाणी श्रवण का सौभाग्य मुझे अनेक बार प्राप्त हुआ था और जब पूज्य श्री का चतुर्मास जोधपुर था। तब चार महीने तक उनके निकट सम्पर्क में रहने का भी मुझे सुअवसर मिला था। उस समय पूज्य श्री की समग्र दिनचर्या देखने का मुझे अवसर मिला था। पूज्यश्री प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में उठकर तत्वों का चिन्तन किया करते थे। तत्पश्चात् प्रतिक्रमण के बाद वे ध्यान में विराजते थे। उनके ध्यान का आसन महान् योगी का सा बड़ा स्थिर होता था। उस समय महान् योगी के चेहरे से संताप के श्रोताप को मिटा देने वाली अपूर्व शान्ति टपकती थी। प्रकृतिदर्शी की छोटी से छोटी बात का भी वे बड़ा सूक्ष्म निरीक्षण करते थे और व्याख्यान के समय उस पर जीवन का कोई महान सत्य उतारते थे।

व्याख्यान शुरू करने से पहले आप 'विनयचन्द चौबीसी' में से एक तीर्थङ्कर भगवान की प्रार्थना फरमाते थे। प्रार्थना की कड़ियां बोलते समय वे उसमें तल्लीन हो जाते थे आत्म शान्ति का पूर्ण रसास्वाद करते थे। प्रार्थना गा लेने के पश्चात् प्रार्थना में आये हुए विषय पर कुछ फरमाते थे और प्रार्थना का माहात्म्य बतलाते थे। प्रार्थना पर अत्यधिक जोर देते हुए आप फरमाते थे कि—मुमुक्षु पुरुष को अपना सारा जीवन ही प्रार्थनामय बनाना चाहिए। जिसका जीवन प्रार्थनामय बन जाता है उसे फिर किसी बात की कमी नहीं रहती। वह पूर्ण आत्म शान्ति का सदा अनुभव करता है। प्रार्थना पर बोलते हुए आप कई वक्त इन कड़ियों को दुहराया करते थे —

सुने री मैंने निर्बल के बल राम।
देखे री मैंने निर्बल के बल राम॥

प्रार्थना तो पूज्य श्री के जीवन का एक विषय बन गया था। प्रति दिन प्रार्थना के विषय में वे कुछ न कुछ अवश्य फरमाते थे। सब दर्शनों का समन्वय करने की क्षमता आपकी अपूर्व थी।

कथा कहने का ढंग आपका निराला था। कथा के पात्रों को ऐसा चित्रित करते थे मानों वे सामने खड़े हों। साधारण से साधारण कथा में भी जान डाल देना आपका विशेष गुण था।

पूज्य श्री स्वभाव के जितने नरम थे, अनुशासन के वे उतने ही कठोर थे। अनुशासन की किञ्चिन्मात्र शिथिलता को वे सहन न कर सकते थे। अनुशासन के विषय में यह कथन उन पर लागू होता था —

'वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि पुष्पादपि'

अर्थात्—सन्तों के हृदय फूल से भी कोमल होते हैं किन्तु परिस्थिति के अनुसार वे ही हृदय वज्र से भी कठोर हो जाते हैं।

सत्य सिद्धान्त का पालन करते हुए उस मार्ग में आनेवाली विघ्न बाधाओं से विरोध से पूज्यश्री तनिक भी घबराते न थे। जिस प्रकार सत्य सिद्धान्त का प्रतिपादन करने में वे निर्भीक

कहता थे उसी प्रकार उसका पालन करने में भी आप निर्भीक थे। एक ऐसे कठिन परीक्षा के प्रसङ्ग को देखने का मुझे अवसर मिला था। अजमेर साधु सम्मेलन के समय कान्फ्रेंस के पण्डाल में मुनियों के व्याख्यान हुए थे। वहाँ लगे हुए लाउडस्पीकर में बोलने के लिए आपसे कहा गया तो आपने लाउडस्पीकर में बोलने से साफ इन्कार किया और स्पष्ट कहा कि लाउडस्पीकर में अग्नि का स्पर्श होता है। उसमें बोलने से जैन मुनियों को दोष लगता है। उस पर वहीं उपस्थित जनता में बहुभाव ने बड़ा विरोध किया और लाउडस्पीकर में बोलने के लिए पूज्यश्री का काफी जोर दिया तथा बड़ा कोलाहल मचाया किन्तु पूज्यश्री इस विरोध से तनिक भी न घबराये और सत्यसिद्धान्त की रक्षा के निमित्त वे लाउडस्पीकर में न बोले। हजारों की मानवमेदिनी से भरे हुए पण्डाल में से उठकर आप बाहर चले आये। इस प्रकार ऐसा विकट प्रसङ्ग एवं कठिन परीक्षा का समय उपस्थित होने पर पूज्यश्री ने जिस अपूर्व सत्साहस का परिचय दिया वह हमारे लिए गौरव लेने जैसी बात है। उस महापुरुष के इस सत्साहस को देख कर अपने से विरोध रखने वाली तेरह पंथ समाज के मुंह से भी बरबस प्रशंसा के शब्द निकल पड़े थे —

'लाउडस्पीकर में न बोल कर पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज ने समस्त बाईस सम्प्रदाय समाज का मस्तक सदा के लिए उन्नत रखा है और जनता के विरोध से न घबराते हुए सत्य सिद्धान्त पर अटल रह कर उन्होंने महापुरुषोचित सत्यसाहस का परिचय दिया है।'

जिस प्रकार पूज्यश्री का आध्यात्मिक शरीर उत्कृष्ट था उसी प्रकार भौतिक शरीर भी उत्कृष्ट था।

लम्बा कद, गौर वर्ण विशाल भाल तेजोमय सुदीर्घ नेत्र चमकता हुआ ललाट, दीर्घ मस्तक, मुखमण्डल की अपूर्ण कान्ति, ये सब पूज्यश्री के भौतिक शरीर की उत्कृष्टता को सूचित करते थे। उनकी उत्कृष्ट शारीरिक सम्पदा देखने वाले एक अनजान व्यक्ति को भी एक दम प्रभावित किये बिना न रहती उनकी आवाज बड़ी बुलन्द थी। जब वे व्याख्यान मण्डप में बैठकर व्याख्यान फरमाते थे तब ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई सिंह गर्जना कर रहा हो। जो व्यक्ति एक बार उनके दर्शन कर लेता था उसके हृदय पर उनकी तेजोमय सौम्य मूर्ति की छाप सदा के लिए अमिट हो जाती थी। वह उन्हें कभी भूलता न था। जो एक बार उनका व्याख्यान श्रवण कर लेता था वह सदा के लिए उनका श्रद्धालु भक्त बन जाता था। उनके व्याख्यान में जादू की सी शक्ति थी। उनका व्याख्यान तात्विक होता था उसमें शब्दाडम्बर नहीं होता था। वे शब्दों की आत्मा को पकड़ते थे और उसमें गहरे उतर कर तत्व विश्लेषण पूर्वक विचार करते थे। गहन से गहन तत्वों की थाह लेने की उनमें क्षमता थी। उनमें ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप रत्नत्रय का त्रिवेणी संगम था। जिस प्रकार वे अपनी विद्वत्ता और वक्तृत्व कौशल से परमतावलम्बियों को पराजित करने में समर्थ थे उसी प्रकार वे कठोर संयम पालन में भी चुस्त थे।

यद्यपि पूज्यश्री का भौतिक शरीर आज हमारे सामने विद्यमान नहीं है तथापि उनका निर्मल यश रूपी शरीर सदा अजर अमर रहेगा।

ऐसे युगावतारी महापुरुष के चरणों में मैं भक्ति पूर्वक अपनी श्रद्धाञ्जलि समर्पित करता हूँ। इति शुभम्।

एक मुख से हजारों की वाणी

६७—(श्रीयुत शुभकरनजी)

यों तो मेरे पिता ने मेवाड़ राज्य की काफी सेवा की है लेकिन मैं भी करीब २५ वर्ष से मेवाड़ की सेवा कर रहा हूँ। लेकिन मेरा जीवन गोश्त खाना शराब पीना पान खाना सिगरेट तमाखू पीना, शिकार करना (आदि कामों में) ही ओतप्रोत रहता था। अत्युक्ति न होगी, अगर

मैं उस समय का जीवन एक जबरदस्त शराबी व गोश्त खाने वाला व शिकार करने वाला था। जीवहिंसा करने में कोई पशोपेश नहीं था।

लेकिन सन् २० में उदयपुर में पूज्यश्री जवाहर के दर्शन का सौभाग्य भूतपूर्व दीवान कोठारी बलवन्तसिंहजी के साथ प्राप्त हुआ। पूज्यश्री के उपदेश से मेरे मन में घृणा व आत्मग्लानि उत्पन्न हुई और मन ही मन बड़ा पश्चात्ताप करने लगा और उपदेश की दिल में इतनी लगन लगी कि गोश्त खाना, शराब पीना पान, तमाखू, बीड़ी पीना, व शिकार करना सब छोड़ दिया।

मैं यह कहता हूं कि पूज्यश्री की वाणी में इतनी शक्ति और ऐसी अमृततुल्य है कि मुझ जबरदस्त मांसाहारी व शराब पान करने वाले के दिल को सच्चा मार्ग सुझा दिया। आप बहुत सरल स्वभावी व शान्तिप्रिय मूर्ति हैं जिससे मन बहुत ही प्रसन्न होता है।

मेरे जीवन के बदलने के बाद सन् १९२१ के बाद आज तक उसी तरह अमल कर रहा हूँ व एक वक्त सादा भोजन (चावल आदि) लेता हूँ। स्वास्थ्य पहले से काफी अच्छा है। इस ६० वर्ष की आयु में भी पूज्यश्री के उपदेश से सब बुरी चीजों का सेवन छोड़ देने से जवान की तरह काम कर सकता हूं और सादगी में समय बिताता हूँ।

सन २० के बाद पूज्यश्री के चातुर्मास घाटकोपर रतलाम सरदारशहर, चूरू, धार, ब्यावर वगैरह स्थानों पर हुए। मैं दर्शन करने को बलवन्तसिंह जी के साथ जाता रहा और अमृत वाणी सुनता रहा हूं जिससे काफी शान्ति मिली है।

ज्यादा शब्द मेरे पास नहीं कि मैं ऐसे उच्च मुनि की तारीफ करूँ, लेकिन मेरा जीवन ही उनके गुणों का गान करने के लिए थोड़ा सा नमूना काफी है।

पत्रों की प्रतिध्वनि

सम्पादक 'फूलछाब' राणपुर (काठियावाड)

भारत में 'जवाहर' एक ही नहीं, दो हैं एक राष्ट्रनायक है दूसरा धर्मनायक। युक्त प्रान्त से लेकर सौराष्ट्र की सीमा तक जिनकी सुवास महक रही है, वे जैन मुनि श्रीजवाहरलालजी दो एक वर्ष से काठियावाड में हैं।

बारह वर्ष की (? सोलह वर्ष की) वय में दीक्षा लेने वाले यह साधु इस समय सत्तर (?) से अधिक वर्ष की वय वाले व्याधिग्रस्त वृद्ध हैं। स्थानकवासी सम्प्रदाय के साधु होते हुए जैनेतर जगत् से भी सम्मानित हैं। कालकोठ मिले में बीस घड़े रहते भी ये ऐसे पूर्ण प्रगतिशील विचारक हैं कि रूढ़िभक्त अनुयायियों का जिसकी कल्पना भी नहीं हो सकती। ये प्रामाणिक, निडर और निर्मल मत हैं।

अपनी क्रिया के विषय में पक्के जैन होते हुए भी ये राष्ट्रवाद के उपासक हैं।

गांधीजी के और गांधीजी के विचार तत्वों के (प्रायः) निडर अनुमोदक हैं। गांधीजी मालवीयजी तिलक — सब से इनका मिलन हुआ है। गीता पर लिखे भाष्य में जैन धर्म संबंधी स्व० लोकमान्य की भूल प्रमाणित करके देने पर लोकमान्य ने उसे सुधारना स्वीकार किया था।

राजपूताना और मारवाड के हजारों जवाहरभक्त केवल मुनिश्री की खादी प्रशंसा पर खादी धारी बने हैं। ये सुधारक है, चिंतक हैं दर्शक हैं पूर्ण क्रियानिष्ठ एवं वैराग्य के ही उपासक हैं। ये अनेक युक्तियों से और आदर्शों से मुग्ध करने वाली नित्य नई नूतनता पूर्वक अपनी समर्थ वाणी द्वारा संसारियों को संसार एवं धर्म का रहस्य समझाते हैं।

(१३ मई, १९३८)

स्थानकवासी जैन, अहमदाबाद

स्थानकवासी जैन साधुओं में ज्ञान, दर्शन और चारित्र का त्रिवेणी संगम हो सकता है। विद्वत्ता और वक्तृत्वशक्ति में जैनेतरों को भी मात कर सकते हैं और जहाँ जहाँ विहार करें वहाँ-वहाँ हजारों मनुष्यों को सच्चे अर्थ में श्रावक बना सकते हैं यह बात बिना अतिशयोक्ति के अगर किसी के लिए कही जा सकती है तो श्री जवाहरलाल जी महाराज के लिए ही। उनमें न कोरा ज्ञान है न अंध क्रिया है और न श्रोताओं के समूह पर उनका असर क्षणिक होता है। यह आचार्य श्री ज्ञान और क्रिया के चक्रों से चारित्ररथ को अग्रसर, करते हुए लगभग आधी शताब्दी से जैन जनता की अनन्य सेवा बजाकर चार मास पहले स्वर्गवासी हुए हैं।

पद्यमयी श्रद्धांजलियां

श्रद्धाञ्जलि

(पं० श्री गजानन्दजी शास्त्री, अजीतसरिया संस्कृतपाठशाला, रतनगढ़)

(१)

प्रतिमाप्रतिभापितशास्त्रचय,
शरदिन्दुसमानयशोनिलयम् ।
विगतारिभय भवदु खदह्
प्रणमामि जवाहरलालमहम् ॥

(२)

जिन तत्त्वजुषा विदुषां प्रमुख
शरणागतपालनलब्धसुखम् ।
तपसा परिशोभितदिव्यमुख,
प्रणमामि जवाहरलालमहम् ॥

(३)

सुखशान्तिकर परमार्तिहर
जगतामुपकारविधानपरम् ।
करुणापरिपूर्णविचारधर
प्रणमामि जवाहरलालमहम् ॥

(४)

मनसा वचसा महता तपसा,
प्रतिपादित लोकहितसततम् ।
करुणाकरसाधुजनैकगति
प्रणमामि जवाहरलालमहम् ॥

(५)

अनुकम्पनयोगरत विरस,
शमसयमसाधनतानिरतम् ।
अमृतोपमपुण्यवच सहित,
प्रणमामि जवाहरलालमहम् ॥

(६)

सौम्य प्रशान्त यशसा महान्त,
दिव्यैरनेक सुगुणैर्विभान्तम् ।
आचार्यवर्य सुसमाधिचय,
जवाहर तागुत नमामि ॥

(७)

दिव्यं धर्मदिवाकर कलियुगे व्याप्तेऽपि विद्योतयन्,
पाखण्ड परिखण्डयन् प्रतिदिन सम्मण्डयन् सज्जनान् ।
कारुण्य समुपादिशश्च निरत विद्या परा वर्धयन्,
श्री जैनेन्द्रजवाहर यतिवरो जीव्याज्जगत्यां चिरम् ॥

जय जवाहरलाल की
(रचयिता—श्री तारानाथ रावल)

(१)

निज जन्म से जिस साधुवर ने जन जाति निहाल की।
हो, पूज्य श्री आचार्य मुनिवर, जय जवाहरलाल की॥
नर देह में वह देव था, सिद्धांत का वह भक्त था।
व्यवहार में वह दक्ष था, कर्तव्य पर आसक्त था॥
उत्तम सभाचातुर्य था, वह वाक् पटुता का धनी।
अति ओज वाणी में भरा था, शान उसकी थी घनी॥

(२)

प्रभविष्णुता उसमें अलौकिक ज्ञान का भंडार था।
निर्भीक तार्किक, शास्त्र ज्ञाता शील का अवतार था॥
श्रोता श्रवण पावन हुए, उसके सदा उपदेश से।
श्रवण सदा परितुष्ट थे, उस साधु के वर वेश से॥

(३)

निज-अपर हित संयम विधायक वह अतीव कठोर था।
हां, ज्ञान घन लख नाच उठता नित्य मानस मोर था॥
वह सम्प्रदायाचार्य था, ये जानते इसको सभी।
पर सांप्रदायिकता न उसके पास फटकी थी कभी॥

(४)

उसकी तपस्या सफल थी, सम्पूर्ण थी, निष्काम थी।
उपदेश, प्रवचन वाणियां, अनमोल थी, अभिराम थी॥
संयम सफल सद्गुण-सदन, सद्भाव-सद्म सुजान था।
आचार्यवर निजजाति का गौरव तथा अभिमान था॥

(५)

पावन परम उस साधुवर की जन्म भू मालव मही।
थी पर प्रशंसा देश भर में आज घर घर हो रही॥
अनुयायियों पर प्रेम की, उसकी अनोखी धाक थी।
निर्वाक चख सब बस आज्ञा कठोर सवाक थी॥

(६)

सर्वस्व त्यागी, निरभिमानी, ब्रह्मचारी संत था।
तार्किक प्रवर उसका तथा विद्या विलास अनंत था॥
गुण गण रमित सद्धर्म देश लक्षण प्रचारक धीर था।
पंडित प्रवर, प्रतिभा प्रसिद्ध प्रबुद्ध-पूजित पीर था॥

(७)

था वह स्वदेशी वस्तु वस्त्र प्रयोग का हामी बड़ा।
निजदेश की परतंत्रता का हृदय में कांटा गड़ा॥

हर रोम म उसने रमाया अहिंसा सिद्धात था।
पर पक्षियो के मामन निश्चल तथा निर्भान्त या॥

(८)

ससार में चहुँ ओर उपदेशक दिखाई दे रहे।
जयघोप सुनकर अभ्र भेदी फूल कुप्पा हो रहे।
पर यह जवाहर था कि जो सब बात म व्यवहार म।
प्राचीन ऋपियो सा सदा था अनेकात विचार मे॥

(९)

था दयानद महर्पि लूथर या कि जन समाज म।
अवधूत तुल, सदा निरत था लोक सेवा काज मे॥
वह एक अतर्बाह्य था, उसमे न छल का लेश था।
श्राता समूह विमुग्धकर उस साधु का वर वेश था॥

(१०)

उस-सा अपर अव कौन है, उसका वही उपमान था।
जब खोलता मुख गू जता जिन पथ गारव गान था॥
वह आय जीवन काल म नित लोकहित करता रहा।
मन से वचन से कम से, शुभ भावना भरता रहा॥

(११)

जिन देव शासन शख फू का, जोर मे किसने कहो।
श्री साधु मार्गी सघ को किसन दिपाया था अहो॥
शुभ राष्ट्र सेवा प्रेरणा की सघ मे की स्थापना।
ओ शून्य, कह दे जोर से जय जवाहर उन्नतपना॥
निज कर्म से आचायवर ने जैन जाति निहाल की।
हो, पूज्य श्री मुनिवर तपोधन जय जवाहरलाल की॥

गुरुदेव ! छिपे हो किस अनन्त के कोने मे ?

(श्री मुनीन्द्रकुमारजी जन)

(१)

ओ समाज क कणधार ! ओ बुझत दीपक की आशा !
तुमने भी बुझकर दिखलाया जग है एक तमाशा॥
किन्तु तुम्हारे बुझने ने जग अन्धकार म डाला।
हम सब की छाती म मानो चुभा दिया है भाला॥

(२)

जगमग होर जन जगत के ! जैन जना के सनानी।
लाखो की आखो स तुमको क्या ढुलकाना था पानी॥
दख रही हैं आँखें अब तो एक राख की ढरी।
छोड़ गये यह देह किन्तु युग युग तक गाथा है तेरी॥

(३)

झोली लेकर निकल पड़े तुम जग का सुनकर हाहाकार।
व्याकुल जग को देख देख तुम व्याकुल भी थे स्वयं अपार॥
भारत के कोने कोने में घूम घूम तुम आये थ।
जग के दुख बटोर बटोर कर झोली तुम भर लाये थ॥

(४)

तुमने कहा– जगत के कामी ! क्यो तुम स्वय दुखी होते ?
लगा चोट अपने ही हाथो तुम क्यो स्वय भला रोते ?
ढूंढ रहे सुख कहां जगत म, सुख जग म किसने पाया ?
नभ का छूने पार चले हो, पार भला किसने पाया" ?

(५)

तुमने कहा–"अरे ओ धनवानो ! क्यों धन पर इठलाते हो ?
इस धन को अच्छे कृत्यो में हँस हँस क्या न लगाते हो ?
निर्धन का तुम गला घोंट कर धनिक आज दिखलाते हो ?
धनवानो ! तुम एक धनिक बन लाखो को रुलवाते हो" ॥

(६)

तुमने कहा— अहिंसावादी ! क्यो कायर तू बनता है ?
आज देश म युद्ध छिड़ा है, क्यो न युद्ध को ठनता है ?
सत्य अहिंसा ले हाथो म करो युद्ध की तैयारी।
शत्रु भी तब काप उठेगा लख कर शक्ति तुम्हारी' ॥

(७)

तुमने कहा—'जैन धर्म नहीं कायरता सिखलाता है।
अवसर आने पर वह हँस हँस बढ़ बढ़ हाथ बताता है॥
जैनधर्म तो वीरों का ही धर्म सदा बनता आया।
पर हमने अपने ही हाथो धर्म का मान घटाया ॥

(८)

तुमने कहा— 'सभी मुनिवर स चेत सकें तो चेतें हम।
परिवर्तन करना हमको उपदेश सदा जो देते हम॥
हमें मुनिगण ही इस सेना के कहलाते हैं सेनानी।
हमी लोग जो झगड़ेंगे तो होगी पतन कहानी ॥

(९)

तुमने कहा—"जैन जगत के सभी एक हो जाओ।
बीती बातों को सपने म याद कभी मत लाओ ॥
सुनी नहीं हा ! इन बातो की कीमत हमने पहचानी ना।
एक बार ही सुन लेते तो ऐसी दशा दिखाती ना॥

(१०)

राष्ट्रदूत ! ओ धर्मदूत ! ! तुम जीवन के निर्मोही ।
तुम सा अन्य जवाहर हम क्या पा लेंगे अब कोई ?॥
दुख के सागर में धकेल कर चले गये क्यो हम अहो !
कितना तडफाना अब बाकी, सचमुच गुरुवर ! हमे कहो ॥

(११)

राष्ट्रवाद आध्यात्मवाद के तुम थे एक पुजारी ।
जग का दर्द मिटाने निकले थे तुम एक भिखारी ॥
वही भिखारी, वही पुजारी बीच हमारे नही रहा ।
बीच जवाहर को नही पा सभी व्यथित हैं आज महा ॥

(१२)

बिना हमे कुछ कह तुम्ह गुरुदेव ! नही चल देना था !
जाने से कुछ पूर्व तुम्हे गुरुदेव ! हमें कह देना था ॥
आज तुम्हारी मधुर याद मे लगा हुआ जग रोने मे ।
बतलाओ गुरुदेव ! छिपे हो किस अनन्त के कौने में ॥

'अंजलि'

(कुंवर केशरीचन्द सेठिया, बीकानेर)

मोक्षमार्ग के पथिक पूज्यवर,
हम कृतकृत्य आज सारे ।
तपोधनी, ऋषिवर्य ! तुम्हारी
महिमा से उज्ज्वल सारे ।
आज तुम्हारे त्याग, शील का
यश छाया भूमण्डल मे ।
हिंसा का जब प्रलय नृत्य
हो रहा व्योम मे, जल थल मे ।
आज विश्व का उर आहत है
पीडित है वसुधा सारी ।
हम सब का सद प्राप्त अहिंसा
का है तुम सा व्रतधारी ।
हम सब के पथ मे प्रभुवर तुम
ज्ञान प्रदीप सजग करते ।
हम सबका धर्मामृत देकर
तुम सत्पथ पर ले बढ़ते ।
कैसे आज तुम्हारे गुणगण
कहूँ प्रभो ! मैं तुम्हीं कहो ।
जिसकी करुणा से भीगा है
रोम रोम यह आज अहो ।
अगर वह तुमने समाज का

हित ही रक्खा है आगे।
और इसी सब को है प्रस्तुत
किये एकता के धागे।
दोषारोप आप पर होगा
तो ये पुण्यचरित ! मेरा।
जो समदृष्टि रहा जीवन में,
जिसने सत्रों इस हेरा।
इसे आपका स्वार्थ कहूं
या कहूँ परार्थ बताओ तो।
विश्वदृष्टि लेकर तुम आये
मुझको भी अपनाओ तो।
जीवन बन यम की वेदी
अहंकार कुछ हो न जहाँ।
सदा आपके चरणचिह्न का
रहे ध्यान ही मुझे यहाँ।
यही करूँ जो रचा तुम्हें प्रभु
इस देवोपम जीवन में।
देश, जाति क्या सब जगती को
मानूँ अपना सा मन में।
कभी न मुझसे कष्ट मिले
हो ऐसा सदा भाव मेरा।
इष्ट हमारा बने वही जो
मन्त्र आपने है प्रेरा।

"श्रद्धांजलि समर्पण"

(लेखक—प्रिंसिपल प० श्री त्रिलोकनाथ मिश्र, सोहना दरभंगा)

पूज्य जवाहरलाल सूर्य को किस बादल ने छिपा लिया ?।
किसने हा !! सारी दुनियाँ को अन्धकार से लिपा दिया ?।
अन्न वस्त्र लुट कर भारत के, प्राण जवाहर को लूटा।
इस कसाई सवत ने हाहा !! धर्म मर्म को भी कूटा॥
जिनके आगे हीरा नीलम, पुखराज न कुछ दम रखते थे।
वे रत्न जवाहर कहाँ गये, जो दिन दिन और चमकते थे ?॥
जिनके वचनामृत को पीकर, मुर्दे भी जिन्दा होते थे।
दुनियाँ की झंझट को निपटा आनन्द सेज पर सोते थे॥
जिनके उपदेशों का प्रभाव, राजाओं पर भी रहता था।
जिनकी अविरल वाणी धारा से अमृत स्रोत नित बहता था॥
संसार पूज्य मालवी और गांधी से भी जो पूजित थे।
जिनके शब्दों से दिगन्त, जल थल वन उपवन गूंजित थे॥
जो सदाचार के उदयाचल, दुर्व्यसन तिमिर के भास्कर थे।
सन्तापहरण मृदुवचन, शान्ति में जो अकलङ्क सुधाकर थे।

जो कटुवादि कुहेस दिवस थे, धर्मवीरता मे बेजोड़ ॥
पूज्यवाद वे आज 'जवाहर', कहाँ गये भक्तो का छोड ? ॥
जिन प्रवचन का कौन करेगा, अब वैसा सुन्दर उपदेश दे।
कौन सुनावेगा भविजन को ईश्वर का सच्चा सन्देश ॥
कर के सारे भारत ही को शून्य न केवल राजस्थान।
यद्यपि वे भौतिक शरीर को छोड सिधारे दिव्यस्थान ॥
तो भी पूज्य जवाहर के विरही भक्तों की यही पुकार।
एक बार वह रूप दिखाकर भक्तो का कर दें उपकार ॥
तप्त हृदय की ज्वाला का नहिं और दीखता है प्रतिकार।
निज भक्तो के लिए सदा प्रभु का रहता है सब अधिकार ॥
भक्ति रसामृत को जिस बादल ने बरसाया आठों याम।
इस नभ मण्डल बिच फिर भी वह आ जावे यह है मन काम ॥

पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराजनी स्तुति

(रचयिता—गोंडल सम्प्रदायना वयोवृद्ध श्री अम्बाजी महाराज)

राग—नदजीना लाल रमवा आवो ने रे

वर्त्यो छे जय जयकर, पोरमां पूज्यजी पधार्या
जगत जीवो तणे तार्यां, पोरमा पूज्यजी पधार्यां टेक

पूज्य जवाहरलालजी जेवा
मान श्रवेरात नाम्या छे देवा,
मोक्षना मुखज लेवा पोरमा० ॥१॥

देशी विदेशी न निहाल करीने,
पोर बदरमा पाव धरी न
प्रतिबोधे चित्त हरी न पोरमां० ॥२॥

शिष्य परिवार शोभे छे भारी
कुमति कुबुद्धि ने दूर निवारी
पाँचे समिति ने धारी पोरमां० ॥३॥

वैरागीनु मन ज्ञानमा वसीयु
अजर अमर पद सेवानु रसीयु
अज्ञान तिमिर खसीयु पोरमां० ॥४॥

अमूल्य तत्व तणी देशना दीधी
सुणता थाय खरे आत्मनी सिद्धि
ज्ञान प्रसादी पाय पीधी पोरमा० ॥५॥

पूज्यश्री तमे छो जग उपकारी
घणु जीवो मेजो घणाने तारी
आवांजी कहे हृदधारी पोरमा० ॥६॥

जनाचाय पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराजना जीवन-चरित्र अङ्क
(लिखक—श्री टी० जी० शाह)

जना तणु साधु ए ना जवाहर छ रे (राग)
देश देश मा भ्रमण जेणें कयु रे
पेंभलाथवान सुत्रो तणो सार (१)
महा कष्ट थठी सिद्धान्त पालन कयु रे
दुःख सहयु जेण देहे पारावार (२)
अहिंसा सत्य तणो जेणें प्रचार कर्यो रे
त्या तणा ज छे अखूट भडार (३)
घाटकापर 'जीवदया मडली' रे,
थली गोशाला ए एमनो प्रताप (४)
जनी वाणी केसरी सिंह समी र
उपदेशे वली जे छे अजोड (५)
जेनु जीवन चरित्र आदर्श छे रे
जेनो वाणी साथे कामनो सुमेल (६)
पारस मणि ज्यो लोहने कचन करे छे रे
तेम उजाल्या अनेकना चरित्र (७)
जैनाकाशे ए तो शशी तणी ज्योत छे र
जेनो अमी भर्यो शीतल प्रभाव (८)

पूज्यश्रीनो वाणी-प्रभाव
(लिखक—अमीलाल जीवन भाइ ठांको)

राग—विकसावे नवजीवन-कुसुम आ विद्यानी वाडी।
पलटाव अम पथ जीवननो पूज्य तणी वाणी—टेक
शूरवीरता नो नाद जगवती, भव भवनी भ्रमणाओ हरती।
निमल मन करती पूज्य तणी वाणी पलटावे० ॥
पवित्र जीवन नो पाठ पठवती उर उरना अधारा हरती।
पतित न पावन करती, पूज्य तणी वाणी—पलटावे ॥

साखी

अणमूल अवसर आवीयो जामनगर न द्वार।
पूज्य पुनीत विराजता त्यो लाखोणो ल्हाव।
उन्नत दशा जो आणें ब्रह्मचय तणा थी वावो।
प्रेम सहित पधावा श्रीपूज्य तणी वाणी—पलटाव० ॥

द्वव चारणी

परव महाणा परम मानना
पीओ पीओ ज्ञान तणी रस-लहाण।
पुण्य योगे पूज्य पधार्या,
वही रही छे वचनामृत धार।
वाणी जेनी मधुर माठडी,

भर्यो ज्या न्याय तणा भंडार ।
पात्र बनी ने पीओ प्रेम थी,
सफल करो सहुजन जनमार ।
कल्प वृक्ष फल्यो काठियावाडमां,
पीरसता परब्रह्मतणा पकवान ।
उर्मि उभरायें अम उरमा
खूल्यां अम अन्तरना द्वार ।
शान्त स्वभावे गुरु शोभता
गंभीर गुणीअल छे अणगार ।
मुखडु जाणे पूर्ण चन्द्रमा
जीवन जेहनु झलकतु उजमाल ।
शिष्य सुगुणी श्रीमल्ल नाम छे,
विनयवंत विरत ने विद्वान ।
वन्दन स्वीकार वीर-बालना,
वसवु सदगुरु चरणे वास ।

हृदयोद्गार

(लेखक—श्री हरिलाल के० पारेख, राजकोट)

पूनित पगन पावन करी सुन्दर धरा सौराष्ट्रनी
जय घोष मद्यमतणा कर्यो दशे दिशा गु जी रही
यशस्वी आ भूमी अहा ! ज्या वीर नर पाक्या घणा
अया पाकता सीह केसरी गीरीवर शीखर कंदरा ।
वाय सुसवाट वायरा पवित्र रजकण जेमा भर्या
हीमगीरी थी पुनीत जे गिरनार शेत्रु जय अहा ।
रमणी ने कचन तणा मोह स्पर्शी ना शक्या
महा प्रतापी जे महर्षी नमिनाथ ज्या प्रवर्ज्या ।
हाहाकार सुणी त्रस जीवोनो मडपे थी पाछा फर्या
राजेमती महासुन्दरी पूनीत पगले परवया
जगावी जोत आतम तणी अज्ञान तिमिर छायो घणा ।
चिर स्मृतिमा ज रहे व्याख्याननां प्रतिध्वनीओ
रजन कर्या कर्या मुग्ध जेणे दीन जन अजनना
जीनोए बोध्यु तत्त्व जे समजाव्यु ते विशेषता
विशेष थी समजाव्यु जेणे प्रमाण दई नय सप्तना ।
भय टले भव अनत केरा जो थाय आतम सरधना
वसमी छे आगल वाट हा जो थाय न आतम सरधना
भनत पुदगल परावर्तन लख चारासी फरसना ।

काठियावाड विहार वर्णन

(श्रीवल्लभजी रतनशी वीराणी)

लावणी

मरुधर भूमि संत शिरोमणि जब सोरठ में आय थक

राजकोट शहर म चौमासा ज्ञान की गोवन गडगड,
देश विदेशी मानव आवे दर्शन का वहां हेना पड ॥
वद बीज वीती कीर्ति जीती जे तारणे प्रभु पाम धर
गाडल मे गान्धीघर आकर आप तणा सत्कार करे।
धाराजी जूनाणो जाणा ज्या गिरवर गिरनार खरे।
जन जैनतर की नहिं गणना सब सुधारा शीघ्र करे ॥
धडोंआ बीलखा मेंदरगढे थई वेरावल मगरोल खरे
माधवपुर म पहायन जाकर श्रीजी हजूर मुजरो ज करे।
राणा साहब भाविक भारी दीवान दरसन आवी करे
चटकी लग गई सार शहर मे चौमास लाएँ कस* लहे ॥
एक विनती मरी गुरुजी गौवा इधर बहुर खडे,
आप बिना अवतारी योगी कौन उन्हा को व्हार करे।

जामनगर मे—पूज्यश्री

(रचयिता—राजकवि—श्रीकेशवलाल श्यामजी जामनगर)

मारवाडते दूर अति देश काठियावार।
होत वहा के साधु को यातें विरल विहार ॥१॥
ताम संत तपोनिधि वयोवृद्ध तन स्थूल।
पूज्य जवाहिरलालजी औसर लखि अनुकूल ॥२॥
गुर्जर जैन समाज को आग्रह जानि अथोर।
कर निश्चय द्वय वर्ष यो विचरे मुनि इस ओर ॥३॥
राजकोट म आरहे प्रथमहि चातुर्मास।
जामनगर आये बहुरि कछु दिन करन निवास ॥४॥
थोरे दिन यह ठहरकर गयेउ हापा गाम।
चरण व्याधित पुनि यहां लियो पूज्य विश्राम ॥५॥

मनोहर

चातुर्मास दूजा मोरवी मे आई करिवे का।
निश्चय था इतन म भई और घटना ॥
केशव निपट वात व्याधि पूज्य चरन मं।
भया मन सोचा अब कैसे राह कटना ॥
डाक्टर मेहता को बुलायके सुनाइ वात।
डाक्टर ने कहा ठहरो ! यहां म न हटना ॥
हम श्रम ले करेंगे सूय किरनोपचार।
दव क अधीन व्याधि मिटना न मिटना ॥६॥
पूज्य ने मजूर किया केना प्रानजीवन का।
डोली मह बैठ आने लगे होस्पिटल में ॥
केशव दुमास म विनष्ट भया वातरोग।
चलन लगे पत्ति बडा रक्त यल मे ॥

*मोरवी म निश्चित हुए पूज्यश्री के चातुर्मास को वदलवाकर पोरबन्दर मे कराने की चर्चा जोरों स छिड़ी थी और पोरबन्दर नरेश ने इसके लिए भारी प्रयत्न किया था।

सेवक को ज्ञान रस मिल्यो यश डाक्टर को।
द्विगुन निवास जामनग्र अन्न जल मे ॥
विमल चरित्र श्री जवाहिरलाल जैसे।
जैनाचार्य आजकल हागे कोउ स्थल म ॥७॥

मनोहर

पूज्यपाद जैनाचार्य जवाहिरलालजी को।
चातुर्मास हेतु जामनगर म निवास भौ ॥
केशव उनीसशत आनु के सवत्सर म।
जैन जनता के हिय परम हुलास भौ ॥
अगनित मानव के सन्निध उपाश्रय म।
गुरुमुख व्योम ज्ञान भानु को प्रकाश भौ ॥
दुर्विचार दुराचार अन्धकार को निवार।
सद्विचार सदाचार आदि को विकास भौ ॥८॥
मान्यवर महाराज जवाहिरलालजी की।
प्रवचन शली अति आकर्षक जानि के ॥
केशव सो प्रौढ गिरा आस्वादन करिबे को।
आन लग जैनेतर श्रद्धा उर आनि के ॥
प्रतिदिन चूनि चूनि नये नये बोध पुष्प।
माला बनवाइ अनुपम गन ठानिके ॥
अबला करत श्रोता मनन उसी को यहा।
सुमरत हैं वक्न के सुभाव को बखानिके ॥९॥
कोउ पूछे महाराज जवाहिरलाल जी को।
कैसा है प्रभाव श्वेताम्बर के समाज म ॥
केशव तो कहि दीजें बिन ही सकोच बुध।
जैसा है प्रभाव काष्ठ तुम्बी औ जहाज म ॥
दुस्तर अथाह भवसिंधु को तरत आप।
तारत अनेक जीव सिद्ध निज साज मे ॥
धीरता है वाज मे ज्यो शौर्य मृगराज मे त्यो
मृदुता भरी है इस सत शिरताज मे ॥१०॥

परिशिष्ट

दूसरी बात यह है—दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र के पांचवे अध्ययन में चित्तसमाधि के दस स्थानक कहे गये हैं। उनमे तीसरा स्थान यथातथ्य स्वप्नदर्शन की प्राप्ति है। हमारी और प्रतिवादी दोनों की यह मान्यता है कि जिन कार्यों को भगवान् ने अच्छा कहा है अर्थात् जिनके लिए भगवान् की आज्ञा है उन में पाप नहीं है। चित्त समाधि के दसों स्थान भगवान् की आज्ञा मे हैं इसलिए पाप नहीं हैं। तीसरी चित्तसमाधि की टीका मे यथातथ्य स्वप्नो का उदाहरण देते हुए भगवान् के स्वप्नों का उदाहरण दिया है। इसलिए भगवान् के स्वप्न आज्ञा में हैं। वे प्रमाद या पाप रूप नहीं हैं। समवायांग सूत्र के दशवें समवाय मे भी भगवान् के स्वप्नो का यथार्थ होना तथा उनका चित्तसमाधि में गिना जाना बताया है।

तीसरा दिन—श्रीफौजमलजी स्वामी

वादी का कहना है कि 'आउल माउलाए' पाठ जाग्रदवस्था का नहीं है और स्वप्नावस्था का है। इसे वे दीपिका आदि का प्रमाण देकर सिद्ध करने को तैयार हैं। इसके लिए हमारा यही कहना है कि उस पाठ को देखकर निर्णय कर लेना चाहिए। हमारा कहना तो यही है कि 'आउल माउलाए' जाग्रदवस्था के लिए है और 'सुमिणवित्तियाए' यह स्वप्नावस्था के लिए। सूत्र में दोनों अवस्थाओं के लिए प्रतिक्रमण बताया गया है, क्योंकि दोनो मे चित्त का विक्षेप समान रूप से होता है। यदि कोई स्वप्न मे समुद्र को भुजाओं से तरता है अथवा शत्रु को जीतता है तो उसे चित्तविक्षेप से होने वाली क्रिया तो अवश्य लगेगी। चाहे जगने पर वे स्वप्न सत्य ही सिद्ध हो जावें। भगवान् ने यथार्थ स्वप्न देखे थे, यह बात मैं मानता हूँ। किन्तु स्वप्नकाल मे तो चित्त का विक्षेप ही था। विक्षेप मोहनीय कर्म के उदय से होता है। इससे स्वप्न पाप सिद्ध हो जाते हैं।

चौथा दिन मुनि श्रीजवाहरलालजी म०

'आउलमाउलाए, सुमिणवित्तियाए' इस पाठ के लिए अब तक की आवश्यकता नहीं है। मध्यस्थ महाशयों को चाहिए कि विद्वानों से पूछ कर अच्छी तरह निर्णय कर लेवें।

यह प्रसन्नता की बात है कि प्रतिवादी ने भगवान् के स्वप्नो को सत्य स्वीकार कर लिया है। किन्तु ऐसा करने में वे अपने पूर्वाचार्य जीतमल जी का विरोध कर बैठे हैं। क्योंकि उन्होंने 'भ्रम विध्वंसन' में लिखा है— 'वलि भगवंत छद्मस्थपने दश स्वप्ना दीठा ते पण विपरीत छ।"

आवश्यक सूत्र में जहाँ स्वप्नों का प्रतिक्रमण बताया गया है वह मिथ्या जजाल आदि विपरीत स्वप्नों के लिए है। यथार्थ स्वप्नो के लिए नहीं। यह बात स्वयं भ्रमविध्वंसन से सिद्ध होती है। उसमें लिखा है—

इहाँ गवडो स्वप्नो देखे यथा तथ्य साचो देखे कह्यो। साधु तो आल जजाल आदि देखे तो झूँठा पिण आवे छै। ते आवश्यक अध्ययन चौथे कह्यो—सोवण वित्तियाए। कहतां स्वप्ना में जजाल आदि देखे करी तथा आगल कह्यो 'पाणभोयणविपरियासयाए' कहता स्वप्ना मे पाणी नो पीवो, भोजन करवो ते अतिचार नो मिच्छामि दुक्कड। इहां स्वप्न जजालादिक झूठा विप रीत स्वप्ना साधुने आवता कह्यो छे।

ठाणांग सूत्र में जहाँ प्रतिक्रमण की बात आई है वहाँ टीका में आवश्यक सूत्र का उद्धरण दिया है और आवश्यक सूत्र में आए हुए पाठ की व्याख्या जीतमल जी ने ऊपर लिखे अनुसार की है। इससे यह स्पष्ट है। कि जीतमल जी भी यह मानते हैं कि सत्य स्वप्न का प्रतिक्रमण नहीं होता। ऐसी दशा मे फौजमल जी सत्य स्वप्न के लिए भी प्रतिक्रमण बताकर अपने पूर्वाचार्य और सिद्धान्त ग्रन्थ का विरोध कर रहे हैं।

यह नियम नहीं है कि प्रतिक्रमण उसी बात का होता है जो मोहकर्म के उदय से हो। बृहत्कल्प सूत्र में प्रथम और चरम तीर्थङ्करों के साधुओं के लिए दोनो समय प्रतिदिन प्रतिक्रमण

करना आवश्यक बताया गया है। बाकी बाईस तीर्थंकरों के साधुओं के लिए दोष लगाने पर प्रतिक्रमण का विधान है। ऐसी दशा मे भगवान् महावीर के शासन मे प्रतिक्रमण के लिए दोष का होना आवश्यक नहीं है।

हमने कहा था कि तीसरी चित्तसमाधि होने के कारण यथार्थ स्वप्न भगवान् की आज्ञा में हैं इसलिए पाप नहीं हैं। प्रतिवादी ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। भ्रमविध्वंसन मे लिखा है—

"तो इहां साचो स्वप्नो देखे इम क्यों कह्यो, एनो न्याय—ये सर्व संवुडा साधु आश्री न थी। विशिष्ट अत्यन्त निर्मल चारित्र नो धणी संवुडो स्वप्नो देखे ते आश्री कह्यो छे।" इति।

भगवती सूत्र १६ शतक ६ उद्देश्य के टब्बे म भी यही बात लिखी है। टब्बाकार और जीतमल जी दोनो इस बात को मानते हैं कि यथार्थ स्वप्न अत्यन्त निर्मल चारित्र वाले को ही आते हैं। फिर यथार्थ स्वप्नों के कारण भगवान् को प्रमाद वाला बताना कितनी बुरी बात है।

अचारांग सूत्र नवमाध्ययन तीसरे उद्देश की ८ वीं गाथा मे कहा है—छद्मस्थ अवस्था में भगवान् ने पाप नही किया, नही कराया, करते को भला नहीं जाना।

इसी उद्देश की पन्द्रहवी गाथा मे कहा है कि भगवान् ने छद्मस्थापने मे एक बार भी प्रमाद कषाय आदि पाप नहीं किया।

इन सब प्रमाणों के होते हुए भगवान् को पाप लगने की बात कहना शास्त्रविरुद्ध तथा स्वसिद्धान्त विरुद्ध है।

"स्वप्न मे मन्त्र जीतना समुद्र पार करना आदि चित्त का विक्षेप है, इसलिए पाप है।" यह कह कर भगवान् को पाप बताना भी ठीक नहीं है। हम यहाँ शास्त्रों का अर्थ और उससे सिद्ध होने वाली बात का निर्णय करने के लिए बैठे हैं। भगवान् के स्वप्न पाप नहीं है इसके लिए अनेक शास्त्रीय प्रमाण दिए जा चुके हैं। उनका विरोध किसी शास्त्र के प्रमाण द्वारा ही होना चाहिए। लौकिक स्वप्नो के साथ भगवान् के स्वप्नो की तुलना करना उचित नही है। स्वप्नों का कारण चित्त विक्षेप ही नही है। सूत्र में स्वप्नो के बहुत से कारण बताए गए हैं। सब स्वप्नो को बराबर करना ठीक नहीं है। लोकोत्तर बातों के लिए हम आगम से निर्णय करना चाहिए। अपनी अटकल लगाने से मिथ्यात्व का भागी होना पडता है।

पाँचवाँ दिन—श्री फौजमल जी

१ वादी ने अपने कथन में "आचल माउनाए" पाठ का अर्थ लिखा है। यह हमारा प्रश्न नहीं है। हमारा प्रश्न है कि यह पाठ जाग्रदवस्था का है या स्वप्नावस्था का? इसी प्रश्न का उत्तर देना चाहिए।

२ हमारा दूसरा प्रश्न है—साधु या गृहस्थ को यथातथ्य स्वप्न आते हैं या नही? यदि आते हैं तो वे चित्तसमाधि मे गिने जायेंगे या नहीं? यदि चित्तसमाधि म हैं तो उन स्वप्नों की चित्तसमाधि में और इन स्वप्नों की चित्तसमाधि में क्यों फरक है?

३ आचरांग सूत्र १ श्रुतस्कन्ध ६ अध्ययन, २ उद्देश की दूसरी गाथा में दस स्वप्नो को निद्राप्रमाद कहा है। निद्राप्रमाद मोहनीय कर्म के उदय से होता है, इसलिए १० स्वप्न पाप हैं। इस प्रमाण के होते हुए वादी का यह कहना है कि भगवान् ने छद्मस्थ अवस्था में एक बार भी प्रमाद का सेवन नहीं किया, शास्त्रसंगत नहीं है।

४ आचारांग सूत्र की टीका दीपिका व टब्बा मे यह लिखा है कि भगवान् के १२ वर्ष व १३ पक्ष के छद्मस्थपने म एकबार प्रमाद का सेवन किया।

५ ठाणांग सूत्र के १० वें ठाणें की दीपिका मे भी निद्रा प्रमाद होना लिखा है।

६ प्रतिवादी का यह कहना भी शास्त्रविरुद्ध है कि प्रतिक्रमण मोहनीय कर्म के उदय

से होने वाले किसी कारण के बिना भी शास्त्रविहित है। क्योंकि प्रतिक्रमण अतिचारों का होता है और अतिचार मोहनीय कर्म का उदय रूप है।

७ प्रतिवादी का कहना है कि भ्रमविध्वंसन में शास्त्रविरुद्ध बातें हैं और भगवान् महावीर स्वामी पर विपरीत स्वप्न देखने का कलक लगाया है। हमारे आचार्य जीतमल जी महाराज ने कोई बात शास्त्र विरुद्ध नहीं लिखी। भगवान् महावीर के वचनों के विपरीत प्ररूपणा भी नहीं की। इसके विपरीत प्रतिवादी महोदय ने व्याख्या में आठ निह्नवों की प्ररूपणा की है, जब कि ठाणांग सूत्र में सात ही निह्नव बताए गए हैं।

हमारे स्वामी जी पर मिथ्या आरोप तथा शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा करने के लिए प्रतिवादी को प्रायश्चित लेना चाहिए। हमने शास्त्र के प्रमाण से अपनी बात को सिद्ध कर दिया।

छठा दिन—मुनि श्रीजवाहरलालजी

१ प्रतिवादी से हमारा प्रश्न था कि वे यथार्थ स्वप्न को मोहनीय कर्म के उदय से होना शास्त्र द्वारा सिद्ध करें। उन्होंने निद्राप्रमाद को लेकर मोहनीय कर्म का होना बताया है। किन्तु निद्राप्रमाद और स्वप्नदर्शन भिन्न भिन्न हैं। स्वप्नदर्शन शास्त्रों में क्षायोपशमिक भाव बताया गया है। ठाणांग सूत्र के आठवें ठाणे का पाठ है—

सुमिणदसणे

टब्बाकार ने उसकी व्याख्या नीचे लिखे अनुसार की है—

'स्वप्न दर्शन तो अचक्षु दर्शन मां ही ज आवे, पिण सूतानी अवस्था माटे जूदी विवक्षा इति।"

उपरोक्त उद्धरण में स्वप्न दर्शन को अचक्षु दर्शन का भेद कहा है। टीकाकार भी इसी प्रकार कहते हैं —

स्वप्नदर्शनस्याचक्षुर्दर्शनान्तर्भावेऽपि सुप्तावस्थोपाधितो भेदो विवक्षित इति।"

इन प्रमाणों से स्वप्न दर्शन अचक्षु दर्शन का भेद है, यह सिद्ध हो जाता है। अनुयोगद्वार सूत्र में अचक्षु दर्शन को क्षायोपशमिक भाव कहा है—

'खउवसमिया अचक्खुदसणे।'

तेरहपंथ के प्रणेता भीखम जी ने अपने बनाए हुए तेरह द्वारों में यही बात लिखी है—

"दर्शनावरणीय कर्म रो क्षयोपशम निपन्न होवे तो ५ इन्द्रिय, ३ दर्शन एव ८।'

नन्दी सूत्र में स्वप्नज्ञान को इन्द्रिय मतिज्ञान का भेद बताया है—,

"एव स्वप्नमधिकृत्य नोइन्द्रियस्यार्थावग्रहादयः प्रतिपादिता।"

इन सब प्रमाणों से सिद्ध है कि स्वप्न का दर्शन और स्वप्न का ज्ञान क्षायोपशमिक भाव है। क्योंकि स्वप्नदर्शन को अचक्षु दर्शन का भेद बताया गया है और अचक्षु दर्शन क्षायोपशमिक भावों में बताया गया है। इससे स्वप्नदर्शन का भी क्षायोपशमिक भावों में होना सिद्ध हो जाता है। निद्राप्रमाद औदयिक भाव है स्वप्नदर्शन नहीं है।

"आउल माउलाए' पाठ स्वप्न कोटि में है। इसे कोई भी देख सकता है।

प्रतिवादी का छद्मस्थ या साधु को यथार्थ स्वप्न आते हैं या नहीं इत्यादि पूछना शास्त्रार्थ के नियम विरुद्ध है। क्योंकि निश्चयानुसार पहले हमारे प्रश्न का उत्तर हो जाना चाहिए, फिर प्रतिवादी नया प्रश्न खड़ा कर सकते हैं। बीच में नई नई बातें खड़ी करना ठीक नहीं है। भगवान ने छद्मस्थपने में प्रमादकषायादि पाप का सेवन नहीं किया उसके लिए आचारांग सूत्र का निम्नलिखित पाठ टब्बार्थ और टीका के साथ दिया जाता है—

मूल पाठ—छउमत्थो वि परक्कममाणो ण पमायं सयं विकुव्वित्था।

टब्बा—श्री महावीर छदमस्थ छतो पिण विविध अनेक प्रकार सयम अनुष्ठान ने विषे प्रारम्भ करतो एक वार प्रमाद कपायादिक न करे, स्वामी इण पर वरत्या इति ।

टीका—न प्रमादकपायादिक सकृदपि कृतवानिति ।

इस पाठ को देख लेन में बाद सन्देह का अवसर नही रहता। यदि फौजमल जी इसे भी मानन को तैयार न हो तो हमारे पास कोई उपाय नहीं है। हमारा काय तो सत्य वस्तु को प्रकट कर देना है।

प्रतिवादी फौजमल जी का यह कहना भी ठीक है कि भगवान् के १० स्वप्न निद्रा प्रमाद म हैं और निद्रा प्रमाद मोहनीय कर्म का उदय है। इसके लिए उन्होंने आचाराग तथा ठाणांग की दीपिका आदि के जो प्रमाण दिए हैं, उनमे कही पर भी उपरोक्त बात नही है।

शास्त्रो मे निद्रा दो प्रकार की बताई गई है—द्रव्यनिद्रा और भावनिद्रा। नीद आना या स्वप्न आदि देखना द्रव्यनिद्रा है और मिथ्यात्व, अविरति कपाय आदि भावनिद्रा हैं। भावनिद्रा मोहनीय कम के उदय स असयती जीव का होती है, वही पाप है। द्रव्यनिद्रा दर्शनावरणीय के उदय स होती है, उसमें पाप नही है।

भगवान ने एक बार द्रव्यनिद्रा का सेवन किया था भावनिद्रा का नही। इन सब बातो के लिए हम शास्त्र और प्रतिवादी के सिद्धान्तग्रन्थ 'भ्रमविध्वसन' का प्रमाण देने का तयार हैं—

भगवती सूत्र के १६ शतक ६ उदेश मे पाठ है—

सुत्ते ण भन्ते सुविण पासन्ति जागरे सुविण, पासति, सुत्तजागरे सुविणं पासंति ? गोयमा ! नो सुत्ते सुमिणं पासइ, नो जागरे सुविण पासइ, सुत्तजागरे सुविण पासइ।"

इसके अथ म बताया गया है कि द्रव्यनिद्रा से सोता-जागता स्वप्न देखता है। टीका मे भी यही बात है।

नाति सुप्तो नाति जागर इत्यर्थः । इह सुप्तो जागरश्च द्रव्यभावाभ्या स्यात्तत्र द्रव्यता निद्रापेक्षया भावतश्चाविरत्यपेक्षया। तत्र स्वप्नव्यतिकरो द्रव्यनिद्रापेक्ष उक्त ।

इससे स्वप्न का आना द्रव्यनिद्रा म सिद्ध होता है। 'भ्रमविध्वसन' में भी यही लिखा है—

अथ इहां कह्यो सूतो स्वप्नो न देखै, जागतो स्वप्नो न देखै सूतो जागतो स्वप्नो देखै, तो कह्यो ते सूता नाम निद्रा में, जागरो नाम जागता मे छे। ए तो सूतो निद्रा मे कह्यो ते द्रव्य निद्रा नी अपेक्षाय सूतो कह्यो, पिण भावनिद्रानी अपेक्षा य सूतो न कह्यो। तेहनी टीका मे पिण इम कह्यो इहां पिण द्रव्यनिद्रा भावनिद्रा कही छे तो भावनिद्रा थी पाप लागे द्रव्यनिद्रा थी पाप नहीं लागे। अनेक ठामे सुवणो त निद्रा नो नाम कह्यो छे त माटे जेण थी सूता पाह न लागे सुवण री आशा छे ते माटे इति। (जुना भ्रमविध्वसन पाना १५३)

उपरोक्त पाठ से स्वप्न का द्रव्यनिद्रा होना तथा उसम पाप नहीं लगना स्पष्ट है। फौजमल जी इसमें मोहनीय कर्म का उदय तथा पाप बता कर शास्त्र तथा अपने गुरु दोनों के विरुद्ध बोल रहे हैं।

दीपिका आदि मे जहाँ भगवान् के स्वप्नों के विपय म निद्राप्रमाद शब्द आया है वह द्रव्यनिद्रा के लिए ही है।

दीपिका तथा टीका म आया है—

'निद्रामप्यसौ अपरप्रमाद रहितो न प्रकामत सेवते।' अर्थात दूसरे प्रमादा स रहित भगवान निद्रा को भी खूब नहीं लेते थे। इससे यह सिद्ध होता है कि निद्रा के सिवाय भगवान् ने और किसी प्रमाद का सेवन नही किया। निद्रा भी यहां द्रव्यनिद्रा है। आचाराग सूत्र के तीसरे अध्ययन प्रथम उद्देश के पहले सूत्र मे कहा है—

मू 'सुत्ता अमुणी मुणिणो सयय जागरति

दीपिका—इह सुप्ता द्वेधा द्रव्यतो भावतश्च । ततो निद्राप्रमादापन्ना द्रव्यसुप्ता । भावसुप्तास्तु मिथ्यात्वाज्ञानमयमहानिद्राव्यामोहिता, ततो येऽमुनयो मिथ्यादृष्टय सतत भावसुप्ता सद्विज्ञानानुष्ठानरहितत्वात् निद्रयानुभजनीया । मुनयस्तु सद्बोधोपेता मोक्षमार्गे चलन्तस्ते सतत मनवरत जाग्रति हिताहितप्राप्तिपरिहार कुवते अतो द्रव्यनिद्रोपता अपि क्वचिद्‌द्वितीय पौरुष्यां सतत जागरुका एव । तदेव दर्शनावरणीयकर्मविपाकोदयेन क्वचित् स्वपन्तपि य सविग्नो यतनावाश्च स दर्शनमोहनीयमहानिद्रापगमात् जाग्रदवस्थ एवेति ।

भावार्थ—सुप्त दो प्रकार के होते हैं—द्रव्यसुप्त और भावसुप्त । निद्राप्रमाद वाला द्रव्य सुप्त होता है । जो व्यक्ति मिथ्यात्व और अज्ञान रूप महानिद्रा में सोया हुआ है वह भावसुप्त है । असयती मिथ्यादृष्टि निरन्तर भावसुप्त हैं । सम्यक ज्ञान और तदनुकूल अनुष्ठान न होने से वे निद्रा में पड़े हुए हैं । सम्यग ज्ञान वाले मुनि जो मोक्षमार्ग में चलते हैं वे तो सदा जाग्रत हैं । वे हित की प्राप्ति तथा अहित का परिहार करते हैं । इसलिए दूसरी पौरुषी आदि में द्रव्यनिद्रा लेते हुए भी वे सदा जागते हैं । इस प्रकार दर्शनावरणीय कर्म के विपाक का उदय होने से कहीं पर सोता हुआ भी जो सवेग तथा यतना वाला है वह दर्शनमोहनीय रूप महानिद्रा हट जाने से जाग्रत ही है ।

उपरोक्त टीका में भावनिद्रा वाले को अमुनि तथा मिथ्यादृष्टि कहा है । भगवान् तो सर्वश्रेष्ठ मुनि तथा सम्यग्दृष्टि थे । उनके लिए उपरोक्त विशेषण नहीं हो सकते । इसलिए उनमें भाव निद्रा का होना भी सिद्ध नहीं होता ।

भगवतीसूत्र ६ शतक ६ उद्देश में भावनिद्रा वाले को अव्रती कहा है । इसलिए भगवान को भावनिद्रा न मानकर दर्शनावरणीय कर्म के उदय से होने वाली द्रव्यनिद्रा ही माननी चाहिए । द्रव्यनिद्रा म पाप नही है, यह बात भ्रमविध्वंसनकार भी मानते हैं । इसके लिए पाठ ऊपर लिखा जा चुका है । एक और जगह 'भ्रमविध्वंसन' म लिखा है—

"एक मोहनीय रा उदय विना और कर्मा रा उदय थी पाप न लागे ।

द्रव्यनिद्रा दर्शनावरणीय का उदय है मोहनीय का नहीं । यह सिद्ध हो चुका है । इस लिए भगवान् को पाप का लगना बताना शास्त्रविरुद्ध तथा भ्रमविध्वंसन विरुद्ध है ।

निद्राप्रमाद को मोहनीय कर्म का उदय मूल या दीपिका आदि किसी में नहीं बताया गया है । इसके लिए फौजमल जी का कथन कपोलकल्पित है । द्रव्यनिद्रा के लिए निद्राप्रमाद शब्द हम आचारांग की टीका तथा दीपिका में बता चुके हैं ।

फौजमलजी का यह कथन भी ठीक नहीं है कि निद्रा और निद्राप्रमाद दानों भिन्न भिन्न हैं । उत्तराध्ययन सूत्र के ११ वें अध्ययन की तीसरी गाथा में टीकाकार लिखते हैं—

'प्रमादेन मदविषयकषायनिद्राविकथारूपेण ।"

इसमे निद्रा को ही निद्राप्रमाद बताया गया है ।

आवश्यक सूत्र में अज्ञान का प्रतिक्रमण बताया गया है । उसका पाठ है—

'अन्नाण परियाणामि

अनुयोगद्वार सूत्र में तीन अज्ञानो को क्षायोपशमिक भाव कहा है । ऐसी दशा में मोहनीय के उदय का ही प्रतिक्रमण बताना शास्त्रविरुद्ध है । श्रीबृहत्कल्पसूत्र के चौथे उद्देश्य का प्रमाण भी पहले दिया जा चुका है ।

फौजमल जी का यह कहना ठीक नहीं है कि जीतमलजी ने कहीं पर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा नहीं की और न भगवान की अवज्ञा की है । भगवान् ने सत्य स्वप्न देखे थे ऐसा शास्त्रों में जगह-जगह आया है । 'भ्रमविध्वंसन' म उन्हें विपरीत लिखा है यह शास्त्र और भगवान् दोनों का अनादर है ।

फौजमलजी ने हमारे लिए कहा है—शास्त्र में सात निह्नव हैं और जवाहरलालजी ने आठ निह्नव बताकर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा की है। उनका यह कथन ठीक नहीं है।

उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन की टीका का लेख है—

"अथ भूरिविसवादी प्रसगात् प्रोच्यतेऽष्टम श्री वीरमुक्तेर्जातोऽब्दशतै षडभिनवोत्तर।"

अर्थात वीरनिर्वाण के ३०९ वर्ष बाद भूरिविसवादी आठवा निह्नव हुआ।

आवश्यक सूत्र की नियुक्ति म भी यही बताया है—

छव्वास सयाइ नवात्तर सइआ सिद्धिगयस्य वीरस्स।

तो बोडी अणादिट्ठी रहवीरपुरे समुप्पना॥

इन सब प्रमाणो से आठवा निह्नव सिद्ध होता है। यद्यपि यह विषयान्तर है किन्तु फौजमलजी को उत्तर दने के लिए सक्षेप से बता दिया है। इन सब वचनो क होते हुए यह कहना कि आठवा निह्नव नही है, शास्त्रो की अनभिज्ञता को सूचित करता है।

फौजमलजी लिखते हैं कि हमने स्वप्न का आना मोहनीय कर्म के उदय से ही होता है, इस बात को सिद्ध कर दिया है। अब इसम प्रश्नोत्तर की गुजायश नहीं है। उनका कहना ऐसा ही है जैसे किसी कर्जदार का मिट्टी की ठीकरिया देकर यह कहना कि हमने कर्ज चुका दिया है, अब किसी को कुछ न मागना चाहिए।

निर्णायक सूत्र

पौष शुक्ला द्वादशी के दिन मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज ने अपन प्रमाण देने के बाद कहा—"यदि फौजमलजी का यही कहना है कि भगवान् महावीर को दस स्वप्न मोहनीय कम के उदय स आए तो वे शास्त्र या टीका आदि का प्रमाण दिखलाए।"

इस पर फौजमलजी ने भगवती सूत्र १६ शतक ६ उद्देश्य पृष्ठ १३२२ (छिपी हुई प्रति) में टीका का नीचे लिखा पाठ बताया—

"एषा च पिशाचाद्यर्थानां मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूतै सह साधर्म्य स्वयमूह्यमिति।"

इस पाठ का मनमाना अर्थ करके फौजमल जी ने कहा कि स्वप्नो का मोहनीय कम से आना सिद्ध हो गया है।

मुनि श्री जवाहरलाल जी ने उस पाठ को अपने हाथ में लिया और फौजमलजी की गलती बताकर ठीक अर्थ कर दिया।

इस पर मध्यस्थो ने मुनि श्रीजवाहरलालजी तथा फौजमलजी दोनों से अपना अपना अर्थ लिख देने के लिए कहा। मुनिश्री जवाहरलाल जी ने तो उसी समय ठीक ठीक लिख दिया किन्तु फौजमलजी ने सभा में जैसा कहा था, वैसा न लिखकर अडबड करना शुरू किया। मध्यस्थो ने उन्हें बहुत कहा किन्तु फिर भी अपने कहे अनुसार अर्थ नहीं लिखा। इस पर मध्यस्थों ने सवेगी श्री केसरविजय जी के कथन को प्रमाण मानकर निर्णय कराने के विषय म पूछा। फौजमलजी ने यह बात भी नही मानी।

इस पर मुनि श्रीजवाहरलालजी ने कहा अब सभा के नियमानुसार मध्यस्थों को अन्तिम निर्णय दे देना चाहिए।

पौष शुक्ला चतुर्दशी का मध्यस्थों ने कहा—ऊपर लिखे पाठ का अर्थ बाईस सम्प्रदाय की तरफ से पण्डित बिहारीलालजी तथा तेरहपथ की तरफ से पण्डित बालकृष्ण जी लिखकर दे देवें। हम उसका निर्णय अपनी इच्छानुसार विद्वानों से करा लेवेंगे। यह निर्णय दोनो पक्ष वालो को मान्य होगा।

दोनो पक्ष वालों ने इस बात को मान लिया।

दीपिका—इह सुप्ता द्वेधा द्रव्यतो भावतश्च। ततो निद्राप्रमादापन्ना द्रव्यसुप्ता। भावसुप्तास्तु मिथ्यात्वाज्ञानमयमहानिद्राव्यामोहिता ततो यऽमुनयो मिथ्यादृष्टय सततं भावसुप्ता सद्विज्ञानानुष्ठानरहितत्वात निद्रयानुभजनीया। मुनयस्तु सदवबोधोपेता मोक्षमार्गे चलन्तस्ते सततमनवरत जाग्रति हिताहितप्राप्तिपरिहार कुर्वंते अतो द्रव्यनिद्रोपेता अपि क्वचिद्द्वितीय पौरुष्यादौ सतत जागरुका एव। तदेव दर्शनावरणीयकर्मविपाकोदयेन क्वचित् स्वपन्नपि य संविग्नो यतनावाश्च स दर्शनमोहनीयमहानिद्रापगमात् जाग्रदवस्थ एवेति।

भावार्थ—सुप्त दो प्रकार के होते हैं—द्रव्यसुप्त और भावसुप्त। निद्राप्रमाद वाला द्रव्य सुप्त होता है। जो व्यक्ति मिथ्यात्व और अज्ञान रूप महानिद्रा में सोया हुआ है वह भावसुप्त है। असयती मिथ्यादृष्टि निरन्तर भावसुप्त हैं। सम्यक ज्ञान और तदनुकूल अनुष्ठान न होने से वे निद्रा म पडे हुए हैं। सम्यग् ज्ञान वाले मुनि जो मोक्षमार्ग में चलते हैं वे तो सदा जाग्रत हैं। व हित की प्राप्ति तथा अहित का परिहार करते हैं। इसलिए दूसरी पौरुषी आदि मे द्रव्यनिद्रा लेते हुए भी व सदा जागते हैं। इस प्रकार दर्शनावरणीय कर्म के विपाक का उदय होने से कहीं पर सोता हुआ भी जो संवेग तथा यतना वाला है वह दर्शनमोहनीय रूप महानिद्रा हट जाने से जाग्रत ही है।

उपरोक्त टीका में भावनिद्रा वाले को अमुनि तथा मिथ्यादृष्टि कहा है। भगवान् तो सर्वश्रेष्ठ मुनि तथा सम्यग्दृष्टि थे। उनके लिए उपरोक्त विशेषण नहीं हो सकते। इसलिए उनमे भाव निद्रा का होना भी सिद्ध नहीं होता।

भगवतीसूत्र ६ शतक ६ उद्देश म भावनिद्रा वाले को अव्रती कहा है। इसलिए भगवान को भावनिद्रा न मानकर दर्शनावरणीय कर्म के उदय से होने वाली द्रव्यनिद्रा ही माननी चाहिए। द्रव्यनिद्रा मे पाप नहीं है यह बात भ्रमविध्वंसनकार भी मानते हैं। इसके लिए पाठ ऊपर लिखा जा चुका है। एक और जगह भ्रमविध्वंसन' में लिखा है—

"एक मोहनीय रा उदय बिना और कर्मा रा उदय थी पाप न लागे।'

द्रव्यनिद्रा दर्शनावरणीय का उदय है मोहनीय का नहीं। यह सिद्ध हो चुका है। इस लिए भगवान् को पाप का लगना बताना शास्त्रविरुद्ध तथा भ्रमविध्वंसन विरुद्ध है।

निद्राप्रमाद को मोहनीय कर्म का उदय मूल या दीपिका आदि किसी में नहीं बताया गया है। इसके लिए फौजमल जी का कथन कपोलकल्पित है। द्रव्यनिद्रा के लिए निद्राप्रमाद शब्द हम आचाराग की टीका तथा दीपिका में बता चुके हैं।

फौजमलजी का यह कथन भी ठीक नहीं है कि निद्रा और निद्राप्रमाद दोनों भिन्न भिन्न हैं। उत्तराध्ययन सूत्र के ११ वें अध्ययन की तीसरी गाथा में टीकाकार लिखते हैं—

'प्रमादेन मदविषयकषायनिद्राविकथारूपेण।"

इसमें निद्रा को ही निद्राप्रमाद बताया गया है।

आवश्यक सूत्र मे अज्ञात का प्रतिक्रमण बताया गया है। उसका पाठ है—

'अन्नाणं परियाणामि

अनुयोगद्वार सूत्र मे तीन अज्ञानों को क्षायोपशमिक भाव कहा है। ऐसी दशा में मोहनीय के उदय का ही प्रतिक्रमण बताना शास्त्रविरुद्ध है। श्रीबृहत्कल्पसूत्र के चौथे उद्देश्य का प्रमाण भी पहले दिया जा चुका है।

फौजमल जी का यह कहना ठीक नहीं है कि जीतमलजी ने कहीं पर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा नहीं की और न भगवान् की अवज्ञा की है। भगवान् ने दस स्वप्न देखे थे, ऐसा शास्त्रों में जगह जगह आया है। 'भ्रमविध्वंसन मे उन्हें विपरीत लिखा है यह शास्त्र और भगवान् दोनों का अनादर है।

फौजमलजी ने हमारे लिए कहा है—शास्त्र में सात निह्नव हैं और जवाहरलालजी ने आठ निह्नव बताकर शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा की है। उनका यह कथन ठीक नही है।

उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन की टीका का लेख है—

"अथ भूरिविसवादी प्रसगात प्रोच्यतेऽष्टम श्री वीरमुक्तेर्जातोऽन्दशतै षड्भिनवोत्तरै ।"

अर्थात वीरनिर्वाण के ३०९ वष बाद भूरिविसंवादी आठवा निह्नव हुआ।

आवश्यक सूत्र की नियुक्ति म भी यही बताया है—

छन्वास सयाइ नवात्तर तइआ सिद्धिगमस्य वीरस्स।

तो वोडी अणादिट्ठी रहवीरपुरे समुप्पना॥

इन सब प्रमाणों से आठवा निह्नव सिद्ध होता है। यद्यपि यह विषयान्तर है किन्तु फौज मलजी को उत्तर देने के लिए सक्षेप स बता दिया है। इन सब वचनो क होते हुए यह कहना कि आठवा निह्नव नहीं है, शास्त्रो की अनभिज्ञता को सूचित करता है।

फौजमलजी लिखते हैं कि हमने स्वप्न का आना मोहनीय कर्म के उदय से ही होता है, इस बात को सिद्ध कर दिया है। अब इसमे प्रश्नोत्तर की गुजायश नही है। उनका कहना ऐसा ही है जैसे किसी कजदार का मिट्टी की ठीकरियां देकर यह कहना कि हमने कज चुका दिया है, अब किसी को कुछ न मागना चाहिए।

निर्णायक सूत्र

पौष शुक्ला द्वादशी के दिन मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज ने अपने प्रमाण देने के बाद कहा—"यदि फौजमलजी का यही कहना है कि भगवान् महावीर को दस स्वप्न मोह नीय कर्म के उदय स आए तो वे शास्त्र या टीका आदि का प्रमाण दिखलाए।"

इस पर फौजमलजी ने भगवती सूत्र १६ शतक ६ उद्देश्य पृष्ठ १३२२ (छिपी हुई प्रति) में टीका का नीचे लिखा पाठ बताया—

"एषा च पिशाचादीर्यानां मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभून सह साधर्म्यं स्वयमूह्यमिति।"

इस पाठ का मनमाना अर्थ करके फौजमल जी ने कहा कि स्वप्नो का मोहनीय कर्म से आना सिद्ध हो गया है।

मुनि श्री जवाहरलाल जी ने उस पाठ को अपने हाथ में लिया और फौजमलजी की गलती बताकर ठीक अर्थ कर दिया।

इस पर मध्यस्थो ने मुनि श्रीजवाहरलालजी तथा फौजमलजी दोनों से अपना अपना अर्थ लिख देने के लिए कहा। मुनिश्री जवाहरलाल जी न तो उसी समय ठीक ठीक लिख दिया किन्तु फौजमलजी ने सभा में जैसा कहा था वैसा न लिखकर अडबंड करना शुरू किया। मध्यस्थों ने उन्हें बहुत कहा किन्तु फिर भी अपने कह अनुसार अर्थ नही लिखा। इस पर मध्य स्थों ने सवेगी श्री केसरविजय जी के कथन को प्रमाण मानकर निणय कराने के विषय म पूछा। फौजमलजी ने यह बात भी नहीं मानी।

इस पर मुनि श्रीजवाहरलालजी ने कहा अब सभा के नियमानुसार मध्यस्थों को अन्तिम निर्णय दे देना चाहिए।

पौष शुक्ला चतुदशी को मध्यस्थों ने कहा—ऊपर लिखे पाठ का अर्थ बाईस सम्प्रदाय की तरफ से पण्डित बिहारीलालजी तथा तेरहपथ की तरफ से पण्डित बालकृष्ण जी लिखकर दे देवें। हम उसका निणय अपनी इच्छानुसार विद्वानों से करा लेवेंगे। वह निणय दोना पक्ष वालों को मान्य होगा।

दोनों पक्ष वालों ने इस बात को मान लिया।

बाईस सम्प्रदाय की तरफ से नीचे लिखे अनुसार लिखा गया—"हमारा कथन यह है कि स्वप्नदर्शन को श्रीमत ठाणांग जी के आठवें ठाणे में अचक्षुदर्शन का भेद कहा है। यानि अचक्षुदर्शन के गर्भित ही है और अचक्षुदर्शन को श्रीमत सूत्र अनुयोगद्वार जी में क्षयोपशम भाव में कहा है तथा प्रतिवादी फौजमलजी के मत के आदि पुरुष भीखमजी ने जो तेरह द्वार बनाए हैं, उनके अष्टम द्वार में भी अचक्षुदर्शन को क्षयोपशम भाव में कहा है। स्वप्न दर्शन अचक्षुदर्शन के अन्तर्गत है, इसलिए क्षयोपशम भाव में है। मोहनीय कर्म के उदय भाव में नहीं है। इस हेतु से यह सिद्ध होता है कि भगवान् महावीर स्वामी द्वारा देखे गए दस स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय भाव में नहीं हैं।

श्री भगवती सूत्र की टीका का खुलासा निम्नलिखित है—

"एषां च पिशाचादार्थानां मोहनीयादिभिः स्वप्नफलविषयभूतैः सह साधर्म्यं स्वयमूह्यमिति।'

अर्थ—इन पिशाचादि अर्थों का स्वप्नफल के विषय रूप मोहनीय कर्म आदि के साथ सादृश्य स्वयं समझ लेना चाहिए।

हम अपनी तरफ से समेगी श्री केसरविजय जी को निर्णायक चुनते हैं। यदि टीका का अर्थ ऊपर लिखे अनुसार न हो अथवा इससे स्वप्नों का कारण मोहनीय का उदय सिद्ध होता हो तो केसरविजय जी का निर्णय हमें मंजूर है।

फौजमल जी की तरफ से नीचे लिखे अनुसार लिखा गया—

हमारा यह कथन है कि सूत्र भगवती जी का शतक १६ मां उद्देश्य छठा छापा की पड़त का पत्र १३२२ मां की टीका—

'एषा च पिशाचादार्थानां मोहनीयादिभिः स्वप्नफलविषयभूत सह साधर्म्य स्वयमूह्यम्।

इस टीका से भगवान् महावीर स्वामी ने देखे वह यथातथ्य स्वप्न मोहनीय कर्म के उदय सिद्ध होते हैं।

मध्यस्थों ने पूछा—क्या आपको समेगी केसरविजय जी का निर्णय मान्य होगा?

तेरहपंथी साधु फौजमलजी तथा जयचन्दजी ने विचार करके बाद में उत्तर देने के लिए कहा। दूसरे दिन तेरहपंथियों ने उन्हें निर्णायक तो मान लिया किन्तु केसरविजय जी विहार कर गए।

मुनि श्रीजवाहरलालजी महाराज ने मध्यस्थों से अन्तिम निर्णय के लिए फिर कहा। मध्यस्थों ने दोनों तरफ के पण्डितों की लिखित राय ली।

बाईस सम्प्रदाय की तरफ से पण्डित बिहारीलालजी ने नीचे लिखे अनुसार राय दी।

"सूत्र भगवती जी का शतक १६ मां उद्देश्य छठा छापा की पड़त का पत्र १३२२ की टीका—"एषा च पिशाचादार्थानां मोहनीयादिभिः स्वप्नफलविषयभूतैं सह साधर्म्य स्वयमूह्यमिति।

एषां पूर्वोक्तानां पिशाचादार्थानां स्वप्नफलविषयभूतैं मोहनीयादिभिः सह स्वयं विद्वद्भी रिति शेष साधर्म्यमूह्यं तर्कणीयमित्यन्वय इन पिशाचादि स्वप्नों के अर्थात् पीछे जो कह चुके हैं, इनमें जो स्वप्नों के फल विषय भूत मोहनीयादि है अर्थात दश स्वप्नों के दश फल क्यो पीछे कह चुके हैं इनके साथ स्वयं विद्वान पुरुषों ने साधर्म्य जैसे होय वैसे तर्कणा करना योग्य है। सो अब दश स्वप्न और दश स्वप्नों के फल दोनों नीचे दर्ज करते हैं।

स्वप्न	फल
१—ताल पिशाच	मोहनीय कर्म घात करना।
२—शुक्ल पक्षी कोकिल	शुक्ल ध्यान का ध्याना।
३—विचित्र पक्ष का कोकिल	द्वादश अंगों की प्ररूपणा।

४—रत्नमाला का जोडा	साधु श्रावक के धर्म को स्थापन करना।
५—श्वेत गायों का वर्ग	चतुर्विध सघ को स्थापन करना।
६—पुष्पा से भरा पद्म सरोवर	चतुर्विध देवता की प्ररूपणा।
७—समुद्र तरण	ससार समुद्र को तिरना।
८—तेजस्वी सूय	केवल नान केवल दशन उन्पन्न होना।
९—मनुपोत्तर पवत को आंतो बीटा	तीना भुवनो म कीर्ति फैलना।
१०—मेरु पवत की चूलिका पर सिंहासन पर बैठे	बारह प्रकार की पषदा म सिंहासन पर बैठ के धर्मोपदेश सुनाना।

इन सभी का भावाय यह है कि इस टीका से श्री भगवान ने दस स्वप्न देखे उनसे मोहनीम कम को जीतना आदि दस फल प्राप्त हुए। परन्तु इस टीका से भगवान ने दस स्वप्न देखे वह स्वप्नदशन मोहनीय के उदय मे नही है। जे कर हावे तो जैसा हमन टीका का अन्वय अर्थ लिखा है वसा ही इस टीका से दश स्वप्न मोहनीय कम के उदय है ऐसा टीका का अन्वय अर्थ लिख के दिखावो, जिस से सत्य निर्धार होवे और टीका से मोहनीय कर्म के उदय स्वप्नदर्शन सिद्ध होवेगा तो माना जायगा। अय बातों से प्रयोजन नहीं है।

तरह पथियों की तरफ से पण्डित बालकृष्ण जी की राय—

सभा के मध्यस्थ महाशयों से हमारा कथन है कि सूत्र भगवती जी का शतक १६ माँ उद्देश ६ पाना १३२२ पक्ति (एपा च पिशाचाद्यर्थाना मोहनीयादिभि स्पप्नफलविषयभूतै सह साधर्म्य स्वयमूह्यमिति) एपा दश स्वप्नाना कथ भूताना पिशाचाद्यर्थाना स्वप्नफलविषयभूत मोहनीयादिभि साधर्म्यमस्ति। ते पिशाचपराजिते मोह पराजित करिष्यामि इत्यादि सम्बध।

पिशाच गत है सो उदय है मोहनीय कम को जीतना है सो क्षायिक भाव है। अठै मोटा पणा मे दोनों ने समान धम आश्रयी लिया है। एषां कहिय यह दश स्वप्न पिशाच आदि अय को प्राप्त होने वाले। इन्हो का स्वप्न फल का विषय भूत जे मोहनीय आदि कम तिन करके साधर्म्द नाम समान उत्पन्न धम है। स्वयमेव साधन को प्राप्ति हो करके प्रतिबुद्ध हुआ नाम जाग्रत हुआ उस वक्त में छद्मस्थपना यानि माहनीयादि कम सावित रहा। क्षय पीछे हुआ और निद्रा प्रमाद म स्वप्न हुआ उस वक्त छदमस्थान गुणस्थान ६ कम ८ सहित थे। उस वक्त क्षय नहीं हुआ। इस वजह से मोहनी सावित है। इसका प्रमाण पहिला ठाणांग आचराग की टीका दीपिका टबा आदि प्रमाण पहले दे चुके हैं। सभाजन के सामने माहनीय कम का उदय साबित है।

इन दोनों लेखा का निणय करने के लिए पण्डित देवीशङ्कर जी को मध्यस्थ चुना गया उन्होंने नीचे लिखे अनुसार फसला दिया—

श्रीमान् सब मध्यस्थ महाशयों से श्रीमाली ज्ञाति पण्डित देवीशङ्कर का यह निवदन है कि आपने जेतारण ग्राम म तेरापथी साधु फौजमल जी आदि तथा बाईस टोलों के साधु जवाहरलाल जी आदि का यहाँ समागम होने से बिराजने से दोना साधु जी के परस्पर स्वप्न विषय मे चर्चा ठहरी। उसम साधु श्री जवाहरलाल जी का प्रश्न यह है कि भगवान् महावीर स्वामी को दस स्वप्न आये सो चित्तसमाधि मे हैं। और धमध्यान म हैं। और फौजमल जी का उत्तर यह है कि मोहनीय कम का उदय मे है। तो यहाँ मध्यस्थो की अपेक्षा हुई जद दोनों की रजावन्दी से ४ मध्यस्थ मुकर्रर किये गए। वह मध्यस्थों के नाम—जैनधर्मी सेठ सांवलचन्द जी, मन्दिरमार्गी सेठ मुल्तानमलजी मन्दिर मार्गी, विष्णुधर्मी कथाव्यास जी सरूपचन्द जी पचोली उदयराजजी, और बाईस टोलो की तरफ से पण्डित बिहारीलालजी और तेरह पथियों की तरफ स पण्डित बालकृष्णजी। और मध्यस्थों की तरफ से दोनों साधु जी की रजाबन्दी से मुझ को मुकर्रर किया। जिस पर दोनों साधु जी की तरफ स सूत्र समवायांग जी ठाणांग जी की टीका दीपिका टबा का

प्रमाण परस्पर दिखलाया। बाद मे सूत्र छापा की भगवती जी की सस्कृत टीका की पक्ति। एषा च पक्ति —

"एषां च पिशाचाद्यर्थानां मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूत सह साधर्म्य स्वय समूह्यमिति।"

छापा की भगवती सूत्र के पत्र १३२२ के शतक १६ उद्देश ६ में लिखी हुई पक्ति पर टूट होने की ठहरी। पौष सुदी १४ के रोज, बाद मे माघकृष्ण ३ के रोज मध्यस्थों ने मुझको कहा कि आपने इतने दिन बैठके ग्रन्थों का दोनों तरफ से प्रमाण सुना तो इससे आपकी राय क्या है सो लिखो। जब मैंने ग्रन्थों को सुनने से या देखने से या तुच्छ मेरी बुद्धि के अनुसार राय लिखता हूँ सो यथा —

महावीर स्वामी ने छद्मस्थ अवस्था म दश स्वप्न देख थे। तो छद्म नाम तो कपट तत्र कोष —

कपटोऽस्त्री व्याजदाम्भोपधयश्छद्मकैतव ।
कुसृतिर्निकृति शाठ्य प्रमादोऽनवधानता ॥
इत्यमर ।

तर्हि शठत्वात् चित्तसमाधिर्न जायत। छद्मस्थपणे सें चित्तसमाधि रो ज्ञान नहीं होवे है किन्तु सदा ही कान मोहादिक बने रहते हैं। और वीर प्रभु को दश स्वप्न आये थे उसी समय छठा गुणठाणा था तो छठा गुणस्थान का नाम प्रमादी है प्रमाद नाम भी कपट का हीज है। तो धम ध्यान के साथ बिलकुल सम्बन्ध है ई नहीं। हमेशे पाप के साथ सम्बन्ध है तो इनसे भी मोहादिक सिद्ध हुए। और भगवती सूत्र की टीका का अर्थ यह है कि—एषा च पिशाचाद्यर्थानां मोहनीयादिभि स्वप्नफलविषयभूतं सह साधर्म्य स्वयमूह्यमिति।'

पिशाचादि अर्थो की प्राप्ति होने वाले जो दश स्वप्न उनो का स्वप्नफल का विषयभूत मोहनीय आदि कम है उन्हें करके सदृशपण है, ऐसे पोते महावीरस्वामी तक करते हुए। इति भावार्थ। यानि तात्पय यह है कि प्रथम स्वप्न पिशाच ने हनन करने से मोहने जीतूगा यह विचार वतमान काल का था, यानि छद्मस्थ अवस्था का थां। वहाँ काय कारण का उपाधि करके सम्बन्ध है। स्वप्न तो कारण है और पिशाच ने हनन करना उपाधि है, उनसे कार्य यथा बना कि मोह कू जीतूगां, और यह केवल ज्ञान उत्पन्न हुए बाद मोहकर्म क साथ पिशाचादिक अर्थों का समानपण भूत काल का अर्थ होता है। तद्यथा—पिशाच ने हण्यो त्यारे मोहने जीत्यो ऐसे ही दश स्वप्नो का अथ मोहादि कर्मों के साथ घटना करनी चाहिए। इस वास्ते मध्यस्थ महाशयों से निवेदन है कि ऊपर लिखे हुए लेख से तो मोहनीय कम हीज सिद्ध होता है। अलमति विस्तरेण। सवत् १६६० रा मिति माघ कृष्ण ४ सौम्यदिने लिखितम् ॥

मध्यस्थों को पण्डित देवीशङ्कर जी का निणय पक्षपातपूर्ण मालूम पडा। इसलिए उन्होंने किसी जन शास्त्रज्ञ विद्वान् से निणय कराने का निश्चय किया। इसके लिए दोनों पक्षा की राय लेकर जयपुर मे समगी महाराज श्री शिवजीराम जी क पास पहिले दिन के प्रश्न भगवती सूत्र की टीका के पाठ तथा तीनों पण्डितो की निर्णय की नकल भेज दी तथा अन्तिम निर्णय के लिए लिख दिया।

महाराज शिवजीराम जी ने नीचे लिखा फैसला भेजा—संवत् १६६० का मिति माघ वदि ६ का पत्र १ आया। दस्तखत इतना जनों का—गांधी सांकलचन्द जी, सेठ मुल्तानमल जी, पचोली उदयराज जी व्यास रूपचन्द जी। जिसमें यह लिखा है कि यहाँ बाईस समुदाय के साधु श्री जवाहरलाल जी और तेरहपंथियो के साधु श्री फौजमलजी के आपस में पौष वदि ५ से लेकर पौष सुदी १४ तक चर्चा हुई। जिण चर्चा म मनि चारों जणाने दोनु तरफ से मुकरर किया

हा सो उस चर्चा का खुलासा पौष सुदी १४ के रोज टूट होने के वास्ते यह बात मुकरर हुई कि सूत्र भगवती जी का शतक १६वा उद्दश छठा छापा की प्रति पाना १३२२ की टीका में खुलासा होना ठहरा। उस पाठ का अथ दोनू तरफ के पण्डितों का नकल करके भेजा है। और एक श्रीमाली ब्राह्मण यहाँ का पण्डित देवीशङ्कर ने उस टीका का अर्थ किया। उसकी भी नकल, जुमले नकल तीन और पहिले रोज से प्रश्न चला उसकी विगत आपषू भेजी है, इस मजमून का पत्र हमारे पास आया। बाँच कर वाक्य हुए। जिसमे था लोकाने लिखा कि दोनो तरफ के पण्डितों की तरफदारी होने से इसका भेद खुल सका नही। ये था लिखी। जिस पर इहां से हमारी बुद्धि के अनुसार और वर्तमान काल में इस सम्प्रदायगत विद्वज्जन जो अथ करते हैं। उसके अनुसार उस पक्ति का कि जिस पर टूट होना ठहरा था इसका अथ इस मुजब है। या पक्ति जिण सूत्रों पर है सो सूत्र सूचन के वास्ते लिखते हैं।

समण भगवं महावीरे छउमत्थकालियाए अतिमराइयसि इमे दस महासुमिणे पासित्ताण पडिबुद्धे। तं जहा॥

यह पिशाच स्वप्न प्रतिपादक प्रथम सूत्र से लेकर दश सूत्र हैं।

'एक च ण'

मंदिरे सिंहासनस्थ आत्मा दर्शनरूप यह दश सूत्र स्वप्न प्रतिपादन सूत्र हैं। इन स्वप्नो का फल प्रतिपादक भी सूत्र हैं। सो यह है—

ज ण समणे भगव महावीरे मह घोररूव दित्तधर तालपिसाय सुविणे पराजिय पासित्ताण पडिबुद्धे तेण समणे भगव महावीरे मोहणिज्जे कम्म मूलओ घाइआ॥

यह प्रथम सूत्र स्वप्नफल प्रतिपादकसूत्र है। इसी रीति स दश सूत्र तो स्वप्न प्रतिपादक हैं और दश ही सूत्र इनों का फल प्रतिपादक एव बीस सूत्र हैं।

अनुक्रम योजना ऐसे हैं

१ पिशाच	मोहघात।
२ श्वेतच्छद पु स्कोकिल	शुक्लध्यान प्राप्ति।
३ चित्रच्छद कोकिल दर्शन	द्वादशाङ्गी प्ररूपण।
४ दामयुग	द्विविध धम प्ररूपण।
५, श्वेत गोवर्ग	चतुर्विध सघ स्थापना।
६ पदमसरोवर	चतुर्विधदेव प्ररूपण।
७ भुजाओं से सागर तरण	ससार समुद्र तरण।
८ दिनकर दशन	कैवल्य समुत्पत्ति।
९ आन्तड़ियों से मानुषोत्तर वेष्टन	त्रैलोक्य कीर्ति
१० मन्दर चूलिकास्थसिंहासन पर बैठना	१२ प्रकार की पषदा म धम का कथन।

श्रमणो भगवान् महावीरः छद्मस्थकालिक्यामन्तिमरात्रौ छद्मस्थकालसम्बन्धिन्या रात्रेरन्तिमभागे इत्यथ। इमान् महास्वप्नान् दृष्ट्वा प्रतिबुद्धस्तद्यथा—एक महान्त घोररूप दीप्तिधर तालपिशाचं स्वप्ने पराजित दृष्ट्वा प्रतिबुद्ध। इत्यादित दशम स्वप्नप्रतिपादकानि सूत्राणि सन्ति। एतेषां फलप्रतिपादकानि सूत्राणि त्विमानि। यत् श्रमणो भगवान् महावीरः एक महान्त घोररूप दीप्तिधर तालपिशाच स्वप्न पराजित दृष्टवा प्रतिबुद्धस्तच्छ्रमणेन भगवता महावीरेण मोहनीयकम मूलतो घातितम्। इति स्वप्नफलप्रतिपादकानि सूत्राणि। एव विंशतिसूत्राणि सूत्रकारेण कथितानि।

भावाथ—भाषा मे—वीर प्रभु ने दश स्वप्न देखे सो सूत्र ऊपर लिखा ही है। उनों के फल कहने वाले सूत्र नीचे लिखे हैं। अब सब स्वप्न कहने वाले और उनके फल कहने वाले सूत्रों

को यथायोग्य अवित मरक वृत्ति के कायदे से व्याख्या कर्ता श्री अभयदेवाचार्य बोलते हैं—एषां च पिशाचाद्यर्थानां मोहनीयादिभिः स्वप्नफलविषयभूतैः सह साधर्म्यं स्वयमूह्यम् ।" कीदृशैः मोहनीयादिभिः स्वप्नफलविषयभूतैः इत्यन्वय । च शब्दात् ऊह्यमिति क्रियापद प्रत्येकं योजनीयम् । यथा पिशाचधर्मैः मोहनीयधर्मेण सह व्याख्याकर्तृभिः स्वयमात्मना तर्कणीय विचारणीयम् । एवमग्रतनानि श्वेतपुंस्कोकिलपदान्यपि अनयैव क्रियया संयोजनीयानि इति । इनका भावार्थ—

इन पिशाच आदि अर्थों का धर्म स्वप्नफल का विषयभूत मोहनीयादिकों के धर्म के साथ साधर्म्य समानधर्मता तुल्यधर्मता व्याख्यान करने वालों ने आप ही तर्कना और उन स्वप्नो और स्वप्नो के फल की साधर्म्यता बार बार विचारना ये ही तात्पर्य है। उसकी धर्मयोजना इस प्रकार है—पिशाच मे अनेक धर्म रहते हैं पिण यहाँ कौन धर्म लेके मोह के धर्म के साथ जोडना और पिशाच के लगने से वा उसके देखने से मनुष्यों की बुद्धि विपरीत हो जाती है तैसे ही मोहनीय कर्म के प्रभाव से जीव स्वरूप के विपर्यय को प्राप्त होता है। उस विपर्यय को वीरप्रभु ने अपनी बुद्धि में नहीं होने दिया अर्थात मोह का प्रभाव स्वात्म प्रदेशो मे किंचित् भी नहीं होने दिया, निष्फल कर दिया। ये ही मोह का जीतना है। प्रथमस्वप्नप्रतिपादक सूत्र में 'मूलओ घाइओ' यह क्रिया धरी सो 'पराजित' और 'मूलतो घातित' यह दोनो एकार्थ प्रतिपादक हैं। हिंसि हिंसायां चुरादि, हन हिंसागत्यो अदादि। हन् गत्यर्थक अधिक है। मूलतः घातित इसका अर्थ झटपट ये कर लेते हैं कि मारा पिण भावार्थ नही सोचते हैं। भावार्थ यह है कि मूल से घात किया हिंसा किया। हिंसा का अर्थ ये है—प्राणवियोगानुकूलो व्यापारो हिंसा। प्राण का वियोग हो जाय ऐसी तरह का व्यापार यानी क्रिया उसको हिंसा कहते हैं। अर्थात् जुदा करने का काम हिंसा है उसको घात मारा बोलते हैं। पराजित परा उपसर्ग 'जि जये' परा का अर्थ 'जी' के उपदेश मे भृशार्थक होता है इससे अत्यंत पणे मोह का असर अपने ऊपर नहीं होने दिया। अनादि काल से सवजीवो को मोह ने अपने वश कर रखा है। अनन्त चतुष्टय आदि आत्मा के निजगुणों का विपर्यय करके अपने अपने स्वभाव का असर कर दिया। इसीसे अनादि काल से संसार में रुलाता है। उस असर को भी वीरप्रभु ने बिलकुल मूलसे उखाड के दूर किया। इसका आगामी फल केवल ज्ञान का पाना हुआ। इसी तरे अगाडी के श्वेतपुंस्कोकिल स्वप्न के अर्थ को शुक्लध्यान के अर्थ के साथ साधर्म्यता विचारना। इसी तरे दशवें स्वप्न तक आपस मे साधर्म्य विचारना। एषां च इत्यादि पंक्ति का भावार्थ वृत्तिकार श्रीमान् अभयदेवाचार्य कहते हैं सो विचार लेना। और सब्ब महानुभावों को जो स्वप्न आते हैं सो सत्यार्थ ही आते हैं। यही छठे उद्देश मे है। अब यहां महाशयों को विचारणीय है कि इस पंक्त्यर्थ मे मोहोदय से स्वप्न आए यह बात तो सूत्र के प्रकृति प्रत्ययों से वा वृत्ति के अक्षरो के प्रकृति प्रत्ययो से निकल सकती है नहीं और इस सूत्र वृत्ति के अक्षरों से को कोई विद्वान् महाशय निकाले तो हम भी उपकार मानें।

और नकल तीन पंडितो की भेजी जिसमे पंडित श्री देवीशंकर जी की लिखित तो विपरीत (अशुद्ध) है। यह लिखित देखने से मालूम पडता है कि जैनग्रन्थो से मूल मे अजाण है।

और पंडित जी बालकृष्णजी ने जो पंक्ति का अर्थ किया है सो अशुद्ध अन्वय लगाया है सो दुरुस्त नहीं है। और पंडित जी बिहारीलाल जी ने पंक्ति का जो अर्थ लिखा है सो ठीक है, शास्त्र से मिलता है।

इति सत्यम्

मिति फागण कृष्ण ८ भौम संवत् १९९० ॥

नोट—मध्यस्थों का फैसला पृ० ४९ पर दिया जा चुका है।

———

परिशिष्ट 'ख'

सुजानगढ़ चर्चा

सुजानगढ-चर्चा

सुजानगढ़ म सोमवार तारीख १७ २ ३० मिति फाल्गुन कृष्णा ५ सम्वत १९८६ था जब कि पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज श्रीइन्द्रचन्द्रजी सिंघी के भवन (वठक) में व्याख्यान दे रहे थ और सैंकड़ा की सख्या मे स्त्री पुरुष तथा सनातनधर्मसभा के प्रेसीडेण्ट श्रीलक्ष्मणप्रसादजी आदि अनेका प्रतिष्ठित सज्जन श्रवण कर रहे थे उस समय तेरह पथ सम्प्रदाय के लगभग १५ २० श्रावक जिनम से श्रीबालचन्दजी वेगाणी, श्रीहजारीमलजी रामपुरिया, श्रीछोटूलालजी बोरड, श्रीआणकरणजी भूतोड़िया, श्रीमूलचन्दजी सेठिया, श्रीरूपचन्द्रजी बोथरा, श्रीसच्यालालजी भूतोड़िया के नाम उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने आकर पूज्यश्री से प्रार्थना की कि तेरह पथ सम्प्रदाय और बाईस सम्प्रदाय मे जिन बाता का मतभेद है, हम उन बातों के विषय म आप से प्रश्न करना चाहते हैं। पूज्यश्री ने उक्त प्रार्थना क उत्तर म फरमाया कि यह समय व्याख्यान का है। नियमानुसार व्याख्यान म न तो बडे प्रश्नोत्तर होत ही हैं, न थोड़े समय मे प्रश्न सुन कर उनका समुचित उत्तर देना ही सम्भव है। यदि आप लोग इस विषय म प्रश्न करना चाहते हैं तो किसी दूसरे समय मे प्रश्नोत्तर करना ठीक होगा। प्रार्थी सज्जनों ने पूज्यश्री से फिर कहा, कि हम लोग प्रश्न करने के लिए आपके समीप किस समय आवें ? पूज्यश्रीने फरमाया कि एक बजे से तीन बजे तक का समय इसके लिए उपयुक्त होगा, अत आप लोग उस समय म प्रश्न पूछ सकते हैं। आये हुए तेरह पथ सम्प्रदाय के श्रावकों ने पुन प्रश्न किया कि क्या हम आज ही आ सकते है ? पूज्यश्री ने फरमाया—यद्यपि आज सोमवार मेरा मौन का दिन है तथापि शास्त्र विषयक प्रश्नो के उत्तर देने मे मुझे कोई आपत्ति नही।

इस बातचीत के पश्चात व्याख्यान समाप्त हुआ। व्याख्यान म उपस्थित जनता को इस बातचीत से मालूम हो ही गया था कि, आज एक बजे तेरहपन्थ के श्रावकों और पूज्यश्री में प्रश्नोत्तर होंगे अत दर्शक जनता निश्चित समय के पहिले से ही पूज्यश्री के ठहरने के स्थान के समीप श्री सिंघीजी के मन्दिर (देवसागर) के पूर्व की ओर की छाया मे एकत्रित होने लगी। सन्तों सहित पूज्यश्री ठीक एक बजे ही जहां जनता एकत्रित थी वहां विराज गये और तेरहपन्थ सम्प्रदायी श्रावकों के निश्चित समय के पश्चात् भी न आने के कारण श्रीगणेशीलालजी महाराज ने ओजस्विनी वाणी द्वारा उपस्थित जनता को ज्ञानोपदेश करना प्रारम्भ कर दिया। डेढ़ बजे के लगभग श्रीझूमरमलजी डोसी श्रीझूमरमलजी चोरड़िया, श्रीबालचन्दजी वेगाणी, श्रीहजारीमलजी रामपुरि श्रीमेघराजजी भूतोड़िया श्रीछोटूलालजी बोरड, श्रीटीकमचन्द्रजी डागा श्रीआणकरणजी भूतोड़िया, श्रीकुन्दनमलजी सठिया, श्रीकन्हैयालालजी रामपुरिया, श्रीरूपचन्दजी बोथरा, श्रीमोहनलालजी डोसी श्रीसच्यालालजी भूतोड़िया, श्रीहुलासमलजी रामपुरिया श्रीपन्नालालजी बोरड आदि सुजानगढ़ के सब ही तेरहपन्थ सम्प्रदाय के श्रावक तथा लाडनू बीदासर सरदारशहर और जयपुर के अल्पसख्यक तेरहपन्थी श्रावक, श्रीनमीनाथ सिद्ध (जाट, सरदारशहर निवासी) को लेकर आये। तेरहपन्थ सम्प्रदायी श्रावकों की ओर से नमीनाथजी ने पूज्यश्री से फिर प्रार्थना की कि आपके और हमारे अर्थात् तेरहपन्थ के बीचमे जिन बाता का मतभेद है हम उन बातो के विषय में

"(ख) आपने लिखा है कि, 'प्रश्नकर्त्ता लिखता है कि हमारा अभिप्राय और था परन्तु मैंने मेरा अभिप्राय और था' ऐसा कहीं भी नहीं लिखा है। मैंने मेरे द्वितीय प्रश्न में 'मेरा अभिप्राय यह है ऐसा लिखा है इसलिये आप मेरा लिखा हुआ 'यह है' के बदले 'और था' यह शब्द कहां से ले आये ? क्योंकि मैंने मेरा अभिप्राय और था' ऐसा कहीं नहीं लिखा है। मैंने तो मेरे प्रश्न को स्पष्ट करने के लिये 'जनेतर' शब्द दिया है जोकि जनधर्म को असत्य मानने वाले पर पूर्ण रूप से घटता है। आपने जो मेरे प्रश्न के लिखित वाक्यों के विपरीत लेखनी चलाने की चेष्टा की है, उन वाक्यों को आप कृपया फिर दुबारा देखिये।

"(ग) मेरे मूल प्रश्न म कोई भी सत्यधर्म को असत्य मानता है, ऐसा शब्द नहीं आया है तो फिर आपने उत्तर नं० १ मे 'कोई भी सत्यधम को असत्य मानता है' ऐसा क्यों लिखा ? और उत्तर न० १ में उपरोक्त बात लिखकर उत्तर न० २ में फिर आप लिखते हैं कि मैंने अपने उत्तर मे कोई भी सत्य धम को असत्य नहीं लिखा है' यह परस्पर विरोधी वचन क्यो ?"

"(घ) उत्तर न० २ में जो जैनधम को असत्य मानता है, उसको दुराग्रही की पदवी आपने दी है। मैंने मेरे प्रश्न मे जैनधम को असत्य मानने वाले के लिये लिये 'दुराग्रही' शब्द नहीं लिखा है। फिर आप मेरे पर असत्य कलक क्यों लगाते हैं ? आप चाहे उसको दुराग्रही कहें तो आपकी इच्छा और उसका दायित्व आपके ऊपर है।'

"(ङ) और आपने जो उत्तर न० २ म लिखा कि जो जैन धम को असत्य मानता है, वह अहिंसा सत्य आदि का कदापि पालन नहीं करता है' यह आपका लिखना शशक शृगवत् है, क्यों शिवराज ऋषि (जैनधम अंगीकार करने के पहिले) जैनधम को असत्य मानता हुआ भी अपने नियमादि में दृढ था। प्रमाण भग० श० ११ उ० ९।"

"(च) आपने उत्तर न० २ में प्रश्न व्याकरण सूत्र के मूल पाठ की टीका से प्रश्नकर्त्ता की अज्ञानता सूचित की है वह व्यर्थ है, क्योंकि वह टीका मेरे ही प्रमाण के अनुकूल है।

"अतएव आप जो मेरे प्रश्न को गलत बताते हैं, वह प्रश्न ठीक है लेकिन आपकी समझ में ही गलती है। इसलिए मेरे प्रश्न का उत्तर मिलना चाहिए।'

उक्त बातों को सुनाने व नोट कराने के पश्चात समय बहुत कम रह गया था। पूज्यश्री ने इन बातों के उत्तर में जबानी ही ५ ७ मिनिट मे कुछ फरमाया, परन्तु समयाभाव से पूरा उत्तर सुनाया जाकर नोट करा देना असम्भव था और गोठीजी तथा नेमीनाथजी को, जो उत्तर आज सुनाया जाय उसे नोट करना स्वीकार न था, अत कल के लिए भी यही समय नियत होकर तीन बजे के लगभग सभा विसर्जित हुई।

तीसरे दिन बुधवार ता० १९ २ ३० मिती फाल्गुन कृष्ण ७ को फिर उसी प्रकार कार्यारम्भ हुआ। जनता आज भी उसी सख्या मे थी। श्रीनाजिम साहब कार्यवश किसी अन्य ग्राम को चले गये थे और उनके स्थान पर श्रीडिस्ट्रिक्ट सुप्रेण्डेण्ट साहब पुलिस सिपाहियो सहित पधारे थे जिन्होंने शान्ति रक्षा का कार्य अपने हाथ में लिया।

नेमीनाथजी ने अपने प्रश्न के समर्थन म कल जो बातें सुनाई थीं और गोठीजी ने जिन्हें नोट कराया था, उन सम्पूर्ण बातों का क्रमवार उत्तर तथा भविष्य म उन मुख्य मुख्य बातों जिनमें तेरहपन्थ और बाईस सम्प्रदाय में मतभेद है—के विषय म प्रश्नोत्तर होने आदि के लिए जो लेख पूज्यश्री की ओर से तेरहपन्थ सम्प्रदायी और दर्शक जनता को सुना कर नोट कराया गया, वह नीचे दिया जाता है—

"(क) आपने जो 'जैन धम को असत्य मानने वाला निज धम का अनुरागी' और जैनेतर' इन शब्दो को एक ही अर्थ का वाचक लिखा है वह बिलकुल असगत है। जिन शब्दों का प्रवृत्ति निमित्त एक होता है, वे ही शब्द एकार्थ वाचक होते हैं, जैसे घट और कलश। क्योंकि इन दोनों

का प्रवृत्ति निमित्त एक ही घटत्व जाति है। परन्तु 'जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी और जैनेत्तर इनका प्रवृत्ति निमित्त एक नही है। 'जैनेतर' शब्द का प्रवृत्ति निमित्त जैनोपाधि व्यतिरिक्तोपाधि धारित्व है। यानी 'जैन' इस उपाधि से भिन्न किसी दूसरी उपाधि का धारण करना है और जैन धर्म को असत्य मानता हुआ निज धर्म का अनुरागी इसका प्रवृत्ति निमित्त केवल जैनोपाधि व्यतिरिक्तोपाधि धारित्व' नही है। किन्तु जो जैन शास्त्र में विधान की हुई बातों को एकान्त पाप तथा निषेध की हुई बातो में धर्म मानता हो और इस प्रकार के अपने धर्म में अनुराग रखता हो यह प्रवृत्ति निमित्त है चाहे वह जैनोपाधि धारी क्यों न हो जसे, साधु के गले मे लगी हुई फांसी को काटना किसी निर्दोष बच्चे के पेट मे छुरी भौंकते हुए को रोकना, भ्रमित होकर कुएँ या गड्ढे मे गिरते हुए का बचाना गायों से भरे हुए बाडे मे अग्नि लगने पर दरवाजा खोलकर उनकी रक्षा करना किसी दीन दुखी पर अनुकम्पा लाकर उसका दुख मिटाना इत्यादि जैन शास्त्र मे धर्म और पुण्य रूप से विधान की हुई बात को एकान्त पाप बताकर जो निषेध करता है तथा साधुओ के स्थान मे रात के समय औरतो का आना और उन्हें व्याख्यान सुनाना, गृहस्थो के घर से बारी बांधकर साधुओं का भोजन लाना और विहार मे गृहस्थियो को साथ रखकर उनके पास से भोजन लेना आदि जैन शास्त्र में निषेध की हुई बात का जो विधान करता हुआ तदनुसार आचरण करता है वह जैन धर्म को असत्य मानने वाला और निज धर्म का का अनुरागी है। पर वह जैनोपाधिधारी होने से लोक मे जैनेतर नहीं कहलाता। अत उक्त दोनों शब्द एकार्थवाची नही हैं और मेरा भेद दिखाना उचित ही है।

"(ख) आपने परसो के दूसरे लेख म 'हमारे पूछने का अभिप्राय यह है' इत्यादि लिखकर जो अपना आशय प्रकट किया है, वह आपके प्रश्न नं० १ के वाक्यों से नही निकलता। क्योंकि यह बताया जा चुका है कि जन धर्म को असत्य—मानने वाला' और जैनेतर' यह दोनो शब्द पर्यायवाची नही हैं। अत 'जैन धर्म को असत्य मानने वाला निज धर्म का अनुरागी इस शब्द का जनेतर जनता यह अभिप्राय बतलाना और ही हुआ। इसलिए जो मैंने आपका अभिप्राय और बतलाया है, वह अनुचित नहीं है। अलबत्ता आपने और' शब्द का प्रयोग नही किया लेकिन यह और शब्द आपके लिखे हुए का अनुकरण नहीं बल्कि हमारी तरफ से है और ठीक है। क्योंकि आपका अभिप्राय जैनेतर' लिख कर प्रश्न से जो आशय प्रकट नहीं होता है, वह बतलाना है।"

(ग) आपने 'जैन धर्म को असत्य मानने वाला' यह विशेषण ब्रह्मचर्य अहिंसा सत्य आदि के पालन करने वाले के लिए लगाया है। अत उसका उत्तर देते हुए मैंने लिखा है कि जो पुरुष जैन धर्म को या कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है वह पुरुष शास्त्रोक्त अहिंसा सत्य आदि का कदापि पालन नहीं करता है। इस उत्तर मे मैंने जैन धर्म या कोई भी सत्य धर्म को असत्य बताने वाला लिखा है इसमें आपके बताये हुए जैन धर्म को असत्य मानने वाला भी सग्रहीत हो गया है। फिर यह आपका आक्षेप करना व्यर्थ है कि उत्तर न० १ म कोई भी सत्य धर्म का असत्य मानता है क्यों लिखा? यह आपका प्रश्न वाक्य का अनुकरण नहीं किन्तु हमारा उत्तर वाक्य है। विशेष रूप से पूछे गये प्रश्नों का सामान्य रूप से उत्तर दिया जाना भी शास्त्र प्रसिद्ध है।"

आप के लिखे हुए शब्द से भिन्न शब्द का लिखना मेरे लिए अनुचित समझते हो तो आपने मेरे उत्तर वाक्य 'जो पुरुष जन धर्म को या किसी भी सत्य धर्म का असत्य मानता है' को उद्धृत करते हुए 'जैनधर्म के अतिरिक्त कोई भी सत्य धर्म को असत्य मानता है, इनमें 'अतिरिक्त' शब्द और कहां से लगा दिया?'

"(2) 'सत्य धर्म को असत्य मैंने नहीं लिखा' इसका मतलब यह है कि इस लिखने से सत्य धर्म को असत्य कहने का मेरा अभिप्राय नहीं है, किन्तु यह अभिप्राय है कि कोई भी सत्य धर्म को असत्य माने उसमे अहिंसादि व्रत की प्राप्ति नहीं होती। अब आपका प्रश्न यह है कि वह सत्य धर्म कौनसा है' तो इस प्रश्न का उत्तर यह है कि, जिस धर्म मे ज्ञान दर्शन चारित्र और तप यथार्थ रीति से माने जाते हो तथा जो धर्म साधु के गले में लगी हुई फासी को काटने किसी निर्दोष बच्चे के पेट म छुरी भोकते हुए को रोकने क्रोधित होकर कुए या गड्ढे में गिरते हुए को बचाने, जलते हुए बाड़े से रक्षा के लिये गायो का निकालने आदि मे पाप न मानकर इनका प्रतिपादन हो और रात के समय साधुओ के समीप स्त्रियो के आने जाने, साधुओं का गृहस्थियों के यहां से बांधकर भोजन लाने, आदि मे धर्म न मानकर इनका निषेधक हो वे सब सत्य धर्म हैं, चाहे उनकी उपाधि कुछ भी हो।'

" (घ) जैन धर्म को असत्य मानने वाला वह है जो जैन धर्म म विधान किये हुए मरते प्राणी की रक्षा और दीन दुखियों पर अनुकम्पा लाकर उनके दुखो को मिटाना इत्यादि पवित्र कार्य को एकान्त पाप कह कर अपवित्र बतलाया हो। वह चाहे आपके मन मे सत्याग्रही क्यों न हो, पर मैं उसे दुराग्रही मानता हूँ और ससार भी उसे दुराग्रही ही कहेगा।'

"(ङ) शिवराज ऋषि, जैन धर्म स्वीकार करने से पहले अहिंसा सत्य आदि व्रतों का पालन करने वाला था, यह भगवती शतक ११ उद्देशा ९ मे नही लिखा है। न जैन धर्म को असत्य मानने वाला ही लिखा है। फिर उनके नियमादि का नाम लेकर जैन धर्म को झूठा मानता हुआ अहिंसा सत्य आदि व्रतो का पालन करने का सम्भव बताना ही भ्रामक स्तवन है।"

"(च) प्रश्न व्याकरण सूत्र की टीका को जो आपने अपने अनुकूल बताया यह आपका भ्रम है। वास्तव मे वह टीका, आपने जो अर्थ बताया है उसके सर्वथा प्रतिकूल है क्यो कि वहाँ पाखण्डी शब्द का अर्थ व्रतधारी किया है जैसे—

अनेकपाखण्डिपरिपगृहीत नानाविधव्रतिभिरङ्गीकृतम ।*

तथा दशवैकालिक सूत्र की नियुक्ति में लिखा है—

पव्वइए अणगारे पासण्डे चरग तावसे भिक्खू।
परिवाइए य समणे निग्गन्थे संजुए मुत्ते ॥‡

इसी नियुक्ति की टीका मे पाखण्डी शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए लिखा है—

पाखण्ड व्रत तद्स्यास्तीति पाखण्डी ।**

इन सबों का तात्पर्य यह कि पाखण्ड नाम व्रत का है और जो व्रतो का धारण करता है वह पाखण्ड या पाखण्डी कहलाता है। ऐसे अनेकों व्रतधारियो से स्वीकार किया हुआ होने से सत्य व्रत को 'अनेक पाखण्ड परिगृहीत कहा है। नियुक्तिकार ने व्रतधारी साधुओ के पर्याय मे पाखण्ड शब्द की गणना की है। वह नियुक्ति ऊपर लिख दी गई है और उसकी टीका म पाखण्ड शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए टीकाकार ने 'पाखण्ड' व्रत का नाम बताया है। परन्तु पाखण्ड' शब्द का और भी अर्थ है। जैसे कि 'पाखण्डी दाम्भिक यानी ढोगी का भी नाम है। परन्तु वह पाखण्डी सत्य व्रत धारी नहीं होता अत यहाँ वह अर्थ नही घटता। इस लिये पाखण्डी शब्द का अर्थ 'व्रतधारी टीकाकार ने किया है, यहाँ पर वही उपयुक्त है।

*अनेक व्रत धारियो ने सत्य व्रत को स्वीकार किया है।

‡प्रव्रजित अणगार, पाखण्ड, चरक तापस, भिक्षु निर्ग्रन्थ सयत मुक्त, परिव्राजित और श्रमण य पर्यायवाची शब्द हैं।

**पाखण्ड नाम व्रत का है यह व्रत जिसके अन्दर मौजूद है, उसे पाखण्डी कहते हैं।

"अब आपने अपने पहिले नम्बर के प्रश्न को ठीक बतलाते हुए उसका उत्तर मेरे से मांगा है तो, यदि आपका पूँछने का भाव यह हो कि, अहिंसा सत्य आदि व्रतों का धारण करने वाला जो जैन से भिन्न उपाधिधारी पुरुष हो तो वह अपने उक्त व्रत से ससार को घटाता है या बढाता है तथा अपने कर्म का क्षय करता है या बद्धि करता है, तो इसका उत्तर यह है कि यह चाहे जैनोपाधि धारी हो चाहे किसी दूसरी उपाधि से विभूषित हो, पर उसके अहिंसा सत्यादि व्रतो के धारण करने से जन्म मरण घटता ही है बढ़ता नही हैं। उसके कर्म क्षीण होते हैं, पर बढ़ते नही हैं। इस विषय म उत्तराध्यन सूत्र अ० २८ की गाथा प्रमाण है। जैसे कि—

नाण च दसणं चेव चरित्त च तवो तहा ।
एय मग्गमणुप्पत्ता जीवा गच्छंति सुग्गइ ॥

अर्थात ज्ञान दर्शन और अहिंसा सत्यादि सत्यादि व्रतरूप चरित्र मोक्ष के मार्ग हैं। इनका आश्रय लिये हुए जीव मोक्ष प्राप्त करते हैं।

इस गाथा मे किसी विशेष उपाधि धारी की चर्चा नहीं करत हुए हर एक का मोक्ष गामी होना कहा है। मोक्ष पाने म, उपाधि विशेष कोई कारण नहीं है। जसे कि जैन ग्रन्थों में लिखा है— सेयवरो य आसवरो य बुद्धा य अहव अन्नो वा ।
समभावभाविअप्पा लहई मुक्ख न सन्देहो॥

अर्थात् श्वेताम्बर हो या दिगम्बर, बौद्ध हो या शैव, वैष्णवादि अन्य किसी उपाधि का धारी हो, पर समभाव स जिसकी आत्मा भावित है, वह मोक्ष को प्राप्त करता है, इसम सन्देह नही।

इसी आशय के जैन सूत्र के अङ्गोपांगो में भी पाठ पाये जाते हैं। जैसे कि—

स्वलिङ्गि सिद्धा, अन्य लिङ्गि सिद्धा और गृहलिङ्गि सिद्धा।

अर्थात अपने लिङ्ग मे अन्य लिङ्ग तथा गृहस्थ के लिङ्ग मे भी सिद्ध होते हैं।

तथा अश्रुत्वा केवली के अधिकार मे भगवती सूत्र के अन्दर अन्य लिङ्ग म भी केवलज्ञान प्राप्त होना लिखा है।

किसी विद्वान ने कहा है कि—

भवबीजाङ्कुर जनना रागाद्या क्षयमुपागता यस्य ।
ब्रह्मा वा विष्णुर्वा हरो जिनो वा नमस्तस्मै ॥*

इसी तरह यह भी श्लोक है कि—

य शैवा समुपासते शिव इति ।‡

यह मेरा उत्तर जो लोग जैन से भिन्न उपाधिधारी होकर भी अहिंसादि व्रतो के पालन करने वाले हैं उनके सम्बन्ध में है। पर आपने तो जन धर्म को झूठा मानने वाले के लिए पूछा है इस पर तो मेरा कहना है कि, जन धर्म को असत्य मानने वाला अहिंसादि धर्मों को भी असत्य मानने वाला है। फिर वह अहिंसादि का पालन भी करता हो यह बात असम्भव है।

---

*भव बिज में अकुर को उत्पन्न करने वाले रागादि दोष जिनके क्षीण हो गये हैं, वह चाहे ब्रह्मा हो, या विष्णु हो या हर हो, या जिन हों उनको नमस्कार है।

‡य शैवा समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटव कर्तेति नैयायिका ॥
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरता कर्मेति मीमांसका ।
सोय वो विदधातु वांछितफल त्रैलोक्य नाथो हरि॥

अर्थात्—शैव लोग शिव कहकर जिसकी उपासना करते हैं, वेदान्ती लोग जिसे 'ब्रह्म' कहते है, बौद्ध लोग जिसे बुद्ध कहकर ध्याते हैं प्रमाण देने मे निपुण नैयायिक लोग जिसे 'कर्ता' बतलाते हैं जैन शासन मे रत (जैन) लोग जिसे अर्हन्' मानत हैं, मीमांसक जिसे 'कर्म' बतलाते है, वह तीनों लोक का नाथ हरि आप लोगो के मनोरथ को पूर्ण करे।

"हमारा अन्तिम वक्तव्य यह है कि प्रश्न के आरम्भ में जबानी तौर पर तेरहपन्थ सम्प्र की ओर से माना गया था कि, जिन जिन बातों में आपके साथ हमारा मतभेद है, उन को हम प्रश्नोत्तर द्वारा खुलासा करना चाहते हैं। इसके सम्बन्ध में मैंने यह कहा था तेरहपन्थ के पूज्य कालूरामजी मेरे साथ शास्त्रार्थ करते तो अति ही उत्तम होता, परन्तु मेरे चेलेंज देने पर भी शास्त्रार्थ नहीं हुआ। खैर, अब नेमीनाथजी द्वारा आप प्रश्न पूछना चाहते तो भी शान्ति और नियमानुसार प्रश्नोत्तर करने में मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं है। जो प्र नेमीनाथजी ने पूछा और दूसरे रोज नेमीनाथजी की ओर से सरदार शहर निवासी तेरहप सम्प्रदाय के मुखिया श्रावक श्रीवृद्धिचन्दजी गोठी ने नेमीनाथजी के प्रत्युत्तर में जो लिखवा उसका उत्तर मेरी ओर से आज आमसभा में सुनाकर लिखा दिया जाता है। अब आगे व्यर्थ न बढ़ाकर बाईस सम्प्रदाय और तेरहपन्थ सम्प्रदाय में जिन मुख्य मुख्य बातों का फर्क है, उ के विषय में विचार होना चाहिए। वे मुख्य मुख्य बातें ये हैं—

(१) पंच महाव्रतधारी साधु के गले में किसी ने फांसी लगा दी हो उसको कोई दयाव गृहस्थ खोल देंगे तो उसमें बाईस सम्प्रदाय वाले धर्म बतलाते हैं और तेरहपन्थ वा एकान्त पाप।

(२) किसी अबोध बच्चे के पेट में छुरी भोंकते हुए दुष्टों को रोकने और बच्चे को बच की अनुकम्पा करने में बाईस सम्प्रदाय वाले धर्म और तेरहपन्थ सम्प्रदाय वाले पाप कहते हैं

(३) गायों के बाड़े में किसी दुष्ट के द्वारा आग लगा देने पर उन गायों पर दया कर कोई यदि उस बाड़े के दरवाजे को खोल अथवा आग लगाते हुए को रोक दे तो उसमें बाईस सम्प्रदाय वाले धर्म और तेरहपन्थ वाले एकांत पाप बतलाते हैं।

(४) ११ प्रतिमाधारी साधु तुल्य श्रावक को कोई निर्दोष आहारादि देवे तो इसमें बाईस सम्प्रदाय वाले धर्म और तेरह पन्थ वाले एकान्त-पाप बतलाते हैं।

(५) अगली रात और पिछली रात में साधुओं के स्थान में स्त्रियों के आने-जाने औ उन्हें रात में मकान के अन्दर व्याख्यानादि सुनाने का बाईस सम्प्रदाय वाले निषेध करते हैं औ तेरहपन्थ वाले विधान।

(६) बारी बांधकर गृहस्थों के यहाँ से भोजन लाना और रास्ते में अपने साथ सेवा गृहस्थों का रखना और उनसे भोजन लेना इनका बाईस सम्प्रदाय वाले निषेध और तेरहपन्थ वाले विधान करते हैं।

(७) साध्वियों के साथ बिना कारण आहार पानी आदि के लेने देने आदि का बाईस सम्प्रदाय वाले निषेध और तेरहपन्थ वाले विधान करते हैं।

इन बातों का खुलासा होना चाहिए।* —प्रकाशक

इस उत्तरादि के सुनाते समय तेरह पन्थ सम्प्रदायी लोगों ने हो हल्ला मचाना प्रारम्भ और शान्ति भङ्ग की चेष्टा अवश्य की, लेकिन श्री डिस्ट्रिक्ट सुपरिन्टेण्डेंट साहब पुलिस के प्रशासनीय प्रबन्ध से ये लोग इसमें असफल रहे।

---

*नोट—तेरहपन्थ और बाईस-सम्प्रदाय में मतभेद के जो मुख्य मुख्य विषय ऊपर बताये गये हैं, वे यथार्थ हैं। परन्तु जनता को भ्रम में रखने के लिये तेरहपन्थी लोग प्रायः मतभेद की बातों की असलियत को छिपा रखते हैं और इन बातों के लिए यद्वा तद्वा कहकर टाला टूली

सुनाये जाने के पश्चात जब कि टीकमचन्दजी डागा व नेमीनाथ जी, इन दोनों को सुनाया हुआ उत्तर नोट कराया जा सकता था तेरह पन्थ सम्प्रदाय वालो ने सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब पुलिस से इस उत्तर के खडन और अपने पक्ष के लिये अगले रोज फिर सभा होने के विचार प्रकट किये। उनके विचारों को सुनकर पूज्यश्री ने सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहब से फरमाया कि मैंने एक ही प्रश्न का उत्तर तीन रोज तक दिया, परन्तु प्रश्नकर्त्ता हठवश यही कहते हैं कि हमारे प्रश्नका उत्तर नही मिला। इतना ही नही कहते बल्कि इसके साथ ही असभ्यता के शब्दों का भी प्रयोग कर जाते हैं। जस उनका यह कहना कि, 'आपने अपने उत्तर म हमें गालियें लिखी है' आदि अत यदि प्रश्न कर्त्ता मेरे उत्तर मे असतुष्ट हैं और मेरे उत्तर को अपने प्रश्न का उत्तर नही समझते हैं तो, कल दोनों ओर से किसी को मध्यस्थ नियत कर दिया जाय जो मेरे उत्तर और इनके प्रश्न को गलत सही का निर्णय दे सके। इसके सिवाय यदि तेहर पन्थ सम्प्रदाय वाले शास्त्राय करना चाहते हो तो, नियमानुसार किसी को मध्यस्थ नियत करके शास्त्राथ हो जाय। तेहरपन्थ के पूज्य कालूरामजी या जो मुझसे शास्त्राथ करने के योग्य हो, उससे मैं शास्त्राथ करने को तैयार हूँ। आप लोगो का, जनता का और मैं अपना स्वय का इस प्रकार अकारण समय नष्ट नही करना चाहता।

पूज्यश्री के फरमाने को सुनकर सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहब ने तेरहपन्थ सम्प्रदाय वालो से प्रश्न किया कि आप लोग मध्यस्थ नियत करके जो प्रश्नोत्तर हुए हैं उनका निर्णय कराना चाहते हैं या शास्त्राथ ! लेकिन तेरह पन्थ सम्प्रदाय की ओर से श्री वद्धिचन्दजी गोठी, श्रीमूलचन्जी सेठिया, श्री छोटूलालजी बोरड, श्री बालचन्दजी बगाणी श्री आशकरणजी भूतेडिया, आदि ने इन दोनो बातों में से किसी भी एक को स्वीकार नहीं किया। अत ३। बजे के लगभग सभा विसर्जित हुई।

इन प्रश्नोत्तरो को सवसाधारण की सूचना के लिये हम प्रकाशित किये देते हैं जिसमें तेरहपथ सम्प्रदाय के लोग कोई भ्रमात्पारक बात न फैला सकें।

अन्त म हम श्री रघुबरदयालसिंहजी नाजिम साहब, श्रीशेरसिंहजी जज साहब, श्री डिस्ट्रिक्ट सुप्रेण्टेण्डेण्ट साहब पुलिस, श्री हजारीसिंह जी तहसीलदार साहब और श्रीलक्ष्मणप्रसाद जी प्रेसीडेण्ट सनातनधर्म सभा को उनके निष्पक्ष शाति रक्षा और परिश्रम के लिए धन्यवाद देते हैं। इस काय में पडित अम्बिकादत्तजी ओझा और पडित शकरप्रसादजी दीक्षित ने भी प्रशसनीय परिश्रम किया है, अत वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

कर लेते हैं। इसलिए मतभेद की बातो के विषय मे हमारी सूचना है कि, यदि तेरहपन्थ सम्प्रदायी लोग साधु के गले की फांसी को गृहस्थ के खोलने आदि बातो में पाप मानते हो तो फिर वे 'इन कामो मे हम धम मानते हैं' ऐसा स्पष्ट स्वीकार करके प्रसिद्ध कर दें, जिसम तेरहपन्थ और बाईस सम्प्रदाय मे मतभद न रहकर एकता रहे। अन्यथा यह बातें स्वय सिद्ध है कि तेरहपन्थ सम्प्रदाय वाले जो बातें ऊपर बताई गई हैं उन्हें उसी रूप मे मानते हैं। इसके सिवाय तेरह पन्थ सम्प्रदाय के प्रकाशित ग्रन्थों से भी इन बातो का इसी रूप में माना जाना सिद्ध है। यदि तेरह पथ-सम्प्रदाय वाले यह कहते हो कि हमारे ये सिद्धान्त शास्त्रानुमोदित है तो उनके पूज्य कालूरामजी बाईस सम्प्रदाय के पूज्य श्रीजवाहरलालजी से शास्त्राथ करें, जिसमें सवसाधारण को सन्तोष हो जाय।

[परिशिष्ट 'ग']

[पृ० १७४ का परिशिष्ट]

चूरु-चर्चा

सम्वत् १६८४ की साल में पूज्यश्री १००८ श्री जवाहरलालजी म० सा०, कोठारी मूल चन्दजी की आग्रह भरी विनती को स्वीकार कर बीकानेर सरदारशहर विहार करते हुए चूरु नगर मे पधारे थे और वहा अग्रवाल सज्जन के मकान में विराजे थे। संयोगवश उस समय तेरा पंथिया का महामहोत्सव भी चूरु नगर में ही था। इस उत्सव में सम्मिलित होने के लिये स्थान स्थान से तेरापंथी साधु और श्रावक चूरु मे एकत्रित हुए थे। पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० का व्याख्यान जहाँ होता था, वहां जैन तथा जैनतर जनता की अपार भीड होती थी। पूज्यश्री के युक्तियुक्त हृदयाकर्षक व्याख्यान का प्रभाव जनता पर जादू की तरह पडता था। एक दिन की बात है कि पूज्यश्री ने अपने व्याख्यान में प्रसंगवश यह फरमाया कि साधु बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार नहीं ले सकता। यदि लेता है तो चातुर्मासिक प्रायश्चित्त का भागी बनता है। वह साधु तीन बार तक प्रायश्चित्त लेकर गच्छ में रह सकता है, पर चौथी बार निष्कारण साध्वी से आहार पानी लेने पर यदि प्रायश्चित्त स्वीकार करे तो भी वह गच्छ से बाहर कर देने योग्य होता है। इस विषय की सिद्धि के लिये पूज्यश्री ने अनेकों शास्त्रीय प्रमाण बतलाये, जिसका जनता पर गहरा प्रभाव पडा। परन्तु यह बात तेरापन्थी श्रावकों को अच्छी नहीं लगी। क्योंकि उनके साधु तो रोज ही बिना कारण साध्वियो से आहार पानी लेते-देते हैं। अत व्याख्यान श्रवण के पश्चात् चूरू निवासी तेरापन्थी श्रावक गौरीलालजी वैद अपने पूज्य कालूरामजी के पास गये और इस विषय की चर्चा करते हुए अपने पूज्यजी से पूछा कि—क्या साधु बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार पानी नही ले सकता ?

पूज्य कालूरामजी न उत्तर देते हुए कहा—यदि साध्वी का लाया हुआ आहार पानी नहीं कल्पता तो फिर हम क्यों लेते ?

वैदजी ने कहा—क्या इस विषय में कोई शास्त्रीय प्रमाण भी है ?

पूज्य जी—हा, बहुत प्रमाण हैं।

वैदजी—अगर बाईस सम्प्रदाय के साधु इस विषय में प्रमाण जानने के लिये आपके पास आवें तो क्या आप उन्हें बता सकेंगे ?

पूज्यजी—क्यों नहीं ? अवश्य बतलाएंगे।

इस प्रकार पूज्य कालूरामजी के कहने पर वैदजी पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० के पास आये और कहा कि—आप तो साध्वी के द्वारा लाये हुए आहार पानी के लेने का साधु के लिये निषेध करते हैं, परन्तु हमारे पूज्यजी का तो कहना है कि साध्वी का लाया हुआ आहार पानी साधु ग्रहण कर सकता है।

पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० ने पूछा—क्या इस विषय में आपके पूज्यजी कोई शास्त्रीय प्रमाण भी बता सकेंगे ?

वैदजी—हां, क्यों नहीं, अगर आप या आपके साधु पधारेंगे तो वे अवश्य बतलायेंगे।

तब पूज्य श्रीजवाहरलालजी म० सा० ने मुनिश्री बड़े चादमलजी म० वर्तमान आचार्य प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० मुनि श्रीहरकचन्दजी म० तपस्वी मुनिश्री सुन्दरलालजी म० और तपस्वी मुनिश्री केशरीमलजी म० को सरल भाव से प्रमाण पूछने के लिये भेजा और कहा कि मेरे जानने में तो कोई शास्त्रीय प्रमाण नहीं है, पर तेरापंथी पूज्यजी यदि कोई शास्त्रीय प्रमाण बतावें तो आप लोग उसे देख आवें। यदि वस्तुत कोई शास्त्रीय प्रमाण होगा तो अपने को मानने में कोई आपत्ति नहीं है। इस प्रकार पूज्यश्री की आज्ञा पाकर उपरोक्त पांचों मुनिराज तेरापंथी साधुओं के स्थान पर गये। उस समय तेरापंथियों के स्थान में व्याख्यान हो रहा था। वर्तमान आचार्य प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० सा० ने पुछवाया कि क्या हम लोग भीतर आ सकते हैं? स्वीकृति सूचक उत्तर मिलने पर पांचों मुनिराजों ने भीतर प्रवेश किया। तेरापंथी श्रोताओं में जो सभ्य थे वे मुनिराजों के आन पर खड़े हुए और उनसे बैठने का भी आग्रह किया। परन्तु प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने फरमाया कि हम लोग थोड़ी देर के लिये ही आये हैं, बैठने की कोई आवश्यकता नहीं है। थोड़ी देर बाद प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने गोरीलालजी वद से कहा कि आपके पूज्यजी ने बिना कारण साध्वी का लाया हुआ आहार पानी साधु को ग्रहण करना कल्पता है, इस विषय में शास्त्रीय प्रमाण देने का कहा है सो वह किस शास्त्र का प्रमाण है, यह बतावें।

तेरापंथी पूज्यजी ने कल्पना भी नहीं की होगी कि भरी सभा में इस प्रकार शास्त्रीय प्रमाण बतलाने की चुनौती दी जायगी। उन्होंने तो अपने भक्त को भोला समझकर टाल दिया था। परन्तु अचानक यह प्रश्न उपस्थित होने पर पूज्य कालूरामजी सकपका गये। उनके चेहरे का रंग उड़ गया। आखें नीचे झुक गई। प्रश्न एक दम सीधा (Direct) था। छिपा हवाला करने की कोई गुञ्जाइश नहीं थी। बेचारे पूज्यजी मुसीबत में फँस गये। अगर कहते हैं—प्रमाण है, तो दिखावें कहाँ से? और अगर कहते हैं—नहीं, तो कलई खुलती है। जैसे सद्गृहिणी अपने पति को भोजन करती है, बिछौना बिछाती है, वैसे ही उनकी साध्वियाँ आहार लाती हैं, परोसती हैं, बिछौना करती हैं, सो यह सब शास्त्र विरुद्ध ठहरता है। इस प्रकार एक ओर कुआ और दूसरी ओर खाई देखकर कालूरामजी घबरा गये। कुछ देर मौन रहने के बाद आखिर उनसे यही कहते बना कि—

शास्त्र में कठेई निषेध चाल्यो कोयनी, ई वास्ते साध्वी रो लायो हुवो आहार पाणी साधु ने कल्पे है।

यह है कालूराम जी स्वामी का प्रमाण जिसके बल पर तेरापंथी साधु साध्वियों से आहार पानी मंगवाते हैं और फिर भी नव बाड सहित ब्रह्मचर्य पालने का दम्भ भरते हैं। कैसी विडम्बना है।

मगर प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० सहज ही मानने वाले नहीं थे। उन्होंने फरमाया कि साधु को साध्वी से आहार मँगवाकर खाने का शास्त्र में कहीं विधान नहीं है। आपका कहना है कि निषेध न होने के कारण ही साधु, साध्वी का लाया हुआ आहार ग्रहण कर सकता है, परन्तु यह कथन भी तो शास्त्रविरुद्ध है। शास्त्र में स्पष्ट निषेध किया है—

'जे निग्गथा य निग्गंथिओ य संभोइया सिया, णो ण्हं कप्पइ अन्नमन्नस्स अंतिए वेयावच्चं कारवित्तए। अत्थि या इणह केइ वेयावच्च करेत्तए कप्पइ ण्हं तण्हं वेयावच्च कारावित्तए। णत्थिया इणह केइ वेयावच्च करेत्तए, एवं णं कप्पइ अन्नमन्नेण वेयावच्च कारावित्तए।'

—व्यवहार सूत्र, उ० ५

टीका—ये निग्र न्था निग्र न्थ्यश्च साम्भोगिकास्तेषा नो णमिति वाक्यालंकारे कल्पते अन्योन्यस्य वैयावृत्य कारयितुम्। अस्ति कश्चित् वैयावृत्यकरस्तत कल्पते त वयावृत्य कारयितुम्। नास्ति चेत् क्वाचित् वैयावृत्यकर एव मति कल्पते अन्योन्यस्य वयावृत्य कारयतुमिति सूत्रसक्षेपाथ।

भावाथ—एक गच्छ के (सांभोगिक) साधु साध्वियों को परस्पर म व्यावच्च करवाना नही कल्पता है। एकमात्र साधु ही दूसरे साधु की व्यावच्च (वैयावृत्य सेवा) करे, तथा साध्वी ही साध्वी को व्यावच्च करे। कदाचित् कोई सकट का समय आ गया हो, साधु के पास दूसरा साधु न हो अथवा साध्वी के पास दूसरी साध्वी न हो तो ऐसे सकटकाल मे साधु साध्वी परस्पर में एक दूसरे से व्यावच्च करा सकते हैं।

व्यवहार सूत्र की व्याख्या करत हुए भाष्य मे कहा है—

उउभजमाणसुहेहिं देहसहावाणुलोमभुज्जेहिं।
कढिणहियथाण समण बधत चिरण कइयविया।

टीका—ऋतौ ऋतुभजमानभज सेवायामिति वचनात् सुखं जयन्ते तानि ऋतुभजमानसुखानि तैस्तथा देह शरीरं तस्य स्वभाव स्वरूपं देहस्वभावस्यानुलोमा मनुकूलानि यानि तैर्वैयावृत्यं कुर्वत्य समत्यो, ये सयतीभिरानीत भुञ्जत तेषा कठिनहृदयानामपि धृतिवलिष्ठानामपि सयता दमोऽचिरेण कालेन बध्नन्ति बाधयन्तीत्यर्थः। कथमूता इत्याह कैतविका कैतवेन कपटेन अन्यमनसि अन्यद्वाचि इत्यादि लक्षणेन्न निर्वृत्ता कैतविका।

अर्थात्—जिस ऋतु म जो पदाथ सुखदायी होते हैं उन पदार्थों द्वारा तथा शरीर की प्रकृति के अनुकूल पदार्थों द्वारा साधु की सेवा करने वाली ऐसा आहार लाकर साधु को जिमाने वाली साध्वियाँ मजबूत दिलवाले अर्थात् धैर्य आदि से सम्पन्न हृदय वाले धीर-वीर और सयम परायण साधु के सयम को भी नष्ट कर डालती हैं। उन साध्वियों के हृदय में कुछ और होता है तथा वाणी मे कुछ और होता है। वे कपट युक्त होती हैं।

बिना कारण व्यावच्च करने के निषेध का शास्त्रीय पाठ और भाष्य बतलाते हुए प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० सा० ने उसका विवेचन करते हुए कहा कि—हट्टे कट्टे साधुओं के मौजूद रहते हुए भी शास्त्र विरुद्ध साध्वियों का लाया हुआ आहार पानी आदि भोगना साधु के लिए उचित नहीं है। क्योंकि वर्तमान काल म साधु-साध्वियों ने वीतरागावस्था को प्राप्त नही कर लिया है। साधु साध्वी के पारस्परिक अधिक ससर्ग रहने से मानसिक विकृति उत्पन्न होना स्वाभाविक है।

वास्तविक बात यह है कि ब्रह्मचर्य साधु धर्म का प्राण है। वह सब तपों में उत्तम तप है। तवेसु वा उत्तम बंभचेरं कहकर शास्त्रकारो न ब्रह्मचय की महिमा प्रकट की है। अतएव ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए शास्त्रों में अनेक मर्यादाए साधुओं के लिए बताई गई हैं। दशवैकालिक सूत्र में यहाँ तक कहा है कि 'चित्तभित्ति न निज्झाए' अर्थात् जिस दीवाल पर स्त्रियों के चित्र बने हों, उस दीवाल को भी साधु न देखें। ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए ही नौ वाडों का कथन शास्त्र में किया गया है। ऐसी दशा म साध्वी, साधु के लिए आहार पानी लावे साधु को परोस परोस कर जिमावे उनका बिछौना बिछावे इत्यादि घनिष्ट सम्पर्क साधुओ के साथ रखे, यह कहाँ तक उचित कहा जा सकता है? गृहस्थ पति पत्नी को यह व्यवहार भले ही शोभा देता हो, पर साधु साध्वी को यह शोभा नहीं देता। इस सीधे सादे सत्य को जो नही समझते या समझ कर भी जो अपनी सुख सुविधा के स्वार्थ से प्रेरित होकर मानना नहीं चाहते, वे किस प्रकार अपने ब्रह्मचर्य का पालन कर सकते हैं, यह भगवान् ही जानें या स्वय वही जानें।

इस प्रकार प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० अपने विषय को समझा रहे थे कि बीच म पूज्य श्री कालूरामजी ने प्रश्न किया—सभोग कितने प्रकार के होते हैं?

इसके उत्तर मे प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने निम्न १२ प्रकार के सभोग बतलाये—

दुवालसिहे सभोगे पण्णत्ता, तजहा—
उवहिसु अ भत्तपाणे, अजलीपग्गहे त्ति य।
दायणे य निकाए य, अब्भुट्ठाणे त्ति आवरे॥
किइकम्मस्स य करणे, वेयावच्च करणे इ य।
समोसरण सन्निसिज्जा य कहाए य पवधणे॥

अर्थात्—(१) उपधि (२) शास्त्र की वाचना (३) आहार पानी (४) अजली करण (५) वस्त्र तथा शिष्य आदि देना (६) स्वाध्याय शय्या आदि के लिये निम त्रण देना (७) अभ्युत्थान, उठकर खडा होना (८) कृतिकर्म—विधिपूर्वक वन्दन करना (९) वैयावच्च—आहारादि देकर सहायता करना (१०) समवसरण—व्याख्यान आदि मे साधर्मी साधुओं का मिलना (११) निषद्या—एक आसन पर बैठना (१२) कथा प्रबन्ध—पाच प्रकार की कथा करना।

इन बारह मे से साधु, साध्वी के साथ छह व्यवहार कर सकते हैं। वह यह हैं—१ श्रुत, २ अजलि ग्रहण, ३ अभ्युत्थान, ४ कृतिकर्म, ५ समवसरण ६ कथा प्रबन्ध। कथा प्रबन्ध मे से साधुवाद जल्प तथा वितडा यह तीन कथाए साध्वी के साथ नही कर सकते है—सिर्फ दो प्रकीर्ण कथा और निश्चय कथा ही कर सकते हैं। इन छ व्यवहारो के अतिरिक्त शेष छह व्यवहार साध्वी के साथ साधु को करना नही कल्पता है। अर्थात् १ उपधि (वस्त्र पात्र का धुलाना, रगाना लेन देन) २ आहार पानी लेना-देना ३ सेवा के लिए शिष्यादिक देना ४ निमत्रण ५ वैयावच्च और ६ निषद्या (एक आसन पर बैठना) यह छ प्रकार के सम्भोग करना शास्त्र में निषिद्ध हैं उपरोक्त छ प्रकार के सम्भोगो का निषध करते हुए समवायांग सूत्र की टीका म लिखा है—'विसभोगिकेन पार्श्वस्थादिना वा सयत्या वा सार्द्ध मुपधि शुद्धमशुद्धं वा निष्कारण गृह् णन् प्रेरित प्रतिपन्नप्रायश्चित्तोऽपि वेलात्रयस्योपरि न संभोग्य। एवमुपधे परिकर्म परिभाग वा कुवन् सम्भोग्यो विसम्भोज्यश्चेति अर्थात्—अन्य गच्छ के साधु के साथ शिथिलाचारी साधु के साथ और साध्वी के साथ शुद्ध वस्त्र पात्र आदि रूप उपधि को बिना कारण ग्रहण करने वाले साधु का तीन बार तक तो प्रायश्चित्त देकर गच्छ म लिया जा सकता है। अगर चौथी बार फिर ग्रहण करे और प्रायश्चित्त लेना चाहे तो भी उसे गच्छ से बाहर कर देना चाहिए। इसी तरह साध्वी से परिकर्म-वस्त्र को धुलाना सिलाना, पात्र को रगाना, ओघे पू जनी बटाना आदि और परिभोग यानी उपरोक्त चीजो को साध्वी से लेकर पुन अपने काम मे लेने वाले साधु को भी उपधि लेने की तरह तीन बार सा प्रायश्चित्त देकर गच्छ में रखा जा सकता है, पर चौथी बार प्रायश्चित्त लेन पर भी नही रखा जा सकता।

भत्तपाणे त्ति—उपधिद्वारवदवसेय नवरमिह भोजनदान च परिकर्मपरिभोगयो स्थाने वाच्यमिति।

अर्थात्—भात पानी का सभोग भी उपधि की तरह समझना चाहिये। यहाँ भी साध्वी से लाया हुआ बिना कारण आहारादि ग्रहण करे या बिना कारण साध्वी को देवे तो लेने और देने वाले साधु को तीन बार प्रायश्चित्त देकर गच्छ में रखा जा सकता है, परन्तु चौथी बार प्रायश्चित्त लेने पर भी नही रखा जा सकता है।

वैयावृत्यम्—'आहारोपधिदानादिना प्रश्रवणाद्यमात्रकार्पणदिनाऽधिकरणोपशमनेन साहाय्यदानेन वोपष्टम्भकरण तस्मिश्च विषये सम्भोगासम्भोगौ भवत इति।

अर्थात्—आहार और उपधि देना लघुनीत और बडी नीति का परठना, क्लेश होने पर समझा कर शान्त करना, आसन बिछाना, प्रतिलेखन करना, उठाना बैठाना सुलाना ।

सहायता करना यह सब व्यावच्च संभोग का अर्थ है। ये व्यावच्च संबंधी बातें जो साधु निष्कारण साध्वी से करावे तो उसे तीन बार प्रायश्चित्त देकर गच्छ में रखा जा सकता है, परन्तु चौथी बार प्रायश्चित्त लेने पर भी नहीं रखा जा सकता।

इसी तरह छहों संभोगों का समवायांग सूत्र की टीका में निषेध किया गया है। परन्तु विस्तार भय से हम यहां सब संभोगों का विवेचन नहीं कर रहे हैं। बचे हुए सम्भोगों का विवरण भी उपधि आदि की तरह ही समझ लेना चाहिए। जब कि साध्वी से व्यावच्च कराने का व्यवहार सूत्र के मूल में ही निषेध है तो फिर साध्वियों से आहार पानी मंगा कर खाना कहाँ तक उचित कहा जा सकता है?

इस पर तेरापंथी पूज्य कालूराम जी ने कहा कि व्यावच्च करने का अर्थ हाथ पैर दबाना ही, आहार मंगाना, पगेसना आदि अर्थ नहीं है।

तब प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने कहा कि व्यावच्च शब्द का अर्थ केवल हाथ पैर दबाना ही है, यह बात शास्त्र सम्मत नहीं है। व्यावच्च शब्द के इस संकीर्ण अर्थ की कल्पना सिर्फ इसलिए की गई है कि तेरापंथी साधुओं को आहार पानी लाने का कष्ट न करना पड़े और सीधा साध्वियों का लाया आहार पानी करने में सुविधा हो। अपनी सुविधा और मौज के लिए यह अर्थ करते समय न तो शास्त्रीय अर्थ पर ध्यान दिया गया है और न अपने मान्य ग्रंथ भ्रम विध्वंसन पर ही नजर फेरी है।

व्यवहारसूत्र में वेयावच्च का विवेचन करते हुए कहा है—

दसविहे वेयावच्चे पण्णत्ते, तजहा—आयरियवेयावच्चे" इत्यादि। इस पाठ के भाष्य में कहा है—त्रयोदशभि पद वैयावृत्य कर्त्तव्यम्, तान्येव त्रयोदशपदान्याह—

भत्ते पाणे सयणासणे (य) पडिलेहपायमच्छिमद्धाणे।
राया तेणे दंडग्गहणे य गेलण्णमत्ते य। १२५।

टीका—'भक्तेन भक्तानयनेन वैयावृत्य कर्त्तव्यम्। पानेन पानीयानयनेन'

अर्थात्—भोजन और पानी लाकर देना व्यावच्च है।

इस पाठ में आहार लाने को स्पष्ट रूप से वैयावृत्य कहा है। इसके अतिरिक्त आपके ग्रंथ भ्रमविध्वंसन में भी लिखा है—

वेयावच्च—भातादि धर्मना जे आधारकारी वस्तु तेणे करी ने आधार दे तो (भ्र० वि० पृष्ठ २५८)

व्यावच करे—आहारादिक आपवे करीने। (भ्र० वि० पृ० २५९)

इन उद्धरणों से यह बात स्पष्ट हुई कि वेयावच्च का अर्थ सिर्फ हाथ-पैर दबाना नहीं है बल्कि आहार पानी ला देना भी है। और वयावच्च नामक व्यवहार बिना कारण साधु साध्वी का आपस में करना निषिद्ध है, इसलिए साध्वी का लाया हुआ आहार ग्रहण करना साधु के लिए निषिद्ध है। अतः जो आहार लेता है वह प्रायश्चित्त का भागी होता है।

थोड़ी देर तक चुप्पी साधकर तेरापंथी पूज्य कालूरामजी ने कहा कि—देखिये व्यवहार सूत्र में स्पष्ट रूप से साध्वी द्वारा लाये हुए आहार पानी को ग्रहण करने का विधान किया गया है।

'कप्पति निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा निग्गंथी अण्णगणाओ आगतं खयायार सबलायार संकिलिट्ठायार चरित्तं तस्स ठाणस्स आलोयावेत्ता पडिक्कमावेत्ता पायच्छित्तं पडिवज्जित्ता, उवट्ठावित्तए वा संभुंजित्तए वा संवसित्तए वा तीसइ तिरियादिसिं वा उद्दिसित्तए वा धारित्तए वा।

—व्यवहार सूत्र उ० ६।

अर्थात्—अन्य गच्छ से आई क्षत, शबल, भिन्न और संक्लिष्ट आचार वाली अकेली साध्वी को आलोचना कर लेने पर प्रतिक्रमण कर लेने पर और प्रायश्चित्त अंगीकार कर लेने पर उसको महाव्रतों में स्थापना करना, आहार आदि का संभोग करना, एक स्थान में रखना और यथा योग्य पदवी देना साधु को कल्पता है।

देखिए, जसे यहा अकेली साध्वी आई और आलोचना आदि लेकर शुद्ध हो गई। अब इसके साथ आहार पानी आदि लेना देना कल्पता है। इसी तरह दस और सौ के साथ भी देना लेना कल्पता है'।

उपरोक्त व्यवहार सूत्र का प्रमाण बता कर जब पूज्य कालूरामजी म० चुप हो गये तब प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० ने कहा कि साध्वी के साथ आहार पानी आदि लेने-देने का जो व्यवहार सूत्र के ६ उद्देशे का प्रमाण बताया है, वह बिलकुल असगत है। क्योंकि इस सूत्र मे तो अपवाद रूप स कथन किया गया है। जिसका आशय यह है कि सयम रक्षा के लिए किसी हालत में भी अकेली साध्वी को रहना नहीं कल्पता है। कम से कम ३ साध्वियां ही एक साथ रह सकती हैं। सयोगवश दो साध्विया यदि काल कर जाएँ या दो साध्वियां कही माग भूल जाएँ तो ऐसी हालत म वह अकेली रही हुई साध्वी अगर भटकती हुई निग्रन्थ मुनियों के पास आ जाय, जहा अन्य साध्विया भी न हों तो उस साध्वी को वे निग्रन्थ मुनि उसकी सयम रक्षा के लिये आलोचना आदि कराकर आहार पानी आदि दे ले सकते हैं और जहा तक दूसरी साध्वियो का योग न मिले वहाँ तक अपने स्थान में भी रख सकते हैं। इस प्रकार उपरोक्त सूत्र का विधान जहा अपवाद रूप मे किया गया है वहां यदि कोई इस पाठ म आये हुए 'सभुजित्तए और सयसित्तए आदि पदों को प्रमाण मे उपस्थित करके साध्वियो के साथ आहार पानी लेना देना और खाना पीना सिद्ध करना चाहे तो उसका यह प्रयास समझदारो के सामने हास्यास्पद ही ठहरेगा। क्योकि 'सभुञ्जित्तए और सवसित्तए यह दोनों पद एक साथ आये हैं। अगर सभुञ्जित्तए पद के आधार पर आहार पानी के लेन देन का बिना कारण ही विधान मान लिया जाय तो सवसित्तए पद के आधार पर उपाश्रय में बिना कारण एक साथ निवास करना भी विधेय ठहर जायगा। अगर सकट-काल के बिना साधारण अवस्था म भी साधु-साध्वी का एक जगह बसना शास्त्रानुकूल है तो फिर खेद के साथ कहना पडेगा कि ऐसे साधु साध्वी गृहस्थ पुरुषों और स्त्रियो मे किस बात मे श्रेष्ठ हैं?

अगर 'सवसित्तए' पद सिर्फ सकट काल के लिए है सदा के लिए नहीं तो फिर 'सभुञ्जित्तए पद भी सकट काल के लिए ही मानना उचित है।

तात्पर्य यह है कि जसे प्रबलतर कारण उपस्थित होने पर साधु साध्वियों के साथ एक जगह निवास कर सकता है उसी प्रकार प्रबलतर कारण के होने पर ही साधु साध्वी को आहार पानी दे दिला सकता है। एक साथ निवास करने के विषय में ठाणांग सूत्र का निम्न पाठ प्रमाण है

पचहिं ठाणेहिं निग्गथा निग्गथीओ य एगतओ ठाण वा सिज्ज वा निसीहिय वा चेतमाणे णातिकम्मति तजहा—अत्थेगइआ निग्गथा निग्गथीओ य एग मह अगामित छिन्नावाय दीह मद्धमडविमणुपविठ्ठा। तत्थ गओ ठाण वा सेज्ज वा निसीहिय वा चेएमाणे णातिक्कमति (१) अत्थेगइआ निग्गथा २ गामसि वा नगरसि वा जाव रायहाणि वा वार उवगता एगतिया यत्थ उवस्सय लभति एगतिता णो लभति तत्थेगतितो ठाण वा जाव नातिक्कम्मति। (२) अत्थेगतिआ निग्गथा यर नागकुमारावाससि वा० वास उवागता, तत्थेगयओ जाव नातिवतमति। (३) आमोसगा दीसंति ते इच्छति निग्गथीओ चीवरपडिताते पडिगाहित्तते, तत्थगयओ ठाण वा जाव णातिक्कमति (४) जुवाणा दीसंति ते इच्छति निग्गथीओ मेहुणपडिताते पडिगाहित्तत तत्थेगयओ ठाणा वा जाव णातिक्कमति। (५) इच्चेहिं पचहिं कारणेहिं जाव नातिक्कमति।

भावार्थ—साधु तथा साध्वी निम्नलिखित पाच कारणों से एक स्थान म कायोत्सर्ग उपवेशत (बैठना) शयन तथा स्वाध्याय करते हुए साधु की आचार सबधी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं करते।

(१) पहला कारण—दुर्भिक्ष आदि कारण से एक देश को छोड़कर दूसरे देश में जाते हुए रास्ते में ऐसा जंगल आ गया हो, जिसके इर्द गिर्द कोई गांव न हो, जो बहुत बड़ा हो, जिसमें कोई निवास न करता हो, निर्जन हो, जिसमें अपने साथियों के तथा गौ आदि के आने जाने का पता न चलता हो, मार्ग मालूम न पड़ता हो, जिसे पार करने में बहुत समय लगता हो, ऐसे भयानक निर्जन-वन में साधु साध्वी एक जगह निवास करें तो उन्हें आज्ञा के उल्लङ्घन का दोष नहीं लगता।

(२) दूसरा कारण—जहां राजा का राज्याभिषेक होता हो ऐसी राजधानी में मनुष्यों की बहुतायत से साधु-साध्वी में से एक को स्थान मिल गया हो और दूसरे को स्थान न मिला हो तो ऐसी अवस्था में एक साथ रह सकते हैं।

(३) तीसरा कारण—किसी गृहस्थ का घर रहने को न मिलने की हालत में साध्वियों को सुनसान मंदिर में रहना पड़े या जहां बहुत भीड़भड़क्का हो या जिसकी देख रेख करने वाला कोई न हो ऐसे स्थान में साध्वियों को रहना पड़े तो उस स्थान पर साध्वियों की रक्षा के निमित्त साधु भी एक किनारे रह सकते हैं।

(४) चौथा कारण—अगर कोई दुष्ट पुरुष साध्वियों का शील खण्डन करना चाहता हो तो उनके शील की रक्षा के लिए साधु-साध्वी के साथ रह सकते हैं।

यह एक अपवाद सूत्र है। सामान्य नियम तो यह है कि साधु और साध्वी एक साथ निवास न करें और न एकान्त में भाषण करें, किन्तु यहाँ पूर्वोक्त पांच कारणों में से किसी कारण के उपस्थित होने पर साधु साध्वियों के साथ रहने का अपवाद रूप में विधान किया गया है।

आप लोगों को समझना चाहिए कि व्यवहार सूत्र के ६ठे उद्देशक के २३वें सूत्र में आये हुए 'समुञ्जित्तए' पद से अगर आप साधु साध्वी का आपस में बिना कारण ही आहार का लेन देन शास्त्रानुकूल मानते हैं तो फिर 'सवसित्तए' पद से बिना कारण ही साधु साध्वी का एक ही उपाश्रय में रहना शास्त्रानुकूल क्यों नहीं मानते? सच तो यह है कि शिथिलाचार बढ़ जाने के कारण और साधुओं में आराम तलबी आजाने के कारण ही इस प्रकार की शास्त्रविरुद्ध प्ररूपणा होने लगी है। ऐसा न होता तो साध्वियों के अधिक सम्पर्क से बचने के लिए दी गई शास्त्राज्ञा के विरुद्ध आप क्यों साध्वियों से आहार मंगवा मंगवा कर खाते? अगर आप अपने ही हाथों भिक्षा लावें और साध्वियों से न मंगवावें तथा न परोसवावें तो आपकी क्या हानि है? ऐसा करने से आपके संयम की अशुद्धता की संभावना हट सकती है और इस प्रकार लाभ ही हो सकता है। हानि कुछ भी नहीं है मगर पता नहीं, किस रहस्यमय कारण से आप अपना आग्रह त्यागना नहीं चाहते। कुछ भी हो, अगर दूरदर्शिता से काम न लिया गया तो एक दिन ऐसा भी आ सकता है जब आपके साधु और साध्वी बिना कारण आहार पानी का लेन-देन करने के समान बिना कारण एक ही मकान में रहने लगें। ऐसा करने वाले शिथिलाचारी साधु कहेंगे 'समुञ्जित्तए' पद के आधार पर जैसे आहार पानी बिना कारण लिया जा सकता है उसी प्रकार 'सवसित्तए' पद के आधार पर एक एक मकान में निवास भी किया जा सकता है। जिनका शिथिलाचार भोजन के लेन देन तक सीमित है, वे उन्हें क्या उत्तर देंगे?

जो कुछ भी हो, दुराग्रह के कारण अगर कोई इस अच्छे आशय से किये गये परामर्श को स्वीकार नहीं करता तो उसकी मर्जी! निष्पक्ष विचारक सचाई को समझ लें तो हमारा प्रयास असफल नहीं होगा।

हमने ऊपर ठाणांग सूत्र का उद्धरण देकर पांच कारण बताए हैं उनके अनुसार साधु और साध्वी दोनों ही एक स्थान में रह सकते हैं और कारणवश आई हुई अकेली साध्वी को भी अपने मकान में रख सकते हैं। जैसे कि किसी अनार्य पुरुष द्वारा किए जाने वाले अत्याचार

बचाने के लिये किसी सती स्त्री को हाथ पकड़ कर कोई गृहस्थ अपने घर ले आवे और उसके शील की रक्षा करे तो वह पुरुष लोक की दृष्टि में अपराधी नहीं माना जाता है, किन्तु उस सती स्त्री का शीलरक्षक होने के कारण धार्मिक माना जाता है। इस अपवाद दृष्टान्त का आश्रय लेकर यदि कोई निष्कारण अवस्था में पराई स्त्री का हाथ पकड़ कर अपने घर में ले आवे तो वह अपराधी, अन्यायी और राजदंड का भागी माना जाता है, परन्तु धार्मिक नहीं। इसी तरह किसी अन्य गच्छ से निकल कर आई हुई अकेली साध्वी को यदि साधु शील रक्षा करने के लिए शुद्धि करके अपने पास रखे और आहार आदि देवे तो वह शास्त्राज्ञा का उल्लङ्घन करने वाला नहीं, अपितु आज्ञापालक माना जायगा। परन्तु निष्कारण अवस्था में यदि कोई इस अपवाद सूत्र का का आश्रय लेकर साध्वी का लाया हुआ आहार स्वयं ग्रहण करे और उसे देवे तो वह अवश्य ही शास्त्रविरुद्ध आचरण करने वाला होगा।

इस तरह प० मुनि श्री गणेशीलालजी म० के सबल प्रमाणों को जोश भरी वाणी में सुनकर पूज्य कालूरामजी गुमसुम हो गए। उनका मुँह नीचा हो गया। मगर उस व्याख्यानसभा में उनके बहुत से अन्ध भक्त श्रोता मौजूद थे। अपने पूज्यजी की यह दशा देखकर उन्होंने मदद कर दी। श्रोताओं ने अपने अमोघ अस्त्र का प्रयोग किया। वह अमोघ अस्त्र था हो हल्ला! कोलाहल! चिल्लाहट!! भारी कोलाहल में प० मुनिश्री की वाणी विलीन सी हो गई। पाचों मुनिराज अपने स्थान पर शान्ति पूर्वक लौट आये।

चूरु में वर्तमान आचार्य प० मुनि श्रीगणेशीलालजी म० की तेरापंथी पूज्य कालूरामजी के साथ जो चर्चा हुई थी उसका संक्षिप्त वृत्तान्त यही है जो ऊपर दिया जा चुका है। परन्तु यह आश्चर्य के साथ कहना पड़ता है कि तेरापंथ के वर्तमान आचार्य तुलसीरामजी ने अपने 'कालू जस रसायन' नामक ग्रन्थ में चूरू की चर्चा का वर्णन करते हुए स्वरचित ढालों में लिखा है कि चूरू की चर्चा में पूज्य कालूरामजी ने निष्कारण साध्वियों से आहार लेने का विधान करने वाले शास्त्र का प्रमाण बतलाकर बाईस सम्प्रदाय के साधुओं को परास्त किया था। इस प्रकार मिथ्या बातें लिखकर अपनी पोपलीला को जाहिर न होने देने के लिये जो प्रयत्न किया गया है वह समझदारों की दृष्टि में निंद्य ही ठहरेगा। यदि वस्तुतः शास्त्र में ऐसा प्रमाण मिलता हो और तेरापंथी साधु उसे बतलाने का कष्ट करें तो बाईस सम्प्रदाय के साधु अब भी मानने के लिए तैयार बैठे हैं। जब कि शास्त्र में स्थान स्थान पर इस विषय का निषेध पाया जाता है तब फिर इसका विधान हो ही कैसे सकता है—फिर भी तेरहपंथी साधु अपने संयम मर्यादा के घातक मन्तव्य का समर्थन करने के लिए अक्सर ठाणांग सूत्र का पाठ पेश करते रहते हैं। अब यहाँ उस पाठ पर भी जरा विचार कर लेना आवश्यक है। वह पाठ इस प्रकार है—

चउहिं ठाणेहिं णिग्गंथे णिग्गंथिं आलवमाणे वा संलवमाणे वा णातिक्कमति, तंजहा—पंथं पुच्छमाणे वा पंथं देसमाणे वा, असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा दलेमाणे वा, दलावेमाणे वा।

—ठा० उ० २ सूत्र २९।

टीका—चउहीत्यादि स्फुटं किन्तु आलपन् ईषत् प्रथमतया वा जल्पन् संलपन् मिथो णेन नातिक्रमति-न लङ्घयति निर्ग्रन्थाचार 'एगो एगित्थिए सद्धिं नेव चिट्ठे न संलवे विशेषतः साध्व्या' इत्येवं रूपं, मार्गप्रश्नादीनां पुष्टालम्बनत्वादिति, तत्र मार्गं पृच्छन् प्रश्नीयसाधर्मिकगृहस्थपुरुषादीनामभावे हे आर्ये! कोऽस्माकमितो गच्छतां मार्ग! इत्यादिना क्रमेण मार्ग वा तस्या देशयन् धर्मशीले! अयं मार्गस्ते इत्यादिना क्रमेण, अशनादि वा ददत् धर्मशीले!

गृहाणेदमशनादीत्येव, तथा अशनादि दापयन् आर्ये ! नापयम्येतत्तुभ्यम् आगच्छेह गहादावि त्यादिविधिनेति ।

अर्थ—निर्ग्रन्थ का यह आचार है कि वह अकेला अकेली स्त्री के साथ और खास कर साध्वी के साथ न ठहरे और न बातचीत करे। किन्तु सूत्रोक्त चार कारणों में से कोई कारण उपस्थित होने पर साधु यदि अकेली साध्वी के साथ थोड़ा या ज्यादा समापण करे तो वह अपने पूर्वोक्त आचार का उल्लंघन नहीं करता क्योंकि, वार्तालाप करने के यह चार प्रबल कारण हैं। अकेली साध्वी के साथ वार्तालाप करने के चार प्रबल कारण इस प्रकार हैं—

(१) पहला कारण—जब पूछने योग्य कोई साधर्मी या गृहस्थ पुरुष न हो तो साध्वी से मार्ग पूछना। जैसे—'आर्ये ! हमारे इधर जाने का मार्ग कौन-सा है ?

(२) दूसरा कारण—साध्वी अगर मार्ग भूल गई हो तो उसे मार्ग बतलाना। जैसे—'हे धर्मशाले ! तुम्हारे जाने का मार्ग यह है।

(३) तीसरा कारण—अकेली साध्वी को भिक्षा न मिली हो तो यह कह कर भिक्षा देना—साध्वि ! मैं अपनी भिक्षा में से अशन आदि देता हूँ।,

(४) चौथा कारण—किसी गृहस्थ के घर से भिक्षा दिलाने के लिए कहना। जैसे—'आर्यिके ! आओ मैं तुम्हें भिक्षा दिलवाता हूँ।"

अकेली साध्वी के साथ इन चार कारणों के होने पर ही साधु वार्तालाप कर सकता है अन्यथा नहीं। इस कथन से यह स्पष्ट है कि यह एक अपवाद रूप विधान है जिसका संकट के समय ही प्रयोग किया जा सकता है। अगर यह विधान विवशता और लाचारी की हालत का न होता तो फिर शास्त्रकार चार कारणों का उल्लेख ही क्यों करते ? चार कारणों का उल्लेख करने से ही यह सिद्ध हो जाता है कि इन कारणों के अभाव में साधु अकेली साध्वी से न बातचीत कर सकता है और न और उसके साथ खड़ा हो सकता है।

यह पाठ इतना स्पष्ट है कि इस पर अधिक विवेचन करने की आवश्यकता ही नहीं है। इस पाठ से साधु साध्वी का आपस में निष्कारण आहार आदि लेना देना किसी भी हालत में सिद्ध नहीं होता। यही नहीं वरन इसी पाठ से बिना कारण उनका आहार लेना देना निषिद्ध ठहरता है।

सूत्र में और सूत्र की टीका में 'णिग्गंथे और णिग्गंथि' यह एक वचन का प्रयोग है। एक वचन के इस प्रयोग से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि मार्ग भूली हुई अकेली साध्वी को मार्ग बता देना अथवा साधु स्वयं मार्ग भूल गया हो तो अकेली साध्वी से मार्ग पूछ लेना लाचारी हालत में दोष नहीं है। इसी प्रकार गुण्डों आदि के उपद्रव के कारण जब साध्वी बाहर न आ सकती हो तब अकेली साध्वी को आहार पानी दे देना भी साधु का कर्त्तव्य है। यहाँ ध्यान देने योग्य एक बात यह भी है कि सूत्र में यह तो लिखा है कि विशेष कारण होने पर साधु अपनी भिक्षा में से साध्वी को भिक्षा दे दे मगर यह कहीं नहीं लिखा कि साधु साध्वी की भिक्षा में से अपने लिए ले लेवे। ऐसी दशा में साध्वियों के झुंड के साथ साधुओं का खाना पानी और बिना ही किसी कारण के उनकी लाई हुई भिक्षा ग्रहण कर लेना यह शास्त्र से सर्वथा असंगत है स्वेच्छा है और लोलुपता का परिचायक है। उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट सिद्ध हो रहा है कि साधु साध्वी निष्कारण आहार पानी का लेना देना नहीं कर सकते हैं। यदि तेरहपंथी साधु भी इस सरल सत्य को स्वीकार कर अपनी कुमान्यता का परिहार कर देवें तो अपने संयममार्ग को कलुषित होने से बचा सकेंगे।

परिशिष्ट 'घ'

युग दृष्टा युगपुरूष आचार्य श्री जवाहरलालजी म० सा० के द्वारा तीथकर देवों के सिद्धान्तों का वास्तविक रूप से भव्य प्रतिपादन हुआ। उस प्रतिपादन मे कुछ भ्रांत धारणाए एवं रूढ़िगत जैन धर्म के नाम से चलने वाली परम्पराओं का विखण्डन एव सत्य का मण्डन हुआ है। इस प्रतिपादन से सम्बन्धित व्यक्तियो मे स्वाभाविक तौर से ईर्ष्या भाव एव असहिष्णुता की भावना प्रबल हो चली तथा जन मानस में आचार्य श्री जवाहरलालजी म० सा० के प्रभाव को धूमिल करने हेतु तेरापंथ समाज की ओर से कई प्रकाशन हुए और हो रहे हैं एतदर्थ साधुमार्गी जैन सघ ने सक्षिप्त मे प्रस्ताव भी पारित किया वह कुछ सक्षिप्त स्पष्टीकरण इस परिशिष्ट मे दिया जाना अति आवश्यक समझ कर दिया जा रहा है जिसमें अप्रमाणिकता और असत्यता सप्रमाण प्रस्तुत की गयी है। इससे तेरापथ समाज के साहित्य मे जो आचार्य श्री रूगनाथ जी म० सा० से लेकर आचार्य श्री जवाहरलाल जी म० सा० एव आचार्य श्री गणेशीलालजी म० सा० आदि पर जितने भी असत्य आरोप एवं मन कल्पित बातें लिखी हैं वे सभी अप्रामाणिक सिद्ध होती है क्योंकि वे असत्य और मन कल्पित हैं। इन सभी असत्य आरोपों को एव मन कल्पित बातों को यहाँ उद्धरित नहीं करते हुए नमूने के तौर पर कुछेक मन कल्पित बातो की अप्रामाणिकता बतलाई जा रही है।

श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन सघ का उद्देश्य निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के सरक्षण सवर्धन हेतु उसके अनुपोषक महापुरुषो के ज्ञान दर्शन चारित्र की अभिवृद्धि मे सहयोग का रहा है। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के परिप्रेक्ष्य में सघ अछूतोद्धार एवं धर्म शिक्षण जैसी अनेक जन कल्याणकारी प्रवृत्तियों का प्रश्रय देता रहा है।

सघ की नीति सदा सर्जनात्मक एव शान्त क्रांति की रही है। निन्दात्मक एव आक्रान्ता नीति का सघ ने सदा बहिष्कार ही किया है। किन्तु सघ यह भी नही चाहता है कि आगम विरुद्ध धारणाओं निर्मूल भ्रान्तियो एव असत्य आक्षेपों को भी सहन किया जाता रहे। ऐसे प्रसगों का यथोचित प्रामाणिक स्पष्टीकरण करके भ्रान्त धारणाओं को निर्मूल करना सघ अपना कर्त्तव्य समझता है।

श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन सघ से अनुबन्धित चतुर्विध सघ के बहुमुखी विकास से उत्पन्न ईर्ष्या स एवं निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा हेतु उठाए गये अहिंसक असहयोग से विक्षुब्ध हो इस सघ के चरित्र निष्ठ आदर्श पुरुषों पर कतिपय कटर साम्प्रदायिक मनोवृत्तियो ने हीन भावना के वशीभूत हो समाचार पत्रो एव साहित्य आदि के माध्यम से अप्रामाणिक मिथ्या आरोप लगाये गये। छल छद्म नीति का प्रयोग कर वस्तु स्वरूप को तोड़ मरोड कर विपरीत ढग से प्रस्तुत किया और जनमानस को भी गुमराह किया। यहाँ तक कि अपने मन की दूषित असूया वृत्ति को सतुष्ट करने के लिये आगम के सिद्धान्त विरुद्ध एकान्तवादी मनोकल्पित अर्थ किये। अपनी साम्प्रदायिक धारणा को आगम सम्मत बताने हेतु आगमो का प्रकाशन किया और इस प्रकार आगम के साथ भी उत्सूत्र प्ररूपण जैसा महाअपराध किया है।

संघ ने अपनी सौम्य नीति के अनुसार तटस्थता पूर्वक सहन करने का प्रयास किया किन्तु इसका भी विक्षुब्ध मनोवृत्तियों ने दुरुपयोग किया और अपने दुःसाहस को बढ़ावा देते हुए पूर्वाचार्यों पर भी मिथ्या आक्षेप करने लगे।

आचार्य श्री रूगनाथजी म० सा० के द्वारा निष्कासित श्रीभीखणजी स्वामी आदि कतिपय संत एवं श्रावकों ने अपनी खिन्नता को रूपान्तरण देकर एक पंथ चलाया और उसकी पुष्टि हेतु शास्त्रों के स्थलों को तोड़ मरोड़ कर मनमाने तरीके से मानवता विरोधी कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। बाद में जयाचार्य जी ने तो उन सिद्धान्तों को ग्रंथ के रूप में ग्रथित भी कर दिया और उस भ्रमविध्वंसन ग्रंथ के पेज ७९ में यहाँ तक कह दिया गया है कि—

"साधु थी अनेरो कुपात्र छे अनेरा ने दीधा अनेरी प्रकृति नो बंध कह्यो ते अनेरी प्रकृति पाप नी छे।"

एवं पृष्ठ ८२ की टिप्पणी में कुपात्र दान का फल बताते हुए लिखा है कि—

"कुपात्रदान, मांसादि सेवन, व्यसन कुशीलादिक ये तीनों ही एक ही माल के पथिक हैं। जैसे चोर, जार, ठग ये तीनों समान व्यवसायी हैं वैसे ही जयाचार्य सिद्धान्तानुसार कुपात्रदान भी मांस आदि सेवन एवं व्यसन कुशीलादिक की ही श्रेणी में गिनने योग्य है।"

तात्पर्य यह है कि उनके उक्त कथनानुसार साधु के अलावा अन्य माता पिता समाज एवं राष्ट्र के नेता यहाँ तक कि महात्मागांधी आदि का भी कुपात्र में समावेश हो जाता है क्योंकि ये पंच महाव्रतधारी साधु नहीं कहलाते और उनको अन्न जल आदि किसी भी प्रकार की सहायता देना मांस सेवन वेश्यागमन आदि के समान पाप करना है। जब मानव को दिये जाने वाले उक्त सहयोग के लिए भी इस प्रकार पाप होना बतलाया जाता है तो पशु पक्षी आदि के लिए तो कहना ही क्या?

ऐसे सिद्धान्त जब जैन धर्म के नाम से प्रसारित होने लगे तब स्वर्गीय आचार्य श्री श्रीलाल जी म० सा० एवं युग दृष्टा स्वर्गीय आचार्य श्री जवाहरलालजी म० सा० आदि जो चतुर्विध संघ के संचालक महापुरुष थे, ने भी जब इस प्रकार के सिद्धान्त जैन धर्म के नाम से जनता में प्रसारित होते हुए देखे तो उनसे कैसे रहा जा सकता था? क्योंकि इस प्रकार के मानवता विरोधी सिद्धान्त जैन धर्म के नाम से प्रसारित हो इससे जैन धर्म का अवमूल्यन एवं तीर्थंकर आदि पवित्र पुरुषों के प्रति जनमानस में कलुषित भाव पैदा होना स्वाभाविक ही था।

इन भ्रान्त सिद्धान्तों को आगमीय धरातल पर भ्रांत सिद्ध करते हुए सद्धर्ममण्डन आदि ग्रन्थों का प्रसंग बना, जिससे प्रबुद्ध वर्ग सावधान होने लगा तो तेरा पंथ समाज का वर्ग येन-केन प्रकारेण उक्त आचार्य देवों का प्रभाव कम करने का प्रयत्न करने लगा एवं प्रपंच मूलक बातें भी रखने लगा। लेकिन आचार्य देवों ने एवं उनके अनुयायियों ने यथास्थान यथायोग्य स्पष्टीकरण आदि के द्वारा वस्तु स्वरूप का प्रतिपादन किया। वर्तमान में आचार्य श्री तुलसी तेरापंथ समाज के एक मात्र अनुशास्ता कहलाते हैं और आचार्य श्री तुलसी जैन समाज की एकता सम्बन्धी बातें रखते हुए अपने उन पूर्वाचार्यों के सिद्धान्तों को जनता की दृष्टि से बचाने के लिये भाषा चातुर्य एवं लेखन कला के माध्यम से जनता के समक्ष प्रस्तुत करने लगे। अनेक आयामों के साथ ऐसा कुछ वातावरण बनाया जाने लगा जिससे सहसा भासित होने लगा कि सम्भव है आचार्य श्री तुलसी उन सिद्धान्तों के प्रति सक्रिय न रह रहे हों परन्तु आम जनता की रुचि के अनुसार साहित्य के साथ साथ पूर्व की मानवता विरोधी मान्यता को शब्दों के आवरण में कलापूर्ण तरीके से पुरानी शराब को नई बोतल में भरने की तरह जन-मानस के सामने प्रसारित किया जाने लगा।

इतिहास आदि के नाम से कालुगणी आदि के जीवन चारित्र के प्रसग से एव दृष्टान्त आदि पुस्तको के माध्यम से आचार्य श्री रघुनाथ जी म० सा० से लेकर अन्य स्थानकवासी समाज के चारित्रनिष्ठ महाव्रत धारी महात्माओ के प्रति घृणास्पद अशुद्ध वायुमण्डल भी लुभावने प्रचार की आड़ में चल रहा है। विशेष कर कालुगणी के जीवन चरित्र म युगदृष्टा आचार्य श्री जवाहरलाल जी म० सा० एव शान्त क्रांति के अग्रदूत आचार्य प्रवर श्री गणेशीलालजी म० सा० पर जो मिथ्या आक्षेपात्मक वर्णन देकर अप्रामाणिक अनर्गल प्रलाप किया गया है, वह नितान्त असत्य तो है ही साथ ही तेरापथ सघ एव सघनायक की छद्मपूर्ण नीति एवं अशोभनीय मनोवृत्ति को भी स्पष्ट करता है।

इस नीति का जब परिज्ञान होता है तो कोई भी सिद्धान्त प्रिय पुरुष इसे कैसे पसंद कर सकता है। इधर तो जन एकता का नारा और उधर छोटे बड़े पत्र पत्रिकाओं एव पुस्तको के माध्यम से आज भी स्थानकवासी समाज को भ्रमित करने की असफल चेष्टा की जा रही है और स्थानकवासी महात्माओ को मनमाने तरीके से हीन बताने का असफल प्रयास किया जा रहा है। इस प्रकार के सिद्धान्त विरोधी साहित्य चाहे वह इतिहास के रूप म हो अथवा पुस्तकाकार एव पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से हो जो कुछ किया जा रहा है वह कतई शोभास्पद नही है। आचार्य श्री तुलसी जी को चाहिये कि इस प्रकार की दुधारी नीति को अपनी छत्र छाया मे न पनपन दें यही श्रेयस्कर है।

तेरापथ समाज के साहित्य म स्थानकवासी साधुमार्गी महापुरुषों पर जो असत्य एव मन कल्पित अनर्गल लेखन हुआ है उससे साधुमार्गी सघ सदस्यो को कितना आघात लगा उसे स्पष्ट करने के लिये उनके द्वारा पारित प्रस्ताव की अविकल प्रतिलिपि १० नवम्बर १९८१ के श्रमणोपासक अक से दी जा रही है—

प्रस्ताव ११ —आज की यह आम सभा बालोतरा टाइम्स के तेरा पथ विशेषाक म "तेरापथ के अष्टम आचार्य श्री कालूगणी शीर्षक से श्री मोतीलालजी सालेचा द्वारा लिखित लेख म विरोध व हत्या का षड्यन्त्र उपशीर्षक म स्थानकवासी साधु गणेशराज जी व जवाहरलालजी इनको धर्मचर्चा म परास्त नही करने के कारण विघ्न खड़ा करने पर तुले हुए थे। एक बार मगनलालजी स्वामी को स्थडिल भूमि से लौटते कोई कोड़ा मारकर चला गया एव इस घटना के बाद कालूगणी की हत्या के षड्यन्त्र का भडाफोड़ हुआ। बीकानेर के टीबा म शौचादि से लौटते समय एक व्यक्ति कालूगणी के सामने पिस्तौल लेकर खड़ा हो गया आदि।" जिस तरह की भ्रांति पूर्ण एव अशिष्ट भाषा मे मनगढ़न्त जो उद्धरण दिया है, इससे समस्त साधुमार्गी जन सघ के अनुयायियो के हृदय पर गहरा आघात ही नही लगा वरन् उत्तेजनापूर्ण वातावरण भी उत्पन्न हुआ है। अत समस्त सघ इसके प्रति कड़ा विरोध प्रकट करता है।

अनुशासन व एकता की बात करने वालो से यह अपेक्षा है कि व अपनी कथनी व करनी मे एक रूपता दरसायें।

तेरापथ इतिहास म सद्धर्ममडन के प्रकरण से जो कहा ... उसका कुछ स्पष्टीकरण यहाँ किया जा रहा है —

तेरहपथ समाज के मान्य ग्रन्थ भ्रम विध्वसनम् में अप्रामाणिक वग चूलिया ग्रथ का उद्धरण देते हुए अपने मिथ्या अहं का पोषण किया जो कि कल्पसूत्र आदि से विपरीत पडता है।

कल्पसूत्र से विपरीत भावो को व्यक्त करने वाले इस प्रसग को भ्रम विध्वसन म देखा तो सद्धर्म मडन की प्रथम आवृत्ति की भूमिका में भूमिकाकार ने उसी ग्रन्थ का उद्धरण देकर उनके मिथ्या अहं का निरसन किया है।

वग चूलिका की प्रथम गाथा जिसमे कि वीर निर्वाण से २९१ वप पश्चात् सम्प्रति राजा के होने का उल्लेख है यह उल्लेख भगवान् के निर्वाण के पश्चात् कब-कब, क्या-क्या घटना घटी, इसका द्योतन करने के लिए किया गया है। वीर निर्वाण के पश्चात् २९१ वर्ष में सम्प्रति राजा हुआ और उसने क्या-क्या काय किया और उसी वीर निर्वाण के १९९९ वप से आगे ३३३ वर्ष तक दुष्ट व्यक्ति धर्म की अवमानना करते रहेगें। १९९९ वर्ष मे वाद सघ अर्थात भगवान महावीर की जन्म की राशि पर ३३३ वप का धूमकेतु ग्रह लगेगा। वह जब उस राशि पर से हट जाएगा तब सघ की पुन उदय-उन्य पूजा होगी। इस आधार स भगवान निर्वाण के २०३२ वर्ष के लगभग धूमकेतु ग्रह हट जाने से सघ की उदय उदय पूजा का प्रारम्भ होगा। यह बात कल्पसूत्र के मूल पाठ से प्रामाणिक होती है।

"जप्पभिई च ण सुद्धाए भास रासी महागहे दो वास सहस्सठिइ समणस्स भगवओ महा वीरस्स जन्म नक्खत सकते तप्पभिइ च ण समणाण निग्गयाण य नो उदिए उदिए पूजा सक्कोर पवत्तई।" [कल्पसूत्र]

इस कल्पसूत्र के मूल पाठ को पुष्ट करने वाली बात सद्धम मडन की भूमिका में स्पष्ट की गई है वह ठोस एव प्रामाणिक है।

तेरापथ इतिहास में जो लिखा गया है उसमे वग चूलिका की प्रथम गाथा के अन्दर जो प्रथम घटना वीर निर्वाण के बाद घटी वह वीर निर्वाण के बाद २९१ वर्ष म घटी। इस २९१ वप को १९९९ मे और जोड लिया गया है, वह जोड़ना उपयुक्त नहीं है, क्योंकि १९९९ वर्ष के अन्तगत ही २९१ वप समाविष्ट है। यदि इनको १९९९ वर्ष से अलग गिनते हैं तो उदय-उदय पूजा नहीं होने का जो उल्लेख कल्पसूत्र मे है, उससे मल नहीं होता। क्योकि २९१+१९९९+३३३ वर्ष जोड़ने से २३२३ वीर निर्वाण हो जाता है।

वीर निर्वाण के २००० वर्ष बाद दुष्ट ग्रह हटा और इसके बाद अब तक लगभग ५०८ वप बीते यदि इन ५०८ वर्षों को २३२३ मे जोड़ेंगे तो २८३१ होता है जबकि आज तक वीर निर्वाण २५०८ वप ही हुए हैं। अत यह प्रत्यक्ष विसगति एव अप्रामाणिकता सामने आती है।

तेरापथ इतिहास में दूसरी अप्रामाणिकता यह प्रदर्शित हुई है कि वीर निर्वाण की २३२३ की गिनती लगाकर उसम से ४७० वप विक्रम सवत् का काटकर १८५३ वर्ष रखकर यह ध्वनित किया है कि १८५३ में दुष्ट ग्रह की समाप्ति हुई। लेकिन यह १८५३ तो विक्रम सवत् से होता है। जबकि दुष्टग्रह की अवस्था वीर निवाण स २००० वप तक चलने का कल्पसूत्र में स्पष्ट कहा है। अत उससे यह संगत नहीं होता। विक्रम सवत् की दृष्टि से भी २००० वप पूरे नहीं होते हैं। इस प्रकार तेरापंथ इतिहास म मनमाने तरीके से तोड मरोड कर अप्रामाणिकता क साथ कई विसगतियाँ पैदाकर दी गई है और वह भी अप्रामाणिक ग्रन्थ के आधार पर।

सद्धममंडन की भूमिकाकार ने कल्पसूत्र म अविरुद्ध और वीर निर्वाण की विसंगतियों से रहित वग चूलिका की प्रथम गाथा की संख्या सहित वीर निर्वाण स १९९९ वर्ष म धूमकेतु ग्रह का ग्रहण किया। प्रथम गाथा म २९१ वप की घटना का उल्लेख कर यहाँ जोड़ने का प्रसंग नहीं था इसलिए उसका उल्लेख नहीं किया है। लकिन प्रथम गाथा की सख्या को १९९९ के अन्तगत ग्रहण किया है। वीर निर्वाण स १९९९ वर्ष तक और भी कई घटनाएं घटी, उन सभी का उल्लेख करने का यहाँ प्रसंग नहीं है। उसी तरह से वग चूलिका की प्रथम गाथा की घटना का उल्लेख इस १९९९ में सयुक्त कर लिया गया है, जो कि उपयुक्त एव प्रामाणिक है।

सद्धर्ममंडन की भूमिका पृष्ठ ७८ मे कल्पसूत्र का जो पाठ ऊपर दिया है उस ध्यान से देखें। इस मूल पाठ म स्पष्ट कहा है भगवान महावीर क जन्म नक्षत्र पर २००० वर्ष की

स्थिति वाला भस्म राशिनामक महाग्रह जबसे लगेगा तब से श्रमण निग्रंथ निर्ग्रंथियों का पूजा सत्कार उदय उदय नहीं होगा।

भगवान महावीर का निर्वाण हो जाने के बाद जब २००० वर्ष पूर्ण हुए उस समय विक्रम संवत् १५३० चल रहा था। अब यह भस्म ग्रह सम्पूर्ण हो गया तब संवत १५३१ में लोंकाशाह ने धर्म क्रांति के बीज बोये। जिसके लिए तेरह पंथ इतिहास के पृष्ठ २५ के दूसरे पैराग्राफ में लिखते हैं—

"भस्म ग्रह जब पूर्ण हो चुका था उस समय लोकाशाह ने धर्म क्रांति के बीज बोये थे। भस्म ग्रह के उतरते ही वे फलीभूत हुए और विक्रम संवत् १५३१ में लोंकाशाह प्रति बोधित ४५ व्यक्ति ने एक साथ दीक्षा ग्रहण की।"

तेरह पंथ इतिहास में दिए गये गये इस उद्धरण से भी स्पष्ट हो जाता है कि कल्पसूत्र के मूल पाठ में जो कहा गया है वह एवं सद्धर्ममण्डन की प्रथम आवृत्ति की भूमिका में दिया वह प्रामाणिक सिद्ध होता है। अतः वग चूलिका नामक ग्रंथ का उद्धरण देकर विक्रम संवत् १८५३ बता कर जनता को भ्रमित करना मिथ्या सिद्ध होता है।

तेरह पंथ इतिहास में पृष्ठ ४२७ ४२८ में चुरु चर्चा का उद्धरण देकर स्व० आचार्य श्री गणेशीलाल जी म० सा० के विषय में जो अनर्गल बातें लिखी हैं वह भी उपरोक्त बातों की तरह अप्रामाणिक है वहाँ की घटना की सिलसिलेवार व्यवस्थित जानकारी इसी जीवन चरित्र के चुरू चर्चा नामक परिशिष्ट से देखा जा सकता है।

इसी प्रकार तेरापंथ इतिहास आदि ग्रंथों में अनेक अप्रामाणिक प्रसंग दिये गये हैं इससे वे ग्रंथ प्रामाणिकता की कोटि में नहीं आ सकते हैं।

आचार्य श्री तुलसी भी अपने पूर्वाचार्यों की अप्रामाणिक परम्परा को निभा रहे हैं उसका भी एक नमूना "नमस्कार महामंत्र" विषयक यहाँ उद्धृत किया जा रहा है—

'आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० का प्रश्नोत्तर' शीर्षक विचार जिनवाणी मई १९७८ के पृष्ठ पर "क्या नवकार में 'लोए' शब्द हटाया सही है ? प्रकाशित हुआ। इसके उत्तर में जिनवाणी १९७८ जून के पृष्ठ ३५ पर आचार्य तुलसी का स्पष्टीकरण छापा है—उसमे उनकी निम्न वाक्यावली—

'आचार्य श्री तुलसी ने नवकार मंत्र से लोए शब्द को हटा दिया है या हटाने की बात करते हैं—यह सर्वथा मिथ्या एवं भ्रमपूर्ण है। आचार्य श्री तुलसी ने नमस्कार महामंत्र से न तो लोए शब्द को हटाया है और न हटाने की इच्छा रखते हैं .. " से स्पष्ट है कि उन्होंने न तो लोए शब्द हटाया है और न हटाने की इच्छा रखते हैं आदि जो स्पष्टीकरण किया वह कहाँ तक सत्य है ?"

इसकी अप्रामाणिकता विश्व भारती लाडनूं से प्रकाशित अंग सुत्ताणि के विवाह पण्णत्ती नामक अंग से देखी जा सकती है। इस ग्रंथ के प्रारंभ में मंगलाचरण के रूप में जो नमस्कार मंत्र दिया है, उसमें लोए शब्द नहीं है। (अन्य भगवती सूत्र जो आगमोदय समिति सूरत से आचार्य श्री अमोलक ऋषि जी म० सा० के द्वारा हैदराबाद से, एवं शास्त्रोद्धार समिति राजकोट से तथा सुत्तागमे लुधियाना से प्रकाशित हुए हैं अन्य भी कई स्थलों से प्रकाशित हैं उन सभी के मूल पाठ में 'लोए' शब्द लिखा हुआ है।)

यदि उपरोक्त स्पष्टीकरण में सत्यता होती तो नमस्कारमंत्र के साथ ही लोए शब्द रहता पर किसी प्रति का बहाना लेकर लोए शब्द को मूल से हटाना और फिर कहना कि मैं हटाना नहीं चाहता यह कितना असत्य है ? हाँ 'लोए' शब्द को मूल से नहीं हटाकर टिप्पणी में स्पष्टी

होता तब तो सत्यता प्रकट होती । पर ऐसा न करके मंगलाचरण के रूप में आये हुए नमस्कार मन्त्र के मूल पाठ में से लोए शब्द को हटाकर स्पष्टीकरण मे यह कहना कि—

"आचार्य श्री तुलसी ने न तो लोए शब्द को हटाया और न हटाने की इच्छा रखते हैं।"

यह कथन कैसे प्रामाणिक कहा जा सकता है ? ऐसे प्रत्यक्ष राजनैतिक ढग से अप्रामाणिकता बरतने वाले अगुवा एव उनके अनुयायी 'तेरा पथ इतिहास' के माध्यम से अप्रामाणिक तरीके से किसी को भी अप्रामाणिक कहने म या लिखने में कैसे सकोच कर सकते हैं। अस्तु